सुदूरपूर्व की सरकारें तथा राजनीति : चीन और जापान

Far Eastern Governments and Politics
CHINA & JAPAN

लेखक :

पाल एम० ए० लिनबर्गर

झ्यांग घु

अर्डेक उल्लू वर्क्स

अनुवादिका

डॉ० (श्रीमती) नन्दिनी उप्रेती

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी

जयपुर

शिक्षा तथा समाज-कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार की विश्वविद्यालय स्तरीय ग्रन्थ-निर्माण योजना के अन्तर्गत, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी द्वारा प्रकाशित।

This book is the Hindi translation of the IInd Edition of the original English book entitled 'Far Eastern Governments and politics : "China and Japan" by Lineborger, P.M. and bublished by Van Nostrand Reinhold Company, New york The translation rights were obtained by the commission for Scientific and Technical Terminology. It has been brought out under the scheme of production of university level books sponsored by Government of India, ministry of Education and Social welfare.

प्रथम अनूदित संस्करण : 1980

Sudurpurva ki Sarkaren Tatha Rajniti : Cheen Aur Japan

मूल्य : 43.00

प्रकाशक :
राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
ए-26/2, विद्यालय मार्ग, तिलक नगर
जयपुर-302 004

मुद्रक :
ओरियण्टल प्रिन्टर्स एण्ड पब्लिशर्स
जाट के कुवे का रास्ता,
जयपुर-1

प्राक्कथन

विश्व विभिन्न भाषाओं तथा संस्कृतियों का रंगस्थल है। यह रंग-बिरंगे फूलों का उपवन है। विविधता ही इसका सौंदर्य है। भाषाएं और संस्कृतियां प्रदेश विशेष के भूगोल तथा इतिहास की देन हैं। एक देश या प्रदेश की जलवायु से ही मनुष्य का शरीर और मानस बनता है, उसका रहन-सहन, भाषा-बोली भी जलवायु से प्रभावित होती है। फिर अनेक वर्षों से एक विशिष्ट प्रकार की संस्कृति चलती है, अतः इतिहास का भी बड़ा महत्त्व है। दूसरी ओर मनुष्य की मातृभाषा जीवन की एक स्वाभाविक प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से संस्कृति और इतिहास की परम्परा प्रवहमान होती है। इसके अतिरिक्त मातृभाषा में ही मनुष्य का व्यक्तित्व सर्वांग रूप से निखरता है। अतः सर्वत्र यह स्वीकार किया गया है कि मनुष्य की सारी शिक्षा-दीक्षा, सर्वोच्च स्तर तक उसकी मातृभाषा के माध्यम से ही होनी चाहिये। 96609

इसके अतिरिक्त विश्व का समस्त ज्ञान अनेक भाषाओं में संग्रहीत है और सभी लोग समस्त ज्ञान की प्राप्ति के लिये अनेक भाषाओं का अध्ययन नहीं कर सकते हैं। ऐसा करने से वे केवल भाषा-विज्ञ ही रह जायेंगे, न कि विषय-विज्ञ। भाषा तो एक साधन मात्र है। अतः यह आवश्यक है कि सभी भाषाओं में लिपिबद्ध ज्ञान सबको शीघ्रता एवं सुलभता से अपनी भाषा में ही उपलब्ध हो अर्थात् ज्ञान के आदान-प्रदान का माध्यम मातृभाषा हो।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् जब इस दिशा में केन्द्र सरकार के शिक्षा मंत्रालय ने कार्य करने का विचार किया तो यह तथ्य सामने आया कि माध्यम-परिवर्तन के मार्ग में बहुत बड़ा अवरोध है—सम्बद्ध भाषाओं में विभिन्न विषयों के मानक ग्रन्थों का अभाव, जिसे यथाशीघ्र पूरा किया जाना चाहिये। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए भिन्न-भिन्न राज्यों में अकादमियों/बोर्डों की स्थापना की गई। राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी इसी योजना के अन्तर्गत पिछले दस वर्ष से मानक ग्रंथों के प्रकाशन का कार्य कर रही है और अब तक इसने विभिन्न विषयों (कला, वाणिज्य, विज्ञान, कृषि आदि) के लगभग 260 ग्रंथ प्रकाशित किये हैं जो विश्वविद्यालय के वरिष्ठ प्राध्यापकों द्वारा लिखे गये हैं।

'सुदूरपूर्व की सरकारें तथा राजनीतिः चीन और जापान' अंग्रेजी की पाल एम० ए० लिनबर्गर द्वारा लिखित सुप्रसिद्ध पुस्तक, 'फार-ईस्टर्न गवर्मेन्ट्स एण्ड पालिटिक्स : चाइना एण्ड जापान' का हिन्दी अनुवाद है। पुस्तक मूलतः पाठ्य-पुस्तक के रूप में लिखी गई है, जो मुख्यतः स्नातकोत्तर स्तर के छात्रों एवं अध्यापकों के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुई है। हिन्दी प्रदेशों में राजनीतिशास्त्र विषय में शिक्षा का माध्यम अधिकांशतः हिन्दी ही है। अतः हमें विश्वास है कि यह पुस्तक अपने हिन्दी रूप में छात्रों के लिए और अधिक उपयोगी सिद्ध होगी, इसके अतिरिक्त चीन और जापान दो ऐसे देश हैं, जिनका भारत से सुदीर्घ ऐतिहासिक सम्पर्क रहा है, चीन तो विशेषतः भौगोलिक राजनीति (Geo-

Politics) की दृष्टि से भी भारत के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है । उधर जापान आर्थिक विकास का हमारे लिए आदर्श प्रस्तुत करता है। इस प्रकार यह पुस्तक अपनी औपचारिक पाठ्यक्रमीय सीमा को पार कर सामान्य भारतीय नागरिक के लिए भी रुचिशील सिद्ध हो सकती है ।

इसके अतिरिक्त इसमें चीन और जापान की पूर्ण ऐतिहासिक परम्परा, धर्म एवं राजनीति का विवेचन हुआ है। आशा है कि भारत में सांस्कृतिक धरातल पर भी यह पुस्तक लोकप्रिय सिद्ध होगी ।

अकादमी इसकी अनुवादिका डा० नन्दिनी दप्रेती, परिवीक्षक अटलविहारी माथुर की आभारी है, जिनके सहयोग एवं श्रम से हम इसे प्रस्तुत प्रकाशित रूप दे पाये हैं।

अनुवादाधिकार प्राप्ति के लिए हम केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली के कृतज्ञ हैं।

हनुमानप्रसाद प्रभाकर
अध्यक्ष, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, एवं
शिक्षा मंत्री, राजस्थान,जयपुर

डा० रामवली उपाध्याय
निदेशक
राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर

द्वितीय संस्करण का प्राक्कथन

प्रस्तुत पुस्तक 1954 के मूल संस्करण का संशोधित रूप है। इस बार साम्यवादी जगत् में घटित महान् नाटकीय घटनाएं तथा जापान का महान् पराजय के पश्चात् निरंतर संभलना, ऐतिहासिक मूलभूत तत्त्वों की तुलना में कहीं अधिक ध्यान देने योग्य बातें हैं। अतः राष्ट्रवादी चीन, साम्यवादी चीन तथा उत्तर संधि युग के जापान से संबंधित सभी प्रभागों को 1956 के ग्रीष्म तक के राजनीतिक विकास को ध्यान में रखते हुए संशोधित किया गया है तथा परिशिष्ट में साम्यवादी चीन का नवीन संविधान भी दे दिया गया है। कुछ अन्य त्रुटियां, विवादों तथा अनावश्यक विरोधपूर्ण बातों को समाप्त कर दिया गया है।

कुछ अत्यधिक महत्त्वपूर्ण विषयों के बारे में जानकारी समाचार-पत्रों तथा सरकारी एवं उच्चस्तरीय पत्रिकाओं से ही प्राप्त हो पाती है। अतः लेखकों ने सर्वदा प्राप्त जानकारी को समकालीन परिस्थितियों के संदर्भ में राजनीतिक निष्पक्षता से प्रयुक्त करने का प्रयास किया है हालांकि उसमें हमेशा सफलता नहीं मिली है।

चीन के बारे में निश्चय ही यह कहा जा सकता है कि इन अनिश्चित वर्षों में चीन पर पर्याप्त पुस्तकें उपलब्ध नहीं हैं। चीन में परिवर्तन व्यापक स्तर पर हो रहे हैं। 1903 में जोन डब्ल्यू फोस्टर ने एक चीनी मंचू ध्वजधारक, वेन हसिआग की पूर्वघोषणा का जिक्र किया था, जो साम्राज्ञी डावेजर के दरबार में सर्वाधिक दूरदर्शी अधिकारी था। वेन हसिआग, जो आधुनिक चीन का सर्वाधिक बुद्धिमान तथा दूरदर्शी राजनेता था, अक्सर उन विदेशी कूटनीतिज्ञों से जो चीन में तीव्र सुधार की बात करते थे, कहा करता था 'तुम सब लोग हमें जागृत करने तथा नवीन पथ पर अग्रसर करने के लिए आतुर हो, किंतु तुम लोग बाद में पश्चाताप करोगे क्योंकि एक बार जागृत हो कर रवाना होने पर हम लोग अत्यधिक तीव्र गति से चलेंगे। तुम्हारे विचार से कहीं अधिक दूर तथा तुम्हारी इच्छा से कहीं अधिक तीव्र हमारी गति होगी' आज पैकिंग रेडियो द्वारा किये जाने वाले चतुर प्रचार तथा फुकेन के जैट विमानों के हवाई अड्डे इस विकास को प्रमाणित करते हैं।

किसी भी भौतिक, राजनीतिक तथा आध्यात्मिक विकास में व्याप्त किसी गंभीर रोग के लिए संपूर्ण मानव जगत् में घृणा की चिकित्सा को अधिक मूल्य वाला तथापि तत्पर उपचार माना जाता है। आज भी चीनी साम्यवादी इस उपचार का अत्यधिक उदार प्रयोग कर रहे हैं। चीनी नेताओं की दूसरे देशों के प्रति घृणा तथा एकाधिपत्य की भावना यद्यपि साम्यवादी तथा एशियाई जगत् के अंदर ही सीमित है तथापि यह शांति की समस्या के संदर्भ में व्यापक अनिश्चितता प्रस्तुत करती है। शायद भविष्य में यह पता लगेगा कि 1950 तथा 60 की दशाब्दी में मानवता से संबंधित हमारे समय के महानतम निर्णय लिये गये थे। यदि क्रांति का दौर तथा चीनी जन- विद्रोह में विश्वास तथा अत्याचार से संबन्धित पागलपन का यह दौर इस बार भी (जनवादी चीन में)

विद्यमान रहता है तो चीन में क्रांति के चक्र को पहले के समान चीनी संस्कृति के संतुष्टीकरण तथा पुनर्मानवीकरण की ओर बढ़ना चाहिए। या तो चीनी आदतें साम्यवाद को ग्रस लेंगी या साम्यवाद चीन को ग्रस लेगा। यह समस्या माओ की समस्या से अधिक गंभीर है, पोपविरोधी साम्यवादी समर्थकों ने सरकार के पादरी प्रधान शासित स्वरूप का समर्थन किया है।

राष्ट्रवादी-चीन केवल स्वयं में ही महत्त्वपूर्ण नहीं है, अपितु वह चीन की मुख्य भूमि की मुख्य समस्याओं का कानूनी अवशेष भी है। अध्यक्ष च्यांग ने अपने 10 अक्टूबर 1955 के भाषण में यह स्पष्ट किया कि यदि राष्ट्रवादी चीन पुनः मुख्य चीन पर विजयी होना चाहता है तो उसे शुद्धतम चीन राजनीति व नैतिक दवाव के रूप में बना रहना चाहिए। उन्हें केवल राजनीतिक दृष्टि से ही जीतना था। इस समर्थन के साथ जुलाई 1956 में अमेरिकी उपराष्ट्रपति निक्सन के पुनः आश्वासन ने चीन में गृह-युद्ध को दीर्घकालीन संघर्ष के रूप स्थिर बना दिया।

जापान में 1956 में पार्षद—भवन के चुनावों में अनुदार दल को दो तिहाई मतों से भी अधिक प्राप्त बहुमत यद्यपि विनाशकारी नहीं था तथापि यह चेतावनी अवश्य है कि इस देश में प्रतीक्षा की राजनीति, सफलता प्रदान करें, यह आवश्यक नहीं है। जापानियों को साम्यवादी-विरोधी राष्ट्रों के गुट में विकसित होने का स्पष्ट अवसर प्राप्त नहीं हुआ है। जब तक उनकी अन्तर्राष्ट्रीय भूमिका तथा घरेलू अर्थव्यवस्था उनके लिए एक सम्मानपूर्ण भविष्य का आश्वासन नहीं प्रदान करती है तब तक वामपंथी तथा विपथगामी दक्षिणपंथियों से विरोध की संभावना बनी रहेगी। एक दशाब्दी की थोपी गई निकटता के बावजूद अमेरिकी जापानी सरकारी संबन्धों की अपेक्षाकृतन त्रता दोनों देशों की सरकारों के लिए सम्मानपूर्ण है तथा उनकी परस्पर अनुकूलता का अच्छा उदाहरण है।

इस रचना ने कहानी का प्रारम्भ किया है किन्तु कहानी अभी समाप्त नहीं हुई है। रूबक्स अथवा स्पाटेले इस पुस्तक के पुनः मुद्रण से पूर्व विश्व के इतिहास का निर्माण कर सकते हैं। केवल मूलतत्त्व ही अवशेष रहते हैं तथा सुदूरपूर्व की राजनीति के मूलतत्त्वों को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है कि उनमें परिवर्तन तथा विकास होता है। आने वाले वर्षों के लिए अमेरिकी जनजीवन में चीनी तथा जापानी राजनीति एक कारक के रूप में विद्यमान रहेंगी। तथापि यह दुखः का विषय है कि दशाब्दियों की शांति ने जिस पारस्परिक निर्माण की रचना नहीं की वह अनिश्चतता के वातावरण में उत्पन्न हुई लेकिन अनिश्चितता तथा परस्पर निर्भरता दोनों ही व्यापक तथ्य हैं।

पाल एम० ए० लिनबर्गर

जुलाई, 1956। ह्यांग चु

अर्डेथ डब्लू बर्क्स

प्रथम संस्करण का प्राक्कथन

यह पुस्तक चीन तथा जापान की सरकारों की चर्चा करती है। ये सरकारें अपने वर्तमान स्वरूप में अपनी उन अतीत कालीन सरकारों की उत्तराधिकारी हैं जिनका विश्लेषण जापान तथा चीन में सभ्यताओं की निरंतरता को स्पष्ट करता है तथा इन देशों के वर्तमान राजनीतिक व्यवहार की पृष्ठभूमि प्रस्तुत करता है। इसके अतिरिक्त जापान व चीन की अतीत की सरकारों का अध्ययन न केवल आधुनिक नेताओं तथा उनके समर्थकों के स्वरूप तथा आकांक्षाओं पर प्रकाश डालता है अपितु दोनों देशों के परस्पर तथा अन्य एशियाई तथा पश्चिमी देशों के साथ संबंध को भी स्पष्ट करता है।

यह तुलनात्मक सरकारों का ऐतिहासिक दृष्टिकोण से किया गया अध्ययन है। यह राजनीतिक इतिहास नहीं है। पुस्तक के विभिन्न अनुभागों में दी गई उपयुक्त पाद-टिप्पणियां पाठकों को राजनीतिक इतिहास के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए पर्याप्त दिशा-निर्देश प्रदान करेंगी।

इसका कारण पर्याप्त सरल है। जापान के बारे में अनेक श्रेष्ठ राजनीतिक इतिहास उपलब्ध हैं तथा यही स्थिति चीन के बारे में अनेक पाश्चात्य भाषाओं में है। दूसरी ओर इन दो देशों के तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य में वर्णन बहुत कम किया गया है। जहाँ तक इन लेखकों की जानकारी है सरकारों के तुलनात्मक अध्ययन के क्षेत्र में यह प्रथम गंभीर रचना है जो चीन तथा जापान के बारे में लिखी गई हैं। इस रचना में विश्व के अन्य प्रमुख राष्ट्रों को सम्मिलित करने का प्रयास नहीं किया गया है। जहाँ तक लेखकों की जानकारी है, प्रस्तुत रचना प्रत्येक देश में निरंतर एक के बाद एक विद्यमान महत्त्वपूर्ण सरकारों के तुलनात्मक प्रतिमानों के उल्लेख का भी यह प्रथम प्रयास है।

प्रस्तुत रचना में लेखकों का सर्वप्रथम उद्देश्य राजनीति-विज्ञान के क्षेत्र में विद्यमान पाठ्यपुस्तकों के अभाव की पूर्ति है। उनकी यह मान्यता है कि शिक्षण कार्य में रत उनके सहयोगी सुदूरपूर्व की राजनीति पर लिखित इस रचना का स्वागत करेंगे, जो सुदूरपूर्व पर विद्यमान अनेक क्षेत्रीय अध्ययनों तथा राजनीतिक अध्ययनों के पूरक के रूप में सिद्ध होगी। लेखक यह आशा करते हैं कि प्रस्तुत रचना लोगों को शासित करने की सुदूरपूर्व की परपंराओं के बारे में पथप्रदर्शिका के रूप में सिद्ध होगी अथवा एक व्यापक सर्वेक्षण प्रदान करने वाली होगी और द्वितीय लेखक गण यह आशा करते हैं कि यह पुस्तक सामान्य पाठकों के लिए लाभदायक होगी, विशेष रूप से उन सामान्य पाठकों के लिए जो यह जानना चाहते हैं कि वर्तमान परिस्थितियों के पीछे क्या था तथा यह भी जानना चाहते हैं कि इनकी राजनीतिक प्रथाएँ व आदतें क्या हैं तथा कैसे बनी हैं। इस उद्देश्य में तब सफलता प्राप्त होगी जब कि चीन तथा जापान की सरकारों के प्राचीनतम तथा आधुनिकतम विवरणों को प्रस्तुत रूप में स्वीकार कर लिया जाये। यह सरकार की वास्तविक व्यवस्था का विवरणात्मक प्रस्तुतीकरण है जो ऐतिहासिक घटनाओं के संदर्भों के साथ प्रत्येक व्यवस्था के मूल आधार को प्रस्तुत करता है तथा उसके बाद आने वाली व्यवस्था को बतलाता है।

पाल एम० ए० लिनबर्गर

इयांग टु

आर्डेथ डब्ल्यू बर्क्स

मार्च, १९५४।

आभार-प्रदर्शन

प्रस्तुत रचना का आयोजन तथा प्रारम्भ दिसम्बर, 1948 में लेखकों तथा प्रकाशकों के मध्य एक समझौते से हुआ। उस समय से लेखकगण "वेन नोस्ट्रड पालिटिकल साइंस सिरीज" के सम्पादक मेकलिन एल बुरेंडेटे, डिपार्टमेंट आफ पालिटिकल साइंस, यूनिवर्सिटी ऑफ मेरीलेंड के द्वारा इस कार्य में रुचि, निर्देशन तथा सहयोग के लिए आभारी हैं।

इस पुस्तक के लेखन को प्रारम्भ करने के पश्चात् तीनों लेखकों को सुदूरपूर्व जाने का पर्याप्त अवसर मिला है। लिनबर्गर स्वयं पांच बार विभिन्न कार्यों के लिए वहां गया है। बर्क ने सुदूरपूर्व में 15 महीने बिताये जिन में 12 महीने वह जापान में रहा। जापान में उसने अपना अधिकांश समय ओक्याया में जापानी अध्ययन के लिए अवस्थित मिशीगन केन्द्र में बिताया। स्थानाभाव के कारण यहां पर सुदूरपूर्व की सरकारों के उन अनेक अधिकारियों व विद्वानों का तथा साथ ही अन्य सहयोगियों, विद्वानों, मित्रों का उल्लेख करना कठिन है जो सुदूरपूर्व में रहते हैं तथा जिन्होंने अपने महत्त्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत किये तथा जिससे अंततः लेखकगण प्रभावित हुए। तथापि यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि इस रचना में प्रस्तुत विचार पूर्णतः लेखकों के निजी विचार हैं तथा वे स्वयं ही इसके लिए उत्तरदायी हैं।

लिनबर्गर, जांन हॉपकिन्स विश्वविद्यालय के उच्चत्तर अन्तर्राष्ट्रीय अध्ययन केन्द्र के सहयोगियों के प्रति विशेष रूप से अपना आभार प्रदर्शित करता है। एल्डर्सन रिपोर्टिंग सर्विस के जानकार की सहायता के लिए वह आभार प्रदर्शित करता है, जिसकी वजह से प्रस्तुत रचना साकार रूप ग्रहण कर सकी।

ड्यांग तथा बर्क दोनों ही हवार्ड लिबटन के आभारी हैं जिसने कोलम्बिया विश्वविद्यालय के पूर्वी एशिया संस्थान के पुस्तकालयाध्यक्ष के रूप में तथा मित्र के रूप में निःस्वार्थ रूप से सुदूरपूर्व से संबंधित सामग्री की खोज में सहायता प्रदान की।

बर्क्स विशेष तौर पर कोलंबिया विश्वविद्यालय "ईस्ट एशियन इंस्टीट्यूट" के निदेशक ह्यूग बर्टन तथा डा० रावर्ट ई० वार्ड जो जापानी अध्ययन केन्द्र के सह निर्देशक हैं के प्रति उनके द्वारा जापानी सरकार व राजनीति के अनुभाग में दिये गये सुझावों के लिए आभारी हैं। इसी के साथ डा० एल इथान, एलिस, चेयरमेन तथा डा० हेनरी आर विकर, इतिहास विभाग रूटगर्स विश्वविद्यालय, तथा डा० रिचार्ड एवर्डस, राजनीति विज्ञान के प्रोफेसर लफायटी कालेज, जो वर्तमान तथा निवर्तमान सहयोगी रहे हैं ने जापानी भाग पर अपने महत्त्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत किये। अन्त में बर्क ने जापान पर प्रारम्भिक विषय-सामग्री एकत्र करने के लिए लाईब्रेरी कांग्रेस वाशिंगटन डी० सी० डी० एडविन जी बील जूनियर, श्रीमती कटसुयो टाकेसिता तथा एड्रियूक्यूसेडा के प्रति अपना गहन आभार प्रदर्शित किया है। अंततः लेखकगण अपना आभार अपनी पत्नियों—डा० जेनिवी कालिन्स लिनबर्गर, जेन चूड्यांग, तथा जेन लायक बर्क के प्रति प्रदर्शित करते हैं। जिन्होंने इस कार्य के दौरान सहर्ष अपना सहयोग प्रदान किया विशेष रूप से जेन बर्क के प्रति दयांग तथा बर्क्स अन्तिम चरण में प्रारूप के पुनः टंकण के लिए आभारी हैं लेखकगण इस ऋण के बदले में इस रचना को अपनी पत्नियों को समर्पित करते हैं।

चीनी तथा जापानी नामों पर एक टिप्पणी

चीनी तथा जापानी वैयक्तिक नाम परंपरागत तरीके से दिये हैं, प्रदत्त नाम के बाद पारिवारिक नाम दिया गया है सिवाय उन मामलों में जहां चीनी अथवा जापानी लेखकों ने अपनी रचनाएँ अंग्रेजी में प्रकाशित करवाई है। ऐसे मामलों में संदर्भ-सूची में नामों का उल्लेख पुस्तकों के शीर्षक के अनुसार हैं तथा प्रायः पश्चिमी परंपरा के अनुसार है।

चीनी तथा जापानी स्थानों के नाम तथा अन्य चीनी जापानी शब्दों के बारे में चीनी शब्दों के संदर्भ में वोडगिल्स तथा जापानी में हेपर्बन व्यवस्था वाले वर्णांतर का प्रयोग किया है तथापि वे चीनी स्थान इसके अपवाद हैं जो चीनी डाक व्यवस्था के माध्य से अधिक लोकप्रिय हो चुके हैं।

के शिजोकू के समान पूर्व सामन्ती इकाई थी । हेन का तात्पर्य दैम्यो के राजनीतिक नियन्त्रण में होने वाले क्षेत्र तथा लोगों से होता था जिनसे वे चावल के रूप में राजस्व प्राप्त करते थे । उसकी उपाधि उस राजनीतिक अधिकार पर निर्भर करती थी, जिसे उसके पूर्वजों ने प्राप्त कर औचित्यपूर्ण बना दिया था ।

नियन्त्रण व सन्तुलन को बनाये रखने के लिए तोकूगावा जमींदारों को एक दूसरे से संघर्ष रत कराते रहते थे । इस व्यवस्था का एक अपेक्षाकृत कम महत्त्वपूर्ण पहलू यह भी था कि इसके कुछ ऐसे आर्थिक परिणाम होते थे जो प्रारम्भ में कल्पना से परे होते थे। बन्दी बनाये रखने की व्यवस्था की आवश्यकता थी । 1634 में निर्मित सनकिन कोताई के के अनुसार जमींदारों को बारी बारी से इडो में तथा अपने क्षेत्र में रहना होता था । जब ये लोग अपने क्षेत्रों में जाते थे तो अपनी पत्नियों को, अपने सद्‌आचरण की गारन्टी स्वरूप उन्हें राजधानी में छोड़ना पड़ता था । तोकूगावा पुलिस इस प्रकार सर्वाधिक उल्लेखनीय तथा रोमैंटिक थी उसने निषिद्ध वस्तुओं का सतर्कता से प्रयोग किया (स्त्रियों को बाहर ले जाएँगे तथा बारूद को अन्दर लाएँगे) इस मुहावरे के अनुसार यह बताया गया था कि यदि कोई जमींदार षडयन्त्र करना चाहेगा तो वह किन संकटपूर्ण वस्तुओं का संग्रह करेगा। प्रत्येक विद्रोही लार्ड अपनी पत्नी अथवा पत्नियों को राजधानी में बारूदी अस्त्रों का संग्रह करेगा ।

इस प्रकार तोकूगावा अधिकारी बड़ा सतर्क नियन्त्रण रखते थे । विभिन्न क्षेत्रों में यात्राओं को प्रोत्साहन नहीं दिया जाता था । किलों का निर्माण अथवा मरम्मत इदो द्वारा प्रत्यक्ष आज्ञा करने के पश्चात् ही की जा सकती थी । यहाँ तक कि दैम्यो में परस्पर विवाह के लिए भी बकूफू की स्वीकृति आवश्यकथी ।

गुप्तचर (जासूसी) व्यवस्था तथा पुलिस—

स्वयं जापान के इतिहासकारों ने तोकूगावा जापान का विश्व के प्रथम पुलिस राज्य के वाद से सम्बन्ध किया है तोकूगावा की गुप्तचर व्यवस्था का संगठन जिस स्तर पर किया गया वहाँ किसी अन्य सामन्ती राज्य में प्राप्य नहीं हैं । उसका प्रभाव हमारे काल तक दृष्टिगोचर होता है । ओमेतसुके (बड़े इंसपेक्टर) शोगुन के आँख और कान कहलाते थे । वे किसी भी जमींदार की गतिविधि पर नियन्त्रण रखते थे । मेतसुके अथवा इंसपेक्टर छोटे जमींदारों तथा उनकी जनता पर आँख रखते थे । प्रारम्भ में इंसपेक्टर चीन के सेंसर अधिकारियों के समान लगते थे, बाद में वे न्यायालय अधिकारी के रूप में जाने गए तथा अन्ततः वे गुप्तचर विभाग के प्रशासनिक अधिकारी बन गए । आठवें तोकूगावा शोगुन योशीमून के अन्तर्गत (1716-1745) मुरागाकी सादायू नामक एक चालाक व्यक्ति के अधिकार में एक विस्तृत व्यवस्था संगठित की गई । मुख्य गुप्तचर का पद भी एक काल्पनिक उपाधि पार्क गार्ड का मुखिया के नाम से वंशानुगत बन गया ।

तोकूगावा प्रशासकों के जनता पर पुलिस का नियन्त्रण प्रभावशाली बनाने के लिए नए नए तरीके अपनाए । उनमें से एक व्यवस्था एक याचना बॉक्स था जो मुख्यन्यायलय के भवन में रखा जाता था जहां आप आदमी अपनी शिकायत डाल सकता था । इस बॉक्स में कोई भी व्यक्ति सुझाव भी डाल सकता था । विशेष अधिकारी मतेसुके की सतर्क निगरानी में उस सन्दूक को गोरोजू में ले जाते थे । वहां से उसी प्रकार ताला सन्दूक तोकूगावा के बिननेस कक्ष में जाता था वहां स्वयं शोगुन लेता था । फिर स्वयं अपने पास से जरीदार

थैले ने उस सन्दूक की ताली निकाल कर वह स्वयं सन्दूक खोलता था । उसके पत्र को पढ़ कर उसकी विषय सामग्री स्वयं सम्बोन्धित अधिकारी को वताता था । कुछ अन्य सूचनाओं को गुप्तचर विभाग द्वारा पुष्टि करने के लिए अलग रखता था । तथा जो सूचना अत्यधिक गुप्त रखनी होती थी उसे किसी को भी न वता कर वह उस पत्र को नष्ट कर देता था ।

तोकूगावा का स्थानी शासनय—

स्थानीय सरकार दो स्तरों के मध्य कार्य करती थी । एक ओर शोगुन का नियन्त्रण तथा दूसरी ओर स्थानीय सामन्ती रीति रिवाज । यहां भी वंशानुगत निरंकुशता को जापानी सामान्य ज्ञान से उदार वना दिया गया था ।

प्रत्येक सामन्तक्षेत्र चाहे कितना ही लघु क्यों न हो वह तोकूगावा शासन की लघु अनुक्रान्ति थी । प्रत्येक ने कोपुन्याय सेंसर सैनिक मामले, जनगणना मुद्रा तथा सार्वजनिक निर्माण विभाग होते थे । प्रत्येक क्षेत्र जिलों में तथा कस्वों में विभाजित होता था जिसके अपने हतामोता वर्ग के मजिस्ट्रेट होते थे । इन मजिस्ट्रेटों की नियुक्ति शोगुन दैम्यो की सलाह पर स्थानीय भावनाओं का ख्याल करते हुए करता था । मजिस्ट्रेटों के दो स्तर होते थे गुदाई तथा दाईकन, जिसका निर्धारण चावल के कम या अधिक उत्पादन के आधार पर होता था । चीन के हसिन मजिस्ट्रेटों के समान जापान के इन स्थानीय अधिकारियों का काम भी यह देखना था कि राजस्व की वसूली पूरी तरह से हो तथा सार्वजनिक व्यवस्था वनी रहे । वड़े कस्वे जो तोकूगावा के प्रत्यक्ष नियन्त्रण में होते थे उनमें दो मजिस्ट्रेटों (वग्यो) होते थे । वे प्रशासनिक तथा न्याय अधिकारी दोनों होते थे ।

सामान्य जिले गांवों से वने होते थे । गांव अपने निम्नतम स्तर पर आश्चर्यजनक मात्रा में अपनी स्वतन्त्रता वनाए रखते थे । गांव का मुखिया प्रायः वडे भूस्वामियों के द्वारा चुना जाता था । उसका पद अच्छे चाल चलन के आधार पर वंशानुगत होता था प्रत्येक गांव की एक सभा होती थी, जिसमें भूस्वामी तथा उन पांच परिवारों के मुखिया होते थे, जिनमें सम्पूर्ण गांव विभाजित होता था । चीन के समान ही अपरिष्कृत रूप में गांव के अधिकारी मध्यवर्ती संस्थाओं का कार्य करते थे । ये दैम्यो तथा शोगुन तक जनता का प्रतिनिधित्व करते थे ।

ये निकटवर्ती क्षेत्रों के संगठन जापान के पूर्वऐतिहासिक काल के हैं । ताइहो संहिता के (701 ई०) निर्माण तक ये पांच परिवारों के परिवार सगठन (कोनिगुमी) पुलिस अर्थव्यवस्था तथा परस्पर सहायता कार्यों के लिए स्थानीय माध्यम प्रस्तुत करते थे । इस व्यवस्था की कामाकुरा काल में उपेक्षा की गई थी । किन्तु तत्पश्चात् मुरोमाची युग के अराजकताकाल में स्थानीय सुरक्षा की दृष्टि से इनकी पुनरावृत्ति की गई । सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में इएमित्सु शोगुन के समय तक यह पांच परिवारों का समूह-ईसाई धर्म के वहिष्कार को लागू करता था । वाद में तोकूगावा काल में सामन्ती व्यस्था की सूक्ष्मतम आवश्यकताएँ सामाजिक नियन्त्रण के इन साधनों द्वारा पूरी की जाती थी । गोनिगुमी द्वारा क्रियान्वित नियमों को छः वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

1, स्थानीय शान्ति व सुरक्षा की व्यवस्था करना
2. धार्मिक अनुष्ठानों व संस्कारो का नियन्त्रण
3. सुरक्षा तथा करों की वसूली
4. चतुरता तथा मितव्ययता को वढ़ावा देना

5. पारस्परिक सहायता एवं सहयोग
6. नैतिक शिक्षा तथा व्यक्ति का कल्याण[4]

सामन्ती कानून की क्रियान्विति—

जापानी विधि की होजो कालीन बुनियाद से तोकूगावा काल तक जापानी प्रशासक इस विचार में विश्वास करते रहे थे कि कानून का ज्ञान मात्र प्रशासकों को होना चाहिये था। यह पश्चिमी कानूनी सिद्धान्त के पूर्णतया विपरीत विचार है। जहां किसी भी कानूनी मामले का निर्धारण करने के लिए कई मामालों में कानून का ज्ञान उसकी पूर्व आवश्यकता माना जाता है। तथापि कानून के प्रति अज्ञान जापान में क्षमा प्राप्त करने का तरीका नहीं बन सकता था। इसके विपरीत यह जन सामान्य के लिए उचित व्यावहारिक आवश्यकता थी। सामान्य जनता इस प्रकार कानून के बजाय नैतिक अर्थों अच्छे व बुरे कार्य के सामान्य सिद्धान्तों तक ही सीमित थी। यह सिद्धान्त सुपरिचित जापानी कन्फ्यूशियसवादी विचार पर आधारित था कि "बिना जाने लोगों से आज्ञापालन करवाया जाएँ"।

चीनी अनुभव से बहुत कुछ समता रखते हुए प्रांरम्भिक ताइहो संहिता ने ऐसे विस्तृत नियमों का निर्धारण किया था जो शासक व शासित दोनों के लिये स्पष्ट निर्देश रखते थे। ये नियम संपूर्ण विश्व पर लागू रोते थे। सामंतवाद के आगमन के साथ ही प्रत्येक जागीरदार अपनी प्रजा के लिए कानून बनाने लगा। इस प्रकार एकरूपता तभी संभव थी जब भाषा रीति-रिवाज तथा सामाजिक पृष्ठभूमि में एकरूपता विद्यमान हो। विधि-सिद्धान्त यद्यपि पर्याप्त विस्तृत नहीं थ तथापि वे पर्याप्तएकरूपता रखते थे। अतः तोकूगावा बिना गंभीर संघर्ष के सामान्य संहिता बनाने में सफल हुआ। इक्कीस नियम होजो का शिकीमोकू किसो ताकेदा का गृह-विधियाँ तथा आसकुरा की तरह मान्यताएँ जैसे प्रसिद्ध नयविद अवशेषों को सम्मिलित किया जा सका।

आठवें तोकूगावा शोगुन योशिमुने के शासन काल से यह स्वीकार किया गया कि जो लोग कानून की धाराओं से अपरिचित हैं? उनसे कानून-पालन की अपेक्षा करना गलत था। इसके पश्चात् प्रत्येक निर्मित कानून मजिस्ट्रेटों के द्वारा अपनी सामान्य जनता के सामने सामान्य बोलचाल की भाषा में पढ़ा व समझाया जाता था तथा उसके बाद उन्हें विशेष जनसूचना वाले नोटिस बोर्ड पर लिख दिया जाता था।

4– क्यूगिल्ले पूर्वोद्धृत पृष्ठ 10-13 तोकूगावा स्थानीय सरकार का संक्षिप्त सांराश प्रस्तुत करता हैं। देखिये असाकावा का जर्नल ऑफ ददि अमेरिकन आरियंटल सोसाइटी खंड 30-31 (1910-11) में प्रकाशित "नोट्स आन विलेज गवर्नमेंट इन ज पान अफ्टर 1600, ए, लांयड का नोट्स आन जापानीज विलेज लाइफ "टी० ए० एस० जे खंड 33 दिसम्बर, 1905 तथा संयुक्त सर्वोच्च कमान समिति की रिपोर्ट —ए प्रिलिमिनेरी सर्वे ऑफ नेबरहुड एसोसिएशन पूर्वोद्धृत पृष्ठ 14 यद्यपि ये अध्ययन तोकूगावा शासन की वाह्य रूपरेखा ही प्रस्तुत करती हैं तथा यह नहीं बताते है कि इस सामन्ती नियंत्रण की मूल इकाई कैसे कार्य करतीथी। समकालीन समस्याओं में क्षेत्रीय अध्ययनों के द्वारा जापानी तथा अमेरिकी इतिहासकार इस कमी को पूरा कर रहे हैं। उदाहरण के लिए डा० जॉन विटने हॉल ने मिचीगन विश्वविद्यालय में जापानी अध्ययन केन्द्र में बिजेहान (ओकायामा) पर अपना 1 वर्षीय गहन अध्ययन समाप्त कर लिया है। देखिये मेटेरियल्स फॉर दि स्टडी ऑफ लोकल हिस्ट्री इन जापान, प्री मेयजी रिकार्ड्स ओकेमलन पेपर्स सेंटरफौर जापानी स्टडीज एन आबर संग्रह (1952)

बाकूफ प्रशासन के साथ तोकुगावा न्याय, वस्तुतः शांति काल में भी सैनिक कानून का प्रसार था। हिदेयोशी के आतंक ने सैनिक तथा कृषक-वर्ग को कठोरता पूर्वक पृथक कर दिया था। तत्पश्चात् तोकुगावा इयासू द्वारा प्रतिपादित सैनिक भवनों के कानून ने (बुके हट्टो) जो 1615 से प्रेषित किया गया था, निष्ठा तथा आज्ञापालन की परंपरा की स्थापना की। यह तोकुगावा न्यायव्यवस्था की मूलविशेषता थी। प्रारम्भिक काल के तैइहो तथा जोई संहिताओंके समान सैनिक भवन कानून, मात्र कानूनी परिभाषाओं, स्तरों तथा प्रणालियों संहितीकरण ही नहीं, अपितु यह चीनी तथा जापानी प्रतिष्ठित रचनाओ पर आधारित उपदेशों, निषेधाज्ञाओं तथा नैतिक आदर्शों का संग्रह भी था।

इस प्रकार के नियमों ने ऐसी आधारशिला का काम किया जिस के आधार पर ऐसे आदेश दिए गए, जो लोकप्रिय आदर्शों की सूक्ष्मतम विस्तार में चर्चा करते थे। इस प्रकार व्यय-विरोधी नियम तोकूगावा विधि की उल्लेखनीय विशेषता थे। इस व्यवस्था की तृतीय तथा अत्यधिक परंपरागत विशेषता ओसादये-गाकी हमाकांगो (सौ अनुच्छेदो का संग्रह) में दिखाता है जो यह घोषणा करता है कि पचास वर्ष तक निरंतर क्रियान्वित रहने के पश्चात् किसी भी कानून को संशोधित नहीं किया जा सकता है। चाहे वह कितना ही अव्यावहारिक क्यों न हो गया हो। तोकूगावा शासन स्वयं अपने कानूनो को भी मूलभूत तथा संशोधन से परे मानता था। सैनिक-भवन-कानून तथा सौ अनुच्छेदों के अलावा कई विशेष कानून शाही दरबार शोगुनेत तथा तत्कालिक प्रशासन के लिए होते थे तथा इसके अतिरिक्त इदो स्थित आदेशों का एक विशिष्ट वर्ग भी होता था। कानून का यह अंतिम वर्ग विशेष अपराधों जैसे निषिद्ध औषधियों का व्यापार-कार्य करना तथा व्यभिचार के मामलों से सबंधित होते थे। इन सब लिखित कानूनों से परे नैतिक मान्यताओं का निरंतर दबाव रहता था तथा स्थानीय रीतिरिवाज, जापानी ऐतिहासिक पूर्वोदाहरण तथा कन्फ्यूशियसवाद, बौद्ध धर्म तथा शिंतों की नैतिक शिक्षाएँ इन सबका प्रभाव अर्द्ध कानूनी रूप में हुआ करता था।

वस्तुतः तोकूगावा शासक साम्राज्य के लिए नैतिक आधार बनाने में इतने व्यस्त थे कि अपराध से सम्बन्धित कानून बनाने की आवश्यकता का उन्हें अनुभव ही नहीं हुआ। इस दृष्टि से तोकूगावा न्याय प्रगतिशील व पिछड़ा हुआ दोनों ही था। आज के अमेरिकी यद्यपि अपराधी के स्तर के आधार पर अपराध के दण्ड के निर्धारण की व्यवस्था को अपवादात्मक मानेंगे तथापि तोकूगावा शासकों की यह मान्यता समाजशास्त्रीय आधार पर पूर्णतः उचित थी कि अपराध की गम्भीरता अपराधी की शिक्षा तथा उसकी पृष्ठभूमि से सम्बन्धित होती है। इस दृष्टिकोण का समर्थन व्यावहारिक तथा विधि दर्शन के आधार पर भी होना था जैसे समुराई वर्ग द्वारा किये गए अपराध अधिक गम्भीर परिणाम वाले राज्य के विरुद्ध अपराध माने जाते थे जबकि विदेशियों अथवा अन्य सामान्य राजद्रोहियों के बारे में ऐसी मान्यता नहीं थी।

चोरी के अपराध के विरुद्ध बर्बरतापूर्ण दमन की कार्यवाही की जाती थी। किसी भी वस्तु को चुराने का दण्ड मृत्यु हुआ करती थी। किन्तु जेबकतरों के साथ विशिष्ट विषमता बरती जाती थी। उनके लिए दण्ड स्वरूप गोदने को ही पर्याप्त मान लिया जाता था। यद्यपि पाश्चात्य रचनाओं में अतिश्योक्ति की गई है, तो भी तोकूगावा शासन में दिये जाने वाले दण्ड अत्यधिक कष्ट कारी रहे होंगे। शायद उतने ही कष्टकारी, जितने तत्कालीन सत्रहवीं शताब्दी के ब्रिटेन तथा फ्रांस में दिये जाने वाले दण्ड होते थे। कानून के अनुसार

अपराध के दण्ड से पहले अपराधी द्वारा उसे स्वीकार करना आवश्यक था तथा इस आवश्यकता को पूरा करने के लिये यंत्रणा देना अनिवार्य हो जाता था। वास्तविक व्यवहार प्रशासन पहले बाह्य प्रमाणों को ही प्राप्त करने की कोशिश करते थे तथा इस प्रकार के कार्य में असफल होने के बाद ही यन्त्रणा का सहारा लिया जाता था।

प्रशासनिक दृष्टि से तोकूगावा न्याय व्यवस्था बड़ी सरल थी। न्यायालय तक जाना सामाजिक रूप से पसंद नहीं किया जाता था अतः ऐसा बहुत कम अवसरों पर होता था। अधिकांश झगड़े गांवों में मुखिया तथा वरिष्ठ लोगों के बीच-बचाव के द्वारा सुलझा लिए जाते। यह दीर्घकालीन चीनी जापानी परम्परा के अनुकूल ही था कि अधिकांश झगड़ों का समाधान कानूनी व्यवस्था से कम औपचारिक तथा कठोर सामाजिक संस्थाओं के माध्यम से सैद्धान्तिक नियन्त्रण के आधार पर ही कर लिया जाए। स्थानीय मजिस्ट्रेट तक भी विवादों को स्थानीय लोगों को सुलझाने के लिए वापिस कर देते थे। हालांकि वे विवाद को उच्चतर न्यायालयों को सौंपने के लिए भी स्वतन्त्र होते थे। अपील इदो के उच्च न्यायालयह्यायोजोशो तक की जा सकती थी जो विभिन्न जमीदारों से सम्बन्धित झगड़ों का प्राथमिक न्यायालय भी होता था। अवसर मध्य जापान में उत्पन्न विवादों का निपटारा ओसाका अथवा क्योटो के हाई कोर्ट करते थे। सब मामलों में हायोजोशो पर राजपरिषद् का नियन्त्रण होता था। महत्वपूर्ण मामलों में स्वयं शोगुन भी भाग ले सकता था।[5]

अस्थिर अर्थव्यवस्था

कला तथा उद्योग के क्षेत्र में अद्भुत रम्य स्थिति के साथ कठोर निरंकुशतन्त्र की राजनीतिक अर्थ नीति के संभाग से कुछ उल्लेखनीय आर्थिक विकास हुए। तोकूगावा जापान का विकास आश्चर्यजनक रूप से हुआ तथा यह सम्पूर्ण उन्नति उसी भौगोलिक सीमा के अन्तर्गत बिना किसी विदेशी व्यापार के की गई। जिस अर्थव्यवस्था का विकास हुआ वह बुद्धिमतापूर्ण होने के साथ अस्थिर भी थी। मूल वस्तु के रूप में चावल पर निर्भरता से बाजार तथा मूल्यों में अत्यधिक वृद्धि की। यह मध्य अस्थिरता पश्चिम के स्टॉक अथवा वस्तु विनिमय की अनिश्चितता व अस्थिरता से कहीं ज्यादा थी। चूंकि तोकूगावा काल के जापानी किसी अन्य व्यवस्था से परिचित नहीं थे, अतः उनके द्वारा उत्पन्न की गई कठिनाईयों के सम्मुख उन्हें अपनी सफलताएं पर्याप्त उचित तथा स्वाभाविक लगती थी। यह निश्चित ही 20 वीं शताब्दी के बुद्धिमान प्रेक्षक के मस्तिष्क में यह शंका उत्पन्न कर सकता है कि हमारे वंशज हमें भी उसी प्रकार अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में बेवकूफ समझ सकते हैं। जैसे हम आज तोकूगावा कालीन जापान को समझते हैं। प्रारम्भिक सामाजिक धरोहर के विपरीत आर्थिक विकास इतना असम्भव था कि जापानियों को व्यवस्थित व्यवस्था की समस्याओं के बारे में व्यवस्थित रूप से सोचने के लिए मजबूर होना पड़ा।

5–सामंती विधि का अधिकृत अध्ययन हेमिनो वाई की नई संपादित रचना निहोन को दाई होटेन पूर्वोद्धत है, एन मिउरा पूर्वोद्धत होजेर्गा नो केनक्यू भी देखिये, इकेन योजिकाना की रचना हिस्ट्री ऑफ जापानीज लीगल सिस्टम टोक्यो, 1912 जापान के टोक्यो विश्वविद्यालय के विधि 1 प्रोफेसर की उच्चस्तरीय रचना है। इस पर अंग्रेजी में संपूर्ण वर्णन जॉन हेनरी विगमोर द्वारा विशेषतया इसका प्रथम भाग व प्रस्तावना देखिये टी ए एस जे वाल्ट बीस (1892) पूरक अंक

अध्याय 14

समुद्री-राज्यों का आवागमन

यद्यपि जापान का इतिहास पश्चिमी संपर्क से पहले पर्याप्त गत्यात्मक रहा था, तथापि ईसाई-जगत उससे भी अधिक गत्यात्मक था। जापान एक प्रकार के सामन्तवाद से दूसरे प्रकार के सामन्तवाद की ओर अग्रसर हुआ तथा पुलिस राज्य में सर्वोत्कृष्ट उदाहरण के रूप में विकसित हुआ। तभी मध्य कालीन ईसाई जगत् के सम्पन्न अवशेषों में से यूरोप के राष्ट्र राज्य विकसित हुए तथा मानव इतिहास में सर्वप्रथम उन्होंने सम्पूर्ण धरती को अपनी शक्ति-राजनीति का विश्व बना लिया।

जापान के इतिहास में महानतम् परिवर्तन अन्य एशियाई देशों में महान् परिवर्तन के समान वाह्य सम्पर्क के कारण आया। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में आज भी यह सत्य है कि पश्चिमी यूरोप के लोग अपने अमेरिकी, दक्षिणी अफ्रीकी तथा आस्ट्रेलियाई वंशजों तथा पूर्व यूरोपियन प्रतिद्वद्वियों के साथ विश्व की सर्वाधिक गत्यात्मक मानव जाति है। सोलहवीं शताब्दी के पश्चात् पहले दूर से तथा बाद में निकटता से एशिया में परिवर्तन पश्चिमी जगत द्वारा निर्धारित प्रतिमानों के आधार पर हुआ है।[1]

किन्तु यहां यह कहना अधिक उचित न होगा कि इस काल में जापान की अपनी गत्यात्मकता समाप्त हो गई थी अथवा जो भी परिवर्तन हुए वे सब जापान के बाहर से आने वाले दबाव के कारण थे। यद्यपि पाश्चात्य सम्पर्क महान् था, तथापि उससे भी महान् जापानियों के राष्ट्रीय चरित्र की अत्यधिक रचानात्मकता थी, जिसे पश्चिम से प्रोत्साहन मिला इस प्रकार एक प्रमुख कारक एक मात्र कारक बता देना अतिशयोक्ति करना होगा अतः पाश्चात्य सम्पर्क में आने पर जापान की सरकार में जो परिवर्तन आए, उन्हें बताने से पहले उस काल में स्वयं ताकूगावा जापान में क्या हो रहा था, उसकी भूमिका बता देना अधिक बुद्धिमतापूर्ण होगा।

संकट का वर्ष –

1869 के वर्ष को जापान द्वारा समुद्री राज्यों के अगमन पर उनके साथ अपनी शासन-व्यवस्था के अनुकूल की प्रक्रिया का चरमोत्कर्ष काल कहा जा सकता है। इन समुद्री राज्यों की शक्ति पर, पैदल सेना पर अथवा घुड़सवारों पर निर्भर नहीं करती थी, अपितु उन समुद्री सेनाओं पर निर्भर करती थी, जो विश्व में कहीं भी समुद्र पर जा सकती थी।

1868 तक का काल जापान में दबाव, चुनौती, प्रयास तथा तैयारियों का काल था। उसके बाद जापानियों ने आधुनिकीकरण की प्रतिद्वंद्विता को स्वीकार लिया तथा अपनी सेनाओं, विधि तथा अधिकांश सरकार पाश्चात्यीकरण की अनिवार्यता को पूरा किया।

1–इस परस्पर सांस्कृतिक प्रभाव के परिपक्व अध्ययन के लिये जिसमें जापान को मूल उदाहरण के रूप में लिया गया है, जार्ज वैंडम की नवीनतम रचना दि वेस्टर्न वर्ल्ड एण्ड जापान देखिये।

14 मार्च, 1868 को नेनो ने सभी राजकुमारों तथा उच्च अधिकारियों को शिशिदेन अथवा शाही महल के अन्दरूनी उपासनागृह में बुलाया तथा अपने कुल देवताओं के सम्मुख नई विचित्र शपथ ली। इस शाही शपथ ने एक नवीन शासन की नींव के रूप में कार्य किया सम्राट ने अन्त में कहा —"इस अभूतपूर्व सुधार को पूरा करने के लिए हम अपनी जनता के सम्मुख जाएंगे तथा स्वर्ग तथा इस धरती के देवताओं के सामने उन मूलभूत राष्ट्रीय सिद्धान्तों की घोषणा करेंगे जिन के आधार पर सार्वजनिक कल्याण हो। हमारी सम्पूर्ण प्रजा, इन सिद्धान्तों के आधार पर एकताबद्ध होगी।[2]

इस शपथ में परम्परा तथा नवीनता का विशिष्ट मिश्रण था। एक बार फिर जापानियों के सामने आन्तरिक कठिनाईयां तथा बाह्य चुनौती थी और जापानियों ने इसका प्रत्युत्तर एकता की ओर उन्मुख होकर अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा करते हुए किया था। एक बार फिर सम्राट के नाम पर तथा जापानी देवताओं की उपस्थिति में मूलभूत राष्ट्रीय सिद्धान्तों को प्राप्त करने के लिए सम्पूर्ण प्रयासों का आह्वान किया गया। इस शपथ के साथ जापानियों ने शोगुनेत के संकट को आन्तरिक रूप से बहुत पीछे खदेड़ दिया तथा बाह्य रूप से वे पश्चिमी देशों के संकट का सामना करने के लिए तत्पर हुए। इस बार जापानी स्वयं अपने देश को राष्ट्रीय राज्य बनाने के लिए तत्पर हो गए।

एक राष्ट्रीय राज्य की स्थापना करना मात्र पाश्चात्यीकरण की प्रक्रिया नहीं है। इस प्रक्रिया के दौरान पाश्चात्य विद्वानों ने पहले तो इसकी मुक्त कंठ से प्रशंसा की। बाद में मुक्त कंठ से इसकी आलोचना की तथा ये उस पूर्वी मेयजी जापानी जीवन को कौतुक की दृष्टि से देखते हैं जिन्होंने मेयजी आधुनिकीकरण को संभव बनाया।[3]

इस सामंजस्य की प्रक्रिया की सर्वाधिक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि दस हजार वर्ष तक शासन में रहने के बाद भी व्यापारिक तथा सामन्ती तत्वों में सामजस्य उससे पूर्व के शासन काल से ही उत्तराधिकार में प्राप्त किया गया था। पूर्वकालीन सामन्ती नेताओं को शूरवीरता का सिद्धान्त संक्रमण काल के दौरान भी निरन्तर बना रहा। वर्ग सामंजस्य की भाषा में अगर कहा जाए तो उच्च वर्ग के समुराई से निम्नवर्ग के समुराई की ओर संचरण हुआ। आधुनिकीकरण के पश्चात् जो सरकार अस्तित्व में आयी वह प्राचीन जापान की कुल सरकार से उल्लेखनीय समानता रखती थी तथा उसकी दूसरी रचना जापान का प्रशासनतन्त्र था।

आर्थिक अर्थों में जापान के मेयजी रूपान्तरण ने उसे पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का पोषण करने वाले केन्द्र के रूप में विकसित किया। मेयजी जापन की अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ नीति हिदेयोशी की व्यापारिक नीति तथा फ्रेडिक लिस्ट के नेशलन सिस्टम डी पॉलिटिशेन

2—पाच सिद्धान्तों के चार्टर तथा पूर्ववर्ती प्रारूप फुजी जितारो तथा मोरिया विदेसुको की रचना सिचेसिस ऑफ दि हिस्ट्री आफ जापान दि मेयजी एरा टोक्यो, 1934 पृष्ठ 213, 216 सकलित हैं। इसका सरकारी अनुवाद दि जापान इयर बुक 1946-49 पूर्वोद्धत पृष्ठ 70 में उपलब्ध में चार्टर की शपथ के लिए देखिये 15 वां अध्याय पृष्ठ 350।

3. मेयजी 1867-1012 के काल में शासक की पदवी रहा है। नार्मन की पूर्वोद्धृत पुस्तक जापान्स एमर्जेन्स एण्ट ए मार्डन स्टेट अंग्रेजी में पर्याप्त उपयोगी अध्ययन हैं। यह तोकूगावा काल से 1889 से मेयजी युग के सुदृढ़ीकरण को निहित करता है। नार्मन का विश्लेषण क्रमवार न हो कर 1905 पोर्टसमाउथ की संधि तक विषयावार है।

अर्थनामी का संयोजन थी। इस प्रकार एक जापानी अर्थशास्त्री, डा. नागी ने मेयजी काल को व्यापारिक काल का अन्तिम युग कहा है। वुकिंग संस्था के डा० मॉल्टन यह मानते हैं कि सर्वप्रथम जापान में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को नियोजन के नियन्त्रण में कर दिया गया था।

जनसंख्या की दृष्टि से जापान में यह परिवर्तन अत्यधिक जन्मदर तथा मृत्युदर वाले जापान से स्थिर जनसंख्या वाले जापान की ओर मृत्युदर की कमी तथा जन्मदर में वृद्धि तथा शिशुओं के स्वस्थ रहने की ओर संक्रमण था। परिणामतः जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ी तथा रूपान्तरित अर्थ-व्यवस्था को बढ़ी हुई जनसंख्या का भार वहन करना पड़ा।

इस बढ़ती हुई जनसंख्या के पिरामिड का कृषि-आधार अत्यधिक भूस्वामित्व के एकीकरण तथा कृषि के परम्परागत तरीकों की वजह से भार युक्त बना रहा। इन सबका परिणाम था। अतिरिक्त जनसंख्या, स्त्री-श्रमिकों की संख्या में वृद्धि, सीमित जापानी बाजार तथा जबर्दस्ती भर्ती किये गए कृषक रंगरूटों की सेना। राजनीतिक दृष्टि से इस कृषक प्रधानता ने जापान के सांस्कृतिक व्यक्तित्व को वह विशेषता प्रदान की जो प्रायः बाद के प्रेक्षकों को विचित्र लगती है, अर्थात् वह सांस्कृतिक एक साथ क्रान्तिकारी तथा प्रतिक्रियावादी है।

यहाँ यह जानना जरूरी है कि स्वयं जापानियों के लिए तोकूगावा तथा मेयजी काल के मध्य भेद इतना तीव्र नहीं है जितना पश्चिमी प्रेक्षकों को लगता है। यद्यपि जापान के इतिहासकार यह स्वीकार करते हैं कि मेयजी पुनरुत्थान काल की महान् सफलता राजनीतिक एवं आर्थिक एकीकरण था। तथापि वे अक्सर यह बताते हैं कि इस काल में जापानी सामन्तवाद में से अनियमित रूप से केन्द्रीय सत्ता का विकास हुआ। आधुनिक जापानी अपनी राष्ट्रीय चेतना को, जो प्रजातीय राज्य (मिजोकू कोक्का) के विचार में अचेतन रूप से निहित है, प्राचीनतम काल से प्राप्त धरोहर के रूप में स्पष्ट करने का प्रयास करते हैं।

प्रजातिवाद मार्क्सवाद से अच्छा आधार नहीं बन सकता है। जापानी आधुनिकरण की विशिष्ट महत्ता यह है कि इसने जापान तथा पश्चिमी जगत पर उस समय आघात किया, जब वह अपने भूतकाल की तुलना में अच्छे ढंग से प्रशासित थे तथा तीव्र गति से सम्पन्नता करते हुए भविष्य के लिए पर्याप्त आशावान थे।

4–सेमुराई की विजय के लिए होंजो की पूर्वोद्धृत रचना किन्सेइ होकेन शकाई नो केन्क्यू अध्याय 10 खंड 2 पृष्ठ 133-3 देखिये। संपूर्ण तथा चोनिन (साहित्य दृष्टि से कस्बे के लोग तथा व्यापारी वर्ग) के मध्य गठ बंधन के लिए होराई यासुजो की रचना एन आउट लाइन ऑफ दि राइज ऑफ माडेन कैपिटलिजम इन जापन क्योटो यूनिवर्सिटी इकोनामिक रिव्यू, खंड 11 संख्या 1 में प्रकाशित (जुलाई 1930 पृष्ठ 99–101 देखिये। इसी लेखक की अन्य रचना 'दि इकोनोमिक सिग्नीफिकेंस ऑफ दि मेयजी रिस्टोरेशन" पूर्वार्द्ध खंड बारह संख्या 2 दिसंबर 1937) पृष्ठ 81 देखिये।

5. जापानी स्पष्टीकरण से सर्वाधिक भिन्न स्पष्टीकरण मार्क्सवादी सूत्र है जो मेयजी पुनरुत्थान को बुर्जुआ की तथा पूंजी पतियों की क्रान्ति मानता है। एक सोवियत लेखक स्पेटलोव ने अपनी रचना में जिसका अनुवाद रूसी से जापानी फिर अंग्रेजी में किया गया तथा जिसका शीर्षक "दि ग्रोथ ऑफ जापानीज कैपिटलिज्म" है लिखा है– "तोकूगावा कालीन जापान की तुलना सामंत वाद के अन्तिम चरण में पहुंचे राष्ट्र से की जा सकती है अर्थात् इसमें पूंजीवादी उत्पादन पद्धति, आरम्भ हो चुकी थी, घरेलू उद्योग तथा

मूल निवासियों का संकट—

तोकूगावा व्यवस्था के पतन के साथ आधुनिकीकरण की व्यवस्था में गति आई शोगुनेत के पतन का आरोप मात्र पश्चिमी शक्तियो पर ही नही लगाया जा सकता है। इस का दायित्व, यदि जापानी दृष्टिकोण से देखा जाए, तो तोकूगावा की असफल नीतियों पर भी उतना ही था। कृषक असन्तोष तथा प्राकृतिक प्रकोपो ने कमाडर पैरी के पहुँचने से पहले ही तोकूगावा जापान को चिंताजनक सकट की स्थिति तक पहुँचा दिया था। यह जापान के लिए अप्रत्यक्ष रूप से वरदान सिद्ध हुआ कि आन्तरिक संकट ने जापान के लिए उसी समय परिवर्तन आवश्यक बना दिया, जब बाह्य संकट ने जापान को विश्व में अपनी राष्ट्रीय स्थिति तथा परिस्थिति की पुनर्व्याख्या के लिए बाध्य किया।

विनाशकारी प्रभावो मे से आर्थिक प्रभाव मूलभूत महत्व के थे।[6] समुराई वर्ग ने कृषको पर बड़े अत्याचार करने शुरू किये, जिनका शोषण उदीयमान असंतुष्ट व्यापारी वर्ग कर रहा था। जब समुराई तथा उनके दैम्यो ने अपने ऋण के बोझ को, पहले से दबे हुए कृषको पर स्थानान्तरित किया तो प्राचीन अर्थव्यवस्था टूट गई तथा उसके स्थान पर सम्पूर्ण जापान में व्यापार-प्रधान अर्थव्यवस्था स्थापित हुई। किसी भी व्यापार-प्रधान अर्थव्यवस्था का मूल आधार धन होता है। तोकूगावा अर्थव्यवस्था का पतन प्राचीन अर्थव्यवस्था में धन सम्बन्धी मूल्यो के प्रवेश से प्रारम्भ हुआ। जिसका मूल कारण स्वय तोकूगावा नेताओ के साथ परिवर्तनशील समाज में धन के महत्व को समझने की असफलता थी। केन्द्रीय शोगुनेते तथा स्थानीय दैम्यो दोनो को अर्थ संकट का सामना करना पड़ा। राजस्व से व्यय अधिक बढ़ गया। बंधक रखने की व्यवस्था ने जिसका वर्णन पिछले

व्यापारिक पूंजीवाद का प्रारम्भ हो चुका था। यह 1789 से पहले फ्रांस तथा 1861 से पहले से रूस के समान था यद्यपि यह यूरोपियन मॉडल से पूर्णत. भिन्न जापानी मॉडल था तथा इसे कई विशेषताओं के आधार पर पृथक देखना चाहिए। इस विश्लेषण का यह महत्त्व है कि यह जापान के अनूठेपन को स्वीकार करता है तथा वह तोकुगावा को ऐतिहासिक निर्धारणवाद के अन्तर्गत मानता है। जबकि दूसरी ओर यह मार्क्सवादी की सफलता है कि वह वर्ग-संघर्ष के सिद्धान्त को लागू करने मे असफल रहता है क्योकि पूंजीवादी विनियोग सर्वप्रथम सामंती कुलो मे प्रारंभ हुआ। लघु पूंजीवादी जिनसे सामंती अड्डो पर आधिपत्य करने की अपेक्षा की गई पहले से ही इस क्रम मे प्रवेश कर चुके थे यह परिवर्तन क्रान्तिकारी न सही, तीव्र अवश्य था, अप्रत्याशित तथा तानाशाही द्वारा नियंत्रित था, शक्ति संतुलन को विचलित करने मे जनसामान्य का योग बहुत कम था। इस मार्क्सवादी दृष्टिकोण के लिए स्वेटलोव की मूल रूसी रचना।

यदि जापानी परिवर्तनो को स्पष्ट करने मे मार्क्सवादी असफल रहते हैं तो यह कहना भी उपयोगी नही है कि जापान फासिस्ट युग मे पहुँच गया (फ्रेडा उटले, जापान्स फीट ऑफ क्ले न्यूयार्क, 1937 पृ. 221) मे समुराई के प्रति क्रान्तिकारी कहता है इस समय क्राति तथा प्रतिक्रांति जैसे पदो को छोड़ कर नार्मन के इस निर्णय को स्वीकार करना उचित होगा कि मेयजी पुनर्स्थापना का उद्देश्य गैर सामंती था। देखिये नार्मन, पूर्वोद्धत पृष्ट 43।

6 यहा पूर्णत स्पष्ट हो जाना चाहिये कि जिन दबावो ने तोकुगावा कालीन जापान का मेयजी जापान मे रूपान्तरण सम्भव बनाया उन्हें समझने के लिए मार्क्सवादी दृष्टिकोण को अपनाया जाये। कई जापानी तथा पश्चिमी विचारक सहजता मे सामन्तवाद के आतरिक सकट अथवा तोकुगावा अर्थव्यवस्था के परस्पर विरोधाभास पदो का प्रयोग कहते हैं। इस प्रकार के मुहावरे यद्यपि निर्धारक दबावो को निहित कहते हैं किंतु सक्रिय कारको की जटिलता को स्पष्ट करने मे असमर्थ रहते हैं। इस विषय पर सैंसम ने विस्तृत चर्चा की है। दि वेस्टर्न वर्ल्ड, पूर्वोद्धृत पृ 223–233।

अध्याय में किया गया है, भद्र वर्ग की गरीबी को बढा दिया तथा निरन्तर घाटे की व्यवस्था को अस्थिर मुद्रा तथा थोपे गए ऋणों से बनाये रखने का प्रयास किया गया। इस प्रकार जब देश दिवालिया हो रहा था तोकूगावा नेता नैतिक सिद्धान्तों पर शासन करने का प्रयास कर रहे थे।

आर्थिक परिवर्तनों के समानान्तर सामाजिक परिवर्तन भी हुए राजनीतिक असन्तोष बढ़ता गया। कृषकों को अपना व्यवसाय अनाकर्षक लगा तो वे निरुउ द्देश्य विद्रोह की ओर प्रेरित हुए या उन्होंने व्यवसाय छोड़ कर नगरों की ओर जाना प्रारम्भ कर दिया। कृषि-भूमि उत्तरोत्तर कम होती गई। इस कमी से उत्पादन में कमी आई। कृषि-प्रधान व्यवस्था की इन दुर्बलताओं के कारण जो आज भी स्पष्ट हैं, नैतिक व मनोवैज्ञानिक असन्तोष व्यक्त होने लगे। 19 वीं शताब्दी के जापानियों ने सेना के लक्षणों को स्वयं रोग समझ लिया तथा पुनः भूमि के वितरण तथा छोड़े गये खेतों में कृषि कार्य प्रारम्भ किया तथा इसके लिए नीति सम्बन्धी अथवा नैतिक नेतृत्व का सहारा भी लिया। इस विनाश काल के अन्तिम वर्षों में निनीयिमा सोनतोकू (1787-1856) नामक संत तत्कालीन कृषि अर्थव्यवस्था पर प्रशंसनीय किन्तु निरर्थक एवं नैतिक प्रकार करने के लिए पर्याप्त लोकप्रिय हुआ जिन कृषकों ने विद्रोह किया उनमें भी सामन्ती व्यवस्था को समाप्त करने का आग्रह नहीं था। यह विद्रोह एक सामान्य असन्तोष था। जो इस बात का द्योतक था कि प्राचीन व्यवस्था में अत्यधिक त्रुटियां थीं।[7]

इस समय व्यापारियों तथा पूर्व आधुनिक उद्योगपतियों को पर्याप्त लाभ हुआ। घरेलू व्यापार ने चावल व अन्य वस्तुओं के क्षेत्र में पर्याप्त वृद्धि की। अधिकांश वस्तुओं का उत्पादन निरंकुश किन्तु परिष्कृत पूंजीवादी क्षेत्र का प्रयास था। ग्रामीण उद्योग के विकास के परिणाम स्वरूप सम्पत्ति का स्थानान्तरण सामंती वर्गों से नवीन व्यापारी उद्यमकर्ता को हो गया। एकाधिपत्य के विस्तार से विशेष रूप से दक्षिण पश्चिम के बाह्य कुलों में आर्थिक तथा राजनीतिक गतिविधियों का विस्तार निम्न समुराई लोगों के हाथ में हो गया।

उच्च वर्ग की समुराई के हाथों से शक्ति का स्थानान्तरण व्यापारियों तथा निम्न समुराई वर्ग में होने के पश्चात् तोकूगावा कालीन सम्पूर्ण वर्ग व्यवस्था के लिए संकट उत्पन्न हो गया। सामाजिक परिवर्तन के एक जापानी विद्वान् डॉ. काठा तेसुत्जी ने एक योद्धा की उभयपक्षी स्थिति का वर्णन किया है। उसने धन प्रधान नवीन अर्थव्यवस्था तथा चावल पर आधारित परम्परागत वस्तु प्रधान अर्थव्यवस्था के विरोधाभास को सुलझाने का प्रयास

7. तोकुगावा शासन में कृषक असंतोष निष्क्रिय तथा सक्रिय दोनों रूपों में अभिव्यक्ति हुआ। शिशु हत्या तथा गर्भपात द्वारा बढ़ती जनसंख्या को नियन्त्रित करने का प्रयास किया गया। असन्तोष की सक्रिय अभिव्यक्ति अधिक गंभीर थी : भूमि से विद्रोह कृषक विद्रोह, चावल के दंगे में कुछ उनके उदाहरण थे। तोकुगावा कालीन कृषक समस्याओं, जनसंख्या दबाव तथा दंगों ने व्यापक पैमाने पर अध्ययनों का विषय बने हैं। जापानी में होंजो की रचना "किनसेई होकेन शाकाई नो केन्या" पूर्वोघृत अध्याय 7 पृ. 84 में जनसंख्या समस्या पर विचार किया गया है। अंग्रेजी में विस्तृत अध्ययन ह्यू बोर्टन की रचना पेजेंट अपराईजिंग इन जापान ऑफ दि तोकुगावा पीरियड" है। पृ. 70 पर लेखक एक टिप्पणी दो जापानी प्रोफेसरों के दृष्टिकोणों का सारांश प्रस्तुत करते हुए कहता है—कोकुशो का विश्वास था कि उन्होंने बाकूफ के पतन में सहायता अवश्य की किंतु समाज को परिवर्तित करने का उनका कोई विचार नहीं था। प्रोफेसर बार्टन का निष्कर्ष था,........."वे क्रांतिकारी आंदोलन का प्रतीक नहीं थे; कृषकों को अपने आर्थिक कष्टों विरुद्ध किये गए विरोध मात्र थे"।

किया है। इस प्रकार नगर-प्रधान अर्थव्यवस्था का विकास सामंती व्यवस्था के आन्तरिक विनाश का मूल कारण था।

इस प्रकार के आर्थिक कुसमायोजना तथा सामाजिक असंतोष ने तोकूगावा शासन के विरुद्ध असंगठित राजनीतिक आन्दोलन को जन्म दिया। धीरे-धीरे केन्द्रीय सत्ता समाप्त होती गई तथा उसका विरोध किया जाने लगा तथा शोगुनत द्वारा वहिष्कार को समाप्त करने के प्रयासों का खंडन किया जाने लगा। तोकूगावा के विरोध के परिणाम स्वरूप अप्रभावित कुगे, तोज्या तथा व्यापारियों ने अपना संगठन बना लिया। तोकूगावा शासन का विरोध दूसरी ओर सैद्धान्तिक विचारधारा के आधार पर शुद्ध शितो के पुनरुदय ने चीनी वस्तुओं के विरोध तथा जापानी वस्तुओं के गौरव पर बल दिया जाने लगा। कई बौद्धिक संस्थानों ने यह प्रमाणित किया कि शोगुन एक कार्यकर्ता मात्र था तथा वैधानिक शासक मात्र सम्राट ही हो सकता था।

जापान के रूपान्तरण के इतिहास में जिस तथ्य की उपेक्षा की गई है, वह 1880 से पूर्व काल में सम्पन्न ग्रामीण वर्ग का इस प्रक्रिया पर वैचारिक प्रभाव है। शीघ्र ही साहूकार गिरवी रखने वाला व्यापारी तथा छोटे उद्योगपतियों में से स्थानीय अधिकारियों की नियुक्ति होने लगी। ये लोग शिक्षित थे जिनके विद्वानों से सम्बन्ध थे इन्होंने आर्थिक कुंठा का सामना बुद्धिमत्तापूर्ण ढ़ग से किया। उन्होंने राज्य के अधिकार को तथा जबर्दस्ती थोपे गए ऋणों का विरोध किया। उन्होंने इस प्रक्रिया में दो प्रकार से सहायता की, पहले स्वामिविहीन वर्ग की सहायता करनी प्रारम्भ की तथा बाद में तोकूगावा शासन के विरुद्ध शस्त्र लेने में भी आर्थिक सहायता दी। यद्यपि ऐतिहासिक विवरणों में इस तथ्य की उपेक्षा की जाती है, तथापि ये ही लोग उत्तर मेयजी के वे पूवगामी थे, जिन्होंने प्रजातन्त्रीय अधिकारों का उल्लंघन किया था।[9]

अमेरिका के कमोडेर मैनेजर केलब्रेथ पैरी के आगमन के साथ ही संकट में तीव्रता आई।

पैरी के आगमन ने एक सतुष्ट एवम् प्रसन्न समाज में हलचल पैदा की थी, अपितु उसने दो भिन्न जापानी राजनीतिक आर्थिक दर्शन के मध्य विकासरत संकट को तीव्रता मात्र प्रदान की थी।

प्रथम प्रकार उन विचारकों का था जो पाश्चात्य विचारों से पूर्णतः अप्रभावित रह कर तोकूगावा की उभयपक्षी स्थिति का चीनी अथवा जपानी समाधान प्रस्तुत करते थे।[8]

8 कादा तेत्सुजी, मेयजी शोकी-शाकाई केजाई-शिशोशी (हिष्ट्री ऑफ सोश्यो-इंकानोमिक थॉट इन दि अर्त्या स्टेजेस ऑफ दि मेयजी एम.) टोक्यो, 1937 पृ, 23-28, भाग। अध्याय 3 सामती व्यवस्था मे विरोधाभास "पृ. 100। नवीन जापाजी साहित्य का सर्वेक्षण जाच व्हिटने हाल का लेख" दि तोकुगावा बाकूफू एड दि मर्चेंट क्लास आकेजनल पेपर्स ऑफ दि सेंटर फोर, जापाजीज स्टडीज, सख्या 1 (1951), एन आर्यर, मिचीगन विश्वविद्यालय प्रेप पृ. 26-33।

9. सौभाग्य वश डा० नोबुनका आइके (अक्टूबर पुस्तकालय स्टेनकोर्ड मे है) ने नार्मन के अध्ययन मार्ग को ग्रहण किया तथा अपनी रचना "दि बिगनिंग्स ऑफ पॉलिटिकल डेमोक्रेसी इन जापान," बाल्टीमूए 1950 विशेपतया दूसरा अध्याय पृष्ठ 18-23 से इस शून्य को भर दिया।

इतनी उद्देश्यपूर्ण है कि जिसे मात्र शिक्षा नहीं कहा जा सकता है तथा इतनी स्थायी है कि उसे मात्र अस्थायी प्रचार भी नहीं कहा जा सकता है।[5]

कल्पना तथा एकीकरण

प्रारम्भिक चाऊ काल की जागीरें उत्तरकालीन चाऊ काल के कू (राज्य) वन गये। ये कू राष्ट्रों के समान थे। ये राज्यों की कई विशेषताएँ रखते हुए भी पूर्णतः आधुनिक राष्ट्रों के समान नहीं थे। तथापि व्यावहारिक रूप में उनका स्वरूप 18, 19 तथा 20वीं शताब्दी के पश्चिमी जगत् के राष्ट्रीय राज्यों से अधिक भिन्न नहीं था। उनमें राष्ट्र संघ तथा संयुक्त राष्ट्र संघीय व्यवस्थाओं के समवर्ती व्यवस्थाएँ थीं, नाटो तथा एन्जू जैसी व्यवस्थाएँ थीं। ये वास्तविक राजनीतिक व्यवस्थाएँ उनकी आदर्शात्मक समकक्षी थीं। वे उसी प्रकार नष्ट हुईं जिस प्रकार की भविष्यवाणी अक्सर हमारे राष्ट्रीय राज्यों के लिए की जाती है कि एक स्वार्थी, आतंकपूर्ण वहादुर तथा उग्रवादी राष्ट्रीय राज्य ने अन्य राज्यों को नष्ट कर दिया।

विजेता राज्य चे-इन (255–206 ई० पू०) था। चाऊ काल के उत्तरार्द्ध में चे-इन की राजनीति जर्मन राज्यों में एशिया के उदय से साम्यता रखती है। एक कुशल शासक, वास्तविक योद्धा, योग्य रण नेतृत्व तथा शक्ति की निरन्तर आकांक्षा इन सब तत्त्वों ने मिल कर चे-इन को विजयी वनाया। चे-इन के राजा ने स्वयं को मानवीय सभ्यता का पहला वास्तविक शासक घोषित किया तथा उसने एकीकरण के ऐसे कठोर तरीकों को अपनाया कि आज तक चीन पर उसका प्रभाव देखा जा सकता है। उसने भविष्य को सुरक्षित करने के लिए वर्तमान को नष्ट किया। अपनी निरंकुशता को स्थापित करने के लिए उसने भूतकाल के विरुद्ध वौद्धिक अवरोध तथा उत्तरी वर्वरो के विरुद्ध भौतिक अवरोध रचे। चीन की सांस्कृतिक धरोहर को नष्ट करने के लिए उसने पुस्तकों को जलाने के आदेश दिये ताकि आने वाली पीढ़ियाँ उसे ही चीनी सभ्यता का संस्थापक व निर्माता मानें। उसने जार, कैसर अथवा सीजर से कहीं अधिक धृष्ट उपाधि धारण की। उसने स्वयं को शीह-हुवांग-ती अर्थात्–प्रथम सम्राट कहा। उसने सभी राजनीतिक तथा नीतिशास्त्रीय प्रतिष्ठित ग्रन्थों को जलवा दिया तथा परम्परागत इतिहास के अनुसार उसने अपने आलोचक विद्वानों को जिन्दा गड़वा दिया। उसने कठोर कानून वनवाये, दण्ड को कड़ा किया, कठोर श्रम व सैनिक व्यवस्था लागू की। जनता आतंकित हो गई तथा परस्पर अविश्वास रखने लगी तथा उसने शिक्षा को अपनी सर्वशक्तिशाली सरकार का आधार वनाया। यदि वह अधिनायकत्व में हिटलर तथा मुसोलिनी में आगे नहीं वढ़ सका तो यह उसका दोष नहीं था। उसने अपनी क्षमता के अनुसार सभी प्रयास किये। लौह आवरण के स्थान पर उसने वाह्य विश्व से चीन को पृथक् करने के लिए चीन की दीवार का निर्माण किया, जिसका पर्याप्त भाग आज तक विद्यमान है। (वाद के राजाओं ने इस दीवार को सुरक्षित रखा

5. 15 वर्ष पूर्व इन पुस्तक के लेखकों में एक ने इस समस्या के कुछ पक्षों का अध्ययन करने के लिए चीनी जीवन में राजनीति की भूमिका का अध्ययन करने का प्रयास किया। यह पाल लिनवर्गर की पुस्तक गवर्नमेंट इन रिपब्लिकन चायना, न्यूयॉर्क, 1938 थी। वही लेखक उस पुस्तक का एक नवीन संस्करण प्रस्तुत कर रहा है जो व्यापक रूप में चीनी लोगों के राजनीति में वाद के अनुभवों तथा असफलताओं, स्वयं लेखक द्वारा निजी अनुभव के आधार पर कुछ मूल समस्याओं के पुनर्विचार तथा इस विषय की लगातार वढ़ती हुई उपयोगिता के प्रकाश में लिखी गई है।

तथा उसे बढ़ाया गया तथापि इसकी नींव रखने वाला सम्राट यही था।) इस दीवार को बनाने के लिए उसने सैकड़ों व हजारों मनुष्यों की जानें लीं। इस वृहत् कार्य को किसी भी रूसी अथवा नाजी कार्यक्रम की तुलना में पर्याप्त तीव्र गति से किया गया।

चीनी इतिहासकारों ने प्रथम सम्राट से शांत किन्तु उपहासप्रद रूप में प्रतिशोध लिया है। उन्होंने उसे 'प्रथम सम्राट' न कहकर 'चे इन शिह हुआंग ही' अर्थात् चे-इन प्रथम सम्राट कहा। आंग्ल भाषा में 'एम्परर' पद के समवर्ती का प्रयोग चीन में अब तक नश्वर शासकों के द्वारा प्रयुक्त नहीं किया गया था। क्योंकि चाऊ राजा स्वयं को स्वर्ग के पुत्र कहा करते थे। चाऊ राजवंश की सामन्ती व्यवस्था तथा चे-इन राजवंश की अधिनायकवादी व्यवस्था में न केवल पदों का अन्तर था अपितु अन्य कई भिन्नताएँ भी थीं। चाऊ व्यवस्था में स्वर्ग के पुत्र तथा सामन्ती लॉर्ड के मध्य शासन के उत्तरदायित्व का समान विभाजन था। किन्तु चे-इन व्यवस्था में सम्पूर्ण शक्ति स्वयं सम्राट में केन्द्रित थी। प्रथम सम्राट ने बिना किसी दया-भाव अथवा हिचकिचाहट के वध, अपहरण, पूर्व निर्धारित मृत्यु-दण्ड तथा राजनीतिक रूप से शंकास्पद लोगों के सामूहिक वध के तरीकों का प्रयोग किया।

स्थानीय शासन के स्तर पर इस प्रथम सम्राट तथा उसके पुत्र ने पूर्ववर्ती फ़ू के स्थान पर प्रान्तों की भिन्न व्यवस्था का निर्माण किया जो चुन कहलाये। चुन व्यवस्था की मूल विशेषता उनकी एकरूपता थी। इस काल में चीनी भाषा को एकरूप स्तर प्रदान किया गया। सभी भाषा सम्बन्धी स्थानीय भिन्नताओं को समाप्त कर एक सरकारी शब्दकोश तथा शैली का निर्माण किया गया। सभी वस्तुओं को सम्पूर्ण चीन के लिए एकरूप बनाया गया। यहाँ तक कि गाड़ियों के पहिये की चौड़ाई का भी निर्धारण किया गया ताकि प्राचीन चीन में पत्थर से बने अपरिष्कृत किन्तु उपयोगी रेल-मार्ग व्यवस्था के माध्यम से गाड़ियाँ बिना स्थानीय परिवर्तनों की कठिनाइयों का सामना करे मार्ग तय कर सकें। स्थानीयता तथा विशेषीकरण को बर्बरतापूर्ण ढंग से दबा दिया गया। सम्पूर्ण चीन को संचार व्यवस्था से सम्बन्धित किया गया। लोगों को निःशस्त्र किया गया ताकि उनकी सुरक्षा में वृद्धि हो तथा इस प्रकार से जब्त किये गये शस्त्रों को गला कर 12 वृहत् आकृतियों का निर्माण करवाया गया।

चीन में इस विश्वास को व्यापक समर्थन प्राप्त है कि मात्र शक्ति व दमन पर आधारित सरकारें अधिक दिनों तक नहीं टिक सकती हैं। 210 ईसा पूर्व में प्रथम सम्राट की मृत्यु के पश्चात् लोगों ने अधिनायकवाद के विरुद्ध विद्रोह कर दिया तथा साम्राज्य नष्ट-भ्रष्ट हो गया। वह महान चे-इन राजवंश का साम्राज्य जो उस महत्त्वाकांक्षी निर्दयी सम्राट के द्वारा 10,000 पीढ़ियों तक सुरक्षित रहने के लिए निर्मित किया गया था, वस्तुतः कुल 14 वर्ष तक ही स्थित रहा (सम्राट के द्वारा चे-इन-शही-हुआंग-ती का पद ग्रहण करने के पश्चात्)।

चे-इन के पश्चात् फ़ू का पुनर्निर्माण नहीं किया जा सका। विभिन्न शासक वंशों को नष्ट कर दिया गया था, प्राशासनिक व विद्वत नेतृवर्ग का वध कर दिया गया था या वे लुप्त हो गये थे तथा निवर्तमान फ़ू की सीमाएँ पूर्णतः समाप्त कर दी गईं। सम्पूर्ण चीन को भयावह कीमत पर एकताबद्ध कर दिया गया था तथा एक बार एकता प्राप्त करने के पश्चात् चीन में पुनः स्वच्छन्द विभाजन की कल्पना सुखद लगने के बावजूद असंभव थी।

हेन राजवंश का प्रारम्भ पर्याप्त रक्त बहाने के पश्चात् हुआ। हेन राजवंश के साथ कुलीन वर्ग की प्रवृत्ति का उदय हुआ जो लगभग एक हजार वर्ष तक रही। चूँकि

हेन राजवंश (206 ई० पू० से 2 ई०) चे-इन सम्राट के अत्याचार के विरुद्ध सामान्य चीनी जनता की प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप अस्तित्व में आया था अतः इसने विदेशी नीति में उग्र तथा आक्रामक होते हुए भी जहां तक चीनी लोगों के संदर्भ में घरेलू मामलों का प्रश्न था, परम्परागत रहने का प्रयास किया तथा उन समस्याओं को बड़ी सावधानी से सुलझाया जाता था।

हेन राजवंश के बीच में एक अवैध राजवंश हसि न-चाओ अथवा नये राजवंश ने कुछ समय के लिये व्यवधान उत्पन्न किया जिसका संस्थापक एक समाजवादी सम्राट वांग मांग था। एक साम्राज्ञी के वंश के इस व्यक्ति ने दासता, निजी सम्पत्ति, धन-सम्पदा, निजी व्यापार, व्यापक युद्ध तथा परम्परागत शिक्षा को समाप्त करने के लिए स्वयं को सम्राट घोषित किया। उसने सम्पूर्ण चीन में अपने कल्पनाजन्य प्रयासों से, जो शुभ उद्देश्य के बावजूद बर्बर ढंग से लागू किये गये थे, आतंक उत्पन्न कर दिया। बाद में वैध हेन राजवंश के एक राजकुमार के द्वारा उसका दमन कर दिया गया। वांग मांग से पूर्व हेन राजवंश, पूर्व हेन काल तथा बाद वाले को उत्तरार्ध हेन काल कहा जाता है।

हेन राजवंश के युग में सम्राट की शक्तियां प्रबल मंत्रियों के कारण सीमित थीं। दरबार की वास्तविक शक्ति शाही सम्बन्धियों द्वारा हड़प कर ली गई खास-तौर पर डावेगर साम्राज्ञी के सम्बन्धियों द्वारा ऐसा किया गया (ये लोग शाही घराने से बाहर के थे तथा देश की व्यावहारिक राजनीति से इनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध माना जा सकता था)। चे-इन राजवंश की प्रथा का अनुसरण करते हुए हेन दरबार ने राज्य की अधिकांश शक्तियां चांसलर में निहित थीं जो साम्राज्ञी का सम्बन्धी होता था। चांसलर के अलावा एक मार्शल सैनिक मामलों का अध्यक्ष होता था तथा शाही आलेखक, सम्राट के सचिव के रूप में कार्य करता था। ये तीनों अधिकारी तीन लॉर्ड कहलाते थे तथा ये सम्राट के नाम पर उसकी शक्तियों का आंशिक अथवा सम्पूर्ण रूप से प्रयोग करते थे। इन चांसलरों के हाथों में अत्यधिक शक्तियां कभी-कभी अशांति व विवाद का कारण बनतीं थीं।

बाद के शाही विकास—उत्तर हेन राजवंश के अन्त तक सम्राट मात्र औपचारिक अध्यक्ष रह गया था। वास्तविक शक्ति शक्तिशाली सैनिक नेताओं के हाथ में केन्द्रित हो गई थी जो निरन्तर युद्ध तथा कूटनीतिक मामलों में अधिक रुचि रखते थे। चीनी उपन्यासों में महानतम उपन्यास 'दि रोमान्स ऑफ थ्री किंग्डम्स' जो आज भी परम्परागत चीनी ऑपेरा की अधिकांश कहानियों का स्रोत है तथा जो विषय का सर्वाधिक सुविज्ञ उपन्यास माना जाता है, उन तीन राज्यों पर आधारित है जिनमें से एक का संस्थापक वह वीर था जो हेन साम्राज्य के पतन के पश्चात् उसका उत्तराधिकारी बना।

हेन साम्राज्य के पतन के पश्चात् जो अराजकता उत्पन्न हुई तथा जितना रक्तपात हुआ, उससे त्सिन राजवंश (अथवा चिन) 265–420 ई० का उदय हुआ। त्सिन राजवंश की विशेषता शक्तिशाली परिवारों का परस्पर सम्पर्क था। इन विशाल परिवार समूहों का प्रभाव इतना अधिक था कि कोई भी सम्राट इन परिवारों की सहमति के बिना किसी से भेंट भी नहीं कर सकता था। इस नवीन कुलीन वर्ग का उदय मुख्यतया इस प्रशासनिक व्यवस्था के कारण हुआ था जिसके अनुसार सम्पूर्ण देश में स्थानीय अधिकारी सरकारी पदों पर नियुक्ति के लिए योग्य व्यक्तियों को नामजद करते थे। इस व्यवस्था के परिणामस्वरूप महत्वपूर्ण परिवारों के प्रभाव में वृद्धि हुई क्योंकि इन परिवारों के सदस्य ही नियुक्ति के लिए सिफारिश प्राप्त कर सकते थे। धीरे-धीरे सत्ता का प्रसार दरबार से बाहर, शाही

घराने से बड़े सामन्ती परिवारों में हुआ। सिंग राजवंश के तीन सौ वर्षो से अधिक दिनों तक तथा उसके पश्चात् छः अन्य राजवंशो के अन्तर्काल तथा तब सुई राजवंश के प्रारम्भ के काल में (581–618 ई०) जो तांग (618–907 ई०) राजवंश से पहले था—इन बड़े परिवारों का प्रभाव बना रहा जबकि शासक परिवार का उत्थान-पतन होता रहा। ये स्थिति तब तक बनी रही जब तक तांग राजवंश का उदय नहीं हुआ जिसने लोक-सेवाओं के लिए उचित परीक्षाओं की पुनर्स्थापना की, जिसके पश्चात् एक बार फिर सेवाओं में नियुक्ति तथा उन्नति योग्यता के उचित मापदण्ड के आधार पर की जाने लगी।

राजप्रसाद के नपुंसक मनोरंजन-कर्ता सुई तथा तांग राजवंश के दौरान राजनीतिक शक्ति का अन्य स्रोत बन गये। सत्ता के इस स्वरूप का कारण स्पष्ट था। सम्राट की निकटता शासन को प्रभावित करने की क्षमता प्रदान करती थी तथा यह क्षमता स्वयं सम्राट के शासन व्यवस्था में बढ़ते हुए प्रभाव के साथ बढ़ती गई। उसी प्रकार जैसे आजकल अमेरिका में किसी उच्च प्रशासनिक पद के लिए राष्ट्रपति तक पहुँच होना अनिवार्य शर्त हो गई है। यद्यपि अमेरिका में प्रजातन्त्रीय गणराज्य है तथा राष्ट्रपति अपनी अत्यधिक व्यस्तताओं के बावजूद जनता से सम्पर्क बनाये रखता है। शासक तथा पहुँच की यह महत्ता तब और भी बढ़ जाती है जब वह पवित्र माना जाता है तथा विभिन्न औपचारिक तथा सुरक्षा सम्बन्धी व्यवस्थाओं के कारण जनता से उसका सम्बन्ध पूर्णतः टूट जाता है तथा स्वयं महल के भीतर उसके मनोरंजन का सम्पूर्ण सामान विद्यमान रहता है। ये नपुंसक विदूषक अमेरिका के कार्टून में उल्लिखित विदूषकों से नहीं थे—अपितु वे स्वार्थी व लोभी थे जो शक्ति व सम्पत्ति हड़पना चाहते थे। सम्राट के निजी जीवन तक पहुँच के कारण वे मन्त्रियों व अधिकारियों से भी अधिक प्रभावशाली बन गये। तांग राजवंश की समाप्ति के पश्चात् इन विदूषकों ने वास्तविक सत्ता हथिया ली तथा वे सम्राट को उनकी इच्छाओं के अनुसार आदेश देने के लिए बाध्य करने लगे।

जहाँ तक शासन प्रणाली का प्रश्न है, चे-इन राजवंश से तांग राजवंश की ग्यारह शताब्दियों को सामन्तवादी व्यवस्था से निरंकुश राजतन्त्र की ओर संक्रमण का युग माना जा सकता है। किन्तु इस सम्पूर्ण समय में कन्फ्यूशियस विचारों का सैद्धान्तिक नियन्त्रण भी बना रहा। इस सम्पूर्ण संक्रमण काल में यद्यपि सरकार राजतन्त्रीय बनी रही तथापि शासन का वास्तविक संचालन बारी-बारी से शाही सम्बन्धियों, सैनिक अधिकारियों, प्रभावशाली परिवारों तथा दरबारी विदूषकों के द्वारा किया गया जो सम्राट की शक्ति का प्रयोग करते थे। सुंग राजवंश की स्थापना के बाद से (960–1279 ई०) शक्ति दृढ़तापूर्ण ढंग से सम्राट के हाथों में निहित हुई तथा तब से ही चीन में वास्तविक राजतन्त्र का अस्तित्व माना जा सकता है।

तथापि जहाँ तक प्रशासनिक व्यवस्था का प्रश्न है तांग राजवंश महत्त्वपूर्ण है। प्रशासन में तांग व्यवस्था ने जहाँ तक पदों का प्रश्न है जापानी व्यवस्था को एक प्रतिमान प्रस्तुत किया। शासन के तांग प्रकार ने ला-चीन को वह स्वरूप प्रदान किया जिसका उल्लेख लियोन वेगर एस. जे के द्वारा किया गया है। तांग शासन के अन्तर्गत चीनियों ने उस कला, साहित्य तथा राजनीतिक कौशल का विकास किया जिसने महान् संस्कृति की भूमिका प्रस्तुत की।[6]

6 देखिए अध्याय 11, पृ० 279–280 'जापान में शासन'।

तांग शासन के संस्थापक सम्राट ताई-त्सुंग को अनेक राजनीतिक आविष्कारों का श्रेय दिया जाता है। इनमें से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण लोक-सेवाओं की परीक्षाएँ थीं। ये प्राशासनिक सेवाओं की परीक्षाएँ सुई राजवंश तथा उससे भी पहले अपरिष्कृत रूप में हेन राजवंश में भी पाई जाती थीं। तथापि प्राशासनिक अधिकारियों की नियुक्ति का मूल स्रोत इन्हें तांग प्रशासकों द्वारा बनाया गया।[7] प्राशासनिक सेवाओं के माध्यम से ही नियुक्ति की पद्धति को मानव समाज द्वारा सर्वप्रथम नौकरशाही का वास्तविक विकास कहा जा सकता है। इससे सरकार के स्वरूप में क्रान्तिकारी परिवर्तन उत्पन्न हुआ तथा सरकार की नींव योग्यता पर आधारित की गई।

प्राशासनिक सेवाओं की परीक्षाएँ सार्वजनिक तथा नियमित रूप से ली जाती थीं। जिन विषयों पर उम्मीदवारों की परीक्षा ली जाती थी उन्हें पर्याप्त सूझ-बूझ से चुना जाता था, तथा उसमें पर्याप्त योग्यता वाले उम्मीदवार ही सफल हो सकते थे।[8] जब इस परीक्षा व्यवस्था की स्थापना की गई थी तो यह दैनिक जीवन के लिए पर्याप्त व्यावहारिक थी। किन्तु जैसे-जैसे शताब्दियाँ बीतती गईं, परीक्षा की विषयवस्तु रूढ़िवादी, अयथार्थ तथा ऐसी सामग्री को निहित करने लगी जो बहुत समय से व्यवहार में अनुपयोगी हो चुकी थी।[9]

तांग शासकों द्वारा एक अन्य आविष्कार प्रशासन में शक्ति का पृथकीकरण का था। केन्द्रीय शासन तीन भागों में विभाजित था (शेंग) वे निम्नांकित कार्यों के लिए उत्तरदायी होते थे :—

(1) मन्त्रियों का विभाग (शांग-शू-शेंग)—सरकार में कार्यपालिका जो विभागों पर नियन्त्रण रखती थी।

(2) सचिवालय विभाग (चुंग-शू-शिंग)—यह विभाग विधि तथा आदेशों का प्रारूप बनाता था तथा अधिकारियों को दिये गये दंड तथा उनकी उपलब्धियो का लेखा रखता था।

(3) शाही महल का विभाग (मेन-हिसीआ-शेंग)—जो शाही इतिहास के सम्पादन तथा समारोहों के आयोजन का उत्तरदायी था। इन तीनों विभागों के अध्यक्ष उस प्रीवी कौंसिल के सदस्य होते थे जो सम्राट को महत्त्वपूर्ण विषयों पर परामर्श देती थी। किन्तु दुर्भाग्यवश ये तीनों पद व्यवहार में एक व्यक्ति द्वारा धारण किये जाने लगे तथा इस प्रकार सभी शक्तियों का केन्द्रीयकरण उस व्यक्ति के हाथों में होने लगा। प्रशासन में नागरिक मामले, धार्मिक कार्य, युद्ध, दण्ड, लगान

7. होयर डबस पान कू रचित दि हिस्ट्री ऑफ दि फॉरमर हेन डाइनेस्टी बाल्टेमूर 1938, 1944 के अनुवाद में एक झक्की हेन सम्राट् की कहानी कहता है जो अपने हरम की दासियों को विभिन्न वर्गों में विभाजित करता था। वर्तमान लेखकों में से एक ने कई वर्षों पहिले ड्यूक विश्वविद्यालय में डबस के साथ एक मनोरंजक दोपहर इस चर्चा में बिताई कि हरम की दासियों की पदोन्नति कैसी होती थी। डबस ने हेन की पदवियों का अनुवाद पर्याप्त आंग्ल भाषा में किया जो 2000 वर्षों में पुरातत्त्व विभाग में पड़े हुए थे।

8. बैरन रॉबर्ट डी रोटर्स ने अपनी पुस्तक लॉ ट्रेट डी एक्ज़ाम्स पेरिस 1932 में तथा ट्रेट डे फंगनरीज एट ट्रेट जी एल आरमी, लेडन 1947 तथा ऑटो फ्रैंक में अपनी पुस्तक बर्लिन खण्ड दो पृ० 530–549 में इस व्यवस्था का अधिक विस्तृत वर्णन देते हैं। उनकी पुस्तक के इस नियम के पूर्णतः नये आयाम प्रस्तुत किये।

9. गणित, विधि, दर्शन, साहित्य, परम्परागत पुस्तकें तथा राजनीतिक मामलों पर परीक्षा ली जाती थी, जो उस काल की संपूर्ण विद्वता, ज्ञान को निहित करती थी। देखिए चे-इन पूर्वोद्धृत पृ० 214–215।

सम्राट
हुआंग-टी
प्रीवी कौंसिल
सेंग शींग हुई ई
सचिवालय विभाग
चुंग शु शींग
मन्त्रालय विभाग
शंग शु शींग
शाही महल विभाग
मेन हसिआ शींग
सचिवालय के दो मंत्री
चुंग-शु लिंग
प्रधान मंत्री
शंग शु लिंग
महल के दो मन्त्री
शीह चुंग
सार्वजनिक कार्य
मन्त्री
कुंग-पू
दंड मन्त्री
हसिंग-पू
युद्ध मन्त्री
पिंग-पू
धर्म कार्य मन्त्री
ली-पू
लगान मन्त्री
हु-पू
नागरिक मामलों
का मंत्री
ली पू
चार्ट संख्या–1
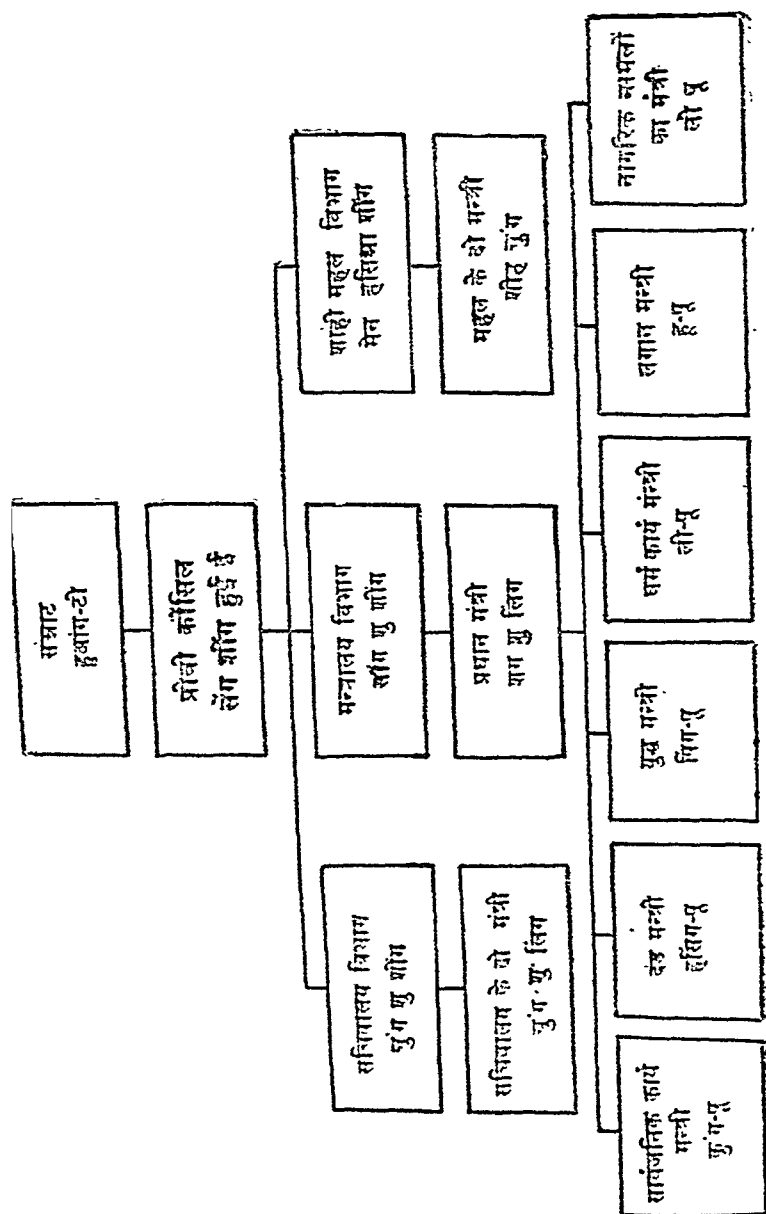
तथा सार्वजनिक कार्य में छः विभाग होते थे। इस व्यवस्था का प्रारम्भ सुई राजवंश में तथा विकास तांग काल में हुआ तथा यह मंचू काल के अंत दिसम्बर 31, 1911 तक व्यवहार में रहा तथा मचूको जापानियों द्वारा इसका पुनर्निर्माण किया गया। इस प्रकार इसका अंततः पतन मंचूरिया में 1945 में हुआ। तांग काल के प्रशासन के संगठन को पिछले पृष्ठ सं० 14 पर दिये गये चार्ट सं० 1 में सर्वोत्तम ढंग से दर्शाया गया है।[10]

स्थानीय शासन के सन्दर्भ में तांग काल अपने पूर्ववर्ती शासकों से भिन्न था। इस काल में एक सर्वोच्च संरक्षक स्थानीय सरकारी इकाई का निर्माण किया गया जो 'ताओ' अथवा 'सर्किट' कहलाई जो परम्परागत चाऊ अथवा प्रदेश तथा हेसिन अथवा जिले के ऊपर होती थी। वस्तुतः ताओ स्थानीय सरकार का एक भाग नहीं था अपितु केन्द्रीय सरकार को स्थानीय सरकार से जोड़ने वाली कड़ी थी। सम्पूर्ण तांग साम्राज्य दस भागों में बँटा हुआ था जो बाद में 15 सर्किटों में बँटे हुए थे। प्रत्येक सर्किट पर एक गवर्नर नियुक्त होता था जिसका कार्य अपने क्षेत्र के अन्तर्गत स्थानीय शासन का निरीक्षण करना होता था। प्रत्येक सर्किट के अन्तर्गत कई प्रदेश होते तथा उसके अन्तर्गत कई जिले होते थे। चांग कुआन के 13वें वर्ष में 639 ई० में 350 प्रदेश तथा 1,555 जिले थे।[11]

प्रारम्भिक तांग सम्राट सैनिक तथा असैनिक शासन में सम्पूर्ण पृथकीकरण करने में सफल हुए। इस समय एक प्रभावशाली सेना विद्यमान थी जो 600 इकाइयों में विभाजित थी, जिसमें 1/3 राजधानी की सुरक्षा के लिए थे तथा अविशिष्ट सेना सम्पूर्ण साम्राज्य में महत्त्वपूर्ण स्थानों पर बिखरी हुई थी। स्थानीय सैनिक हस्तक्षेप की कठोर रूप से मनाही थी। सेना पर केन्द्र का नियन्त्रण था। इस राजवंश के मध्य में लु-शान नामक एक राजद्रोही ने इतना भयानक विद्रोह प्रारम्भ किया कि तांग साम्राज्य का सैनिक पतन अत्यधिक कम समय में हो गया। यद्यपि वह स्वयं 757 में अपने पुत्र के हाथों मारा गया किन्तु उसके बाद एक के बाद एक विद्रोह होते गये। सेना पर महल के विदूषकों का अधिकाधिक प्रभाव बढ़ता गया। सेना के स्थानीय अधिकारी इतने शक्तिशाली बन गये कि वे अपने विशिष्ट क्षेत्रों के शासन का संचालन भी स्वयं ही करने लगे। ऐसी स्थिति में कोई भी शासन स्थायी नहीं रह सकता था। अतः वह तांग शासनकाल जो विशिष्ट नगर व्यवस्था, धर्म निरपेक्षता, सौन्दर्य तथा रचनात्मक सभ्यता के लिए प्रसिद्ध हुआ था, वह अस्त-व्यस्तता व अराजकता के मध्य समाप्त हो गया।

सुंग से चीन तक चीन में राजतन्त्र[12]

तांग शासनकाल के उत्तरार्द्ध में सम्राट की दुर्बलता स्थानीय सैनिक अधिकारियों

10. यह चार्ट हसु चुंग हआओ की पुस्तक चुंग-क्यूओं चेग-चीह कायमाओ (चीनी राजनीतिक व्यवस्था की रूपरेखा) चुगकिंग, 1943 पृ० 14–15 से लिया गया है। काओं-आइ-हान की रचना, 'चीन में मन्त्रिमण्डल का विकास' शंघाई, 1926 तथा ली वचुन की चीन में प्रधानमंत्री शंघाई 1947, अध्याय 3 भी देखिए।

11. चे-इन पूर्वोद्धृत, पृ० 166–167.

12. चीनी राजनीतिक समस्याओं के इतिहास के लिए मूल सामग्री विभिन्न राजवंशों के इतिहास में अधिकारियों से संबंधित रचनाओं में से प्राप्त हो सकती है। अधिकांश इतिहास शाही आदेश के मुताबिक लिखे गये थे। तांग के पश्चात् से यह परंपरा पड़ गई थी कि प्रत्येक राजा अपने पूर्ववर्ती राजा का इतिहास लिखवाता था। अन्य स्रोतों में विभिन्न राजवंशों में अधिकारियों की तालिकाएँ तथा नौ पूर्ण ग्रन्थ हैं। पश्चिमी भाषाओं में निम्नांकित उपयोगी रचनाएँ हैं—एच कोर डाअर हिस्ट्री जनरल डी ला चीन, ग्रन्थ पेरिस 1920–21, एल सी गुडरीश ए शॉर्ट हिस्ट्री ऑफ दि चाइनीज पीपुल न्यूयार्क 1943 तथा के०एस० लाटरेट 'दि चाइनीज, देअर हिस्ट्री एंड कल्चर' न्यूयॉर्क 1949.

की स्वच्छन्दता से स्पष्ट थी। इससे केन्द्र की शक्ति अत्यधिक कम हो गई। सुंग राजवंश (960–1279 ई०) का प्रथम सम्राट स्वयं एक सैनिक अधिकारी था तथा स्वयं अपने अनुभव से वह इस निर्णय पर पहुँचा कि स्वायत्तशासी सैनिक अधिकारियों का अस्तित्व साम्राज्य के लिए गम्भीर खतरा था। उसने पर्याप्त मनोवैज्ञानिक तरीके से अपने सैनिक अधिकारियों को सैन्य शक्ति को छोड़ने के लिए तैयार कर लिया तथा दूरस्थ प्रदेशों में स्थित सैनिक छावनियों को समाप्त कर दिया। एक बार फिर सम्राट ने शक्ति अपने हाथों में केन्द्रित कर ली।

प्रथम सुंग सम्राट् वैयक्तिक शासन का विकास करने में सफल हुआ। यद्यपि नाम को तांग काल के शासन के तीन अंग विद्यमान रहे किन्तु अब उनका कार्य नीति में निर्णय करने के स्थान पर मात्र परामर्श देने का रह गया। सम्राट् की शक्तियाँ अत्यधिक बढ़ गईं तथा प्रारंभिक सुंग स्थापित नियमों को प्रभावित करने में सफल हुए तथा वे राज्य कार्यों में पर्याप्त हस्तक्षेप करने में भी सफल हुए।

सुंग शासन काल के दौरान स्थानीय सरकारों पर अधिकाधिक नियंत्रण स्थापित किया गया। सभी स्थानीय अधिकारी जिसमें स्थानीय मजिस्ट्रेट भी सम्मिलित थे, शाही दरबार के द्वारा नियुक्त किये जाते थे। यद्यपि स्थानीय शासन का ढाँचा उसी प्रकार का रहा किन्तु उसके क्रियात्मक स्वरूप पर केन्द्रीय नियंत्रण बढ़ा दिया गया।

सुंग शासन काल में एक अन्य आविष्कार पाओ-चीआ व्यवस्था का विकास था जो बाद में चीनी सामाजिक व्यवस्था की अनूठी विशेषता बन गई। द्वितीय महायुद्ध के दौरान साम्यवादियों ने राष्ट्रवादियों द्वारा पाओ-चीआ को प्रतिक्रियावादी संस्था बनाने का विरोध किया किन्तु जब साम्यवादी शक्ति में आये तो उन्होंने एक अन्य नाम के अंतर्गत उससे भी कठोर संस्था का निर्माण किया (देखिए पृ० /:/ 232)।

मूल सुंग व्यवस्था में प्रत्येक दस परिवारों का समूह एक 'पाओ' का निर्माण करता था तथा प्रत्येक 15 परिवारों का समूह 'वृहत पाओ' का निर्माण करता था, तथा 500 परिवारों का समूह 'मुखिया पाओ' का निर्माण करता था। 'पाओ चिआ' के मुखियाओं को नियमित सैनिक अधिकारियों के द्वारा प्रशिक्षण दिया जाता था। प्रत्येक परिवार, जिसमें एक से अधिक पुरुष वयस्क होते थे, एक पुरुष को इस व्यवस्था में प्रशिक्षण के लिए भेजा जाता था। इस प्रकार यह व्यवस्था सामूहिक सुरक्षा, तथा सुरक्षा इकाई दोनों का साधन बनी।[13]

सुंग सम्राटों द्वारा शक्ति के अत्यधिक केन्द्रीयकरण तथा निजी रूप से निरंकुश शक्तियों के प्रयोग के बावजूद धीरे-धीरे इस राजवंश का प्रभाव समाप्त होता गया। एक के बाद एक दुर्बल सम्राट् आते गये। 1127 में सुंग राजवंश को गोल्डन तारतार के दमन से ग्रस्त होकर अपनी राजधानी स्थानांतरित कर हैंग-चू ले जानी पड़ी थी। मंगोलों के उदय ने गोल्डन तारतार तथा स्थानीय सुंग ने दोनों की शक्तियों को समाप्त कर दिया। 1279 तक चीन मंगोलों के आधिपत्य में आ गया।

आधुनिक अर्थों में मंगोलों के पास अथाह शक्ति होने के बावजूद उसके शीघ्र पतन का कारण यही था कि उनके हाथों में शक्ति का केन्द्रीयकरण पूर्णतः सैनिक अर्थों में हुआ था। चीन की विजय के पहिले वे मंगोल शिकार करते थे व पशुपालन पर निर्भर रहते थे। वे जनजातीय व्यवस्था के आधार पर संगठित थे। वे परिश्रमी, बुद्धिमान तथा गतिशील थे तथा

13. जापानी समवर्ती संस्था के सर्वप्रथम प्रमाण का सारांश पृ० 269–270 पर दिया गया है।

अपने विरोधियों को किसी भी प्रकार की सैनिक क्षमता को समाप्त करने की योग्यता उनमें विद्यमान थी। जब मंगोल शासक चीन में आये तो उन्हें यह ज्ञात हुआ कि चीन की राजनीतिक व्यवस्था उन्हें उनकी व्यवस्था से अधिक स्थायित्व तथा शक्ति प्रदान करती थी। तथा चूँकि चीनी सभ्यता अधिक आकर्षक, सुरक्षापूर्ण तथा सम्पन्न थी अतः मंगोल स्वयं उसकी ओर आकर्षित हुए। परिणामतः मंगोलों ने अपनी व्यवस्था जिसके अनुसार शासन के मुखिया का निर्वाचन जनता के द्वारा किया जाता था, चीनियों के वंशानुगत राजतंत्रीय व्यवस्था को अधिक पसन्द किया। आंशिक रूप से मंगोल अपने स्वरूप को बनाये रहे तथा आंशिक रूप से वे चीनी बन गये। मंगोल इतने अधिक चीनी नहीं बने कि वे अपनी उत्पत्ति को ही भूल जाते तथा अपनी सैनिक शक्ति से चीनियों को भयभीत करने के लिए वे अधिक समय तक चीन में नहीं रहे। उनका राजवंश जो युआन कहलाता है, लघुजीवी (1279–1368 ई०) रहा।

केन्द्रीय प्रशासन के संदर्भ में मंगोलों ने और संशोधन किये तथा शक्ति के केन्द्रीय-करण को और अधिक बढ़ा कर उसे एक ही अधिकारी के हाथों में नियंत्रित कर दिया। तांग तथा शुंग शासनकाल में प्रचलित त्रि-पक्षीय विभाजन की व्यवस्था को समाप्त कर दिया गया। सभी कार्यपालिका संबंधी कार्यों को केन्द्रीय सचिवालय (चुग-शु-शींग) में निहित कर दिया गया जिसका सरकारी व सार्वजनिक कार्यों पर नियंत्रण होता था। महासचिव का पद (चुग-शू-लिंग) राजा के उत्तराधिकारी के पास होता था जिसकी सहायता दो प्रधानमंत्रियों के द्वारा की जाती थी जो वाम पक्ष व दक्षिण पक्ष के प्रधानमंत्री कहलाते थे। दैनिक प्रशासकीय व्यवस्था के लिए अनेक सहायक अधिकारी होते थे। महासचिव के अलावा एक प्रीवी कौंसिल होती थी जो सैनिक व सुरक्षा संबंधी मामलों से संबंधित होती थी तथा एक नियंत्रण अधिकारी (यू-शिह-ताई) होता था जो सरकारी अधिकारियों पर नियंत्रण का कार्य करता था। प्रशासन के क्षेत्र में मंगोलों का मुख्य आविष्कार शंग अथवा प्रान्त का निर्माण करना था। इनमें से कुछ प्रान्त जो मार्को पोलो के द्वारा देश कहे गये थे, आज भी अपनी मंगोलों द्वारा निर्धारित सीमा में साम्यवादी प्रान्तों के रूप में विद्यमान हैं। आधुनिक युग में चीन की प्रान्तीय व्यवस्था सन-यात सेन के विरोध के बावजूद राष्ट्रवादियों के द्वारा बनाई गई थी तथा राष्ट्रवादियों के पश्चात् कुछ परिवर्तनों के बाद साम्यवादियों द्वारा इसे बनाये रखा गया। चीन में मंगोल व्यवस्था की छाप अब तक स्पष्ट रूप से विद्यमान है। मंगोल चीन में विदेशी विजेता के रूप में थे अतः वे सर्वदा विद्रोह के विचार से चिंतित रहे तथा उसका निराकरण करने के लिए उन्होंने विभिन्न प्रयास किये। इन प्रयासों में एक स्थानीय शासन व्यवस्था को कठोरतापूर्ण ढंग से लागू करना भी था। यह व्यवस्था अब तक की चीनी व्यवस्थाओं में सर्वाधिक कठोर थी। पाँच प्रान्तों के पश्चात् स्थानीय शासन के पाँच निम्न स्तर शिंग (प्रान्त), लू (प्रदेश), फू (सर्किट), चाऊ (उप-प्रदेश) तथा ह्सिेन (जिला) थे।

युआन राजवंश के प्रारंभ में मंगोल साम्राज्य के चीन प्रदेश को 11 प्रान्तों में विभाजित किया गया। सभी उच्च अधिकारी गैर चीनी थे। वे मंगोल-अरब मध्य एशियाई तथा इटली के पोलो परिवार के लोग भी थे जिनकी सहायता के लिए चीनी अधिकारी होते थे। सुग राजवंश के पाओचिआ के समान स्थानीय सैनिक व्यवस्था का निर्माण किया गया। इस व्यवस्था के अनुसार 5 परिवार एक लिन का निर्माण करते थे तथा पाँच लिन

एक पाओ बनाते थे। एक पाओ अथवा लिन के प्रत्येक सदस्य के कार्य के लिए सब लोग जिम्मेदार होते थे तथा यदि कोई विद्रोह अथवा षड्यंत्र होता था तो उसके लिए सभी सदस्यों को दंड दिया जाता था।

मंगोलों ने चीनियों के विरुद्ध जातीय भेदभाव की उग्र नीति अपनायी। चीनियों पर शस्त्र रखने पर प्रतिबंध लगा दिया गया। पेकिंग की सड़क चौड़ी की गई तथा उन्हें उन्हीं कारणोंवश चौरस बनाया गया जिनकी वजह से वाशिंगटन में मेजर पिएर इनफेंट ने ऐसा किया था। अर्थात् इसका उद्देश्य यही था कि यदि स्थानीय जनता उपद्रव करे तो स्थानीय सेनाएँ उन्हें मुख्य सड़कों से घेर कर उनका दमन कर सकें। सभी महत्त्वपूर्ण स्थानों पर मंगोल सैनिकों की स्थापना कर दी गई। चीनी वंश तथा भाषा वाले लोगों के साथ निम्न व्यवहार किया जाता था। अक्सर उनको दंड दिया जाता था तथा उनका अपमान किया जाता था। जापान, जावा तथा बर्मा सब के विरोध ने चीन में मंगोलों को दुर्बल बना दिया तथा मंगोल चीन में पूरी शताब्दी भी नहीं टिक सके। एक विद्रोही भूतपूर्व पुजारी, जो अत्यधिक महत्त्वाकांक्षी तथा मेहनती था, ने विदेशी शासन के विरुद्ध जनता के असंतोष को संगठित किया तथा उसे आश्चर्यजनक रूप से बहुत कम समय में सफलता मिली।

यह व्यक्ति, जो मिंग राजवंश (1368–1644 ई०) का संस्थापक बना, स्वभाव से अत्यधिक बर्बर तथा अपनी निजी योग्यता के कारण अत्यधिक शक्तिशाली था। उसने शक्ति के माध्यम से शासन किया तथा अपने राजनीतिक प्रतिद्वन्द्वियों को निर्दयतापूर्ण ढंग से समाप्त कर दिया। चूंकि उसे अपनी योग्यता में अत्यधिक विश्वास था, अतः उसने राजतंत्र के विचार को चरम रूप में प्रस्तुत किया। वह उन खेमर सम्राटों के समान था जो अपने आंतरिक भावों को सर्वोच्च मानते थे—तथा जो कि फ्रांसिसी विचारकों के शब्दों में इन भावों को विश्व की दिशा निर्धारित करने वाला समझते थे तथा जिन्होंने अपने सनकपूर्ण दिवास्वप्नों को स्थापत्य कला के नमूनों में संचित करने की कोशिश की। यद्यपि इस मिंग राजवंश के संस्थापक ने इस प्रकार के महल अथवा भवन नहीं छोड़े तथापि उसने उपाधियाँ देना प्रारंभ किया। सम्राट संपूर्ण चीनी राजनीति का स्रोत बन गया। चीन के संपूर्ण इतिहास में कभी भी एक व्यक्ति की निजी प्रवृत्तियों तथा विचारों ने चीनी मामलों का निर्धारण करने में इतना महत्त्वपूर्ण योगदान नहीं किया था।

मिंग राजवंश की केन्द्रीय प्राशासनिक व्यवस्था पूर्ववर्ती व्यवस्थाओं से अत्यधिक भिन्न थी। कार्यपालिका शक्तियाँ सम्राट के हाथ में केन्द्रित हो गयीं, जिसकी सहायता छः महासचिव करते थे। किन्तु वे मात्र परामर्शदाता थे। वे छः मंत्रालयों के अध्यक्ष होते थे तथा सरकार की प्राशासनिक गतिविधियों के लिए उत्तरदायी होते थे।

मिंग प्रशासन के अन्तर्गत प्रतिवर्ष की व्यवस्था पूर्णतः विकसित हो चुकी थी। एक सेंसर बोर्ड की नियुक्ति की गई थी जिसे महाभियोग लगाने की तथा निरीक्षण करने की पूरी शक्ति थी। यह सेंसर व्यवस्था एक ओर राजतंत्र का नियंत्रण स्थापित करने का, तथा दूसरी ओर साफ तथा प्रभावशाली प्रशासन प्रदान करने, का साधन बनी।

मिंग शासनकाल के अन्तर्गत या कू अथवा 'अष्ट-सूत्रीय निबंध' प्राशासनिक सेवाओं की परीक्षा का मूल विषय बनी। इसकी विषय सामग्री इतनी कठिन थी कि मिंग सम्राटों की यह अपेक्षा थी कि बुद्धिमान लोगों का अत्यधिक परिश्रम व समय इनमें दक्षता प्राप्त करने में लग जायेगा। तथा इस प्रकार वे अपनी बुद्धि का प्रयोग स्वतंत्र विचार अथवा

विद्रोही प्रवृत्तियों में करने से वंचित हो जायेंगे। परीक्षा संबंधी नियम अधिक कठोर तथा विस्तृत बन गये तथा मिंग शासनकाल में इस परीक्षा में योग्यता सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मापदंड के रूप में उभरी।

लोक प्रशासन के लिए मिंग शासकों ने त्रि-स्तरीय व्यवस्था का आविष्कार किया। इस काल में अधिकांश समय में संपूर्ण देश 15 शिंग (प्रान्तों) में बँटा हुआ था जो मंगोलों से जीते गये थे। ये शिंग फिर 300 करीब प्रदेशों में बँटे हुए थे तथा ये 1171 जिलों में बँटे थे।

प्रान्तीय सरकारों का स्वरूप सामूहिक था क्योंकि यह शासन व्यक्ति के स्थान पर बोर्डों के द्वारा चलाया जाता था। प्राशासनिक, न्यायिक तथा वित्तीय मामले सम्राट द्वारा नियुक्त अधिकारियों द्वारा चलाये जाते थे। इनमें से प्रत्येक स्वतंत्र होता था किन्तु सब पर लागू होने वाले निर्णय में सबकी सहमति आवश्यक थी। सामूहिक रूप से शासित प्रान्तों में प्रत्येक प्रदेश तथा जिले में शासन के लिए एक जिम्मेदार व्यक्ति सम्राट के द्वारा नियुक्त किया जाता था जो अपने अन्य सहायकों की नियुक्ति कर सकता था।

चीन का मिंग राजवंश आटोमन तथा फ्रांसिसी साम्राज्य के समकक्ष एक संपूर्ण राजतंत्रीय व्यवस्था का उदाहरण है। जब तक सम्राट शक्तिशाली रहा यह व्यवस्था पर्याप्त सुरक्षापूर्ण तथा संपन्न प्रतीत होती थी; किन्तु सम्राट के दुर्बल होते ही संपूर्ण व्यवस्था दुर्बल बन जाती थी। बाद के मिंग शासकों ने शासन का दुरुपयोग अपनी सनक को पूरा करने में किया तथा वे एक सम्राट के उत्तरदायित्वों को वहन करने में असफल रहे। अंततः मिंग राजवंश अनावश्यक खर्चों के कारण समाप्त हो गया। ये शानशौकत संबंधी व्यय इटली अथवा अमरीकी राजनीति से कहीं ज्यादा थे। शाही परिवार नष्ट हो गया। तथापि मिंग शासन की संपूर्ण व्यवस्था इतनी अच्छी थी कि इसे चीन के अंतिम राजवंश ने कुछ मामूली परिवर्तनों के बाद अपना लिया। चीन का यह राजवंश, जिसे मंचू अथवा चिंग राजवंश कहा जाता है, विदेशी था तथा 1644 में अस्तित्व में आया व 1912 में इसका पतन हुआ। अंतिम चिंग शासक अब रूस में साइबेरिया में किसी स्थान पर कैद है। चूँकि चिंग शासकों के पश्चात् चीन गणतंत्री तथा साम्यवादी बना अतः इस पर विस्तार से विचार करना आवश्यक है (देखिए अध्याय 3)।

एक बार फिर से चीन के राजनीतिक विकास को देखना उचित होगा। इस संपूर्ण विकास में से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य इस संपूर्ण काल में जीवन की निर्वाह प्रणाली की बनी रहने वाली निरंतरता तथा चीन की राजनीतिक संस्थाओं की प्राचीनता है। चीन का सृष्टिशास्त्र, अंधविश्वासों को हटाने के पश्चात् रूढ़िग्रस्त धार्मिक विश्वासों के स्थान पर जो दैनिक व्यवहार तथा राजनीतिक विकास को प्रभावित कर सकते थे, पर्याप्त धर्मनिरपेक्ष दृष्टिगोचर होता है। बहुत प्रारंभ से चीन में परिष्कृत राजतंत्र का विकास हो चुका था तथा चाऊ काल से चीनियों ने निरंकुश सत्ता का विरोध करने का अधिकार भी प्राप्त कर लिया था। अन्य महान् संस्कृतियों के समान चीनी पहले ही सामंतवादी, राष्ट्रीय राज्य तथा शक्ति एवम् रक्त के बल पर एकीकरण की स्थितियों से गुजर चुके थे। हेन के काल से विशिष्ट राजनीतिक विचारधाराओं तथा संस्थाओं का विकास होने लगा था तथा सुई व तांग के काल में वह अधिक स्पष्ट हुआ। सर्वाधिक उल्लेखनीय तथ्य प्राशासनिक सेवाओं का

विकास था जिसकी हम वाद में और जाँच करेंगे। केन्द्रीय संगठन के साथ-साथ स्थानीय शासन भी अस्तित्व में आया। सुंग सुआन तथा मिग राजवंशों के दौरान राजतंत्र में अधिक सुधार व परिष्कार हुए।

चीन के अन्तिम राजवंश चिंग के वारे में विस्तार से विचार करने से पहले विभिन्न राजतन्त्रों के अन्तर्गत रहने वाले चीनी समाज पर विचार करना आवश्यक हो जाता है जिसने जव कभी महान् निर्णय लेने का अवसर आया तो संरचना को कम तथा व्यक्तित्व को अधिक महत्ता प्रदान की।

□□□

अध्याय 2 | कन्फ्यूशियसवादी राज्य का आधार चीनी समाज

राजनीति के आधुनिक अध्ययनकर्ता की दृष्टि में प्राचीन चीन की मूल विशेषता—उसकी विशिष्ट राजनीतिक व्यवस्था में, उसके कानूनों में अथवा उसकी विषय-वस्तु में नहीं है अपितु राजनीतिक व्यवस्था के सम्पूर्ण समाज के साथ सम्बन्ध—के सन्दर्भ में है।

कन्फ्यूशियस विचारधारा के अन्तर्गत चीनी सामाजिक जीवन ने एक ऐसा स्वरूप प्राप्त किया जो किसी भी अन्य पश्चिमी राज्य की तुलना में अधिक शक्तिशाली था। पाश्चात्य इतिहास के उस काल में भी, जबकि सरकार के कार्य न्यूनतम हो गये, सरकार कहीं ज्यादा महत्त्वपूर्ण रही थी जबकि चीन में सरकार ने दैनिक जीवन में ऐसी महत्त्वपूर्ण भूमिका कभी अदा नहीं की है।

साम्राज्य अथवा छलावा

प्रस्तुत पुस्तक के लेखकों में से एक ने पन्द्रह वर्ष पूर्व यह व्यक्त किया था कि जिस प्रक्रिया को हम सरकार कहते हैं वह चीनी में पश्चिमी अर्थों से पर्याप्त भिन्न है। चिंग राजवंश तथा पश्चिमी देशों के मध्य बहुत से विवादों का मूल कारण सरकार का अवशिष्ट समाज के साथ सम्बन्ध के बारे में परस्पर विरोधी मान्यताएँ थीं।

पन्द्रह वर्ष पूर्व का यह कथन आज भी पर्याप्त महत्त्वपूर्ण है—चीन में सरकार एक सहायक गतिविधि थी। सम्पूर्ण शक्ति विभिन्न स्तरों पर विभिन्न उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए निहित थी। अधिकारी पहले अध्यापक तथा मैजिस्ट्रेट बाद में थे। सम्राट को शासक बनने के लिए पहले सर्वोत्तम आदर्श बनना होता था। लोग लज्जालु होते थे तथा निर्लज्ज लोगों को ही दण्ड दिया जाता था। इस प्रकार के आदर्शपूर्ण सिद्धान्त पर चीनी समाज आधारित था। ये वस्तुतः तथ्य हैं जिनमें इससे बढ़कर सत्यता नहीं हो सकती। इस समाज की निहित शक्ति कभी समाप्त नहीं हुई..........राज्य के रूप में एक सर्वव्यापी नियन्त्रण संस्था के रूप में प्राचीन चीन में पद सोपानक्रम छलपूर्ण था..........यह व्यवस्था राज्य के समान दीखती थी, पर थी नहीं।[1]

1. पॉल एम.ए. लिनबर्गर—गवर्नमेंट इन रिपब्लिकन चाइना, न्यूयॉर्क 1938, पृष्ठ 19–21. प्रोफेसर लिनबर्गर ने आगे लिखा है "सरकार की आवश्यकता सर्वदा शासितों की दुर्बलता के कारण ही उत्पन्न नहीं हुई। कन्फ्यूशियस व्यवस्था यद्यपि उपयोगी है तथापि इसमें भी मानवीय संगठनों में पाई जाने वाली सभी दुर्बलताएँ विद्यमान थीं। भ्रष्टाचार व अत्याचार पर्याप्त मात्रा में उत्पन्न हुए। कई मामलों में यह माना जा सकता है कि कानूनी व्यवस्था उन लोगों की रक्षा कर सकती थी जिनके साथ अन्याय हुआ था। तथापि पश्चिमी व्यवस्था इस बात का प्रमाण है कि स्वयं कानून भी कभी-कभी अन्याय का कारण बनता है। चीन में कुछ उदार तथा प्रभावशाली सम्राटों ने सरकारी अधिकारियों के अत्याचार पर नियन्त्रण करने के लिए व्यक्तियों के स्थान पर कानून के शासन का समर्थन किया था। फिर भी चीन में पश्चिम की तुलना में कानून की भूमिका पर्याप्त सीमित रही है; फिर भी पश्चिम, कानूनी व्यवस्था के बाहर राजनीतिक गतिविधि के

चीन का परम्परागत समाज

चीनी समाज के बारे में कई सामान्यीकरण किये जा सकते हैं। इन्हें कई अर्थों में हेन राजवंश से 202 ई० पू० से चिंग राजवंश, जो 1912 ई० में था, तक निरन्तर रूप से माना जा सकता है। इसकी अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान थी। वर्ग व्यवस्था की दृष्टि से इसे 'भद्र लोगों का राज्य' कहा जा सकता है जो सामाजिक व मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से कृषि पर आधारित पूँजीपतियों के समान था किन्तु जो आधुनिक राज्य के मध्यम वर्ग का समकक्ष नहीं था। भौगोलिक दृष्टि से चीन में अनेक मैदान तथा पहाड़ी क्षेत्र थे जिनमें विभिन्न समाज पर्याप्त स्वतन्त्र रूप से रहते थे।

सामाजिक संगठन की दृष्टि से चीनी समाज अधिक कठोर था तथा अपनी अति-राजनीतिक सुविधाओं के कारण सर्वांगीण था। जनसंख्या की दृष्टि से चीन में जन्मदर पर्याप्त ऊँची थी, जैसा कि डेविड रीसमेन ने ठीक ही कहा है, परम्परा प्रधान संस्कृति की पहचान है। यह भी उल्लेखनीय है कि चिंग राजवंश से पहले जन्मदर के साथ मृत्युदर भी पर्याप्त ऊँची थी, अतः चिंग राजवंश से पहले तक चीन की जनसंख्या अत्यधिक नहीं बढ़ी थी।

बौद्धिक दृष्टि से कन्फ्यूशियस विचारधारा जो हेन राजवंश के दौरान प्रचलित हुई तथा चीन की राजनीतिक विचारधारा का मूल आधार बनी; शिक्षा की दृष्टि से यह भद्र लोगों का वर्ग विद्वानों का शासक वर्ग था। परम्परा तथा बौद्धिक व प्रशासन के विषय की प्रक्रियाओं की दृष्टि से इस वर्ग ने परम्पराओं को तथा विद्वत्ता पर आधारित साम्राज्य की नैतिक संहिता को पर्याप्त सुरक्षित रखा तथा सरकारी अधिकारियों के पदसोपान क्रम को बनाये रखा। आर्थिक दृष्टि से स्थानीय स्व-शासन पर्याप्त सीमा तक प्रचलित था। अपने सर्वोत्तम रूप में स्व-शासन अपेक्षाकृत रूप से प्रजातन्त्रीय थी तथा इसका संचालन समूहों तथा परिवारों के माध्यम से होता था। चीन में अनेक लघु समुदायों के स्थायित्व का मूल कारण अपेक्षाकृत रूप से स्थानीय मामलों की सुरक्षा तथा उनके समाधान की दक्षता थी।

अन्य संस्कृतियों से तुलना करने पर चीनी जीवन को स्थानीयता तथा स्थायित्व के लिए आर्थिक अवसरों की उपलब्धि तथा कानूनी न्याय की भारी कीमत चुकानी पड़ी। क्योंकि कला तथा साहित्य की दृष्टि से चीनी संस्कृति कन्फ्यूशियस विचारों के घेरे में ही विकास करने को बाध्य हुई।

यह प्राचीन चीन का समाज मानव सभ्यता का विशालतम सामाजिक तथा राजनीतिक संगठन है। इसके अन्तर्गत अनेक व्यक्ति जन्मे तथा मरे। यदि इस समाज

उदाहरण प्रदान करता है तथा चीनियों ने पर्याप्त व्यापक विधि-संहिताओं का भी निर्माण किया है, किन्तु कानून से परे चीनी सरकार का विधान उतना ही स्पष्ट है जितना पश्चिमी सरकार का कानून के अन्तर्गत स्पष्ट है।"

"प्राचीन चीनी व्यवस्था विचारों के माध्यम से नियन्त्रण पर आधारित थी, जो प्रायः परम्परागत संस्कृति में पाई जाती है। तथ्य का सम्बन्ध उचित व अनुचित से प्रत्यक्ष था तथा सम्पूर्ण विचारधारा का स्वरूप पर्याप्त व्यापक था। किन्तु यहाँ पश्चिमी प्रभाव का अनुभव 19वीं शताब्दी के अन्तर्गत हुआ। चीन की वास्तविकता का अनुभव चीन के पौराणिक काल से दृष्टिगोचर होता है तथा इसके साथ वह अनिवार्यता का विचार था जो कन्फ्यूशियस के प्रभाव-स्वरूप उत्पन्न हुआ था। बाद में कार्य करने के नये तरीकों के विकास के परिणामस्वरूप, परम्परागत नियन्त्रण व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो गई।

के गुणों तथा अवगुणों की तुलना मध्यपूर्व तथा यूरोपीय विश्व के छोटे समाजों के साथ की जाये तो यह कहा जा सकता है कि चीनी सभ्यता यूनान की सौन्दर्यपूर्ण रचनात्मकता, प्रारम्भिक इस्लाम अथवा गोथिक कैथोलिकवाद की आध्यात्मिकता तथा आधुनिक पश्चिमी यूरोप के द्वारा आत्मविनाशकारी तीव्र आर्थिक विकास की क्षमता को प्राप्त करने में कभी सफल नहीं हुई। तथापि ईसा के पश्चात् 20 शताब्दियों में चीनी सभ्यता सर्वाधिक सभ्य समाज के रूप में दृष्टिगत होती है। चीनी जीवन ने सुरक्षा की सीमाओं के अन्तर्गत पर्याप्त मानवीय अवस्थाएँ प्रदान की हैं। किन्तु चीन सर्वदा मध्यममार्गी रहा तथा फारस, अरब व ईसाई जगत के आश्चर्यजनक उदाहरण इसने कभी भी प्रस्तुत नहीं किये।

चीनी समाज की अनुकूलन करने की तथा निरन्तरता बनाये रखने की क्षमता असीमित लगती है। यदि पश्चिमी जगत् ने सुदूर पूर्व पर सैनिक, धार्मिक, तकनीकी तथा आर्थिक रूप से आक्रमण न किया होता तो चीनी समाज में वर्तमान में चीनी अर्थों में किसी प्रकार का संकट अवश्य जन्म लेता। किन्तु यह कह सकना सम्भव नहीं कि यह संकट उतना ही गम्भीर व गहरा होता जितना आज के चीन का राष्ट्रवादी अथवा साम्यवादी क्रान्ति का स्वरूप है। यद्यपि प्राचीन चीन भ्रष्ट तथा क्लान्त हो चुका था किन्तु यह उस वक्त नाश की ओर नहीं बढ़ रहा था या नष्ट नहीं हो चुका था जब ईसाई धर्म, तोप व बारूद, मशीनी उत्पादन, सार्वजनिक आवागमन के साधनों ने चीन की आर्थिक व तकनीकी व्यवस्था को अस्त-व्यस्त किया। अब हम जिस चीन को जानते हैं वह संस्कृतियों के संघर्ष के गंभीर संकट का सामना कर रहा है। चीनी संस्कृति के विरुद्ध सौ वर्षों पुरानी पाश्चात्य संस्कृति आघात भी पहुँचा रही है तथा प्रोत्साहित भी कर रही है। इससे उत्पन्न परिवर्तन की प्रक्रिया अभी समाप्त नहीं हुई है। **कन्फ्यूशियस विचारधारा :**[2] यद्यपि कन्फ्यूशियस की राजनीतिक व नैतिक व्यवस्था (परम्परागत रूप से 551-479 ई० पूर्व) हेन राजवंश के मध्यकाल से लेकर 19वीं शताब्दी के अन्त तक चीन राजनीति का मूल विश्वास रही। किन्तु चिन युग से पहले अपनी उत्पत्ति के समय कन्फ्यूशियसवाद के प्रतिद्वन्द्वी भी मौजूद थे। जब कन्फ्यूशियसवाद का प्रारम्भ हुआ तो ये विप्र सम्प्रदाय भी थे जो खगोलिक ताओवादी, तर्कवादी, कानूनी समर्थक तथा अन्य भी थे जो कू के संघर्ष काल में कन्फ्यूशियसवाद की तरह ही प्रमुख थे। किन्तु जब प्रथम सम्राट ने सभी प्रकार की बौद्धिक विचारधाराओं की पुस्तकों को जलाकर समाप्त किया तो सौभाग्यवश कन्फ्यूशियसवाद बच गया। कन्फ्यूशियसवाद को राज्य का अधिकृत दर्शन बनाने का श्रेय तुंग-चुंग-शू (179-104 ई. पू.) को है जो हेन राजवंश के महान सैनिक सम्राट का प्रधानमन्त्री था। कन्फ्यूशियसवाद में उसे कुछ ऐसे तत्त्व मिले जिनके आधार पर राजतन्त्र को उचित ठहराया जा सकता था। उसने ऐसी व्यवस्था की स्थापना की जिसमें केवल कन्फ्यूशियसवादी ही विद्वान माने जाते थे तथा इस प्रकार वे ही सरकारी सेवाओं में स्थान पा सकते थे। विद्वानों की सहायता से राज्य स्थापित करने के उसके प्रयास दूरगामी साबित हुए तथा यह राज्य दो हजार वर्ष तक विद्यमान रहा।

2. कन्फ्यूशियस विचारधारा पर विचार के लिए अंग्रेजी में निम्न रचनाएँ उल्लेखनीय हैं : जे. के. श्रीयोक—दि आरिजन एण्ड डिवेलपमेंट ऑफ दि स्टेट कल्ट ऑफ कन्फ्यूशियस, न्यूयॉर्क 1932, लिन मोंग शींग —दि आइडियाज—एन इनफार्मल हिस्ट्री फॉम चाइनीज पॉलीटिकल थॉट, न्यूयॉर्क, 1942, एच. जी. कील-मैन एण्ड आइडियाज—एन इनफार्मल हिस्ट्री फॉम चाइनीज पॉलीटिकल थॉट,न्यूयॉर्क, 1942, एच. जी. कील— कन्फ्यूशियस दि मैन एण्ड दि मिथ, न्यूयॉर्क 1949, हू शीह, 'दि एस्टेब्लिशमेंट ऑफ कन्फ्यूशियम एज ए स्टे रिलीजन ड्यूरिंग दि हेन डाइनेस्टी' जर्नल ऑफ दि नॉर्थ चाइना ब्रांच ऑफ दि रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, 1929, पृ. 20-21.

कन्फ्यूशियस विचारों के प्रति हेन राजतन्त्रवादियों के आकर्षित होने के कुछ कारण थे। कन्फ्यूशियस विचारधारा सम्पूर्ण समाज को विभिन्न वर्गों में विभाजित करती थी तथा वह उतनी ही गतिशीलता प्रदान करती थी कि ये वर्ग स्थायी बने रहें तथा साथ ही उन वर्गों में अपने कार्यों के प्रति सजगता भी एक महत्त्वपूर्ण कारक थी। इस व्यवस्था में लोगों में आज्ञाकारिता तथा सन्तोष को सर्वाधिक नैतिक मूल्य प्रदान किया गया था। कन्फ्यूशियस नीतिशास्त्र व्यक्ति को एक पृथक इकाई मानकर उसे अनियंत्रित रूप से विकास करने की स्वतन्त्रता प्रदान नहीं करता अपितु उसे अपनी सम्बन्धित राजनीतिक परिस्थिति के अनुसार विभिन्न सामाजिक दायित्वों का निर्वाह करने के लिए बाध्य करता है।

कन्फ्यूशियस विचारधारा में व्यक्ति व समाज का परस्पर सम्बन्ध अधिकारों की भाषा में न होकर व्यक्ति के कर्तव्यों की भाषा में था। अतः उस विचारधारा में व्यक्ति के अनिवार्य अधिकारों की कोई चर्चा नहीं है। इसके विपरीत कन्फ्यूशियस आचार-संहिता लोगों के अनिवार्य कर्तव्यों की चर्चा करती है तथा बौद्धिक एवं नैतिक नेतृवर्ग के शासन को उचित मानती है। इस आचार-संहिता के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति के द्वारा समाज के प्रति अपने कर्तव्यों को पूरा करने पर अर्थात् जब प्रत्येक व्यक्ति स्वयं के प्रति, परिवार के प्रति, राज्य तथा विश्व के प्रति अपने कर्तव्य का निर्वाह करेगा तो ऐसा सामंजस्य प्राप्त होगा जो देश के लिए संस्कृति, गौरव व शांति लायेगा। इस प्रकार कन्फ्यूशियसवाद के अनुसार मानव मात्र का अन्तिम लक्ष्य न तो व्यक्तिगत लक्ष्यों की पूर्ति था तथा न ही राज्य का गौरव प्राप्त करना था, अपितु इसका उद्देश्य एक विशेष प्रकार की सभ्यता को सुरक्षित बनाये रखना था।

कन्फ्यूशियसवाद के द्वारा अच्छी सरकार का मापण्ड उस सरकार का कानूनी ढाँचा नहीं अपितु स्वयं शासक का निजी चरित्र था। विधि व व्यवस्था बाह्य नियंत्रण से नहीं अपितु आंतरिक अनुशासन से बनाये रखी जा सकती थी। एक अच्छी प्रशासन व्यवस्था बनाये रखने के लिए यह आवश्यक था कि शासक जनता के सामने जीवन का ऐसा आदर्श प्रस्तुत करें जिसका अनुसरण अन्य लोगों के द्वारा किया जा सके। सम्पूर्ण विद्वान शासक वर्ग के लिए चुन-त्सु स्तर निर्धारित कर दिये गये थे। उन लोगों को, जिन पर सामाजिक व राजनीतिक दायित्व थे, नैतिक रूप से सर्वोच्च व्यक्तित्व के आदर्श प्रस्तुत करने चाहिए थे।

इस प्रकार कन्फ्यूशियस सरकार सत्तावादी थी। यह सामाजिक स्तर पर बल देती थी। यह नैतिक नियंत्रण पर विश्वास रखती थी। चूँकि यह सब विचार राजतन्त्रात्मक ढांचे का समर्थन करते थे अतः सभी शासक राजवंशों ने इसका निरन्तर समर्थन किया। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि अन्य सभी विचार-दर्शनों के स्थान पर कन्फ्यूशियस विचारधारा का चीनी राजनीति पर 20 शताब्दियों तक आधिपत्य रहा।[3]

यद्यपि सिद्धान्ततः राजनीतिक स्तर पर कन्फ्यूशियसवाद प्रमुख रहा तथा व्यवहार में यह अन्य विचार सम्प्रदायों से प्रभावित हुआ था। आदर्शात्मक रूप में कन्फ्यूशियस परम्परा के अनुसार सरकार सीमित स्वरूप में रही, व्यवहार में यह कानूनी सम्प्रदाय से प्रभावित

3. जापान के प्रारंभिक इतिहास में कन्फ्यूशियन विचारधारा का प्रभाव पाया जाना आश्चर्यजनक नहीं है (देखिए अध्याय 11 पृष्ठ 275-276 'दि कन्फ्यूशियस कन्टेन्ट इन जापान')। वस्तुतः कईशताब्दियों के पश्चात् तोकुगावा जापान में पश्चोन्नान क्रम के नवीन कन्फ्यूशियसवाद शोगुनत आंदोलन के संदर्भ में पर्याप्त उचित सिद्ध हुआ (अध्याय 13 पृष्ठ 312-315 तोकूगावानिओ कन्फ्यूशियनिज्म)।

प्राशासनिक शासनतन्त्र के रूप में रही। कानूनी सम्प्रदाय के मुताबिक एक निश्चित कानूनी व्यवस्था को यदि निष्पक्ष रूप से लागू किया जाये तो वह उतनी परिवर्तनशील नहीं होती है जितना कि किसी राजा का चरित्र हो सकता है।

विद्वान भद्र पुरुषों की परम्परा[4]

पूर्व हेन साम्राज्य के पश्चात् से कन्फ्यूशियस की रचनाएँ चीनी विद्वता तथा प्रशासन का मूल आधार बना दी गई। वे सरकारी तंत्र का आधार बन गईं। चूँकि सिर्फ कन्फ्यूशियस समर्थकों को ही विद्वानों के रूप में स्वीकार किया जाता था अतः सिफारिश के द्वारा अथवा परीक्षा के द्वारा मात्र कन्फ्यूशियस समर्थकों को ही लोक सेवा में अवसर मिलता था। इस प्रकार राजतन्त्र तथा प्रशासन पर कन्फ्यूशियसवादियों का आधिपत्य स्थापित हो गया। इन लोगों की आर्थिक एवं राजनीतिक क्षमताएँ चीनी संस्कृति के राजनीतिक पक्ष का मूल कारक बन गईं। कन्फ्यूशियस सिद्धान्त में सामाजिक स्तरीकरण का विचार चीनी प्रशासन का मूल आधार बना। कन्फ्यूशियस विचारधारा में स्तरीकरण के सिद्धान्त को अपने चरमोत्कर्ष रूप में मेनसियश ने प्रस्तुत किया जिसने सम्पूर्ण जनता को शासक व शासित, दो वर्गों में विभाजित किया। मेनसियस ने कहा "कुछ लोग मस्तिष्क कार्य करते हैं तथा कुछ शारीरिक श्रम करते हैं। मस्तिष्क से कार्य करने वाले अन्यों पर शासन करते हैं तथा जो शारीरिक श्रम करते हैं वे अन्यों के द्वारा शासित होते हैं। जो अन्यों द्वारा शासित होते हैं वे शासन करने वाले सीमित वर्ग का समर्थन करते हैं तथा वे कुछ लोग जो शासन करते हैं अनेक शासित लोग उन्हें समर्थन प्रदान करते हैं।" कन्फ्यूशियस विचार के अनुसार शासक वर्ग को उन विद्वानों को निहित करना चाहिए जो अपने गुणों व प्रशिक्षण के कारण समाज का सर्वोत्तम अंश होते हैं। इन प्रशासक वर्गों को अपने उच्च ज्ञान तथा आदर्शपूर्ण व्यवहार के द्वारा, सामान्य जनता से स्वयं को पृथक रखना चाहिए। चूँकि ये शासक नैतिक मूल्यों का निर्धारण करने वाले तथा न्याय करने वाले होते हैं अतः उन्हें उन्हीं नियमों के अनुसार दंड नहीं दिया जा सकता जो कि सामान्य जनता के लिए होते हैं।

इस प्रकार प्राचीन चीन एक विशिष्ट शक्ति संतुलन में (अपने अन्य समकालीन समाजों की तुलना में) तथा पूर्ण शांति की स्थिति में कठोरतम रूप से कन्फ्यूशियसवादी था। इस संगठन के शिखर पर वह विद्वत भद्र वर्ग विद्यमान था जो जन सामान्य के कठोर परिश्रम के फलों का उपयोग करता था। इस वर्ग ने ऐसी जीवन प्रणाली का विकास कर लिया जो कि कलापूर्ण व परिष्कृत होने के बावजूद अयथार्थ व अरचनात्मक थी। यद्यपि चीनी सभ्यता की महान् परम्परा में साहित्यिक भावचित्र तथा चीनी मिट्टी की कला की सर्वोत्तम व परिष्कृत रचनाएँ पाई जाती हैं किन्तु सम्पूर्ण संस्कृति स्थिर थी तथा इसमें पूर्व हेन काल रचनात्मकता तथा गतिशीलता का अभाव था। सामान्य कृषक गरीब थे तथा उन्हें आधुनिक सुविधाएँ उपलब्ध नहीं थीं। निम्न आर्थिक स्तर पर भी इन कृषकों की प्रसन्नता को आधुनिक भाषा में राजनीतिक दंड अथवा आर्थिक अपराध की संज्ञा दी जा

4 विद्वान भद्र पुरुषों की परंपरा के लिए देखिए—एस डब्ल्यू विलियम्स की रचना, 'दि मिडिल किंगडम, ए सर्वे ऑफ दि ज्योग्राफी गवर्नमेंट लिट्रेचर सोशल लाइफ, आर्ट एण्ड हिस्ट्री ऑफ दी चाइनीज एम्पायर लन्दन 18९, खंड 1 अध्याय 8 लॉटोरेट पूर्वोद्धृत, खंड 11 अध्याय 17 चेंग न्हो गांग हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न चायना युंगकिंग 1945 अध्याय 14 चेंग कुंग लु हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न चायना, शंघाई 1935, अध्याय 15।

सकती है। पिछली 50 पीढ़ियों में चीन के कृषकों ने गरीबी में ही सुख को अपनी नियति माना है। कृषकों ने अपने निम्न स्तर को भाग्यवादी दर्शन के आधार पर स्वीकार किया है।

शासक वर्ग की भर्ती प्राशासनिक सेवा सम्बन्धी परीक्षाओं से होती थी। इस व्यवस्था की अपनी दुर्बलताएं थीं : सुई राजवंश से लेकर सुंग तथा चिंग राजवंश के पतन तक कुछ उम्मीदवार परीक्षा लेने वालों को धोखा अथवा रिश्वत देते थे तथा कुछ उच्च अधिकारियों के पुत्र अपेक्षाकृत सरल परीक्षा भी देते थे। चिंग वंश के पतन के समय कुछ निम्न सरकारी पद तो बेचे भी गये थे तथापि निकृष्टतम काल में भी कुछ ही लोग इस प्रकार धोखे से प्राशासनिक पद प्राप्त कर पाते थे। अन्यथा वर्षों कठोर परिश्रम करने के पश्चात् तथा भाग्यवश ही लोग इन परीक्षाओं में उत्तीर्ण हो पाते थे। प्रथम स्तर की परीक्षा पास करने के पश्चात् वह व्यक्ति हमारी शिक्षा प्रणाली की कॉलेज की उपाधि के समकक्ष माना जाता था। उसे शासक वर्ग का सदस्य तथा कानूनी व प्राशासनिक व्यवस्था में शिक्षित व्यक्ति के विशेषाधिकार व सम्मान प्राप्त हो जाता था तथा यदि उसे सरकारी पद प्राप्त हो जाता था तो वह घोषित रूप में सरकारी शासनतन्त्र का सदस्य बन चुका था। यह ऐसा पद था जिसकी महत्त्वाकांक्षा स्कूल में पढ़ने वाले प्रत्येक चीनी बच्चे को होती थी।

प्राचीन चीन के सभी प्राशासनिक अधिकारी एक दूसरे को उसी प्रकार जानते थे जैसे पश्चिम के वेस्ट पोइंटर्स तथा अन्य पुलिस समाज में एक दूसरे की जानकारी रखते हैं। सब अधिकारियों के नाम तथा पद एक नियमित प्रकाशन में प्रकाशित किये जाते थे जिसे चिन-शीन-चौन-शू (सरकारी पदाधिकारियों का रिकॉर्ड) कहा जाता था। इस पुस्तक में नाम प्रकाशित होना महान् प्रतिष्ठा का विषय होता था। एक बार प्राशासनिक वर्ग में प्रविष्ट होने के पश्चात् पदाधिकारी प्राशासनिकतंत्र में उत्तरोत्तर ऊंचे उठने का प्रयास करता था। व्यापक अर्थों में ये विद्वान अधिकारी ऐसे लोगों का समूह होते थे जो परस्पर सुरक्षा के लिए तत्पर रहते थे तथा सामान्य जनता को विश्वास प्राप्त करने का स्रोत मानने की अपेक्षा अपने लाभ का स्रोत मानते। किन्तु चूंकि इन अधिकारियों के आचरण सम्बन्धी कुछ विशेष नियम थे अतः एक प्रकार का संतुलन बना रहा अन्यथा इसके अभाव में इन अधिकारियों के दुराचरण व लोभ से शासक परिवार की सुरक्षा ही खतरे में पड़ जाती।

नियमित रूप से नियुक्त अधिकारियों के आधीन अनेक अधिकारी होते थे जिन्हें 'यापेन' कहा जाता था, सामान्य भाषा में इसे 'ग्रामीण दरबार' कहा जा सकता है। इसके सदस्य पुलिस, स्थानीय व्यवस्था करना, प्राशासनिक, न्यायिक व दरबारी कार्य करते थे। ये लोग जो शासन तंत्र के वास्तविक सदस्य नहीं होते थे इन्हें सरकार द्वारा बहुत ही कम वेतन दिया जाता था। अतः भली प्रकार से जीवन निर्वाह करने के लिए वे जब भी संभव होता जन सामान्य का शोषण करते थे। सामान्य कृषक तथा श्रमिक इन अधीनस्थ कर्मचारियों के अत्याचार से अधिक पीड़ित थे।

प्राशासनिक सेवाओं में असफल उम्मीदवार ग्रामीण अध्यापक तथा अधिकारियों के निजी सचिव बन जाते थे क्योंकि जो लोग एक बार कन्फ्यूशियस की प्रतिष्ठित रचनाएं पढ़ लेते थे वे फिर व्यापार, कारीगरी तथा शारीरिक श्रम करना अपनी प्रतिष्ठा के खिलाफ समझते थे। ये असफल उम्मीदवार पूरा पारिश्रमिक नहीं हो पाते थे फिर भी ये लोग यह स्वीकार नहीं करना चाहते थे कि वे प्राशासनिक वर्ग से पृथक् हो गये हैं।

कई राष्ट्रवादी तथा साम्यवादी आधुनिक चीनी यह मानते हैं कि चीन में इस विद्वत-भद्रवर्ग के निर्माण के कारण सभी तीव्र व कुशाग्र बुद्धि के लोग अन्य व्यवसायों में

लगने के बजाय इस वर्ग की तरफ आकर्षित हुए। इस प्रकार अन्य पक्षों में विकास नहीं हो सका। शारीरिक परिश्रम की अनुपस्थिति सामाजिक प्रतिष्ठा सम्मान तथा श्रेष्ठ उपलब्धि की परंपरागत पहचान बन गई। परिणामतः चीन के बुद्धिमान लोगों का समय प्रतिष्ठित रचनाओं को समझने तथा यथास्थिति को बनाये रखने जैसे गैर-रचनात्मक व्यवसायों में लगा।

चावल के लिए परिश्रम व पद के लिए अध्ययन

इस प्रकार चीन में राजतंत्रीय शासन के अन्तर्गत चीनी मूलतः दो दिशाओं में प्रयास करते थे 'चावल के लिए परिश्रम तथा पद के लिए अध्ययन" किया जाता था। करोड़ों में से कुछ ही थे जो सरकारी पद प्राप्त करते थे। 1812 के ता-चिग हुई तीन "दि कलेक्टेड इंस्टीट्यूट्स ऑफ दि ग्रेट चींग" संस्करण के अनुसार[5] चीन की सरकार में 8 वायसराय 15 गवर्नर 19 वित्तीय कमिश्नर, 18 न्यायिक कमिश्नर, 82 सर्किट अधिकारी, 182 प्रीफेक्ट, 1836 उप-प्रीफेक्ट, 178 कैंटन अधिकारी तथा 1293 प्रादेशिक मैजिस्ट्रेट (मजिस्ट्रेट) थे। इसके अतिरिक्त करीब इतने ही अधिकारी पेकिंग के कोर्ट में थे। इस प्रकार सार्वजनिक अधिकारियों की संख्या पर्याप्त कम थी तथा आधुनिक स्तर के अनुसार अनुपयुक्त थी क्योंकि प्रशासन का क्षेत्र व्यापक व जनता पर्याप्त थी।

चीनी जनजीवन की दैनिक गतिविधियों का संचालन करने में सरकार असमर्थ थी अतः यह कार्य विभिन्न संगठनों जैसे कबीले, ग्राम संगठन तथा समूहों के द्वारा किया जाता था। एक कबीला एक ही पूर्वजों के वंशजों का समूह होता था जिनकी एक ही उपजाति होती थी कबीले का सर्वाधिक वरिष्ठ तथा सम्माननीय व्यक्ति उसका मुखिया होता था तथा सैद्धान्तिक व व्यावहारिक रूप में उसका अपने कबीलेवालों पर पूरा नियंत्रण होता था। कबीलों का यह विभाजन उत्तर की अपेक्षा दक्षिण में अधिक प्रमुख होता था। दक्षिण में इन कबीलों का संपूर्ण समाज पर नियंत्रण होता था तथा कभी ये परस्पर युद्ध में भी संलग्न हो जाते थे। जब कबीले का कोई सदस्य अपराध करता था मुखिया उसे दण्डित करता था। यह दंड प्राण-दंड भी हो सकता था। जब कबीला उस व्यक्ति को दंड देने में असमर्थ रहता था तो सरकार हस्तक्षेप करती थी। वह उस व्यक्ति को दंड न देकर संपूर्ण कबीले को दंड देती थी क्योंकि वह अनुशासन को बनाये रखने में असमर्थ रहा था। उत्तर में कबीला अधिक लचीला संगठन था, इस क्षेत्र में इसका मुख्य कार्य पूर्वजों की स्मृति बनाये रखना तथा कबीलों के सदस्यों की सहायता के लिए सार्वजनिक कोष का निर्माण करना था। यह कबीले की व्यवस्था ऐसे ढीली शासन व्यवस्था वाले समाज की उपज थी जहाँ व्यक्ति को कानूनी सुरक्षा प्राप्त नहीं थी, अतः कबीले का संगठन न्यायिक तथा आर्थिक दृष्टि से अपरिहार्य था।

दूसरा महत्त्वपूर्ण संगठन ग्रामों का सम्प्रदाय था जो हसिन कहलाता था। प्रत्येक हसिन में 20 अथवा तीस गाँव हुआ करते थे। इसका प्रशासन केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थापित मैजिस्ट्रेट के द्वारा होता है। इस मजिस्ट्रेट का कार्य दैनिक न होकर ऊपरी

5. ता-चिग हुई तीन 'दि कलेक्टेड इंस्टीट्यूट्स ऑफ दि ग्रेट चींग' पश्चिमी युगों में लिखित संवैधानिक कानून के समकक्ष हैं। इसमें राजनीतिक संगठनों तथा उनके कार्यों की व्याख्या की गई है तथा राजनीतिक नियमों तथा उत्सव सम्बन्धी संस्कारों का वर्णन है। इसके छः संस्करण थे जिसका प्रथम 1690 तथा अन्तिम 1899 में प्रकाशित हुआ।

निरीक्षण का होता था। आधुनिक अर्थों में उसका कार्य 19वीं शताब्दी में भारत में स्थापित ब्रिटिश प्रादेशिक कमिश्नर के समान अथवा वर्तमान में मध्य अफ्रीका में उपनिवेश अधिकारी के समान होता था। यह एक अधिकारी लाखों देशी लोगों की आर्थिक, कानूनी, राजनीतिक तथा नैतिक व्यवस्था के लिए उत्तरदायी होता था। यद्यपि हसिन का प्रबन्ध पर्याप्त गहरा था तथापि यह दैनिक जीवन को नियंत्रित करने के लिए पर्याप्त नहीं था। अतः ग्रामों का स्वशासी होना आवश्यक था तथा प्रत्येक गांव में जिस प्रकार की शासन व्यवस्था का विकास हुआ वह प्रत्येक ग्राम के लोगों के स्वभाव, योग्यता तथा व्यक्तित्वों एवं समूहों के संतुलन पर निर्भर करता था। कुछ न्यायसंगत थे तथा अन्य तानाशाह थे। कुछ गांवों की व्यवस्था न्यू-इंगलैण्ड के प्रजातंत्र के समान थी जबकि अन्यों में वेस्टइंडीज के स्लाव प्रदेश की तरह अत्याचारतंत्र थी। जब तक ये ग्राम समूह किसी-प्रकार उपद्रव नहीं करते थे तथा सरकार का ध्यान आकर्षित नहीं करते थे तब तक सरकार उनकी बहुत कम परवाह करती थी।

सामान्यतया एक गांव, एक स्थानीय रूप से स्वशासित तथा आत्मनिर्भर इकाई होता था जिसका एक मुखिया ग्रामीण समाज के मुख्य सदस्यों द्वारा एक अनौपचारिक चुनाव में चुना जाता था। प्रादेशिक मजिस्ट्रेट गांव से बाहर का व्यक्ति होता था जबकि गाँव का मुखिया गाँव का ही व्यक्ति होता था जो अपने सद्-आचरण तक ही अपने पद पर बना रहता था तथा उसे उतना ही वेतन मिलता था जितना उसके गांव वाले उसे देना चाहते थे अथवा उसे दे सकते थे। गाँव के मुखिया का सामान्य कार्य ग्राम व्यवस्था बनाये रखना, सार्वजनिक कल्याण का निर्देशन करना तथा हसिन के प्रतिनिधि तथा गाँव वालों के बीच मध्यस्थता करना होता था। चूंकि उसकी नियुक्ति सरकार के द्वारा नहीं होती थी अतः उसे कानूनी सत्ता प्राप्त नहीं थी तथापि उसके आदेशों का पालन किया जाता था तथा उसके निर्णयों को कार्यान्वित किया जाता था।

कानून खर्चीला, दूर तथा कठोर था अतः गाँव में सभी झगड़े मध्यस्थता तथा समझौते से सुलझा लिये जाते थे। जब गाँव वालों में कोई मामूली झगड़ा हो जाता था तो गाँव का मुखिया गाँव के चायघर में सार्वजनिक सुनवाई करता था। अक्सर वहाँ के प्रत्यक्षदर्शी ही निर्णायकों का कार्य करते थे। हारने वाले पक्ष को मुखिया के कहने के अनुसार जुर्माना अथवा क्षतिपूर्ति देनी पड़ती थी तथा सुनवाई के समय उपस्थित लोगों को जलपान करवाना पड़ता था। चूंकि मापने के निर्णायक काफी अत्याचारी होते थे अतः सामान्य व्यक्ति स्वाभाविकतया चायघर जाकर अपने मामलों का निवटारा करवाना पसंद करते थे। गांव के दस झगड़ों में से नौ झगड़ों का निवटारा इसी प्रकार किया जाता था। स्वयं गांव का मुखिया भी स्वार्थी अथवा निर्दयी हो सकता था किन्तु चूंकि उसकी स्थिति सद्-आचरण पर निर्भर थी अतः उसकी स्थिति उससे प्रभावित होती थी। इस प्रकार गाँव का स्थानीय शासन उचित तथा कुछ सीमा तक प्रजातंत्रीय था क्योंकि यह जन सहमति पर निर्भर होता था अन्यथा उनके निर्णयों को कानूनी शक्ति प्राप्त नहीं थी। समूह अर्थात् हुई नगरों में स्वशासित इकाई थे तथा ग्रामीण व्यवसाय का निर्वाह नगरों में करते थे। हुई का आंग्लभाषा में समकक्षी पद यद्यपि गिल्ड कहा जाता है तथापि ये हुई अधिक व्यापक तथा विविधतापूर्ण संगठन थे। इनके तीन प्रमुख प्रकार व्यावसायिक समूह, देशी समूह तथा गुप्त समूह थे। व्यावसायिक समूह व्यवसायों पर आधारित थे तथा इन्हें कारीगर तथा व्यापारिक दो वर्गों में उप-विभाजित किया जा सकता था। सैद्धान्तिक रूप से प्रत्येक समूह का निर्माण

विशिष्ट व्यापार अथवा व्यवसाय पर नियन्त्रण रखने के लिए किया जाता था। इनका कार्य प्रतियोगिता को रोकना, मूल्य व वेतन निर्धारित करना तथा कार्य का स्तर निर्धारण करना होता था। इसके अतिरिक्त ये अपने निजी न्यायालयों का निर्माण करते थे जिसमें सदस्यों के झगड़े निपटाये जाते थे तथा आवश्यक होने पर जुर्माना भी किया जाता था। ये बेकारी, बीमारी, मृत्यु तथा अन्य असाधारण परिस्थितिओं में सहायता के लिए ट्रस्ट निधि का निर्माण भी करते थे। प्रत्येक समूह का संरक्षक एक बौद्ध या ताओवादी संत होता था, जो अक्सर स्थानीय गाथाओं में नायक होता था तथा अधिकांशतया सम्बन्धित व्यवसाय से किसी रूप में सम्बन्धित भी होता था। उदाहरण के लिए रंगमंच समूह का संरक्षक संत तांग के सम्राट हसुएन त्सुंग को माना जाता था क्योंकि रंगमंच से उसे विशेष लगाव था। इस समूह व्यवस्था से सम्बोधित एक संरक्षण व्यवस्था भी थी जिसके अन्तर्गत युवा सीखने वाले एक दक्ष कारीगर के संरक्षण में कुछ वर्षों तक बिना कुछ धन दिये व्यवसाय सीखते थे। अनिवार्य सेवा की पूर्ति के पश्चात् जब युवा सीखने वाला आवश्यक दक्षता प्राप्त कर लेता था तो वह उस समूह का नियमित सदस्य बन जाता था।

हुई कुआन अथवा विदेशी समूह चीन में वास्तविक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक क्षेत्रवाद के संकेत थे। किसी एक स्थान में रहने वाले अपरिचित लोग, देशी लोगों, विशेषतया देशी अधिकारियों से सुरक्षा के लिए समूहों में संगठित हो जाते थे। इसके अतिरिक्त ये लोग अपने पुराने गाँव के प्रति अपने लगाव को इस संगठन के द्वारा बनाये रखते थे जो। जो लोग गाँवों से निकलकर आते थे, वे अपने गाँव के मुहल्ले के आधार पर संगठन बनाते थे जो उन्हें समर्थन व संरक्षण प्रदान करते थे उनके एकाकीपन को दूर करते थे तथा उन्हें आर्थिक अवसर प्रदान करते थे। आज भी गैर साम्यवादी चीनी शहरों में जैसे हाँगकाँग, सिंगापुर तथा सैनफ्रांसिस्को में ये क्लब अब भी लोकप्रिय है। इस प्रकार के देशी समूह पेकिंग में सभी प्रान्तीय राजधानियों तथा बड़े व्यापारिक नगरों में पाये जाते थे। 19 वीं शताब्दी में पेकिंग में लगभग प्रत्येक प्रान्त में हुई-कुआन पाये जाते थे। कई व्यापक तथा सम्पन्न जिलों में अपने हुई-कुआन होते थे। हुई-कुआन के सभा भवन संगठन के सम्पन्न लोगों के द्वारा बनाए जाते थे। यह उसी प्रकार है जैसे सनबरी पेनसिलवेनिआ से वाशिंगटन को आने वाले सब लोग स्वामिभक्ति तथा साथ के लिए एक सभा भवन बना लें जो कीमत तथा कार्य की दृष्टि से मेसोनिक सराय या ऑलड फैलोज हाल के समान हो। चिंग काल के चीन में प्रत्येक प्राँतीय राजधानी में गवर्नर के भवन तथा परीक्षा भवन के पश्चात् सर्वाधिक प्रभावशाली भवन देशी समूहों के होते थे। इनमें से कुछ भवनों में सुन्दर बाग भी होते थे। प्रत्येक हुई-कुआन अपने देश के आगंतुक लोगों को आवास की मुफ्त व्यवस्था प्रदान करते थे, इनमें से अधिकांश विभिन्न परीक्षाओं में बैठने वाले उम्मीदवार होते थे। कभी-कभी इन लोगों को सरकारी नियुक्ति के लिए लम्बे अर्से तक प्रतीक्षा करनी पड़ती थी। हुई-कुआन को भटके लोगों को वापिस जाने के लिए किराया तथा अपने जन्म-स्थान से दूर मृतकों को दफनाने की व्यवस्था भी करनी होती थी। प्राचीन चीन में अपने जन्म-स्थान के प्रति लोगों में इतनी अपनत्व की भावना होती थी कि उस स्थान के उच्च अधिकारियों अथवा सम्पन्न व्यापारियों को अपने स्थान के अन्य लोगों को सहायता करनी पड़ती थी। वे या तो उन्हें प्रशासनिक पदों पर लगा देते थे अथवा उन्हें आर्थिक सहायता देते थे। इस प्रकार ये देशी समूह अपने जन्म-स्थान के प्रति अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के विभिन्न तरीकों में से एक थे।

किये (1850–1865 ई०) जिसमें अपरिष्कृत ईसाई भूमि समाजवाद के अनुसार भूमि पर एकाधिकारी को समाप्त कर दिया गया। ताई पिंग विद्रोह को दमन करने में इतना अधिक रक्तपात हुआ कि अधिकांश दक्षिणी प्रान्तों का क्षेत्र बंजर बन गया। कुछ मामलों में स्वयं भूमि-स्वामियों ने अतिरिक्त भूमि पर से अपने अधिकार समाप्त कर दिये तथा गांव वालों को सूचित कर दिया क्योंकि उन्हें उस भूमि के लिए कृषक प्राप्त न हो सके तथा वे उस भूमि पर किसी प्रकार का कर नहीं देना चाहते थे। विभिन्न क्षेत्रों में किराये के कृषकों को दिये जाने वाले पारिश्रमिक तथा भू-स्वामियों के द्वारा उनके प्रति व्यवहार के भिन्न भिन्न स्तर थे। सामान्यतया भूमि का किराया वार्षिक फसल के एक तिहाई तत्त्व थे जैसे भूमि की उत्पादकता तथा भूस्वामियों द्वारा दिये गये बीज तथा खाद की मात्रा। कुछ मामलों में इन कृषक सेवकों को भूस्वामी के घरों पर भी कार्य करना पड़ता था। स्थानीय रीति-रिवाज तथा विभिन्न भू-स्वामियों की स्थिति का प्रभाव भी कृषक मजदूरों पर पड़ता था। सामान्यतः भू-स्वामी स्थानीय अधिकारियों से निकट तथा व्यक्तिगत सम्बन्ध बनाए रखते थे। अतः यदि कोई भू-स्वामी अत्याचारी हो जाता था तो उसके ऊपर जनमत के अतिरिक्त अन्य कोई नियन्त्रण नहीं होता था। अकाल अथवा किसी दुर्घटना के कारण यदि कोई किसान किराया देने में असमर्थ रहता था तो उसे अपने बच्चे बेचने पड़ते थे जो दास बनते थे अथवा लड़कियाँ वेश्यावृत्ति अपना लेती। तथापि विशाल भू स्वामित्व का सामान्य जनता विरोध करती थी। जब किसी परिवार का सदस्य अपनी भूमि को बेचना चाहता था उसमें अन्य परिवार के लोगों की सहमति आवश्यक होती थी। इसके अतिरिक्त, परम्परा के अनुसार यदि भूमि बेचने वाला व्यक्ति सौदा हो जाने के पश्चात् भी आर्थिक कठिनाई में होता था तो वह जमीन खरीदने वाले से अधिक धन की मांग कर सकता था। इस प्रकार जमीन खरीदने वाला प्रारम्भ में यह नहीं जानता था कि जो जमीन वह खरीद रहा है उसका मूल्य अंततः कितना पड़ेगा। इस व्यवहार ने तथा अन्य स्थानीय परम्पराओं ने भू-स्वामित्व पर पर्याप्त सीमा तक नियन्त्रण रखा।

भूमि कर

चिंग राजवंश के दौरान, ताँग काल में स्थापित व्यवस्था के अनुसार भूमि कर दो पारियों में दिया जाता था। पहली किश्त चे-इन-लिआंग अथवा फसल के लिए नकद' कहलाता था जो चन्द्र वर्ष के मुताबिक नौवें महिने में लिया जाता था। दूसरी किश्त त्साओ मी अथवा 'स्थानान्तरित चावल' कहलाता था बड़ी नहर के इर्दगिर्द वाले आठ प्रान्तों द्वारा दिया जाता था, अन्य प्रान्त नकद में भुगतान करते थे। प्रत्येक मामले में भुगतान के लिए कुछ दिन निश्चित कर दिए जाते थे। जो लोग निश्चत अवधि के भीतर भुगतान करने में असमर्थ रहते थे उनको किश्त का पंचमांश दण्ड के रूप में भुगतान करना पड़ता था। प्रत्येक जिले में भू-स्वामित्व का अलेख रखा जाता था जिसे जिले के मुख्यालय में नवीनतम रूप में रखा जाता था। 19वी शताब्दी में तथा बीसवी शताब्दी के आरम्भ में भूमि के रिकॉर्ड अस्त-व्यस्त हो गये। इसका कारण अंशतः यह दुर्भाग्यपूर्ण प्रक्रिया थी जिसके अनुसार रजिस्ट्रार का कार्यालय अर्द्ध-वंशानुगत बन गया, क्योंकि सिर्फ एक ही परिवार जिले में सभी भू-उपाधियों का तथा भूमि शुल्कों का एकाधिपत्य रखता था।

साम्राज्य के विशाल विस्तार तथा भारत-चीन सीमा प्रान्त के लगे जंगलों से उपआर्कटिक उत्तरी मंचूरिया तक खेती के तरीके तथा फसल के प्रकार अत्यधिक विषमता

रखते थे। जहाँ तक खेती-प्रणाली का प्रश्न था, हुआई नदी विभाजन रेखा प्रस्तुत करती है। चीन के दक्षिण-पश्चिम में वर्ष की तीन फसलें असामान्य नहीं थीं। ये नदी के उष्ण डेल्टा मूलत: चावल उगाने के काम आते थे तथा उसके साथ सहायक फसलों के रूप में गेहूँ, दालें तथा अन्य फसलें भी उगाई जाती थीं। हुई नदी के उत्तर में जहाँ ठंडा मौसम होता था, दो फसलें होती थीं। किसान गेहूँ, रुई, मक्का व ज्वार बोते थे।

कृषि जीवन

चीनी कृषक उस अर्थ में कृपक कभी नहीं बनता जो अर्द्ध दास के रूप में यूरोपियन जागीरदारों तथा हिन्दू जमींदारों के चित्रों में मिलता है। निकृष्टतम रूप में भी वह हलवाहा रहता था। यद्यपि कृपक को कठोर परिश्रम करना पड़ता था, कभी-कभी फसल के दिनों में उसके काम के घंटे एक दिन में चौदह भी हो जाते थे तथा कभी-कभी उसकी स्त्री व बच्चों को भी उसकी सहायता करनी पड़ती थी तब भी कृपक पर्याप्त सीमा तक आत्म-निर्भर होता था। फसल का समय समाप्त होने के बाद उत्साही कृपक हस्त उद्योगों में लग कर अतिरिक्त आय प्राप्त करते थे। औरतें रेशम के कीड़े पालती थीं, रेशम इकट्ठा करती थीं तथा वस्त्र बुनती थीं। आदमी स्वयं अपने घर बनाते थे, कुएँ खोदते थे तथा खातीगिरी करते थे। आधुनिक अर्थों में इतना परिश्रम करने के बावजूद किसान बहुत गरीब थे। समय-समय पर बाजार व मेले उनके मनोरंजन के एकमात्र साधन होते थे। उन्हें रविवार का अवकाश भी प्राप्त नहीं था जो ईसाई धर्म ने पश्चिम को दिया। शिक्षा विशाल ग्रामीण समाज की पहुँच के बाहर थी। कभी-कभी एक सम्पन्न परिवार अपने लड़कों में से एक को स्कूल भेजता था। जहाँ तक वर्षा, भूखंड तथा जमीन का प्रश्न था अधिकांश कृषि प्रांतवर्ती भू-भाग में होती, जिसके कारण किसान गरीब रहा। इसके अतिरिक्त, उत्पादन के साधनों के प्रति परम्परागत दृष्टिकोण तथा बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण भी कृपकों की दयनीय दशा हो गई।

श्रमिक

परम्परागत सामाजिक व्यवस्था में श्रमिक कृपकों से नीचे रहते थे। चूँकि चीन में आधुनिक औद्योगिक व्यवस्था 19वीं शताब्दी से पहले नहीं थी अतः अधिकांश श्रमिक हस्त उद्योगों में श्रमिक, खेतों पर तथा घरों पर काम करने वाले श्रमिक ही थे। विभिन्न प्रकार के हस्त-उद्योगों को 'उठ व्यवसाय' का नाम दिया जाता था जिसमें खाती, कारीगर, बावर्ची, लोहार तथा कई अन्य सम्मिलित थे। प्रत्येक जिले में प्रत्येक व्यवसाय अपना पृथक संगठन होता था। जब एक कृपक परिवार में कई बच्चे होते थे जिनका निर्वाह जमीन से नहीं हो सकता था तो उसके बच्चों को कोई व्यवसाय सीखने भेजा जाता था। तेरह वर्ष से सोलह वर्ष की आयु किसी व्यवसाय को सीखने के लिए उचित मानी जाती थी। इस काल में शिल्प शिक्षार्थी अपने मालिक की सेवा घरेलू सेवक की तरह करता था। वह अपने शिल्प को पहले देखकर तथा बाद में व्यवहार से सीखता था। उसे इस दौरान कोई वेतन नहीं मिलता था। निश्चित वर्षों तथा शिक्षण प्राप्त करने के पश्चात् वह शिक्षार्थी स्वयं परिपक्व शिल्पी बन जाता था।

श्रमिक में कृपक श्रमिकों की स्थिति बदतर थी। दक्षताविहीन श्रमिकों के कोई संगठन नही थे तथा एक प्रारम्भिक कृपक श्रमिक की महत्ता एक अतिरिक्त व्यक्ति से

गुप्त संगठन :

चीन के सम्पूर्ण इतिहास में गुप्त संगठन विद्यमान रहे हैं। वे चिंग काल में खूब प्रचलित हुए तथा अन्ततः सम्पूर्ण साम्राज्य में व्यापक हो गये। ऊपरी तौर पर ये संगठन धार्मिक तथा भ्रातृत्वपूर्ण उद्देश्यों पर बने होते थे तथापि मौका पड़ने पर वे सरकार के विरुद्ध भी विद्रोह करते थे। ये गणतन्त्रवादी चीन में विद्यमान राजनीतिक दलों के पूर्ण रूप थे (1912–1928)। इनमें से अधिकांश संगठन 19वीं शताब्दी में मंचू शासन के अत्याचार के विरुद्ध बनाये गये थे। इन गुप्त संगठन के सदस्यों को अक्सर दण्ड दिया जाता था। इनका नेतृत्व विद्वान लोगों के हाथ में नहीं होता था क्योंकि वे लोग प्रशासनिक सेवाओं में चले जाते थे। इन लोगों को राजनीनिक जीवन से बहिष्कृत माना जाता था। इस प्रकार ये आसानी से षड्यंत्रकारी समूहों में परिवर्तित हो जाते थे। इन गुप्त संगठनों के अपने सदस्य के लिए कठोर नियम हुआ करते थे तथा ये इन नियमों का उल्लंघन करने वाले सदस्यों को कठोर दण्ड देने की स्थिति में होते थे। इन समूहों के सदस्यों के परस्पर सम्बन्ध सहृदयता के होते थे। तथापि संगठन के बाहर लोग अनुचित कार्य जैसे लूटमार करते थे। चिंग काल में एलुर्स, ट्रायड्स, दि लिटिल डेगर्स, दि लोटस तथा राइटियस हारमनी फिस्ट्स (जिन्हें पश्चिमी लोग बॉक्सर्स भी कहते थे) नायक गुप्त संगठन विद्यमान थे। ये संगठन सत्ता द्वारा दमन के कठोरतम प्रयास करने के बावजूद फले-फूले।[6]

स्वेच्छापूर्ण ढंग में विकसित परम्परा के अनुसार सैद्धान्तिक नियन्त्रण के गम्भीर प्रभाव, राजनीतिक स्वच्छन्दता, परिवार के द्वारा किये जाने गैर-राजनीतिक कार्य, ग्राम व्यवस्था तथा हुई इन सब के प्रभाव के परिणामस्वरूप राज्य की महत्ता जिस सीमा तक कम हो गई वह पश्चिमी दृष्टि से अकल्पनीय है। इस प्रकार चीन का यह परम्परागत विश्वास वास्तविकता बन गया कि वह सरकार सबसे अच्छी होती है-जो सबसे कम शासन करती है। शासन व्यवस्था सरकारी तौर पर सिर्फ अपरिहार्य कार्य करती थी जैसे कर वसूल करना, सार्वजनिक व्यवस्था बनाये रखना, जटिल मामले सुलझाने के लिए न्याय व्यवस्था करना तथा देश की सीमाओं की रक्षा करना! इन न्यूनतम कार्यों के लिए शाही शासन व्यवस्था स्थानीय संगठनों तथा गांवों के सहयोग व सहायता पर गम्भीर रूप से निर्भर रहती थी। अधिकांश सुरक्षा व्यवस्था कल्याणकारी कार्य, बीमा सेवाएँ, गाँव तथा स्थानीय संगठनों के द्वारा किये जाते थे। ये संगठन जो कानून से स्वतन्त्र तथा लचीले थे न तो राजाज्ञाओं से नष्ट किये जा सकते थे और न ही राजनीतिक नेतृत्व में परिवर्तन से ये प्रभावित होते थे तथा चूंकि इन संगठनों का आधार व्यापक तथा लोकप्रिय था अतः निरंकुशवादी राजनीतिक व्यवस्था वाले समाज में उनकी स्थिति अधिक महत्वपूर्ण रही।

प्राचीन चीन की अर्थव्यवस्था

आधुनिक काल से पूर्व की चीन की अर्थव्यवस्था पाश्चात्य प्रभाव से पहले आश्चर्यजनक रूप से आत्म-स्वावलम्बी थी। यद्यपि चीन के विभिन्न भाग समय समय पर अकाल तथा महामारी से ग्रसित रहते थे फिर भी सम्पूर्ण चीन कभी भी अपने अस्तित्व के लिए

6. परम्परागत चीनी समाज के विस्तृत वर्णन के लिए निम्नांकित पुस्तकें देखिये–पी.एम ए. लाइनबर्गर 'गवर्नमेंट इन रिपब्लिकन चाइना: अध्याय 6 : ए. एच. स्मिथ, विलेज लाइफ इन चाइना, न्यूयार्क 1899. जे. एस. बर्गेस 'दि गिल्ड्स ऑफ पेकिंग', न्यूयॉर्क 1928, एच. बी. मोर्स 'दि गिल्ड्स ऑफ चायना' लन्दन 1909, एम. सी. यॉग 'ए चाइनीज विलेज', न्यूयॉर्क 1945।

अथवा एक भी आर्थिक कार्य के लिए विदेशी आयात पर निर्भर नहीं रहा। विदेशी व्यापार का विकास नहीं हुआ था। मात्र सम्राट सम्मान रूप में भेंट लेता था या दिया करता था। चीन अपने वस्त्र तथा खाद्य समस्या को सुलझाने में पर्याप्त सफल हुआ था। शाही सरकार ने जनता को छोड़ दिया तथा जनता को मितव्ययी, परिश्रमी तथा धैर्यवान थी, ने स्वयं अपने समस्याओं का समाधान किया। सरकार मुद्रा पर,सार्वजनिक अनाज भण्डारों पर तथा नमक व लोहे पर नियन्त्रण रखती थी। अन्य सभी आर्थिक गतिविधियां लोगों के लिए छोड़ दी गई थीं। इस सदर्भ में नियम अथवा नियन्त्रण व्यावसायिक संगठनों के द्वारा लगाये जाते थे, सरकार के द्वारा नहीं। प्राचीन चीनी व्यवस्था में जनता को चार वर्गों में विभाजित किया गया था तथा ये प्रतिष्ठा व सम्मान के क्रम में थे। विद्वान, कृषक श्रमिक तथा व्यापारी[7] सर्वश्रेष्ठ विद्वान माने जाते थे जो समाज का सर्वोत्कृष्ट अंश होते थे। सरकार के सभी अधिकारी वर्ग इसी वर्ग से लिये जाते थे। चूंकि विद्वान बनने के लिए पर्याप्त धन की आवश्यकता होती थी अतः प्रायः सभी विद्वान उस उच्च वर्ग के सदस्य होते थे जो अत्यधिक संपन्न परिवारों को निहित करता था। हालांकि पर्याप्त मात्रा में इसके अपवाद भी होते थे ताकि चीनियों को सभी बुद्धिमान लोगों के लिए अवसर की समानता का भ्रम बना रहे। क्योंकि प्रायः बुद्धिमान बच्चों को गांव संगठनों तथा उदार धनाढ्यों से सहायता मिला करती थी ताकि वे तरक्की करने-करते समाज के निम्न वर्ग से कुलीन शासक वर्ग में प्रवेश कर सकें।

सामाजिक प्रतिष्ठा की दृष्टि से दूसरा महत्वपूर्ण स्थान कृषकों का था। पुरातन काल से चीन कृषि पर निर्भर रहा है। साम्राज्य के राजस्व का मूल स्रोत भूमि कर था। विद्वानों का भद्र वर्ग कृषकों द्वारा दिये गये किराये पर आश्रित था। देश का बौद्धिक वर्ग यह जानता था कि कृषकों की मेहनत के बिना देश का अस्तित्व खतरे में पड़ सकता था। अतः कृषकों को महत्त्व प्रदान करने के लिए अन्य व्यवसायों की तुलना में भूमि तथा राजस्व नीतियों में उन्हें विशेष सुविधाएं प्रदान की गई। जबकि व्यापारियों तथा श्रमिकों को इतना महत्वपूर्ण नहीं माना जाता था।

प्राचीन चीन में विशाल उद्योग नहीं थे। यद्यपि स्थानीय तौर पर हस्तकलाओं के केन्द्र थे। उद्योगों में व्यय करने पर धन की उपलब्धि नहीं होती थी, इसकी उपलब्धि भूमि व गहनों से होती थी। अतिरिक्त धन अक्सर भूमि में लगाया जाता था। भू-स्वामी भूमी के सहस्रों मौ के मालिक भी होते थे जो स्वयं खेती नहीं करते थे तथा छोटे खेतों के मालिक व किराये पर खेती करने वाले कृषक भी होते थे। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में बड़े भू-स्वामी यांग्ज नदी के दक्षिण की अपेक्षा उत्तर में अधिक पाये जाते थे। इस घटना का मूल कारण यह था कि दक्षिण के प्रान्तों में ताई-पिंग विद्रोहियों ने गम्भीर आर्थिक प्रयोग

7. इन विभिन्न वर्गों की अपेक्षाकृत भूमिका के लिए तथा सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था में सरकार की भूमिका के लिए देखिए—'डिस्कोर्सेज ऑन साल्ट एण्ड आइरन, ए डिबेट ऑन स्टेट कंट्रोल ऑफ कॉमर्स एंड इण्डस्ट्री इन एनसियंट चायना', हुआन कुआन के चीनी ग्रंथ से अनुवादित तथा एसोन एम गेल के द्वारा परिचय तथा टिप्पणिया दी गई है लिडन 1931। व्यापारियों को पद सोपान क्रम पर अंतिम स्थान दिया जाना कन्फ्यूशियस विचार का स्पष्ट प्रभाव है। इस क्रम में एक अन्य क्रम भी था जिसमें प्रथम विद्वान, द्वितीय कृषक, तृतीय श्रमिक तथा व्यापारी तथा चौथे निकृष्ट व्यवसाय थे। ये निकृष्ट व्यवसाय अमानवीय व गन्दे माने जाते थे। वेश्यावृत्ति, नाई, नाटककार तथा सैनिक ये निम्न व्यवसायों में माने जाते थे।

किये (1850–1865 ई०) जिसमें अपरिष्कृत ईसाई भूमि समाजवाद के अनुसार भूमि पर एकाधिकारी को समाप्त कर दिया गया। ताई पिंग विद्रोह को दमन करने में इतना अधिक रक्तपात हुआ कि अधिकांश दक्षिणी प्रान्तों का क्षेत्र वंजर बन गया। कुछ मामलो में स्वयं भूमि-स्वामियों ने अतिरिक्त भूमि पर से अपने अधिकार समाप्त कर दिये तथा गाँव वालों को सूचित कर दिया क्योंकि उन्हें उस भूमि के लिए कृषक प्राप्त न हो सके तथा वे उस भूमि पर किसी प्रकार का कर नही देना चाहते थे। विभिन्न क्षेत्रों में किराये के कृषको को दिये जाने वाले पारिश्रमिक तथा भू-स्वामियों के द्वारा उनके प्रति व्यवहार के भिन्न भिन्न स्तर थे। सामान्यतया भूमि का किराया वार्षिक फसल के एक तिहाई तत्त्व थे जैसे भूमि की उत्पादकता तथा भूस्वामियों द्वारा दिये गये बीज तथा खाद की मात्रा। कुछ मामलों में इन कृषक सेवको को भूस्वामी के घरों पर भी कार्य करना पड़ता था। स्थानीय रीति-रिवाज तथा विभिन्न भू-स्वामियों की स्थिति का प्रभाव भी कृषक मजदूरों पर पड़ता था। सामान्यतः भू-स्वामी स्थानीय अधिकारियों से निकट तथा व्यक्तिगत सम्बन्ध बनाए रखते थे। अतः यदि कोई भू-स्वामी अत्याचारी हो जाता था तो उसके ऊपर जनमत के अतिरिक्त अन्य कोई नियन्त्रण नहीं होता था। अकाल अथवा किसी दुर्घटना के कारण यदि कोई किसान किराया देने में असमर्थ रहता था तो उसे अपने बच्चे बेचने पड़ते थे जो दास बनते थे अथवा लड़कियाँ वेश्यावृत्ति अपना लेती। तथापि विशाल भू स्वामित्व का सामान्य जनता विरोध करती थी। जब किसी परिवार का सदस्य अपनी भूमि को बेचना चाहता था उसमें अन्य परिवार के लोगों की सहमति आवश्यक होती थी। इसके अतिरिक्त, परम्परा के अनुसार यदि भूमि बेचने वाला व्यक्ति सौदा हो जाने के पश्चात् भी आर्थिक कठिनाई में होता था तो वह जमीन खरीदने वाले से अधिक धन की मांग कर सकता था। इस प्रकार जमीन खरीदने वाला प्रारम्भ में यह नहीं जानता था कि जो जमीन वह खरीद रहा है उसका मूल्य अंततः कितना पड़ेगा। इस व्यवहार ने तथा अन्य स्थानीय परम्पराओं ने भू-स्वामित्व पर पर्याप्त सीमा तक नियन्त्रण रखा।

भूमि कर

चिंग राजवंश के दौरान, तांग काल में स्थापित व्यवस्था के अनुसार भूमि कर दो बारियों में दिया जाता था। पहली किश्त चे-इन-लिआंग अथवा फसल के लिए नकद' कहलाता था जो चन्द्र वर्ष के मुताबिक नौवें महिने में लिया जाता था। दूसरी किश्त त्साओ मी अथवा 'स्थानान्तरित चावल' कहलाता था बड़ी नहर के इर्दगिर्द वाले आठ प्रान्तों द्वारा दिया जाता था, अन्य प्रान्त नकद में भुगतान करते थे। प्रत्येक मामले में भुगतान के लिए कुछ दिन निश्चित कर दिए जाते थे। जो लोग निश्चत अवधि के भीतर भुगतान करने में असमर्थ रहते थे उनको किश्त का पंचमांश दण्ड के रूप में भुगतान करना पड़ता था। प्रत्येक जिले में भू-स्वामित्व का अभिलेख रखा जाता था जिसे जिले के मुख्यालय में नवीनतम रूप में रखा जाता था। 19वीं शताब्दी में तथा बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में भूमि के रिकॉर्ड अस्त-व्यस्त हो गये। इसका कारण अंशतः यह दुर्भाग्यपूर्ण प्रक्रिया थी जिसके अनुसार रजिस्ट्रार का कार्यालय अर्द्ध-वंशानुगत बन गया, क्योंकि सिर्फ एक ही परिवार जिले में सभी भू-उपाधियों का तथा भूमि शुल्कों का एकाधिपत्य रखता था।

साम्राज्य के विशाल विस्तार तथा भारत-चीन सीमा प्रान्त के लगे जंगलो से उपआर्कटिक उत्तरी मंचूरिया तक खेती के तरीके तथा फसल के प्रकार अत्यधिक विषमता

रखते थे। जहाँ तक खेती-प्रणाली का प्रश्न था, हुआई नदी विभाजन रेखा प्रस्तुत करती है। चीन के दक्षिण-पश्चिम में वर्ष की तीन फसलें असामान्य नहीं थीं। ये नदी के उष्ण डेल्टा मूलतः चावल उगाने के काम आते थे तथा उसके साथ सहायक फसलों के रूप में गेहूँ, दालें तथा अन्य फसलें भी उगाई जाती थी। हुई नदी के उत्तर में जहाँ ठंडा मौसम होता था, दो फसलें होती थीं। किसान गेहूँ, रुई, मक्का व ज्वार बोते थे।

कृषि जीवन

चीनी कृषक उस अर्थ में कृषक कभी नहीं बनता जो अर्द्ध दास के रूप में यूरोपियन जागीरदारों तथा हिन्दू जमींदारों के चित्रों में मिलता है। निकृष्टतम रूप में भी वह हलवाहा रहता था। यद्यपि कृषक को कठोर परिश्रम करना पड़ता था, कभी-कभी फसल के दिनों में उसके काम के घंटे एक दिन में चौदह भी हो जाते थे तथा कभी-कभी उसकी स्त्री व बच्चों को भी उसकी सहायता करनी पड़ती थी तब भी कृषक पर्याप्त सीमा तक आत्म-निर्भर होता था। फसल का समय समाप्त होने के बाद उत्साही कृषक हस्त उद्योगों में लग कर अतिरिक्त आय प्राप्त करते थे। औरतें रेशम के कीड़े पालती थीं, रेशम इकट्ठा करती थीं तथा वस्त्र बुनती थीं। आदमी स्वयं अपने घर बनाते थे, कुएँ खोदते थे तथा खातीगिरी करते थे। आधुनिक अर्थों में इतना परिश्रम करने के बावजूद किसान बहुत गरीब थे। समय-समय पर बाजार व मेले उनके मनोरंजन के एकमात्र साधन होते थे। उन्हें रविवार का अवकाश भी प्राप्त नही था जो ईसाई धर्म ने पश्चिम को दिया। शिक्षा विशाल ग्रामीण समाज की पहुँच के बाहर थी। कभी-कभी एक सम्पन्न परिवार अपने लड़कों में से एक को स्कूल भेजता था। जहाँ तक वर्षा, भूखंड तथा जमीन का प्रश्न था अधिकांश कृषि प्रांतवर्ती भू-भाग में होती, जिसके कारण किसान गरीब रहा। इसके अतिरिक्त, उत्पादन के साधनों के प्रति परम्परागत दृष्टिकोण तथा बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण भी कृषकों की दयनीय दशा हो गई।

श्रमिक

परम्परागत सामाजिक व्यवस्था में श्रमिक कृषकों से नीचे रहते थे। चूँकि चीन में आधुनिक औद्योगिक व्यवस्था 19वीं शताब्दी से पहले नहीं थी अतः अधिकांश श्रमिक हस्त उद्योगों में श्रमिक, खेतों पर तथा घरों पर काम करने वाले श्रमिक ही थे। विभिन्न प्रकार के हस्त-उद्योगों को 'उठ व्यवसाय' का नाम दिया जाता था जिसमें खाती, कारीगर, बावर्ची, लोहार तथा कई अन्य सम्मिलित थे। प्रत्येक जिले में प्रत्येक व्यवसाय अपना पृथक संगठन होता था। जब एक कृषक परिवार में कई बच्चे होते थे जिनका निर्वाह जमीन से नहीं हो सकता था तो उसके बच्चों को कोई व्यवसाय सीखने भेजा जाता था। तेरह वर्ष से सोलह वर्ष की आयु किसी व्यवसाय को सीखने के लिए उचित मानी जाती थी। इस काल में शिल्प शिक्षार्थी अपने मालिक की सेवा घरेलू सेवक की तरह करता था। वह अपने शिल्प को पहले देखकर तथा बाद में व्यवहार से सीखता था। उसे इस दौरान कोई वेतन नहीं मिलता था। निश्चित वर्षों तथा शिक्षण प्राप्त करने के पश्चात् वह शिक्षार्थी स्वयं परिपक्व शिल्पी बन जाता था।

श्रमिक में कृषक श्रमिकों की स्थिति बदतर थी। दक्षताविहीन श्रमिकों के कोई संगठन नहीं थे तथा एक प्रारम्भिक कृषक श्रमिक की महत्ता एक अतिरिक्त व्यक्ति से

बढ़ कर नहीं थी। ये कृषक श्रमिक सम्पन्न कृषकों के द्वारा वर्ष भर के लिए किराये पर लिये जाते थे, इन्हें आवास व भोजन की सुविधा के साथ मात्र दस-बीस चाँदी की मुद्राएँ दी जाती थीं। इनकी आय इतनी कम होती थी कि ये अस्थायी कृषक भी नहीं बन पाते थे।

यद्यपि चीन में शताब्दियों पूर्व दासता का उन्मूलन कर दिया गया था तथापि वेतन-भोगी अथवा वचनबद्ध सेवक चीन में पर्याप्त प्रचलित थे। निर्धन मध्यम वर्ग तक पर्याप्त मात्रा में नौकर रख सकता था। ग्रामीण जिलों से इस प्रकार के सेवकों का प्रवाह निरन्तर बना रहता था जो नगरों में घरेलू सेवकों की तलाश में आते थे। यद्यपि उनका जीवन खेत के श्रमिक से अच्छा था तथापि उनकी सामाजिक स्थिति अत्यधिक निम्न थी। अतः गरीब से गरीब चीनी भी घरेलू सेवक बनने के बजाय खेत पर दरिद्रता की जिंदगी बिताना पसंद करते थे।

व्यापारी

सामाजिक प्रतिष्ठा की दृष्टि से व्यापारी निम्नतम थे। उनकी यह स्थिति अन्य लोगों के मस्तिष्क में परम्परागत रूप से जम चुकी थी तथा चूँकि इस वर्ग का अपना पृथक सुविधापूर्ण सामाजिक जीवन होता था अतः ये अन्यों के दृष्टिकोण की परवाह नहीं करते थे। कन्फ्यूशियस विचारवादियों के अनुसार व्यापारी कोई नई रचनात्मक बात नहीं करते थे तथापि स्वयं व्यापारी अपने कार्य के परिश्रम व कठिनाई को समझते थे। सिद्धान्त व व्यवहार में अत्यधिक विषमता थी। हेनकाल के पश्चात् से व्यापारियों ने चीनी अर्थ-व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। तथा यद्यपि बौद्धिक वर्ग उनकी गतिविधियों को संकुचित मानता था तथापि अरब, इटलीवासी, पुर्तगाली तथा अन्य पश्चिमी भ्रमणार्थियों ने चीनी व्यापारिक गतिविधियों को श्रमपूर्ण उग्र सुसंगठित व लाभपूर्ण बताया है।

नमक व नहर के महत्त्वपूर्ण व्यवसाय पर सरकार का नियंत्रण था। तथापि जहाँ सरकार का आधिपत्य नाममात्र का था वहाँ भी वास्तविक व्यापार इस वर्ग के द्वारा ही ठेके के माध्यम से किया जाता था। व्यापारियों की गतिविधि वस्त्रों, घरेलू बर्तनों तथा खाद्य पदार्थों से प्रारम्भ होती थी। अक्सर व्यापारी अपनी दूकान में रहता था। उदाहरण के लिए आज भी चीन में जिल्दसाजी करने वाले उसी भट्टी पर शाम को अपना खाना बनाते हैं जिसमें वे दिन में जिल्द लगाने की लेई बनाते हैं। रात के समय उनके परिवार के लोग पुस्तकों पर काम करने की मेज के ऊपर या नीचे तथा उसी कमरे के कोनों में सोते हैं।

चीन में युगों तक कन्फ्यूशियस सरकारों ने व्यापारियों की उपेक्षा की है। उन्हें प्रोत्साहित नहीं किया गया, उन पर भारी कर लगाये गये। इसकी प्रतिक्रियास्वरूप व्यापारी कानून का उल्लंघन करने तथा रिश्वत देकर अपना कार्य बनाने लगे। परिणामस्वरूप वे समाज में मक्कार व अविश्वसनीय लोगों के रूप में जाने गये।

तथापि अन्य वर्गों के द्वारा घृणा की दृष्टि से देखे जाने के बावजूद व्यापारी कृषकों व श्रमिकों से अच्छी हालत में थे। कुछ व्यापारियों ने असीम धन व विश्व-व्यापी ख्याति प्राप्त की। कई सम्पन्न व्यापारियों ने सरकार से उपाधियाँ प्राप्त कीं तथा इस प्रकार स्थानीय राजनीति में महत्त्व हासिल किया।

प्रारम्भ से आज तक चीनी व्यापार की सर्वाधिक कठिनाई अनुपयुक्त मुद्रा व्यवस्था

रही है। चांदी के बुलियन तथा तांबे के सिक्के अधिकृत मुद्राएँ थीं। चांदी की मुद्रा चीनी औंस थी (अंग्रेजी में तायल)। अधिकृत मुद्रा गोल आकार वाली मध्य में चौकोर छेद रखती थी तथा चीन में अंग्रेजी भाषा के 'कैश' के नाम से जानी जाती थी। तायल तथा कैश की विनिमय दर समय-समय पर बदलती रहती थी। मंचू काल के अन्तिम दिनों में एक चांदी की तायल आठ सौ कैश के बराबर थी। चावल का मूल्य 2000 कैश एक पिकल तथा गोश्त 60 कैश प्रति कैटी तथा अन्य सब्जियां तीन अथवा चार कैश प्रति कैटी मूल्य की होती थी।[8] इस मूल्य व्यवस्था के अन्तर्गत एक स्कूल के अध्यापक को एक वर्ष में 50 से 60 तायल मात्र मिलते थे जिसमें वह अत्याधिक निम्न जीवन स्तर पर ही अपने परिवार के साथ जीवन-यापन कर सकता था। प्रत्येक स्थानीय क्षेत्र में पुराने ढर्रे के चीनी बैंक होते थे जो कारीगरों तथा व्यापारियों के दो अथवा तीन प्रतिशत व्याज प्रतिमाह पर रिण (ऋण) देते थे। किन्तु उनसे अधिक प्रतिष्ठा, गिरवी माल रखकर उधार देने वाली दूकानों की थी जो कपड़ों, औजारों तथा घरेलू सामान गिरवी रख कर ऋण देती थीं।[9]

राजनीति, नीति व कला

प्राचीन चीन के समाज में सामंजस्य की मात्रा अत्याधिक विद्यमान थी। कुछ स्वार्थी तत्त्वों को छोड़कर सामान्यतया चीन में राजनीतिक व्यवहार, साहित्यिक कला, भावचित्र कला तथा प्लास्टिक कला के मध्य परस्पर सम्बन्ध दृष्टिगोचर होता है। प्रायः सभी महान् संस्कृतियां अपने चरमोत्कर्ष के समय सार्वजनिक-जीवन की राजनीतिक व्यवस्था, उसके द्वारा निर्धारित तथा क्रियान्वित नीतियों में, उस राजनीतिक व्यवस्था के अन्तर्गत विद्यमान सामाजिक जीवन में तथा कलात्मक रचनाओं में सामंजस्य रखती हैं। किन्तु चीन में जब प्राचीन चीन नष्ट हो रहा था तब भी सामाजिक जीवन के एक ब्रिटिश अध्येता हेवलॉक एलिस, जो यौनभाव पर अपने कार्य के लिए विख्यात है, ने पेकिंग सफी मानवीय क्रियाओं में एक ऐसा लयबद्ध सामजस्य पाया जो किसी भी अन्य समकालीन संस्कृति में विद्यमान नहीं था।[10]

पश्चिमी जगत् में सुधार युग के पश्चात् राजनीतिक उद्देश्य व आध्यात्मिक मान्यता के मध्य जो पृथकता उत्पन्न हो गई है उसके पश्चात् इस मान्यता के लिए कि हमारे अथवा हमारे बच्चो के काल में, धर्म के माध्यम से इस सृष्टि के बारे में मनुष्य के दृष्टिकोण का सामंजस्य, सरकार की सोद्देश्यात्मक प्रक्रिया के माध्यम से अभिव्यक्त सामूहिक अनुभव से तथा कला में अभिव्यक्त वास्तविक जगत के बारे में दृष्टिकोण से हो सकेगा—कोई विश्वस्त आधार नहीं बचता है। संयुक्त राज्य अमेरिका का साहित्य या मानचित्र वहाँ की सरकार से बहुत कम सम्बन्ध रखते हैं।

तथापि एथेंस, रोम, कंबोडिया अथवा प्राचीन चीन की सभ्यता के बारे में ऐसा

8. एक पिकल (133·3 पौंड) 100 कैटी (1·3 पौंड) के बराबर था।

9. चिंग काल के बाद के दिनो में चीनियों के आर्थिक जीवन पर निम्न पुस्तकें देखिए—ए. एच. स्मिथ 'पूर्वोद्धृत : एफ. एच. किंग फार्मस ऑफ फोर्टी सेंचुरीज आर परमानेंट एग्रीकल्चर इन चायना, कोरिया एंड जापान, मेडीसन 1911 चेइन पूर्वोद्धृत अध्याय 15, चाऊ-कू-चेंग ए जनरल हिस्ट्री ऑफ चायना 2 खंड 2 धाई 1935 12 अध्याय।

10. हेवलॉक एलिस 'दि डांस ऑफ लाइफ' लंदन, 1928।

नहीं कहा जा सकता। साहित्यिक कृतियों व कला का सरकार से निश्चित व स्पष्ट संबंध था। विभिन्न कालों की सरकारों की रचनात्मकता तथा प्रभाव उसके समकालीन कला जगत पर स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। चीन के इतिहास के कई कालों में से दो में इस प्रकार की स्थिति पाई जाती है जो वर्तमान में अमेरिका तथा पश्चिम जगत् में राजनीतिक उद्देश्य-हीनता अथवा कलात्मक रचनात्मकता के अवरोध से उत्पन्न होता है। कू के संघर्षरत काल में (ईसा से छठी, पाँचवीं, चौथी व तीसरी शताब्दी पूर्व) तथा दक्षिणी सुंग काल में ही यह असंगतता थी कि चीन में सरकार के दुर्बल होने के बावजूद कला चरमोत्कर्ष पर थी। इन दो कालों के अलावा शेष चीनी इतिहास के लिए यह कहा जा सकता है कि ज्ञान, दर्शन, साहित्य, काव्य, चित्रकला, वास्तुकला तथा अन्य कलाओं के क्षेत्र में राजनीतिक सत्ता की रचनात्मकता का प्रभाव स्पष्ट था।

आधुनिक दृष्टिकोण के अनुसार प्राचीन चीन के विद्वानों को व्यावहारिक व उपभोगी ज्ञान को प्राप्त करने का अवसर बहुत कम मिलता था। कन्फ्यूशियस परम्परावाद के कारण उन्हें प्रतिष्ठित पुस्तकों को पढ़ने तथा सर्वोत्कृष्ट एवं क्लिष्ट भाषा में अष्टपदीय लेख लिखने में अपनी सम्पूर्ण क्षमता लगानी पड़ती थी।

यह अष्टपदीय निबन्ध जो पिंग काल में विकसित हुआ था आठ गद्यांशों वाला ऐसा विकृत स्वरूप का निबन्ध था जिसके प्रत्येक गद्यांश में 370 से 720 शब्द हुआ करते थे। प्रत्येक गद्यांश का प्रारम्भ व अन्त नियमानुसार होता था। पाँचवें व छठे गद्यांशों को पाँच या छः शब्दों वाले मुहावरों में लयबद्ध करना होता था। इन निबन्धों के विषय अनिवार्यतः चार पुस्तकों व पाँच प्रतिष्ठित ग्रन्थों में से छाँटे जाते थे।[11]

अधिकांश कन्फ्यूशियस विद्वान प्रशासक इन ग्रन्थों के अलावा ज्ञान की विभिन्न शाखाओं का बहुत कम ज्ञान रखते थे। कुछ सर्वोत्तम तथा सर्वाधिक अंक पाने वाले छात्र भी चीन के इतिहास की वास्तविक घटनाओं के बारे में तथा चीनी सरकार के व्यावहारिक पक्ष के बारे में बहुत कम ज्ञान रखते थे। ये प्रशासक इन ग्रन्थों से इस कदर मंत्रमुग्ध हो जाते थे कि वे यह मानते थे पूर्व पिन की प्रत्येक वस्तु सर्वश्रेष्ठ थी तथा उसे ही उन्हें अपने दैनिक जीवन में पाने का प्रयास करना चाहिए। इस प्रकार के कई झक्की प्रशासक सरकार के उच्च पदों पर स्थित थे, परिणामस्वरूप उनकी इस अज्ञानता का फल जनता की कठिनाई तथा सरकार की बदनामी होता था।

चीन में पिछली अनेक शताब्दियों में साहित्य की तीन भिन्न शैलियाँ—नम्र शैली (पायन तीन वेन), प्रतिष्ठित या परम्परागत शैली (वेन-यन-वेन) तथा देशी शैली (पाई-हुआ-वेन) थीं। नम्र शैली मुहावरे वाली भाषा में लयबद्ध रूप में लिखी जाती थी। इसका प्रयोग सरकारी घोषणाओं, औपचारिक निबन्धों तथा साहित्य की प्रस्तावना में होता था। प्रतिष्ठित शैली का प्रयोग क्लिष्ट गद्य में किया जाता था। इसका प्रयोग ऐतिहासिक

11. कन्फ्यूशियस सम्प्रदाय की ये प्रतिष्ठित पुस्तकें समय-समय पर बदलती रहीं। तथापि सुंग काल में तो इन्हें दो समूहों में निर्धारित कर दिये गये। चार ग्रन्थों में निम्नांकित थे—लुन यू अथवा एनालेक्ट्स, ता-ह्स्युए या ग्रेट लर्निंग, दि चुंग-युंग या डॉक्ट्रिन ऑफ दि मीन तथा मेंग-त्जु अथवा दि डिस्कोर्सेज ऑफ मेन्शियस। दि वू चिंग अथवा पाँच प्रतिष्ठित ग्रन्थ ये थे—ई चिंग अथवा क्लासिक ऑफ चेन्ज, शू चिंग अथवा क्लासिक ऑफ हिस्ट्री, दि शिह-चिंग अथवा क्लासिक ऑफ पोयट्री, दि लीची अथवा रिकॉर्ड्स ऑफ सेरेमोनियल्स तथा चुन चिउ अथवा स्प्रिंग एण्ड आटम एनाल्स।

प्रलेखों व राजनीतिक निबन्धों को लिखने में किया जाता था। देशी शैली सर्वाधिक लोकप्रिय थी। जो विद्वान लोग प्रशासनिक सेवाओं में आने से रह जाते थे वे अक्सर आत्माभिव्यक्ति के लिए उपन्यास लिखने लग जाते थे। युवान काल से लेकर चिंग काल तक इस क्षेत्र में चीन की रचनात्मकता सम्पन्न व विविधतापूर्ण थी। चीन के कुछ प्रख्यात उपन्यासों में से हुंग-लो-मिंग है जो एक सरकारी अधिकारी के परिवार का संवेदना व रोमांसपूर्ण वर्णन है जिसके साथ कोयल प्रेम कथाएँ तथा तुच्छ यथार्थताओं का संयोजन किया गया है। सान-कू चीह येन-ई अर्थात् रोमांस ऑफ थी किंगडम्स दि युई हुई विद्रोह व षड्यंत्र की साहसिक कहानी तथा चीनी अश्लील साहित्य की प्रतिष्ठित रचना चिंग-पिंग-मेई। इन सब का अंग्रेजी अनुवाद उपलब्ध है।[12]

चीनी भाषा में पश्चिमी पुस्तकों का अनुवाद जेसुत धर्म प्रचारकों द्वारा किया गया। 1664 तक जेसुरों ने विभिन्न वैज्ञानिक विषयों पर 150 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित कर दी थीं।[13] जेसुरों के प्रयास की चीनियों ने कोई गम्भीर प्रतिक्रिया नहीं की। रूस की शाही सरकार ने अनेक रूसी यूरोपीयन पुस्तकें 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में चीन को भेजीं मगर वहाँ किसी ने उन्हें पढ़ने की कोशिश नहीं की। सैनिक तथा नाविक पराजय के पश्चात् ही चीनियों ने पश्चिमी ज्ञान की ओर ध्यान दिया। 19वीं शताब्दी के अन्त तक पर्याप्त यूरोपियन ग्रन्थों का अनुवाद किया गया। 1895 में जापान के द्वारा पराजित होने के पश्चात् इन अनुवादों का अनुपात पर्याप्त बढ़ गया। तब से चीन के सांस्कृतिक जीवन का अंश बन गये हैं। 1949 की साम्यवादी क्रान्ति के पश्चात् इन अनुवादों का स्वरूप साम्यवादी बना दिया गया है।

कला व स्थापत्यकला विभिन्न युगों में भिन्न रही। तांग सुंग व मिंग चित्र महत्त्वपूर्ण हैं। चीनी मिट्टी की कला चीन में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण रही है। सर्वोत्कृष्ट चीनी बर्तन अठारहवीं शताब्दी में चे-इनलुंग के शासनकाल में बनाये गये। चीनी स्थापत्यकला में पश्चिम के समान दक्षता व विविधता कभी नहीं आई। चीन की प्राचीन स्थापत्यकला वाशिंगटन की सरकारी इमारतों के समान है। चीनी भवनों में सौन्दर्य साधारण था उन्हें आकर्षक कहा जा सकता है, पर आश्चर्यजनक व कल्पनापूर्ण नहीं कहा जा सकता। किन्तु चीनियों का यह अभाव उनकी आन्तरिक सजावट, वस्त्रों तथा बगीचों से सन्तुलित हो जाता है। 20वीं शताब्दी के कठिन दिनों में भी चीन सुन्दर है—ऐसा सौन्दर्य जो मानवीय प्रयासों तथा चीन के प्राकृतिक सौन्दर्य दोनों के समायोजन से प्राप्त किया गया है।

राजतन्त्री चीन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि तथा राजनीतिक संस्थाओं व चीनी समाज के विकास को कन्फ्यूशियस विचार के अन्तर्गत देखने के पश्चात् अब हम चीन के अन्तिम

12. साहित्य के सन्दर्भ में निम्न रचनाएँ देखी जा सकती है—एच. ए. गाइल्स ए हिस्ट्री ऑफ चाइनीज लिट्रेचर, न्यूयॉर्क, 1901, ए विली नोट्स ऑन चाइनीज लिट्रेचर, शंघाई 1903, एफ. विकले - चायना : इट्स हिस्ट्री, आर्टस् एण्ड लिट्रेचर (आरियंटल सिरीज, 1902) हु शीह किस्टी इअर्स ऑफ चाइनीज लिट्रेचर, शंघाई 1932, चीनी साहित्य के प्रतिष्ठित तथा आधुनिक दोनों प्रकार के अनुवादों का सर्वोत्तम अध्ययन जे. आर. हाइवर की रचना 'टॉपिक्स इन चाइनीज केम्ब्रिज, 1950'। यह पुस्तक पश्चिमी भाषाओं में किये गये सभी अनुवादों की सूची देती है।

13. देखिए पी. एकल दि फारईस्ट सिंस 1500, न्यूयॉर्क 1947, पृष्ठ 66.

राजवंश चिग अथवा मंचू पर विचार. कर सकते हैं। कई कारणों की वजह से आधुनिक चीनी राजनीति व सरकार को समझने के लिए मंचू युग के चीन को समझना आवश्यक है। मंचू काल के दौरान अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चीन के निरंकुश राजतंत्र का पश्चिमी प्रजातंत्र की शक्ति से सम्मेलन हुआ। पिछली दो शताब्दियों के मंचू आधिपत्य काल के बारे में यदि निर्णय किया जाये तो शाही सरकार तथा समाज दोनों ही प्रहारों व बढ़ती हुई आकांक्षाओं के सामने पूर्णतः अनुपयुक्त सिद्ध हुए। किन्तु यदि मंचू नेतृत्व को तीन शताब्दियों के दृष्टिकोण से देखा जाये तो चीन के इतिहास में चिग राजवंश सर्वाधिक प्रभावशाली व महानतम था। हमेशा यह स्मरण रखना होगा कि आज भी चीन में दीर्घ भूतकाल तथा अपेक्षाकृत नवीन भूतकाल की मूल विशेषताएँ विद्यमान हैं।

□□□

अध्याय 3

चीन का मंचू साम्राज्य

चीन के वर्तमात राष्ट्रवादी तथा साम्यवादी दोनों नेताओं को उन मानवीय तत्त्वों से सामंजस्य विठाना पड़ा जो निकटस्थ पूत से उन्हें प्राप्त हुए थे। ये नेता स्वयं भी उसी मानव तत्त्व का एक अंश थे तथा इस कारण वे सभी सीमाएँ अभाव व लाभ अदृश्य या प्रत्यक्ष रूप में उनमें भी उतने ही विद्यमान थे जितने उस संस्कृति में थे जिसमें वे जन्मे थे। जैसे रूस के अति आधुनिक क्रांतिकारी साम्यवादी नेता स्टालिन के साथ उसके पूर्व रूप एक विद्रोही सेमेलिन युवक जुगशिवली सर्वदा दृष्टिगोचर होता है। उसी प्रकार आधुनिक चीन प्रजातन्त्रवादी सन यात सेन के पीछे एक व्यावहारिक बुद्धि वाला कृपक विद्रोही किशोर क्वांग-तुंग सर्वदा झलकता रहता है। चीन के आम राष्ट्रवादी व साम्यवादी नेता च्यांग-काइ-शेक व माओत्सेतुंग उसी प्रचीन चीन की धरोहर संस्कृति व पृष्ठभूमि की रचना है जिसे न तो कोई चीनी भुला सकता है तथा न ही जिसे पुनर्जीवित किया जा सकता है।[1]

रूस किस प्रकार सोवियत यूनियन वन गया है? चीन किस प्रकार लाल चीन वना अथवा राष्ट्रवादी चीन? इस प्रकार के प्रश्नों का समाधान प्राप्त करने के लिए न केवल इन देशों के दीर्घकालीन इतिहास को समझना पड़ेगा अपितु निकट के इतिहास को भी समझना होगा।

तूचुन काल (1916–1930) में चीन की त्रुटियाँ उस समय स्पष्ट हो जाती हैं जब उस काल की तुलना मंचू साम्राज्य से की जाती है जो भ्रष्ट होते हुए केन्द्रीय स्तर पर परिमार्जित था तथा उसका 1912 में पतन हुआ। आज के अधिकांश चीनी नेता 'प्राचीन चीन' के अंतिम दिनों में अथवा महीनों में पैदा हुए थे। प्राचीन चीन का अर्थ कन्फ्यूशियस काल के चीन से नहीं है अपितु मंचू काल के चीन साम्राज्ञी डोवेजर वारुदी नाव की कूटनीति, मुक्केवाज विद्रोही उन्मुक्त द्वार नीति, रेल मार्ग का निर्माण, जापान के आक्रमण, धन तथा विचारों के आदान-प्रदान तथा छापेखाने के प्रारम्भ होने वाले काल के चीन से है। अच्छी पृष्ठभूमि वाले राष्ट्रों को क्रांति की आवश्यकता नहीं पड़ती है। रूस की बोल्शेविक क्रांति के पीछे रोमनावों के काल की भ्रष्टता तथा अशांति थी, हिटलर के पीछे जर्मनी की दीर्घकालीन अनुपयुक्त राजनीतिक व्यवस्था थी, तथा आधुनिक राष्ट्रवादी तथा साम्यवादी चीन के पीछे मंचू काल था। ब्रिटेन, अमेरिका, जापान, स्विट्जरलैण्ड तथा अन्य राष्ट्रों को

1. जापान व चीन का विरोधाभास 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध तक ही सीमित नहीं है। मेंजी तथा लू हसी से वारह सौ वर्ष पहले भी जापान भविष्य की ओर प्रगति कर रहा था जबकि चीन अपने गौरवपूर्ण भूतकाल में ही डूबा हुआ था। इनकी सम्वन्धित भूमिकाओं का वर्णन पृष्ठ 270-71 पर किया गया है।

क्रांति की आवश्यकता नही पड़ी है क्योंकि वर्तमान व्यवस्था का समर्थन करने के लिए उनका निकटवर्ती भूतकाल पर्याप्त सुदृढ है।

वर्तमान चीन में मंचू युग की छाप

यद्यपि चीन की वर्तमान संस्थाएँ भूतकाल से किसी प्रकार की वाह्य साम्यता नही रखती हैं तथापि कई वर्तमान राजनीतिक प्रवृत्तियाँ तथा व्यवहार, वस्तुत. उस परपरागत व्यवस्था की इजाद हैं जिसका बहुत पहले परित्याग कर दिया गया है। 2 हजार वर्षों के मापदड की तुलना में चीन की राजतन्त्रीय सरकार अच्छी थी किंतु निकट दो सौ वर्षों की दृष्टि से चीन की राजतन्त्रीय सरकार उन आवश्यकताओं को पूरा करने में निराशाजनक रूप से अनुपयुक्त थी जो सुदूर पूर्व में पश्चिमी प्रभाव के बढ़ने के साथ मनोवैज्ञानिक तथा बौद्धिक स्तर पर उत्पन्न हुई थी।

ये चार राजनीतिक मूल विशेषताएँ चीन में भूतकाल से प्राप्त की हैं—

(1) मनुष्य की सरकार
(2) विधि के स्थान पर नीति प्रधान राजनीति
(3) विधायी कार्यपालिका व न्यायपालिका कृत्यों का परस्पर मिश्रण
(4) सरकार की सैद्धान्तिक शक्ति पर स्पष्ट जोर।

व्यक्ति व सरकार

चीन की परम्परागत राजनीतिक व्यवस्था मूलतः लोगों के व्यक्तिगत संबंधों पर निर्भर करती थी। ये लोग जो दो हजार वर्षों से राजतन्त्रीय तथा बौद्धिक नौकरशाही के अन्तर्गत रहे स्वभावतः संस्थाओं को व्यक्ति सदर्भ में ही देखते हैं। चीन की दैनिक जीवन-चर्या सांस्कृतिक यथार्थता के ऐसे उदाहरण प्रस्तुत करती है जो पश्चिम के मात्र प्रशिक्षित नृतत्वशास्त्रियों में ही पाये जा सकते हैं। चीनी अफसर किसी रिवाज या पद के परे उस व्यक्ति पर अवश्य ध्यान देते हैं जो प्रस्तुत भूमिका अदा करता है।

जीवन के प्रति यह यथार्थवादी दृष्टिकोण इस मान्यता को स्वीकारता है कि संस्थाएँ व्यक्तियों के अनुसार ढलती हैं। प्रभावशाली तथा दृढ इच्छा व्यक्ति किसी संस्था को दृढ बनाते हैं तथा कायर व कमजोर व्यक्ति संस्था को कमजोर बनाते हैं। इसके अतिरिक्त वैयक्तिक सत्ता के प्रति सम्मान कन्फ्यूशियन आचारशास्त्र का मूल सिद्धान्त है ही, साथ में व्यक्ति के सदआचारता का व्यावहारिक मापदण्ड भी है। परिवार में तथा सरकार में चीन के लोग स्वय की विधि के द्वारा नही अपितु व्यक्तियों के द्वारा शासित मानते हैं।

इस तथ्य का प्रमाण यह है कि चीन की सभ्यता इतनी परिष्कृत होते हुए भी उसकी न्याय तथा व्यवस्थापन की व्यवस्था असाधारण रूप से अविकसित थी। यह प्रश्न तब और भी स्पष्ट हो जाता है जब वर्तमान में कोरिया में चीन व अमेरिका के मध्य संघर्ष के तनावपूर्ण वातावरण में अमेरिकी लोगों के व्यवहार की तुलना चीनियों के व्यवहार से की जाती है। अमेरिकियों ने अपनी सैनिक व राजनीतिक सरचना के अतर्गत पर्याप्त समय नीतियों के निर्माण में, आदेशों की पुनर्व्याख्या तथा पुनर्लेखन में तथा नियमों व नीतियों के परिवर्तन में लगाया। जबकि चीनियों ने नियमों के बारे में अधिक विवाद किये बगैर कुछ व्यक्तियों को स्थानापन्न कर सपत्ति व मानव जीवन दोनों का बड़े पैमाने पर बलिदान किया।

राजनीति व नीतिशास्त्र

शायद यह कहना भ्रमपूर्ण होगा कि चीनियों ने प्रारंभ से ही राजनीति व नीति को परस्पर मिलाया। यदि इन दो पदों को सामान्य पश्चिमी अर्थों में लिया जाए तो यह असत्य ठहरता है। क्योंकि राजनीति व नीति-शास्त्र दोनों के क्षेत्र पर्याप्त भिन्न, पृथक् व स्पष्ट होते हैं। किन्तु यदि राजनीति व नीति के विभिन्न आदायों को देखा जाए– राजनीति को समाज में सरकार की सत्ता की क्रियान्विति के रूप में तथा नीति को दैनिक जीवन के सामान्य आचरण के रूप में देखा जाये तो यह कथन सत्य प्रतीत होता है। चीनियों ने अविशेपीवृत मानदण्डों तथा निर्णायों के आधार पर समाज में सामंजस्य प्राप्त कर लिया है जबकि अधिकांश पश्चिमी सभ्यताएँ (भूत तथा वर्तमान दोनों ही) सामाजिक स्तरों के विभाजन तथा कानूनी, नैतिक तथा उपयोगी सूत्रों पर अत्यधिक निर्भर रही हैं।

कन्फ्यूशियस विचारधारा के अनुसार राजनीतिक अच्छाई मानवीय अच्छाई का एक अंश मात्र थी। समाज के शासक वर्ग को समाज में नैतिक दृष्टि से स्वयं को सर्वोत्कृष्ट सिद्ध करना था तभी वह राजनीतिक स्तर पर अन्यों की आज्ञाकारिता की अपेक्षा कर सकता था। एक न्यायाधीश झगड़े का फैसला करने में कानून से अधिक अपने नैतिक आदर्शों व मान्यताओं से प्रभावित होता था। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि विधि-विहीनता की स्थिति थी। औचित्य प्राचीन किन्तु मान्यता प्राप्त नियम पर्याप्त सुदृढ़ थे जिनका आवश्यकतानुसार प्रयोग किया जा सकता था। परंपरागत चीनी राजनीतिक व्यवस्था नीति प्रधान थी क्योंकि यह स्पष्ट थी किन्तु यह यथार्थवादी थी क्योंकि यह बुद्धिमान व्यक्तियों को छलपूर्ण मौखिक परिभाषाओं की आड़ में अपने उत्तरदायित्व से बचने नहीं देती थी। एक अमेरिकी न्यायाधीश एक हत्यारे को उसके साथ सहानुभूति होने के बावजूद भी उसे फाँसी की सजा दे सकता है। किन्तु एक चीनी न्यायाधीश हत्यारे को इस आधार पर छोड़ सकता है कि कानून को कठोरतापूर्वक ढंग से लागू करने पर उसके साथ अन्याय होता।

सरकार की सम्पूर्ण शक्ति

तृतीयता चीन की परंपरागत राजनीतिक व्यवस्था में कार्यपालिका, व्यवस्थापिका व न्यायपालिका में परस्पर अन्तर नहीं किया जाता था। सरकार की सम्पूर्ण शक्ति सम्राट् के व्यक्तित्व में निहित थी, जो अपनी सत्ता का कुछ अंश मंत्रियों को सौंप देता था। प्राचीन चीनी साम्राज्य चीनी पारिवारिक जीवन का वृहत रूप था तथा चीन के लोग सम्राट् को साम्राज्य में वही स्थान देते थे जो वे परिवार में मुखिया को देते थे।

पैतृक परिवार में मुखिया पर कोई नियन्त्रण नहीं रखा गया था यदि वह पूर्णतः पागल ही हो जाता अथवा अत्यधिक अत्याचारी हो जाता तो ही उसके विरुद्ध कुछ किया जा सकता था। इसी प्रकार सम्राट् की शक्तियों पर कोई नियंत्रण नहीं था अतः परंपरागत चीनी राजनीतिक व्यवस्था में शक्ति पृथक्करण का विचार नहीं पाया जाता है। जिस प्रकार परिवार में विरोध व प्रदर्शन करने का कार्य वयस्कों तथा कभी-कभी सेवकों व बच्चों के द्वारा किया जाता था उसी प्रकार राजनीतिक स्तर पर यह कार्य सेंसर अधिकारियों के द्वारा किया जाता था। सेंसर पदाधिकारी सम्राट् के गलत कार्यों के विरुद्ध रोप व्यक्त कर सकते थे किन्तु इसके अलावा कुछ नहीं कर सकते थे। उनकी शिकायतों का कोई

कानूनी प्रभाव नहीं होता था। चीन॰ व्यवस्था में अवैधानिकता का विचार नहीं पाय जाता है।

परिवर्तनशील प्रकार व दृढ़ लोग

गत सौ वर्षों में चीन में अनेक राजनीतिक परिवर्तन हुए हैं, कई संविधान लागू किये गये हैं तथा विभिन्न प्रकार की सरकारों को अपनाया गया है। कभी-कभी पश्चिमी दर्शक को यह स्थिति अराजकता व अव्यवस्था की लग सकती है। चीन इतना विविधतापूर्ण तथा तीव्र परिवर्तनशील है कि उसके स्वरूप को समझना सामान्य बुद्धि के बाहर है। किन्तु वस्तुतः कठिनाई इतनी अधिक नहीं है। चीन में आकार में परिवर्तन इतनी तीव्रता से इसलिए हो पाते हैं क्योंकि चीनी जीवन में उनका विशेष महत्त्व नहीं है। चीनी राजनीति के वैयक्तिक नेतृत्व में संक्रमण पर्याप्त धीमा तथा समझ में आना वाला है जबकि चीनी राजनीतिक संस्थाओं में परिवर्तन की गति अत्यधिक तीव्र है। विद्रोही हुंग-हसी-चुआन तथा उसके विरोधी वायसराय त्सेंग-कू-फान मार्क्सवादी नेता माओत्सेतुंग तथा क्रांतिकारी अनुदारवादी नेता च्यांग काई शेक उतने निम्न नहीं हैं जितने वे राजनीतिक संस्थाओं में परिवर्तन के कारण प्रतीत होते हैं।

सभी राजनीतिक व्यवस्थाओं में चीनी राजनीति के मूल सिद्धान्त—सरकार की शक्ति का वैयक्तिक नेतृत्व में मूर्तरूप, कानूनी के स्थान पर उसकी शक्ति का नैतिक प्रसारण तथा सरकार की सत्ता की संपूर्ण क्षमता रहे हैं। प्रारम्भ में चीन की गणतंत्रीय व्यवस्था में भी शक्ति व्यवस्था तथा बाद में राष्ट्रवादियों द्वारा पंच-शक्ति व्यवस्था के निर्माण के प्रयास गैर यथार्थवादी थे तथा साम्यवादी व्यवस्था के अन्तर्गत सम्पूर्ण शक्ति का केन्द्रीयकरण ही चीन की वास्तविकता है। यदि इसे और स्पष्ट रूप में रखा जाये तो—

पश्चिमी देशों में नेता पद प्राप्त करते हैं। चीन में नेता नेतृत्व प्रदान करते हैं तथा स्वयं व अपने साथियों के लिए पदों का निर्माण करते हैं।

तो शक्ति का स्रोत पद न होकर कहाँ है ?

यह स्रोत न तो कानून है, न संरचना है, न ही पदवियों या शक्ति का हस्तांतरण है; अपितु यह शक्ति कन्फ्यूशियस विचार को प्राप्त वैचारिक निमंत्रण की निरन्तरता है।

गत मंचू काल तथा गणतंत्र युग में निरंतर चीनी राजनीति में पश्चिमी नमूने के राज्य की स्थापना के आग्रहपूर्ण प्रयास किये गये। प्रत्येक समय के नेताओं ने यह दर्शाने की कोशिश की कि उनका नेतृत्व निर्णायक नहीं था तथा व्यक्ति की नहीं अपितु व्यवस्था की महत्ता थी। किन्तु प्रत्येक मामले में नेताओं की कथनी व करनी में अंतर था। कन्फ्यूशियस विचारधारा का यह विचार कि कानून विचारधारा की रचना होता है कभी भी नष्ट नहीं हो सका। एक समूहों के नेताओं ने अपने पूर्ववर्तियों से जितना अधिक आगे बढ़ने की कोशिश की सरकार का ढाँचा उतना ही छलपूर्ण बनता गया।

बाद के शासन काल में सरकार के प्रत्येक मंत्र के द्वारा प्रतिपादित राजनीतिक विश्वास गणमान्य शासक वर्गों में ही स्पष्टता दीखती थी। अतः राजनीतिक सुविधा व लाभ के लिए विधि के गौरव व स्थायित्व का बलिदान कर दिया गया। कन्फ्यूशियसवाद का विषयवस्तु समाप्त हो चुका है किन्तु उसके तरीके तथा प्रक्रियाएँ अवशिष्ट हैं—कन्फ्यूशियसवादी किस रूप में सोचता था यह अभी भी अवशिष्ट है जबकि वह क्या सोचता था यह भुला दिया गया है। कन्फ्यूशियसवाद का विषयवस्तु समाप्त हो चुका है इसका स्थान आधुनिक चीनी साम्यवादी न्यायाधीश मामलों का निपटारा, निश्चित कानूनों

को क्रियान्वित करने के बजाय उसी प्रकार राजनीतिक सिद्धान्त के आधार पर करता है जिस प्रकार उसका पूर्ववर्ती नैतिक मान्यताओं के आधार पर करता था।

मंचू युग की धरोहर

जापान के मेयजी सम्राट ने आधुनिक जापान को रोमांचकारी रूप से पुनर्जीवित राजतंत्र का स्वप्न दिया जो युगों से निद्रामग्न था तथा उसे विश्व की अनूठी शक्ति बना दिया। जबकि चीन में उसकी समकालीन साम्राज्ञी डावेजन त्ग ह्सी ने चीन के दीर्घ भूतकाल के प्रति एक बेचैनी तथा निकट भूत के बारे में घृणा की भावना व्याप्त की। अतः मंचू युग की धरोहर आदतों का समूह है संरचनाओं का समूह नहीं।

तथापि आधुनिक चीन की आदतें उत्तर-मंचू काल की हैं—किन्तु वे उस विश्व पर आधारित हैं जो चीन में मंचू सम्राटों के अन्तर्गत था। वर्तमान चीन की कुछ विशेषताएँ कन्फ्यूशियस काल से भी युगों पूर्व की हैं तथा कुछ उस काल की हैं जब कू विद्यमान थे। अधिकांश प्रथाएँ निकट भूत की हैं। क्रांति की अर्द्धशताब्दी ने प्राचीन व्यवस्था को नष्ट कर दिया है किन्तु उसके स्थान पर नई व्यवस्था के स्थानापन्न नहीं किया है। चीन के राजनीतिक अभ्यास 1850 से 1950 के बीच परिवर्तित हुए हैं पर यह परिवर्तन उतना गंभीर नहीं है जितना दृष्टिगोचर होता है। मंचू संरचना की महत्ता उसकी असफलता में चीनी राजनीतिक जगत में अविशिष्ट अभ्यासों के बने रहने में है।

मंचू सम्राट की सत्ता

मंचू काल में सरकार के ढांचे को मिंग शासन (1368–1644 ई०) के आधार पर बनाया गया था जिसकी चर्चा पृ० 20–21 पर की गई है तथा उस काल में राजतंत्रीय संस्थाएँ अत्यधिक विकसित तथा सम्राट को अभूतपूर्व शक्तियाँ प्राप्त हो गई। मिंग व्यवस्था इतनी सुदृढ़ थी कि इसे शीघ्र ही यूरोपियन भ्रमणार्थियों की प्रशंसा प्राप्त हुई। ये स्वयं राजतंत्रीय व्यवस्था में रह रहे थे तथा इन्होंने इसे पश्चिमी जगत में प्रेषित किया।

1644 में जब मंचू लोगों ने अपनी चीन की विजय को पूरा किया तो उन्हें मिंग काल की राजनीतिक संस्थाएँ अत्यधिक उपयोगी लगीं तथा उन्होंने अपने शासन को मजबूत बनाने के लिए इन्हें बनाये रखा। चतुर मंचू लोग जानते थे कि जब तक सरकार के ढांचे में तथा प्रशासन के तरीकों में कोई परिवर्तन नहीं किया जायेगा सामान्य व्यक्ति के दैनिक जीवन में कोई परिवर्तन नहीं होगा तथा इस प्रकार वे मंचुओं की विजय को आसानी से स्वीकार कर लेंगे। तथा उनका अनुमान सही निकला। मिंग सेवाओं तथा कुछ अवसरवादी नेताओं के अतिरिक्त अन्य जनता ने किसी प्रकार का गंभीर विरोध नहीं किया।

मंचू लोग चीनियों से निम्न होने के बावजूद अत्यधिक परिष्कृत तथा सुव्यवस्थित चीन को बहुत कम व्यवधान उपस्थित करने के कारण सफल हो सके। इन आक्रमणकारियों ने ऐसा प्रदर्शित किया वे मिंग सेनापति के आमंत्रण पर जो कुख्यात वू-सुन-कुई था—उन विद्रोहियों को दंड देने आये थे जिन्होंने अंतिम मिंग सम्राट की हत्या की थी। इस प्रकार वे यह दावा कर सके कि उन्होंने राज्य विद्रोहियों को छुड़ाया तथा मिंग शासकों को अपदस्थ नहीं किया था। इस चतुराई के कारण कई कन्फ्यूशियसवादी अधिकारियों की अंतश्चेतना को मुक्त रखा तथा इस प्रकार आज मिंग संस्थाओं के द्वारा ही शासन सचालन के लिए पर्याप्त सहयोग प्राप्त कर सके।

दुर्भाग्यवश मंचू लोग विदेशी थे। यदि वे अपनी राष्ट्रीयता को बनाये रखते तो वे चीनियों को आघात पहुँचाते तथा किसी न किसी दिन उन्हें चीन की सत्ता से हाथ धोना पड़ता। दूसरे विकल्प में वे अपनी राष्ट्रीयता को तथा उसके साथ ही अपने विजय के गौरव को भुला कर चीन में समन्वित हो सकते थे। मंचुओं ने अपनी राष्ट्रीयता को बनाये रखना उचित समझा।

तथापि विदेशी बने रहने का अर्थ विजय के तथ्य को बनाये रखना था यद्यपि इसे संवैधानिकता के आवरण से छुपाने की कोशिश की गई थी।[2] सम्पूर्ण चीन में मंचू सेनापति ने महत्त्वपूर्ण स्थानों पर सैनिक टुकड़ियाँ रखी थीं। ये सैनिक चीनियों से पृथक् मकानों में रहते थे, वे चीन की नियमित सशक्त सेना से पृथक् स्वतंत्र स्थायी सेना थे। बाद में भ्रष्टाचार व निष्क्रियता के कारण ये सैनिक पूर्णतः निकृष्ट हो गये। ब्रिटेन की सेनाएँ लगभग इतने ही वर्ष भारत में रहीं किन्तु चूँकि वे नियमित रूप से इंगलैंड भेजे जाते रहे अतः वे अपनी पृथकता तथा युद्ध की योग्यता को बनाये रख सके।

मंचूकाल की दूसरी विधि जान-बूझ कर जातीय भेदभाव का प्रारम्भ करना था। निश्चित सूत्रों के जातीय आधार पर मंचुओं के लिए पद सुरक्षित रखे जाते थे तथा चीनी अधिकारी व मंचुओं के मध्य प्रशासन में संतुलन मंचुओं के पक्ष में रखा जाता था। मिंग काल में जो दक्षता प्रशासन में आने के लिए चीनियों में अपेक्षित थी उसका मंचुओं में अभाव था, अतः वे प्रशासन में बिना परीक्षा के प्रविष्ट होते थे। इसका व्यावहारिक प्रभाव यह हुआ कि मंचू अधिकारी चीनी अधिकारियों की तुलना में निम्न होते थे। तथापि सेना व प्रशासन में इस जातीय भेदभाव के बावजूद मंचू लोग मिंग काल की कई प्रक्रियाओं को बनाये रखने में सफल हुए।

सम्राट की शक्तियाँ[3]

चीनी राजतंत्र की मूलभूत विशेषता सम्राट की असीमित शक्ति थी। उसकी सी स्थिति बहुत कम लोगों को जैसे पिरुज के फराह अथवा पूर्व-कोलंबिया पेरु के महान् इनकास को ही प्राप्त थी। वह विशाल साम्राज्य पर वंशानुगत विशेषाधिकारों के द्वारा शासन करता था यद्यपि यह वंशानुगतता ज्येष्ठता के आधार पर नहीं होती थी तथा इस प्रकार अधिकांश सम्राटों को बहुपत्नी-प्रथा के कारण अपने कई पुत्रों में से एक का चयन करने की सुविधा रहती थी। एक बार सम्राट बनने के बाद उसकी शक्ति पर कोई भौतिक नियंत्रण नहीं होते थे मात्र मनोवैज्ञानिक नियंत्रण होते थे जिनका स्वरूप उसके व्यक्तित्व पर निर्भर करता था। राजनीतिक शक्ति के अलावा उसे सर्वोच्च नैतिक व बौद्धिक नेतृत्व भी प्राप्त था। यहाँ तक लेखन में उसके द्वारा की गई त्रुटियाँ शब्दकोष को बदल देती थीं। उनका नाम इतना पवित्र था कि जिसमें जो शब्द आते थे उन्हें दैनिक प्रयोग में नहीं लाया जा सकता था।

2. यह निर्णय विजेता मंचु युवराज के द्वारा 1644 में की गई घोषणा से स्पष्ट होता है। देखिए हसिओ प्रथम—शान चिंग ताइ-शीह (चिंग राजवंश का इतिहास) चुंगकिंग 1944, पृ० 23-24.

3. मंचू सम्राट की शक्तियों के बारे में व्यापक वर्णन निम्न ग्रन्थों में प्राप्त होता है : एच. एस. ब्रुनर्ट तथा वी. वी. हैगलस्ट्रोम की रचना प्रॉट डे पॉलिटिकल आर्गनाइजेशन ऑफ चाइना, शंघाई 1912; प्रथम भाग ह्सीअ-पाओ चाओ, दि गवर्नमेंट ऑफ चायना (1944-1911), बाल्टी-मूर 1925 अध्याय 2, डब्ल्यू. एफ. मेयर्स दि चाइनीज गवर्नमेंट, शंघाई 1897, खण्ड प्रथम, एच. डब्ल्यू. विलियम्स, दि मिडिल किंगडम लंदन 1883 खंड प्रथम, पृ० 397-407 सिओ प्रथम—शान पूर्वोक्त अध्याय 3.

प्रारम्भिक राजवंशों में सम्राट के ऊपर फिर भी कुछ अलिखित नियंत्रण थे जैसे कन्फ्यूशियस विचारधारा में उदारवाद जनमत का नियंत्रण तथा उसके मंत्रियों द्वारा उसके कार्यों की स्पष्ट विवेचना किया जाना। पर धीरे-धीरे ये समाप्त हो गये। सम्राट की असीमित शक्ति मिंग काल के दौरान चरमोत्कर्ष पर पहुँच चुकी थी, नैतिक व कानूनी नियंत्रणों को समाप्त कर दिया गया तथा सम्राट निरंकुश शासक बन गये।

प्रथम मिंग सम्राट ने प्रधानमंत्री पद समाप्त कर उसके स्थान पर महा सचिवालय की स्थापना की। उसने प्रधानमंत्री की सम्पूर्ण शक्तियाँ स्वयं धारण कर लीं तथा सम्पूर्ण कार्य को कई महा सचिवों में विभाजित कर दिया। इसी सम्राट ने प्राशासनिक सेवाओं को पुनर्प्रारम्भ किया तथा उसे संशोधित व व्यवस्थित बनाया तथा अत्यधिक कठिन अष्टपदीय निबन्ध का आविष्कार किया। उसका उद्देश्य प्राशासनिक सेवाओं की परीक्षा को इतना कठोर बनाना था ताकि सभी विद्वान लोगों को इसके अलावा अन्य राजनीतिक गतिविधियों व विद्रोह में भाग लेने का अवसर न बचे। मंचू सम्राट ने चीनी उपाधि चिंग को धारण किया तथा मिंग सम्राटों की सम्पूर्ण संस्थागत सत्ता को प्राप्त कर लिया। अपनी घुमक्कड जाति की बर्बर अभ्यासों तथा राजवंश के संस्थापक के निजी उत्साह के कारण इन लोगों ने चीनी सम्राटों से भी अधिक शक्ति प्राप्त कर ली।

प्रारम्भिक मंचू सम्राटों ने न केवल चीनी सम्राटों के विशेषाधिकारों को प्राप्त किया अपितु उन्होंने अधिकारियों को नियुक्त करने तथा नियुक्त करने के अधिकार को भी हस्तांतरित कर लिया। इस प्रकार सामाजिक आधीनता के पश्चात् चीनियों को राजनीतिक रूप से आधीन करना प्रारम्भ किया। उन्होंने अपने अधीन चीनी कर्मचारियों को अधिकारियों से दास बना दिया। दास पद का प्रयोग मंचू पदाधिकारी सम्राट के सम्मुख स्वयं के लिए करते थे।

मंचू सम्राट अपने अधीनस्थ कर्मचारियों द्वारा अच्छी सरकार के बारे में दिये गये तर्कों पर या शक्ति के दुरुपयोग की निन्दा पर ध्यान नहीं देते थे। इस प्रकार मंचुओं ने चीनी राजतन्त्रीय व्यवस्था के परम्परागत प्रजातन्त्रीय व लोकप्रिय प्रवृत्तियों को नष्ट कर दिया। इस प्रकार प्रजातन्त्रीय स्वरूप के नष्ट हो जाने से उनके हाथों में निरंकुश शक्ति का केन्द्रीयकरण हो गया जो उनके तीव्र पतन का कारण बनी। यद्यपि मंचुओं का अन्तिम पतन क्रान्ति के दौरान पश्चिमी प्रभाव के अन्तर्गत हुआ तथापि जिस ढंग से सम्राटों ने शक्ति का दुरुपयोग किया था उससे उसके पतन की सम्भावना बहुत पहले ही स्पष्ट हो गई थी।

सामान्यत: मंचू सम्राट अपने चीनी पूर्ववर्तियों के समान विधायकी कार्यपालिका तथा न्यायिक शक्तियाँ रखता था। इन शक्तियों का प्रयोग वह उन्मुक्त रूप से करता था। राज्य का कार्यक्षेत्र इतना व्यापक था कि कुछ शक्तियों का हस्तांतरण मन्त्रियों को करना अनिवार्य हो जाता था। तथापि मंचू सम्राट इस सिद्धान्त में बिलकुल भी हस्तक्षेप पसन्द नहीं करते थे कि जब भी राजा अपनी शक्तियों का प्रयोग करना चाहे वे असीम थीं। विधायनी क्षेत्र में वह जो आदेश व निर्देश जारी करता था वे देश का कानून बन जाते थे। सम्राट के आदेश का क्षेत्र मानवीय क्रिया के सभी पक्षों से सम्बन्धित होता था जो सम्पूर्ण राज्य पर लागू होता था यह साम्राज्य मंचू क्षेत्र के मंचूरिया से बंगाल की खाड़ी तथा स्याम की तथा अज्ञात प्रशांत सागर से रूसी सीमा तक फैला हुआ था।

शाही विधायनी शक्ति पर एक मात्र नियन्त्रण यही था कि वह अपने पूर्वजों के आदेश के विपरीत आदेश नहीं दे सकता था। किन्तु यह नियन्त्रण भी निश्चित नहीं था तथा उत्सुक सम्राट उसकी अवहेलना कर सकता था। विधियों का संग्रह ता-चिंग लुल्ली (महान चिंग राजवंश की विधि तथा आदेश) बदलाना था जिनकी उपयोगिता व्यवहार में विधिसंहिता का कार्य करना था[1] तथा इसमें सम्राट जब भी चाहे अपने आदेश के अनुसार परिवर्तन कर सकता था। उसकी आज्ञा कानून थी तथा उसकी इच्छा के विरुद्ध कोई कानून लागू नहीं हो सकता था।

जहाँ तक कार्यपालिका पद का प्रश्न है चीनी भाषा में इस पद का समकक्षी पद ही नहीं है। कन्फ्यूशियस विचारधारा के अनुसार राजनीतिक सत्ता का स्वरूप उसी प्रकार एकात्मक होना चाहिए जैसे विश्व में सूर्य का होता है। सम्राट गौरव व विशेषाधिकार का स्रोत, सेवाओं का सृजनकर्ता, बौद्धिक वर्ग का परीक्षक, सशस्त्र सेवाओं का सेनापति तथा कर से प्राप्त राजस्व को व्यय करने वाला होता है। इन सब शक्तियों का प्रयोग चीन का सम्राट स्वयं व्यक्तिगत रूप से नहीं कर सकता था परिणामतः कुछ शक्तियाँ या तो वह मन्त्रियों को देता था या मन्त्री स्वयं ही लेते।

सम्राट की न्यायिक शक्ति निरपेक्ष व अन्तिम थी। वह कानून व दया का स्रोत था। न तो कोई उसका विरोध कर सकता था न ही उसके निर्णय के औचित्य के बारे में शंका की जा सकती थी। वह स्वयं निजी रूप से अपील का अन्तिम न्यायालय था। सैद्धान्तिक रूप से उसके साम्राज्य का कोई भी व्यक्ति अन्याय के विरुद्ध उससे अपील कर सकता था। कुछ सम्राटों ने वस्तुतः महत्वपूर्ण मुकदमों में व्यक्तिगत रूप से रुचि लेते थे लेकिन ऐसे उदाहरण बहुत कम होते थे। सम्राट की व्यक्तिगत रुचि आकर्षित करना बड़ा कठिन था तथा यदि एक बार सम्राट खुद रुचि ले लेता तो सम्पूर्ण साम्राज्य के लिए उसके गम्भीर परिणाम हो सकते थे।

सम्राट को इन संस्थागत कार्यों के अलावा सम्राट के अति कानूनी कार्य भी थे जिनका स्रोत उसकी स्थिति थी। वह कन्फ्यूशियसवाद जो राज्य धर्म था—उसका अध्यक्ष था (साम्राज्य में परम्परागत धर्म कन्फ्यूशियसवाद ही था, अन्य धर्मों को या तो इजाजत दी गई थी या उनका निषेध कर दिया गया था।) इस सन्दर्भ में चीनी सम्राट की स्थिति, जॉर्ज प्रथम के समान विवादास्पद थी जो स्वयं को न केवल एंग्लीकन चर्च का प्रमुख मानता था अपितु यहूदियों का मुख्य रबी, इंगलैण्ड के अवैधानिक कैथोलिक चर्च का प्रधान, मुसलमानों का मुख्य इमाम तथा हिन्दू प्रजा के लिए सर्वोच्च हिन्दू होने का दावा भी करता था। वह नैतिक मूल्यों का निर्णायक था स्वर्ग में रहने वाले देवता के नाम भेंट मात्र वही चढ़ा सकता तथा इसके साथ ही भूकम्प, बाढ़ व अकाल जैसे प्राकृतिक प्रकोपों के लिए भी वह व्यक्तिगत रूप से जिम्मेदार माना जाता था। जिस प्रकार लोगों की सम्पन्नता उसके गुणों का परिणाम मानी जाती थी उसी प्रकार लोगों के कष्टों का

4. मंगोल विजय चीनी राजनीतिक व्यवस्था के लिए उतना ही घातक है जितनी यह रूसी राजनीतिक व्यवस्था के लिए घातक सिद्ध हुई। मंगोल मात्र आज्ञाकारिता को महत्व देते थे जिसका पूर्ण पालन किया जाता था—मंगोल शक्ति के पश्चात् रूस निरंकुशवादी हो गया। मंगोल के पश्चात् मिंग चीन में निरंकुशवादी हुआ उसका भी यही कारण था।

कारण उसकी दुष्टता मानी जाती थी। वह राष्ट्र का नैतिक व बौद्धिक नेता माना जाता था।

इस प्रकार चूँकि सरकार की योग्यता का आधार व्यक्तिगत था अतः सम्राट का स्वभाव व स्वरूप प्रशासन के निर्धारण का मूल आधार बन गये। मंचूवंश के सम्राटों की विशेषता का निर्धारण 'प्रगतिवादी' अथवा 'अनुदारवादी' अथवा अच्छे व 'बुरे' के आधार पर किये जाने के बजाय 'कमजोर' व 'शक्तिशाली' इन गुणों के आधार पर किया जा सकता था।

चिग वंश के दो राजाओं कांग हसी तथा चेइन लुंग की विशेषताएँ उनकी असाधारण शारीरिक, नैतिक तथा बौद्धिक शक्ति होती थीं। तथापि इस वंश के अन्त के कई राजाओं में कामरता, दुष्टता तथा असाधारण वेवकूफी पाई जाती थी। इस साम्राज्य के अन्तर्गत इस असीम शक्ति के विरुद्ध न तो कोई नियन्त्रण तथा न ही कोई अप्रयुक्त शक्ति के प्रवाह का कोई माध्यम था (जैसा कि जापान में पाया जाता है) ऐसी स्थिति में एकमात्र आशा सम्राट में उदारता व तर्कसंगतता की अपेक्षा करना अथवा दुष्ट सम्राट की मृत्यु होना थी।

सम्राट की शक्ति पर नियन्त्रण

प्रकट रूप से सम्राट की शक्तियाँ असीमित तथा अनियन्त्रित होने के बावजूद व्यवहार में इस पर नियन्त्रण थे।

सर्वप्रथम मनुष्य होने के नाते सम्राट उन परम्पराओं व पूर्व व्यवस्थाओं तथा निर्धारित नियमों से बाध्य था जो उसके वंश के द्वारा स्थापित किये गये थे तथा जिनके बीच वह पल कर बड़ा हुआ था। वह स्वयं कन्फ्यूशियस परिवार का सदस्य होता था। कन्फ्यूशियस विचारधारा में पवित्रता की धारणा उसे किशोरावस्था में प्रभावित करती थी तथा शक्ति ग्रहण करने के पश्चात् भी उसे अपने पूर्वजों के प्रति आज्ञापालन को बनाये रखना होता था। समय-समय पर स्वयं सम्राट के परिवार में ऐसी वृद्ध महिला होती थी जो सम्राट की शक्तियों से परे थी जैसे सम्राट का या स्वयं सम्राट की शक्ति से बढ़ कर होती थी। यदि सम्राट कभी ऐसा आदेश देता था जो कि उसके पूर्वजों के आदेश के विपरीत होता था चाहे वह पूर्वजों का आदेश कितना ही अन्यायपूर्ण क्यों न रहा हो किन्तु ऐसा करने पर सम्राट का मन्त्री उसका विरोध कर सकता था जो एक अच्छे कन्फ्यूशियसवादी के समान निरन्तर इस बात की रट लगा सकता था कि...............

"महामहिम सम्राट आपके पूर्वजों द्वारा स्थापित नियम"....................[5]

इस प्रकार मात्र अत्यधिक साहसी तथा कल्पनाशील सम्राट ही व्यावहारिक राजनीति के क्षेत्र में नये कदम उठा सकता था।

5. ता-चिग लून्ली का प्रकाशन सर्वप्रथम 1647 में हुआ। समय-समय पर इसके संशोधित संस्करण प्रकाशित होते रहे हैं। 1799 के संस्करण में विस्तृत टिप्पणियाँ कथन तथा कानून को लागू किये जाने वाले मामलों का विवरण भी संलग्न किया गया। सम्पूर्ण विधि को सामान्य, दीवानी, पौत्रिका, धार्मिक संस्कार, सैनिक, फौजदारी तथा सार्वजनिक कार्य से सम्बन्धित इन शीर्षकों के अन्तर्गत विभाजित किया गया था। इसका अंग्रेजी अनुवाद सर थामस स्टंटन द्वारा 1810 में तासिंग ले ली के नाम से प्रकाशित किया गया। इसका फ्रांसिसी अनुवाद पर्याप्त समय पश्चात् 1924 में कैथोलिक पादरी गाई बोलाइस द्वारा 'मेनुअल डू कोड चिनाइस' के शीर्षक से शघाई से दो खण्ड में प्रकाशित किया गया।

दिलीयन राज्य का कार्य आधिक्य तथा साम्राज्य की विशालता भी सम्राट पर नियन्त्रण का कार्य करती थी। उसे राजधानी में तथा प्रान्तों में अपनी सत्ता हस्तान्तरित करनी पड़ती थी। सत्ता के हस्तान्तरण को ता-चिंग हुई-तेन (महान् चिंग की संगृहीत संस्थाएँ) में सरकारी मान्यता प्राप्त थी जिसमें यह लिखा गया था कि सभी महत्त्वपूर्ण विषयों पर सम्राट की स्वीकृति आवश्यक थी जब कि छोटे-छोटे कार्य विभिन्न विभागों के द्वारा प्रत्यक्षतः किये जाते थे।

यद्यपि सैद्धान्तिक रूप से मातहत अधिकारियों की शक्तियाँ परामर्श वाली थीं, किन्तु व्यवहार में वे व्यापक तथा निरपेक्ष हो जाती थीं जैसे पूरक प्रान्तों के वायसरायों की शक्तियाँ होती थीं। तथापि अधिकारियों के सभी कार्य सम्राट की प्रसन्नता पर होते थे तथा उसकी इच्छा पर स्थगित किये जा सकते थे।

इन केन्द्रीय तथा स्थानीय नियमित अधिकारियों के अलावा जिन्हें सत्ता का हस्तान्तरण आवश्यक हो जाता था, विभिन्न लोग भी समूहों के माध्यम से राजा की शक्ति को प्रभावित करते थे। इन लोगों को चार समूहों में बाँटा जा सकता है—सम्राट के मातृपक्ष के सम्बन्धी, पत्नी पक्ष के सम्बन्धी तथा दरबार के अधिकारी तथा विदूषक। मातृपक्ष के सम्बन्धी राजा पर प्रभाव उसकी माँ के माध्यम से डालते थे जो अक्सर विधवा होती थी (राजा जीते-जी अपने पुत्र को राजा बहुत कम बनाते थे)। पत्नी पक्ष के सम्बन्धी अधिक हानिकारक होते थे। चीनी सम्राटों के हरम विशाल हुआ करते थे। हरम की स्त्रियों में दास स्त्रियाँ से लेकर वे रानियाँ होती थीं जिनका प्रभाव सम्राट के समकक्ष या उससे भी अधिक होता था। ये होनेला नाम दृढ़ शक्ति वाली मंचू लड़की जिसने बाद में साम्राज्ञी डावेजर त्जू हसी के नाम से चीन का शासन किया, की सफलता का मूल कारण उसकी चतुरता थी तथा वह सम्राट का प्रेम पाने में सफल हुई थी। राजधानी में सम्पूर्ण गुट तथा समूह सम्राट के चहेतों के इर्दगिर्द संगठित होते थे जिनका निर्धारण अंशतः सम्राट की इच्छा से तथा अंशतः उन स्त्रियों द्वारा होता था जो सम्राट को पुत्र रत्न प्रदान करती थीं।

चीनी इतिहास के अध्ययन से प्रारम्भिक मंचू सम्राटों ने राजनीति पर स्त्रियों तथा विदूषकों के अवांछनीय प्रभाव से शिक्षा ग्रहण की तथा अपने उत्तराधिकारियों को इन संकटों से बचाने के प्रयास किये। मंचू वंश के अधिकृत नियमों के अनुसार शाही परिवार के लोगों को स्थायी रूप से निःशस्त्र कर दिया जाता था तथा वे अनिवार्यतः पेकिंग में रहते थे। सम्राट के सम्बन्धी राजनीति में भाग नहीं ले सकते थे तथा विदूषकों का क्षेत्र कठोर रूप से घरेलू कामकाज तक सीमित कर दिया गया। इन सब व्यवस्थाओं ने डेढ़ सौ वर्षों तक अच्छा प्रभाव दिखाया।

सम्राट पर तीसरा नियन्त्रण सेंसर के अधिकारियों व व्यवस्था से होता था। चीन में सेंसर को यू-शीह कहते थे। इसकी स्थापना प्रारम्भ में एक शाही इतिहासकार के रूप में की गई थी जिसका कार्य सम्राटों के भाषणों व कार्यों का आलेखन करना था। ऐसा करने में इस इतिहासकार को शासक के अनुचित भाषणों, कार्यों तथा दुर्व्यवहार की आलोचना करने का अधिकार भी प्राप्त हो गया। बाद में इस सेंसर का कार्य अन्य अधिकारियों के आचरण तक व्यापक बना दिया गया।

कालान्तर में ये सेंसर अधिकारी न केवल सम्राट के आचरण की आलोचना करने में ही उपयोगी सिद्ध हुए अपितु ये वे साधन थे जिनके माध्यम से सम्राट अपने

अधिकारियों पर नियन्त्रण रख सकना था ।[6] निरंकुश शासकों के अन्तर्गत वे सेंसर अधिकारी जो न्याय के लिए जान की बाजी लगा सकते थे, जिनमें जन कल्याण की इच्छा होती थी तथा जो पूर्व गौरव को बनाये रखने के लिए उत्सुक होते थे मात्र वे ही सम्राट के कार्यो की निन्दा करने का साहस कर सकते थे । जिन सेंसर अधिकारियों ने आलोचना करने का अधिकार अत्यधिक प्रयोग किया उन्हें उसके लिए अपने प्राणों की आहुति देनी पड़ी । उदार सम्राट इस प्रकार के सेंसर अधिकारियों को समाप्त करने के वजाय उनकी भर्त्सना करते थे अथवा उपहास करते थे ।

बुद्धिमान तथा चतुर सम्राटों ने सेंसर संस्था से सर्वोत्तम लाभ उठाने का प्रयास किया । वे धृष्ट आलोचना को स्वीकार कर ऐसे आचरण से वचने की कोशिश करते थे जो सम्पूर्ण सेंसर के विरोध या आलोचना का कारण वनता हो । किन्तु मात्र दब्बू राजा ही सेंसर अधिकारियों को किसी भी समय तथा कहीं भी टिप्पण आलोचना करने की छूट देते थे क्योंकि इसका अर्थ धृष्टता को वढ़ावा देना तथा संपूर्ण साम्राज्य व्यवस्था में दुर्वलता व दब्बूपने को दर्शाना होता ।[7]

सम्राट पर चौथा तथा अत्यधिक महत्त्वपूर्ण नियन्त्रण जनमत था । सामान्यतः जनमत शिक्षित व भद्र पुरुप वर्ग के विचारों का प्रतिनिधित्व करता था । चीनी जनता जब तक कोई भयानक खतरा ही न उत्पन्न हो जाए जैसे उनका जीवन या उनके प्रिय विश्वास खतरे में पड़ जायें तव तक विद्रोह नहीं करती थी । ऐसे देश में जहाँ निरंकुश राजतंत्र पर किसी प्रकार के कानूनी नियन्त्रण नहीं थे एक जानकार तथा शिक्षित जनमत का होना अत्यधिक आवश्यक था । बौद्धिक प्रशासकों के वर्ग की निरन्तरता, दक्षिणपूर्वी एशिया तथा भारत में सभ्यताओं के उत्थान-पतन के विपरीत चीनी सभ्यता की निरंतरता को स्पष्ट करती है ।

मंचू काल में जनमत का दमन करने के लिए कभी-कभी उन लोगों पर अमानवीय वर्वर अत्याचार किये जाते थे जो शासन का विरोध करते थे । तथापि कभी स्वयं सम्राट जनमत का सम्मान करके अपने गलत आचरण में सुधार करता था । सम्राट व जनमत के मध्य इस स्पष्ट संतुलन के अतिरिक्त चीनी संवैधानिक व्यवस्था में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथा दृढ़ तथ्य यह था कि जनता का एक अत्याचारी तथा दमनपूर्ण शासक को अपदस्थ करने का नैतिक अधिकार तथा राजनीति कर्तव्य प्राप्त था ।

जापानी राजवंशों के विपरीत जो प्रागैतिहासिक काल से ही अटूट रही थी प्रत्येक चीनी राजवंश के विद्रोह करने के अधिकार के सफल प्रयोग तथा लोकप्रिय आधार पर सर्वोच्च सत्ता को हस्तांतरित करने के निश्चित नियम होते थे । चीनी व्यवस्था में इसे तिग-पिंग अर्थात् "स्वर्ग से स्वीकृति" कहा जाता था तथा अर्द्ध धार्मिक कन्फ्यूशियसवाद में

6. मेंडरिन पद जिसका स्रोत निश्चित नहीं तथा जो संभवतः पुर्तगाली भाषा का शब्द है, प्राचीन चीन प्रशासन व्यवस्था में विद्वान प्रशासक का समकक्षी है । चूँकि चीन में प्रारम्भिक परामर्शदाता यूरोपियन राजतन्त्रों से आये थे जो कुलीनतंत्र से ओतप्रोत थे, अतः वह ऐसे व्यक्ति को समझने में असमर्थ रहे जो न तो सामंत था न पादरी तथा फिर भी दोनों की भूमिका पर्याप्त सीमा तक निभाता था ।

7. चीनी सेंसर के बारे में विद्वतापूर्ण परिचर्या जो इसका सम्बन्ध वर्तमान नियन्त्रण व्यवस्था से भी वताती है, रिचर्ड-एल-वाकर के 'दिफार इरेडइर्न क्वारिटली' में "दि कंट्रोल सिस्टम ऑफ दी चाइनीज गवर्नमेंट" नामक लेख में पाई जाती है । खण्ड सात संख्या 1 (नवम्बर 1947)

यह एक रहस्यपूर्ण व्यवस्था थी (आधुनिक अर्थों में यह उसी प्रकार की व्यवस्था है जैसे एक समाज में रहने वाले लोग अपनी सरकार को दैनिक रूप में स्वीकृति प्रदान करते हैं)।

कन्फ्यूशियस विचारधारा के अनुसार मात्र गुणवान शासक ही स्वर्ग की स्वीकृति प्राप्त कर सकता है। तथा जिन्हें यह स्वीकृति प्राप्त नहीं थी तो उनमें शासन की न तो योग्यता थी और न उसे विद्रोह का दमन करने का अधिकार था। अंततः जनता के द्वारा विद्रोह की व्यवस्था उन सम्राटों पर नियन्त्रण रखती थी जो अपनी असीमित शक्ति का प्रयोग पूर्वी तानाशाहों अथवा रूसी जार की तरह करना चाहते थे। कन्फ्यूशियस उपदेश के प्रभाव ने चीनी सम्राटों को पश्चिमी विचारकों की कल्पना से कहीं अधिक मानवीय तथा प्रजातंत्रीय बना दिया था। अतः यद्यपि सम्राट की असीमित शक्तियों के दुरुपयोग के विरुद्ध कोई कानूनी नियन्त्रण नहीं थे तथापि इन अतिकानूनी सीमाओं ने मंचूकाल के अनुपयुक्त शासकों की तानाशाही को यद्यपि पूर्ण संतोपजनक नहीं तथापि सहनीय बना दिया था।

सतर्क-संरक्षक (ड्रेगन) गद्दी के लिए नीति का सूत्रीकरण

अमेरिकी अर्थों में नीति पद परम्परागत चीन में नहीं पाया जाता था। अमेरिकनों तथा पश्चिमी लोगों के सामने जो मुख्य सामाजिक आर्थिक अथवा राजनीतिक विकल्प है, वे चीनियों को प्राप्त नहीं थे। विस्तार हो या न हो, राष्ट्रीय अस्तित्व के लिए शक्ति-राजनीति के निर्णय करना, विभिन्न जातियों के पृथकीकरण को बढ़ाना या रोकना, नई तथा मूल श्रम सुरक्षाओं को स्वीकार करना या अस्वीकार करना इस प्रकार के नियम पूर्ण कन्फ्यूशियस विचारधारा में कभी उत्पन्न नहीं होते थे। जिन अर्थों हम नीति की बात करते हैं उसके अधिकतम अंश का निर्धारण सम्राट तथा उसके अधिकारियों की शिक्षा दीक्षा, उनके सामाजिक व बौद्धिक पर्यावरण से तत्कालीन विश्व की उस सभ्यता पर निर्भर था जो अवशिष्ट वर्ग से सर्वाधिक स्थायी प्रतीत होती थी।

मंचुओं के लिए नीति सम्बन्धी नियम वे थे जिनका निर्धारण संघर्ष के प्रारम्भ में किया जाना होता था तथा जिनको अंतिम रूप से चीन के आधिपत्य के बाद निर्धारित किया गया। एक बार शक्ति हथियाने के पश्चात् वे अपने पूर्ववर्तियों के समान नीति-विहीन प्रशासन का संचालन करने में सफल हुए। पर यह स्थिति अधिक समय तक नहीं रह सकी। रूस के स्वेज गाड़ियों ने तथा ब्रिटेन के जहाजों ने साम्राज्य के उत्तर तथा दक्षिण से पहले कम तथा बाद में बड़े पैमाने पर दबाव डालना जारी रखा।

तथा मंचुओं व चीनियों की इच्छा व अनिच्छा के बावजूद नीति का प्रश्न उत्तरोत्तर महत्त्वपूर्ण होता गया।

तथापि सम्पूर्ण काल में नीति सम्बन्धी निर्णय न्यूनतम थे। आर्थिक व राजनीतिक निर्णयों के लिए कन्फ्यूशियस विचारधारा के अन्तर्गत कोई प्रतिमान उपलब्ध नहीं थे। प्रारंभ से ही मंचुओं के दो उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए नीति निर्धारण करना पड़ा। उन्होंने चीन में जाति-भेद-की नीति अपनायी तथा चीन के पूर्णतः व्यवस्थित साम्राज्य पर आधिपत्य रखते हुए अपनी जन्मभूमि अर्ध-सन्य-मंचूरिया से अपना संबंध बनाये रखा।

जब मंचू विजेताओं ने चीन में प्रवेश किया तो वे अपनी इन विशेषताओं को जानते थे कि साहसी सैनिक होने के बावजूद वे शासन की कला में नये थे। शासन चाहे मंचू हो

या चीनी सम्राट अपनी सत्ता का प्रयोग अधिकृत अधिकारियों तथा गवर्नरों के माध्यम से ही कर सकता था। जिस पर मात्र सम्राट का नियन्त्रण होता था तथा वह अपने विविधापूर्ण अधिकार क्षेत्र में अनुत्तरदायी ढंग से शक्तिशाली था। मंचुओं को मिंग प्रशासन के अन्तर्गत शिक्षित वर्ग की प्राशासनिक व्यवस्था विजित लोगों के शासन के लिए अत्यधिक उपयोगी लगी। मंचू अपनी विजय के प्रारंभिक काल में कार्यदक्ष थे। उन्होंने शक्ति का प्रयोग सीमित किन्तु प्रभावशाली ढंग से किया तथा कार्य की गति तेज रखी। शक्ति में आने के पश्चात् मंचुओं ने मिंग काल की संस्थाओं को पुनर्स्थापित किया। उन्होंने एक मात्र मिंग व्यवस्था जिसका उल्लेख पहले भी किया गया है यह थी कि चीन के महत्त्वपूर्ण स्थानों पर मंचू सैनिकों की टुकड़ियाँ स्थापित कीं।[8]

चीनी-मंचू शासन व्यवस्था की कई विशेषताएं ध्यान देने योग्य हैं।

सर्वप्रथम परम्परागत चीन में पैतृक तानाशाही के अन्तर्गत किसी एक राजनीतिक संगठन को स्पष्ट शक्ति प्रदान नहीं की जाती थी। यद्यपि प्रत्येक विभाग के कर्तव्यों व उत्तरदायित्वों को ता-चिंग हुई तीन में अस्पष्ट रूप मे लिखा गया था किन्तु सम्राट की सत्ता के समक्ष कोई व्यवस्था नहीं ठहरती थी। किसी एक समय में किसी विभाग की सत्ता वस्तुत: सरकार के विभिन्न विभागाध्यक्षों, सम्राट व उसके पारिवारिक सदस्यों के परस्पर सम्बन्धों पर निर्भर करती थी न कि लिखित नियमों अथवा व्यवस्थाओं पर।

द्वितीयत: सरकार की शक्ति का विभाजन केन्द्रीय तथा स्थानीय सरकारों के मध्य तथा प्राशासनिक सेवाओं की विभिन्न शाखाओं के मध्य नियंत्रण व संतुलन प्राप्त करने के लिए किया जाता था, प्रशासन में तत्परता प्राप्त करने के लिए नहीं किया जाता था। नये सम्राट का प्राथमिक उद्देश्य अच्छा शासन प्रदान करने के बजाय पद पर बना रहना होता था (अच्छी सरकार सर्वदा गौण उद्देश्य होता था)। चूंकि मंचू शासकों का मुख्य उद्देश्य शासक परिवार को गद्दी पर बनाये रखना तथा प्रान्तों से पेकिंग की सरकार के लिए पर्याप्त मात्रा में धन प्राप्त करना होता था, अत: इस प्रकार के नियंत्रण लगाना आवश्यक हो गया था जिससे शाही मंत्रियों की अनावश्यक स्वतन्त्रता को रोका जा सके तथा शाही परिवार के हितों को सुरक्षित रखा जाये। अत: पेकिंग के केन्द्रीय शासन से मौलिक नीतियों का सूत्रपात बहुत कम होता था।

पेकिंग अक्सर नीतियों की उपेक्षा करता था। केन्द्रीय अधिकारी अक्सर वायसराय अथवा प्रान्तीय मुख्यालयों से प्राप्त कार्यों को स्वीकार या अस्वीकार करने का कार्य यंत्रवत् करते थे। चीनी प्रशासकों में पहल करने की विशेषता का अभाव होता था। वे अपनी क्षमता खोजबीन में तथा वैयक्तिक स्तर की राजनीति जिसमें वे माहिर होते थे, लगाते थे।

तृतीयत: चीनी प्रशासक पूर्णत: बौद्धिक वर्ग में से लिये जाते थे जो मूलत: भद्र वर्ग ही होता था। अत: प्रशासकों में परस्पर सहयोग की भावना होती थी तथा साथ ही सामान्य जनता जिनके कल्याण के लिए उनकी नियुक्ति की जाती थी, के प्रति उनमें अविश्वास होता था। प्रशासन केन्द्र उच्चस्थ पद मात्र राजधानी के सातकों के लिए प्राप्त

8. जिस स्थिति से बाध्य होकर मंचुओं को सीमांतक प्रदेश में सैनिक दस्ते रखने पड़े उसका वर्णन—चेंग हो-शेंक पूर्वाङ्क, ग्रन्थ (11) अध्याय 9, चिन चाओ-केंग की रचना 'चिंग शीह ता-कांग' (चिंग राजवंश की रूपरेखा) शंघाई 1935, अध्याय 11 पृ० 363-371, हसिओ शान 'चिंग-ताई-तुंग शीह' (जर्नल हिस्ट्री ऑफ दि चिंग डाइनेस्टी) शंघाई, ग्रंथ 1, पृ० 464-476 में मिलता है।

थे यह बहुत सीमित समूह था तथा दोस्ती व दुश्मनी की यह भावना सरकार के उच्चतम शिखर पर ही केन्द्रित थी। चीनी प्रशासन अपनी विद्वत्ता के कारण सक्रिय राजनीतिक गतिविधियों से निष्क्रियता तथा औपचारिकता की ओर प्रेरित होते रहे।

पेकिंग के प्रशासन को दो स्तरों के संगठन वाला कहा जा सकता है—नीति निर्धारण करने वाले अधिकरणों का समूह तथा दैनिक प्राशासनिक अधिकरण।

नीति का निर्धारण करने वाली संस्थाओं में प्रमुख महा-सचिवालय अथवा ने-कू था। महा-सचिवालय की स्थापना मिंग शासकों द्वारा 1382 में परम्परागत प्रधान-मंत्री पद के स्थान पर की गयी थी। मंचुओं ने इसे बनाये रखा। महा-सचिवालय में छः सचिवों को परामर्श के उच्चतम अधिकार प्राप्त थे तथा उन्हें सम्राट से प्रत्यक्ष संपर्क स्थापित करने का विशेष अधिकार भी प्राप्त था। किन्तु उन्हें पूर्व राजवंशों के प्रधान मंत्रियों के समान वास्तविक निर्णयों की शक्ति व महान गौरव प्राप्त नहीं था। चिंग राजा के काल में महासचिवालय में 3 मंत्री चीनी व 3 मंचू थे जिनमें प्रत्येक में दो नियमित व एक सहयोगी होता था।

प्राशासनिक क्रम में महा-सचिवालय उच्चतम पद होता था। प्राशासनिक सेवाओं के प्रार्थी प्रत्याशी वहाँ पहुँचने की महत्त्वाकांक्षा रखते थे। महासचिवों की नियुक्ति विभागों के मंत्रियों, प्रधान सेंसर अधिकारी व वायसरायों में से ही की जाती थी। ये पद समकक्षी माने जाते थे। प्रत्येक सचिव को सम्राट को परामर्श देने के अलावा अनेक सरकारी कार्य भी करने पड़ते थे। आदेशों की रूपरेखा बनाना, सम्राट को दिये गये स्मरण-पत्रों पर टिप्पणी करना, शाही मोहर का संरक्षण तथा औपचारिक उत्सव सम्बन्धी कार्य उनमें से कुछ थे। सामूहिक रूप से उनका कार्य राजकीय मामलों की व्यवस्था करने में सम्राट की सहायता करना होता था।[9]

9. सुदूरपूर्व में रुचि रखने वाले इतिहासकारों को चाहे चीन के प्रशासनिक इतिहास का यह भाग पर्याप्त उत्तेजनापूर्ण लगे मगर इस समय इस पर अधिक ध्यान न देना ही उचित होगा। यहाँ इतना कहा जा सकता है कि यह प्रशासनिक व्यवस्था स्वयं अपने में ही नहीं अपितु हमारे भविष्य के लिए भी महत्त्वपूर्ण है। 20वीं शताब्दी के मध्य में अमेरिकी अपने को पतन से बचाने के लिए पॉलिट ब्यूरो द्वारा विश्व शक्ति पर अधिकार करने के प्रयासों से बचने के लिए अमेरिकी अपने आर्थिक, सैनिक तथा प्रचार के मोर्चों को दृढ़ बनाये रखते हैं। संकट व विनाश की इस स्थिति में यह सोचना सरल है कि विश्व शांति हमारी परेशानियों व चिन्ताओं से छुटकारा दिला सकती है। किन्तु मंचू साम्राज्य इस ऐतिहासिक सत्य को स्पष्ट करता है कि पूर्ण शांति भी उतनी ही संकटपूर्ण होती है जितना युद्ध होता है। वस्तुतः शांति कभी-कभी युद्ध से भी खतरनाक होती है क्योंकि युद्ध के समय व्यक्ति कुछ न कुछ करना तो चाहता है जबकि शांति काल में वह भ्रष्ट, मुर्च्छित तथा निराश हो जाता है और तब भी वह परिवर्तन करने का प्रयास नहीं करता है। मंचू प्रशासन की समस्याएँ 1950 के सन्दर्भ में महत्त्वपूर्ण नहीं हैं किन्तु 2050 तक यदि मानव सभ्यता रही तो इसी प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं, क्योंकि सम्पूर्ण विश्व में यथास्थिति बनाये रखने के लिए मनोवैज्ञानिक तथा समाजशास्त्रीय रूप से व्यक्ति "कभी युद्ध न हो" की स्थिति को बनाये रखने के लिए किसी भी समस्या के समाधान का सुधार, विकास तथा परिवर्तन का विरोध करेंगे। कोई भी विद्वान पाठक इस बात का अनुभव कर सकता है कि स्वयं हमारे अमरीकी समाज में परम्परागत एकरूपता तथा नाश के बीज विद्यमान हैं। यद्यपि मंचूकालीन चीन तथा यूरोपियन अमरीकी भविष्य में ऐसी कोई निश्चित समानान्तरता नहीं है। यह तथ्य उन सभी लोगों के लिए महत्त्वपूर्ण है जो आज की स्थिति से परे उस विश्व की ओर देखना चाहेगा जो हम अपने भविष्य के बच्चों को प्रदान करना चाहते हैं।

अन्य महत्त्वपूर्ण केन्द्रीय संस्था राज्य परिषद थी (ख्रुन-ची-चू)। इस संस्था का निर्माण 1730 में संकटकालीन संगठन के रूप में विद्रोह को दबाने के लिए किया गया था। उसका प्रारम्भिक उद्देश्य सैनिक मामलों का संचालन करना था तथापि बाद में यह शासन से सम्बन्धित सभी महत्त्वपूर्ण कार्यों की देखभाल भी करने लगी। जैसा कि ता-चिंग-हुई-लेन में लिखा है इसके कार्य "शाही आदेशों व निर्णयों को लिखना, सेवा व देश से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण मामलों का निर्धारण करना था ताकि शासन के संचालन में वे सम्राट की सहायता कर सकें।[10]

इस प्रकार राज्य परिषद ने अंशतः कुछ उत्तरदायित्व महासचिवालय का ले लिया था। तथापि इसे महा सचिवालय प्रतिष्ठा कभी प्राप्त नहीं हुई। पार्षदों से किसी भी समय जनता सम्पर्क स्थापित कर सकती थी। यह अनुदेशों तथा संस्मरणों का आलेखन रखती थी तथा महत्त्वपूर्ण सरकारी अधिकारियों की नियुक्ति में सम्राट को सलाह देती थी। संक्षेप में परिषद का कार्य राज्य सम्बन्धी सभी मामलों में सम्राट की सहायता करना व परामर्श देना था।

राज्य परिषद के सदस्यों की संख्या सम्राट की इच्छा पर निर्भर करती थी। ये राजवंश के राजकुमारों, मन्त्री, भूतपूर्व उपमंत्री में से तथा केन्द्रीय न्यायालय तथा बोर्ड के मुख्य अधिकारियों में से लिये जाते थे। पार्षदों की संख्या पाँच अथवा छः होती, इनमें वरिष्ठतम मंचू होता था। पार्षदों के अधीन 32 सचिव होते थे जो विभिन्न विभागों से लिये जाते थे तथा जिनको सामान्यतया 'छोटे पार्षद' कहा जाता था। अपने काम की महत्ता तथा मुख्य अधिकारियों तक पहुँच के कारण परिषद के सचिव शाही प्रशासन के महत्त्वपूर्ण व्यक्ति माने जाते थे तथा भविष्य में उनका महा सचिवालय का सचिव बनना प्रायः निश्चित माना जाता था।

केन्द्रीय प्रशासन की तीसरी महत्त्वपूर्ण संस्था सेंसर (तू-चा-युआन) था। सेंसर बोर्ड में दो अध्यक्ष व चार सहायक सेंसर जनरल, 24 विभागीय सेंसर अधिकारी, 56 प्रांतीय सेंसर अधिकारी, 2 शाही कुटुम्ब के सेंसर अधिकारी तथा 10 पेकिंग नगर के लिए सेंसर अधिकारी होते थे।[11] चूँकि सेंसर की चीन में परम्परागत महत्ता थी तथा वे सरकार के प्रति जनता के दृष्टिकोण को परावर्तित करते थे, अतः राजनीतिक व्यवस्था में इसे महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त था।

परम्परागत रूप से सेंसर का कार्य सम्राट के दुराचरण के प्रति उसका ध्यान आकर्षित करना तो था ही, साथ में वे सरकारी अधिकारियों के सरकारी कर्तव्यों तथा उनके निजी जीवन संबंधी आचरण की निगरानी करते थे तथा राजधानी के राजस्व विभाग तथा अनेक प्रान्तों के राजस्व अधिकरणों के एकाउण्ट की जाँच करते थे। सेंसर सार्वजनिक भवनों, नदियों के बाँध तथा दान सम्बन्धी संस्थाओं पर भी निगरानी रखता था।[12] सेंसर के कुछ अधिकारी अन्य न्यायिक संगठनों के अतिरिक्त न्याय सम्बन्धी कार्य भी करते थे।

10. ता-चिंग हुई-तियन (1908 संस्करण शंघाई)

11. वही द्रष्टव्य, पृ. 88

12. द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् जो उत्तरदायित्व सेना के अध्यक्ष के विकसित हुए है, चीन का सेंसर अधिकारी उसके समानान्तर है। सेना के कन्ट्रोलर की शक्तियाँ यदि तकनीक भाषा तथा संस्कृति सम्बन्धी भिन्नताओं पर अधिक ध्यान दिया जाये तो बहुत सीमा तक चीन के सेंसर अधिकारी से साम्यता रखती है। चीन के सेंसर अधिकारी के कल्याणकारी कार्य सेना के कन्ट्रोलर के इसी प्रकार के अधिकारों से साम्यता रखते है जिसमें विभिन्न कल्याणकारी अर्द्ध सरकारी, सहकारितापूर्ण गतिविधियाँ आयोजित की जाती थी।

करता था। जो सदस्य निष्क्रिय होते थे वे अपना समय अध्ययन में उसी प्रकार लगाते थे जैसे प्रिंसटन न्यू जर्सी में इंस्टीट्यूट फॉर एडवांस्ड स्टडी में अमेरिकी बिताते हैं। अन्य शब्दों में इन लोगों से यह अपेक्षा की जाती थी कि वे किसी प्रकार का गम्भीर व विद्वतापूर्ण कार्य करेंगे, इनके लिए सम्मेलनों व गोष्ठियों का आयोजन भी किया जाता था, किन्तु कोई निश्चित पाठ्यक्रम अथवा निश्चित अनिवार्यताएँ नहीं होती थीं। कभी-कभी **हेन-लिन-युआन** को कुछ साहित्यिक कार्य भी सौंपे जाते थे जैसे सरकारी प्रलेखों का प्रकाशन अथवा साहित्यिक रचनाओं का संपादन। मात्र उन विद्वानों को जो सर्वोच्च केन्द्रीय परीक्षा को उत्तीर्ण कर लेते थे इस अकादमी का सदस्य बनाया जाता था। दो अध्यक्ष जो आजीवन के लिए नियुक्त किये जाते थे इसके सदस्यों की गतिविधि पर नियंत्रण रखते थे। अध्यक्षों के आधीन चार प्रकार के अधिकारी होते थे। प्रत्येक विभाग में पाँच व्यक्ति होते थे तथा सदस्यों की संख्या असीमित थी।

पूर्वोक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि मंचुओं के अन्तर्गत प्रशासन का ढाँचा इस प्रकार का था कि सम्पूर्ण शक्ति का केन्द्रीयकरण सम्राट में कर दिया गया था क्योंकि सभी महत्त्वपूर्ण सरकारी संगठन या तो मात्र परामर्शदाता थे या प्रशासन का संचालन करने वाले या राजनीतिक नियन्त्रण रखने वाले थे। तथा सुंग अथवा मुआन राजवंशों के समान उत्तरदायी प्रधानमंत्री जैसा कोई पद नहीं था। परिणामस्वरूप जब सबल सम्राट होते थे तभी सरकार का संचालन भली प्रकार से हो पाता था किंतु जब इस सतर्क संरक्षक रूपी राजा का स्थान दुर्बल सम्राटों द्वारा लिया जाता था तब कुशासन व भ्रष्टाचार का बोलबाला रहता था।

स्थानीय प्रशासन की सामान्य विशेषताएं[15]

जैसा कि पहले भी कहा एवं दर्शाया जा चुका है, चीन में प्रान्तीय तथा स्थानीय सरकार पर विचार करते समय भी इस मूल विचार को ध्यान में रखना होगा कि यहाँ विश्व के किसी भी सभ्य प्रदेश की तुलना में सरकार का स्तर अत्यधिक निम्न रहा है। दूसरे शब्दों में जिसे हम राजनीति कहते हैं उसके बाह्य तथा आन्तरिक विकास में किसी भी मध्ययुगीन अथवा आधुनिक पश्चिमी राज्य की तुलना में कम व्यक्ति तथा कम खर्च

15. केन्द्रीय प्रशासन के विभिन्न अंगों में से निम्न का उल्लेख किया जा सकता है—
(1) संचार विभाग (तुंग-चेंग-सू) का कार्य प्रान्तों से प्राप्त सभी सूचनाओं को राज्य परिषद् को प्रतिपादित करना था।
(2) पुनरावलोकन का महान्यायालय ने फौजदारी कानून के ऊपर सामान्य निरीक्षण किया।
(3) चार उप न्यायालय—(अ) धार्मिक अनुष्ठान का न्यायालय (आ) शाही न्यायालय (ता-लू-सू) (इ) शाही मनोरंजन का विभाग (कुआंग-लू-सू) (ई) राज्य सम्बन्धी उत्सवों का न्यायालय (हुंग-लू-सू)।
(4) प्रयोग विद्या का शाही बोर्ड (चिन-तियन-चीन)।
(5) शाही व्यवस्था विभाग सात भागों में विभाजित था :—
(i) प्रीवीपर्स का कोषागार (गुआंग-चू-सू) (ii) घराने की व्यवस्था के लिए वेतन व पर्यागन विभाग (क-यू-सू) (iii) पूजा उत्सव तथा विदूषकों के नियन्त्रण का विभाग (चांग-इ-सू) (iv) चरागाह विभाग (चिंग-फेंग-सू) (v) किराये संग्रह अधिकारी (कुआई-चां-सू) (vi) सार्वजनिक कार्य विभाग (यिंग-त्साओ-सू) तथा न्याय विभाग (शेन-हुंग-सू)।

प्रयुक्त किया गया था। कन्फ्यूशियस विचारधारा के अंतर्गत एक अविश्वसनीय न्यूनतम स्तर से अधिक न तो सरकार हो सकती थी और न उसकी आवश्यकता थी।

मात्रा की दृष्टि से चीनी राजनीतिक व्यवस्था में सरकारी गतिविधि के न्यूनतम स्तर के कारण स्थानीय सरकार तथा केन्द्रीय सत्ताधारियों के परस्पर सम्बन्धों ने कुछ विशेषताएँ प्रदान कीं। इनमें से मुख्य चार: स्थानीय स्वायत्तता, नियन्त्रण व संतुलन, न्यूनतम प्रशासन तथा सामाजिक प्रदत्तीकरण में थी।

प्रथमतः केन्द्रीय सरकार के संदर्भ में स्थानीय सरकारों की स्थिति अर्धस्वायत्त प्रदेशों के समान थी। इस व्यवस्था को कानूनी भाषा में संतोषजनक रूप से एकात्मक अथवा संघात्मक नहीं कहा जा सकता है क्योंकि वैयक्तिक रूप में सर्वोच्च शक्ति केन्द्रीय सरकार में निहित करनी थी किन्तु प्रक्रियात्मक रूप में स्थानीय सरकारों के कार्यों में बाधा नहीं डाली जाती थी जब तक स्थानीय सरकारें शाही दरबार को निर्धारित अंश में सोना अथवा चावल देते थे तथा कन्फ्यूशियस विचारधारा में निहित नैतिकता का खुल कर विरोध नहीं करते थे, निर्दयता अथवा दुर्भाग्य के कोई सनसनीखेज कृत्य नहीं होने देते थे। जब तक वे केन्द्र की अस्पष्ट सामान्य नीतियों का समर्थन करते थे प्रदेश में शान्ति व व्यवस्था बनी रहती थी। वे अपने स्रोतों तथा प्रबुद्ध वर्ग पर पूर्णतः आत्मनिर्भर होते थे तब तक केन्द्रीय सरकार उनके अंदरूनी मामलों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करती थी। उनका कार्यक्षेत्र इतना व्यापक था कि विदेश विभाग की स्थापना से पहले कूटनीतिक सम्बन्धों को स्थानीय विषय माना जाता था जो पूर्णतः स्थानीय प्रयासों पर निर्भर करता था तथा पेकिंग को पर्याप्त समय पश्चात् अस्पष्ट सी रिपोर्ट दी जाती थी।

द्वितीयतः नियन्त्रण व संतुलन के सिद्धान्त को जहाँ तक स्थानीय सरकार के अधिकारियों का सम्बन्ध था चरमसीमा तक क्रियान्वित किया जाता था। स्थानीय अधिकारियों की नियुक्ति जिसमें हसिन या मजिस्ट्रेट भी शामिल था केन्द्रीय अधिकारियों के द्वारा की जाती थी। किसी व्यक्ति को अपने जन्म स्थान में या काउंटी में नियुक्त नहीं किया जाता था, अतः सरकारी अधिकारियों का मनोवैज्ञानिक रूप से जनता से सम्बन्ध परामर्शदाता के रूप में होता था, किसी नगर के मेयर के समान नहीं होता था। सर्वोत्तम सरकारी अधिकारी भी एक सज्जन बाह्य व्यक्ति के रूप में जाना जाता था, नगर के गणमान्य नागरिक के रूप में नहीं।

पेकिंग अपनी शक्ति के आधिपत्य के बारे में इतना सतर्क था कि यद्यपि प्रान्तीय अधिकारी सम्बन्धित सिफारिश कर सकते थे तथापि नियुक्ति व विमुक्ति के आदेश मात्र पेकिंग से ही जा सकते थे। प्रत्येक पद पर तीन वर्ष के लिए नियुक्त नहीं किया जा सकता था। इन नियमों का उद्देश्य था कि अपने नियुक्ति के स्थान पर अवांछनीय सम्पर्क नहीं रखता हो जो उसे अनुपयुक्त मात्रा में प्रभावशाली बना सके तथा न ही वह ऐसे समाज में पर्याप्त समय तक टिके जहाँ वह हानिकारक मात्रा तक नेतृत्व प्राप्त कर लें।

अन्य नियंत्रण व सन्तुलन व्यवस्थाएँ भी थीं। स्थानीय अधिकारियों को न केवल अपने आधीन कर्मचारियों पर नियंत्रण का अधिकार था अपितु वे परस्पर एक दूसरे पर तथा अपने से श्रेष्ठ अधिकारियों पर अभियोग भी चला सकते थे। उदाहरणतया वायसराय (त्सुंगन्त् जिसे कभी-कभी गवर्नर जनरल भी कहा जाता है) को सहायक–सेंसर जनरल की पदेन पदवी भी दी गई थी, अतः वह प्रान्तीय अधिकारियों पर कठोर नियंत्रण रखने के अतिरिक्त अन्य वायसरायों अथवा केन्द्रीय मन्त्रियों पर अभियोग लगा सकता था।

महा सचिवालय, राज्य परिषद् तथा सेंसर ये वे तीन संस्थाएँ थीं जिन्हें महत्त्वपूर्ण, स्वेच्छापूर्ण तथा परामर्शदात्री कार्य करने का अधिकार था। मंचू कालीन चीन में वे ऐसी सर्वोच्च संस्थाएँ थीं जो सम्राट के मूलभूत निर्णयों में सहायता देती थीं। अन्य संगठन मात्र औपचारिक रोजमर्रा के कार्य करते थे, निर्णय नहीं लेते थे। इनमें से कुछ नियमित सरकारी विभाग थे; जब कि अन्य ऐसी अनियमित संस्थाएँ थीं जो किसी विशिष्ट उत्तरदायित्व अथवा शाही घराने के कार्यों के लिए जिम्मेदार होती थीं। दोनों प्रकार की संस्थाओं के संदर्भ में यह याद रखना चाहिए, ड्रेगन सिद्धान्त में सम्राट की जिन शक्तियों का वर्णन किया गया उससे स्पष्ट है कि सम्राट का चीन के राजतंत्र में वही स्थान था जो लुई चौदहवें का फ्रांस में निजी रूप से था।

नियमित प्रशासनिक संगठन

दैनिक प्रशासन में छः विभाग (कभी-कभी उन्हें बोर्ड भी कहा जाता था) थे, जिन्हें मिंग प्रशासन से आंशिक परिवर्तनों के बाद अपनाया गया था। प्रत्येक विभाग में दो मंत्री व चार उपमंत्री होते थे जिनकी सहायता के लिए ब्यूरो निदेशक सचिव तथा नियन्त्रक होते थे। ये विभाग विश्व के विशालतम साम्राज्य के प्रशासन का संचालन करने के लिए उत्तरदायी थे।[13]

संस्कार सम्बन्धी विभाग (ली-पू) संस्कारों की पूर्ति, शिक्षा तथा राज्य संबंधी विषयों की देखभाल करता था। इस विभाग का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य शिक्षा व साहित्य सम्बन्धी परीक्षाएँ करवाना था। चूँकि संपूर्ण आयोजनों के लिए यह विभाग उत्तरदायी था, अतः सम्पूर्ण विदेशी दूतावास भी इसके अन्तर्गत आते थे किन्तु वे अनेक उत्सव सम्बन्धी उत्तरदायित्वों में एक थे। अन्य कार्यों में भेंट चढ़ाने के उत्सव, अधिकारियों की मीटिंग के सरकारी आलेखन तथा सरकारी अधिकारियों की वेशभूषा के डिजाइन आदि थे। अन्य ली-पू (जो पहले के समान ही उच्चारित होता है किन्तु इसको भिन्न प्रकार से लिखा जाता है) प्राशासनिक सेवा का विभाग था। इसके कार्य योग्य व्यक्तियों की सरकारी पदों के लिए सिफारिश करना, पदवियाँ देना, पद तथा पुरस्कार देना, अनुपस्थिति के लिए अवकाश देना तथा प्राशासनिक सेवाओं की परीक्षा का आयोजन करना आदि थे। विभाग के कार्य विभिन्न ब्यूरो में विभाजित थे। ये ब्यूरो नियुक्ति, पदवियाँ, परीक्षा तथा आलेखन के थे।

राजस्व विभाग (हू-पू)

चौदह ब्यूरो में विभाजित था। इसका आधार प्रादेशिक था। ये कर तथा चुल्क लगाने, जनगणना करने, व्यय की निगरानी तथा केन्द्रीय व प्रान्तीय कोषों की जाँच के कार्य करते थे। इसके अतिरिक्त यह विभाग मुद्रा तथा सिक्कों का नियमन, तौल तथा मापों का स्तरीकरण तथा घरेलू व विदेशी वाणिज्य व्यापार का संरक्षण करता था।

13. जब जॉर्ज वाशिगटन अमेरिका का राष्ट्रपति था उस समय मंचू साम्राज्य की जनसंख्या 300,000,000 की थी। उस समय संयुक्त राज्य अमेरिका की जनसंख्या 40,00,000 तथा ब्रिटेन की जनसंख्या 60,00,000 अथवा 70,00,000 थी। इस प्रकार मंचू साम्राज्य 1800 के संयुक्त राज्य अमेरिका से 75 गुना बड़ा तथा ब्रिटेन से 40 गुना बड़ा था। देखिए जॉन के फेअरबैंक 'दि यूनाइटेड स्टेट्स एण्ड चायना' कैम्ब्रिज 1948, पृ. 139 तथापि पश्चिम की जनसंख्या वृद्धि ने इस अन्तर को पर्याप्त कम कर दिया है। बड़े पैमाने पर प्रशासन का संचालन करने की जो समस्या मंचुओं के सम्मुख थी वे अमेरिका के सामने आज है तथा वाशिंगटन फेडीलन अथवा जेफर्सन के जमाने में उसकी कल्पना करना सम्भव नहीं था।

सैनिक विभाग (पिंग-पू) का कार्य स्थल व जलसेना का विकास व निर्देशन करना, सैनिक आयोगों पर नियन्त्रण तथा राष्ट्रीय विकास में सहयोग देना था। इस विभाग के चार व्यूरो सैनिक, सांख्यिकी, संचार व आपूर्ति के थे।

न्याय विभाग

(ह्सिंग पू) का कार्य कानून की क्रियान्विति के लिए नियम बनाना, क्षमादान देना, विशिष्ट गवाही सुनना तथा जुर्माने व दंड के स्तरों का अंतिम निर्धारण करना होता था। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि इससे सम्बन्धित दंडाधीश की कोई व्यवस्था नहीं थी क्योंकि सम्पूर्ण शक्तियाँ चीन में मैजिस्ट्रेट को दे दी गई थीं अतः पृथक अटार्नी तथा जज की आवश्यकता नहीं थी। इस विभाग का सम्पूर्ण साम्राज्य में न्यायिक तथा प्राशासनिक उत्तरदायित्व था तथा विशिष्ट परिस्थितियों में यह अपील के न्यायालय के रूप में भी कार्य करता था।

सार्वजनिक कार्यों के विभाग (कुंग पू) का कार्य सार्वजनिक भवनों, मकबरे, राजपथ, नहर, पुल तथा बंदरगाहों का निर्माण करना, माप व तौल के तरीकों की व्यवस्था तथा बारूद के भंडारगृह बनाना था। यह विभाग भी शाही मकबरे निर्माण, माप व तौल तथा नदी व नहरों के चार व्यूरो में विभाजित था।

मंचूकाल के विदेशी तथा उपनिवेश अधिकारी

1958 में टीनसीन की संधि के पश्चात् पश्चिमी देशों को पेकिंग में अपने कूट-नीतिक अधिकारी रखने का अधिकार मिल गया था। इस अभूतपूर्व स्थिति का सामना करने के लिए मंचू सरकार ने एक विदेश विभाग की स्थापना की (त्सुंग-ली-या-में)। प्रारम्भ में यह अस्थायी रूप से बनाया गया था। इसमें 11 अधिकारी थे जो अन्य महत्त्वपूर्ण पदों पर नियुक्त थे। चालीस वर्ष पश्चात् त्सुंग-ली-या-में का स्थान एक आधुनिक विभाग वा-कु-पू ने ले लिया।[14]

मंचू काल का उपनिवेश कार्यालय महत्त्वपूर्ण था क्योंकि चीन के अपने आश्रित प्रदेशों के साथ सम्बन्ध एक शाश्वत समस्या थी। इसे **ली-फेन-युआन** कहा जाता था तथा इसका कार्य वाह्य सीमाप्रान्तों का नियन्त्रण व निदेशन, तथा चीन के अन्दर रहने वाली ऐसी जातियाँ जो चीन में पूर्णतः नहीं मिली थीं तथा घुमक्कड़ जनजातियों का संरक्षण, घुमक्कड़ जातियों की सरकारों का नियमन तथा अन्य स्वायत्त राज्यों का प्रशासन करना था। चीन के सीमाप्रान्तों से सटे सभी प्रदेश जो चीनी व्यवस्था के प्रान्त बनने की शर्तें पूरी नहीं करते थे इस विभाग के अन्तर्गत आते थे। इस विभाग का अध्यक्ष तथा दो उपाध्यक्ष या तो मंचू होते थे या मंगोल होते थे। विभाग का सम्पूर्ण कार्य छः विभिन्न व्यूरों में बाँटा जाता था जो सीमाओं, सम्मानार्थ पदवियों, सरकारी नियुक्तियों, वाह्य व अंदरूनी मंगोलिया से आने वाले राजाओं के स्वागत, मंचू सैनिक श्रेणियाँ जो बेनर कहलाती थीं, के संगठन तथा सम्पूर्ण औपनिवेशिक साम्राज्य में संचार व्यवस्था के संचालन से सम्बन्धित थे।

अन्य केन्द्रीय संगठन—हेन-लिन-युआन जो प्रबुद्ध वर्ग-की-अकादमी कही जा सकती है, सम्पूर्ण विद्वत नौकरशाही का सर्वोच्च अंग थी। सैद्धान्तिक रूप से इसमें चीन के सम्पूर्ण गणमान्य व्यक्ति निहित होते थे जिसमें से सम्राट अपने महत्त्वपूर्ण अधिकारियों का चयन

14. चिंग राजवंश के अन्तिम दिनों में 1906 में कुछ आधुनिक मंत्रालय जैसे शिक्षा, कृषि, उद्योग तथा वाणिज्य और सम्मिलित किये गये।

रखने वाला कोई प्रशासक नहीं होता था। अतः मजिस्ट्रेट मौका पड़ने पर स्थानीय स्तर पर अत्याचारी बन सकता था।

मजिस्ट्रेट के अन्तर्गत अन्य निम्न अधिकारी होते थे जिनकी तुलना उपनिवेश अफ्रीका के गैर-कमीशन वाले अधिकारियों से कर सकते हैं—

चार्ट संख्या 2
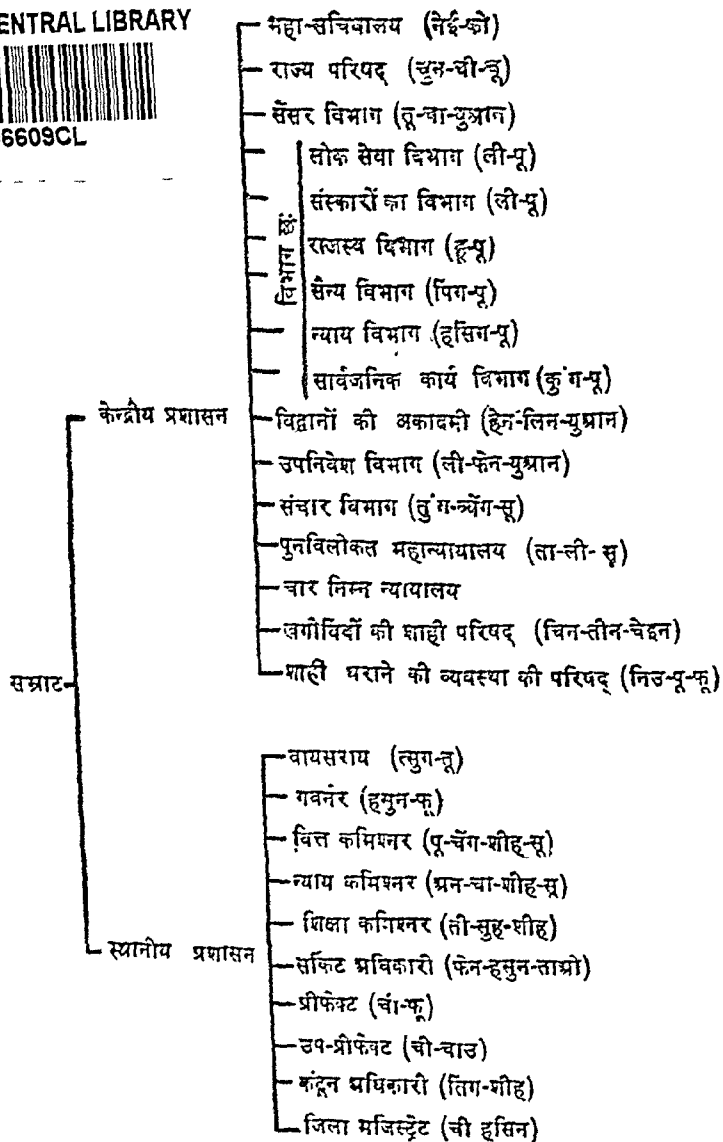
केन्द्रीय प्रशासन व स्थानीय सरकार व्यवस्था व संगठन (चिंग काल गत पचास वर्ष) उनका स्तर अधिक सम्माननीय नहीं था। वे स्थानीय लोग होते थे। न तो वे विद्वत् प्रशासक थे और न भद्र पुरुष, फिर भी उनके कार्य लोगों को सर्वाधिक उत्तेजित व रुष्ट करने वाले होते थे। रजिस्ट्रार, जेल के वार्डन, स्कूल अधिकारी, कोषाध्यक्ष तथा अनाज भण्डार के अधिकारी ये वे लोग थे जो आवश्यकता पड़ने पर पर्याप्त उचित अथवा अनुचित प्रभाव डाल सकते थे।

चार्ट 2 चिंग वंश के अन्तिम पचास वर्षों के आधार पर केन्द्रीय प्रशासन तथा स्थानीय सरकार की व्यवस्था व संगठन को प्रस्तुत करता है।

प्राशासनिक सेवाएं तथा बौद्धिक परीक्षाएं[16]

जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है कि चीन के निरंकुश अत्याचार तन्त्र को पर्याप्त सीमा तक ऐसी लोकसेवा व्यवस्था ने सहने योग्य बना दिया था जो प्रजातन्त्रीय व लोकप्रियता के तत्त्व रखती थी। यदि प्रजातन्त्र के मूल आधार—समानता-स्वतन्त्र सामाजिक व राजनीतिक गतिशीलता लोकप्रिय सरकार तथा प्रतिनिध्यात्मक सरकार ये चार तत्त्व माने जायें[17]—तो यह कहा जा सकता है कि विद्वत नौकरशाही कोई समानता प्रस्तुत नहीं करती थी, स्वतन्त्र गतिशीलता कुछ सीमा तक विद्यमान थी, लोकप्रिय सरकार की माँग बहुत कम पूरी की गई थी तथा प्रतिनिधित्व का तत्त्व मात्र इतना ही था कि लोकसेवा के सदस्य सम्पूर्ण चीन से लिये जाते थे।

लोकसेवा व्यवस्था का मूल आधार यह मान्यता थी कि उन सभी लोगों को समान अवसर प्रदान किये जायें जो उसके लिए बौद्धिक क्षमता रखते थे। मूल मान्यता यही थी कि बुद्धिमान लोग किसी भी जाति तथा वर्ग में हो सकते थे अतः प्रतिभावान युवकों को चाहे वे किसी भी परिवार तथा सामाजिक स्तर के लोग हों—उन्हें उन्मुक्त प्रतियोगिता के माध्यम से विभिन्न परीक्षाओं के द्वारा प्राशासनिक सेवाओं में निरन्तर प्रगति करने का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए।

पूर्व लोकसेवा की परीक्षा व्यवस्था प्रथम चिंग सम्राट के द्वारा पूर्वाग्रहपूर्ण बनाई गई थी। सम्पूर्ण मिंग तथा चिंग काल में नियमित रूप से परीक्षाएँ ली जाती थीं तथा सरकारी पद प्राप्त करने के लिए चीनी लोगों के लिए यही मूल साधन था। यद्यपि कुछ लोग अपनी पारिवारिक पृष्ठभूमि सिफारिश तथा घूस के माध्यम से भी इन पदों को प्राप्त कर लेते थे। फिर भी परीक्षा की व्यवस्था निरन्तर सम्पूर्ण साम्राज्य के प्रतिभावान युवकों को शाही सेवाओं में लेती रही। सरकार के अन्य अंगों तथा कार्यों की तुलना में कम से

16. चिंग राजवंश के दौरान प्राशासनिक सेवा प्रथा परीक्षा पर व्यापक साहित्य है। उल्लेखनीय विवरण सेह की द्रष्टव्य अध्याय 6, डब्ल्यू. एफ. मेयर्स का द्रष्टव्य अध्याय है। चीनी स्रोतों के लिए देखिए ता-चिंग हुई-तियन (1908 संस्करण) चुआन 33 वांग सेह चीन तुंग-हुआ-लू (एनाल्स एण्ड मेमोअर्स ऑफ दि चिंग डाइनेस्टी) पेकिंग 1884 चीन में श्रेष्ठ परीक्षा व्यवस्था के लिए देखिए चू-पेंग-शू की रचना चिउ-तियन पेई-चैंग (एनसीडोट्स ऑफ दि चिंग डाइनेस्टी) पेकिंग 1941 ग्रन्थ 4 चांग चुंग-सू, चिंग ताइ काओं-शीह-ची-तू-त्गू लिआओं (रीडिंग्स ऑन दि एक्जामिनेशन ऑफ दि चिंग डाइनेस्टी), शंघाई 1932।

17. प्रजातन्त्र के विचार की सीमाओं के बारे में विचार जो प्राचीन चीन की स्थिति पर लागू होता है—पी. एम. ए. लिनबर्गर की रचना दि पॉलिटिकल डॉक्ट्रिन्स ऑफ सन यात सेन बाल्टीमूर 1937। पृ. 29-52 तथा 89-96 में पाया जाता है।

तृतीयतः स्थानीय सरकार के कार्य—उन कार्यों के अलावा जो उसे केन्द्रीय सरकार के लिए करने पड़ते थे जैसे राजस्व की वसूली तथा शान्ति व्यवस्था बनाये रखना—अत्यधिक सीमित थे। ये कार्य थे कानूनी झगड़ों का निवटारा, सार्वजनिक निर्माण व सहायता कार्य तथा संस्कार अथवा शिक्षा सम्बन्धी सुविधाएँ उपलब्ध करवाना। इन कार्यों के लिए न तो निश्चित नियम थे और न पर्याप्त आर्थिक स्रोत थे। अतः स्थानीय अधिकारियों का वैयक्तिक चरित्र तथा योग्यता ही स्थानीय कार्यों की सफलता अथवा असफलता के निर्धारक तत्त्व होते थे। चूँकि ये गतिविधियाँ अनिवार्य नहीं थीं अतः उन्हें करना या न करना स्थानीय की इच्छा पर निर्भर करता था। किसी विशिष्ट जिले में किसी विशिष्ट कार्यक्रम को जनमत के द्वारा बाध्य नहीं किया जा सकता था। लोगों व अधिकारियों दोनों के लिए सर्वोत्तम कार्य शाही ध्यान को आकर्षित नहीं करना था। किसी प्रकार की अव्यवस्था न होने देना था। यह निश्चित करना था कि अधिकारी की अप्रसन्नता से न तो जनता को दण्ड मिले तथा न ही उन बौद्धिक प्रशासकों को रुष्ट करे जिन पर समाज आश्रित था।

चतुर्थ विशेषता जो चीनियों ने स्वीकार नहीं की है किन्तु जिसे अब आधुनिक तानाशाही राज्यों ने पुनर्प्राप्त कर लिया है जिसे सामाजिक प्रदत्तीकरण कहा जा सकता है अर्थात् छोटे व निश्चित सरकारी कामों को गैर सरकारी समूहों को सौंप दिया जाता था। चीन में अनेक कार्य परिवार, गाँव तथा हुई के द्वारा किये जाते थे जो संयुक्त राज्य अमेरिका में स्कूल, जिले, काउंटी, बोर्ड, नगर के मेयर अथवा कमीशन के द्वारा किये जाते हैं।

चिंग प्रान्त

प्रशासन की सुविधा के लिए चिंग साम्राज्य को 18 प्रान्तों में विभाजित किया गया था (शेंग चिंग काल के उत्तरार्ध में प्रान्तों की संख्या बढ़ा कर 22 कर दी गई)। ये 18 प्रान्त 185 क्षेत्रों (फू) में विभाजित थे जो 1,545 काउन्टी में बँटे हुए थे (हुसिने)। उप विभाजन के अन्य स्तर सर्किट (ताओ), उप क्षेत्र (चाऊ) तथा कॅट्रन्स (लिंग) जैसी स्थानीय इकाइयों में बँटे हुए थे। अधिकांश मामलों में सर्किट चुंगी की व्यवस्था, नमक पर एकाधिकार तथा कर स्वरूप दिये जाने वाले अनाज तथा सैनिक विषयों जैसे विशेष मामलों की व्यवस्था करते थे। उपक्षेत्र तथा कॅट्रन्स ऐसी स्थानीय इकाइयाँ थीं जो अपने विशाल क्षेत्र के कारण न तो हुसिन के रूप में वर्गीकृत किये जा सकते थे तथा न ही वे क्षेत्रों का स्तर प्राप्त कर सके थे। सामान्यतया स्थानीय प्रशासन तीन ठोस स्तरों में प्रान्त, क्षेत्र, जिला में विभाजित था।

वायसराय लोक प्रशासन का सर्वोच्च अधिकारी था। आठ वायसराय जो एक से लेकर तीन प्रान्तों की देखभाल करते थे तथा उनके नियंत्रण में अधिकांश चीन था। वायसराय के मूल दायित्व, सरकारी कार्यों पर नियंत्रण तथा अपने अधिकार क्षेत्र में सभी चीनी सेनाओं को आदेश देना था। प्रान्तीय गवर्नर (हुसुन-फू) को अपने प्रान्त पर इसी प्रकार का कुछ निम्न स्तरीय नियंत्रण प्राप्त होता था। सैद्धान्तिक रूप से गवर्नर वायसराय के आधीन होता था। किन्तु वास्तव में सभी गवर्नरों के ऊपर वायसराय नियुक्त नहीं होते थे, अतः यद्यपि सभी प्रान्तों पर गवर्नर होते थे किन्तु कुछ ही प्रान्तों के गवर्नरों व निरंकुश राजा के मध्य वायसराय तथा गवर्नर के दोहरे पद होते थे वहाँ दोनों में संघर्ष होने की

पर्याप्त सम्भावना होती थी क्योंकि दोनों को राजा से अपील करने का तथा एक दूसरे पर महाभियोग लगाने का अधिकार था। यह व्यवस्था एक बार फिर नियंत्रण व सन्तुलन के सिद्धान्त की पुष्टि करती है।

प्रान्तीय प्रशासनिक कार्यों का विभाजन कई कमिश्नरों में किया जाता था, जिनकी नियुक्ति केन्द्रीय सरकार के द्वारा की जाती थी। ये अधिकारी सम्राट के प्रति उत्तरदायी होते थे। मंचू शासन के दौरान प्रान्तीय सत्ता की अधिकता का यह एक और उदाहरण है। वित्तीय कमिश्नर (पू-चेंग-शीह-सू) प्रान्तीय कोषाध्यक्ष होता था तथा इसलिए वह प्रशासनिक सेवाओं का अध्यक्ष भी माना जाता था। न्यायिक कमिश्नर (अन-चा-शीह-सू) सभी दीवानी व फौजदारी मामलों का निपटारा करता था तथा प्रान्त के सभी मामलों के लिए वह अन्तिम न्यायालय होता था। शैक्षणिक कमिश्नर (ती-सूह-शीह) कठोर शब्दों में प्रान्तीय अधिकारी तो नहीं था तथापि वह सम्राट के द्वारा प्रान्तों में प्रशासनिक सेवाओं की परीक्षाओं का संचालन करने के लिए तथा प्रान्त के शिक्षा सम्बन्धी मामलों की व्यवस्था के लिए नियुक्त किया जाता था।

कमिश्नर के आधीन विभिन्न सर्किट अधिकारी (पेन-हसुन-ताओ अथवा ताओ-ताई) होते थे। ये अधिकारी अपने विशिष्ट क्षेत्रों के कार्य के लिए नियुक्त किये जाते थे। उनके अधिकार में कई प्री फेक्चरर्स या क्षेत्र निहित होते थे। प्रत्येक प्रान्त में उनकी संख्या पर्याप्त थी। उनकी स्थिति गवर्नर व प्रीफेक्ट की मध्यवर्ती थी। उनकी पदवियाँ उनके कार्यों के मुताबिक जैसे नमक अधिकारी, अनाज परिवहन, सैनिक, चुंगी, जल मार्ग, संचार व डाक अधिकारी आदि होती थी।

सर्किट अधिकारियों के आधीन प्रीफेक्ट होते थे (ची-फू) जो प्रीफेक्चर का शासन करते थे। एक प्रीफेक्ट में उपप्रिफेक्चर कैंट्न तथा जिले होते थे। प्रीफेक्ट प्रान्त के अन्तर्गत सर्वाधिक विशाल राजनीतिक खण्ड का अधिकारी होता था। प्रत्येक प्रान्त में 7 से 13 तक क्षेत्र या प्रीफेक्चर होते थे। प्रीफेक्चर एक अधीनस्थ कर्मचारी होता था जो गवर्नर व जिला मजिस्ट्रेट की मध्यवर्ती स्थिति रखता था। चाऊ व लिंग के अध्यक्ष चि-चाउ तथा लिंग शीह होते थे जो आवश्यकतानुसार प्रीफेक्ट संरचना में कार्य करते थे।

जिला सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थानीय इकाई होता था। सरकारी तौर पर जिला मजिस्ट्रेट चिंग काल में चिह-हसिन तथा आधुनिक काल में हसिग-चेंग कहलाता था। जिला मजिस्ट्रेट एक जिले का सर्वेसर्वा माना जाता था, सैद्धान्तिक रूप से उसे अपने जिले के लोगों की देखभाल माता-पिता के समान करनी होती थी। तथापि सिद्धान्त व व्यवहार में अन्तर था। वस्तुतः मजिस्ट्रेट सम्पूर्ण नौकरशाही में सर्वाधिक अत्याचारी व भयसह व अत्याचारी अधिकारी माना जाता था। उसके कार्य तीन प्रकार के थे—कर वसूल करना, झगड़ों का निपटारा करना तथा शान्ति व व्यवस्था बनाये रखना।

अपने कार्यों को पूरा करने में जिला मजिस्ट्रेट लोगों के लिए सरकार का अन्तिम अधिकारण था। वह अन्ततः कार्य करने वाला अधिकारी था। अपनी सभ्यता के कठोर पिता के समान वह अपने बच्चों अर्थात् लोगों से कहता था कि वे न तो उसे परेशान करें न उसके लिए किसी प्रकार की कठिनाई में डालें। उसे वसूल किये गये कर सम्राट तक पहुँचाने होते थे, जिले में शान्ति-व्यवस्था रखना होता था तथा उसके कार्य पर उसकी उन्नति व पदावनति निर्भर करती थी। प्रान्तीय स्तर के विपरीत यहाँ उसके कार्यकलाप पर दृष्टि

सम्राट के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता था। स्वयं सम्राट परीक्षा लेता था। यह व्यवस्था कोई अन्य उपाधि प्रदान नहीं करती तथा सफल उम्मीदवारों को तीन वर्गों में विभाजित करती थी।

प्रत्येक समूह के प्रथम तीन व्यक्ति प्रथम स्थान वाले माने जाते थे, इसके पश्चात् सम्पूर्ण के एक चौथाई द्वितीय श्रेणी के माने जाते थे तथा अवशिष्ट सब तृतीय श्रेणी के माने जाते थे। शाही परीक्षा के बाद सभी उम्मीदवार चिन-शीह (सफल विद्वानों) घोषित होते थे। किन्तु प्रथम दो वर्गों के तथा प्रत्येक वर्ग के तीन सर्वश्रेष्ठ तथा सर्वश्रेष्ठ 25 प्रतिशत विद्वान हेन-लि-युआन (सर्वोच्च अकादमी) के सदस्य बनाये जाते थे। वे सम्पादन व संकलनकर्ताओं के रूप में साहित्यिक कार्य भी करते थे। चूंकि केन्द्रीय स्नातकों के एक चौथाई ही इस अकादमी के सदस्य बन सकते थे अतः विद्वानों के लिए इसकी सदस्यता सर्वोच्च सफलता होती थी, तथा यहाँ तक पहुँचना युवा तथा वृद्ध सबकी महत्त्वाकांक्षा होती थी।

मंचू शासन के दौरान प्रशासनिक सेवाओं की परीक्षाएँ संस्कारों के विभाग को सौंपी गई थीं। तथापि वास्तविकता में सभी परीक्षाएँ विशेष रूप से नियुक्त अधिकारियों के द्वारा संचालित होती थीं तथा इस विभाग का कार्य मात्र औपचारिक सर्वेक्षण का था। प्रशासनिक सेवाओं में नियुक्ति का अधिकार प्रशासनिक विभाग को ही प्राप्त था। महान् चिंग संहिता में उन नियमों व विधियों का वर्णन विस्तार में किया गया है जिनका बड़ी वफादारी से प्रशासनिक विभाग नियुक्तियों के दौरान पालन करता था। संक्षेप में यह विभाग विशेषतया सामान्य दो प्रकार की नियुक्तियाँ करता था। विशेष नियुक्तियाँ स्वयं सम्राट के द्वारा की जाती थीं। सामान्य नियुक्तियाँ प्रशासनिक विभाग की सिफारिश पर सम्राट के नाम में की जाती थीं। इससे निम्न स्तर के पदाधिकारियों की नियुक्ति विभिन्न विभागों के द्वारा सीधे विद्वानों की सूची में से की जाती थीं।

सरकारी पद प्राप्त करने के अन्य कई तरीके भी थे। स्वाभाविक व उचित तरीका तो यही था कि उम्मीदवार परीक्षा में बैठ कर अपना भाग्य आजमाये। एक अन्य तरीका यह भी था—कोई व्यक्ति किसी विशेष पद के लिए इस आधार पर सीधे प्रार्थना-पत्र दे सकता था कि उसके परिवार के द्वारा राजवंश की अमूल्य सेवा की गई थी, तीसरा तरीका उच्च अधिकारियों द्वारा इस प्रकार की सिफारिश प्रस्तुत करना था कि उम्मीदवार नगरीय अथवा सैनिक मामलों के लिए विशिष्ट प्रतिभा अथवा योग्यता से युक्त था। तथा अन्तिम तरीका धन व्यय करके पद प्राप्त करना था।

परम्परानुसार जो अधिकारी केन्द्रीय अथवा प्रान्तीय उपाधियों के माध्यम से नियुक्त किये जाते थे उन्हें सम्माननीय तरीकों से नियुक्त (चेंग-तू-चू-शेन) माना जाता था तथा उन्हें उच्चतम स्थिति तक पहुँचने का अधिकारी भी माना जाता था।

सभी उपाधि-प्राप्त व्यक्ति पद प्राप्त करने में सफल नहीं होते थे। योग्यता पद प्राप्त करने के लिए कानूनी आधार नहीं था। जिस प्रकार कई व्यक्तियों में से एक प्रतियोगी कोई उपाधि प्राप्त करता था उसी प्रकार कई स्नातकों में से एक को वास्तविक सरकारी पद प्राप्त होता था। नीचे से तरक्की पाने वाले महत्त्वाकांक्षी बहुत थे जबकि पद बहुत कम थे। सर्वोच्च स्थिति प्राप्त करने की महत्त्वाकांक्षा सैकड़ों व हज़ारों लोगों को आलोकित करती थी जबकि वास्तविक पुरस्कार बहुत कम लोगों को मिलता था।

उच्च पदाधिकारियों की सेवाओं के बदले उनके सम्बन्धियों को कुछ अपेक्षाकृत कम महत्त्वपूर्ण पद ही प्रदान किये जाते थे। अतः जिस व्यक्ति में जरा सी भी प्रतिभा होती थी वह नियुक्ति के लिए इस साधन का सहारा कभी भी नहीं लेता था चूँकि इसका अर्थ भविष्य में तरक्की के मार्ग का अवरुद्ध होना था। योग्य व्यक्ति प्रतियोगिता के माध्यम से ही पद प्राप्त करने का प्रयास करते थे। प्राशासनिक सेवा में सिफारिश का दूसरा प्रचलित तरीका प्रशासन के सर्वोच्च अधिकारियों को ऐसे सहायकों का चयन करने का अधिकार था जिन्हें वे निजी रूप से विश्वसनीय मानते थे अथवा वे योग्य कर्मचारियों पर विशेष कृपा कर सकते थे। अच्छे समय में इस शक्ति का दुरुपयोग नहीं किया जाता था। विशेष तरक्की की व्यवस्था होने के बावजूद प्रशासन विभाग के द्वारा ऐसे मामलों की छानबीन की जाती थी तथा इसके पश्चात् ही ऐसी नियुक्तियाँ सरकारी तौर पर सम्राट के द्वारा की जाती थी।

सरकारी पदों का व्यापार चीन में इतना अधिक पनपा कि समय-समय पर इसे नियमित रूप प्रदान करने की कोशिश की गई। इस व्यवस्था का आधार यह था कि यदि आफिस भ्रष्टाचार के द्वारा ही दिये जाते हैं तो कम से कम उसका फायदा तो सम्राट को मिले। मंचू काल में इस पद्धति को नियंत्रित स्वरूप प्रदान किया गया तथा जब कभी सरकार को राजस्व की आवश्यकता होती थी पदों का व्यापार किया जाता था। ताई-पिंग विद्रोह के समय पदों के बेचने से प्राप्त होने वाली रकम शाही खजाने का स्थायी स्रोत बन चुकी थी तथा इस कारण इसका फैलाव इतना बढ़ा कि वास्तविक प्राशासनिक सेवाएँ खतरे में पड़ गईं। इस व्यवस्था के कारण अयोग्य और कभी-कभी अशिक्षित व्यक्ति तक शासन तंत्र में घुसने लगे।

चूँकि ये बेचे गये पद पर्याप्त प्रभाव व शक्तिशाली होते थे जिसमें जीवन व मृत्यु का मामला तक निहित होता था, अतः सामान्य व्यक्ति अत्याचार का शिकार होता था तथा सरकार की प्रतिष्ठा का पतन होता था। यह स्थिति अमेरिका के स्वतन्त्रता संग्राम के दौरान ब्रिटिश फौजों में बिकने वाले पदों की तुलना से भी बुरी थी।

विद्वत नौकरशाही में पद व पुरस्कार

मंचू सरकारी तंत्र में पद सोपान-क्रम व्यवस्था परम्परागत चीनी पद्धति पर थी जो तांग काल से चली आ रही थी, जिसमें नौ क्रम होते थे तथा प्रत्येक क्रम में दो प्रकार के पद होते थे। यह व्यवस्था सैनिक व असैनिक दोनों सेवाओं पर लागू होती थी। प्रत्येक क्रम में एक नियमित व एक सहायक पद होता था। एक बार नियुक्त हो जाने के पश्चात् प्रत्येक अधिकारी का उद्देश्य उत्तरोत्तर तरक्की करना होता था। सामान्यतया पद की अवधि तीन वर्ष होती थी। सिद्धान्त तथा व्यवहार में एक व्यक्ति उसी पद पर बना नहीं रह सकता था। यों तो उसकी तरक्की होती थी या अवनति अन्यथा उसे सेवा से हटा दिया जाता था, दुबारा से नियुक्ति नहीं होती थी। इस प्रकार सामान्य प्रक्रिया तरक्की, अवनति अथवा अनिवार्य अवकाश प्राप्ति थी। सभी सरकारी अधिकारियों के गुण व अवगुणों का मूल्यांकन प्राशासनिक विभाग द्वारा किया जाता था। तृतीय श्रेणी के वे कर्मचारी अपवाद थे जो स्वयं अपनी सेवाओं का रिकार्ड कठोरतापूर्वक रखते थे जो सम्राट को मूल्यांकन के लिए प्रस्तुत किये जाते थे।

कम इस क्षेत्र में भ्रष्टाचार व बेईमानी को दूर रखने का प्रयास किया गया। यद्यपि मंचू काल में प्रशासनिक सेवाएँ असफल साबित हुईं किन्तु यह असफल होने वाली आखिरी संस्था थी।

शिक्षा तथा प्रशासनिक सेवाएं

पूर्व राजवंशों के समान चिंग काल में शिक्षा का विषय तथा निदेशन सरकार के कठोर नियंत्रण में होता था। तथापि शिक्षा की सुविधाएँ बड़े पैमाने पर निजी साधनों के अन्तर्गत थीं।

राजकीय सुविधाएँ मात्र उन लोगों को प्राप्त होती थीं जो पहले अपेक्षाकृत रूप से अत्यधिक कठोर प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके थे। सरकारी संस्थाओं में प्रवेश पाने के लिए या अत्यधिक ऊँचे स्तर के विद्वानों के द्वारा आयोजित निजी अकादमियों में प्रवेश पाने वाला एक छात्र अत्यधिक कठोर परिश्रम करने पर ऐसा कर पाता था।

सम्पूर्ण शिक्षा का मूल तत्त्व प्रतिष्ठित कन्फ्यूशियस ग्रन्थों को कंठस्थ करना था

आज का पाठक इसकी प्रशंसा नहीं कर सकता। आज के कितने ही अमेरिकी नवयुवक इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकते कि इस विशाल विषय सामग्री को जो न्यू टेस्टामेंट से कहीं अधिक विस्तृत थी याद करना कितना कठिन कार्य था। आज के कितने समझदार लोग किसी भी ग्रन्थ के 80,000 शब्दों को निरन्तर रूप में याद कर सकते हैं।

कन्फ्यूशियस रूढ़िवादिता के बारे में इतना कहा जा सकता है—पर्याप्त विकृत स्वरूप होने के बावजूद इसका स्वरूप मानवीय था। कठोरतम होते हुए भी यह व्यक्तियों को उत्तरदायित्व प्रदान करती थी। कन्फ्यूशियस विचारधारा का साहित्य सीमित होते हुए भी सौन्दर्यपूर्ण था।

ये ही बातें कुमितांग नौकरशाही में उच्च पद प्राप्त करने के महत्त्वाकांक्षी भाग्यहीन छात्रों के बारे में नहीं कही जा सकती है। साम्यवादी चीन में उच्च पदों के लिए यह बात और कम लागू होती है। कन्फ्यूशियसवाद अपने निकृष्टतम रूप में भी मानवीय था। बेहूदा होते हुए भी विश्वसनीय था तथा परम्परागत धरोहर को सम्पादित करने के लिए इसमें अत्यधिक प्रभावशाली साहित्यिक रचनाएँ थीं। वर्तमान साम्यवादी चीन का अनन्त साहित्य न तो मानवीय है न सुन्दर अथवा साहित्यिक ही है। इसमें तथा कन्फ्यूशियसवाद में यही फर्क है कि दोनों सर्वांगीण हैं। यह भी मानव मस्तिष्क को प्रभावित करता है।

कुछ दशाब्दियों अथवा शताब्दियों के भविष्य के अमेरिका को शायद वैसी ही शिक्षा प्रणाली को अपनाने के लिए बाध्य होना पड़ा जो पर्याप्त सफलता से कन्फ्यूशियस चीन में प्रचलित थी। यह सुधार निम्नांकित प्रयासों को निहित करेगा—सभी कॉलेज उपाधियाँ केन्द्रीय सरकार के द्वारा दी जावें, सरकारी सेवा में सभी पदों को (चाहे नागरिक अथवा सैनिक सक्रिय अथवा सुरक्षित हों) कमीशन किया जाये। इस प्रकार सम्पूर्ण देश में शिक्षा का स्तरीकरण किया जाये तथा सरकार को प्रतिभावान युवक प्राप्त करने में सुविधा प्राप्त हो। इस प्रकार की प्रणाली के परिणामों का भयावह अथवा वांछनीय होना क्रियान्वित करने वाले के दृष्टिकोण पर निर्भर करेगा—जिसका अर्थ सभी सक्रिय प्रगतिवादी अथवा विद्रोही लोगों को एकत्र कर उन्हें निष्क्रिय बनाना होगा। जो भी व्यक्ति किसी भी प्रकार

की परीक्षा पास करने की प्रतिभा रखेगा, अन्ततः सरकारी पदों पर नियुक्त हो जायेगा तथा समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त करेगा। यह प्रतिष्ठा गैर परम्परावादिता तथा गैर वफादारी से खतरे में पड़ सकती है तथा इनकी व्याख्या करने का अधिकार प्रशासनिक शक्ति को होगा। क्रान्तिकारी लोग बेवकूफों द्वारा प्रेरित नहीं होते हैं तथा इस व्यवस्था में सभी प्रतिभावान युवक परिपक्वता प्राप्ति के साथ-साथ सरकार के द्वारा खरीद लिये जायेंगे।

चीन में ऐसा ही हुआ है।

प्राचीन परीक्षा प्रणाली में चीनी युवक अपने प्रान्त के शिक्षा कमिश्नर द्वारा आयोजित परीक्षा में भाग लेता था। वे ऐसे प्रयास अपनी किशोरावस्था से ही कर सकते थे जब कि अन्य उम्मीदवार चालीस से पचास वर्ष के बीच भी होते थे। सफल उम्मीदवारों को सीउ-त्साई (उदयीमान प्रतिभाओं) की पदवी दी जाती थी तथा वे जिला अकादमी के सदस्य बन जाते थे। यह अकादमी पश्चिमी अर्थों में कॉलिज नहीं थी। इसका न भवन होता न निश्चित पाठ्यक्रम। इसकी व्यवस्था सरकार द्वारा नियुक्त एक निदेशक के द्वारा की जाती थी।

सीउ-त्साई अथवा उदयीमान प्रतिभा की पदवी एक प्रतिभावान युवक के सम्मान अथवा निराशा का निर्णय करने वाली होती थी। ये युवक नीले रंग का गाउन पहन सकते थे। वे जन सामान्य से ऊँचे उठ जाते थे। वे सामान्य कानून तथा दण्ड की परिधि से भी परे हो जाते थे। जब तक वे अकादमी के सदस्य रहते थे कोई स्थानीय मजिस्ट्रेट उन्हें दण्डित नहीं कर सकता था। यद्यपि वेतन नाममात्र का मिलता था तथापि परिस्थिति सम्बन्धी विशेषाधिकार अपार थे। पश्चिमी सभ्यता में इसका समकक्षी मात्र मध्ययुग का पादरी पाया जाता है। इनमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह था कि इन युवकों को आगामी परीक्षा में भाग लेकर सरकारी तन्त्र में आगे बढ़ने के अवसर उपलब्ध होते थे।

प्रत्येक प्रान्त में वर्ष में तीन बार प्रान्तीय परीक्षाएँ आयोजित की जाती थीं। एक प्रान्त में विभिन्न जिलों के छात्र कई प्रारम्भिक परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के पश्चात् छात्रों को प्रान्तीय परीक्षा में भाग लेने दिया जाता था। इस परीक्षा के सफल उम्मीदवार चू-जेन (नियुक्त-व्यक्ति) कहलाते थे। इस अवधि के पश्चात् सफल व्यक्ति न केवल अगली केन्द्रीय परीक्षा में भाग ले सकता था अपितु वह अपेक्षाकृत महत्त्वपूर्ण सरकारी पदों पर नियुक्ति का अधिकारी भी हो जाता था। इस परीक्षा की कठोरता का आभास इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि 300 परीक्षार्थियों में से एक ही व्यक्ति सफलता प्राप्त कर पाता था। यद्यपि असफल उम्मीदवार अगली परीक्षा में फिर शामिल हो सकते थे।

केन्द्रीय परीक्षा सर्वाधिक कठिन होती थी। यह परीक्षा भी यद्यपि निरन्तर तीन चरणों में होती थी तथापि प्रान्तीय परीक्षा से पर्याप्त भिन्न थी। सफल उम्मीदवार जिनका अनुपात हर दस योग्य उम्मीदवार में से एक होता था—कुंग-शीह (प्रस्तुत विद्वान) की उपाधि से विभूषित किया जाता था। उदाहरण के लिए चिंग राजवंश के 260 वर्षों में 112 नियमित व विशेष केन्द्रीय परीक्षाओं का आयोजन किया गया जिनमें कुल 25000 केन्द्रीय उपाधियाँ वितरित की गईं।

कुंग-शीह की उपाधि प्राप्त करने वाले लोगों की स्थिति उच्चस्थ होती थी। प्रारम्भिक चरण की परीक्षा उत्तीर्ण कर लेने के पश्चात् अन्तिम शाही परीक्षा के लिए उन्हें

सरकारी पदों की सामाजिक प्रतिष्ठा तो अधिक थी ही, साथ में कई आर्थिक लाभ भी थे। एक अधिकारी की सम्पूर्ण आमदनी उसके मूल वेतन से कई गुनी अधिक होती थी। वस्तुतः रूस के समान मूल वेतन साधारण होते थे किन्तु प्रत्येक पद के साथ उतने ही वैध एलाउंस होते थे किन्तु उनका प्रचार कम होता था। एक व्यक्ति जिसे 100 डॉलर प्रति माह वेतन मिलता था, को एलाउंस उसके 20 गुना मिलते थे। इस सीमित आय व उदार एलाउंस के साथ-साथ अवैध आय सर्वदा संभव होती थी। अवैध आय समय, स्थान तथा व्यक्ति पर निर्भर करती थी। अक्सर ईमानदार लोगों को सिर्फ इसलिए घूस लेने को वाध्य किया जाता ताकि व्यवहार वना रह सके। अधिकारियों की भ्रष्टता के विरुद्ध कोई कारगर उपाय नहीं थे। चीनियों की ऑडिट की व्यवस्था वड़ी कमजोर थी।

इन अवैध सरकारी तरीकों ने भ्रष्टता को वढ़ावा दिया। भ्रष्टता एक आम वात वन गई थी। सामान्य वातचीत के दौरान सरकारी पदों को आमदनी के आधार पर अच्छा या बुरा कह कर सम्बोधित किया जाता था। किन्तु इससे यह निर्णय नहीं कर लेना चाहिए कि सरकार में भले लोग होते ही नहीं थे अथवा सम्राट के सेवक जनता की भलाई के लिए कुछ भी नहीं करते थे। कई महत्त्वपूर्ण अधिकारी विना किसी अतिरिक्त आय के अवकाश प्राप्त कर लेते थे। हजारों अधिकारी जनता के कल्याण को ध्यान में रखकर अपने उत्तरदायित्व का निर्वहन करते थे।

तथापि, ईमानदार अधिकारियों के वाद एक अत्याचारी या भ्रष्ट अधिकारी सम्पूर्ण व्यवस्था को भ्रष्ट वना देता है जिसके अत्याचार व दमन पीढ़ी-दर-पीढ़ी याद रखे जाते हैं। सरकारी तंत्र में प्रवेश पाने वाले वे नवयुवक जो पर्याप्त समय तक आदर्श साहित्यिक रचनाओं को रचने में विता चुके थे प्रारम्भ में वफादारी व ईमानदारी से काम करना चाहते थे। किन्तु जो कम वेतनभोगी अर्धसरकारी कर्मचारी व क्लर्क होते थे वे नवीन अफसर को यदि उसमें जरा भी चतुरता होती, पद का दुरुपयोग करना वहुत जल्दी सिखा देते थे। ऐसे वातावरण में वहुत शीघ्र नवीन विद्वान अधिकारी की सद्भावनाएँ समाप्त हो जाती थीं। वहुत कम सरकारी अधिकारी प्रारम्भ से ही भ्रष्ट होते थे उनमें से अधिकांश वाद में सरकारी वातावरण के कारण भ्रष्ट वन जाते थे। एक सामान्य कहावत थी "एक मजिस्ट्रेट जो तीन वर्ष में मात्र एक सौ हजार तामल इकट्ठा करता है, ईमानदार व्यक्ति कहा जा सकता है।" चूंकि 1750 में एक सौ हजार तामल की क्षमता लाखों डॉलर के वरावर होती थी अतः इस कहावत को अतिशयोक्ति कहा जा सकता है। तथापि यह सरकारी अधिकारी के प्रति प्रचलित अविश्वास को स्पष्ट करता है।

मंचू सरकार की विशेषताएँ

मंचू अथवा चिंग राजवंश, परम्परागत चीन का अंतिम ऐतिहासिक काल था। अतः इसकी दोहरी महत्ता है, क्योंकि यह न केवल अपने पूर्ववर्ती राजवंशों का प्रतिनिधित्व करता था अपितु विदेशी इस काल की राजनीति व संस्कृति के आधार पर ही चीन का मूल्यांकन करते हैं। चिंग शासन कितना अच्छा था – यह प्रश्न विचारणीय है ?

यह कहना अनुचित होगा कि मंचू शासन सर्वदा अयोग्य व भ्रष्ट रहा। पहले सौ अथवा डेढ़ सौ वर्षों में इस शासन के दौरान चीन ने समकालीन यूरोप से कहीं अधिक सम्पन्नता प्राप्त की जो सम्पूर्ण विश्व में मात्र जापान को छोड़कर सर्वाधिक थी। तथापि

इस दौरान मंचू शासकों की यह अभिवृत्ति स्पष्ट हो गई कि वे सम्राट की शक्तियों को अधिकाधिक बढ़ाना चाहते थे।

मंचू शासन के आधार में शक्ति प्राप्ति के इस भ्रष्ट विचार के कारण कालांतर मंचू राजवंश उसके दौरान का चीन दोनों ही समाप्त हो गये। यह महत्त्वपूर्ण विचार है कि जिस चीन का सामना पश्चिमी जगत से हुआ वह नैतिक दृष्टि से टूटा हुआ चीन था, वह एशिया में अपनी राजनीतिक शक्ति के सर्वोच्च शिखर पर पहुँचा राज्य नहीं था। इस प्रकार मंचू शासन की दुर्बलता के परिणामों की छाप न केवल चीन पर पड़ी अपितु पश्चिम पर भी पड़ी।

मंचू शासन की तीन मूल दुर्बलताएँ—सन्देश, प्रतिक्रिया तथा भ्रष्टाचार थे।

मंचू सरकार की सर्वप्रथम विशेषता शासकों का चीनी जनता, चीनी अधिकारियों तथा स्वयं अपने रिश्तेदारों के प्रति गहन संदेह था। मंचुओं ने जब सर्वप्रथम राजगद्दी पर अधिकार किया तो उन्होंने अपनी सीमित जनसंख्या को शुद्ध व सुरक्षित रखने के लिए मंचुओं के चीनियों से मेलमिलाप पर पाबंदी लगा दी। इस प्रतिबंध के परिणाम-स्वरूप मंचू सैनिकों के परिवार जो निरन्तर चीन के सीमांत प्रदेशों में स्थित रहते थे, पृथकता तथा कुण्ठा के शिकार बने।

मंचुओं की जातीयवाद की नीति के परिणाम-स्वरूप वे पृथक् रूप से पहचाने जाते थे तथा चीनी जन सामान्य उनसे घृणा करते थे। चीनी जो अब तक उदार व सहिष्णु थे इस जातिवाद से प्रताड़ित होकर रूस जातिवाद की ओर उन्मुख हुए। परिणाम-स्वरूप आज की चीनी नीति में जातिवाद को इतना प्रमुख स्थान प्राप्त है कि वह हिटलरवाद से भी निकृष्ट है। वही चीन जिसमें यहूदी, अरब, तुर्क, हूण, मंगोल तथा रेग, टेरा व वाबटेल जनजातियों का आत्मसात्करण सफलतापूर्वक हुआ था, मंचुओं के द्वारा शादी के बल पर जाति पृथकता का आरोपण होने के पश्चात् भयंकर रूप से जातिवादी बन गया। चीनी जातिवाद ने अंततः भूमिगत षड्यंत्रों की मनोवृत्ति को उकसाया। तथापि यह निर्णय करना अत्यधिक कठिन है कि पहले मंचुओं में संदेह व्याप्त हुआ था या चीनियों में द्वेष की भावना, पहले मंचुओं ने दमन प्रारम्भ किया या पहले चीनी भूमिगत हुए। चीन में दो सौ वर्ष तक निरन्तर संघर्ष चला जिसकी समाप्ति 1912 की वसंत में हुई जब चीनियों ने मंचुओं का कत्लेआम कर इस समस्या का समाधान कर दिया।

इस सन्देह से प्राशासनिक सेवाएँ भी प्रभावित हुई। संतुलन बनाये रखने के प्रयास में प्रायः एक ही सेवा अथवा प्रदेश में दोनों जातियों की नियुक्ति की जाती थी। इस संतुलन व नियंत्रण के सिद्धान्त ने चीनी प्रशासन अयोग्य बना दिया तथा आधुनिक चीन में इस विश्वास ने घर कर लिया कि एक अच्छी सरकार बेहतर होती है। जिस प्रकार इंडोनेशिया में सम्पूर्ण प्राशासनिक ढाँचा भूतपूर्व साम्राज्यवादी उच्च प्रशासन से प्राप्त कर बनाये रखा गया है तथा जिस प्रकार भारतीय अपने शासन का संचालन पूर्णतः ब्रिटिश साम्राज्य से प्राप्त परम्पराओं के आधार पर करते हैं उसी प्रकार राष्ट्रवादी व साम्यवादी दोनों चीन मंचू परम्परा की प्रतिछायाएँ हैं। मंचुओं ने ताइ-पिंग विद्रोह के पश्चात् नियंत्रण व संतुलन के सिद्धान्त को त्याग दिया था। तथा इस कुनीति के परित्याग के पश्चात् यद्यपि कुपरिणाम बढ़े नहीं तथापि उनकी छाप यथावत् बनी रही।

मंचू भी संदेह के शिकार थे। शाही संबंधी तथा सम्राट के मातृपक्षी संबंधियों को महत्त्वपूर्ण पद प्रदान नहीं किये जाते थे। सिद्धान्ततः ऐसा शाही परिवार में गुटबंदी को रोकने के लिए किया गया था। वास्तव में इसका परिणाम शासक परिवार का महत्त्वाकांक्षी युवकों को प्राशासनिक सेवा से पृथक कर उन्हें निष्क्रिय बनाना था। शासक मंचू परिवार में, साहस व सक्रियता की विशेषताओं को जिस प्रकार समाप्त किया गया इसका समकक्षी उदाहरण इतिहास में नहीं मिलता है।

मंचू सरकार की दूसरी विशेषता इसका प्रतिक्रियावादी दृष्टिकोण था। जब मंचुओं ने चीन पर आधिपत्य किया वे शासन संचालन की कला में अनभिज्ञ थे, परिणामस्वरूप वे 1625 में चीन पर अपनी विजय से पहले तथा बाद में भी शासन के संचालन के लिए चीनी मंत्रियों पर निर्भर रहे। कहा जाता है कि इन चीनी मंत्रियों ने मंचुओं के लिए इस प्रकार की विधियों का निर्माण किया जो अंततः आत्मघाती सिद्ध हुईं, अन्ततः जो मंचू शासन के नाश का कारण बनीं। यद्यपि अब यह सिद्ध कर सकना कठिन है कि जिन चीनी मंत्रियों ने मंचुओं की सेवा की वस्तुतः वे छुपे हुए देशभक्त ही थे जिन्होंने चीनियों के नाश के बीज बोए, तथापि इन कानूनों में मंचू शासन का नाश करने की प्रवृत्ति स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। वस्तुतः इन कानूनों ने मंचुओं को इतना आरामतलब बना दिया कि अंततः उनका नाश हुआ। इन तीन शताब्दियों की मूल दीक्षा अत्यधिक सुरक्षा, प्रतिक्रिया तथा आत्मघात थी।

जापान के शासक परिवार थे–भूतकाल का ध्यान कर वर्तमान की व्यवस्था तथा भविष्य की सुरक्षा करने की जो प्रवृत्ति अत्यधिक सक्रिय थी उसका मंचू शाही परिवार में पूर्णरूपेण अभाव था। एकमात्र मंचू बादशाह कुआंग हसी ने 1898 में 100 दिन तक सुधार करने का प्रयास किया किन्तु उसका परिवार व रीति-रिवाज उसके विरुद्ध पड़ते थे। प्रतिक्रिया क्रांति की जननी होती है तथा वर्तमान चीन की क्रांति की प्रवृत्ति मंचूकाल के दौरान उसकी प्रतिक्रिया का ही परिणाम है।

भ्रष्टाचार चीन में सर्वदा प्रचलित रहा है। मंचूकाल में यह अधिक व्यापक हो गया। द्वितीय महायुद्ध से पहले कुमितांग चीन के जिस भ्रष्टाचार को इतना बढ़ा-चढ़ा कर बताया जाता है वस्तुतः वह मंचू राजवंश की कानूनसम्मत चोरी की तुलना में कुछ भी नहीं था। मंचू राजवंश के अंतिम दिनों में सम्पूर्ण सरकारी तंत्र इतना भ्रष्ट तथा इतना स्पष्ट हो गया कि यह रोग सम्पूर्ण प्रशासन को हड़प गया। राजस्व से ज्यादा चोरी होने लगी तथा सरकारी शासन का स्थान अव्यवस्था ने ले लिया।

भ्रष्टाचार का स्थान आडम्बर ने ले लिया। मंचू प्रशासन इतना भ्रष्ट था कि अधिकारियों को दिये जाने वाले वेतन ऊपरी तौर पर साधारण होते थे, तथापि सरकारी तौर पर उन्हें पर्याप्त धनराशि अलाउंस के तौर पर बेईमानी को रोकने के लिए दी जाती थी। जिन अधिकारियों को नियमानुसार इस प्रकार की धनराशि एलाउंस के रूप में नहीं दी जाती वे अतिरिक्त आय की कोई अन्य व्यवस्था कर लेते थे।

जब अमेरिकी अधिकारियों ने कुमितांग चीन में भ्रष्टाचार की आलोचना की तो वे अपने विचार में च्यांग-काई-शेक व उसके सैनिक पदाधिकारियों की आलोचना कर रहे थे तथापि भ्रष्टाचार की परम्परा चीन में बहुत पहले से पड़ चुकी थी। अमेरिका में जॉर्ज वाशिंगटन के राष्ट्रपति पद पर शपथ लेने से पूर्व भी चीन में यह व्यवहार पर्याप्त प्रचलित

हो चुका था। राष्ट्रवादी जब तक सत्ता में न आये अत्यधिक सफल हुए। सन-यात-सेन के लिए यह कहा जाता था कि पद से बाहर वह एक महान् राष्ट्रपति था। मंचू शासन के दौरान ही जिन चीनियों ने यह सीख लिया था कि विरोध करना सम्माननीय है, सरकार आदरहीन थी, प्रशासन घृणा करने योग्य था तथा षड्यंत्र करना वीरता का कार्य था; जब राष्ट्रवादी शक्ति में आये तो उनमें कुछ चोर बन गये। परिणामस्वरूप पूर्व अनुभव के आधार पर चीनियों ने सोचा कि सभी अधिकारी चोर थे। विश्व जिस चीन की राष्ट्रवादी समझ कर निंदा कर रहा था, वस्तुतः वह मंचूकाल का अवशिष्ट रूप था। यह मंचूकालीन धरोहर साम्यवादी चीन को कहा तक प्रभावित करेगी यह अभी देखना है। संदेह, प्रतिक्रिया तथा भ्रष्टाचार का यह सूत्र चीन में किसी भी प्रशासन पर बड़ी अच्छी तरह से लागू होता है। साम्यवादी नेताओं को अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए क्रांतिकारी विचारधारा तथा विचित्र आर्थिक व्यवस्था के साथ स्वयं को कुशल प्रशासक सिद्ध करना होगा। जहाँ तक साम्यवादी प्रेस का प्रश्न है वह साम्यवादी नेताओं के भ्रष्ट होने के पर्याप्त प्रयास प्रस्तुत करता है। मंचू साम्राज्य को सम्राट हुए चालीस वर्ष हो गये हैं तथा अंतिम मंचू सम्राट साइबेरिया में रूसी कैदी के रूप में मरा तथापि मंचूकालीन चीन की विशेषताएँ अब तक विद्यमान हैं।

अतः वस्तुतः यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि 19वीं शताब्दी में जिस चीन ने आंतरिक संघर्ष व पश्चिमी बाहन् शक्ति का सामना किया वह नैतिक रूप से कुण्ठित, नष्ट, संदेहशील, प्रतिक्रियावादी तथा भ्रष्ट मंचूकालीन चीन था। चीन समुद्र की ओर से आने वाले बर्बरों का सामना करने में भी असमर्थ था। चीन में पूर्वी एशिया के साथ अंतर्सांस्कृतिक संबंधों की परम्परा का विकास कर लिया था। यह व्यवस्था जो कन्फ्यूशियस के राष्ट्रों के परिवार की धारणा पर आधारित थी, पश्चिमी देशों के संदर्भ में जो संघ राष्ट्रीय राज्यों में विश्वास करते थे, अनुपयुक्त सिद्ध हुई।

अध्याय 4 प्राचीन चीन का औपनिवेशिक साम्राज्य तथा चीन का राष्ट्रों का परिवार

प्राचीन चीन की राजनीतिक व्यवस्था के तीन पृथक् स्तर थे :—

(1) आन्तरिक साम्राज्य जिसमें चीनी रहते थे।

(2) एक औपनिवेशिक साम्राज्य जिसमें अनेकों सीमांतक प्रदेश तथा गैर चीनी उपनिवेश थे।

(3) एक राष्ट्रों का चीनी परिवार—आसपास के आश्रित राज्यों का समूह जिसमें चीन के परिचित प्रायः सभी राज्य सम्मिलित थे।

चीन के संपूर्ण इतिहास के दौरान इन तीन प्रकार के प्रदेशों के साथ संबंधों का प्रभाव चीन की राजनीति की गत्यात्मकता पर प्रायः पड़ता रहा। हो वंश से आज तक चीन के सीमांतक प्रदेश उसकी सुरक्षा योजना के मूल आधार रहे हैं।

चीनी इतिहास की निरंतरता का आभास इस तथ्य से लग सकता है कि ईसा से दो शताब्दी पूर्व पान कू के द्वारा रचित तथा होवर डब के द्वारा अनुवादित पुस्तक 'दि हिस्ट्री ऑफ दि फारमर हेन डाइनेस्टी' में चीन के अधिकारी सिक्यांग प्रदेश को लेकर जितने चिंतित नजर आते हैं उतने ही साम्यवादी चीन के अधिकारी भी दृष्टिगोचर होते हैं। वर्तमान में चीन के शांति सेना के दस्तों का कोरिया में होना यद्यपि साम्यवादी प्रसार के लिए तो है ही किन्तु साथ ही इस बात का भी द्योतक है कि पिछले 2000 वर्षों में भी चीन की राजनीतिक व सैनिक मान्यताएँ नहीं बदली हैं। यदि चीन इतिहास के पन्ने पलटे जाएँ तो स्पष्टतः नजर आता है कि जब भी चीन के लिए संभव हुआ उसने बर्मा, स्याम, हिन्दचीन, कोरिया, तिब्बत तथा किसी भी अन्य पड़ोसी प्रदेश पर दावा किया है।

चीन का राष्ट्रों की असमानता के बारे में भूतकालीन विचार भी परिवर्तित नहीं हुआ है। चीनी अवधारणा के अनुसार राज्यों के मध्य समानता का विचार उतना ही अस्वाभाविक तथा बेहूदा था जितना एक परिवार अथवा समुदाय के व्यक्तियों के बारे में समानता का विचार था। प्राचीन चीन के अनुसार विभिन्न राज्य स्वाभाविकतया असमान थे तथा चूँकि चीन सभी राज्यों में सबसे विशाल तथा सर्वाधिक सभ्य था अतः सब राज्यों से श्रेष्ठ था। किन्तु 1931-1945 के दौरान जापानियों के लिए चीन द्वारा समान स्तर पर जापान का सामना करने का विचार बेहूदा तथा उकसाने वाला था क्योंकि जापानी सैनिक तानाशाहों के अनुसार सुदूरपूर्व के देशों का स्वर्ग के द्वारा निर्धारित नेता राष्ट्र चीन न होकर जापान था। जो तथ्य कल तक जापान को नष्ट करने वाले थे वे भविष्य में चीन को नाराज करने वाले हो सकते हैं। चीन और जापान का परस्पर मधुर संबंध तब तक संभव नहीं है जब तक एक दूसरे की आधीनता स्वीकार न कर लें।

प्रतिमानों की निरंतर महत्ता :

प्राचीन चीनी साम्राज्य की केन्द्रीयकरण की संरचनात्मक व्यवस्था—आन्तरिक चीनी

व्यवस्था, वाहरी अधिकृत प्रदेश तथा वाह्य अधीनस्थ व मित्र देशों का समूह इतना महत्त्वपूर्ण होता यदि चीन की राजनीतिक प्रवृत्तियों तथा औचित्य का विचार वर्तमान तक निरंतर न रहा होता। यदि पश्चिमी प्रेक्षकों को यह अपेक्षा थी कि आधुनिक चीन औपनिवेशिक सीमांतक तथा वैदेशिक मामलों में अपने साम्राज्यवादी पूर्वजों से भिन्न होगा। किन्तु यह अपेक्षा मिथ्या सावित हुई क्योंकि युद्ध से नष्ट तथा दुर्वल राष्ट्रवादी चीन ने भी ब्रिटिश वर्मा के साथ एक निर्जन प्रदेश के टुकड़े को लेकर द्वितीय महायुद्ध के दौरान झगड़ा खड़ा किया अथवा अव साम्यवादी चीन अनिवार्य रूप से आश्रित उत्तरी कोरिया के संरक्षक की भूमिका निभा रहा है।

सुदूरपूर्व की राजनीति को तथा परिष्कृत, अनेक जातीय अपरिपक्व चीन के वर्तमान को समझने के लिए चीन के पुराने प्रतिमान को समझना आवश्यक है।[1] क्योंकि चीन के भूतकालीन उदाहरण कई मामलों में अमेरिका की नीति को करारा जवाब हैं। हम अमेरिकी जिस नौकरशाही, प्राशासनिक तथा विश्ववर्ती सभ्य संसार में रह रहे हैं वह स्थिति चीन में सुंग राजवंश (960-1279 ई०) में रह चुकी तथा चीन सामंतवादी विकेन्द्रीकरण, संप्रभु राष्ट्र राज्य तथा राष्ट्रों के परिवार की जिस स्थिति से गुजर चुका है उसका ज्ञान अमेरिका के लिए वोरवोन स्टुअार्ट अथवा हनोवेर वंशीय राजाओं की तुलना में कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है।

आंतरिक व वाह्य साम्राज्य :

अंग्रेजी भाषा के चाइनीज शब्द का कोई समानार्थक शब्द चीनी भाषा में नहीं पाया जाता है तथापि आधुनिक[2] अर्थों में चीनी अपने देश को केन्द्रीय राष्ट्र (चुंग कुओ) कहते हैं तथा दैनिक वोलचाल में वे स्वयं को उत्तर प्रदेश में हेन (जहाँ हेन राजवंश फला-फूला) कहते हैं तथा दक्षिण प्रदेश में तांग कहते हैं (जहाँ सर्वोच्च सांस्कृतिक उन्नति तांग राजवंश के दौरान हुई)। इस प्रकार एक चीनी स्वयं को या तो हेन जेन या तांग जेन अथवा चुंग को जेन कहता है। जिस प्रदेश में हेन-जेन रहते थे वह वस्तुतः आंतरिक साम्राज्य था। प्राचीन ग्रंथों के अनुसार प्राचीन महान् दीवार के अंतर्गत ही था। 16वीं तथा 19वीं शताब्दी में जो साम्राज्य चीन में सम्मिलित हुआ वह वस्तुतः मूल चीन से विस्तृत था। इस प्रकार उदाहरण के लिए हारमेन मोल ने जो विश्व का *मानचित्र* (लंदन 1719) में वनाया था उसमें 'पूर्व प्रदेश या चीनी' प्रदेश जो वताया गया है वह आज का सोवियत सुदूरपूर्व है तथा वह प्रदेश उस काल के चीन से वड़ा था।

चीनियों के लिए तथा वहाँ जाने वाले पश्चिमी लोगों के लिए चीन के अन्तर्गत आश्रित तथा गैर चीनी प्रदेश जो कुल मिलाकर मूल चीन से वहुत अधिक थे, अपेक्षाकृत

1. सुदूरपूर्व राष्ट्रों के परिवार मण्डल की दुर्भाग्यपूर्ण जापानी योजना के वर्णन के लिए देखिए अध्याय 19, पृष्ठ 435–438.

2. प्रोफेसर चार्ल्स सिडनी गार्डनर ने एक वार कहा कि यदि 'आधुनिक' पद का प्रयोग मात्र उन समाजों के लिए किया जाता है जिन्होंने तकनीकी व्यवस्था में यांत्रिकता को अपना लिया है तो चीन को इस अर्थ में आधुनिक नहीं कहा जा सकता है, किन्तु यदि आधुनिक पद का प्रयोग (सांस्कृतिक तथा राजनीतिक कारकों में परिष्कृत अन्तर करके किया जाता है) किसी समाज की राजनीतिक व सामाजिक इकाइयों को ध्यान में रख कर किया जाता है जैसे (1) सामंतवाद के स्थान पर नौकरशाही, (2) कागज की मुद्रा, (3) कागजी पत्रों के माध्यम से प्रशासन जिसमें व्यापक पैमाने पर लिखित आलेख रखे जाते हों तो चीन 1000 ईसवी से आधुनिक रहा है।

कम महत्त्वपूर्ण तथा अपरिचित लगते थे। चीन में रहने वाले मुस्लिम अल्पसंख्यक, दक्षिण तथा-दक्षिण पश्चिम की जनजातियों, चीनी सीमा के अन्तर्गत रहने वाले मंगोल तथा मंचू स्वयं को स्वतन्त्र राज्यों में एकीकृत करने में असफल रहे तथा सर्वथा वे चीनी आधिक्य से प्रभावित रहे। प्राचीन चीन के साम्राज्य के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के गैर चीनी क्षेत्रों के द्वारा इतने विभिन्न प्रकार की समस्याएँ प्रस्तुत की जाती थीं तथा वे स्वभाव में इतनी पृथक् होती थीं कि प्रशासन को उन्हें भिन्न भिन्न ढंग से सुलझाना होता था । गैर चीनियों की समस्याएँ चीनी सरकार एकरूपता से नहीं सुलझाती थीं। प्रत्येक मामले पर उसके गुणों के आधार पर विचार होता था। प्रत्येक समूह पर विचार उसकी विशिष्ट परम्पराओं तथा इतिहास के आधार पर होता था तथा प्रत्येक समूह के प्रशासन का संचालन उस स्तर में रुचि रखने वाले सरकार के सम्बन्धित संगठन के द्वारा किया जाता था। ता चिंग हुई तियन के आलेखों के अनुसार मंगोलों, मुसलमानों, तिब्बतियों का प्रशासन उपनिवेश विभाग (ली-फान-युआन) के द्वारा होता था। विभिन्न जनजातियों का प्रशासन सैनिक विभाग (पिंग-पू) को सौंपा गया था। विदेशी राष्ट्रों से सम्बन्धों का संचालन जिसमें यूरोप के राजतन्त्र भी सम्मिलित थे, संस्कार विभाग (ली यू) के स्वागत विभाग द्वारा किया जाता था।[3]

विश्व के बारे में चीनी धारणा

विभिन्न राजनीतिक इकाइयों के साथ चीनी सम्बन्धों को समझने के लिए प्राचीन चीन की विश्व संगठन के बारे में धारणा को समझना आवश्यक है। चीन के पुरातन अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध (हेन वंश से सुंग काल तक) असमानता पर आधारित थे। इस असमानता का मूल आधार मात्र यही नहीं था कि चीन अपने पड़ौसियों से सैनिक दृष्टि से बलवान था अपितु यह भी था कि चीनी जिन देशों के सम्पर्क में आये उनसे स्वयं को अधिक सभ्य मानते थे और यह उचित ही था। चीनियों की इस श्रेष्ठता की भावना का आधार शक्ति नहीं सांस्कृतिक था—जबकि पड़ौसी देशों में चीन की श्रेष्ठता का आधार सैनिक क्षमता के साथ सांस्कृतिक श्रेष्ठता था।

चुंग-कुओ (केन्द्रीय राज्य) पद अन्य उन लोगों पर चीनियों की श्रेष्ठता की भावना को स्पष्ट कर देता है जिन्हें वे ई अथवा बर्बर कहा करते थे। चीनियों के अनुसार उनका देश विश्व के मध्य में स्थित था तथा चारों ओर से बर्बर लोगों से घिरा हुआ था। जिनमें मान ई जुंग व ती दक्षिण, पूर्व, पश्चिम तथा उत्तर के थे। सामूहिक रूप से ये चार गैर चीनी जनजातियाँ सु-ई अथवा चार प्रकार के बर्बर कहलाते थे।[4] अतः अब चीनियों के द्वारा भौगोलिक स्थिति के आधार पर विदेशियों में अन्तर स्थापित करने की प्रथा को समझना कठिन नहीं है।

अपने दीर्घ इतिहास में चीनियों को कभी भी ऐसी जाति का सामना नहीं करना पड़ा था जिन्हें वे सांस्कृतिक दृष्टि से अपना समकक्षी मान लेते। यद्यपि समय-समय पर उन्हें सैनिक दृष्टि से श्रेष्ठ जातियों से हार माननी पड़ी थी। चीनियों ने जापान तथा कोरिया के प्रति वैसा ही अन्याय किया है जैसा उत्तरी अमेरिकियों ने मैक्सिको के विरुद्ध किया है-

3. तां-चिंग हुई-तियन (1890 का संस्करण) चुआन 12.

4. हार्वर्ड जर्नल ऑफ एशियाटिक स्टडीज, ग्रन्थ 6, पृष्ठ 137-140 में जे. के. फेयरबैंक तथा एस. वाई. तेंग का लेख 'ऑन दी चिंग ट्रिब्यूटरी सिस्टम' देखिए।

उन्होंने कोरिया व जापान को उन मामलों में कभी श्रेष्ठ नहीं माना है जिनमें वे किसी भी पश्चिमी अथवा भारतीय विद्वान को श्रेष्ठ दृष्टिगोचर होते हैं।

चीनियों की श्रेष्ठता का विचार निरंतर कई शताब्दियों के दौरान बना रहा है। उसके अधिकांश पड़ोसियों की तुलना में तथा चीनियों की अपनी श्रेष्ठता के बारे में दृढ़ विचार ने इस विचार को इस राष्ट्र के जन्म के साथ ही मजबूत बनाया। चीन की प्रारंभिक जाति शग पीली नदी के इर्द-गिर्द स्थित थी तथा इस पर सर्वदा उत्तर की घुमक्कड़ जातियों का प्रभाव पड़ा था। यह चाऊ काल के दौरान भी हुआ। पश्चिम के लोगों के साथ व्यापारिक तथा कूटनीतिक सम्बन्ध साहसी चीनियों ने हेन राजवंश के दौरान ही स्थापित कर लिये थे जैसा कि होम डब ने वर्णन किया है यह पूर्णतः संभव है कि रोम के सैनिकों ने एक दस्ते को प्राचीन लोयांग की राजधानी हेन के मध्य से ले जाया गया हो। हेनवंश का प्रमुख विस्तार अनेकों चीनी विजयों के पश्चात् दक्षिण की ओर हुआ जहां चीनियों ने अपने प्रदेश को चाऊ तथा चीनी काल से दुगना बना लिया (पृष्ठ 10 पर चाऊ से तांग तक साम्राज्य के विस्तार को देखिए) हेन काल में विस्तार के दौरान उत्थान व पतन हुए। कुबली खान के नेतृत्व में चीनी-मंगोल-अरब तथा फारसी लोगों के संयुक्त मोर्चे ने जब आज के स्वामी लोगों को यूनान से बाहर खदेड़ा तभी चीन आज भौगोलिक स्वरूप प्राप्त कर सका। मंगोल के बाद चीनी राजवंश मिंग के विदूषक नौ सेनापति चेंग हो ने भारी चीनी सेनाओं के साथ हिन्द महासागर तक आक्रमण किया। उसने ये प्रयास 1403 ई. से 1433 ई. तक किये जिसमें 60 जहाज 27000 आदमी सम्मिलित थे। उसने मलक्का व सीलोन पर औपचारिक आधिपत्य स्थापित किया तथा पूर्वी अफ्रीका पर अधिकार जमाया।

विभिन्न संसर्गों के परिणामस्वरूप चीनियों की कुछ मूल मान्यताएँ बन गईं। प्रथम यह कि विश्व के चार दिशाओं के बर्बर चार प्रकार के थे अतः उनके साथ पृथक्-पृथक् व्यवहार करना चाहिए। द्वितीयतः यह कि सभी बर्बर लोग चीनियों से निम्नतर थे क्योंकि वे चीनी जीवन-प्रणाली तथा विशेषतः वैयक्तिक तथा पारवारिक जीवन के बारे में कन्फ्यूशियस संहिता को समझने की बौद्धिक अथवा नैतिक क्षमता नहीं रखते थे। तृतीयतः यह बर्बर लोगों का अहोभाग्य था कि चीनी सरकार से सम्पर्क के कारण उन्हें इस महान संस्कृति को देखने का अवसर मिला तथा मनुष्य के महानतम् गुणों का विकास करने का मौका मिला तथा इस प्रकार चीन के गरिमा के प्रकाश में आलोकित होने का मौका लगा।

चीन के बाह्य सम्बन्ध चाहे कैसे ही क्यों न रहे हों चीन उन देशों में जो उसके नियंत्रण से परे थे तथा वे अन्य राज्य जो चीन के निकट थे तथा उसकी सुरक्षा के लिए आवश्यक थे तथा अन्य जो चीन के वास्तविक राजनीतिक व सैनिक नियत्रण के अन्तर्गत थे उनमें अन्तर करता था। यद्यपि चीन के विद्वान ऐसा प्रकट करते थे कि संपूर्ण देशों से चीन ही महत्त्वपूर्ण था तथापि वे दूरस्थ देश जिनसे चीन का सम्बन्ध औपचारिक था तथा जो चीन को मात्र सम्माननीय भेंट देते थे, में चीन की रुचि भी नाममात्र को थी जबकि निकटता वाले आश्रित व उपनिवेशों के समान देशों में यह अधिक थी।

चीन के आश्रित राज्यों की सरकार[5]

जब 1644 में मंचुओं ने चीन की गद्दी पर आधिपत्य किया तो उन्होंने विश्व

5. देखिए एच. एस-ब्रुनेट तथा वी. वी. हेगल्स्टोर्म का प्रेजेन्ट डे पॉलीटिकल [illegible]गेनाइजे[illegible] ऑफ चायना, शंघाई 1912, पृष्ठ 441-477, हमीह पाओ-चाओ [illegible] अ[illegible]ओ. बाल्टीमोर, इनर

संगठन की चीनी मान्यता को पूर्णतः स्वीकार कर लिया। दक्षिण तथा दक्षिण पश्चिम के देशों के साथ चिंग राजवंश ने उसी प्रकार के सम्बन्ध बनाये रखने की चेष्टा की। जबकि उत्तर पूर्वी प्रदेशों के साथ जहाँ से मंचू लोग स्वयं आये थे उन्होंने अपनी मंचू प्रणाली व दृष्टिकोण को बनाये रखा। चूँकि मंचू लोगों के संबंध मंगोलों के साथ तथा चीनी तुर्किस्तान के साथ चीन पर विजय से बहुत पहले से थे। मंचू तथा मंगोलों के बीच के संबंध इतने महत्वपूर्ण थे कि मंचू की केन्द्रीय प्रशासनिक व्यवस्था के लिए मंगोलियन अधिकारी थे।

1638 में जाकर मंचुओं ने एक उपनिवेश कार्यालय (ली-फान-युआन) की स्थापना की जिसका अधिकार क्षेत्र केन्द्रीय प्रशासित इकाइयों पर था जो फान अथवा सीमांतक प्रदेश या आश्रित प्रदेश कहलाते थे।[6]

मूल मंगोल व्यवस्था में चार प्रकार से सीमांतक प्रदेश थे जो फान माने जाते थे— मंगोलिया, सिंकिआंग, कोकोनोर तथा तिब्बत। चूँकि मंचूरिया के सीमांतक प्रदेश ने चीन पर विजय प्राप्त की थी, अतः औपचारिक राजनीतिक सिद्धान्त में यह मंचुओं के लिए चीन से हीन नहीं हो सकता था यद्यपि चीनी ऐसा नहीं मानते थे। मंचुओं के लिए 1907 तक मंचूरिया घर सा रहा। उसके बाद स्वयं मंचुओं ने यह प्रकट करना छोड़ दिया कि वे स्वयं चीन का शासन चला रहे थे तथा मंचूरिया का तीन पूर्वी प्रान्तों रूप में संगठन किया। 1884 में चीनी तुर्किस्तान सिंकिआंग (हसिंग चिआंग अथवा नवीन प्रान्त) कहलाया। उसी वर्ष कोकोनोर को चीनी प्रान्त के रूप में चिंघाई नाम से संगठित किया। फोरमोसा मिंग चीन के मंचुओं की विजय के दौरान उसी प्रकार बना रहा जिस प्रकार मुख्य चीन के साम्यवादी बनने के पश्चात् वह राष्ट्रवादी बना रहा है। एक वफादार मिंग ने जिसका नाम चेंग-चेंग-कुंग था तथा जो पश्चिमी नौसेना के इतिहास में कोक्सिंगा के नाम से जाना जाता है ने डचों को फारमोसा से बाहर निकाल तथा फारमोसा को मंचू-विरोधी राज्य बनाया जो 39 वर्षों तक बना रहा। अन्ततः 1683 में उसके उत्तराधिकारियों ने मंचुओं के साथ समझौता करके अपने अधिकार को समर्पित कर दिया। यह द्वीप सर्वप्रथम फुकिन प्रान्त का भाग बनाया गया जो 1895 से 1945 तक एक प्रान्त रहा तथा 1895 में कुछ सप्ताहों के लिए यह गणराज्य रहा। चीनियों के द्वारा स्थापित द्वितीय गणराज्य पहला गणराज्य बोर्नियों में कुछ समय के लिये अमेरिका संविधान के डच अनुवाद के आधार पर स्थापित किया गया। यह 1895–1945 तक जापान के आधिपत्य में रहा तथा 1945 के पश्चात् राष्ट्रवादियों का प्रान्त रहा। ये नये प्रान्त जब सीमाप्रान्तों में परिवर्तित किये गये तो उनका प्रशासन अन्य प्रान्तों के समान किया गया। अतः उनकी चर्चा औपनिवेशिक आश्रित राज्यों के नाम से नहीं की जानी चाहिये। (देखिए पृष्ठ 75) का मानचित्र जो मंचू साम्राज्य व उसके उपनिवेशों को दर्शाता है।

एशियन फ्रंटियर्स ऑफ चायना (अमेरिकन ज्योग्राफीकल सोसाइटी, सिरीज नं० 2, लंदन तथा न्यूयॉर्क-1940) एम. डब्ल्यु. विलियम्स द्रष्टव्य ग्रंथ। अध्याय 4, चेंग हो मेंग, द्रष्टव्य हनु चुंग-हाओ-आउट लाइन ऑफ चाइनीज पॉलिटिकल सिस्टम, चुंगकिंग 1943।

6 बुर्नेट एण्ड हेगलस्टोर्म द्रष्टव्य 160–161।
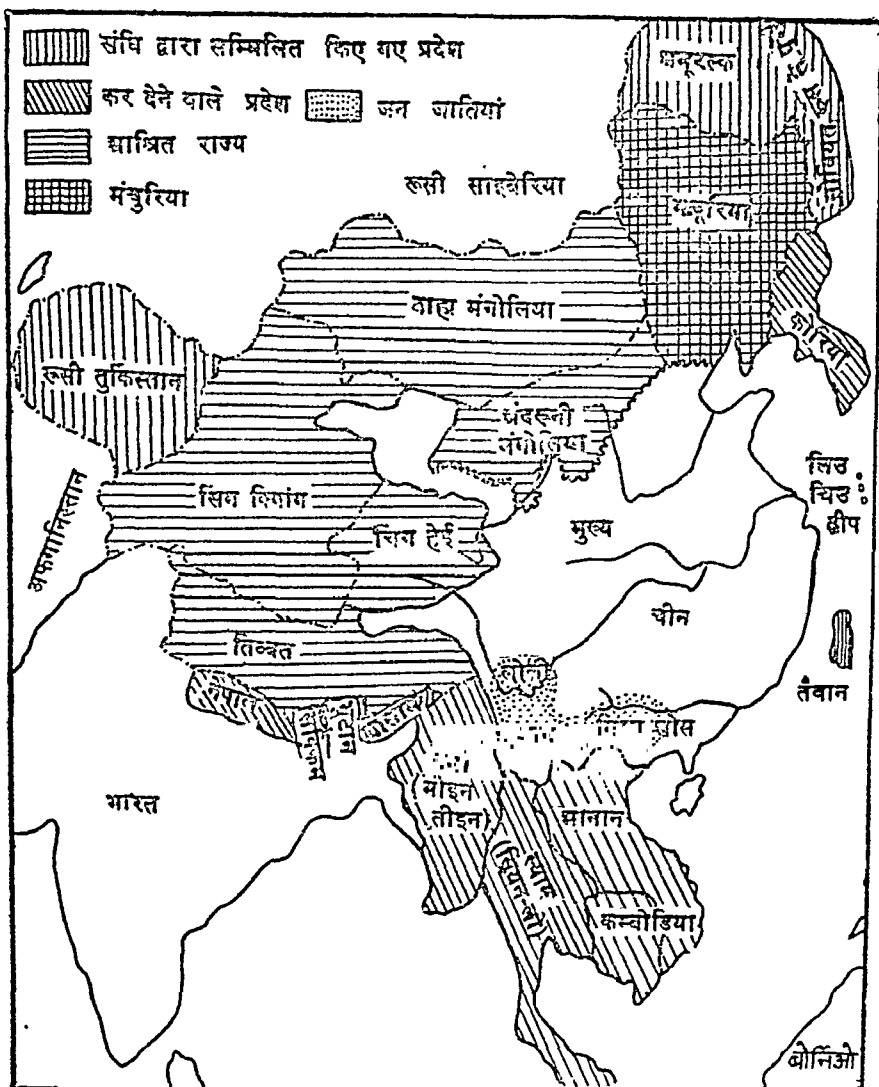
प्राचीन चीनी साम्राज्य (चिंग काल 1760) 18 वीं शताब्दी में मध्य में चीन की विजित प्रदेश कर देने वाले राज्य तथा आदि मानव जन जातियों का विस्तार

मंगोलिया–भौगोलिक तथा प्राशासनिक दृष्टिकोण से मंगोलिया सर्वदा दो भागों में विभाजित रहा-वाह्य मंगोलिया तथा अंदरूनी मंगोलिया। वाह्य मंगोलिया चार क्षेत्रों तथा 12 लीगों में उप-विभाजित था। इन लीगों में 16 जनजातियाँ रहती थीं जो 117 कबीलों में विभाजित थीं। अंदरूनी मंगोलिया चूंकि छोटा था अतः यह प्रत्यक्ष रूप से केन्द्रीय सरकार के अन्तर्गत था तथा 6 लीग, 23 जनजातियाँ तथा 48 कबीलों में विभाजित था।

मंगोलिया में स्थानीय शासन का संचालन मंगोलों के द्वारा होता था तथा उसमें चीन केन्द्रीय अधिकारी अधिक हस्तक्षेप नहीं करते थे। वास्तविक प्रशासनिक इकाइयाँ

लीग तथा कबीले थे। लीग कुछ ऐसे कबीलों से मिलकर बनती थी जिनका समान प्रजाति, इतिहास तथा परिस्थितियाँ होती थीं। प्रत्येक लीग का एक कैप्टन जनरल होता था जो हर तीसरे वर्ष कबीले के राजाओं द्वारा चुना जाता था। यह तृतीय वर्ष की बैठक स्वयं विभिन्न कबीलों से सम्बन्धित न्याय के मामलों, संपूर्ण लीग से सम्बन्धित आर्थिक समस्याओं, जनगणना करने जैसे प्राशासनिक मामलों के लिए होती थी। बाह्य मंगोलिया में कैप्टन जनरल का निर्वाचन मंचू सम्राट की पुष्टि से होता था। प्रत्येक लीग का कैप्टन जनरल उसी लीग का मुख्य सेनापति तथा साथ मुख्य प्रशासक भी होता था। कबीलों के राजा मुख्यत: वंशानुसार होते थे तथा राजाओं की सहायता के लिए सहायक अधिकारी होते थे।

इस स्थानीय प्राशासनिक नेताओं के अतिरिक्त मंचुओं ने 18वीं शताब्दी में बाह्य मंगोलिया के विद्रोह का फायदा उठाते हुए अपना एक मुख्य सेनापति गवर्नर नियुक्त किया जो उलियासुताई का गवर्नर कहलाया। मूलत: यह सैनिक पद था तथापि बाद में इसने राजस्व तथा नागरिक अधिकार भी हासिल कर लिये।

अंदरूनी मंगोलिया चूंकि चीन के निकट था अत: 17वीं शताब्दी के अन्त तक वह चीनी स्थानीय प्राशासनिक नियन्त्रण के अन्तर्गत रहा। मंचुओं ने अंदरूनी मंगोलिया के तीन प्रान्तों में मंचू सेनापति रखे। ये मंचू सेनापति चीन के मंचू साम्राज्य में तारतार-सेनापति कहलाते थे। जेहोल के लिए जेहोल नगर में, चहार के लिए कालगन में तथा सुईमुआन के लिए सुईमुआन चेन में तारतार-सेनापति थे।

सिंकिआंग—जिस प्रदेश का, अब सिंकिआंग कहा जाता है वह पहले चीनी तुर्किस्तान चीनी मध्य एशिया अथवा पश्चिमी भाषा में चीनी तारतारी कहलाता था। एक विशाल प्रदेश के रूप में यहाँ विश्व की अगम्य पहाड़ी श्रृंखलाएँ, विशाल रेगिस्तान, यारकन्द तथा काशगर जैसे ऐतिहासिक व्यापारिक नगर तथा संचन व उपजाऊ भूमि की ऐसी पट्टियाँ थीं जहाँ कोई भी फसल उगाई जा सकती थी। जनसंख्या की दृष्टि से यहाँ, मूल रूप वाले चीनी रहते थे जो कन्फ्यूशियसवाद को मानते थे। तुंगकन चीनी थे जो चीनी भाषाभाषी किन्तु मुस्लिम धर्म के थे, कौसोड्ड मुसलमान तुर्की भाषा बोलने वाले उधर तथा कजाक किर्गाज, मंगोल उजबेक तथा कुछ अन्य अल्पसंख्यक थे।

अधिकांश चिगं काल के दौरान संपूर्ण क्षेत्र एक सामान्य भौगोलिक पद इसी के अन्तर्गत आता था जो दो औपनिवेशिक क्षेत्रों-तिमन-शान-नान-लू (सेलिस्टियल शिखर के दक्षिण का प्रदेश) तथा तियन-शान-पेईलू (सेलिस्टिमल शिखर का उत्तर प्रदेश) कहलाता था। इस प्रदेश के प्रशासन के दौरान मंचुओं की मूल नीति मंगोल जनजातियों को बस जाने के लिए प्रेरित करना था। इस उद्देश्य से वे सभी महत्त्वपूर्ण स्थानों पर बड़े दस्ते में जाते थे, वहाँ परिवार को बसाते थे। इस क्षेत्र में उन्होंने समकालीन यूरोपियन व्यवस्था का अनुसरण करते हुए अपराधियों को यहाँ नवीन खेतों को जोत कर बंजर जमीन को उपजाऊ बनाने के लिए भेजने की नीति अपनायी। उत्तर तथा दक्षिण प्रदेश इली स्थित तारतार सेनापति के अन्तर्गत होते थे।[7]

इली का मुख्य कार्यालय 1762 में सम्राट चेइन-लुंग के द्वारा खोला गया था जिसमें नागरिक तथा सैनिक दोनों के कार्य निहित कर दिये गये थे। तारतार-जनरल की सहायता के लिए दो परामर्शदाता होते थे जो नागरिक मामलों की देखभाल करते थे तथा दोनों सर्किट के उपनिवासी होते थे। मंचू काल में तारतार जनरल के अधिकार में विशाल

7. दजांग चू 'वार एण्ड डिप्लोमेसी ऑवर इली 'दि चाइनीज सोश्यल एण्ड पॉलिटिकल साइन्स रिव्यू, ग्रंथ संख्या 3 अक्टूबर, 1936

सेना होती थी। चूँकि यह प्रदेश की सुरक्षा की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण था अतः अधिकांश सैनिकों को अपने साथ परिवार रखने की आज्ञा थी तथा ये सैनिक सेना के कर्तव्यों का निर्वाह करते हुए खेती भी कर सकते थे।

मंचू शासकों का नियन्त्रण दक्षिण सर्किट की तुलना में उत्तरी सर्किट पर भौगोलिक दृष्टि से निकटता तथा अधिक सजातीयता के कारण अधिक प्रभावशाली था। जनसंख्या के अधिकांश गैर चीनी अंशों पर उनके स्वीकृत मुखियाओं का नियन्त्रण होता था। चीनी इतिहास के राष्ट्रवादी काल तक सैकड़ों इस प्रकार के मुखिया चीनी सरकार द्वारा राजाओं के रूप में माने जाते थे। ये मुखिया यद्यपि वंशानुगत होते थे तथापि तारतार जनरल का उन पर नियन्त्रण होता था। दक्षिण भाग में अधिकांश लोग मुस्लिम थे तथा वे मंचू शासकों के प्रति अधिक सहनशील नहीं थे। यद्यपि औपचारिक रूप से यह प्रदेश भी मंचुओं के आधीन था किन्तु इनमें मुखियाओं का चुनाव स्वयं जनजातियाँ करती थीं तथा वे सत्ता का प्रयोग करते थे जिसमें मंचू अधिकारियों का हस्तक्षेप न्यूनतम होता था।

1870 में तुर्किस्तान याकूब वेग के अन्तर्गत स्वतन्त्र रहा। ब्रिटेन ने उसके साथ अनौपचारिक कूटनीतिक सम्बन्ध स्थापित करने का प्रस्ताव भी किया। किन्तु मंचूओं ने उसका विशेष स्वागत नहीं किया पर बाद में उन्हें दक्षिण से ब्रिटिश आक्रमण तथा उत्तर से रूसी आक्रमण की आशंका बढ़ गई। अतः उस क्षेत्र पर नियन्त्रण बढ़ाने के लिए 1884 में सिंकिआंग प्रान्त में तारतार जनरल के अधिकार क्षेत्र को बढ़ा दिया।

कोकोनोर मंचू शासन के अधिकांश भाग में कोकोनोर की चीनी भाषा में चिघाई कहलाता था। यह सिनिंग में प्रशासन अधिकारी (सिनिंग पेन शाहता चेन) के अन्तर्गत था, जिसका सेना तथा नागरिक मामलों पर नियन्त्रण था। वास्तविक प्रशासन स्वयं मंगोल तथा मुस्लिम स्थानीय अधिकारियों द्वारा होता था। मंगोलियन भाग मे 5 जनजातियाँ थीं। प्रत्येक कबीले का एक मुखिया होता था जो स्वयं 29 कबीलों में विभाजित होते थे। प्रत्येक कबीले का एक शासक राजा होता था तथापि मंगोलिया की तरह वे लीग में संगठित नहीं थे। मुस्लिम भाग 40 जनजातियाँ थी तथा प्रत्येक जाति का अपना मुखिया होता था।

तिब्बत : ईसा के पश्चात् चार तथा पाँचवीं शताब्दी ने ही तिब्बत ने चीन पर दूर तक आक्रमण किया। ताँग काल में तिब्बत के राजनीतिक संगठन बनाकर चीन से नियमित सम्बन्ध स्थापित किये। 13वीं शताब्दी में तिब्बत चीनी साम्राज्य का अंग बन गया तथा जब चीन से मंगोलों का पतन हुआ सो चीनी मिंग सम्राट ने अपने मंगोल पूर्वनीतियों का दावा स्वयं बनाये रखने का दावा किया तथा बाद में मंचुओं ने मिंग अधिकार को बनाये रखा। 1694 में चीन का तिब्बत में हस्तक्षेप निम्नतम रहा जबकि ल्हासा में धार्मिक धर्मनिरपेक्ष मामलों की वजह से संघर्ष उत्पन्न हुआ जिसमें चीन को हस्तक्षेप करना पड़ा।

मंचू चीनी सम्राट कांग इली ने सर्वोच्च आध्यात्मिक शक्तियाँ दलाई लामा को सौंपी तथा सभी अन्य शक्तियों के लिये उन्होंने तिब्बत में अपने दो अधिकारी नियुक्त किये—एक अन्दरूनी तिब्बत के लिए तथा एक बाह्य तिब्बत के लिए। प्रत्येक शाही अधिकारी की सहायता के लिये चार परामर्शदाता नियुक्त किये जाते थे जो स्वयं उसके द्वारा मनोनीत होते थे तथा मंचू चीनी सम्राट नियुक्त करता था अथवा तिब्बत सेवा के सैनिक अधिकारियों में से नियुक्त जिये जाते थे। स्वयं शाही अधिकारी चीनी सेना तथा तिब्बत सेना का सर्वोच्च अधिकारी होता था। परिणामतः कम से कम सैद्धान्तिक रूप से तिब्बत का सम्पूर्ण प्रशासन

जिसमें स्थानीय अधिकारियों की नियुक्ति, संचार के साधनों का नियन्त्रण, व्यापार व विदेश गमन के प्रमाणपत्र, लामा वंश के व्यय का हिसाव-किताव तथा कर संग्रह के कार्य सम्मिलित थे। मंचू चीनियों के अनुसार तिव्वत वटालियनों में विभाजित था (मिंग) जो 165 थे। प्रत्येक मिंग का मिंग कमांडर तीन वर्ष के लिए सम्राट द्वारा नियुक्त किये जाते थे। धार्मिक शक्तियाँ तिव्वत सरकार तथा चीनी सत्ता के द्वारा दलाईलामा तथा पंचेण लामा जो एक दूसरे से स्वतन्त्र थे, में निहित थी। दोनों सम्राट के अधिकारियों के अधिकार में थे। दो सौ वर्षो तक अधिकांश दलाईलामा दो अथवा तीन वर्ष की अवधि में ही पवित्र कुंडलियों तथा संस्कारों के द्वारा नियुक्त किये गये।

मंचुओं की औपनिवेशिक शक्तियाँ

प्राशासनिक आश्रित राज्यों के प्रति मंचूओं की मूलभूत नीतियाँ दो पहलुओं में दृष्टिगोचर होती हैं। प्रथम प्रवृत्ति है सहिष्णुता क्योंकि सरकार के मूलस्वरूप को बना रहने दिया गया था तथा उन पर मंचू चीनी अधिकारी का पर्याप्त कठोर नियन्त्रण रखा गया था। दूसरी प्रवृत्ति पृथकता की है— चीनी मंगोलों से पृथक थे, मंगोल मुसलमान तिव्वतियों से तथा तिव्वती चीनियों से पृथक थे अतः मंचू अपने प्रशासक का आधार विभाजन के साथ शासन को वड़ी आसानी से वना सके।[8] प्रत्येक आश्रित क्षेत्र की एक परम्परागत स्थानीय सरकार होती थी तथा नियुक्त अधिकारी पेकिंग पर निर्भर करता था। यद्यपि स्थानीय प्रशासन को पर्याप्त मात्रा तक स्वशासन के अधिकार प्राप्त थे तथापि शाही अधिकारी अथवा सैनिक अधिकारियों के अधिकार पेकिंग से नियंत्रित नहीं होते थे। मंचुओं के शासन का ढाँचा उस हद तक संवैधानिक स्वरूप वाला नहीं था जितना भारत में ब्रिटिश राज्य था क्योंकि सर्वोच्च सत्ता तथा स्थानीय सत्ता का विभाजन स्पष्ट नहीं था।

दुर्भाग्यवश मंचुओं ने औपनिवेशिक नीति चीनी गणराज्य से ली। जव केन्द्रीय सरकार किसी शक्तिशाली शासक को शासन करने भेजती थी तो वह स्थानीय मामलों में हस्तक्षेप करता था तथा कभी कठोर (उदार) नीति अपना कर चीनी सरकार का प्रभाव वढ़ाता था जवकि एक दुर्वल शासक न केवल चीनी सरकार की सत्ता को कमजोर वनाता था अपितु स्थानीय व्यवस्था तथा अनियमितता का कारण भी वनता था। कायरता तथा अव्यवस्था दैनिक जीवन की घटनाएँ वन जाती थीं।

मंचूकाल में औपनिवेशिक आश्रित राज्यों को शाही दरवार कोस्थानीय उत्पादन की वस्तुएँ भेजनी होती थीं। ये वस्तुएँ आधीनता की स्वीकारोक्ति के रूप में नियमित तौर पर भेजी जानीं थीं। यद्यपि इन वस्तुओं का मूल्य विशेष अधिक नहीं होता था किन्तु इसे उस प्रदेश को कोई सम्मानीय गणमान्य व्यक्ति ही सम्राट के दरवार में ले जाता था तथा इस प्रकार यह मंचू चीनी सर्वोच्चता का स्पष्ट प्रदर्शन था। इन क्षेत्रों के गणमान्य व्यक्तियों को समय-समय पर नियमित रूप से पेकिंग जाना पड़ता था। केन्द्रीय दरवार तथा स्थानीय गणमान्य लोगों के मध्य सम्वन्धों और अधिक निकटता वनाने के लिए मंचू कुलीन परिवारों तथा स्थानीय गणमान्य लोगों से विवाह सम्वन्ध भी किये जाते थे तथा युवा स्थानीय गणमान्य लोगों को विशिष्ट अवसरों पर शाही सेवकों (चेइन-चिंग-कुंग हसिग त्साओ) की उपाधि दी जाती थी ताकि वे सम्राट के प्रति अधिक वफादार वनें।

8. हसीह द्रष्टव्य पृष्ठ 336-338

चूँकि मंचू चीन में अल्पसंख्या में थे तथा उनकी सैनिक शक्ति चीन की तुलना में 1,400 थी अतः उन्हें विभाजन द्वारा शासन की नीति अपनानी पड़ी। इस नीति का मूल आधार आश्रित प्रदेशों से चीनियों का निष्कासन था ताकि एक लीग के द्वारा दूसरी लीग पर नियन्त्रण रखा जा सके। 1644 से 1911 तक सम्पूर्ण साम्राज्य की व्यवस्था में सभी शाही अधिकारी मंचू स्वयं ही थे। चीनियों तथा आश्रित क्षेत्रों के मध्य विचार-विनिमय व्यापार तक ही सीमित था। चीनियों के साथ परस्पर विवाह, चीनियों का वहाँ आवास शाही आदेश के द्वारा निषिद्ध था। उपनिवेशों में आवागमन निषिद्ध था तथा जब मंगोल विशेष अवसरों पर चीन में आते थे तो वे ऐसा निर्धारित मार्गों से ही कर सकते थे तथा उनके पासपोर्ट बार-बार देखे जाते थे। तिब्बतियों से कोई व्यापार न करने के कठोर आदेश थे। अंततः चीनियों ने मंचू अधिकारियों को घूस देकर भ्रष्ट बनाया तथा तिब्बत से अवैध व्यापार स्थापित किया।

न तो साम्राज्यवादी और न ही गणराज्य चीन एक सफल औपनिवेशिक नीति का निर्माण कर सके। चीनियों द्वारा अन्य जातियों के प्रति भेदभाव की नीति की साम्यवादी सत्ता में आने से पहले कटु आलोचना करते थे। चीनियों की इस अभिवृत्ति के लिए कुछ सीमा तक मंचूओं को उत्तरदायी बनाया जा सकता है जिन्होंने विभिन्न जातियों के मध्य दुश्मनी पैदा की ताकि विशाल चीन की विभिन्न प्रजातियाँ संगठित होकर शासन का विरोध न करें।

वर्तमान विश्व की राजनीति में आदिवासियों के क्षेत्र[9] ने जिन लोगों को पूर्णतः विस्मृत कर दिया है उनमें चीन के वे गैर चीनी आदिवासी भी आते हैं जो चीनियों के आगमन से पूर्व चीन में रहते थे। ये आदिवासी संख्या में हजारों थे तथा कुछ यूरोप की लघु राष्ट्रीयताओं से भी अधिक संख्या में थे। मात्र साम्यवादियों तथा प्रोटेस्टेन्ट धर्म प्रचारक ही उन पर ध्यान देते हैं। प्रोटेस्टेन्ट उन्हें अस्पताल की सुविधा व बाइबिल को लोकप्रिय बनाते हैं तथा साम्यवादी अपना प्रचार करते हैं। अधिकांश गैर चीनियों को बाद में अपने तुच्छ तथा एकांत पुराने क्षेत्रों को लौट जाना पड़ा जहाँ उनकी स्थिति आज भी दयनीय है। दरिद्रता, लज्जा, बीमारी, अंधविश्वास, लड़ाकूपन तथा अफीम के कारण उनकी जनसंख्या घटती गई है तथा वे अपने अज्ञान के कारण तरक्की नहीं कर पाये हैं।

इन आदिवासियों के प्रमुख स्थान वर्तमान में दक्षिण-पश्चिम चीन में है। शताब्दियों पूर्व वे चीनियों द्वारा वर्तमान दक्षिण चीन में भागस्ते डेल्टे के परे खदेड़ दिये गये थे। उनका मूल निवास स्थान कुछ स्थानों के नाम से प्रकट होता है जैसे चीन के क्वांगतुंग तथा क्वांग्सी प्रान्त नुस नष्ट राज्य का संकेत करते हैं जिसे चीनियों ने विजय के पश्चात् पूर्व व पश्चिम क्वांग में विभाजित कर लिया था। ठीक उसी प्रकार जैसे अमेरिका में मेनहरू, कनेक्टीकर तथा मैसाचूसेट्स उन प्रदेशों में पहले रहने वाले आदिवासियों का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं तथापि अब कोई अमेरिकी इंडियन शासन में दृष्टिगोचर नहीं होते हैं। इसी प्रकार ये पूर्व-चीनी नाम ऐतिहासिक विवरणों के आधार पर चीनी युद्धों का ब्यौरा प्रस्तुत करते हैं। आदिवासियों के अधिकांश भाग को चीनियों ने आत्मसात् कर लिया। उनके कुछ

9. बुर्नेट तथा हेगल स्टोर्म द्रष्टव्य पृष्ठ 438-339 चेन हेन, शेंग फ्रंटियर लैंड सिस्टम्स इन साउदर्न मोस्ट चायना, न्यूयार्क 1949, ची-युन-शीह हुआन-चाओफेन-यू माओ-लुह (हिस्ट्री ऑफ फ्यूडल ट्राइब्स ऑफ दि चिंग डाइनेस्टी, चेकिआंग, 1845।

अवशिष्ट अंश ही हैं, यूनान क्वीचों क्वांग्सी तथा श्चुआन के ऊँचे पहाड़ों में रहते हैं तथा अपनी पृथक् भाषा बोलते हैं।

मंचू काल में इन गैर चीनी लोगों ने सीमांत प्रदेश के स्थानीय शासन में चीनियों को बड़ा परेशान किया। इन आदिवासियों के रीतिरिवाज तथा भाषा चूँकि भिन्न थी अतः वे हमेशा चीनियों से संघर्षरत रहे तथा इसी प्रकार चीनियों ने भी निरंतर उनकी भूमि तथा व्यापार पर अधिकार कर इस संघर्ष को बढ़ाया। इन आदिवासियों के प्रति चीनियों का दृष्टिकोण निर्दय तथा घृणापूर्ण था। उन्होंने सदा आदिवासियों का शोषण किया। तथापि जब ये आदिवासी एक बार चीनी संस्कृति, शिक्षा तथा चीनी पारिवारिक व्यवस्था में आत्मसात् हो गए तब उनके साथ किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाता था। मात्र गैर-चीनियों का दमन किया जाता था। प्राचीन काल में चीनी सत्ता प्रजातिवाद का कठोरतापूर्वक पालन करती थी। चीनी प्रणाली मूल आधार भौगोलिक स्थिति जिसके आधार पर ये लोग मिआओ, शान तथा लोलो कहते थे। मिआओं, क्वांग्सी, क्वीचौ तथा श्चुआन के सीमा क्षेत्रों में बसे थे, ताए यूनान के दक्षिण तथा पश्चिम भाग में थे तथा लोलो श्चुनान तथा यूनान के पहाड़ों पर रहते थे।

यद्यपि ये आदिवासी चीनी क्षेत्र में निवास करते थे तथापि इन पर चीनी कानून व प्रशासन लागू नहीं होता था। शताब्दियों तक उनकी अपनी आदिवासी सरकारें रहीं तथा उन्होंने स्वयं अपने शासन का संचालन किया। जहाँ सम्भव था वहाँ चीनियों ने आत्मसात् बहिष्कार तथा देशनिकाले की नीति अपनायी किन्तु जहाँ गाँव अत्यधिक गरीब थे, पहाड़ बहुत ऊँचे थे, पहाड़ व घाटियाँ बहुत दूर थीं तथा जहाँ आदिवासियों को पकड़ना, मारना अथवा उन्हें समाप्त करना सम्भव नहीं था वहाँ चीनियों ने विभाजन और शासन की नीति को अपनाया। उन्हें संतुष्ट करने के लिए कभी-कभी सरकारी पदवी भी प्रदान की जाती थी। मंचू शासन काल के दौरान जनजातियों के विभिन्न सरदारों के लिये तृतीय से सातवें क्रम की सरकारी उपाधियाँ नियमित की गई थीं, जैसे—हसुआन-वे-शीह।

आदिवासी न केवल चीनी दमन व लापरवाही का ही शिकार होते थे अपितु स्वयं उनके सरदार भी अत्याचारी होते थे। आदिवासी सरदारों को अपने लोगों पर असीम शक्तियाँ प्राप्त थीं तथा साथ ही चीनी संस्कृति के दुर्गुणों जैसे जुआ खेलने, अपव्यय, नशेबाजी तथा मादक द्रव्यों के सेवन से भी भ्रष्ट होते थे।

1726 में चीनियों तथा आदिवासियों के मध्य संघर्ष गम्भीर हो गया। परिणामतः वायसराय ओ-एर-ताई ने अनजातीय क्षेत्रों को नियमित चीनी प्राशासनिक जिलों में सम्मिलित कर उन्हें व्यवस्थित शासन व्यवस्था के अन्तर्गत लाने का प्रस्ताव किया। इस प्रक्रिया को 'आदि जिलों को नियमित प्रशासन के अन्तर्गत लाने' की प्रक्रिया (काई-तू-क्यू-लियू) कहा गया, जिसका कठोरतापूर्ण ढंग से पालन किया गया।[10] कई मामलों में सेना की सहायता भी ली गई तो भी आने वाले पचास वर्षों में लगभग 50 नये चीनी प्रान्तों का निर्माण मूल आदिवासी क्षेत्रों में से किया गया। ये नवीन संगठित क्षेत्र वंशानुगत सरदारों द्वारा शासित थे जो स्थानीय प्रीफेक्ट (तू-फू), स्थानीय उप-प्रिफेक्ट (तू-चाऊ) अथवा स्थानीय मेजिस्ट्रेट (तू-हसीम) कहलाते थे। इन क्षेत्रों का शासन सामान्य स्थानीय क्षेत्रों के समान

10. चैंग द्रष्टव्य पृष्ठ 548-561।

ही होता था। इन सुधारों के पश्चात् भी बड़े पैमाने पर ऐसे क्षेत्र व जनता थी जो कभी भी चीनी शासन-व्यवस्था के अन्तर्गत सम्मिलित नहीं की गई तथा जो आदिवासी सरदारों के अन्तर्गत ही रही। अधिक दूर रहने वाली जनजातियाँ सैद्धान्तिक रूप में सैनिक विभाग के अन्तर्गत थीं किन्तु उनका शासन से वास्तविक सम्बन्ध मात्र सांकेतिक आधिपत्य बनाए रखना था जिसके लिए स्थानीय सरकार स्थानीय उत्पादन की वस्तुओं को नियमित समय पर निर्धारित मात्रा में पेकिंग भेजते थे अन्यथा शासन इन सरदारों द्वारा चलाया जाता था।

राष्ट्रों का कन्फ्यूशियस परिवार-मंडल[11]

चीन से बाहर सभ्य व शक्तिशाली राज्यों के साथ चीन पृथक प्रकार के सम्बन्ध रखता था। चीन अपने सर्वव्यापी साम्राज्य के विश्वास का प्रचार करने के लिए सभी प्रकार की तरकीबों जैसे राजनीतिक संघर्ष, प्रचार, राजनीतिक उत्सव आदि का आयोजन करते थे। चीन से सम्पर्क स्थापित करने के सर्वप्रथम अन्य राज्यों द्वारा चीन को सम्मान प्रदान करना पहली शर्त होती थी।

सभ्य राज्य जैसे कोरिया, जापान तथा बाद में यूरोपीय देशों से चीनी पर्याप्त अच्छा व्यवहार रखते थे। सिद्धान्ततः इस व्यवस्था के लिए भी वे यह तर्क देते थे कि चीन की श्रेष्ठता के कारण यदि कोई राज्य इतना सभ्य था कि वह चीन से सम्पर्क स्थापित करे तो उसमें इस तथ्य को जानने की क्षमता भी होनी चाहिए कि उनकी सभ्यता से चीन की सभ्यता कहीं अधिक श्रेष्ठ है। इसके विपरीत यदि कोई व्यक्ति अपनी संस्कृति की तुलना में चीनी संस्कृति की श्रेष्ठता देखने में असमर्थ रहता था तो वह प्रकटतः नैतिक दृष्टि से तथा राजनीतिक दृष्टि से चीनियो से सम्पर्क स्थापित करने के योग्य नहीं था तथा जब तक 1850 में इंग्लिश तथा फ्रांसिसी सेनाओं ने पेकिंग पर अधिकार कर ग्रीष्ममहल को नहीं जलाया, चीन ने इस दावे को बनाये रखा। पुनः जब 1900 में इंग्लिश तथा फ्रांसिसियों ने अमेरिका, जापान, जर्मनी, रूस तथा इटली के साथ चीन को हराया तब चीनियों ने वस्तुतः यह स्वीकार किया कि छोटे अस्त्र तथा मशीनगन भी सभ्यता की उतनी ही प्रतीक थी जितनी चीन के औपचारिक उत्सवों का आयोजन तथा पूर्वाग्रहों से पूर्ण उनके शास्त्रीय निबंध थे।

सुदूरपूर्व के पश्चिमी इतिहासकार 19वीं शताब्दी में चीनी दरबार की अनभिज्ञता तथा पिछड़ेपन की ओर ध्यान बड़ी तत्परता से आकर्षित करते हैं। तथापि वे चीनी कन्फ्यूशियसवाद पर आधारित राष्ट्रों का कन्फ्यूशियस के परिवार जैसी उस अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था की उपेक्षा करते हैं जो पश्चिमी देशों की अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था से कुछ शताब्दी पुरानी थी तथा जो यदि अत्यधिक नहीं तो कम से कम उतनी

11. देखिए एम. फ्रेडरिक लेल्नन, कोरिया एण्ड दि ओल्ड आर्डर्स इन ईस्टर्न एशिया बेटनरोग 1945, फेयर बैंक एण्ड त्सेंग, द्रष्टव्य पृ. 135-246 जे. के. फेयरबैंक ट्रीब्यूटरी ट्रेड एण्ड चायनीज रिलेशन्स विद दि वेस्ट' फार ईस्टर्न क्यारटर्ली, ग्रंथ। पृष्ठ 129-149, एच. बी. मोर्स दि इंटरनेशनल रिलेशन्स ऑफ दि चाइनीज एम्पायर, लंदन 1918, ग्रंथ 11, पृष्ठ 340-341, चेंग द्रष्टव्य पृ. 563-567, हुआ ची-युन चाइनीज फन्टियर्स ता-चिंग हुई तियन (1908 संस्करण) चुआन 39, 18वीं व 19वीं शताब्दी में चीन के द्वारा पश्चिमी भाग में प्राप्त विजयों का वर्णन सम्राट द्वारा प्रकाशित रिकार्ड में प्राप्त होता है (1700-1765 में जुंगरिया विजय का सरकारी विवरण) 100 पुस्तकें फू-हेंग द्वारा संपादित, (1855 से 1883 में कंसू तथा चीनी तुर्किस्तान में मुसलमानों पर विजय का सरकारी वर्णन), 1896, 320 पुस्तकें ली पिउ-चैन द्वारासंपादित।

सफल अवश्य रही थी जितनी पश्चिमी देशों की व्यवस्था थी। किसी राजनीतिक प्रघटना की उसके अन्तिम समय में आलोचना करना सरल है तथा प्रायः विदेशी दर्शक ऐसी संस्थाओं के उस समय के स्वरूप की प्रशंसा करने में असफल रहते हैं जो उसको अपने चरमोत्कर्ष, गौरव व शक्ति के समय रहा होगा।

चीन के राष्ट्रों का कन्फ्यूशियस परिवार केन्द्र में चीन को तथा उन सभ्य राज्यों को निहित करता था जो चीन से कूटनीतिक सम्बन्ध स्थापित करने के योग्य थे—यहाँ इसका तात्पर्य उन राज्यों से था जो चीन को सम्मान प्रदान करते थे। यह अन्तर्राष्ट्रीय संस्था पर्याप्त सीमा तक व्यवस्था के लिए जिम्मेदार थी। यह वाणिज्य व्यापार को बढ़ावा देती थी तथा सांस्कृतिक आदान-प्रदान को संभव बनाती थी। यह व्यवस्था ईसाई राजतन्त्रों द्वारा गैर इसाई राज्यों के किये जाने वाले शोषण के समान नहीं थी क्योंकि राष्ट्रों का कन्फ्यूशियस परिवार आंतरिक व अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था को बनाये रखने के साथ-साथ पर्याप्त सीमा तक स्वायत्तता भी प्रदान करता था। चीन तथा आश्रित राज्यों के परस्पर संबंध को पश्चिमी शब्दों में व्यक्त करना संभव नहीं है। जिस प्रकार पेकिंग तथा सिओल में अमेरिकी कूटनीतिज्ञ कोरिया में चीन की शक्ति की परिभाषा व विवेचना करने में असफल रहे, क्योंकि यह शक्ति ऐसी थी जो चीन के मुताबिक उसके किसी प्रकार का कर्तव्य या उत्तरदायित्व नहीं छोड़ती थी। इन संबंधों के लिए निकटतम पश्चिमी पद शक्तिशाली देश के लिये 'संप्रभु' तथा आश्रित राज्य के लिये 'आश्रित राज्य' है जो मूल चीनी पदों के करीब के हैं।

संप्रभु व आश्रित राज्य का संबंध चीनी व्यवस्था में हेन राजवंश के काल में चीन तथा दक्षिण-पूर्व एशिया में विद्यमान था। तथापि सम्मानपूर्ण भेंट देने की प्रथा विदूषक नौ-सैनिक चेंग हो के शोषण के पश्चात् ही पड़ी थी। मिंग काल में जापान तथा फिलीपिन्स तक को आश्रित राज्यों की सूची में गिना गया था। मंचुओं ने प्रारम्भ में चीन सम्बन्धित सभी राज्यों को आश्रित राज्यों की श्रेणी में रखना चाहा किन्तु बाद में धीरे-धीरे दबाव के कारण अथवा अधिक व्यावहारिकता के कारण 'व्यापारी राज्यों' की एक नयी श्रेणी का विकास करना पड़ा। इस श्रेणी में जापान फिलीपीन्स, कम्बोडिया, स्पेन, हॉलैंड तथा जावा भी सम्मिलित थे तथा प्रतिसंतुलन को बनाये रखने के लिए 1899 के ता–चिंग–हुई–तिन्न की सूची में कोरिया लियुचियु का राज्य (जो अब जापान में रियूक्यू के नाम से मिला लिया गया है) अनाम टोंगकिंग, लाओस, स्याम, सुलु की सल्तनत (जो स्पेन व हॉलैंड के मध्य विभाजित थी) तथा बर्मा को आश्रित राज्य दर्शाया गया। राष्ट्रों के कन्फ्यूशियस परिवार में चीन के संरक्षण तथा अन्य आश्रित राज्यों के मध्य विभिन्न शताब्दियों के दौरान परिवर्तन होते रहे। यहाँ तक कि एक ही समय विभिन्न राज्यों के साथ संबंध में भी भिन्नता थी। जैसे चीन के साथ कोरिया तथा अनाम के संबंध बर्मा अथवा सुलू की तुलना में निकट थे। 1882 में स्याम ने चीन से अपने भेंट देने के औपचारिक सम्बन्ध तोड़ लिये तथा उसके बाद की दशाब्दी में ब्रिटेन ने बर्मा पर तथा फ्रांस ने अनाम-टोंगकिंग तथा लाओस पर अधिकार कर लिया।

चीन की यह श्रेष्ठता तथा आधीनता की व्यवस्था इतनी दृढ़ थी कि चीनियों ने ब्रिटेन के पहले कूटनीतिक मंडल को भेंट लाने वाला एक समूह समझा था। प्रारम्भिक यूरोपियन मिशन्स ने चीनियों से अपने सम्पर्क तोड़ने की तुलना में इस प्रकार औपचारिकता

निभाना उचित समझा। पुर्तगाली, डच तथा पापेसी के प्रतिनिधि ने चीनी सम्राट के सम्मुख आधीनता प्रकट करने वाली औपचारिक रस्म को इस व्यावहारिक मान्यता के आधार पर निभाया कि पेकिंग की जाने वाली किसी रस्म का असर यूरोप की वास्तविक स्थिति पर नहीं पड़ता था तथा यदि चीनी इतने बेवकूफ थे कि वे स्वयं को विश्व का स्वामी समझते थे तो उन्हें और बेवकूफ बनाया जाना चाहिए। रूसियों ने इस समस्या का समाधान समान आधार पर किया। उन्होंने चीनी संसार के सम्मुख अपने दूतों द्वारा आधीन व्यक्तियों के समान झुक कर चलना स्वीकार किया बशर्ते कि चीनी दूत जब कभी रूस के जार के सम्मुख प्रस्तुत होगा तो वहाँ भी इसी प्रकार की औपचारिकता का निर्वाह करेगा (यद्यपि चीनियों की मंशा रूस को दूत भेजने की कभी नहीं रही)।

राष्ट्रों के कन्फ्यूशियस परिवार मंडल के अन्तर्गत कूटनीतिक संबंधों का व्यावहारिक तरीका अधीनता मानने के उन उत्सवों से भरा होता था जिनका निर्धारण परम्परागत संस्कार करते थे। ये विषय उन सूक्ष्म से सूक्ष्म व्यवस्थाओं का वर्णन भी करते थे जो एक सम्मानपूर्ण भेंट लाने वाले राज्य के प्रतिनिधियों को अपनानी पड़ती थीं। चीन किस प्रकार उन देशों पर अपनी सर्वोच्चता तथा सम्राट को उनका स्वामी घोषित करेगा इस बारे में भी विस्तृत व्यवस्थाएँ थीं। भेंट लाने वाले मंडलों को नियमित समय पश्चात् आना होता था। लिउशिऊ वार्षिक, कोरिया के लोग चार वर्ष में, अनाम दो वर्ष में, स्याम तीन वर्ष में, सुलू पाँच वर्ष में तथा बर्मा दस वर्ष में एक बार ये भेंट भेजते थे। इन मंडलों के लिए आगमन के मार्ग भी निर्धारित होते थे। कोरिया के दूत चीन साम्राज्य में फेंगुआंगचेंग से, लिउशिऊ के फूचौ से, अनाम के क्वेलिन से, स्याम के कैंटून, सुलू के अमोय तथा बर्मा के युनानफू से आते थे।

जब ये भेंट लाने वाले मंडल चीनी क्षेत्र में पहुँच जाते थे तो उस क्षेत्र का वायसराय यह सूचना शाही दरबार को भेजता था तथा सपूर्ण रास्ते में चीनी उनके साथ जाते थे। चीनी भाषा में लिखे झंडे आने वाले मंडल के देश व उसके आने का उद्देश्य देखने वालों को बताते थे। जब यह मंडल पेकिंग में पहुँचता था तो उसे संस्कार विभाग को इस आशय का एक प्रार्थना-पत्र देना होता था कि उस मंडल के प्रमाणपत्रों की जाँच की जाये। इस जाँच में दूत के प्रमाण-पत्र की पूरी खोजबीन की जाती थी तथा उसके द्वारा लाई गई भेंट का सतर्क निरीक्षण किया जाता था।

स्वयं दूत को दरबार में होने वाली रस्म का बड़े पैमाने पर अभ्यास कराया जाता था। यह रस्म अविश्वसनीय ढंग से शान-शौकत वाली होती थी जिसे को-ताउ कहते थे जिसमें दूत को सम्राट के सम्मुख अपने देश की अधीनता को व्यक्त करने के लिए तथा उसे विश्व का स्वामी मानने के लिए घुटनों पर झुककर तीन बार अपने माथे से भूमिस्पर्श करना होता था। यह रस्म हो जाने के पश्चात् उस दूत को सम्राट की उपस्थिति में दावतें दी जाती थीं। वह तथा उसके अन्य अधिकारियों का शान-शौकत पूर्ण मनोरंजन किया जाता था तथा उसके राजा के लिए तथा स्वयं उसके लिए विभिन्न भेंटे बदले में दी जाती थी। कुछ सीमा तक निजी खरीद-फरोख्त तथा स्थान दर्शन की भी सुविधा दी जाती थी। कूटनीतिक समूह की सुरक्षा के लिए, चीन में निवास के दौरान कड़ी प्रतिबंध की व्यवस्था होती थी। प्रत्येक देश द्वारा दी जाने वाली भेंट की विभिन्न वस्तुओं का बाकायदा उल्लेख किया जाता था। उनमें प्रायः स्थानीय उत्पादन होते थे जो चीनी राजकोष के दरबार के लिए

विशेष महत्त्व के नहीं होते थे। बहुमूल्य उपहार सम्राट के जन्म-दिन, वयस्क होने पर तथा विवाह जैसे महत्त्वपूर्ण अवसरों पर दिये जाते थे तथा ये आश्रित राज्यों की वफादारी के द्योतक माने जाते थे। इन उपहारों के बदले में प्रायः उतने ही मूल्य के उपहार आश्रित राज्य के शासक तक लाने वाले मंडल के सदस्यों को दिये जाते थे। यहाँ यह कहा जा सकता है कि चीन के म्यूजियम इसी व्यवस्था के कारण अधिक सम्पन्न हैं। यूरोपियन घड़ियों का एक अभूतपूर्व संग्रह, जो विश्व में और कहीं अलभ्य हैं, इस देश के शाही महल में सुरक्षित है।

इस भेंट देने की व्यवस्था के माध्यम से राष्ट्रों के कन्फ्यूशियस परिवार में कूटनीतिक सम्बन्ध संचालित होते थे। इस राजनीतिक रस्म में सम्मिलित होने व भेंट देने के बदले में चीन उस देश की मान्यता व सुरक्षा का आश्वासन देता था। कभी-कभी यह आश्वासन पर्याप्त व्यावहारिक होता था क्योंकि चीन समय-समय पर अपने आश्रित राज्यों की सहायता के लिए थल सैनिक व नौ सेना भेजता था तथा कभी-कभी तो चीन के हस्तक्षेप की धमकी ही किसी बाह्य शक्ति द्वारा आश्रित राज्य पर आक्रमण करने से रोकने के लिये पर्याप्त होती थी। इस व्यवस्था से चीन ने न केवल अपनी सीमाओं को सुरक्षित बनाया अपितु चीनी सम्राटों ने अपनी जनता के सम्मुख अपने सम्मान को भी बढ़ाया। इस व्यवस्था से सामान्य तथा बौद्धिक दोनों प्रकार के चीनी लोग यह विश्वास करने लगे कि उनका शासक विश्व का शासक था।

राज्यों को स्वीकारने की यह प्रथा बड़ी विचित्र थी जिसे अन्तर्राष्ट्रीय विधि की भाषा में "कूटनीति मान्यता' तथा पश्चिमी देशों के राष्ट्रीय कानून की भाषा में 'संवैधानिक औचित्य' को स्वीकारना कहा जा सकता है। चीनी सम्राट के द्वारा किसी नवीन शासक को मान्यता देने का अर्थ चीन के अन्य आश्रित राज्यों द्वारा भी उसे मान्यता दे देना होता था तथा साथ ही स्वयं उसके देश में उसकी सत्ता को नैतिक संरक्षण व औचित्य प्राप्त हो जाता होगा। प्रायः चीनी उन देशों से अपनी मान्यता वापिस ले लेते थे जिनके शासक अत्याचारी थे अथवा जिन्होंने अपना पद क्रान्ति, वध अथवा अन्य अनैतिक साधनों से प्राप्त किया था। कभी-कभी चीनी सेनाएँ वास्तविक व उचित शासक को उसका अधिकार दिलवाने के लिए हस्तक्षेप भी करती थीं। स्वयं मान्यता की रस्म बड़ी जटिल होती थी। इच्छुक राज्य को चीनी सम्राट के अनुग्रह की प्रार्थना के लिए एक प्रतिमण्डल भेजना होता था। इस मण्डल की जाँच पेकिंग में की जाती थी। जहाँ पर्याप्त जाँच-पड़ताल करने के पश्चात् सम्बन्धित राज्य की प्रार्थना को स्वीकार या अस्वीकार किया जाता था। यदि चीनी दरबार उस राज्य की प्रार्थना को स्वीकार कर लेता था तो उस राज्य को चीन का एक दूत भेजा जाता था। यह दूत या तो स्वीकृत पत्र या मान्यता की पुष्टि करने आश्रित राज्य को भेजा जाता था। वहाँ उस दूत का बड़ा स्वागत-सत्कार किया जाता था तथा उसे चीन से लाये गये उपहार के समकक्ष उपहार भेंट किये जाते थे। चीन के दूत के चीन लौट आने के पश्चात् आश्रित राज्य का शासक चाहे तो एक दूसरा मिशन चीनी शासक को धन्यवाद देने हेतु भेज देता था। इस प्रकार तीसरी बार भी उत्सव व उपहार का आदान-प्रदान होता था।

यह भेंट देने की व्यवस्था न केवल कूटनीतिक सम्बन्धों की स्थापना व उसका संचालन करती थी अपितु यह अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का संचालन भी करती थी। चूंकि चीन में परम्परागत रूप से विदेशियों के साथ व्यापार को बढ़ावा नहीं दिया जाता था अतः वे कभी-

कभी चीनी सीमाओं से गुजरने के लिए भेंट देने वाले मण्डल का रूप धर लेते थे। इतिहासकारों को यह सन्देह है कि हेन सम्राट के काल में कोई आर्मीयर चीन में अपने देश का प्रतिनिधि बन कर चीन के सम्पन्न सिल्क के बाजार में व्यापार करने में सफल हुआ होगा।

जो मिशन बड़े पैमाने पर व्यापारियों तथा सामान को लेकर चीन आते थे उनके व्यापारिक उद्देश्य स्पष्ट होते थे क्योंकि इस सामान को नियमित व्यवस्था के अन्तर्गत लगने वाली चुंगी से बचाकर ले जाया जा सकता था। यद्यपि नियमानुसार इन मण्डलों के साथ आने वाले व्यापारियों को अपने सामान पर चुंगी देनी चाहिए तथापि इसके अपवाद घटित होते थे। स्वयं दूत अपने निवास स्थानों पर अपने नाम पर व्यापारियों को सामान बेचने का अधिकार दे सकते थे जिस पर पांच दिन तक कोई चुंगी नहीं लगती थी। किन्तु यह सब चीनी अधिकारी की देखरेख में होता था तथा यह अधिकारी उस दूत की खरीद फरोख्त के लिए भी ऐजेन्ट बन जाता था। तथापि अधिकारियों की मुट्ठी गरम करने पर व्यापार बड़ा अच्छा हो जाता था। विदेशी राजदूत चीन में हथियार, इतिहास की पुस्तक, एटलस तथा भौगोलिक पुस्तकें नहीं ले जा सकते थे तथापि इन प्रतिबन्धों से व्यापार में किसी प्रकार की रुकावट नहीं आती थी। आश्रित राज्यों की इस प्रकार का सम्बन्ध बनाये रखने की इच्छा खासतौर पर सुलू की सल्तनत जैसे दूरस्थ राज्यों के सन्दर्भ में इस बात का प्रमाण है कि इस व्यवस्था से बड़े पैमाने पर व्यापार सम्बन्धी लाभ प्राप्त होते थे।

इस वर्णन से यह स्पष्ट हो जाता है कि चीन और आश्रित राज्यों के सम्बन्ध परस्पर लाभ के होते थे। ये रिवाज पर आश्रित थे, कानूनी समझौते पर नहीं। इन सम्बन्धों का आधार कोई संविद या समझौता नहीं होता था। एक पश्चिमी ईक्षक ने इस स्थिति का 1883 में इस प्रकार वर्णन किया—

"संयुक्त राज्य व आश्रित राज्य के मध्य सम्बन्ध का आधार जहाँ तक कानूनी भाषा का प्रश्न है इच्छा होता था। यह इच्छा से प्रारम्भ होता था, इच्छा पर रहता था तथा यह माना जा सकता है कि इच्छानुसार इसका अन्त भी किया जा सकता था। क्योंकि कोई भी पक्ष किसी भी प्रकार के वायदे से बाध्य नहीं था तथा परम्परागत रस्मों को तोड़ने के बावजूद उस पर किसी समझौते के उल्लंघन का आरोप नहीं लगाया जा सकता था।"[12]

चीन की नीतियाँ अपने उपनिवेशों के प्रति आश्रित राज्यों से भिन्न थीं। इन आश्रित राज्यों में न तो चीन दूतों की नियुक्ति करता था (संकट काल अपवाद थे जैसे 1880 में कोरिया में हुआ) और न ही करारोपण नवीन, विधियों का निर्माण अथवा अधिकारियों की नियुक्ति करता था।[13]

आन्तरिक व बाह्य साम्राज्य का विच्छेद

पेकिंग से बाहर से देखने पर चीनी साम्राज्य विश्व संगठन के समान दृष्टिगोचर होता था किन्तु 19वीं शताब्दी में इसका विभाजन हुआ। चीन की दृष्टि में चीन आश्रित राज्यों से उसी प्रकार घिरा हुआ था जिस प्रकार एक परिवार का मुखिया परिवार के सदस्यों से घिरा रहता है। इस विश्व संगठन को बांधने वाला सूत्र सामान्य सांस्कृतिक रुचियाँ थीं शक्ति, अथवा कानूनी दायित्व नहीं थे। चीनियों में श्रेष्ठता की भावना का

12. जी जेमियसन 'दि ट्रिब्यूटरी नेशन्स ऑफ चायना' दि चायना रिव्यू (अक्टूबर, 1883), पृ. 95
13. टी डिनेट अमेरिकन्स इन ईस्टर्न एशिया, न्यूयॉर्क 1922, पृ. 422

विकास मात्र कल्पना-जन्य न होकर कुछ कारकों का परिणाम था, जैसे—चीन का विशालकाय देश होना जो अनेक छोटे देशों से घिरा हुआ था तथा साथ ही चीनी अपनी सांस्कृतिक धरोहर तथा नैतिक मूल्यों के प्रति अत्यन्त सतर्क थे। चीनी व्यवस्था ने अधिकांश उत्तरपूर्वी एशिया को सजातीय एकता में बाँध दिया। जी० एच० ब्लेकस्ली के द्वारा एक शताब्दी पूर्व चीनी साम्राज्य की दशा का वर्णन बड़े अच्छे तरीके से निम्नांकित शब्दों में किया गया है—

वह (चीन) प्रभावशाली ढंग से समय तथा सांस्कृतिक साम्राज्य वाला ऐसा ग्रह था जो अपने प्रशंसक उपग्रहों से घिरा हुआ था, इसके उत्तरपूर्व में कोरिया, उत्तर में तारतार परिवार, पश्चिम में काशगर व समरकंद, दक्षिण-पश्चिम में हिमालय के बादलों व बर्फ में तिब्बत, दक्षिण में बर्मा तथा स्याम; दक्षिण सीमा अनाम तथा कोचीन चीन, तथा सुदूरपूर्व में छोटे-छोटे द्वीप जो लियुचिउ द्वीप कहलाते हैं तथा चीनी समुद्र की पूर्वी सीमाएँ बनाते हैं। ये सब एक प्राच्य विश्व का निर्माण करते थे तथा चीनी साम्राज्य इस विश्व का केन्द्र था। ये देश चीन की नकल कर उसकी एक प्रकार से चापलूसी करते थे। उन्होंने उसकी सभ्यता का अनुकरण किया, अपनी शासनप्रणाली में उसी प्रकार का परिवर्तन किया उसके धर्म को ग्रहण किया, कई मामलों में उसकी भाषा, कला तथा साहित्य का ज्ञान प्राप्त किया तथा इन सब के बारे में चीन को अन्तिम निर्णय करने वाली संस्था माना·······चीन उनके झगड़ों का चाहे ये घरेलू थे या अन्तर्राष्ट्रीय, पंच माना जाता था। अपनी सशक्त सेनाओं का प्रयोग कर उसने इन तथ्यों की पुष्टि की। [4]

चीन की परम्परागत नीति अपने निकटतम देशों को प्रसन्न तथा दूरस्थ को संतुष्ट रखने की थी। कन्फ्यूशियस विचार के अनुसार "चारों समुद्र के मध्य रहने वाले सभी लोग भाई-भाई थे।" यद्यपि चीन के अपने आश्रित राज्यों से सम्बन्ध चीन की सैनिक विजय, सांस्कृतिक प्रभाव अथवा स्वैच्छिक समर्पण के कारण उत्पन्न हुए थे तथापि सभी राज्यों के स्वशासन के अधिकार को स्वीकार किया गया था। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर परम्परागत पैतृक व्यवस्था का विकास किया गया था तथापि इन आश्रित राज्यों के चीन के साथ, सांस्कृतिक सम्बन्ध बड़े निकट के थे। अधिकांशतः मामलों में इन राज्यों द्वारा चीनी राजनीतिक व सामाजिक व्यवस्था के अनुकरण का सोद्देश्य प्रयास न होकर सांस्कृतिक प्रभाव था। कोरिया तथा अमान के संदर्भ में चीन की लिखित भाषा चीनीकरण की प्रक्रिया का ही एक कदम थी जिसका चीन के राजनीतिक विकास पर भी पर्याप्त प्रभाव पड़ा।

यद्यपि चीन इन देशों पर अपने स्थायित्व की स्थापना का कोई प्रयास नहीं करता था तथापि उनका पश्चिम के प्रभाव-क्षेत्र में चले जाना ही चीन के लिए घातक हो सकता था। ये ऐसे मध्यवर्ती राज्य थे जो चीन के आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में सम्मिलित होने पर पर्याप्त महत्त्वपूर्ण बन गये तथा उनके अभाव का अर्थ चीन के सुरक्षा को खतरा था।

19वीं शताब्दी के अन्तिम 25 वर्षों में प्रतियोगी पश्चिमी देशों की प्रतियोगिता ने सुदूरपूर्व की यथास्थिति में व्यवधान उत्पन्न कर दिया तथा आश्रित राज्यों को चीन से परे कर दिया। 15 वर्षों के संकटपूर्ण समय में चीन के कई आश्रित राज्य उसके हाथ से निकल गये—1881 में लिउचिउ जापान को चला गया, 1885 में हिन्दचीन फ्रांस को चला गया,

14. जी एच. ब्लेकस्ली, चायना एण्ड दि फार ईस्ट, न्यूयार्क, 1910, पृ. 32.

1886 में उत्तरी बर्मा ब्रिटेन को चला गया तथा कोरिया व स्याम भी पश्चिमी व्यवस्था में चले गये क्योंकि वे चीन से पूर्णतः स्वतन्त्र हो गये। यद्यपि इस विच्छेदन से चीन को विशेष भौतिक हानि तो नहीं हुई तथापि इससे चीन की परम्परागत श्रेष्ठता को आँच आयी।

चीन के अन्य आश्रित राज्यों की कथा भी इतनी ही दुर्भाग्यपूर्ण है। जब चीन की मंचू सरकार पृथकीकरण की नीति के बावजूद पश्चिमी शक्तियों को चीनी बन्दरगाहों से दूर रखने में असमर्थ रही तो मंचुओं ने आश्रित राज्यों को स्वयं मुख्य चीन में मिलाने की कोशिश की। इस प्रकार पृथकीकरण की नीति का स्थान आत्मसात्करण की नीति ने ले लिया।

मंचूरिया दीर्घकाल तक जार कालीन रूस तथा जापान की सेनाओं के अांधीन रहने के पश्चात् 1907 में उसे चीन के तीन पूर्वी प्रान्तों के रूप में विभाजित कर सम्मिलित किया। सिकिआंग व शंघाई के प्रान्त 1884 में संगठित किये गये। अंदरुनी मंगोलिया अंततः सुईयुआन, चहार, निगसिआ तथा जेहोल में विभाजित किया गया। तथापि मंचू व चीनियों की इस नीति के बावजूद चीन पर वाह्य प्रहार होते गये।

रूस ने चीनी तुर्किस्तान में 1881 में इसी के एक भाग पर अधिकार कर शुरुआत की। जारकालीन व साम्यवादी रूस बाह्य मंगोलिया में प्रवेश करने में सफल हुए। जापान ने कोरिया को चीन से स्वतन्त्र कराने के दस वर्ष पश्चात् उसे अपना संरक्षित राज्य बना लिया तथा उसे मंचूरिया पर आक्रमण करने का स्थल बनाया। ब्रिटेन ने तिब्बत में हस्तक्षेप किया। ये सीमांत सम्बन्धी कठिनाइयाँ कम हो सकती थीं यदि मंचुओं ने एक अधिक स्पष्ट उपनिवेश नीति का अनुसरण किया होता तथा अपने आश्रित राज्यों को चीन की मुख्य भूमि से सम्बन्धित कर उसमें राजनीतिक सक्रियता की भावना को जन्म दिया होता।

आदिम जनजातियों के संदर्भ में मंचू तथा चीन की सरकारी नीतियों के बारे में अधिक कुछ भी नहीं कहा जा सकता है। चीनियों द्वारा शताब्दियों तक प्रशासित होने के बावजूद उन पर चीन की छाप निर्धनता तथा रोगग्रस्तता से अधिक नही पाई जाती है। आदिम जनजातियों, आर्थिक कल्याण तथा शैक्षणिक प्रगति के लिए कोई प्रयास नही किये गये थे। चीन की सैनिक शक्ति के भय के कारण ही इन जनजातियो ने विद्रोह नही किया।

चीनी साम्राज्य के बिखरने का मूल कारण चीनी राजनीतिक विचारधारा का खंडित होना था जो संपूर्ण संस्कृति पर पश्चिमी दबाव का सामना करने में असमर्थ रही थी। मंचू, जिन्होंने कि विदेशियों के रूप में चीन में प्रवेश किया था, अत्यधिक प्रतिक्रियावादी हो गये। चीनी प्रशासन का संपूर्ण भाग परपंरागत चीनी रखा गया। मंचूओं ने पूर्ववर्ती उदाहरणों का अनुसरण किया तथा वाह्य मामलों की पूर्णतः उपेक्षा की। बाद में ब्रिटिश, फ्रांसिसी तथा अन्य पश्चिमी शक्तियों द्वारा बड़े पैमाने पर आक्रमण ने चीन को आंशिक रूप से संप्रभुता त्यागने तथा चीनी राज्य का विघटन करने के लिए बाध्य किया तथा मंचूओं को नयी स्थिति का जायजा लेते हुए अपनी संप्रभुता के ढोंग को छोड़ना पड़ा।

संस्कृति, सरकार तथा विचारों पर पाश्चात्य प्रभाव

आधुनिक चीन के दुर्भाग्य का मूल आधार यह तथ्य है कि यह प्राचीनतम समाज दो शक्तिशाली सामाजिक दबावों का सामना एक साथ कर रहा है। 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में मंचूकालीन चीन पतन, अव्यवस्था तथा विद्रोह की भावना से परिचित हो चुका था। स्थिति को सुधारने के लिए मंचुओं द्वारा कमजोर उपाय किये गये किन्तु उनका प्रभाव चीन में सुधार करने की दिशा में नही पड़ा किन्तु उसने चीन में क्रांति का एक चक्र प्रारंभ किया जो राष्ट्रवादी व साम्यवादी में आज भी एक अथवा दूसरे आवरण में निरंतर चल रहा है।

19वीं शताब्दी के मध्य से, चीन पाश्चात्यीकरण की प्रक्रिया का सामना कर रहा था। एक प्राचीन तथा निरंतर चलने वाली संस्कृति जो राजनीतिक भावना में निरंकुश तेजी आते हुए भी प्रजातंत्र से प्रभावित थी, विद्रोह की स्थिति से एक क्रांति की ओर अग्रसर न हो कर क्रांतियों की एक संपूर्ण श्रृंखला की ओर अग्रसर हुई जो कभी-कभी समानांतर भी घटित हुई। 100 से भी अधिक वर्षों तक चीन में अंतर्राज्यीय संबंधों के संदर्भ में, विदेशी शासक के विरोध में, संसदीय प्रजातंत्र की दिशा में, राष्ट्रवादी तथा साम्यवादी क्रांति की दिशा में एक साथ कई क्रांतियाँ लड़ीं। इसके साथ-साथ राजनीतिक सुधारों के नीचे सामाजिक बौद्धिक क्रान्ति के साथ औद्योगिक क्रांति के विपरीत प्रतिक्रिया प्रारम्भ हुई जिसने चीन की आर्थिक आधारशिला को परिवर्तित करना प्रारंभ किया।[15]

एक दृष्टिकोण से पश्चिमी प्रभाव का अर्थ पूर्वी एशिया की परंपरागत व्यवस्था को उन्मुक्त करना था। पश्चिमी दृष्टिकोण के अनुसार चीन को पश्चिमी राज्य व्यवस्था में सम्मिलित कर लिया गया। दोनों ही दृष्टिकोणों के बावजूद चीन ने अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों में सक्रिय रुची लेना प्रारंभ किया। इसके पश्चात् से पश्चिम तथा सुदूरपूर्व देशों में लड़ा गया प्रत्येक युद्ध चीनी प्रश्न को निहित करता था। 1930 से स्वयं चीनी, चीन पर नियंत्रण प्राप्त करने के लिए सक्रिय हो गये हैं तथा उनके द्वारा समझौता अथवा विरोध इस तथ्य पर निर्भर करता है कि वहाँ किस प्रकार की शासन-प्रणाली है।

तथापि कई बार चीनी सफलता का निर्धारण संगठनात्मक दृष्टि से उस सरकार के आधार पर किया गया है जिसने वहाँ पनपती क्रांति को नियंत्रित करने की कोशिश की है। पश्चिमी अथवा चीनी स्तर से देखने के बावजूद यह स्पष्ट है कि चीन की सरकार का पाश्चात्यीकरण मिश्रित असफलता रहा है अभी यह देखना बाकी है कि चीन में वर्तमान साम्यवादी प्रयोग अंततः एक पश्चिमी नमूने का राज्य बनेगा, सैद्धान्तिक नियंत्रण का चीनी प्रकार बनेगा अथवा परंपरागत चीनी विचारधारा तथा यथार्थ मार्क्सवादी विचारधारा का विचित्र मिश्रण बनेगा जो अंततः राज्य के अदृश्य होने में विश्वास करता है।

चीन के आधुनिक रूपांतरण के अन्य पहलू के बारे में यद्यपि विशद् विवरण प्राप्त होता है तथापि चीन की शासन-प्रणाली के परंपरागत स्वरूप के साथ इसके संबंध की स्थापना बहुत कम की गई है। चीन के पूर्व मंचू तथा उत्तर मंचूकालीन दोनों नमूने विचारधारा के द्वारा नियंत्रण का उल्लेखनीय उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। यहाँ भी पाश्चात्यीकरण शक्तिशाली दबाव साबित हुआ है। वस्तुतः पाश्चात्य प्रभाव के तीन पहलुओं—चीनी कूटनीति, सरकार तथा विचारों में से अन्तिम सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है।

निश्चय ही 19वीं शताब्दी में राष्ट्रों के परिवार मंडल के कन्फ्यूशियस विचार से चीन विश्वास का दुखद अन्त एक प्रचलित कथा बन गया है। विभिन्न पुस्तकों में विभिन्न

15. जॉन किंग फेयरबैंक 'दि यूनाइटेड स्टेट्स एण्ड चायना' में अध्याय 'दि वेस्टर्न इम्पैक्ट' में चीन के 'भाग्यचक्र' की चर्चा करता है। मंचूकाल में शताब्दियों तक आन्तरिक शान्ति तथा चीन की कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था में नयी फसलों के आगमन पर 1650 से 1850 तक जनसंख्या दुगुनी व तिगुनी हो गयी तथा पश्चिमी सम्पर्क से पहले ही औद्योगीकरण प्रारम्भ हो गया था।

दृष्टिकोणों से इसकी चर्चा पहले की जा चुकी है।[16] तकनीकी दृष्टि से चीन की परंपरागत व्यवस्था का स्थान नयी व्यवस्था ने तब लेना प्रारम्भ कर दिया था जब चीन किसी देश के अपनी सीमाओं का निर्धारण करने के लिए रूस के साथ पहली आधुनिक संधि (नेरचिस्क 1889) की थी। यह महत्व का विषय है कि इस संधि के द्वारा भूमि से होने वाले व्यापार को नियमित किया गया रूस, को चीन को एक प्रतिनिधि मण्डल भेजने का अधिकार प्राप्त हुआ तथा उनके प्रतिनिधि को अन्य विदेशी प्रतिनिधियों की तुलना में पृथक स्तर प्राप्त हुआ। वस्तुतः नेरचिस्क सन्धि के बहुत पहले समुद्री मार्ग से आने वाले बर्बरों के साथ संबंधों को नियमित करना अत्यधिक कठिन हो गया था।

रूस के अतिरिक्त अन्य पश्चिमी देश भी व्यापार के उद्देश्य से समुद्र के रास्ते चीन आये। इस प्रकार चीन के सम्मुख दो समस्याएं आयीं। राष्ट्रों के परिवार की व्यवस्था मंत्र चीन को जो सुरक्षा प्रदान करती थी वह मुख्यतः भूमि मार्गों से सम्बन्धित थी जो मध्य एशिया से आते थे किन्तु अब सुरक्षा की इस परंपरागत व्यवस्था को बदलना आवश्यक हो गया। पश्चिमी दृष्टिकोण के अनुसार 16वीं व 17वीं शताब्दी के अन्वेषकों को पूर्व एशिया में वाणिज्य व व्यापार के लिए उसी प्रकार एक व्यापक क्षेत्र प्राप्त हुआ जैसा उनके समकालीन लोगों को पश्चिमी गोलार्द्ध में मिला था। अन्तर मात्र यह था कि पूर्वी एशिया की अपनी स्वतंत्र एवं विकसित राजनैतिक व आर्थिक व्यवस्था थी। 17वीं व 18वीं शताब्दी के मध्य से पहले ही चीन ने सतर्कतापूर्ण ढंग से विदेशियों को प्रोत्साहित किया। पुर्तगाली सर्वप्रथम 1516 में चीन पहुँचे थे[17] उसके पश्चात् अन्य विदेशी समुद्र के माध्यम से व्यापार के लिए आये थे। स्पेन के लोग (1575), डच (1604), इंगलिश (1637) तथा 1784 में अमेरिकी। साथ ही चीनियों ने केंटून तथा मकाओ के मार्ग से साम्राज्य तक का मार्ग प्रतिबंधित कर दिया। यह नियंत्रण 19वीं शताब्दी के मध्य तक बना रहा। उग्रता के स्थान पर प्रयोग तथा कटु अनुभवों के कारण साम्राज्य पर यह नियंत्रण लगाया गया था। पेकिंग में स्थायी राजनीतिक संपर्क की स्थापना का विचार बड़ी उदासीनता से देखा जाता था। सभी दूतों को मात्र भेंट लाने वालों के रूप में माना जाता था।

अतः चीन में पश्चिमी दबाव व्यापार की शक्ल में बढ़ा। 1840 से 1860 में ब्रिटेन के द्वारा फ्रांस की सहायता से दो युद्ध लड़े गये जिसमें भेंट देने के स्तर को सन्धि कर सकने के स्तर पर बदलने की कोशिश की गयीं। चीनी प्रथम युद्ध को

16. उदाहरण के लिए एम. जी. बाउ या (ओ मिंग चेइन) दि फोरेन रिलेशन्स ऑफ चायना, न्यूयॉर्क 1922 देखिए जो चीनी दृष्टिकोण के मुताबिक लिखी गई है। डेनेट द्रष्टव्य, अमेरिकी स्रोतों के आधार पर लिखी गई है। एच.एफ. मेकनायर तथा डेनाल्ड एफ. लेच की रचना माडर्न फॉर ईस्टर्न इन्टरनेशनल रिलेशन्स, न्यूयार्क 1950 एक परिपक्व रचना है। ई. एच. प्रिशार्ड द्वारा रचित एंग्लो चाइनीज रिलेशन्स ड्यूरिंग दि सेवन्टीन्थ एण्ड एटीन्थ सेन्चुरीज, अर्बाना 1929 एक विशिष्ट अध्ययन है। हेरोल्ड एम. विनाके, ए हिस्ट्री ऑफ दि फार ईस्ट इन मॉडर्न टाइम्स, न्यूयॉर्क (पंचम संस्करण) 1950 एक प्रख्यात राजनीतिक वैज्ञानिक रचना है जो अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों तथा पूर्वी राज्यों के प्रभाव को परस्पर सम्बन्धित करता है। पाल. इ- एकल, द्वारा रचित फार ईस्ट सिंस 1500 न्यूयार्क 1947 एक उत्कृष्ट सामान्य इतिहास है।

17. यह स्मरण रखना चाहिये कि पुर्तगालियों द्वारा समुद्री मार्ग से पूर्व में पहुँचने के पूर्व ही मिंग कालीन समुद्री खोज चें हो के नेतृत्व में हिन्द महासागर से पश्चिम की ओर की गई थी। इस खोज का उद्देश्य निस्संदेह सम्प्रभु व आश्रित राज्य का सम्बन्ध स्थापित करने, व राजनीतिक तथा व्यापार बढ़ाने की इच्छा का सम्मिश्रण था। देखिए फेयर बैंक द्रष्टव्य पृ. 120–127.

अफीम का युद्ध कहने का आग्रह करते हैं तथापि इतिहासकारों द्वारा 1840–42 के युद्ध को मात्र अफीम का युद्ध नहीं माना जाता है। 1842 में नानकिंग की सन्धि, उसका पूरक बोग का समझौता तथा बाद में अमेरिकियों व फ्रांसीसियों द्वारा किये गये प्रयासों के परिणामस्वरूप चीन समुद्र की तरफ से आने वाले बर्बरों के प्रति जिद्दी बन गया। चीन के दुराग्रह के परिणामस्वरूप व्यापार सम्बन्धों की पुनर्व्याख्या करने के लिए 1858 में टिअनत्सिन की सन्धि तथा 1860 में आंग्ल फ्रांसीसी सेनाओं द्वारा स्वयं पेकिंग पर आक्रमण हुआ। इस दौरान अमेरिका व रूस चीन के मित्र बने रहे तथा उन्होंने दबावपूर्ण उग्रनीति के स्थान पर बीच-बचाव की शान्तिपूर्ण नीति का प्रयास किया। तथापि अधिक प्रिय राज्यों की व्यवस्था के द्वारा चीन को प्राचीन राष्ट्रों के परिवार की व्यवस्था की असमानता के स्थान पर पश्चिम से सम्पर्क की असमानता के सिद्धान्त को स्वीकारना पड़ा। उस समय से लेकर 1943 तक चीन को असमान सन्धियों से संघर्ष करना पड़ा।

1840–60 में चीन को पश्चिमी आक्रमण के अतिरिक्त अन्य कई समस्याओं का सामना करना पड़ा। पश्चिमी दबाव के साथ पश्चिमी शासन व्यवस्था का पदार्पण भी हुआ। इसके अतिरिक्त, परम्पराओं के माध्यम से पश्चिमी लोगों ने समझौता सुविधा तथा बन्दरगाहों की सुविधा से चीनी भूमि पर अधिकाधिक अधिकार जमाया। अन्ततः साम्राज्य में विदेशियों के जीवन व सम्पत्ति की रक्षा के लिए आन्दोलन छेड़ दिया। परिणामस्वरूप प्रादेशिक मामलों में केन्द्रीय हस्तक्षेप अवांछनीय ढंग से बढ़ गया। इस प्रकार प्रतिक्रिया की शृंखला प्रारम्भ हुई।

पेकिंग पर प्रत्यक्ष आक्रमण करने से पहले तक पश्चिमी शक्तियाँ मात्र स्थानीय अधिकारियों से सम्पर्क स्थापित करती थीं। 1860 से 1895 तक पश्चिम के प्रतिनिधि अपने सामान्य हितों के लिए चीन पर दबाव डालते रहे तथा चीन की पृथकता को समाप्त करने की कोशिश करते रहे जिसका अर्थ स्वयं चीन का विनाश था। ये पश्चिमी देश अपने विशिष्ट सांकेतिक तरीके से चीन के सम्राट से भेंट करने के लिए कूटनीतिक प्रयास करते थे। चीन के सम्बन्ध में पश्चिम की निराशा व कुण्ठा का एक कारण यह तथ्य भी था कि वे सम्प्रभु व अधीन राज्य के परस्पर सम्बन्धों की व्याख्या करने में असमर्थ रहे। चीनी अधिकारों की अतिशयोक्ति ने पश्चिमी शक्तियों को शक्ति का प्रयोग करने के लिए बाध्य किया तथा चीन द्वारा आधीन राज्यों के प्रति अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह न करने के कारण शीघ्र ही विघटन की प्रक्रिया का प्रारम्भ हुआ। चीन की मुख्य भूमि में विदेशियों के साथ चीनियों के व्यक्तिगत सम्बन्ध सरकारी सम्बन्धों की तुलना में पर्याप्त सामंजस्यपूर्ण थे। किन्तु बाद में तिअनत्सिन का सामूहिक वध तथा यूनान के मारगरी कत्ल के बाद विदेशियों ने प्रतिशोधात्मक कार्यवाही में तत्परता दर्शायी; परिणामस्वरूप विदेशियों का दबाव व विदेशियों के प्रति विरोध की भावना ने जन्म लिया जो किसी सीमा तक आज भी विद्यमान है।

पश्चिमी प्रभाव के विस्तार से पूर्वी एशिया की शासन की प्राचीन परम्पराओं के सम्मुख मुख्यतः दो प्रकार के संकट उत्पन्न हुए। पाश्चात्य संस्कृति के दबाव के सामने चीन की सभ्यता की श्रेष्ठता तथा सर्वव्यापकता जिस पर चीन की परम्परा आश्रित थी तथा जिस पर विद्वान अधिकारी कार्य करते थे, विखंडित हो गई। यदि अधिक स्पष्टतः कहा जाये तो असंगठित चीनी समाज तथा पृथक व ईर्ष्यापूर्ण ढंग से स्वतन्त्र जापानी

अफीम का युद्ध कहने का आग्रह करते हैं तथापि इतिहासकारों द्वारा 1840–42 के युद्ध को मात्र अफीम का युद्ध नहीं माना जाता है। 1842 में नानकिंग की सन्धि, उसका पूरक वोग का समझौता तथा बाद में अमेरिकियों व फ्रांसीसियों द्वारा किये गये प्रयासों के परिणामस्वरूप चीन समुद्र की तरफ से आने वाले बर्बरों के प्रति जिद्दी बन गया। चीन के दुराग्रह के परिणामस्वरूप व्यापार सम्बन्धों की पुनर्व्याख्या करने के लिए 1858 में टिअनत्सिव की सन्धि तथा 1860 में आंग्ल फ्रांसीसी सेनाओं द्वारा स्वयं पेकिंग पर आक्रमण हुआ। इस दौरान अमेरिका व रूस चीन के मित्र बने रहे तथा उन्होंने दबावपूर्ण उग्रनीति के स्थान पर बीच-बचाव की शान्तिपूर्ण नीति का प्रयास किया। तथापि अधिक प्रिय राज्यों की व्यवस्था के द्वारा चीन को प्राचीन राष्ट्रों के परिवार की व्यवस्था की असमानता के स्थान पर पश्चिम से सम्पर्क की असमानता के सिद्धान्त को स्वीकारना पड़ा। उस समय से लेकर 1943 तक चीन को असमान सन्धियों से संघर्ष करना पड़ा।

1840–60 में चीन को पश्चिमी आक्रमण के अतिरिक्त अन्य कई समस्याओं का सामना करना पड़ा। पश्चिमी दबाव के साथ पश्चिमी शासन व्यवस्था का पदार्पण भी हुआ। इसके अतिरिक्त, परम्पराओं के माध्यम से पश्चिमी लोगों ने समझौता सुविधा तथा बन्दरगाहों की सुविधा से चीनी भूमि पर अधिकाधिक अधिकार जमाया। अन्ततः साम्राज्य में विदेशियों के जीवन व सम्पत्ति की रक्षा के लिए आन्दोलन छेड़ दिया। परिणामस्वरूप प्रादेशिक मामलों में केन्द्रीय हस्तक्षेप अवांछनीय ढंग से बढ़ गया। इस प्रकार प्रतिक्रिया की शृंखला प्रारम्भ हुई।

पेकिंग पर प्रत्यक्ष आक्रमण करने से पहले तक पश्चिमी शक्तियाँ मात्र स्थानीय अधिकारियों से सम्पर्क स्थापित करती थीं। 1860 से 1895 तक पश्चिम के प्रतिनिधि अपने सामान्य हितों के लिए चीन पर दबाव डालते रहे तथा चीन की पृथकता को समाप्त करने की कोशिश करते रहे जिसका अर्थ स्वयं चीन का विनाश था। ये पश्चिमी देश अपने विशिष्ट सांकेतिक तरीके से चीन के सम्राट से भेंट करने के लिए कूटनीतिक प्रयास करते थे। चीन के सम्बन्ध में पश्चिम की निराशा व कुण्ठा का एक कारण यह तथ्य भी था कि वे सम्प्रभु व अधीन राज्य के परस्पर सम्बन्धों की व्याख्या करने में असमर्थ रहे। चीनी अधिकारों की अतिशयोक्ति ने पश्चिमी शक्तियों को शक्ति का प्रयोग करने के लिए बाध्य किया तथा चीन द्वारा आधीन राज्यों के प्रति अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह न करने के कारण शीघ्र ही विघटन की प्रक्रिया का प्रारम्भ हुआ। चीन की मुख्य भूमि में विदेशियों के साथ चीनियों के व्यक्तिगत सम्बन्ध सरकारी सम्बन्धों की तुलना में पर्याप्त सामंजस्यपूर्ण थे। किन्तु बाद में तिअनत्सिन का सामूहिक वध तथा यूनान के मारगरी कत्ल के बाद विदेशियों ने प्रतिशोधात्मक कार्यवाही में तत्परता दर्शायी; परिणामस्वरूप विदेशियों का दबाव व विदेशियों के प्रति विरोध की भावना ने जन्म लिया जो किसी सीमा तक आज भी विद्यमान है।

पश्चिमी प्रभाव के विस्तार से पूर्वी एशिया की शासन की प्राचीन परम्पराओं के सम्मुख मुख्यतः दो प्रकार के संकट उत्पन्न हुए। पाश्चात्य संस्कृति के दबाव के सामने चीन की सभ्यता की श्रेष्ठता तथा सर्वव्यापकता जिस पर चीन की परम्परा आश्रित थी तथा जिस पर विद्वान अधिकारी कार्य करते थे, विखंडित हो गई। यदि अधिक स्पष्टतः कहा जाये तो असंगठित चीनी समाज तथा पृथक व ईर्ष्यापूर्ण ढंग से स्वतन्त्र जापानी

ज़ापानी सैनिकों के द्वारा किया गया। तत्पश्चात् 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में सुधार के प्रयास किये गये, किन्तु अब पर्याप्त देर हो चुकी थी। मंचू तो क्रान्ति का सामना नहीं कर सके तथापि बाद में चीनी गणराज्य में सैनिक-वाद एक महत्त्वपूर्ण कारक बन गया।

शासन की तुलना में अर्थव्यवस्था पर विदेशी प्रभाव धीमा था। 1870 में शंघाई से वू-सुंग तक रेलवे लाइन बिछाई गई। यद्यपि यह परियोजना बड़ी सीमित थी तथापि यह एक महत्त्वपूर्ण विकास का प्रारम्भ था। चीनी संचार व्यवस्था वाष्पवाही जहाजों व टेलीग्राफ तक पहुँच गई। 19वीं शताब्दी के अन्तिम दशाब्दी में हानयेंग इस्पात उद्योग की स्थापना की गई जो चीन में अपने प्रकार का विशालतम उद्योग है।

जहाँ तक वैचारिक प्रभाव का प्रश्न है चीन में पाश्चात्य प्रभाव का सर्वोत्तम उदाहरण चीन में ईसाई धर्म का प्रचार है। रोमन कैथोलिक धर्म प्रचार का प्रथम काल 13वीं शताब्दी से 16वीं शताब्दी तक रहा जिसमें मुख्य प्रयास सन्त फ्रांसीसी जेवियर तथा बाद उसके उत्तराधिकारी मेरिओरिकी के द्वारा अपनी रचनाओं में पश्चिम तथा चीनी विचारों के मध्य अन्तर को स्पष्ट किया। जेसुरो को मध्यवर्ती सफलता ही मिली क्योंकि उन्होंने 16वीं शताब्दी के चीनी प्रतिष्ठित ग्रन्थों के अनुसार आचरण करना प्रारम्भ किया तथा इस प्रकार उनका चीनीकरण हो गया। इसके बदले में चीनियों ने पश्चिमी विज्ञान विशेषतया गणित, ज्योतिष तथा भूगोल का ज्ञान प्राप्त किया। फिर भी 200 वर्षों के सम्पर्क के बावजूद चीन के शिक्षित लोग पश्चिमी ज्ञान से अपेक्षाकृत कम प्रभावित हुए थे जबकि यूरोपियन लोगों पर एशिया की खोज का पर्याप्त प्रभाव पड़ा था।[19]

चीन में ईसाई धर्म की सक्रियता के पहले चरण का अन्त धार्मिक संस्कारों के विवाद (1724) के साथ हुआ जिसका समाधान चीनियों ने धर्म प्रचारकों के कार्यकलापों पर पूर्णतः रोक लगा कर किया। उस समय यह विवाद धार्मिक न होकर इस विषय पर था कि सभी विचारों पर जिनमें धार्मिक विचार भी निहित थे, चीन का आन्तरिक नियंत्रण होना चाहिए। चीनी चाहते थे कि विचारधारा, शिक्षा तथा सरकार प्रत्येक क्षेत्र में प्रचार के द्वारा सम्राट का आधिपत्य घोषित किया जाये। इसके पश्चात् कुछ धर्म-प्रचारक भूमिगत रह कर कार्य करते रहे तथापि उन्हें फिर से पूर्व प्रभावशाली स्थिति तब तक न मिल सकी जब तक उन्हें समुद्र से आने वाले यूरोपीय व्यापारियों का समर्थन प्राप्त नहीं हुआ तथा उन्हें असमान सन्धियों से सुरक्षा प्राप्त न हुई। फिर भी शिक्षा के क्षेत्र में पर्याप्त प्रगति हुई। व्यावहारिक ईसाइयत तथा ईसाई धर्म के वैयक्तिक उदाहरण मात्र कथाओं से अधिक महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुए। ईसाई धर्म-प्रचारकों ने विभिन्न विदेशी धार्मिक पुस्तकों का अनुवाद चीनी भाषा में करना प्रारम्भ किया। 1872 में चीन का प्रथम शैक्षणिक मण्डल विदेश गया। इस प्रकार चीन का बौद्धिक पृथकत्व टूटने लगा।

19वीं शताब्दी में चीन में अमेरिकी तथा ब्रिटिश प्रोटेस्टेंट मण्डल की स्थापना से, ईसाई धर्म एशिया में प्रजातन्त्रीय विचारधारा की स्थापना के लिए (सकारात्मक)

19. चीनी प्रभाव 18वीं व 19वीं शताब्दी में तब महसूस किया गया जब वाल्टेयर तथा रुसो की रचनाओं ने यूरोप में चीन की प्रतिष्ठा को बढ़ाया। तथापि चीनी प्रभाव का सम्पूर्ण दबाव कृषि अर्थशास्त्रियों की रचनाओं के बाद महसूस किया गया जिनमें डॉ. क्यूसने की रचना 'ली डेस्पोटिज्म डी ला चीन' 1767 में प्रकाशित हुई। देखिए, लुइस ए. मावरिक की रचना 'चायना ए मॉडल फार यूरोप, 'सेन एंटोनियो' 1946.

जापानी सैनिकों के द्वारा किया गया। तत्पश्चात् 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में सुधार के प्रयास किये गये, किन्तु अब पर्याप्त देर हो चुकी थी। मंचू तो क्रान्ति का सामना नहीं कर सके तथापि बाद में चीनी गणराज्य में सैनिक-वाद एक महत्त्वपूर्ण कारक बन गया।

शासन की तुलना में अर्थव्यवस्था पर विदेशी प्रभाव धीमा था। 1870 में शंघाई से वू-सुंग तक रेलवे लाइन बिछाई गई। यद्यपि यह परियोजना बड़ी सीमित थी तथापि यह एक महत्त्वपूर्ण विकास का प्रारम्भ था। चीनी संचार व्यवस्था वाष्पवाही जहाजों व टेलीग्राफ तक पहुँच गई। 19वीं शताब्दी के अन्तिम दशाब्दी में हानयेंग इस्पात उद्योग की स्थापना की गई जो चीन में अपने प्रकार का विशालतम उद्योग है।

जहाँ तक वैचारिक प्रभाव का प्रश्न है चीन में पाश्चात्य प्रभाव का सर्वोत्तम उदाहरण चीन में ईसाई धर्म का प्रचार है। रोमन कैथोलिक धर्म प्रचार का प्रथम काल 13वीं शताब्दी से 16वीं शताब्दी तक रहा जिसमें मुख्य प्रयास सन्त फ्रांसीसी जेवियर तथा बाद उसके उत्तराधिकारी मेरिओरिकी के द्वारा अपनी रचनाओं में पश्चिम तथा चीनी विचारों के मध्य अन्तर को स्पष्ट किया। जेसुरो को मध्यवर्ती सफलता ही मिली क्योंकि उन्होंने 16वीं शताब्दी के चीनी प्रतिष्ठित ग्रन्थों के अनुसार आचरण करना प्रारम्भ किया तथा इस प्रकार उनका चीनीकरण हो गया। इसके बदले में चीनियों ने पश्चिमी विज्ञान विशेषतया गणित, ज्योतिष तथा भूगोल का ज्ञान प्राप्त किया। फिर भी 200 वर्षों के सम्पर्क के बावजूद चीन के शिक्षित लोग पश्चिमी ज्ञान से अपेक्षाकृत कम प्रभावित हुए थे जबकि यूरोपियन लोगों पर एशिया की खोज का पर्याप्त प्रभाव पड़ा था।[19]

चीन में ईसाई धर्म की सक्रियता के पहले चरण का अन्त धार्मिक संस्कारों के विवाद (1724) के साथ हुआ जिसका समाधान चीनियों ने धर्म प्रचारकों के कार्यकलापों पर पूर्णतः रोक लगा कर किया। उस समय यह विवाद धार्मिक न होकर इस विषय पर था कि सभी विचारों पर जिनमें धार्मिक विचार भी निहित थे, चीन का आन्तरिक नियंत्रण होना चाहिए। चीनी चाहते थे कि विचारधारा, शिक्षा तथा सरकार प्रत्येक क्षेत्र में प्रचार के द्वारा सम्राट का आधिपत्य घोषित किया जाये। इसके पश्चात् कुछ धर्म-प्रचारक भूमिगत रह कर कार्य करते रहे तथापि उन्हें फिर से पूर्व प्रभावशाली स्थिति तब तक न मिल सकी जब तक उन्हें समुद्र से आने वाले यूरोपीय व्यापारियों का समर्थन प्राप्त नहीं हुआ तथा उन्हें असमान सन्धियों से सुरक्षा प्राप्त न हुई। फिर भी शिक्षा के क्षेत्र में पर्याप्त प्रगति हुई। व्यावहारिक ईसाइयत तथा ईसाई धर्म के वैयक्तिक उदाहरण मात्र कथाओं से अधिक महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुए। ईसाई धर्म-प्रचारकों ने विभिन्न विदेशी धार्मिक पुस्तकों का अनुवाद चीनी भाषा में करना प्रारम्भ किया। 1872 में चीन का प्रथम शैक्षणिक मण्डल विदेश गया। इस प्रकार चीन का बौद्धिक पृथकत्व टूटने लगा।

19वीं शताब्दी में चीन में अमेरिकी तथा ब्रिटिश प्रोटेस्टेंट मण्डल की स्थापना से, ईसाई धर्म एशिया में प्रजातन्त्रीय विचारधारा की स्थापना के लिए (सकारात्मक)

19. चीनी प्रभाव 18वीं व 19वीं शताब्दी में तब महसूस किया गया जब वाल्तेयर तथा रूसो की रचनाओं ने यूरोप में चीन की प्रतिष्ठा को बढ़ाया। तथापि चीनी प्रभाव का सम्पूर्ण दबाव कृषि अर्थशास्त्रियों की रचनाओं के बाद महसूस किया गया जिसमें डा. क्यूसने की रचना 'ली डेस्पोटिज्म डी ला चीन' 1767 में प्रकाशित हुई। देखिए लुइस ए. मावरिक की रचना 'चायना ए मॉडल फार यूरोप, 'सैन एंटोनियो' 1946.

जापानी सैनिकों के द्वारा किया गया। तत्पश्चात् 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में सुधार के प्रयास किये गये, किन्तु अब पर्याप्त देर हो चुकी थी। मंचू तो क्रान्ति का सामना नहीं कर सके तथापि बाद में चीनी गणराज्य में सैनिक-वाद एक महत्त्वपूर्ण कारक बन गया।

शासन की तुलना में अर्थव्यवस्था पर विदेशी प्रभाव धीमा था। 1870 में शंघाई से वू-सुंग तक रेलवे लाइन बिछाई गई। यद्यपि यह परियोजना बड़ी सीमित थी तथापि यह एक महत्त्वपूर्ण विकास का प्रारम्भ था। चीनी संचार व्यवस्था वाष्पवाही जहाजों व टेलीग्राफ तक पहुँच गई। 19वीं शताब्दी के अन्तिम दशाब्दी में हानयेंग इस्पात उद्योग की स्थापना की गई जो चीन में अपने प्रकार का विशालतम उद्योग है।

जहाँ तक वैचारिक प्रभाव का प्रश्न है चीन में पाश्चात्य प्रभाव का सर्वोत्तम उदाहरण चीन में ईसाई धर्म का प्रचार है। रोमन कैथोलिक धर्म प्रचार-का प्रथम काल 13वीं शताब्दी से 16वीं शताब्दी तक रहा जिसमें मुख्य प्रयास सन्त फ्रांसीसी जेवियर तथा बाद उसके उत्तराधिकारी मेरिओरिकी के द्वारा अपनी रचनाओं में पश्चिम तथा चीनी विचारों के मध्य अन्तर को स्पष्ट किया। जेसुरी को मध्यवर्ती सफलता ही मिली क्योंकि उन्होंने 16वीं शताब्दी के चीनी प्रतिष्ठित ग्रन्थों के अनुसार आचरण करना प्रारम्भ किया तथा इस प्रकार उनका चीनीकरण हो गया। इसके बदले में चीनियों ने पश्चिमी विज्ञान विशेषतया गणित, ज्योतिष तथा भूगोल का ज्ञान प्राप्त किया। फिर भी 200 वर्षों के सम्पर्क के बावजूद चीन के शिक्षित लोग पश्चिमी ज्ञान से अपेक्षाकृत कम प्रभावित हुए थे जबकि यूरोपियन लोगों पर एशिया की खोज का पर्याप्त प्रभाव पड़ा था।[19]

चीन में ईसाई धर्म की सक्रियता के पहले चरण का अन्त धार्मिक संस्कारों के विवाद (1724) के साथ हुआ जिसका समाधान चीनियों ने धर्म प्रचारकों के कार्यकलापों पर पूर्णतः रोक लगा कर किया। उस समय यह विवाद धार्मिक न होकर इस विषय पर था कि सभी विचारों पर जिनमें धार्मिक विचार भी निहित थे, चीन का आन्तरिक नियंत्रण होना चाहिए। चीनी चाहते थे कि विचारधारा, शिक्षा तथा सरकार प्रत्येक क्षेत्र में प्रचार के द्वारा सम्राट का आधिपत्य घोषित किया जाये। इसके पश्चात् कुछ धर्म-प्रचारक भूमिगत रह कर कार्य करते रहे तथापि उन्हें फिर से पूर्व प्रभावशाली स्थिति तब तक न मिल सकी जब तक उन्हें समुद्र से आने वाले यूरोपीय व्यापारियों का समर्थन प्राप्त नहीं हुआ तथा उन्हें असमान सन्धियों से सुरक्षा प्राप्त न हुई। फिर भी शिक्षा के क्षेत्र में पर्याप्त प्रगति हुई। व्यावहारिक ईसाइयत तथा ईसाई धर्म के वैयक्तिक उदाहरण मात्र कथाओं से अधिक महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुए। ईसाई धर्म-प्रचारकों ने विभिन्न विदेशी धार्मिक पुस्तकों का अनुवाद चीनी भाषा में करना प्रारम्भ किया। 1872 में चीन का प्रथम शैक्षणिक मण्डल विदेश गया। इस प्रकार चीन का बौद्धिक पृथकत्व टूटने लगा।

19वीं शताब्दी में चीन में अमेरिकी तथा ब्रिटिश प्रोटैस्टेंट मण्डल की स्थापना से, ईसाई धर्म एशिया में प्रजातन्त्रीय विचारधारा की स्थापना के लिए (सकारात्मक)

19. चीनी प्रभाव 18वीं व 19वीं शताब्दी में तब महसूस किया गया जब वाल्तेयर तथा रूसो की रचनाओं ने यूरोप में चीन की प्रतिष्ठा को बढ़ाया। तथापि चीनी प्रभाव का सम्पूर्ण दबाव कृषि अर्थशास्त्रियों की रचनाओं के बाद मालूम किया गया जिनमें डॉ. क्यूस्ने की रचना 'ली डेस्पोटिज्म डी ला चीन' 1767 में प्रकाशित हुई। देखिए, लुइस ए. मावरिक की रचना 'चायना ए मॉडल फार यूरोप,' 'सन एन्टोनियो' 1946.

जापानी सैनिकों के द्वारा किया गया। तत्पश्चात् 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में सुधार के प्रयास किये गये, किन्तु अब पर्याप्त देर हो चुकी थी। मंचू तो क्रान्ति का सामना नहीं कर सके तथापि बाद में चीनी गणराज्य में सैनिक-वाद एक महत्त्वपूर्ण कारक बन गया।

शासन की तुलना में अर्थव्यवस्था पर विदेशी प्रभाव धीमा था। 1870 में शंघाई से वू-सुंग तक रेलवे लाइन बिछाई गई। यद्यपि यह परियोजना बड़ी सीमित थी तथापि यह एक महत्त्वपूर्ण विकास का प्रारम्भ था। चीनी संचार व्यवस्था वाष्पवाही जहाजों व टेलीग्राफ तक पहुँच गई। 19वीं शताब्दी के अन्तिम दशाब्दी में हानयेंग इस्पात उद्योग की स्थापना की गई जो चीन में अपने प्रकार का विशालतम उद्योग है।

जहाँ तक वैचारिक प्रभाव का प्रश्न है चीन में पाश्चात्य प्रभाव का सर्वोत्तम उदाहरण चीन में ईसाई धर्म का प्रचार है। रोमन कैथोलिक धर्म प्रचार का प्रथम काल 13वीं शताब्दी से 16वीं शताब्दी तक रहा जिसमें मुख्य प्रयास सन्त फ्रांसीसी जेवियर तथा बाद उसके उत्तराधिकारी मेरिओरिकी के द्वारा अपनी रचनाओं में पश्चिम तथा चीनी विचारों के मध्य अन्तर को स्पष्ट किया। जेसुरो को मध्यवर्ती सफलता ही मिली क्योंकि उन्होंने 16वीं शताब्दी के चीनी प्रतिष्ठित ग्रन्थों के अनुसार आचरण करना प्रारम्भ किया तथा इस प्रकार उनका चीनीकरण हो गया। इसके बदले में चीनियों ने पश्चिमी विज्ञान विशेषतया गणित, ज्योतिष तथा भूगोल का ज्ञान प्राप्त किया। फिर भी 200 वर्षों के सम्पर्क के बावजूद चीन के शिक्षित लोग पश्चिमी ज्ञान से अपेक्षाकृत कम प्रभावित हुए थे जबकि यूरोपियन लोगों पर एशिया की खोज का पर्याप्त प्रभाव पड़ा था।[19]

चीन में ईसाई धर्म की सक्रियता के पहले चरण का अन्त धार्मिक संस्कारों के विवाद (1724) के साथ हुआ जिसका समाधान चीनियों ने धर्म प्रचारकों के कार्यकलापों पर पूर्णतः रोक लगा कर किया। उस समय यह विवाद धार्मिक न होकर इस विषय पर था कि सभी विचारों पर जिनमें धार्मिक विचार भी निहित थे, चीन का आन्तरिक नियंत्रण होना चाहिए। चीनी चाहते थे कि विचारधारा, शिक्षा तथा सरकार प्रत्येक क्षेत्र में प्रचार के द्वारा सम्राट का आधिपत्य घोषित किया जाये। इसके पश्चात् कुछ धर्म-प्रचारक भूमिगत रह कर कार्य करते रहे तथापि उन्हें फिर से पूर्व प्रभावशाली स्थिति तब तक न मिल सकी जब तक उन्हें समुद्र से आने वाले यूरोपीय व्यापारियों का समर्थन प्राप्त नहीं हुआ तथा उन्हें असमान सन्धियों से सुरक्षा प्राप्त न हुई। फिर भी शिक्षा के क्षेत्र में पर्याप्त प्रगति हुई। व्यावहारिक ईसाइयत तथा ईसाई धर्म के वैयक्तिक उदाहरण मात्र कथाओं से अधिक महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुए। ईसाई धर्म-प्रचारकों ने विभिन्न विदेशी धार्मिक पुस्तकों का अनुवाद चीनी भाषा में करना प्रारम्भ किया। 1872 में चीन का प्रथम शैक्षणिक मण्डल विदेश गया। इस प्रकार चीन का बौद्धिक पृथकत्व टूटने लगा।

19वीं शताब्दी में चीन में अमेरिकी तथा ब्रिटिश प्रोटैस्टेंट मण्डल की स्थापना से, ईसाई धर्म एशिया में प्रजातन्त्रीय विचारधारा की स्थापना के लिए (सकारात्मक)

19. चीनी प्रभाव 18वीं व 19वीं शताब्दी में तब महसूस किया गया जब वाल्तेयर तथा रूसो की रचनाओं ने यूरोप में चीन की प्रतिष्ठा को बढ़ाया। तथापि चीनी प्रभाव का सम्पूर्ण दबाव कृषि अर्थशास्त्रियों की रचनाओं के बाद महसूस किया गया जिनमें डॉ. क्यूसने की रचना 'ली डेस्पोटिज्म डी ला चीन' 1767 में प्रकाशित हुई। देखिए लुइस ए. मावरिक की रचना 'चायना ए मॉडल फार यूरोप, 'सेन एंटोनिओ' 1946.

सक्रिय दबाव बन गया। चीन में ईसाई धर्म की उपस्थिति के पश्चात् व्यापारियों तथा विदेशों में रहने वाले चीनियों में ऐसे अभिजात-वर्ग का शीघ्रता से प्रसार होने लगा जो चीनी साम्राज्य की परम्परागत संस्थाओं पर आघात करने के साहस व योग्यता रखते थे। चीनियों की राजनीति में न तो कोई ईसाई प्रजातन्त्रीय दल था तथा न ही ईसाई संगठन या ईसाइयों के प्रति कोई निश्चित सरकारी नीति ही थी। फिर भी सन-यात-सेन ईसाई था, राष्ट्रवादी शासन का नेता च्यांग-काई-शेक तथा अन्य अनेकों सुधारवादी व गणराज्यवादी नेता ईसाई थे। तथ्यतः कई चीनी ईसाइयत को आधुनिकीकरण व पाश्चात्यीकरण का पर्यायवाची मानते थे। ईसाइयत ने पश्चिमी साम्राज्यवाद को उचित तथा उदार बनाने की कोशिश की, चीन में पाश्चात्य जीवन-प्रणाली के उदाहरण प्रस्तुत किये तथा चीनियों को पश्चिमी संगठन की तकनीक से परिचित कराया। वस्तुतः चीन पर ईसाइयत के प्रभाव का सर्वाधिक प्रभाव यह माना जा सकता है कि चीनी साम्यवादियों ने ईसाई प्रभाव को पश्चिमी तथा सांस्कृतिक साम्राज्यवाद का प्रतीक मान कर उसे जड़ से उखाड़ फेंकने की कोशिश की है।

पाश्चात्य प्रभाव के बाद के दिनों में धन, वस्तुओं, सन्धियों तथा शस्त्रों के साथ-साथ मार्क्सवाद का प्रवेश भी चीन में समुद्र के मार्ग से हुआ। किन्तु साम्यवाद का सम्पर्क इससे पहले भूमि से भी था क्योंकि रूस चीन का महानतम पड़ोसी है तथा रूसी चीनी सीमा प्रदेश विश्व का विशालतम सीमा प्रदेश है।

भाषा के क्षेत्र में जन शिक्षा के तरीकों का इस्तेमाल करने के कारण मानचित्रों के उपयोग के बावजूद चीनी, साक्षरता के क्षेत्र में पश्चिमी राज्यों के स्तर तक पहुँच सकते हैं। क्रान्ति तथा प्रतिक्रान्ति की परिस्थितियों में आधुनिक चीन के कुछ लोगों का परिचय मात्र उस अव्यवस्था व भ्रम से हुआ है जो पश्चिमी विज्ञान में उनके देश में उत्पन्न किया है। अन्य चीनियों ने चीनी इतिहास में दमनपूर्ण भूतकाल के प्रति घृणा के साथ एक ऐसे वैज्ञानिक आधुनिक तथा पाश्चात्यीकृत चीन की कल्पना की है जो यूरोप तथा अमेरिका से अधिक आधुनिक होगा। तथापि अधिकांश चीनी मात्र पश्चिम से परिचित हुए, न तो वे पाश्चात्यीकृत हुए कि उनकी सभी परम्पराएँ समय से विपरीत हो जातीं तथा न ही चीनी इतने परम्पराप्रिय रहे कि सभी पश्चिमी बातें उपहासास्पद बन जातीं।

चीन की आधुनिक क्रान्ति की भूमिका चीन में विद्रोह की परम्परा तथा व्यवहार में निहित थी। ताई-पिंग विद्रोह जो ईसाई विद्रोहियों द्वारा प्रारम्भ किया गया था क्रान्ति की सीमा तक पहुँच गया था। यद्यपि यह पहला विद्रोह था जिसमें पश्चिमी विचारों तथा प्रभाव ने पर्याप्त प्रभाव डाला था तथापि इसमें ईसाइयत का तत्त्व संयोगवश ही सम्मिलित हुआ था। इसके अतिरिक्त ताई-पिंग विद्रोह ने विदेशी मंचुओं तथा चीन के अन्तिम राजवंश की दुर्बलता के प्रति चीनियों की प्रतिक्रिया को व्यक्त किया था।

उपर्युक्त कारणों के अतिरिक्त ताइपिंग विद्रोह तथा उनकी सरकार का पुनर्परीक्षण आवश्यक हो जाता है, क्योंकि इसने सामाजिक क्रिया के क्षेत्र में आश्चर्यजनक प्रयोग को प्रारम्भ किया तथा यह चीन के निरन्तर क्रान्तियों के चक्र में शीर्षस्थ है।

□□□

अध्याय 5 | ईसाई विद्रोहियों की सरकार (1850-1865)

सात सौ वर्षों में एक के बाद एक इतनी क्रान्तियाँ चीन में भयावह सैनिक हिंसा, राजनैतिक उथल-पुथल तथा विनाश के साथ हुई हैं कि विदेशी प्रेक्षक चीनी समाज में होने वाले इन विस्फोटों से दूर ही रहे हैं। इन अनेक चीनी क्रान्तियों में से कोई भी एक क्रान्ति उतनी ही महत्त्वपूर्ण है जितने यूरोप के 1848 के उदाहरवादी संघर्ष, 1867 का जापान की मेजी क्रान्ति तथा 1923 की तुर्की की क्रान्ति। कई मार्क्सवादी तथा गैरमार्क्सवादी पश्चिमी तथा चीनी प्रेक्षक यह स्वीकार करते हैं कि इन क्रान्तियों में निरन्तरता का एक सूत्र विद्यमान है।

क्रान्तियों में निरन्तरता

1850-65 का महान् ईसाई अथवा ताई-पिंग विद्रोह को कई कारणों से चीनी जनवादी गणराज्य की मूल स्रोत प्रघटना कहा जा सकता है। यह चीन की असहनीय आर्थिक व्यवस्था की प्रतिक्रिया थी। प्रत्येक विद्रोह एक विदेशी आक्रमण की तात्कालिकता में उत्पन्न हुआ था चाहे वह आक्रमण इंग्लैण्ड का रहा हो अथवा जापान का। दोनों ही विद्रोहों का नेतृत्व कुशाग्र राष्ट्रीय नेताओं के हाथ में रहा तथा दोनों ही पहले ईसाई धर्म तथा बाद में मार्क्सवाद के रूप में एक ऐसी विदेशी विचारधारा को देश में लाने की कोशिश की गई जो चीन के परम्परागत जीवन के लिए संकट उत्पन्न करती थी।

चीन के परम्परागत इतिहासकारों ने ताई-पिंग के नेताओं को सनकी तथा खूनी के रूप में चित्रित किया, उन्हें लम्बे बालों वाले लुटेरे कहा जिन्होंने सम्पत्ति का विनाश तथा लोगों का कत्ल किया। उनकी आकस्मिक सफलता किन्तु अन्ततः विफलता को एक शताब्दी के पश्चात् राष्ट्रवादियों ने उन्हें राष्ट्र-भक्त क्रान्तिकारी बना कर सम्मानित किया तथा चीनी साम्यवादियों ने उन्हें पूर्वज बनाया। 1930 में शायद सरकार के प्रोत्साहन पर चीनी विद्वानों में ताइपेंग के एतिहासिक तथ्यों के बारे में आकस्मिक रूप से रुचि बढ़ गई। इसी काल में इस संदर्भ में अनेक महत्त्वपूर्ण प्रलेख प्राप्त किये गये तथा मंचू विरोधी ताईपिंग नेताओं के प्रति सहानुभूतिपूर्ण पुस्तकें लिखी गयीं। चीन में साम्यवादियों के शक्ति प्राप्त करने के बाद ताईपेंग विद्रोह को महान् समाजवादी प्रयोग की संज्ञा दी गई। विद्रोह के नेताओं को राष्ट्रीय नेताओं का पद प्रदान किया गया जिन्होंने जनता की सेवा की, सेवा के लिए कार्य किया। ताईपिंग विद्रोहियों पर विजय प्राप्त करने वाले विजेताओं में से त्सेंग-कु-फेन को राष्ट्रीय गद्दार तथा प्रतिक्रियावादियों का नेता कहा गया। ताई-पिंग आन्दोलन की निस्वार्थता तथा पवित्रता के बारे में कई नाटक व एकांकी लिखे गये तथा जनता को एक बहुत पुरानी घटना के बारे में अपनी धारणा बदलने को प्रेरित किया गया। हाल ही में नानकिंग में ताई-पिंग अवशेषों की प्रदर्शनी की गई। इस प्रकार सैद्धान्तिक

दृष्टिकोण से ही एक सौ वर्ष पुराना ईसाई विद्रोह आधुनिक चीनी राजनीति में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है।

पाश्चात्य विद्वानों को ताईपिंग नेताओं तथा विचारों को आधुनिक गत्यात्मक विचारों में पुनः स्थापना में सावधानी बरतनी चाहिए तथापि ताईपिंग के विद्रोही गम्भीरता पूर्वक हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं। यह वास्तव में विश्व के इतिहास की एक महान अव्यवस्था थी। कई मामलों में यह एक महत्त्वपूर्ण बात थी जिसने आधुनिक चीन की क्रान्ति को प्रकाश प्रदान किया तथा इसे उकसाया। इसने आन्तरिक विजय, पतन तथा विद्रोह के परम्परागत चक्र को प्रत्यावर्तित किया। यह विदेशी सत्ता (मंचू) के विपरीत एक विरोधी शासन के रूप में आरम्भ हुआ। इसकी विजय तथा पतन दोनों में चीन के अन्तिम राजवंश में निहित दुर्बलताओं का प्रदर्शन किया जो इसके पतन का पूर्व सूचक था। इस घटना में विदेशी प्रभाव विदेशी हस्तक्षेप के विरुद्ध प्रतिक्रियाओं का प्रभाव प्रमुख था।

तात्कालिक एतिहासिक पृष्ठभूमि

1882 के नानकिंग की अपमानपूर्ण सन्धि पर हस्ताक्षर करने के बाद मंचू सरकार की अयोग्यता पूर्णतः स्पष्ट हो गई। चीन का जनसामान्य तथा कुलीन वर्ग दोनों ही 'पश्चिमी समुद्री बर्बरों' जैसे शत्रुओं के समक्ष सैकड़ों असुरक्षित महसूस करने लगे। सरकार की आन्तरिक दुर्दशा तथा विदेशी संकट के सम्मुख उसकी दुर्बलता के कारण लोगों में सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता तीव्रता से महसूस की तथा विदेशी शासकों के प्रति घृणा में तीव्रता आयी। दक्षिण चीन के लोगों में उपद्रव तथा विद्रोह की परम्परा अधिक दीर्घकालीन थी क्योंकि वे वाह्य विश्व के बारे में अन्य चीनियों से अधिक परिचित थे तथा मंचू उन पर आखीर में 1600 में ही विजय प्राप्त कर सके थे। सर्वप्रथम विद्रोह का प्रारम्भ वहीं से हुआ। इस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के अभाव में क्वां-तुग तथा क्वांसी के प्रदेश क्रान्ति के लिए इतनी उग्र पृष्ठभूमि प्रस्तुत नहीं कर सकते थे।

ताई-पिंग का विद्रोह, जो ईसाई असन्तुष्ट लोगों का उल्लेखनीय षड्यन्त्र था, आर्थिक शोषण से उत्पन्न हुआ, जिसे राजनीतिक अस्थायित्व ने प्रेरित किया तथापि विद्रोह की ये संपूर्ण प्रक्रिया पूर्णतया नवीन नहीं थी। चीन का संपूर्ण इतिहास शान्ति तथा विद्रोह के वैकल्पिक चक्र का क्रम रहा है। चीन में एक प्राचीन लोकप्रीय कहावत के अनुसार 'ईश्वर हर तीसवें वर्ष कोई सीमित अव्यवस्था तथा प्रत्येक सौवें वर्ष महान् उपद्रव उत्पन्न करता है।'

राजनीतिक व्यवस्था की पृष्ठभूमि में जनगणना सम्बन्धी दबाव स्वयं ही लोकप्रिय परम्परा से कहीं अधिक प्रभावशाली तत्त्व दृष्टिगोचर होता है। वास्तविकता यह है कि शान्तिकाल में आबादी का दबाव तो बढ़ा किन्तु कृषि के उत्पादन में वृद्धि नहीं हुई। भूमि-श्रमिकों का जीविकोपार्जन उत्तरोत्तर कठिन होता गया। इस दुर्दशा की चरम स्थिति ने अव्यवस्था तथा विद्रोह को जन्म दिया। चे-इन-लुंग (1736–1795) का शासन काल चीन के इतिहास का स्वर्णयुग कहा जा सकता है जिसमें उत्पादन पर्याप्त था, जनसंख्या सीमित थी, सांस्कृतिक उपलब्धियाँ महान् थीं तथा राजनीतिक क्षमता का प्रादुर्भाव हो चुका था। चिया-चिंग (1796–1820) के शासन के पश्चात् सम्पूर्ण चीनी साम्राज्य की शान्ति तथा व्यवस्था भंग होने लगी। आबादी तेजी से बढ़ने लगी किन्तु कृषि-भूमि बढ़ती

हुई जनसंख्या को खपाने में अक्षम रही। हसिया-ओ इशान के अनुसार अफीम के युद्ध तक चीन की जनसंख्या 40,00,00,000 हो गई थी जो सम्भवतया चे-इन-लुंग के शासन काल के प्रारम्भ की तिगुनी थी।[1] बढ़ती हुई आबादी के परिणामस्वरूप आर्थिक दबाव ने भूमि नियन्त्रण व्यवस्था को गम्भीर बना दिया तथा ब्याज की दर में वृद्धि हुई। परिणामस्वरूप जो सामाजिक एवं आर्थिक असमानताएं उत्पन्न हुईं वे सभी विद्रोहों का मूल प्रेरक तत्त्व साबित हुईं।

अफीम युद्ध के दौरान मंचू शासक स्वयं अपनी मूल सैनिक नीति को भूल गये। ब्रिटेन के नौ-सैनिक आक्रमण की सम्भावना से अपनी समुद्री सीमान्त प्रदेश को बचाने के अदूरदर्शी प्रयास में उन्होंने बड़े पैमाने पर चीनी जनता को अस्त्र-शस्त्र बांट दिये जबकि उन्हें स्वयं मंचू सेना को शताब्दियों की परम्पराओं की जकड़ से निकाल कर आधुनिक करना चाहिए था। ब्रिटेन के सम्मुख चीनी और मंचुओं की अपमानजनक पराजय के पश्चात् उनके अस्त्र-शस्त्र अनधिकृत लोगों के हाथों में चले गये।

इसके अतिरिक्त आगामी दशाब्दियों में, आतंकित जनता व नवीन बन्दूकें—इन दो कारकों का संयोग आग तथा बारूद के संयोग सा घातक सिद्ध हुआ। समुद्री क्षेत्र में बड़े पैमाने पर समुद्री डाके पड़ने लगे। आर्थिक भाषा में यह समुद्री डकैती वास्तव में संघर्ष था। जहाँ तक दक्षिण चीन की जनता का सवाल है, आठ पीढ़ियों में पहली बार चीनी सफलतापूर्वक मंचुओं से लड़े। जैसाकि जोसफ फूसे ने कहा, 'यह अपराध होने से अधिक राजनीतिक गलती है।' मंचुओं ने दुर्बल होते हुए भी अपनी गलतियों को नहीं पहचाना। उन्होंने अपनी आतंकपूर्ण कार्यवाहियों का प्रसार किया और उन्हीं में सुरक्षा पाने की कोशिश की। पेकिंग के उच्चस्तरीय राजदरबार से मंचू शासक चीन की वास्तविक स्थिति की विषमता को तब तक नहीं समझ पाये जब तक विद्रोह आधे से भी अधिक भाग में नहीं फैल गया।

इस विद्रोह का नेता हूंग-हजू-चुआन दुर्भाग्यवश नियमित परीक्षा में उत्तीर्ण एक उम्मीदवार था। हूंग जो 1813 में पैदा हुआ था, ने अपने जीवन का प्रारम्भ एक मेधावी ग्रामीण छात्र के रूप में शुरू किया। 1820 में उसने परम्परागत प्रतिष्ठित रचनाओं का अध्ययन किया। तत्पश्चात् वह प्रान्तीय प्राशासनिक सेवाओं की परीक्षा में बैठा किन्तु असफल रहा। अपनी असफलता से निराश न होकर उसने अध्ययन जारी रखा तथा 1837 में उसने फिर परीक्षा दी जिसमें वह फिर अनुत्तीर्ण रहा। 1833 में उसने एक चीनी प्रोटेसटेंट ईसाई के द्वारा लिखे गये साहित्य को पढ़ा, तथापि तब उन पर विशेष ध्यान नहीं दिया। इसके बाद वह भयंकर रूप से बीमार पड़ा। बीमारी के दौरान ईसाई साहित्य के माध्यम से 1837 में उसे यह सन्देह हुआ कि परीक्षा में असफलता का कारण वह नहीं अपितु परीक्षा व्यवस्था तथा उसके साथ ही सम्राट था। अपने विचारों में अव्यवस्थित होने के बाद हूंग ने एक ऐसा करुण नाटक का प्रारम्भ किया जिसमें लाखों आदमी समाप्त हो गये। हूंग ने ईसाई धर्म के अनुसार ईश्वर को पाया जिसे उसने ईश्वर के लघु भ्राता का नाम दिया। इस प्रकार ईसाई त्रिमूर्ति का अविर्भाव हुआ।

विश्व के इतिहास में शायद ही कहीं एक छात्र की असफलता के ऐसे गम्भीर परिणाम हुए हों। ईश्वर रूपी पिता 'जेवोहा', ईश्वर का पुत्र जीसस, ईसामसीह और

1. हसिओ ई शान चिंग ताई शीह उद्धृत, पृ. 162.

ईश्वर का लघु भ्राता हूंग-हसू-चुश्रान इस ईसाई त्रिमूर्ति ने चीनी कृपक को बहुत ज्यादा प्रभावित किया। हूंग को प्रोटेसटेंट धर्म की थोड़ी सी दीक्षा एक अमरीकी प्रचारक ईश्वर रोबर्ट से मिली। यह ज्ञात नही हो पाया है कि क्या हूंग ने जीसस के लघु भ्राता की पूजा का मौका श्रीमान रॉबर्ट को दिया था। तथापि इतना निश्चित है कि इस नये नेता को न केवल पाश्चात्य आध्यात्मिक सहानुभूति प्राप्त थी अपितु उसने इसे बढ़ाने का प्रयास भी किया। इस ईसाई आन्दोलन के प्रारम्भ में कोई विदेशी धर्म प्रचारक सम्मिलित नहीं थे।

1848 में हूंग ने शांग-ती-हुई अथवा 'ईश्वर की आराधना का संगठन' का उद्घाटन किया। उसने जान-बूझ कर ईश्वर के लिए परम्परागत चीनी पद शांग-ती का प्रयोग किया। उसने कैथोलिकों द्वारा प्रयुक्त पद 'तीइंग-चू' का प्रयोग नहीं किया। शांग-ती का आंग्ल भाषा में अर्थ सर्वोच्च-शासक लिया जा सकता है जबकि तीइंग-चू का मतलब 'स्वर्ग का स्वामी' होता है। यह अन्तर शाब्दिक होते हुए भी महत्त्वपूर्ण है। हूंग ने जान-बूझ कर मंचुओं की कानूनी सत्ता का उल्लंघन करते हुए एक अमान्य ईश्वर की आराधना शुरू की तथा उसे स्पष्ट रूप से ऐसी संज्ञा प्रदान की जो विगत (विद्यत) प्राशासनिक व्यवस्था में विद्यमान नहीं थी।

प्रारम्भ से ही इस सम्प्रदाय के अनुयायियों ने सैनिक प्रशिक्षण छोटे समूहों में प्राप्त करना प्रारम्भ किया। वे जानते थे कि अपने उत्साही नेता तथा अजनबी ईश्वर के कारण उन्हें मंचू सत्ता से संघर्ष करना होगा। प्रारम्भ से ही कुछ लुटेरों तथा अर्थ लुटेरों के वर्ग ने भी इस सम्प्रदाय में प्रवेश लिया जो स्वयं एक ऐसे गुप्त समाज के सदस्य थे जो मंचुओं के बहिष्कार का समर्थन करता था तथा मुनाफाखोरों को समाप्त करना चाहते थे। 1885 तक यह सक्रियता पर्याप्त सीमा तक पहुँच चुकी थी। हूंग-हसू-चुश्रान ने अपने अनुभव के आधार पर ईश्वर को एक सुनहरी दाढ़ी वाला वृद्ध पुरुष के रूप में चित्रित किया जो काले कपड़ों में भव्य व्यक्तित्व वाला था जिसकी उपस्थिति अत्यधिक प्रभावशाली थी। इस ईश्वर ने हूंग को आदेश दिया कि सभी विदेशियों को देश से बाहर निकाल दिया जाये तथा वे लोग जो मूर्तियों को पूजते हैं उनका वध कर दिया जाये। यह क्रान्ति क्वांग-सी के उबड़-खाबड़ प्रदेश से आगे फैलती गयी तथा तीव्र व हिंसात्मक होती गयी।

1851 में हूंग ने स्वयं को ताई-पिंग अथवा महान शान्ति का तियन-चांग अर्थात् स्वर्गीय राजा घोषित किया। उसने न केवल स्वयं को स्वर्ग में ईश्वर का पुत्र माना अपितु इस विश्व में समग्र मानवता का शासक भी माना। सिंहासनारूढ होते ही उसने 'स्वर्गीय पिता, स्वर्गीय वरिष्ठ भ्राता तथा स्वर्गीय साम्राज्य की महान शान्ति का स्वर्गीय राजा' शब्दों से अंकित सरकारी तथा सैनिक घोषणा पत्र प्रारम्भ किये।

ताइ-पिंग क्रान्ति अविश्वसनीय रफ्तार से बढ़ी जिसकी तुलना में 1917 की बॉलशेविक क्रान्ति पर्याप्त धीमी लगती है, क्योंकि मार्क्सवादियों को 70 वर्ष षड्यन्त्र तथा अन्दोलन करने के पश्चात् सफलता मिली जबकि हूंग को यह सफलता दो वर्ष से भी कम समय के राजनीतिक संगठन में प्राप्त हो गयी। हूंग के पूर्ण रूप से गम्भीर धर्म के अन्तर्गत दक्षिण चीन के किसानों ने मंचू विरोधी तथा मूर्तिपूजा विरोधी आन्दोलन प्रारम्भ किया। मंचू की सरकारी सेनाएँ धीरे-धीरे निकम्मी होती गयीं तथा यह उन लोगों का मुकाबला करने में असमर्थ प्रतीक होती थीं जो इहलोक में तथा परलोक में अपनी स्वतन्त्रता के प्रति पूर्ण रूप से आश्वस्त थे। 1851 के ग्रीष्म में यून-गन नगर के अधिकार से लेकर 1853 के वसन्त में नानकिंग के अधिकार तक ताइपिंग सेनाएँ एक प्रतिक्रिया के रूप में सात दक्षिण

पश्चिमी प्रान्तों में फैल गयीं। ताइ-पिंग की सफलता के समक्ष पश्चिम में मात्र नैपोलियन की विजय को रखा जा सकता है जिसने 100 दिन तक फ्रांस राज्य में तथा फ्रांस की सेना में अपनी सत्ता को सुदृढ़ बनाये रखा।

सैनिक इतिहास

नानकिंग में 1855 में राजधानी की स्थापना हुई और हूंग-शू-चुआन ईश्वर की आराधना में अपने रनिवास में अधिक समय बिताने लगा। ताई-पिंग की सेना की अभूतपूर्व सफलता 1853 में दृष्टिगोचर होती है जबकि उसने चार सुदृढ़ प्रान्तों को पार करके 26 नगरों में चार समय से भी कम समय के अन्तर में कब्जा किया लेकिन तिन-स्तिन के 20 मील के भीतर तथा पिकिंग नगर के 100 मील के निकट उसे असफलता का सामना करना पड़ा। इसके साथ-साथ सैनिक सफलता समाप्त हो गयी। (ताइ-पिंग तिआन-कू का मानचित्र देखिए)।

ताइपिंग तिइन कुओ 1851-1864
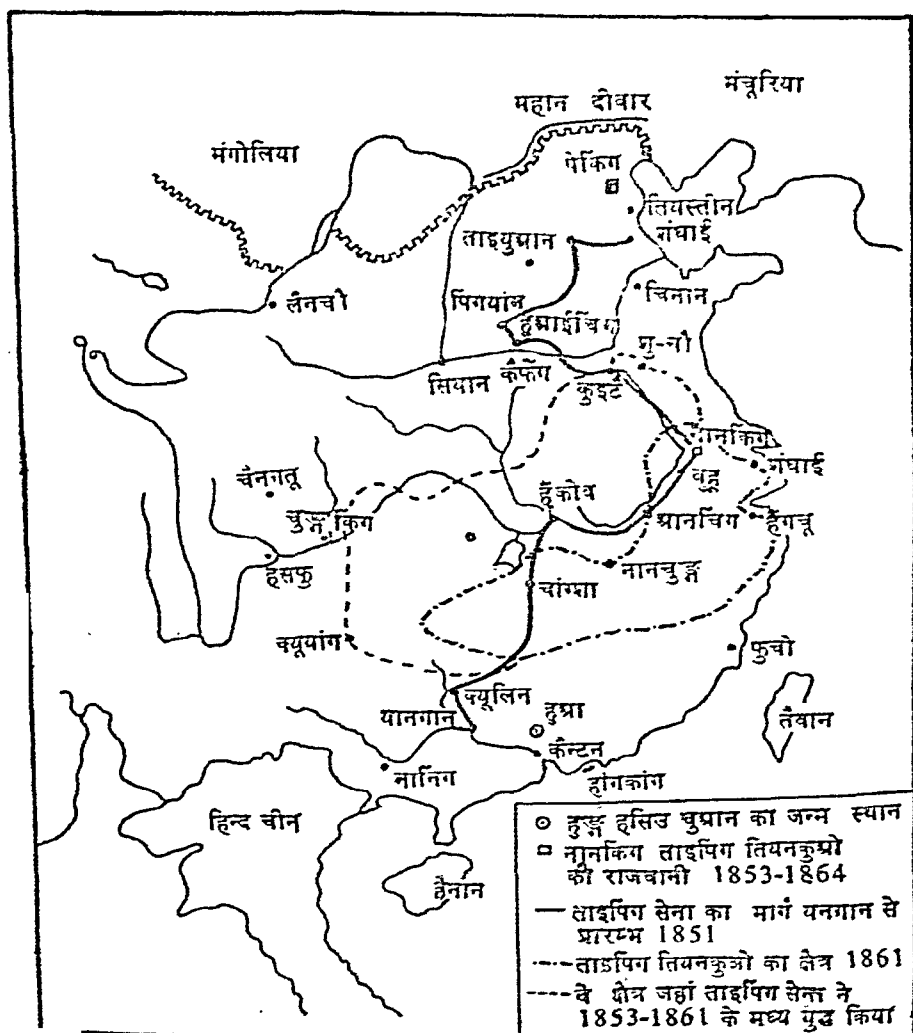
ताईपिंग साम्राज्य ने प्रोटेसटेंट तथा कैथोलिक राज्यों से सैनिक आधार पर वातचीत प्रारम्भ की। इनके प्रतिनिधियों को ताईपिंग नेता ईसाई होने के नाते लघु भ्राता के रूप में मानते थे। पश्चिमी देश भी ताईपिंग के धार्मिक विश्वास से उतने ही चिन्तित थे जितने इसके क्रान्ति पूर्ण विचारधारा से जिसके कारण 10 वर्ष वड़े पीड़ायुक्त संक्रमण काल सावित हुए। चीन में एक साथ दो साम्राज्य पराजित मंचुओं तथा आहत क्रान्तिकारियों के द्वारा स्थापित किये गये जिनकी राजधानियाँ पिकिंग तथा नानकिंग में थीं तथापि धीरे-धीरे चीन की सैनिक व्यवस्था की अच्छाइयों के कारण सम्पूर्ण चीन में सैनिक प्रशिक्षण, पाश्चात्य स्वयंसेवकों की सहायता तथा चीनी सेवा को पश्चिमी सैनिक दक्षता का प्रशिक्षण, इन सब तत्त्वों ने मिलकर पिकिंग की शक्ति को वढ़ा दिया। एक अमेरिकी व्यक्ति फैड्रिक टाउनसैंड वार्ड, जो कि अमेरिका के मैसाचूसेट्स का रहने वाला था, एक मंचू द्वारा प्रतिपादित देवता के रूप में उदित हुआ जव उसने मंचू के समर्थक स्वयं सेना का नेतृत्व किया तथा ताईपिंग के अचानक हमले का शिकार बनकर मृत्यु को प्राप्त हुआ एक अन्य अमेरिकी, एस. एस. वर्गवाइन जो कि नॉर्थ कैरिलोना विश्वविद्यालय में अंग्रेजी का इन्सपैक्टर था, ने यांग-जी मुहाने के युद्ध-क्षेत्र के लिए चौपिल हिल से प्रस्थान किया। उसने मंचू तथा क्रान्तिकारी दोनों को ही छोड़ कर अपने-आप को चीन का वादशाह वनाने का प्रयास किया तथा आज तक किसी को भी यह मालूम नहीं है कि उसकी मृत्यु कव हुई, किन्तु एक नहर के अन्दर उसका नग्न शरीर पाया गया। पश्चिमी आक्रमण में अन्तिम नेतृत्व ब्रिटिश सेना के मेजर चार्ल्स जॉर्ज गोर्डन के द्वारा किया गया। उसे असफलता मिली। 1863 तक ताईपिंग नेतृत्व पूर्णतः समाप्त हो चुका था तथा साथ ही इसकी सेना भी जो अपने चरमोत्कर्प के समय 65 लाख के करीव थी, समाप्त हो गयी। हूंग को अपने जीवन के अन्तिम दिन अत्यधिक शोचनीय अवस्या में गुजारने पड़े। उसके मन्त्रियों में तीव्र सघर्प तथा वैयक्तिक दुश्मनी पैदा हो गयी। कुछ शाही वायसरायों ने वड़े पैमाने पर चीनी सेना का संगठन करके हूंग का प्रभाव यांग सी-नदी तक सीमित करने की कोशिश की। 1864 तक ताईपिंग सेना की दुर्दशा हो चुकी थी। 1864 में स्वयं नानकिंग का पतन हो गया तथा हूंग ने प्रताड़ना तथा अपमान से वचने के लिए आत्महत्या कर ली। ताईपिंग द्वारा अन्तिम संगठित प्रयास मई 1865 में उस समय नप्ट हो गया जव 'ली' ने ग्रान्ट के सम्मुख आत्म-समर्पण कर दिया तथापि 1886 तक यत्र-तत्र संघर्प चलता रहा।[2]

2. हुग हूसि चुआन के जीवन पर तथा ताईपिंग विद्रोह के वर्णन के लिये कुछ पुस्तकें उल्लेखनीय हैं–दि विजन ऑफ हुंग सिउ शेव एण्ड ऑरिजिन ऑफ दि क्वांगसी इन्सरेक्शन पुनः प्रकाशित संस्करण, पेइपिंग 1935, एल. व्राइन दि ताईपिग रिवेलियन इन चाइना लंदन, 1862, डब्लू. जे. हेल त्सेंग कु पेन एण्ड दि ताईपिग रिवेलियन, न्यू हेवर, 1927, टी. टी. मीडोज, दि चाइनीज एण्ड देअर रिवेलियन्स, लन्दन, 1856, जे. एम. मैकी, लाइफ ऑफ ताइपिग वाग न्यूयॉर्क 1857। चीनी भापा में ताईपिग विद्रोह के कई विवरण प्राप्त होते हैं तयापि चूंकि चिग सरकार ने विद्रोह के वारे में सभी सूचनाओं का दमन किया था अतः सरकारी विवरण के अतिरिक्त अधिकृत विवरण वहुत कम उपलब्ध है। 1927 की राष्ट्रवादी क्रान्ति के पश्चात् एकाएक ताईपिंग के इतिहास तथा सामाजिक प्रयोग के वारे में रुचि में वृद्धि हुई। ताईपिग से सम्बन्धित कई प्रलेख चीन तथा वाहरी देशों के पुस्तकालयों में सुरक्षित पाये गये तथा कई प्रलेख पेरिस, वर्लिन तथा लंदन के पुस्तकालयों से नकल किये गये। कुछ नवीन प्रकाशन इस प्रकार से है–चेंग येन शिग का हिस्टोरिकल डोक्यूमेन्ट्स ऑफ ताईपिग तिअन कू (प्रथम संग्रह) पेकिंग 1925, लिउ फू : एकलेक्शन ऑफ सिक्सटीन इंट्रेस्टिंग ताईपिग तियन कू डोक्यूमेंट्स, पेकिंग 1926, कलेक्टेड डोक्यूमेंट्स ऑफ ताईपिंग तियन कू, शंघाई

राजनीतिक तथा धार्मिक प्रथाएं

ताईपिंग व्यवस्था के अन्तर्गत स्वर्गीय राजा के रूप में हूंग हसू चुग्रान न केवल एक विशाल धार्मिक क्रान्तिकारी आन्दोलन का नेता था अपितु वह अपने चर्च का अध्यक्ष भी था वस्तुत: उसे चर्च के लिए ईश्वर का अवतार माना जाता था। इस प्रकार हूंग ने सांसारिक तथा आध्यात्मिक दोनों स्तरों पर ईसाई सिद्धान्तों के आधार पर चीन को पुनर्गठित करने का प्रयास किया। उसके लेखों तथा भाषणों में सभी ईसाई विचार जैसे मुक्ति, ईश्वर द्वारा सृष्टि की रचना, शिखर पर दिया गया उपदेश, आत्मा की निरन्तरता तथा कायमत के दिन होने वाले निर्णय, ये सब विद्यमान थे। हूंग शाब्दिक रूप में ईसाई धर्म को पहचानता था किन्तु वह इसकी आत्मा के रहस्य व शाश्वता को पहचानने में असमर्थ रहा।

सम्भवतया वह स्वयं को ईश्वर का पुत्र मानने के चक्कर में वास्तविकता से ध्यान खो बैठा। उसने उपद्रव में अपने सभी सहयोगियों को भी राजा अथवा वांग की पदवी दी किन्तु उसने तथा उसके राजाओं ने अपने धर्म का प्रयोग अबोध जनता का दमन करने में किया। स्पष्टतया चीनी जनता ताईपिंग नेताओं के धर्म के आडम्बर से आतंकित थी तथापि यह कहना बड़ा कठिन है कि स्वयं ताईपिंग नेता अपनी विचारधारा में कितना विश्वास करते थे। ताईपिंग आंदोलन द्वारा ईसाई धर्म की व्याख्या की निस्सारता स्वयं इस तथ्य से प्रमाणित हो जाती है कि एक बार इस महान आंदोलन के समाप्त हो जाने पर विश्व के किसी भी कोने में एक भी ताईपिंग चर्च अवशिष्ट नहीं रहा।

ताईपिंग सम्प्रदाय में धर्म के समर्थन में इतना अधिक सैनिक शक्ति का प्रयोग किया गया कि एक बार उसके समर्थक सैनिक तथा प्राशासनिक ढांचे के समाप्त हो जाने पर उसके अस्तित्व की कोई सम्भावना नहीं रही। ताईपिंग का उत्थान आश्चर्यजनक था, इसके नियम कठोर थे। ताईपिंग प्रदेश में प्रत्येक व्यक्ति को प्रति सप्ताह चर्च जाना होता था, प्रत्येक अनुयायी को एक विशिष्ट धार्मिक अनुष्ठान जो कैथोलिक तथा बौद्ध उत्सवों का मिश्रण था, करना आवश्यक होता था। साप्ताहिक धार्मिक समारोहों का संचालन ताइ-पिंग अधिकारियों द्वारा किया जाता था जो प्रशासक तथा धर्माधिकारी दोनों होते थे। हूंग तथा उसके साथियों द्वारा लिखे गये लेख सम्मेलनों में पढ़े जाते थे या उसके आधार पर उपदेश दिये जाते थे।

1936। इन नवीन ग्रंथों के कारण विद्वान लोग ताईपिंग व्यवस्था में रुचि लेने लगे तथा इस प्रकार के अनुसधान ने इस सन्दर्भ में और अधिक ज्ञान प्रदान किया। एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ ए क्लासीफाइड कम्पाइलेशन आफ इनफॉर्मेशन ऑन दि रिबेल्स के प्राप्त होने के पश्चात् उनकी पांडुलिपि से 1932 में संस्करण प्रकाशित किये गये। यह रचना शाही सेना के जर्नल त्सेंत्-कू-फेन के तत्वावधान मे चांग ते चेइन ने की, जिसने दुश्मन की गतिविधियों का पता लगाने के लिए गुप्तचर विभाग की स्थापना की थी। गुप्तचर विभाग का अध्यक्ष होने के नाते चांग ने अपने कार्य को पूरा करने के लिए घुसपैंठ चालबाजी आदि सभी गतिविधियों का प्रयोग किया। यह पुस्तक 1855 में पूर्ण हुई। यह ताईपिंग शासन काल का पाँचवा वर्ष था तथा इस ग्रंथ को शाही सेना में उनकी सूचना के लिये वितरित किया गया। यद्यपि ताईपिंग के लोगों ने इस पुस्तक की समाप्ति के पश्चात् अपनी व्यवस्था में पर्याप्त परिवर्तन किये थे तथापि इस पुस्तक की तुलना जब हाल ही में प्राप्त ग्रंथ से की जाती है तो यह स्पष्ट हो जाता है कि चांग ने सम्पूर्ण कठिनाइयों व संकटों के बावजूद यह जानकारी प्राप्त करने में पर्याप्त सावधानी व निश्चितता बरती थी। ताईपिंग विद्रोह की विस्तृत विवेचना की संदर्भ सूची के लिए देखिए—तेंग सु यू की रचना लाइट ऑन दि हिस्ट्री ऑफ दि ताईपिंग रिबेलियन, कैम्ब्रिज 1950

इनमें कुछ श्लोक भी होते थे जो सामान्य जनता की समझ में आसानी से आ जाते थे। क्वांग-शी में, जहाँ कि इस आंदोलन का प्रारम्भ हुआ था, हूंग के विचारों तथा उपदेशों को बड़े विश्वास से ग्रहण किया गया। किन्तु जैसे-जैसे ताईपिंग सेना उत्तर की तरफ बढ़ती गयी तथा लाखों व्यक्तियों पर आधिपत्य किया तो ताईपिंग उपदेशों का प्रचार धीमा पड़ता गया तथा विश्वास न करने वाले लोगों पर भारी जुर्माना लगाने पर भी ये लोग ताईपिंग सम्प्रदाय में विश्वास करने में असमर्थ रहे।[3]

इसके अतिरिक्त, ताईपिंग सम्प्रदाय ने मूर्ति-पूजा का खण्डन करने के उत्साह में कई मन्दिरों को तोड़ा तथा पूर्वजों की पूजा करने का खण्डन किया जिससे चीन का जन-सामान्य रुष्ट हो गया। यदि हूंग ने पश्चिम से ईसाई धर्म के व्यावहारिक स्वरूप में थोड़ी बहुत भी जानकारी की होती तो उसने चीनियों को वस्तुतः एक ऐसा ईश्वर प्रदान किया होता जिसकी चीन के आध्यात्मिक जगत में अत्यधिक आवश्यकता थी। सर्वव्यापी स्नेह का सिद्धान्त चीन के लिए भी उतना ही उपयोगी सिद्ध हुआ होता जितना यह अन्य देशों के लिए है। ताईपिंग नेतृत्व में कई राजनैतिक दक्षताएँ थीं लेकिन ईसाई धर्म के सिद्धान्तों का अभाव था। यह धार्मिक आन्दोलन एक वृहत् आडम्बर साबित हुआ तथा इन क्रान्तिकारी सुधारकों ने एक भ्रष्ट धार्मिक तंत्र की स्थापना की।[4]

ताईपिंग आर्थिक सुधार :

कृषि क्षेत्र में भी ताईपिंग ने बड़े महत्त्वाकांक्षापूर्ण सुधार प्रारंभ किये थे किन्तु इन सुधारों का अल्पावधि के कारण कभी इनकी पूरी महत्ता को न समझा जा सका।[5] जैसा कि 'स्वर्गीय साम्राज्य' के साहित्य से पता चलता है ये सुधार शंक कालीन नमूने पर आधारित थे।

3. पेंग त्से आई, रिवोल्यूशनरी थॉट ऑफ दि ताईपिंग, तियन कू शंघाई 1946, पृ. 76–81।

4. ताईपिंग के सामाजिक तथा राजनीतिक धारणाओं को स्पष्टतया उनके अनुयायियों में प्रचलित प्रलेखों, घोषणाओं तथा पुस्तकों में दिया जाता था। 1845-46 में हुंग हसु-चुआन द्वारा लिखित ताईपिंग डिक्रीज में उसने ईश्वर को दैवीय पिता, जीसस क्राइष्ट को 'दैवीय वरिष्ठ भ्राता' तथा स्वयं को उन दोनों से सम्बन्धित स्थापित करते हुए ईसा का लघु भ्राता कहा गया था। नवीन कलैंडर को स्वीकार करने का आग्रह करने वाला एक स्मरण पत्र परम्परागत चन्द्र-व्यवस्था जो 28 दिन का एक माह तथा 13 माह का एक वर्ष बताती थी, का संयोजन पश्चिमी सूर्य व्यवस्था से किया गया था। यह व्यवस्था 14 वर्ष तक शक्तिपूर्वक चीनी प्रजनता पर थोपी गई जिसे चीनी प्रजा ने पसन्द नही किया। दिनो के नाम में परिवर्तन ने उनकी दैनिक आदतों में व्यवधान उत्पन्न किया। इनमें से कुछ परम्पराएँ चीन मे शताब्दियों से चली आ रही थीं तथा उन्हे ऐसा प्रतीत हुआ मानो उनके दैनिक जीवन की किसी मूल बातों को परिवर्तित कर दिया गया था।

सरकारी पदों को नियमित करने वाले नियम तथा गुणवान लोगों को भर्ती करने से सम्बन्धित दो घोषणाएँ वे महत्त्वपूर्ण प्रलेख है जिनका प्राशासनिक व्यवस्था पर प्रभाव था। पहले प्रलेख में सार्वजनिक पदाधिकारियों के चयन, पद, कर्तव्य तथा उत्तरदायित्व का वर्णन था जबकि दूसरा प्रलेख दैवीय राजा जो ताईपिंग साम्राज्य का शाही परीक्षक होता था तथा एक काल्पनिक चिंग अधिकारी जो नवीन शासन मे पद प्राप्त करना चाहता था, परिचर्चा थी जो प्राशासनिक सेवा, नीतियाँ तथा नवीन क्रान्तिकारी सरकार के बारे में थे।

इस प्रकार के स्रोत साहित्य का अध्ययन करने से आधुनिक प्रेक्षक यह अनुभव कर सकता है कि ताईपिंग विद्रोह की शक्ति का मूल स्रोत मात्र धार्मिक सनक अथवा सैनिक शक्ति नही थी अपितु वे राजनीतिक व सामाजिक सुधार भी थे जो ताईपिंगो ने प्रयत्नपूर्वक किये थे।

5. तुलना कीजिए जो. ई. टेलर 'दि ताईपिंग रिबेलियन : इट्स इकोनोमिक बैकग्राउंड एण्ड सोश्यल थ्योरी, दि चाइनीज सोश्यल एण्ड पॉलिटिकल साइन्स रिव्यू, ग्रन्थ XVI (1932) पृ. 544-614।

ताइपिंग सम्राज्य के समान इस व्यवस्था के अनुसार संपूर्ण भूमि को सार्वजनिक संपत्ति माना गया तथा सम्पूर्ण उत्पादन सार्वजनिक कोप में जमा होना था। वृद्ध तथा दुर्बल लोगों की सहायता सरकार करने वाली थी तथा सैद्धान्तिक रूप से सभी बीमारों का उपचार सरकार मेडीकल इन्श्योरेन्स व्यवस्था से करने वाली थी। विवाह व दाहकर्म की व्यवस्था सरकार करने वाली थी। 16 से 50 वर्ष की आयु के सभी स्त्री-पुरुषों को सरकार जमीन देकर उनसे काम करने को कह सकती थी। उनके श्रम से प्राप्त उपलब्धि सरकारी कोप में जमा होने वाली थी। प्रत्येक व्यक्ति को मात्र अपनी आवश्यकतानुसार खाद्यान्न रखने की आशा थी।

खेती योग्य सम्पूर्ण भूमि को उत्पादन के आधार पर व स्तरों पर विभाजित किया गया था। वितरण में न्यायसंगतता बरतने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को विभिन्न स्तरों वाली भूमि का मिश्रित रूप दिया जाता था। सैद्धान्तिक रूप से किसी व्यक्ति को निजी सम्पत्ति रखने का अधिकार नहीं था। तथा राज्य द्वारा प्रदत्त भूमि निजी नहीं होती थी। उस भूमि को जोतने तथा उसके आवश्यकता पर अनाज प्राप्त करना ही उसका अधिकार था।

खेती के मूल व्यवसाय के साथ साथ प्रत्येक व्यक्ति को कुटीर धंधे अथवा पशु ालन का व्यवसाय करना उत्पादन बढ़ाने के लिये आवश्यकता था। इन व्यवसायों से प्राप्त संपत्ति भी सार्वजनिक मानी जाती थी। इस व्यवस्था का मूल आधार सामूहिक सम्पत्ति का विचार था जो हुंग में ईसाई धर्म से सर्वव्यापी प्रेम के अनुसार निर्धारित किया था। स्वर्गीय साम्राज्य के सभी व्यक्तियों को एक विशाल परिवार का सदस्य माना जाता था जिसका संरक्षक स्वर्ग में ईश्वर तथा नानकिंग में स्वर्गीय राजा था। उन्हें सार्वजनिक भूमि पर कार्य कर निजी स्वार्थ को भुला कर कार्य करना था ताकि वे लाभ व सुविधाओं को बराबर-बराबर बाँट सकें।

यद्यपि ये व्यवस्थाएँ सैद्धान्तिक रूप में पर्याप्त प्रशंसनीय थीं किन्तु उनका व्यावहारिक स्वरूप इतना उत्साहपूर्ण नहीं था। आधुनिक चीनी विद्वानों द्वारा किये गये अध्ययनों से ज्ञात होता है कि यह सामुदायिक व्यवस्था सीमित समय के लिए कुछ ही स्थानों पर लागू की गई थी। ताइपिंग लोगों ने जब यह अनुभव किया कि यदि इस व्यवस्था को बलपूर्वक लागू किया गया तो जनता निष्क्रिय असहयोग के द्वारा उनके प्रयासों को असफल कर देगी तो उन्होंने अपनी व्यवस्था में संशोधन कर लिया उसका परित्याग कर दिया। ताइपिंग लोगों का प्रारम्भिक समाजवाद नकारात्मक अधिक था क्योंकि वांछनीय भू-स्वामियों तथा मंचू एवं चीनी कर अधिकारियों से छुटकारा पाना चाहते थे जबकि नवीन आर्थिक व्यवस्था बनाने के बारे में इनके पास कोई सकारात्मक विचार नहीं था।[6]

ताइपिंग व्यवस्था के साम्यवादी आर्थिक विचार सैनिक शक्तियों पर भी लागू किये गये। नानकिंग पर आधिपत्य के पश्चात् राजधानी के चारों तरफ के ग्रामीण क्षेत्रों को सैनिक स्तर पर गठित किया गया। चीन के इस भाग में सामुदायिक व्यवस्था 1856 में में लागू की गयी तथा इसके असफल होने के बावजूद यह सैनिक क्षेत्रों में बनी रही। सैनिक अफसरों के द्वारा लूटा गया सम्पूर्ण माल सार्वजनिक (कोश) में जमा कराना होता था।

6. लो इर काग ताइपिंग नियन-कू-शीह काग (आउटलाइन हिस्ट्री ऑफ दि ताइपिंग नियन-कू), शंघाई 1937 पृ. 90-98।

इस नियम का उल्लंघन करने वाले को कठोर दण्ड दिया जाता था। इस कठोर दण्ड का अभिप्राय सामाजिक न्याय की अपेक्षा अनुशासन बनाये रखना होता था तथापि 1854 में एक पश्चिमी प्रेक्षक ने बताया कि नानकिंग में साम्यवादी व्यवस्था थी तथा 'सार्वजनिक अन्न-भण्डार तथा वस्तुओं के सार्वजनिक कोटा की व्यवस्था के ही कारण दूकानों तथा व्यापार का पूर्ण अभाव था।[7]

अन्य सुधार

स्त्रियों के स्तर के बारे में ताइपिंग लोगों में जो सुधार किये उनके पूर्व उदाहरण न तो चीन में उपलब्ध थे और न तत्कालीन पश्चिम में। ताइपिंग की विजय के समय स्त्रियाँ सेना में विभिन्न प्रकार के कार्य करती थीं। कई कृषक स्त्रियाँ जो क्वांग-सी के प्रारम्भ दिनों में ताइपिंग कैम्पों में रही थीं, परिपक्व श्रमणार्थी बन गयीं तथापि यौन स्वच्छन्दता का विकास हुआ तथा यौन अनैतिकता पर नियन्त्रण करने के लिए ताइपिंग अधिकारियों ने स्त्री अधिकारियों के नियन्त्रण में स्त्रियों के विशेष कैम्पों की व्यवस्था की।

नानकिंग में शासन के सुदृढ़तापूर्वक स्थापित होने के पश्चात् स्त्रियों को भी प्राशासनिक सेवा की परीक्षा में भाग लेने का अधिकार दिया गया जो चीन के लिए एक अभूतपूर्वक बात थी। इस परीक्षा में सफल महिलाओं को सचिव पद पर नियुक्त किया गया। चीन की बहुत पुरानी परम्परा जिसके अनुसार चीनी लड़कियों के पैर बड़े होने से रोकने के लिए बाँध दिये जाते थे, पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। बँधे हुए पैर वाली महिलाओं को भी कठोर परिश्रम के लिए बाध्य किया जाता था। पैर बाँधने की प्रथा के साथ-साथ वेश्यावृत्ति को भी समाप्त कर दिया गया। यद्यपि अन्ततः ये स्त्री सुधार असफल हुए तथा इनमें से अधिकांश बहुत कम समय के लिए लागू हुए फिर भी यह तथ्य कि ये शुद्धतम रूप में एक चीनी आन्दोलन की उपज थे, चौंकाने वाला है; साथ ही इस बात का संकेत देता है कि आज से 100 वर्ष पूर्व चीनी जनता का एक अंश कितना क्रान्तिकारी था।

अन्य ताइपिंग सुधारों को भिन्न-भिन्न मात्रा में सफलता प्राप्त हुई। अफीम तथा तम्बाकू पीने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया तथा दोनों के अपराधियों की सजा मृत्यु-दंड रखी गयी। कुछ समय के लिए वस्तुतः मद्य-निषेध क्रियान्वित हुआ। हूंग ने अपनी रचनाओं में जो विचार प्रकट किये हैं उससे स्पष्ट है मद्य निशेध उसकी मूल नीतियों में से एक था। एक बार उसने एक छंद लिखा जिसमें उसने अफीम के बारे में अपनी घृणा व्यक्त करते हुए ये भाव व्यक्त किये—

'अफीम का पाइप एक बंदूक की तरह से है जो पीने वाले को नुकसान पहुँचाता है, जिसकी वजह से कितने ही शूरवीर अपने पलंग पर पड़े-पड़े मर गये हैं।'[8]

7. ब्राइन पूर्वोद्धृत पृ. 233 एक अन्य निजी विवरण में आलेखित किया गया है 'जब ताइपिंगों ने एक नगर आधिपत्य में किया तो उन्होंने स्थानीय अधिकारियों से उस जिले की सम्पूर्ण भूमि का सर्वे करने के लिए कहा, फिर जमीन जोतने वालों को दे दी गई तथा भू-स्वामियों पर भूमि-कर लेने पर प्रतिबन्ध लगा दिया······सौभाग्यवश उस वर्ष फसल अच्छी हुई थी, अतः समान्य लोग कर चुकाने में समर्थ हो सकें किन्तु जो शरणार्थी बाहर से आये थे, जिनके पास कोई काम नहीं था तथा वे भू-स्वामी जो भूमिकर पर निर्भर करते थे उन्हें संकट का सामना करना पड़ा' ह्से हसिंग माओ लिखित कलेक्शन ऑफ थर्टीन ताइपिंग डॉक्यूमेंट्स, पेकिंग 1938 ग्रंथ 1 खंड 2, पृ 10।

8. हेम्बर्ग पूर्वोद्धृत पृ. 47।

कई आधुनिक चीनी इतिहासकार ताईपिंग लोगों का एक लोकप्रिय तथा स्पष्ट चीनी साहित्यिक शैली के संस्थापक के रूप में मानते हैं किन्तु अन्य आधुनिक लेखक इसका खण्डन करते हैं। यह सत्य है कि प्रायः सभी ताईपिंग आदेश अथवा घोषणाएँ लोक व्यवहार की शैली में लिखी गयी थीं। कभी-कभी ताइपिंग के सरकारी आदेश इस प्रकार के विचित्र संकेत एवं सूचनाएँ रखते थे कि उन्हें उस समय भी समझना कठिन होता था। इसका सर्वाधिक सरल स्पष्टीकरण यह दिया जा सकता है कि अधिकांश ताईपिंग नेता अशिक्षित थे तथा उन्होंने लोकप्रिय शैली का प्रयोग इसीलिए किया, क्योंकि वे उसी चीनी भाषा को पहचान सकते थे। सम्भवतया उन्हें उन परम्परागत चीनियों में विश्वास नहीं रहा होगा जो सरकार द्वारा नियुक्त किये गये होते थे क्योंकि वे ऐसे आदेश जारी कर सकते जो उनकी समझ से परे हों। भाषा के बारे में ताईपिंग लोगों के द्वारा किये गये सुधार उनकी शिक्षा सम्बन्धी अभावों के कारण हुए थे तथा उनका उद्देश्य चीन में साहित्यिक क्रान्ति लाना नहीं था।[9]

ताईपिंग प्रशासनिक पदसोपान क्रम

ताईपिंग लोगों की सफलता के पश्चात् ऐसे लोग जिन्होंने कभी शासन की कला का अध्ययन भी नहीं किया था तथा जो अन्य प्रदेशों की न्याय-व्यवस्था से पूर्ण अनभिज्ञ थे, ने 20,00,00,000 से भी अधिक लोगों पर प्रभावशाली नियन्त्रण स्थापित करने का प्रयास किया, यह एक महान् कार्य था। उन्हें प्रारम्भ में सफलता मिली। उनके द्वारा प्रारम्भ किया गया सामाजिक सुधार इतिहास में किसी भी महान राजनीतिक आन्दोलन से अधिक क्रान्तिकारी था। कुछ मामलों में वे पश्चिम के समान आधुनिकता के सर्वोच्च प्रतिमानों की अपेक्षा करते थे। यदि ताइपिंग प्रयोग कुछ और समय के लिए जीवित रह जाता तो चीन एक ईसाई क्रान्तिकारी राष्ट्रमण्डल में परिवर्तित हो जाता, जिसके विश्व इतिहास पर अतिमहत्त्वपूर्ण दूरगामी प्रभाव पड़ते। इस प्रयोग की असफलता का कारण इस व्यवस्था में निहित त्रुटि नहीं थी अपितु अपर्याप्त ज्ञान, दूषित व्यवहार तथा इसके नेताओं में निष्ठा की कमी ही इस असफलता के कारण थे।

ताईपिंग व्यवस्था की अनेक राजनीतिक विशेषताएँ थीं। प्रथम, सरकार के नागरिक तथा सैनिक विभागों में कोई अन्तर स्थापित नहीं किया गया था। केन्द्रीय व्यवस्था, सेना तथा स्थानीय शासन सब स्तरों पर एक ही पदसोपान क्रम था तथा सभी अधिकारियों को नागरिक तथा सैनिक दोनों प्रकार के दायित्व सौंपे गये थे। द्वितीयतः न्याय सेवा अथवा सेना जैसे उत्तरदायित्वपूर्ण स्थानों पर स्त्रियों की नियुक्ति की गई। पुरुषों से सैद्धान्तिक रूप से पूर्ण समानता की स्थापना की गई। तृतीयतः, ताइपिंग लोगों ने परीक्षा व्यवस्था में क्रान्तिकारी परिवर्तन करने का प्रयास किया। नानकिंग पर आधिपत्य के पश्चात् उन्होंने प्रशासनिक स्थानों पर बौद्धिक वर्ग की नियुक्ति प्रारम्भ की। चतुर्थ कदम में ताईपिंगों ने गुटपरस्त अधिकारियों को वफादार बनाये रखने के लिए वंशानुगतता के सिद्धान्त का अनुसरण किया। सरकारी पद योग्यता का पुरस्कार माने गये। एक सरकारी पद अधिकारी व्यक्ति की संतान अथवा विधवा द्वारा ग्रहण किया जा सकता था।

9. लो उर-कांग द्वारा लिखित ए शॉर्ट हिस्ट्री ऑफ हुंग हसु चुआन, चुंग किंग, 1944, पृ. 49-51, लिन शान चिंग, एन ऑफिशियल हिस्ट्री ऑफ दि ताइपिंग तियन-कू, शंघाई 1923, पृ. 1।

तिरनवांग अथवा दैवीय राजा चेइन के प्रथम तानाशाह सम्राट के वाद ऐसा राजा था जिसने सम्राट की पदवी ग्रहण नहीं की थी। इस पदवी को ग्रहण करने के लिए हुंग ने अपने समर्थकों को प्रभावित करने के लिए एक कल्पनाजन्य कथा गढ़ी जिसके अनुसार स्वयं ईश्वर ने रहस्यात्मक ढंग से हुंग को दैवीय साम्राज्य का सम्राट वनने के लिए प्रेरित किया। हुंग का विचार था कि तिड़न व्रांग अथवा दैवीय राजा न केवल चीन का ही राजा था अपितु सम्पूर्ण विश्व का राजा भी था। ईसाई धर्म के दस आदेशों का पालन करने के लिए वार-वार आग्रह करने के वावजूद हुंग स्वयं पुराने टेस्टामेंट के मुखिया के समान एक दर्जन स्त्रियों के हरम तथा 100 के करीव सेवकों के साथ रहता था। नानकिंग पर अधिकार के वाद उसकी शक्ति का उसके सहयोगियों के ह्रास प्रयास किया गया। जैसे-जैसे वह अपने हरम में लिप्त होता गया सार्वजनिक कार्यों पर से उसका प्रभाव उठता गया। उसके अधीनस्थ कर्मचारियो में विद्वेप तथा तत्पश्चात् संघर्ष उत्पन्न हुआ जिसने अन्ततः विद्रोही सरकार को दुर्वल वनाया तथा उत्तर से मंचू-चीनी सेनाओं ने उन पर विजय प्राप्त कर ली।[10]

ताइचिंग प्रशासन व्यवस्था का मूल आधार आधुनिकतम था क्योंकि यह कृषक को सैनिक में तथा सैनिक को वापिस कृपक में परिवर्तित करता था। सम्पूर्ण साम्राज्य एक अर्थ में सेना तथा सुरक्षित सेना था। ये प्रवन्ध इतने सुपूर्ण थे कि सम्पूर्ण स्थानीय प्रशासन स्तर पर संगठित था तथा सभी स्थानीय अधिकारी कमीशंड अधिकारी होते थे।

स्थानीय क्षेत्रों में सर्वाधिक छोटी इकाई परिवार होता था। प्रत्येक परिवार सेना के एक सैनिक के पालन-पोषण का उत्तरदायी होता था। 25 परिवारों पर एक कम्पनी कमाण्डर होता था। जव भी केन्द्रीय सत्ता को सक्रिय सेवाओं की आवश्यकता होती थी तो वह अपने प्रदेश के 25 लोगों को युद्ध के लिए भेजता था तथा शान्तिकाल में वह परिवार के समुदाय के ऊपर साधारण स्थानीय अधिकारी होता था। फसल के समय कम्पनी कमाण्डर 25 परिवारों को संगठित करता था।[11]

100 परिवारों पर प्रशासन के लिए एक वटालियन कमाण्डर, 500 परिवारों के लिए व्रिग्रेड कमाण्डर तथा 12500 परिवारों के लिए एक सेना कमाण्डर होता था। लोगों के सभी परस्पर विवादों का निवटारा कम्पनी कमाण्डर करता था, किन्तु यदि उसके आदेश की अवहेलना करते थे तो वादी प्रतिवादी उच्च पदाधिकारियों तक आवेदन कर राज तक अपना मामला ले जा सकते थे, तथापि व्यवहार में फील्ड कमाण्डर तथा सेना नियन्त्रक ही स्थानीय मामलों को अन्ततः सुलझाने वाले सर्वोच्च अधिकारी होते थे। यद्यपि यह व्यवस्था सर्वव्यापी स्थायी नहीं वन सकी तथापि फिर भी ताइपिंग व्यवस्था

10. प्रस्तुत चार्ट संख्या 3 ताई पिंग प्रशासन दर्शाता है। तियन वांग के अन्तर्गत कई राजा (वांग) थे—*जिन्होंने मार्शल की पदवी ग्रहण कर ली*—इनके अतिरिक्त कई राज्य मन्त्री, निदेशक, संरक्षक, जनरल्स, कमाण्डर, सेना नियन्त्रक, व्रिग्रेड कमाण्डर, वटालियन लीडर, कम्पनी लीडर होते थे जो कुल मिलाकर 16 पदक्रमों का निर्माण करते थे। जनरल के पद से ऊपर सभी अधिकारी केन्द्रीय होते थे जवकि फील्ड कमाडण्र से नीचे के सभी अधिकारी स्थानीय होते थे।

11. दैवीय पिता के आशीर्वाद सम्पूर्ण साम्राज्य के लोगों को प्राप्त हों। जमीन, भोजन, कपड़ा सवको प्राप्त हो तथा सवको धन प्राप्ति हो। लोगों में असमानता न हो तथा कोई भी भूख तथा धन से त्रस्त न हो।'—लैंड सिस्टम ऑफ दि सेलेस्टियल डाइनेस्टी।
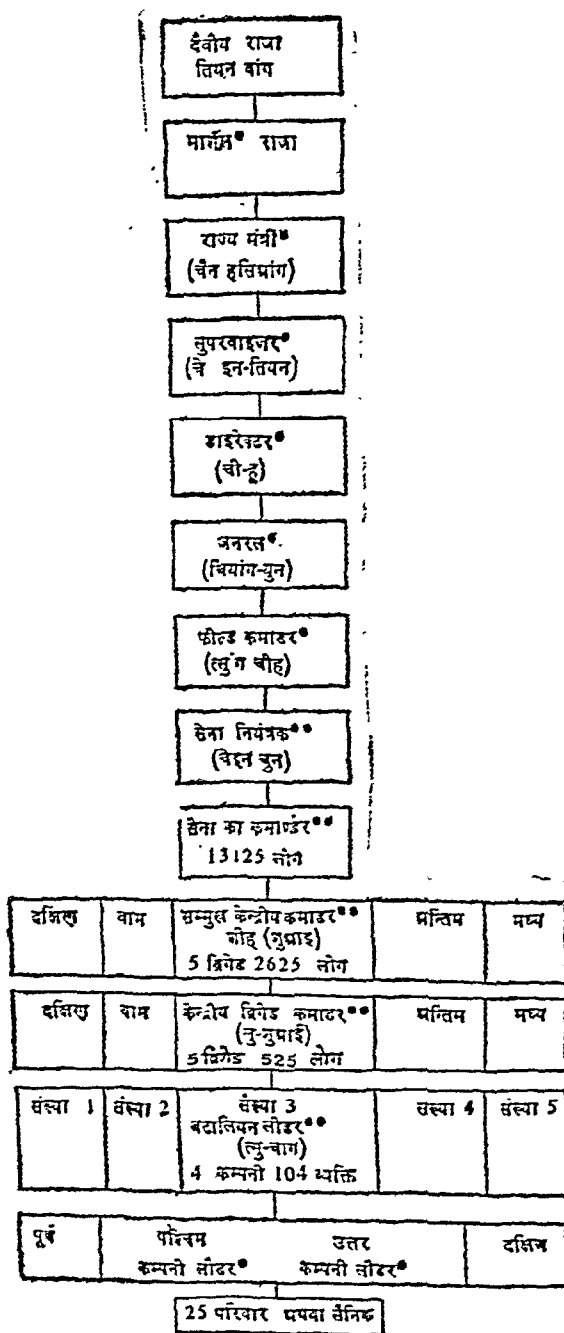
दैवीय राजा
तियन वांग
मार्क्विस* राजा
राज्य मंत्री*
(चैन हसियांग)
सुपरवाइजर*
(चे इन-तियन)
डाइरेक्टर*
(ची-हू)
जनरल*
(चियांग-चुन)
फील्ड कमांडर*
(त्सुंग चीह)
सेना नियंत्रक**
(चिह्न चुन)
सेना का कमाण्डर**
13125 लोग
दक्षिण
वाम
सम्मुख केन्द्रीय कमांडर**
चीह (गुआइ)
5 ब्रिगेड 2625 लोग
पश्चिम
मध्य
दक्षिण
वाम
केन्द्रीय ब्रिगेड कमांडर**
(लु-गुआई)
5 ब्रिगेड 525 लोग
पश्चिम
मध्य
संख्या 1
संख्या 2
संख्या 3
बटालियन लीडर**
(त्सु-चांग)
4 कम्पनी 104 व्यक्ति
संख्या 4
संख्या 5
पूर्व
पश्चिम
कम्पनी लीडर*
उत्तर
कम्पनी लीडर*
दक्षिण
25 परिवार अथवा सैनिक
*केन्द्रीय अधिकारी
**स्थानीय अधिकारी

चार्ट संख्या 3.

के अन्तर्गत कुछ क्षेत्रों में इसे क्रियान्वित किया गया। कई अर्थों में 25 परिवारों के ये समूह आधुनिक सोवियत समाजवादी व्यवस्था से साम्यता रखते हैं।[12]

ताइपिंग अधिकारियों का व्यवहार

ताई-पिंग लोग अपने विजय के प्राथमिक वर्षों में शिक्षित लोगों की कमी के कारण पर्याप्त प्रभावहीन रहे। जिन लोगों ने इतने उत्तरदायित्वपूर्ण कार्यों के लिए इच्छा व्यक्त की वे अशिक्षित तथा अवसरवादी निकले। नानकिंग में राजधानी की स्थापना के पश्चात् ताइपिंग ने अन्य राजाओं का अनुसरण किया जिसमें परीक्षा व्यवस्था द्वारा बुद्धिमान लोगों के चयन की व्यवस्था की गई।

1853 से 1862 में 10 केन्द्रीय परीक्षाएँ ली गईं। प्राप्य साधनों के अनुसार इस विद्रोह के अन्तिम वर्षों में पहुँचने से पहले इस व्यवस्था में पर्याप्त परिवर्तन हुए। प्रारम्भ में ये परीक्षाएँ सरल होती थीं तथा उम्मीदवार सीमित होते थे। इन परीक्षाओं के बारे में बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त है। जैसे-जैसे व्यवस्था निश्चित होती गई तो नियम निश्चित बनते गये।[13]

इस व्यवस्था के प्रारम्भ में सफल उम्मीदवारों को वे ही पदवियाँ दी जाती थीं जो चिंग काल में दी जाती थीं। केन्द्रीय परीक्षा में सर्वोच्च सफलता प्राप्त करने वाले व्यक्ति को चुआंग-युआन की पदवी दी जाती थी। प्रान्तों में प्रान्तीय परीक्षाएँ आयोजित की जाती थीं। प्रान्तों के सफल उम्मीदवारों को केन्द्रीय शासन में नियुक्त किया जाता था। इन उम्मीदवारों के लिए जो योग्यताएँ आवश्यक होती थीं वे प्रायः भाग लेने वाले लोगों में कम होती थीं। कहा जाता है कि परीक्षार्थियों में कई अपदस्थ बुद्ध भिक्षु तथा ताओ पुजारी थे जिनके मन्दिर तथा मठ युद्ध के दौरान नष्ट हो गये थे। परिणामतः वास्तविक विद्वान लोग इस प्रकार के लोगों के साथ परीक्षा में भाग लेने में अपनी तौहीन समझते थे। चिंग काल में निम्नतम सरकारी परीक्षा में 300 परीक्षार्थियों में से मात्र एक उत्तीर्ण हुआ था जबकि ताइपिंग परीक्षा के आलेखों से ज्ञात होता है 1000 निम्न योग्यता वाले परीक्षार्थियों में से 800 लोगों को पदवियाँ प्राप्त हो गईं।

इन परीक्षाओं का स्तर निम्न था। ऐसा लगता है कि यह सभी प्राप्त विद्वानों को उस व्यवस्था में ठूँसने के लिए की गई थी। यह इस व्यवस्था से भी व्यक्त होता है

12. सी यर-कांग ताई-पिंग तियन कू सिहकांग पृष्ठ, 81–87.

13. साहित्यिक तथा सैनिक दोनों पदों के लिए परीक्षा व्यवस्था का विस्तृत विवरण चिंग तिंग चीह चीह नियाओनी में मिलता है। इस प्रलेख में यह लिखा गया था कि जो लोग इस परीक्षा में बैठना चाहते थे उन्हें नवीन तथा पुराने टेस्टामेंट तथा दैवीय साम्राज्य की घोषणाओं का ज्ञान होना चाहिए। जो लोग सैनिक पदों के लिए परीक्षा में बैठना चाहते थे उन्हें युद्ध के शस्त्रों के बारे में पर्याप्त ज्ञान होना चाहिए। इसके अतिरिक्त उन्हें दैवीय राजा द्वारा घोषित युद्ध के तरीके का भी ज्ञान होना चाहिए था। यह भी कहा गया था कि परम्परागत कन्फ्यूशियसवादी पुस्तकें चार ग्रन्थ व पाँच प्रतिष्ठित ग्रन्थों का भी ज्ञान होना चाहिए। किन्तु इनके जो अंश ताइपिंग दर्शन के विरुद्ध थे उन्हें हटा देना चाहिए। चीनी ग्रन्थों पर पुनर्विचार के लिए एक कमीशन बिठाया गया। इसके अनेक सम्पादक नियुक्त किये गये। दि रिवाइज्ड फॉर बुक्स एण्ड फाइव क्लासिक्स उन कई पुस्तकों में से एक थी जो सम्राट के आदेश द्वारा प्रकाशित की गई। चूँकि संशोधित संस्करण आज तक नहीं पाया जा सका है अतः इसके प्रकाशन की तिथि के बारे में निश्चित समय नहीं बताया जा सकता है। देखिए वांग चुंग ची, ताइ पिंग तियन कू के यिंग शीह (हिस्ट्री ऑफ दि ताई पिंग रिवोल्यूशन) शंघाई, 1933 पृष्ठ, 120–133.

कि यह परीक्षा कुछ लोगों के लिए अनिवार्य होती थी। इस विद्रोह के एक निजी वर्णन के अनुसार प्रारम्भिक कुछ परीक्षाओं में चीनी संस्कृति का इतना व्यंग्यात्मक चित्रण था कि कुछ लोगों ने जान-बूझ कर दण्ड प्राप्त किया। एक मंचू समर्थक परम्पराप्रधान विद्वान को तब क्षमादान दिया गया जब उसने दैवीय राजा की प्रशंसा में छन्द लिखा। उसने सम्राट को खुश करने के लिए सुन्दर सा छन्द लिखने के स्थान पर व्यंगात्मक रूप में लिखा था कि "नानकिंग का सम्पूर्ण साम्राज्य 105 वर्ग मील में पहाड़ों व नदियों से घिरा हुआ था तथा सम्पूर्ण दरबार के सैनिक व नागरिक 36 अधिकारी निम्न कोटि के जादूगर लोग थे।" इसको सुनकर ताईपिंग नेता इतने क्रुद्ध हुए कि उन्होंने उस आदमी को घोड़ों से टुकड़े-टुकड़े करवा दिया।[14]

जहाँ तक आधुनिक विद्वानों ने जानकारी दी है 1863 में एक परीक्षा स्त्रियों के लिए भी आयोजित की गई थी। परीक्षक सम्राट की दूर की बहिन थी। परीक्षा का विषयवस्तु कन्फ्यूशियस परम्परागत ग्रन्थों से लिया गया था। उसका शीर्षक था कि 'स्त्रियों व निम्न कोटि के लोगों से व्यवहार करना कठिन होता है।" फू शान हसिआंग नामक एक चतुर स्त्री ने इस कन्फ्यूशियस धारणा का खण्डन स्त्रियों को समर्थन करते हुए किया। यह स्त्री बाद में अधिकारी वर्ग में सर्वाधिक प्रभावशाली अधिकारी तथा बाद में पूर्वी राजा के नाम से जाने गये व्यक्ति की सचिव बनी।

राजाओं तथा सामन्तों का वेतन ऊँचा होता था तथा बाकी अधिकारी भी सम्पन्नता में रहते थे। सरकारी पदाधिकारियों के वेतन का मापदण्ड उनको दिया जाने वाला माँस तथा उसके अनुपात में दिया जाने वाला खाने का सोपान होता था। वेतन का भुगतान करने की प्रणाली को 'माँस के विभाजन' के नाम से पुकारा जाता था। राज्य स्तर के मन्त्रियों से नीचे प्रत्येक निम्न पद में माँस के पांच केटी कम कर दिये जाते थे। निम्न स्तर के अधिकारियों को बहुत कम मात्रा में माँस दिया जाता था तथा उनका वेतन बहुत कम हुआ करता था। अतः निम्नतम पदाधिकारी सेना में अथवा स्थानीय क्षेत्रों में स्थानांतरित होने के लिए उत्सुक रहते थे।

सामन्तवादी समाजवाद

यद्यपि ताईपिंग संगठन में ये उल्लेखनीय सुधार थे तथा इसका स्वरूप अनिवार्यतः सामन्तवादी था, तथापि उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि ताइपिंग-आन्दोलनकर्त्ता अपनी सीमाओं की भाषा में शिक्षा तथा साधनों में 'समाजवादी क्रान्ति' लाना चाहते थे। इस क्षेत्र में साम्यवाद का एक अपरिष्कृत रूप विद्यमान था। सन-यात-सेन ने अपने जीवन के अन्तिम दिनों में 1924 में रूस पर व्यंगपूर्ण ढंग से हँसते हुए कहा था कि "अन्य देशों में साम्यवाद अब भी विचार-विमर्श का विषय है तथा कहीं भी इसे पूर्णतः लागू नहीं किया गया है, किन्तु चीन में हुंग-चुआन के समय से ही साम्यवाद लागू किया जा चुका था। उसकी आर्थिक व्यवस्था साम्यवाद की वास्तविकता थी तथा यह मात्र सिद्धान्त नहीं व्यवहार था।"[15]

14. यह लोकप्रिय गाथा लिग चान-चिंग में पाई जाती है। पूर्वोद्धृत अध्याय 8, पृष्ठ 4–6.

15. सेन यिन चू। प्रिंसिपल्स आफ नेशनलिज्म व्याख्यान फ्रैंक डब्लू. प्राइस द्वारा अनुवादित चुंगकिंग, 1943, पृष्ठ 87।

किन्तु समाजवादी होने के बावजूद भी ताईपिंग ने सभी पदों को वंशानुगत बनाया। इस प्रकार सतत् तत्परता के लिए प्रस्तुत आध्यात्मिक तथा सैनिक संगठन को स्थायित्व प्रदान करने के लिए समाजवाद एक संयोग मात्र था। इस प्रकार समाजवाद स्वयं में साध्य नहीं था अपितु एक साम्प्रदायिक समूह को एक पवित्र साम्राज्य के लिए संघर्ष का आधार बनाना था।

सर्वदेशीय स्नेह व समानता के आदर्शों के बावजूद ताईपिंग के साम्राज्य के नियोजन-कर्ताओं ने एक शक्तिशाली नेतृत्व समूह पर जोर दिया। राजाओं व सामन्तों की रचना निश्चय ही सामन्तवादी प्रथा थी। प्रारम्भ में दैवीय राजाओं के आधीन मात्र सात राजा थे जिनमें से प्रत्येक एक सेना का स्वामी था किन्तु समय के साथ सैकड़ों राजा व सामन्त बनाये गये तथा इन सब के पदों को वंशानुगत बना दिया गया।

ताईपिंग प्रशासन की असफलता

ताईपिंग विद्रोह में सफलता के सभी आवश्यक तत्त्व मौजूद थे; जैसे एक प्रोत्साहन पूर्ण सिद्धान्त, प्रेरणापूर्ण नेता, त्रस्त मानव समुदाय, एक विदेशी शासक जिसके विरुद्ध विद्रोह हुआ तथा सुधार की एक वास्तविक योजना थी, किन्तु तो भी वे लोग इन अवसरों का पूर्ण सदुपयोग करने में असमर्थ रहे। उनकी असफलता अंशत: नेतृत्व की दुर्बलता तथा अंशतः एक प्रभावशाली प्राशासनिक व्यवस्था का विकास न कर सकने के कारण हुआ।

चीन के दक्षिण प्रदेश पर आधिपत्य होते-होते विद्रोह कमजोर पड़ने लगा। इस दुर्बलता का मूल कारण मंचुओं के इस आन्दोलन को सँभालने में ताईपिंग विद्रोहियों की असफलता थी। वे जीते गये विशाल प्रदेश व जनसंख्या की व्यवस्था करने में तथा सेना को संचालित करने में असमर्थ रहे।

यद्यपि ताईपिंग नेता स्वयं कुशाग्र बुद्धि तथा साधनपूर्ण थे तथापि उन्होंने जिन प्रविधियों का प्रयोग किया वे पूर्वकालीन चीनी अत्याचारी राजाओं से भिन्न नहीं थीं जैसे पूर्वहेन के पीतवर्णी साफधारी अथवा श्वेत कमल नायक समूह जिसने मंगोलों के विरुद्ध विद्रोह किया था। ताईपिंग जब भी स्थिति पर नियन्त्रण पाने में असमर्थ होते थे वे आतंक का सहारा लेते थे।

क्रान्ति की समाजशास्त्रीय भाषा में हम कह सकते हैं कि ताइपिंग विद्रोहियों ने समाज का एक नवीन ढाँचा निर्मित करना चाहा जबकि इस नवीन समाज की व्यवस्था का संचालन करने योग्य प्रबुद्ध वर्ग का उनके पास अभाव था। विद्रोह के पश्चात् प्राशासनिक वर्ग सर्वदा प्रबुद्ध वर्ग में से लिया गया था, किन्तु ताईपिंग विद्रोही तत्पश्चात् स्वयं में से प्रबुद्ध वर्ग का निर्माण करने में असमर्थ रहे।

यद्यपि ताईपिंग विद्रोहियों ने विद्वत वर्ग का समर्थन प्राप्त करने का पूरा प्रयास किया, किन्तु उनकी धार्मिक रीतियाँ तथा आर्थिक नीतियाँ तत्कालीन प्रचलित कन्फ्यूशियस-वाद की तुलना में अत्यधिक क्रान्तिकारी थीं। अन्ततः ताईपिंग विद्रोहियों की पराजय एक स्थानीय चीनी सेनापति, जो कन्फ्यूशियस विचारों का था तथा जिसे विदेशियों का समर्थन प्राप्त था, से हुई। इस सेनापति का नाम त्सेंग कू फेन था जिसकी एक विदेशी सम्राट के प्रति वफादारी इतनी प्रगाढ़ थी कि वह एक राष्ट्रीय विद्रोही के प्रति किसी प्रकार की सहानुभूति का विकास नहीं कर सका।

तीन पीढ़ियों के बाद चीनी राष्ट्रवादियों को चीनी प्रोटेस्टेंट इसाइयों से प्रोत्साहन तथा राजनीतिक नेतृत्व मिला। एक पीढ़ी बाद साम्यवादियों ने अपने मार्क्सवादी कार्यकर्ता पृथक् से प्रशिक्षित किये। ताइपिंग परम्परागत विद्वानों का समर्थन प्राप्त करने में असमर्थ रहे। इस प्रकार उनकी प्रशासनिक व्यवस्था अस्थायी थी जो विशाल पैमाने पर सरकारी कार्यक्रम को संचालित करने में असफल हुई।[16]

अधिकांश ताइपिंग नेताओं ने प्रशासन व सरकार पर ध्यान नहीं दिया तथा वे निजी आमोद-प्रमोद तथा वैयक्तिक अधिकारों में अधिक लिप्त रहे। स्वयं हुंग ह्सु चुआन अपने रिश्तेदारों पर विश्वास करता था जो निम्न कोटि के लोग थे। उसने अपने कई चचेरे भाइयों को राजा बना दिया तथा उन्हें क्षेत्रीय सेनापतियों के ऊपर अपार शक्तियाँ दे दीं। हुंग-ह्सु-चुआन अपने द्वारा प्रतिपादित धर्म के प्रति इतना आसक्त था कि अपनी असफलता से निराश व कुण्ठित होकर उसने दैवीय पिता तथा दैवीय वरिष्ठ भाई से मार्ग निर्देशन की प्रार्थना की तथा सैनिक मामलों अथवा प्रशासनिक महत्ता के विषयों पर उसने कम ध्यान दिया। हुंग की असफलता का कारण यह नहीं था कि उसने एक नवीन शासन व्यवस्था का प्रतिपादन किया अपितु यह था कि इस व्यवस्था का अभाव था। यदि तभी उसे सफलता मिल गई होती तो आज चीन वस्तुतः एक विशाल तथा महान् शक्तिशाली, राजनीतिक व आर्थिक राज्य हुआ होता।

अन्ततः यह कहा जा सकता है कि ताइपिंग का महान् विद्रोह तथा 1000 का बाक्सर विद्रोह ये दोनों ही चीनी जीवन प्रणाली तथा व्यवस्था के विरुद्ध बाह्य चुनौती के विपरीत सामान्य चीनी की प्रतिक्रियाओं के पृथक्-पृथक् तरीके थे। ताइपिंग विद्रोहियों के पाश्चात्य प्रभाव का सामना अपरिष्कृत चीनी तरीकों से करने की कोशिश की और वे असफल रहे। बाक्सर विद्रोहियों ने पश्चिमी जगत् का पूर्ण निषेध करने का प्रयास किया तथा वे भी असफल रहे। किन्तु चीनी विद्रोहों की असफलता ने नवीन विद्रोहों को जन्म दिया तथा सरकार के पश्चिमी प्रकारों की असफलता का संकेत थे। स्थायित्व समाप्त हो चुका था तथा अस्थायित्व अपवाद के स्थान पर चीनी राजनीति का नियम बन गई।

□□□

16. इस वफादार राजा का नाम ली स्यु चेंग था जो ताइपिंग सेना का सर्वाधिक योग्य व कुशल सेनापति सिद्ध हुआ। मंचू सेनाओं द्वारा पकड़े जाने के पश्चात् उसने अपराध की आत्म-स्वीकृति की जो एकोनामिक ऑफ ताइपिंग विद्रोह कुओ साहित्य में प्रकाशित, 1934, खण्ड 1, पृष्ठ 60–103 में पाई जाती है। इसमें उसने ताइपिंगों की दस त्रुटियों को स्वीकार किया तथा मंचुओं को दस सुझाव दिये। इन दस त्रुटियों में सर्वाधिक महत्त्व एक सुदृढ़ प्रशासनिक व्यवस्था का अभाव था। उसने इस कारण को ताइपिंगों की असफलता का सबसे बड़ा कारण माना।

अध्याय 6

प्रथम प्राचीन गणराज्य
(1912-1928)

मानव समाज के राजनीतिक इतिहास में सर्वाधिक विचित्र उदाहरण 1912-1928 के मध्य चीनियों द्वारा चीन में संवैधानिक संसदात्मक गणराज्य की स्थापना का प्रयास था। 1911-12 के मध्य चीन में गणतन्त्र के लिये क्रान्ति का नेतृत्व सर्वाधिक कल्पनाशील व कुशाग्र बुद्धि वाले सनयातसेन के द्वारा किया गया। जिसका परिणाम स्वतन्त्र नहीं अराजकता थी। प्रगति की गई, किन्तु वह प्रगति इस प्रकार की अराजक प्रगति थी कि इसने चीन पर विदेशी शक्तियों के आक्रमण को अवश्यंभावी बना दिया तथा वहाँ राष्ट्रवादी तथा साम्यवादी क्रान्तियाँ हुई। शायद ही कभी कोई सरकार लोगों को इतनी असंगत लगी होगी बिना किसी शासन प्रणाली के न्यूनतम ज्ञान के बावजूद उसको अपनाने का ऐसा राजनीतिक प्रयोग अन्यत्र मिलना कठिन है। 1912-18 का चीन का इतिहास विकास, त्रासदी, निराशा व असफलता का इतिहास है।

इस गणराज्य की संस्थाएँ अस्पष्ट थीं। 20 वीं शताब्दी के मध्य में रहने वाले लोगों को यह समझाना कठिन हो सकता है कि आज का चीनी गणतन्त्र काल को आडम्बर अपमान, गृहयुद्ध शाश्वत अव्यवस्था तथा कुंठा का काल क्यों मानता है। इस प्रकार राजनीतिक संस्थाएँ स्वयं सफलता की गारन्टी नहीं होती है तथा वे कभी कभी दुर्भाग्यपूर्ण असफलता की कथा भी बन सकती है।

चीन में राष्ट्रवादी तथा बाद में साम्यवादी आन्दोलन इसीलिये सफल हो सके क्योंकि अमेरिका फ्रांस तथा ब्रिटेन द्वारा विकसित राजनीतिक संस्थाएँ चीन के लिये निरर्थक साबित हुई। चीनी गणराज्य को चीनियों ने कभी भी गम्भीरता-पूर्वक नहीं लिया। इसके पतन से किसी को दुख नहीं हुआ तथा आज चीन में कोई भी उसकी पुर्नस्थापना की बात नहीं करता है।

इस प्रकार की पूर्ण रूपेण असफलता वस्तुतः असाधारण राजनीतिक घटना है। चीन का गणराज्य एक विकृत स्वरूप वाला गणराज्य था जो अपनी निकृष्ट स्थिति में बना रहा तथा जो 1926-28 के राष्ट्रवादी व साम्यवादियों की संविद क्रान्ति के सम्मुख धराशायी हो गया।

चीनी गणराज्य की बाह्य संरचना इतनी दोषपूर्ण नहीं थी। शासनतन्त्र उत्कृष्ट था तथा इसमें एक प्रगतिशील राजनीतिक व्यवस्था की सभी लिखित आवश्यकताएँ विद्यमान थी। इसमें ऐसे संवैधानिक व्यवस्था तथा संसदीय संस्थाएँ विद्यमान थी जो व्यवहारिक रूप से निरर्थक थी ऐसे कानून थे जिन्हें कभी लागू नहीं किया गया या यूँ कहा जाए कि प्रत्येक वस्तु मात्र लिखित रूप में थी वास्तविकता में नहीं थी। इस गणराज्य के निवासी गणराज्य के अर्थ से बेखबर थे वे इस विदेशी संस्था को सफल बनाने के लिये उत्सुक नहीं थे।

प्रशासक प्रशासन को सफलतापूर्वक चलाने के इच्छुक नहीं थे अर्थात् किसी भी राजनीतिक व्यवस्था को सफल बनाने के लिये जनता के जिस सक्रिय सहयोग की आवश्यकता होती है उसका पूर्णतः अभाव था। संक्षेप में चीनी गणराज्य चीन की आन्तरिक अराजकता से संलग्न किया गया विदेशी तत्व था यह एक व्यवस्था नहीं असफल समझौता था।

मंचू सुधार का प्रथम चरण:

चीनी गणराज्य से पहले चीन को कई दशाब्दियों आन्तरिक संघर्ष व अव्यवस्था में बितानी पड़ीं। चिंग शासन, चीनी शासन चक्रों की अवश्यं भाविता (जो विजय, पतन अव्यवस्था तथा विद्रोह को निहित करती थी तथा जो पश्चिमी शासन चक्र से पर्याप्त पुरानी थी) के कारण पतन की ओर उन्मुख था। वाह्य आक्रमण तथा आन्तरिक अव्यवस्था ने 19 वीं शताब्दी में चीनी साम्राज्य को विखण्डन की स्थिति में ला दिया। यह संकट 1894 से 1895 को चीन जापान युद्ध के समय अपने सर्वोच्च शिखर पर पहुँचा जिसमें चीन को पूर्ण विनाश व अपमान का सामना करना पड़ा।

जापान की विजय के पश्चात् चीन के लिये पश्चिमी तकनीक भयावह तथा अंधविश्वासी परम्परागत कन्फ्यूशियस चीनियो के लिये तात्कालिक अस्तित्व वाली बन गई अब कोई समझदार चीनी यह मानने को तैयार नहीं था कि चीन के बाहर किसी प्रकार के विश्व का अस्तित्व ही नहीं था। चीन के बाक्सर आन्दोलन कर्त्ताओं ने निराश हो कर 'घृणास्पद विदेशियों' को चीन से बाहर खदेड़ने का आन्दोलन प्रारम्भ किया। बाक्सर आन्दोलन को यद्यपि राजनीतिक संवेग की महान् अभिव्यक्ति माना जाता है तथापि यह अवांछनीय राष्ट्रभक्ति का उदाहरण था जो अत्याधिक अज्ञान से ग्रसित था। बाक्सर आन्दोलनकर्त्ताओं को विदेशी सेनाओं द्वारा तथा उन्हीं मंचू अधिकारियों द्वारा कुचल दिया गया, जिन्होंने इसे प्रोत्साहित किया था। वस्तुतः/ यह आन्दोलन चीनी जनसाधारण का बलिदान था जो उसने अपने देश के लिये कुछ करने की भावना से किया था क्योंकि सरकार उनके लिये कुछ भी करने में असमर्थ रही थी। किन्तु जहाँ इस सामान्य चीनी का विदेशी सेना के द्वारा दमन कर दिया गया था तथा जब शिक्षित सरकार ने उसका साथ नहीं दिया तो चीन के सामान्य व्यक्ति को दुबारा खड़े होने का साहस बटोरने में दीर्घ समय लगा।

बाक्सर आन्दोलन ने पश्चिमी खतरे का सामना पूर्णतः निषेधात्मक रूप से करना शुरू किया। प्रत्येक पश्चिमी वस्तु, व्यक्ति, बुद्धि जीवी वर्ग, वैज्ञानिक तथा अध्यात्मिक वस्तु का विरोध किया गया। यह ईसाईयत आधुनिकता, श्वेत जाति यूरोप अमेरिका तथा प्रगति इन सबका विरोधी था। बाक्सर आन्दोलन का तीव्र व खतपूर्ण पतन हुआ। एशिया की सेना ने बाक्सर आन्दोलनकारियों का पीछा हो-पाई तक किया तथा रूसी सेनाओं को मंचूरिया में अर्द्ध प्रशिक्षित सैनिकों व अपर्याप्त सुविधा से चीनी सत्ता का पूर्ण दमन करने में किसी प्रकार का कष्ट नहीं हुआ।

परम्परागत चीन सजातीय था किन्तु मंचुओं के पतन तथा पश्चिम व जापान के प्रभाव से उनकी सजातीयता समाप्त हो गई। चीन-जापान युद्ध के दुखत अनुभव ने मंचू राजदरबार में ऐसे विद्वानों को संगठित किया जिनमें आधुनिक राजनीतिक विचारों के प्रति विश्वास था तथा ये विद्वान इस दुर्भाग्यपूर्ण निर्णय पर पहुँचे कि जापान के शक्तिशाली व चीन के दुर्बल होने का कारण, चीन में जापान के समान संवैधानिक सरकार का अभाव

१।। जापान का आधुनिकीकरण स्पष्ट था । तथा इस आधुनिकीकरण की सर्वाधिक उलेखनीय विशेषता भेजी सम्राट तथा उनके प्रदरवारियों द्वारा जापान की शासन व्यवस्था का संवैधानिकीकरण था । वस्तुतः जापान में संवैधानिकता जितनी मुखर थी उतनीवास्तविक नहीं थी । जापान को आधुनिक बनाने में संविधानिक के अतिरिक्त अन्य कई तत्वों का हाथ था । चीनी यह समझने में असमर्थ थे कि जापानी उनकी अपेक्षा एक अच्छे नागरिक, अच्छी प्रजा, अधिक वफादार बहादुर हो सकते थे अथवा जापान में आकार में लघु होने के कारण कोई शासन प्रणाली अधिक अच्छी तरह से स्थापित की जा सकती थी अथवा चीन की अपेक्षा उसमें राजनीतिक परिवर्तन अधिक सुगमता से हो सकते थे । इस प्रकार के तर्कों के लिये एतिहासिक पृष्ठभूमि जानना आवश्यक था जो हम जैसे लोग जो चीन व जापान से बाहर हैं 50 वर्ष पश्चात् ज्ञात कर पाए हैं । किन्तु चीनी प्रशासक अथवा मंचू सामन्त से इस बात की अपेक्षा व्यर्थ थी । उन्होंने अपनी समझ के अनुसार सर्वश्रेष्ठ निर्णय लिया जो त्रुटिपूर्ण था ।

मंचू सुधारों का प्रथम दौर तीन अवस्थाओं से गुजरा । प्रथम अवस्था में युवा व महत्वाकांक्षी सम्राट कुआंग हसू ने स्वयं शक्ति प्राप्त कर साम्राज्य को बचाने का घातक प्रयास किया । इस प्रयास में उनकी सहायता कन्फ्यूशियस विद्वान कांग-यू वेई ने की । 1898 में तीव्र गति से शक्ति प्राप्त करने के पश्चात् कांग ने सम्राट से प्रशासनिक व शैक्षणिक परिवर्तन करवाने के लिये कई आदेश निकलवाए । सुधारों का यह प्रयास मात्र कागजों पर रहा क्योंकि उन्हें क्रियान्वित करने का कोई समय नहीं था। तथा यह काल सुधार के 100 दिवस के नाम से जाना गया ।

कांग व उसके सहयोगियों का विश्वास था कि चीन के शैक्षणिक तथा बौद्धिक विकास के लिये पाश्चात्य शिक्षा का ज्ञान अत्यधिक आवश्यक था उनका विचार था कि साम्राज्य को सशक्त बनाने के लिये पाश्चात्य प्रशासनिक व्यवस्था भी अनिवार्य थी । प्रशासन से सम्बन्धित सुधारों में एक आदेश के अनुसार प्रशासनिक परीक्षा में से कन्फ्यूशियस विचारों पर आधारित अष्टपदीय लेख के स्थान पर दैनिक जीवन से सम्बन्धित समकालीन साहित्य को सम्मिलित किया गया । दूसरे आदेश के द्वारा पेकिंग में एक शाही विश्वविद्यालय की स्थापना की गई जिसमें पाश्चात्य कला तथा विज्ञान की शिक्षा दी जानी थी । इसी प्रकार अन्य आदेश द्वारा प्रशासन की जटिलताओं को समाप्त कर उसे अधिक साफ सुथरा बनाने का प्रयास किया । जापान से पराजित होने के पश्चात् अपमानित चीनी सेना के पुनर्गठन के आदेश भी दिये गए । व्यापार उद्योग यातायात तथा संचार के साधनों को तथा विदेशों से सम्बन्धो को सुधारने के आदेश दिये गए । ये सुधार लिखित रूप में व्यावहारिक व उचित थे । इनसे प्रशासन के कई दोषों को समाप्त कर नाशोन्मुख चीनी साम्राज्य को बचाने का प्रयास किया गया था किन्तु यदि ये आदेश लागू किये जाते तो इन्हें परम्परागत चीनी शाही भाषा से दैनिक प्रशासन के उपयुक्त भाषा में अनुवादित कर पाना सहज नहीं था ।[1] सुधारकों को इसका अवसर नहीं मिला ।

मंचू दरबार में साम्राज्ञी डावेजर मे होनेला के नेतृत्व में प्रतिक्रियावादी पक्ष ने प्रतिपक्षी क्रान्ति का संगठन किया । कुछ सुधारकों को मार डाला गया । सम्राट को महल

1. इस युग में प्रेचित घोषणाओं के लिये चू शाओ पिंग की 'अनाल्स एंड प्रेमोअस ऑफ दि चिंग डाइनेस्टी, कुआंग हसू पिरियड, शंघाई, 1909, चुआन 124-145 देखिये ।

में बन्दी बना दिया गया (यह विश्वास किया जाता है कि जब साम्राज्ञी डावेजर 14 तथा 15 नवंबर 1908 को मृत्यु शैय्या पर थी तो उसने यह इच्छा व्यक्त की कि बन्दी सम्राट उससे पहले मरे तथा साम्राज्ञी के वफादार सेवकों ने सम्राट को जहर देकर मार डाला तथा सम्राट के मृत्यु का समाचार मरती हुई साम्राज्ञी को दिया) 1898 में जिस व्यक्ति ने प्रतिक्रियावादी परिवर्तनों को सम्भव बनाया उसका नाम युआन शीह काई था जो चीनी इतिहास में पर्याप्त प्रचलित है।

निहित स्वार्थ वाले व्यक्तियों ने प्रतिक्रियावादी आन्दोलन का समर्थन कर अपने ही नाश के बीज बोए। क्योंकि ये लोग बाह्य विश्व के परिवर्तनों की गहराई व खतरों के बारे में उतना ज्ञान भी नहीं रखते थे जितना युवा सम्राट को था। जब सुधारक समाप्त हो गए तथा बाक्सर आन्दोलन की असफलता ने इस तथ्य को प्रमाणित कर दिया कि चीनी पश्चिमी लोगों को मात्र शारीरिक बल से चीन के बाहर नहीं खदेड़ सकते थे तो प्रतिक्रियावादियों ने सुधार की दूसरी अवस्था को प्रारम्भ किया मंचू दरबार द्वारा सुधार आन्दोलन क्रान्ति की भावनाओं को तुष्ट करने के लिये किया गया था, देश को मजबूत बनाने के लिये नहीं। तथा ये सुधारवादी लोग अपने उद्देश्यों के प्रति वफादार नहीं थे। परम्परागत शासक वर्ग समय के अनुसार बौद्धिक तथा मनोवैज्ञानिक रूप से बदलने में असमर्थ था। पेकिंग के शाही दरबार के अज्ञानी प्रतिक्रियावादियों की तुलना में कुछ समय बाद पेत्रोगार्ड के जारशाही प्रतिक्रियावादी अधिक प्रगतिशील सिद्ध हुए। साधारण से साधारण सुधार का विरोध भी बड़े कठोर व संशयपूर्ण ढंग से किया गया। उसके पश्चात् चीन में जो कुछ हुआ वह विक्षिप्तता के बहुत करीब है।

मंचू सुधारों की द्वितीय अवस्था

अपर्याप्त होते हुए भी मंचू सुधारों का दूसरा दौरा 1901 में प्रारम्भ हुआ। चीन जापान युद्ध तथा बाक्सर आन्दोलन के दौरान अत्याचार बर्बरता छलकपट, अन्य प्रतिकार इन सबका खुलकर प्रयोग हुआ तथा ये सब असफल रहे थे। पेकिंग में विदेशी सैनिक मौजूद थे तथा अमेरिकी अफसर जापानी तथा यूरोपियन साथियों के साथ चीन में महलों को लूटना तथा पुस्तकालयों में आग लगाने जैसे कार्यों में संलग्न थे। पेकिंगीन जो अब तक पेकिंग नगर के विशेषाधिकार थे एकाएक पश्चिम में लोकप्रिय हो गए। मंचू शासकों पर अपमानजनक शर्तें थोपने तथा पर्याप्त क्षतिपूर्ति वसूल करने के पश्चात् अन्तर्राष्ट्रीय सेनाएँ चीन से लौट गई तथा तब साम्राज्ञी डावेजर ने अपने तरीके से आधुनिकीकरण प्रारम्भ किया। पहला मूल सुधार चीन के अन्दर रहने वाले विदेशियों को समान स्तर पर स्वीकार करना था। प्राचीन परीक्षा व्यवस्था समाप्त कर दी गई। बड़े पैमाने पर चीनी छात्रों को विदेशों में अधिकांशतः जापान भेजने का अस्थाई प्रयोग किया गया आधुनिक स्कूलों की संख्या में बढ़ोत्तरी की गई।[2]

मंचू सुधार अत्यधिक संशयास्पद परिस्थितियों में प्रारम्भ किये गए थे अतः उनके बने रहने की संभावना बहुत कम थी। वे चीन की मूल-भूत आर्थिक व्यवस्था को परिवर्तन करने में तथा चीन की दुर्बलताओं को हटाने में असमर्थ थे फिर भी उन्होंने चीन की क्रान्तिकारी प्रवृत्तियों को सहारा दिया।

2. इस काल की घटनाओं के लिये देखिये पूर्वोद्धृत 164 इस आन्दोलन का संक्षिप्त विवरण विना पूर्वोद्धृत अध्याय 10 में है।

इस समय चीन से बाहर रहने वाला चीनियों में सनयातसेन प्रमुख नेता के रूप में उदय हो रहा था। वह पर्याप्त प्रचारित व कुख्यात हो चुका था किन्तु जब मंचुओं ने उसकी हत्या के लिये चीनियों को भेजा तो वह प्रेतात्मा के समान अदृश्य हो गया।

मंचू सुधार का तीसरा चरण

जब साम्राज्ञी डावेजर धीरे धीरे मृत्यु उन्मुख होती गई, तथा यद्यपि उस समय भी वह सम्पूर्ण जिन्दगी में रही थी तथा ईसी कारण वह मंचू हरम से तरक्की करते सम्पूर्ण चीन की साम्राज्ञी बन गई। इस समय मंचू कालीन सुधारों का तृतीय चरण प्रारम्भ हुआ। 1906 तक सम्पूर्ण केन्द्रीय प्रशासन का पुर्नगठन किया जा चुका था। ताँग प्रशासन से उत्तराधिकार में मिले परम्परागत छः विभाग बनाये गए। 1907 के आदेश के द्वारा प्रान्तों में सामन्तों की विधान सभाएँ बनाई गई। 1905 तथा 1907 में मंचुओं के दो आयोग विदेशों में संवैधानिक विनाश का अध्ययन करने के लिये भेजे गए। ये आयोग बुद्धिमान तथा कल्पानाशील व्यक्तियों को निहित नहीं करते थे अतः उन्होंने चीन में आकर जो कुछ सुझाव दिये वे जापानी संविधान नकल थे जिसमें कहीं-कहीं प्रशियन संविधान के सन्दर्भ भी दिये गए थे।

इस आयोग की सिफारिशों के परिणामस्वरूप 27 अगस्त 1907 को संवैधानिक सिद्धान्तों का सुझाव दिया गया जिसमें 1917 के अन्त तक चीनी साम्राज्य को पूर्णतः संवैधानिक स्वरूप प्रदान करने का विचार था।[3] इस उद्देश्य को लेकर अनेक कानून नियम व साहिताएँ बनाई गई किन्तु इनमें से कुछ ही क्रियान्वित की जा सकी।

इस प्रकार एक अत्यधिक जटिल समस्या का समाधान करने का प्रयास मंचुओं के द्वारा किया गया। 1910 में केन्द्रीय व्यवस्थापिका की स्थापना के प्रयास किए गए। यह सभा दो सौ सदस्यों को निहित करती थी जिनमें से आधे प्रांतीय विधानसभाओं द्वारा स्वयं से चुने गए थे तथा अन्य आधे सम्राट के द्वारा नियुक्त किए जाते थे। इस परिषद् ने शिक्षित वर्ग की निरंतर बढ़ती हुई मांगों को संतुष्ट करने का प्रयास नहीं किया। 1971 में जब वास्तविक क्रान्ति प्रारंभ हुई तो सम्राट् ने तथाकथित 19 संवैधानिक अनुच्छेदों को 2 नवम्बर 1911 में लागू किया जिसका मुख्य उद्देश्य उदारवादी संवैधानिक राजतन्त्र की स्थापना करना था।[4]

इन सुधारों की सफलता पूर्णतः संदेहास्पद थी। यूरोपियन वाद से जापान भी आहत हुआ था यद्यपि जापानी समाज सशक्त, सक्रिय, अनुशासित, राष्ट्रभक्त तथा एकात्मक था। इसी यूरोपियनवाद ने चीन को भी आहत किया क्योंकि चीन अत्यधिक विशाल था तथा अत्यधिक दुर्दशा की स्थिति में था। मंचू राजा तथा चीनी परामर्शदाता दोनों औसत स्तर के लोग थे तथा उन्होंने जो कुछ किया वह वही था जो 37 वर्ष पश्चात् जार्ज कैलट मार्शल से करने को कहा गया अर्थात् एक अच्छी सरकार की स्थापना के लिए कहा गया जबकि उसके योग्य लोग उपलब्ध नहीं थे। चीनियों ने उन स्थितियो में प्रजातन्त्र की स्थापना की जब चीनी लोग प्रजातन्त्र का अर्थ अमरीकी तथा ब्रिटिश लोगों के समान समझने के

3. देखिये परिशिष्ट 3

4. अंग्रेजी में लिखित साहित्य के लिये देखिये 'द चाइना ईयर बुक, लांदन' तियनात्सिन तथा शंघाई 1912 का संस्करण पृ०

योग्य नहीं थे सम्पूर्ण भ्रष्टाचार अपमान तथा पराजय की समाप्ति एक ही चमत्कारिक प्रयास से करना चाहते थे (इस प्रयास को न तो शिशु सम्राट् के लिए कार्य कर रहे मंचू सरदार समझते थे और न मार्शल समझता था) यह प्रयास था कि चीन चीन न रहे मगर यह कैसे हो उसका कोई जवाब नहीं था।

1911-12 की क्रान्ति

सनयातसेन चीन के राजनैतिक व्यवहार की प्रेरणा व समाज विज्ञान को समझने में सफल हुआ। वह यह जानता था कि चीन में राजनैतिक शक्ति के स्वरूप में नाटकीय व आकस्मिक घटनाओं से आने वाला परिवर्तन चीन में आतंक की सृष्टि कर रहा था कोई भी पश्चिमी समाज क्रान्तियों का इतना अभ्यस्त नहीं हुआ जितना चीनी क्रान्तियों के लिए हो गये हैं। अधिकांश वर्तमान पश्चिमी समाज एक ही क्रान्ति की देन हैं। सनयातसेन ने इस उम्मीद से उग्र गतिविधियाँ नाटकीय हत्याकांड तथा लूटमार प्रारंभ की कि वे चीनियों में क्रान्ति प्रारंभ करेंगे। किन्तु जो घटना आग भड़काने में सफल हुई वह पूर्वनियोजित नहीं थी।

यांग्ज नदी के दूसरी ओर हेनको में वूचांग के कुछ बंब बनाने वाले गिरोह ने शाही सेना के विशाल भाग को नष्ट कर दिया था। जब इस गिरोह का पता वहां स्थित रूसी गुट को लगा तो उन्होंने शाही सेना में अन्य षड्यंत्रकारियों का भेद खोलने की धमकी देते हुए अपनी सुरक्षा की मांग की। ये सैनिक न तो बंब बनाने वालों को बचा सकते थे न हीं इतनी गंभीर घटना की अवहेलना कर सकते थे तो उन्होंने अपनी जान की रक्षा के लिये एकाएक क्रान्ति प्रारंभ कर दी (यह घटना इतनी आकस्मिक थी कि सनयातसेन ने इसके बारे में डेनवर में अमरीकी समाचार पत्र में पढ़ा। वह चीन के व्यवहार को समझने में सफल रहा था। चीनी इसी घटना से क्रान्ति की ओर अग्रसर हो गए तथा कुछ ही सप्ताह में इस घटना ने राज्यव्यापी क्रान्ति प्रारंभ कर दी।

दक्षिण चीन में विद्रोहियों ने निःसहाय मंचुओं की हत्या करना प्रारंभ की तथा पुरुष स्त्रियों व बच्चों को जिन्दा अथवा मृत खाइयों में उसी प्रकार फेंकना प्रारंभ किया जैसे जर्मनों ने यहुदियों को आस्टविच में फेंका था। मंचू सेना जिसने तीन शताब्दियों तक चीनियों को आतंकित कर रखा था, बिना युद्ध किये ही नष्ट हो गई। चार महिने के अन्दर मंचू शासक परिवार ने चीन की राजगद्दी को त्याग दिया।

विद्रोही सेनाएं प्रांतों से समर्थन प्राप्त करने में सफल हुई तथा उन्होंने अपनी शक्ति को सुदृढ़ करने के लिये तथा भविष्य में चीन सरकार का स्वरूप निर्धारित करने के लिये पहले शंघाई तथा बाद में हेनको में गोष्ठि करना प्रारंभ किया। 2 दिसम्बर 1911 को इन विद्रोही नेताओं ने एक माह पहले प्रारंभ किये गये सुधारों को निरस्त करते हुए 21 अनुच्छेदों वाले संवैधानिक आदेश प्रेषित किया जिसका शीर्षक प्रांतीय शासन का विधान था। यह चीन का सर्वप्रथम गणराज्य संविधान था। संक्षेप में इसमें यह कहा गया था कि छः माह पश्चात् एक राष्ट्रीय सभा आमंत्रित की जानी थी, जो देश के लिये स्थाई संविधान बनायेगी। प्रान्तीय शासन विधान ने विदेश, गृह वित्त, सैन्य तथा। संचार के पांच विभागों का गठन किया था। प्रत्येक प्रांतीय सरकार के द्वारा कुछ सदस्य केन्द्रीय व्यवस्थापिका के लिये भेजे जाने थे। इन प्रतिनिधियों के निर्वाचन की कोई व्यवस्था नहीं की गई थी वस्तुतः निर्वाचन का विचार ही चीनी लोगों के लिये अपरिचित था। अतः ये प्रांतीय

प्रतिनिधि प्रांतीय क्रान्ति परिषद् के द्वारा ही भेजे जाने थे। यह सत्र एक प्रयोग के रूप में ही था। अनेकों प्रांतों के क्रान्तिकारी सैनिक शासन अंततः कार्यकारी राष्ट्रपति का निर्वाचन करने वाले थे।

सनयातसेन वापिस चीन गया तथा शीघ्र ही उसे राष्ट्रपति चुन लिया गया। 1 जनवरी 1914 को उसने नवीन गणराज्य के अध्यक्ष के रूप में शपथ ली। एक वफादार ईसाई की तरह वह मिंग सम्राट के मकबरों पर गया ताकि उन्हें पता लगे कि चीन पर से बर्बरों का शासन समाप्त हो चुका है तथा एक बार फिर हेनवंश के शासक नानकिंग पर शासन कर रहे थे। इस प्रकार नानकिंग में गणराज्य शासन की स्थापना की गई।

किन्तु दुर्भाग्यवश पोकिंग में शाही सरकार बनी रही। ऐसी परिस्थिति में यदि पश्चिमी लोग होते तो उन्होंने इस शासन को समाप्त करने की कोशिश की होती किन्तु चीन में दोनों चीनी सरकारों में बातचीत प्रारंभ की। चीनी गणराज्य को तेजी से समाप्त करना चाहता था जबकि साम्राज्य गणराज्य को बदनाम करने पर तुले थे। मंचू शासकों में कोई प्रखर नेता नहीं था। युआन शीह-काई एकमात्र वह व्यक्ति था जिसने शाही सेवा को आधुनिक स्वरूप प्रदान किया था इसके अधिकारी चीन की आधुनिक सेना तथा शस्त्राशस्त्र थे। वह एक षड्यन्त्रकारी भी था अतः उसने मंचुओं तथा गणराज्य को संघर्ष में फंसा कर स्वयं शक्ति प्राप्त करने की योजना बनाई। उसने शिशु सम्राट के संरक्षकों को गणराज्य की स्थापना का आदेश देने के लिये कहा। गणराज्यवादियों से उनके यह आश्वासन मांगा कि प्रथम राष्ट्रपति युआन-शीह-काई को ही बनाया जाए। मंचू शासकों ने शिशु सम्राट के लिये राजा के विशेषाधिकार पेंशन महल तथा अन्य सुविधाएं बनाए रखना चाहीं। नवीन साम्राज्ञी जो पहली साम्राज्ञी के समान ही चालाक थी ने इन शर्तों के आधार पर 12 फरवरी 1912 को राजगद्दी को त्याग दिया।

1912 में सनयातसेन का व्यवहार मैकियावली के सिद्धान्तों के पूर्णतः विपरीत था। वह आधुनिक विचारों की शक्ति तथा मानव स्वभाव की अच्छाई के प्रति इतना आश्वस्त था कि उसने पदत्याग कर युआन को राष्ट्रपति बनने दिया। युआन गणराज्य के विचार मात्र से भी घृणा करता था। 10 मार्च 1912 को सनयातसेन ने पद त्याग किया तथा युआन ने पद की शपथ ली।

युआन शीह-काई का राष्ट्रपति काल :

जिस संवैधानिक योजना के अन्तर्गत युआन चीन का गणराज्य बना उसकी रूप रेखा क्रान्तिकारी परिषद के द्वारा बनाई गई थी जिसका उद्देश्य युआन की शक्तियों को कम करना था। इस दौरान इन क्रान्तिकारियों ने भी अपने पूर्ववर्ती मचुओं के समान लिखित शब्दों पर अत्यधिक जोर रखा। उन्होंने एक अस्थाई संविधान भी लिखा[5] इस संविधान का यह महत्व है कि इतने कमजोर होते हुए भी 1912 से 1928 तक क्रान्तिकारी आन्दोलन की राष्ट्रीयता को बनाये रखा चूंकि क्रान्ति का सूत्र सनयातसेन के समर्थकों के हाथ में आ गया था अत; सनयातसेन तथा उनके समर्थकों को यह विश्वास हो गया कि क्रान्ति उनका कार्य थी, सरकार उनके द्वारा स्थापित हुई थी तथा जो कानून प्रारम्भ किये वे उनके कानून थे अपने विभिन्न दलीय नामों व सरकारी रूपों के बावजूद

5. देखिये परिशिष्ट 3

सनयातसेन के समर्थक राष्ट्रीय दल अथवा कुमितांग दल नाम से लोकप्रिय हुए तथा ये दल 1912 के अस्थाई संविधान के प्रति तब तक वफादार रहा जब तक इसने पूरी शक्ति प्राप्त नहीं कर ली। आज चीनी साम्यवादियों की प्रशंसा करना आसान है कि उन्होंने असफलता के लिए 20 वर्ष तक संघर्ष किया तथापि स्वयं राष्ट्रवादियों ने भी इतना ही लम्बा संघर्ष किया था तथा उन्हें साम्यवाद जैसे किसी विश्व आन्दोलन का समर्थन भी प्राप्त नहीं था न ही सोवियत रूस जैसे विशाल देश की सहायता व सैनिक समर्थन राष्ट्रवादियों को मिला था।

अस्थाई संविधान यह भी दर्शाता है कि प्रथम गणराज्य के काल में राष्ट्रवादी कितनी प्रगति कर सके। इस संविधान में 56 अनुच्छेद थे। इसके पीछे जबरदस्त प्रजातंत्रीय प्रेरणा थी जो संप्रभुता के लोकप्रिय स्वरूप में विश्वास करती थी। यह संविधान संपूर्ण चीनी जनता में संप्रभुता निहित करता था। इस संप्रभुता को वह राष्ट्र की ओर से राष्ट्रीय परिषद्, अस्थाई राष्ट्रपति, मन्त्रिमण्डल तथा न्यायपालिका को प्रदान करता था इसमें जनता के लिए मौलिक अधिकार भी निहित थे।

राष्ट्रीय परिषद् एक सदस्यात्मक थी जिसका चुनाव चीन के कई प्रान्तों तथा सीमान्तक प्रदेशों के द्वारा किया जाना था। प्रत्येक सदस्य को एक मत दिया गया। यह राष्ट्रीय परिषद् देश की व्यवस्थापिका थी जिसे विधि निर्माण, बजट पारित तथा राष्ट्रपति व उपराष्ट्रपति को निर्वाचित करने के अधिकार दिये गए थे। अस्थाई राष्ट्रपति को कानून को क्रियान्वित करने सेना तथा जलसेना का नेतृत्व करने, नागरिक व सैनिक पदाधिकारियों को नियुक्त व वियुक्त करने तथा राष्ट्रीय परिषद् की सलाह से युद्ध की घोषणा व सन्धियाँ करने के अधिकार दिये गए। मन्त्रिमण्डल में एक प्रधानमन्त्री तथा सरकारी विभागों के अध्यक्ष अन्य मन्त्रिगण होने वाले थे जिनकी नियुक्ति अस्थाई राष्ट्रपति को करनी थी। न्यायाधीशों की नियुक्ति का अधिकार भी राष्ट्रपति को दिया गया जिन्हें अपने कार्यकाल में पूर्ण स्वतन्त्रता व सुरक्षा प्रदान की गई थी बशर्ते उनका आचरण उचित रहे। अन्ततः संविधान के अनुसार नियमित संसद में दो सदन होने थे तथा अस्थाई राष्ट्रपति को दस महिने के अन्दर इसका अधिवेशन आमन्त्रित करना था संसद के उद्घाटन पर राष्ट्रीय परिषद् स्वयमेव भंग हो जाती थी तथा तब इसकी शक्तियाँ संसद को प्राप्त होनी थी।[6]

यह घोषणापत्र निसन्देह प्रजातान्त्रिरिक था। जहाँ तक तत्कालीन परिचित की सहायता एक कानूनी मसौदा कर सकता था वहाँ तक यह घोषणा पत्र करता था। तकनीकी दृष्टि से इसमें कुछ कमियाँ थी जैसे केन्द्रीय सरकार व प्रान्तीय सरकारों के मध्य विधियों का बटवारा नहीं किया गया था तथा प्रान्तीय सरकारों के स्वरूप को स्पष्ट नहीं किया गया था। परिणामतः संविधान का संघात्मक बनाम एकात्मक स्वरूप विवादास्पद बन गया। दूसरी त्रुटि संसदात्मक तथा अध्यक्षात्मक प्रणाली को सम्मिलित स्वरूप था अस्थाई राष्ट्रपति की शक्तियों को सीमित करने के लिये यह प्रविधान रखा गया था कि वह राष्ट्रीय परिषद् की परामर्श के बिना कोई कार्य नहीं कर सकता था किन्तु संविधान में राष्ट्रीय परिषद् को किसी प्रकार के प्रभावकारी राजनीतिक नैतिक अथवा कानूनी नियन्त्रण नहीं दिये गये थे।

(6) अस्थाई संविधान अनुच्छेद 53

यह प्रणाली त्रुटिपूर्ण थी क्योंकि मन्त्रिमण्डलीय शासन प्रणा के समान मन्त्रिमण्डल को राष्ट्रीय परिषद् में विधेयक प्रारम्भ करने का अधिकार नहीं दिया गया था। तीसरी त्रुटि यह थी कि चीन में एक दम प्रान्तीय स्वायत्तता के आधार पर राष्ट्रीय परिषद् के सुधारों से प्रारम्भ किया गया।

यह संविधान अत्यधिक अस्पष्ट था। जहां तक चीन में सत्ता के स्रोत का प्रश्न था उस सन्दर्भ में संविधान कुछ भी नहीं कर सकता था। शक्ति उस सैद्धान्तिक नेतृत्व पर निर्भर करती थी जिसकी अभिव्यक्ति शिक्षा आन्दोलन सैद्धान्तिक प्रभाव तथा क्रान्तिकारी दलों के व्यवहार पर निर्भर करती थी तथा अन्ततः यह सैनिक अधिकारियों अथवा प्रशासनिक अधिकारियों के पास होती थी तथापि शक्ति किसी नियोजित राजनीतिक व्यवस्था में निहित नहीं थी। यह संविधा नचीनी संस्कृति को ध्यान में रखकर नहीं बनाया गया था किन्तु चीन में उसे बिना किसी पूर्व तैयारी के क्रियान्वित करने की कोशिश की गई थी।

युआन शीह्-काई की तानाशाही

(1912-1916) अस्थाई संविधान के अनुच्छेद 53 के अनुसार दस महिने में संसद का प्रथम अधिवेशन आमन्त्रित किया जाना था तथा उससे सम्बन्धित नियम तथा संगठन राष्ट्रीय परिषद् के द्वारा निर्धारित किये जाने थे। 10 अगस्त 1912 में संसद से सम्बन्धित कानून बनाये गये।[7] तथा प्रतिनिधि सभा व सीनेट से युक्त द्विसदनात्मक संसद का उद्घाटन 8 अप्रेल 1913 को किया गया। किन्तु प्रारम्भ से ही संसद ने राष्ट्रपति के साथ सामंजस्य पूर्ण ढंग से कार्य करने के स्थान पर पाया कि राष्ट्रपति ससदीय व्यवस्था को मानने के लिये तैयार नहीं था। चीनी समाज राजनैतिक प्रक्रिया से तीव्र गति से बढ़ रहा था। चीनी समाज राष्ट्रीय समूहों में विभक्त हो गया था। तथा समूह सरकारी यन्त्र में संघर्ष उत्पन्न कर रहे थे। सरकार की कार्यपालिका में उत्तर चीन का परम्परागत प्रतिक्रियावादी समूह सक्रिय था जबकि संसद पर दक्षिण उदारवादी वामपक्षी गुट का आधिपत्य था जिसका विशालतम अंश नव पुनर्गठित कुमितांग दल का था।

शीघ्र ही एक राजनीतिक संघर्ष का प्रारम्भ तब हुआ जब राष्ट्रपति युआन ने पश्चिमी शक्तियों से ऋण के लिये बातचीत करनी प्रारम्भ की। यह 25 मिलियन पौंड का पुर्नगठन सम्बन्धी ऋण था। इस ऋण के लिये राष्ट्रपति ने बिना संसद की सहमति के बातचीत करनी प्रारम्भ कर दी तथा संसदीय प्रणाली के समर्थकों चीनियों को यह जानकर सदमा पहुंचा कि न केवल उनका राष्ट्रपति ही संविधान का उल्लघंन कर रहा था अपितु पश्चिमी देश उसको प्रोत्साहित भी कर रहे थे। पश्चिमी जगत के प्रति अज्ञानता होने के बाद भी चीनी इतना व्यवहारिक ज्ञान अवश्य रखते थे कि पश्चिमी देश अपर्याप्त अथवा दुर्बल साख के आधार पर इतना बड़ा 25 मिलियन पौण्ड का ऋण चीन को नहीं देंगे।

इसी दौरान चीन में युआन ने अपनी शक्ति बढ़ाने के लिये प्रान्तों में अपने समर्थकों की प्रांत के राज्यपाल के पद पर नियुक्ति की। जब कुमितांग दल को यह विश्वास हो गया कि युआन के साथ सामंजस्य करना सम्भव नहीं था तो जुलाई 1913 में दक्षिण चीन के कतिपय कुमितांग गवर्नरों ने विद्रोह प्रारम्भ कर दिया जिसे द्वितीय क्रान्ति की संज्ञा दी गई। युआन ने सेना तथा संपत्ति की सहायता से इस विद्रोह को आसानी से कुचल दिया।

7. अंग्रेजी अनुवाद के लिये देखिये चाइना ईयर बुक, 1914 संस्करण पृ० 464

इस प्रकार अब यह सरकार शक्ति का स्रोत नहीं रही अपितु धन व सेना के आधार पर शक्ति प्राप्त करने लगी। अन्तत: सनयातसेन को जापान में जाकर शरण लेनी पड़ी। अस्थाई राष्ट्रपति ने शीघ्रता से अपनी शक्ति को मजबूत बनाया उसने संसद में अपने विरोधियों का हत्या के द्वारा सफाया कर दिया तथा स्वयं दस वर्ष के लिये निर्वाचित हो गया। इस आधार पर 10 अक्टूबर 1913 को उसने नियमित राष्ट्रपति के रूप में पदभार सम्भाला।

अस्थाई संविधान ने संसद को देश के लिये स्थाई संविधान स्वीकार करने का अधिकार दिया था।[8] अत: संसद ने प्रत्येक सदन में से तीन सदस्य लेकर एक प्रारूप समिति का गठन किया। इस समिति ने जो प्रारूप तैयार किया उसे 1913 का 'स्वर्ग का मन्दिर प्रारूप' कहा गया।[9] इस प्रारूप की उल्लेखनीय विशेषता राष्ट्रपति तथा मन्त्रि मण्डल की शक्तियों पर नियन्त्रण लगाना था किन्तु यह संविधान सर्वशक्तिशाली युआन-शीह-काई की महत्वाकांक्षाओं के विपरीत था अत: इस पर संसद ने विचार नहीं किया। वस्तुत: युआन ने 4 नवम्बर 1913 को कुमितांग दल को गैर-कानूनी घोषित कर दिया। अत: चीनी संसद की गणपूर्ति अधूरी ही रह गई।

यद्यपि युआन आधुनिक शासन प्रणाली से अनभिज्ञ था तथापि यह इतना जानता था कि राष्ट्रपति के लिये एक संसद का होना अनिवार्य है। अत: उसने अपने समर्थक गवर्नरों को उत्साहित किया कि वे तत्कालीन संसद को भंग कर एक नवीन विधान सभा के चुनाव की याचना सम्राट से करें। इस प्रार्थना के पश्चात् उसने स्वयं एक संविधान परिषद् का निर्माण किया जिनमें 56 सदस्य चीन के विभिन्न प्रान्तों व प्रदेशों से आनुपातिक आधार पर चुने गए थे। यह नवीन परिषद् पूर्णत: युआन की शर्तों को मानने को तैयार थी उसके द्वारा बनवाया गया संविधान 1 मई 1914 को लागू हुआ।[10] इस प्रलेख के द्वारा राष्ट्रपति की शक्तियाँ और बढ़ा दी गई। उस पर से सभी प्रतिबन्ध हटा लिये गए। उसे विधान सभा पर पूरा नियंत्रण दिया गया। जिसे वह राज्य परिषद् की सहमति से कभी भी भंग कर सकता था। राज्य परिषद् द्वारा ऐसी सहमति देना कठिन नहीं था क्योंकि उसके सभी सदस्यों का मनोनयन वह करता था तथा वे उसके प्रति उत्तरदायी भी थे।

इस प्रकार युआन संविधान की आड़ में अपनी उन शक्तियों को सुरक्षित रखना चाहता था जो उसने सेना व धन के बल पर अर्जित की थीं। अब तक वह यथार्थवादी रहा था। किन्तु दुर्भाग्यवश वह कल्पनाशील तथा अपने समय से पृथक था क्योंकि वह स्वयं को एक राजतन्त्र के अध्यक्ष के रूप में स्थापित करने की सोचने लगा। नाममात्र के गणराज्य में उसकी निरपेक्ष शक्तियों को भी शायद चीनी सहन कर लेते किन्तु पाश्चात्य प्रभाव में लिप्त चीन पर उसके द्वारा राजतन्त्र की स्थापना के प्रयास ने चीन को आश्चर्य चकित कर दिया। यह विचार परम्परागत अर्थों में परिपक्व व आधुनिक अर्थों में असहनीय था।

8. अस्थाई संविधान, अनुच्छेद 54

9. अंग्रेजी में देखिये दि चाइना ईयर बुक, 1914 संस्करण 490-99

10. अंग्रेजी में देखिये यू. एस. फोरेन रिलेशन्स, 1914 पृ. 56-60 तथा दि चाइना इयर बुक 1916 संस्करण पृ. 432-35

किन्तु वह जिद् पर बना रहा। उसकी इच्छा का संविधान बन जाने के पश्चात् उसने चीन को पुनः राजतन्त्र में परिवर्तित करने का प्रयास प्रारम्भ किया। उसने अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए कूटनीति की सभी चालों का जैसे घूस, षडयन्त्र, संगठन तथा प्रचार का प्रयोग किया।[11] 1915 में 8 अक्टूबर 1915 के घोषित निर्वाचन कानून के अन्तर्गत प्रान्तीय चुनाव करवाये गए प्रतिशत का चौथाई अंश चीनी जनता ने मतदान में भाग लिया एक मत की कीमत दस चीनी डॉलर तक पहुँची। दिसम्बर तक प्रान्तों के प्रतिनिधियों ने साम्राज्य स्थापना की घोषणा कर दी। तब युआन ने पहले परम्परागत चीनी ढंग से राजपद को अस्वीकार किया तथा बाद में उसने अपने मातहतों से कहा कि चूँकि जनता उसे सम्राट बनाना चाहती है अतः वह यह पद स्वीकार करता है तथा उसने 1 जनवरी 1916 को अपने पदारोहण की तिथि निश्चित की।

इस योजना का विरोध दक्षिण चीन तथा उदारवादियों ने किया। इस प्रकार प्रादेशिक संघर्ष प्रारम्भ हुआ। दिसम्बर 1918 में दक्षिण पूर्व चीन में यूनान प्रान्त में स्पष्ट विद्रोह भड़क उठा तथा बाद में अन्य दक्षिण प्रान्तों ने भी बढ़ती हुई चीन सैनिक स्वायत्तता के साथ यूनान का समर्थन किया। चीन में वास्तविक शक्ति स्थल सेना तथा प्रान्तों के राजानों में निहित करती थी। चीन की अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता अथवा चीन की राजधानी पेकिंग पर अधिकार इस सन्दर्भ में कोई महत्त्व नहीं रखता था। पेकिंग सरकार प्रान्तों में उठे विद्रोह को दबाने में असमर्थ रही। युआन ने अनुभव कर लिया कि नवीन व्यवस्था की स्थापना करने का उसका स्वप्न नष्ट हो चुका था। 22 मार्च 1916 को उसने राजतन्त्र इरादों को छोड़कर पुनः गणराज्य की स्थापना की। यह नवीन राजवंश जो हुंग हुंसी (महिया वान संविधानवाद का राजवंश) कहलाने वाला था तीन माह से भी कम समय रहा। इसके नामोनिशान के रूप में मात्र उस समय बनाई गई कुछ मुद्राएँ रहीं।

दक्षिण चीन के विद्रोही एक बार सत्ता के आदि होने के पश्चात् तथा यह जानने के पश्चात् की वास्तविक शक्ति का स्रोत पेकिंग नहीं था सन्तुष्ट नहीं रह सके। अप्रेल 1916 में यांग्ज के दक्षिण के पांच प्रान्तों ने अपने को स्वतन्त्र घोषित कर दिया। क्वांगतुंग में पेकिंग के विरुद्ध एक सरकार बनाई गई। गृह युद्ध की शंका स्पष्ट थी किन्तु 6 जून को युआन की आकस्मिक मृत्यु के कारण यह स्थगित हो गया। ली युआन हुंग जो युआन के शासन के दौरान उपराष्ट्रपति बना था राष्ट्रपति पद पर नियुक्त हुआ। वह 1911 में अनिच्छा से क्रान्तिकारियों में सम्मिलित हुआ था तथा न तो वह लोकप्रिय था और न अलोकप्रिय। उसके शासन-काल में प्रान्तों की शक्तियाँ और अधिक बढ़ी तथा गणराज्य नाममात्र को रहा।

न्यूनतम विरोध की राजनीति : 1916-28

युद्ध सामन्तों के काल में 0916-28 के दौरान चीन में पेकिंग की सरकार की कूटनीतिक व राजनीतिक सम्प्रभुता की नाटकीयता 20वीं शताब्दी की विचित्र प्रघटना है।

11. एक पूर्व अमेरिकी परामर्शदाता डॉ० फ्रेंक जे गुडनाउ ने भी यही तर्क दिया था कि चीन के लिये गणराज्य के स्थान पर राजतन्त्रीय व्यवस्था उचित होगी तथा उससे संवैधानिक सरकार की स्थापना करने में आसानी होगी। स्टानले के हेनिवेक की रचना काटेम्पररी पालिटिक्स इन दि फॉर ईस्ट, न्यूयार्क 1964 से उद्धृत।

युद्ध सामन्तवाद, संकट के प्रति चीनियों की सामान्य प्रतिक्रिया थी अंशतः चीनियों ने अपनी राजनीतिक संस्कृति के अनुभव से चीन में सम्भावित अव्यवस्था को भांप लिया था तथा युद्ध सामन्तवाद को अपनी नियति के रूप में स्वीकार कर लिया। निकृष्ट तथा बर्बर स्वरूप में भी विभिन्न राजवंशों के मध्य संघर्ष भी चीन के इतिहास में लोकप्रिय प्रजातन्त्रीय दबाव रहा है। लूटपाट तथा अव्यवस्था के द्वारा लोकप्रिय इच्छा का दुरुपयोग करना भी प्रजातन्त्र का एक सम्भव तरीका हो सकता है यह चीन के उदाहरण से स्पष्ट है।

किसी भी अन्य प्रमुख सभ्यता में राजनीतिक व्यवस्था के 'नाश की अपेक्षा' तथा अन्य व्यवस्था के 'पुनर्स्थापित' होने की सम्भावनाएँ दोनों इतने स्पष्ट रूप में नहीं पाई जा सकती हैं। अन्य राजनीतिक संस्कृतियों में भी संगठन व नाश के चक्र पाए जाते हैं कभी ये दीर्घ अवधि वाले चक्र होते हैं तथा कभी लघु अवधि चक्र होते हैं किन्तु शायद ही किसी समुदाय में यह अपेक्षा करते हैं कि उनके राजनीतिक संगठन अराजकता में समाप्त हो जाए तथा कुछ समय के पश्चात् यही अराजकता एक नवीन व्यवस्था के लिए सुदृढ़ आधार प्रदान कर सके। 1916-28 के मध्य एक महान् व गम्भीर क्रान्ति चीन में हुई जिसने सम्पूर्ण जन-जीवन को अस्त-व्यस्त कर दिया। दो विरोधी बातें साथ-साथ हुई। परम्परागत चीनी चूंकि नाश की अपेक्षा कर रहे थे अतः उन्हें यह सहनीय लगा किन्तु जैसे स्वयं युआन ने अनुभव किया था मात्र राजतन्त्र की स्थापना से चीन में अव्यवस्था समाप्त नहीं हो सकती थी। चीन में अराजकता व अस्तव्यस्तता उस अनदेखे भविष्य के लिए थी जिसकी न तो वे कल्पना कर सकते थे न जिसके इच्छुक थे। सुदुरपूर्व देशों के शासन के बारे में प्रस्तुत प्रकार की पुस्त में चीनियों के राजनीतिक व्यवहार को व्यस्त करना आवश्यक है जो हमारी परिस्थिति में हम से पर्याप्त निकट लगता है इसके कारण कुण्ठा, निष्क्रियता तथा न्यूनतम राजनीतिक विरोध का व्यवहार थे।[12]

इस प्रकार चीनी इतिहास के दीर्घ परिप्रेक्ष्यों में एक सर्वव्याप कारक दिखता है। चीन में अराजकता भ्रष्टाचार तथा अनुपयुक्त केन्द्रीय सरकार को कभी भी पसन्द नहीं किया गया। आधुनिक चीन के राजनीतिक दुखान्त में इस देश के सम्मुख जो भी राजनीतिक विकल्प रहे हैं वे तात्कालिक परिस्थितियों की तुलना में सर्वदा अधिक दुखदायी लगे हैं।

उत्तरी युद्ध सामन्तवाद

प्रान्तीय सामन्तों का प्रतिमान इसे पूर्णतः स्पष्ट करता है। यह मात्र युद्ध से सम्बन्धित प्रघटना नही थी अपितु इसमें राजनीतिक कारक भी सम्मिलित थे जिसके कारण इसे मंचू शासन के केन्द्रीयकृत शासन की तुलना में उचित ठहराया जा सकता है। ये कारक प्रान्तीय स्वायत्तता तथा नागरिक व सैनिक शक्तियाँ का सरकार में केन्द्रित होना था। अब तक चीनी जनता दो सत्ताओं के अन्तर्गत रहती आ रही थी। एक प्रशासन व्यवस्था मंचुओं की थी जो सैन्य प्रधान थी तथा दूसरी मंचू व चीनियों की मिश्रित प्रशासनिक व्यवस्था थी। यह दोहरी शासन व्यवस्था प्रान्तीय स्तरों पर वायसरायों तथा प्रान्तीय गवर्नरों से तथा

12. देखिये जॉर्ज एन पेटी की रचना दि प्रॉसेस ऑफ रिवोल्यूशन, न्यूयॉर्क 1938, विशेषतया पृ. 41-46 तथा 141-44। पेटी का अध्ययन मुख्यतया पश्चिमी अनुभव पर आधारित है तथापि लेखक की सीमाओं के बावजूद यह अध्ययन पर्याप्त मौलिक है।

दूसरी ओर तार-तार जनरलों के पद में अभिव्यक्त होती थी। किन्तु अब पहली बार दोनों शक्तियाँ एक ही प्रान्तीय सत्ता में एकीकृत कर दी गई। यह प्रगति थी किन्तु प्रान्तीय स्वायत्तता के अत्यधिक बढ़ जाने के पश्चात् अन्तर्प्रान्तीय संघर्ष की राजनीति विनाशकारी सिद्ध हुई।

इस संघर्ष के लिए स्वयं युआन उत्तरदायी था। उसने स्वयं चीन की नवीन पाश्चात्यीकृत सेना का प्रयोग अपनी निजी महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए कर यह उदाहरण प्रस्तुत किया था। उसने प्रत्येक प्रान्त में एक सैनिक अधिकारी की नियुक्ति की तथा उन्हें आतंकित करने वाली शक्तियाँ प्रदान कर युआन ने चीन में शान्ति स्थापित करने का प्रयास किया। युआन की मृत्यु के पश्चात् यद्यपि उसके द्वारा स्थापित सरकार तत्काल समाप्त तो नही हुई किन्तु उसकी मृत्यु के साथ वे मानवीय सम्बन्ध अवश्य समाप्त हो गए जिन पर यह सरकार आधारित थी। युआन जो प्रान्तीय अधिकारियों के लिए भय व आतंक प्रतीक था नहीं रहा अतः दशा शीघ्रता से बिगड़ने लगी।

युआन की मृत्यु के पश्चात् उसके समर्थक आपस में लड़ने लगे। इन सामन्तों का पक्ष लेकर चीन में बाह्य शक्तियाँ संघर्षरत हो गई तथा सत्ता पर अधिकार प्राप्त करने का प्रयास करने लगी। इसके बाद की दशाब्दि में सन्धियाँ, प्रतिउत्तर सन्धियाँ, षड़यन्त्र तथा खुले संघर्ष हुए। ये संघर्षरत गुट, रिश्तेदारी, प्रदेश अथवा एक स्थान अथवा आरोपित भ्रातत्व के आधार पर संगठित थे। इन सैनिक गुटों को किसी प्रकार का उद्देश्य या नैतिक लक्ष्य नहीं था तथा न ही वे अपने देश अथवा जनता के प्रति उत्तरदायी थे। वे कुछ समय के लिये एक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए संगठित हो सकते थे किन्तु तत्काल बाद अपने निजी हितों के लिए पृथक् भी हो जाते थे। पेकिंग की केन्द्रीय सत्ता का स्वरूप बहुत पहले के चाऊ सम्राटों के समान था अथवा रोम के पोप अथवा सम्राट के समान था जिनकी सत्ता अत्यधिक दुर्बल थी तथा जब जिस सैनिक गुट को अवसर लगा वह सत्ता पर अधिकार कर लेता था।

यह युद्धरत सामन्तों का दौर अन्ततः पूर्वी उत्तरी प्रान्त की घटनाओं के साथ समाप्त हो गया। यद्यपि युद्ध, सामन्तवाद की भावना व प्रभाव उसके बाद भी पर्याप्त अर्से तक चलते रहे। इन प्राचीन युद्धरत सामन्तों को कुमितांग दल में उच्च सैनिक पद प्रदान किये गए। अब तक के सभी राजनीतिक नेता या तो पूर्व सैनिक थे अथवा उनका सेना से निकट सम्पर्क रहा था। वे इस विचार पर विश्वास नहीं कर सकते थे कि सैन्य शक्ति पर प्रशासक का आधिपत्य होना चाहिए। इस प्रकार युद्ध सामन्तवाद कुमितांग की प्रारम्भिक क्रान्ति के दौर तक चलता रहा तथा इसने अस्थाइत्व व युद्ध के दबाव को बढ़ावा दिया। 1949 में राष्ट्रीय सरकार के पतन तक सैनिक अधिकारियों को केन्द्रीय तथा स्थानीय प्रशासन में उत्तरदायी पद दिये जाते थे। साम्यवादी भी सैनिक शक्ति की सहायता से ही सत्ता प्राप्त कर सके थे। युद्ध सामन्तवाद तथा सैन्यवाद के मध्य भेद बहुत कम है। जब तक सत्ता पर सैनिकों का आधिपत्य रहा व्यवस्थित सरकारों की स्थापना सम्भव नहीं हो सकी।

युआन की मृत्यु के पश्चात् ली-युआन-हुंग अध्यक्ष बना तथा उसने 1912 के अस्थाई संविधान को पुनः लागू किया। जिस मूल संसद को युआन ने भंग कर दिया था उसे पुनः आमन्त्रित किया गया तथा उसका प्रथम अधिवेशन 1 अगस्त 1916 को हुआ। एनवी गुट का नेता युआन-ची-जुई नई सरकार का प्रधानमन्त्री बनाया गया। युआन द्वारा

अपनाया गया दूसरा संविधान अवैध घोषित कर दिया गया तथा इस संसद का सर्वप्रथम कार्य एक नवीन संविधान बनाना था किन्तु संसद संघात्मक अथवा एकात्मक व्यवस्था को लेकर विभाजित हो गई तथा किसी निर्णय पर नहीं पहुँच सकी। इसी समय ली ने प्रधान मन्त्री तुआन द्वारा चीन को प्रथम महायुद्ध में पूर्णतः मित्रराष्ट्रों के पक्ष में रखने का विचार का विरोध किया।

ली ने एक त्रुटि पूर्ण निर्णय लिया जिसने पेकिंग में राजतन्त्री क्रान्ति को सम्भव बना दिया उसने चांग हुसेन नामक सामन्त को पेकिंग आमन्त्रित किया। उसके परामर्श पर ली ने संसद को भंग कर दिया। चांग हुसेन राजधानी में अपने सैनिकों का जमाव करने के बारे में एक बार फिर चीन राजतन्त्र की स्थापना के प्रयास किये। 1 जुलाई 1917 को सम्राट ह्यूयी को राजा बनाया गया किन्तु यह राजा 15 दिन ही टिक पाया। भूतपूर्व प्रधानमन्त्री के नेतृत्व में एनवी गुट ने राजतन्त्रवादियों पर आक्रमण कर उन्हें समाप्त कर दिया तथा फेंग-कू-चांग के नेतृत्व में चिली गुट की सहायता से उसने पेकिंग पर अधिकार कर लिया।

तुआन ने दुबारा सत्ता प्राप्त करने के पश्चात् पुरानी संसद को बुलाने से इन्कार कर दिया तथा अपनी संसद के अनुसार उसने नई संसद आमन्त्रित की। यह संसद जो आन फू संसद कहलाई अगस्त 1918 से अगस्त 1920 तक रही तथा इसने भी संविधान बनाने का प्रयास किया। उसने 1913 के टेंपल ऑफ हेवन प्रारूप को अस्वीकार कर एक नये प्रारूप को 20 अगस्त 1919 को स्वीकार किया जो आप-फू प्रारूप कहलाया।[13] यह पहले वाले प्रारूप के समान था। इसका भी वही हाल हुआ इसे सरकारी तौर पर स्वीकार नहीं किया गया। इस बीच एनवी तथा चिली गुटों के बीच की सन्धि समाप्त हो गई क्योंकि इन दोनों गुटों के प्रान्त स्वयं शक्ति के लिये संघर्ष करने लगे (चिली होपेई का प्राचीन नाम है)। 1917 के शरद में ही ताओ कुन तथा वूं-पेई फू के नेतृत्व में अपनी शक्ति बढ़ा ली थी तथा एनवी गुट के तुआन को त्याग पत्र देना पड़ा था।

इसी समय मंचूरिया के चांग-त्सोलिन ने चीन की राजनीति में शक्ति के लिये खुला संघर्ष प्रारम्भ किया। उत्तर चीन के अवशिष्ट इतिहास इन सामन्तों में सन्धियाँ तथा प्रति सन्धियों का इतिहास है जिसमें प्रत्येक ने सत्ता छल कपट व शक्ति के आधार पर प्राप्त करने की कोशिश की।

छल पूर्ण गणराज्य

पेकिंग में चीन के गणराज्य की सरकार जितनी निर्धन तथा अयोग्य थी उसकी तुलना में उसने पर्याप्त कार्य किया। किसी प्रकार की आन्तरिक सत्ता तथा निश्चित आर्थिक स्रोतों के अभाव के बावजूद कूटनीतिक सम्बन्धों को बनाये रखने में, तथा यह आडम्बर बनाये रखने में कि चीन की सरकार वस्तुतः अत्यधिक शक्तिशाली थी तथा साथ ही चुंगी व डाक जैसे तटस्थ सेवाओं को बनाये रखने में इसने सफलता प्राप्त की। यह सत्य है कि एक बार चीनी प्रधानमन्त्री ने अपनी जान धोबी को जाने वाले कपड़ों की टोकरी में छिपकर बचाई। किन्तु इस समय चीन बाह्य आडम्बर बनाये रखने में सफल हुआ। चीन के सभी

13. देखिये पेन वी तुंग की रचना दि चाइनीज कांस्टीट्यूशन मेकिंग इन चाइना, वाशिंगटन, 1946 परिशिष्ट एक

विदेशमन्त्री शुद्ध अंग्रेजी में पत्र लिखते थे चीन के प्रतिनिधि मण्डल ने विदेशों में अपने देश का पूरा प्रतिनिधित्व किया। चीन के नेता अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पेरिस शान्ति सम्मेलन वर्सीय सन्धि, वाशिंगटन सम्मेलन जैसे कठिन अवसरों पर अपने देश का अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर एक राज्य के रूप में प्रतिनिधित्व करने में सफल रहे। यद्यपि विश्व में चीन के बारे में कई प्रकार की अफवाहें समाचार पत्रों के माध्यम से चल रही थीं।

जून 1922 में चिली गुट का त्साओ कुन राष्ट्रपति पद को प्राप्त करने की महत्त्वाकाँक्षा से तत्कालीन राष्ट्रपति हसु-शीह चांग को अपदस्थ करने में सफल हुआ। तब उसने 11 जून 1922 को ली-युआन हुंग को द्वारा राष्ट्रपति पद पर बिठाया तथा स्वयं वास्तविक शक्ति का अधिकारी बना। किन्तु जब इससे भी त्साओ सन्तुष्ट नहीं हुआ तो उसने संसद के सदस्यों से स्वयं को राष्ट्रपति बनाने के लिए कहा ऐसा उसने घूस देकर किया। दयालु होने के कारण उसने आतंक का सहारा नहीं लिया। 5 अक्टूबर 192 को वह राष्ट्रपति बना। त्साओ के शक्ति में आते ही संसद ने एक नवीन संविधान स्वीकार किया जो 10 अक्टूबर 1923 को लागू भी कर दिया गया।[14] यद्यपि 1912 के बाद यह प्रथम संविधान था जिसे सरकारी स्तर पर स्वीकारा गया था किन्तु चूँकि ऐसा संसद को घूस देकर किया गया था अतः चीनी जनता पर उसका अच्छा प्रभाव नहीं पड़ा। यह संविधान व्यवहार में कभी भी लागू नहीं हुआ।

राष्ट्रपति त्साओं व उसके समर्थक वू-वेई-फू मंचूरिया के सामन्त चांग-त्सो-लिन से संघर्षरत हुए। चिली व मंचूरिया सेनाओं में अगस्त 1924 में युद्ध प्रारम्भ हुआ। वू फ ने अपने विश्वसनीय जनरल पेंग यू हसिआग को लड़ने भेजा। पेंग ने उत्तर में युद्ध करने के बजाय पेंकिंग पर आक्रमण कर वहाँ अपने शासन की स्थापना कर दी। वू पराजित हुआ तथा मध्य चीन में जाकर उसने शरण ली। पेंग ने राष्ट्रपति त्सोओ को बन्दी बनाकर महल में धावा बोल दिया तथा सम्राट का अपहरण कर लिया। तत्पश्चात् उसने अपनी स्थिति को मजबूत बनाने के लिये मंचूरिया के सामन्तों से समझौता किया तथा अवकाश प्राप्त राजनीतिज्ञ तुआन जो एनवी गुट का नेता था उसे अस्थाई मुख्य प्रशासक बनने के लिए 24 नवम्बर 1924 को आमन्त्रित किया। तुआन कुछ समय तक पेंग तथा चांग की शक्तियों में सन्तुलन स्थापित करने में सफल हुआ। अपनी सरकार को कानूनी स्वरूप प्रदान करने के लिए उसने नवम्बर 1925 में एक सम्मेलन आमंत्रित किया। 12 दिसम्बर 1925 को एक पूर्णतः नवीन संविधान अपनाया गया।[15] इसके पूर्ववर्ती संविधान के समान इस संविधान को लागू करने के लिये पर्याप्त समय नहीं मिला क्योंकि शीघ्र ही इसको बनाने वाले शासक अपदस्थ कर दिये गए। जब तुआन अपनी सरकार को मजबूत बनाने का प्रयास कर रहा था नवम्बर 1925 में चांग तथा पेंग के मध्य संघर्ष प्रारम्भ हो गया। अप्रेल 1926 में मंचूरिया सेनाएँ पेकिंग में आ गई तथा तुआन को भागना पड़ा। तब से उत्तरी चीन पर चांग त्सोलिन का एकाधिकार हो गया उसने उस क्षेत्र में एक कठपुतली सरकार की स्थापना की तथा खुद उसका तानाशाही शासक बन बैठा। उसकी सत्ता को 1928 में कुमितांग सेनाओं ने समाप्त की तथा उसकी हत्या कर दी गई।

14. अंग्रेजी संस्करण के लिये देखिये पेन पूर्वोद्धृ परिशिष्ट जी
15. अंग्रेजी संस्करण के लिए देखिये पेन पूर्वोद्धृत परिशिष्ट आई।

दक्षिण चीन की प्रतिछाया सरकारें

दक्षिण चीन की स्थिति उत्तर चीन से अधिक शान्त व व्यवस्थित नहीं थी। यूनान, शेचुआन व क्वेचो इन तीन दक्षिण पश्चिमी प्रान्तों में अवसादी स्थानीय नेताओं का आधिपत्य हो गया था जो न उत्तरी सैनिक नेताओं से सम्बन्धित थे और न दक्षिण पूर्व के सनयातसेन के कुमितांग से सम्बन्धित थे। 1916 में कैंटन कुमितांग ने सैनिक सरकार की स्थापना की तथा पुरानी संसद के कुमितांग सदस्यों को एक असाधारण अधिवेशन के लिए आमन्त्रित किया। 1914 में दक्षिण व उत्तर में समझौते के लिए बातचीत होने लगी जिसमें दक्षिण क्षेत्र ने 1912 के अस्थायी संविधान को पुनः स्थापित कर 1914 की संसद को वापिस से आहूत करने की शर्त रखी।

दक्षिण क्षेत्र इस समय जिद् करने की स्थिति में नहीं था। आन्तरिक संघर्ष उत्तर के समान दक्षिण में भी प्रारम्भ हो चुका था। सनयातसेन कैंटन में शासन कर सका था क्योंकि उसने क्वांग के दो प्रान्तों क्वांगतुंग तथा क्वांगसी के सामन्तों से लेन-देन का समझौता किया था। जब क्वांगसी के सैनिक शासकों ने दक्षिणी सरकार में अधिक भाग चाहा तो कुमितांग दल के नेता तथा सैनिक शासक के अध्यक्ष सनयातसेन ने इस संघर्ष के प्रति विरोध प्रकट करने के लिए 4 मई 1918 को त्याग पत्र दे दिया। तत्पश्चात् सदस्यों का एक शासक मण्डल दक्षिण क्षेत्र में नियुक्त किया गया। सनयातसेन भी उनमें से एक सदस्य था। उसने अगस्त 1919 में त्यागपत्र दिया और वहाँ से भाग गया। अक्टूबर 1920 में सनयात के अनुयायी कैंटन में दाखिल हुए और उन्होंने क्वांग्सी सैन्यवादियों को वहाँ से भगा दिया। सन कैंटन में लौट आया तथा उसने रंप संसद आमन्त्रित की जिसने चीनी गणराज्य के लिए एक नवीन प्रारूप संविधान स्वीकार किया जिसमें सात अनुच्छेद थे।[16] 5 मई 1921 को वह राष्ट्रपति चुना गया। उसके समर्थकों में फूट पड़ जाने के कारण अगस्त 1922 में उसे फिर संघाई भाग जाना पड़ा। इस पराजय से सन का यह विचार और भी दृढ़ हो गया कि उसे कैंटन में अपना सैनिक अड्डा कायम करना चाहिए। जहाँ से वह शक्ति के बल पर सम्पूर्ण देश का एकीकरण कर सके। कई राजनीतिक व वैयक्तिक दांवपेंच लगाने के बाद सन मार्च 1923 में कैंटन में लौटने में सफल हो गया जहाँ से उसने सेनापति की पदवी ग्रहण की तथा एक नवीन क्रान्ति की कोशिश की।

कुमितांग का पुनरोदय

गणतन्त्र की अव्यवस्था, युद्ध सामन्तवाद, उत्तर तथा दक्षिण प्रदेशवाद इन सब संघर्षों के तले दो मुख्य दबाव एक संगठनात्मक तथा सैद्धान्तिक कार्य कर रहे थे जिनका बाद में चीनी सरकार के विकास पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। दो दशाब्दी तक षड्यन्त्र व अपरिपक्व क्रान्ति का फल भुगतने के पश्चात् सनयातसेन ने चीन के भविष्य के बारे में नये सिरे से सोचना प्रारम्भ किया। कुमितांग सरकार के 1928–1949 के कार्य काल

16. देखिये चिन-चुआन सॅग की हिस्ट्री ऑफ पॉलीटिकल सिस्टम ऑफ दी चाइनीज रिपब्लिक, शंघाई, 1964 पृ. 133–34। इस आकस्मिक विधि के लिए 'तुंग-लिन' की रचना दि चाइनीज गवर्नेंट, शंघाई, 1914, ग्रंथ पृ. 286–287 देखिये।

में सर्वाधिक महत्वपूर्ण राजनीतिक दर्शन डा० सन का जनता के बारे में तीन सिद्धान्त का दर्शन था जिसकी चर्चा अगले अध्याय में की गई है। 1923 से 1927 के दौरान सनयातसेन के कार्यक्रम ने कुमितांग दल की शक्ति को संगठित रूप में परिवर्तित कर दिया जिसने बाद में सुगठित सेना व शासन की स्थापना की जिसने चीनी जनता की महत्वा-कांक्षाओं की पूर्ति के लिए एक अन्य क्रान्ति का आश्वासन दिया।

1922 में जब सनयातसेन शंघाई में था तो उसने अपने दल के भविष्य के स्वरूप व तरीकों के बारे में रूसी दूत अब्राइम एडोल्फ जोफी से बात की। सन ने देखा कि लेनिन के दल की बहुत सी बातें उसके दल के लिये लाभदायक होंगी। 1923 के बसन्त में कैंटून में लौटने के बाद उसने कुमितांग पार्टी के संगठन व अनुशासन को लेनिनवादी बनाने तथा दक्षिण चीन की सरकार को रूसी ढांचे में ढालने का प्रयास किया। किन्तु दल अथवा सरकार दोनों में ही उसने साम्यवादी सिद्धान्तों व संगठन को अपनाने का प्रयास नहीं किया। इसी समय चीन का साम्यवादी दल, जिसका गठन जुलाई 1921 में हो गया था, ने कुमितांग दल का समर्थन किया क्योंकि उसके कई सदस्य कुमितांग दल में गुप्त रूप से सम्मिलित हो गए थे।

1923 की पतझड़ में रूस का दूसरा राजदूत माइकेल बोरदिल चीन आया तथा उसने कुमितांग दल का पुर्नगठन करने में सन की सहायता की। इस प्रकार कुमितांग दल पूर्णतः अधिनायकवादी बन गया। इटली के फासीवाद तथा जर्मनी के नाजीवाद से बहुत पहले कुमितांग ने कैंटून में एक दल की तानाशाही स्थापित की। 20 जनवरी 1924 को दल का प्रथम सम्मेलन कैंटून में हुआ इसमें चीनी साम्यवादी दल के सदस्यों ने भी भाग लिया। कांग्रेस ने एक घोषणापत्र प्रेषित किया जिसमें भविष्य में दल तथा सरकार के मध्य सम्बन्ध की रूपरेखा प्रस्तुत की गई थी। चीन के सन्दर्भ में राष्ट्रीय सरकार 1928–1949 के प्रभाव के सन्दर्भ में इस दलीय कांग्रेस का संगठनात्मक प्रभाव अत्यधिक था (अतः इस पर अगले अध्याय में विस्तार में विचार किया गया है। संक्षेप में इस सम्मेलन द्वारा प्रचार व राजनीतिक शक्ति के लिये एक नवीन व्यवस्था का निर्माण किया गया। शासन के नवीन सिद्धान्तों का आधार रूसी नमूना था जो उस ढीले वाले गणराज्य व्यवस्था से पूर्णतः भिन्न था जिसकी स्थापना का प्रयास सनयातसेन ने पिछली दशाब्दियो में किया था। दल की सैन्य शक्ति बढ़ाने की दृष्टि से मई 1924 में वैम्पोआ में सैनिक अकादमी की स्थापना की गई तथा एक युवा अधिकारी च्यांग काई शेक जो उस समय मास्को में लाल लाल सेना के संगठन का अध्ययन कर रहा था उसे उस अकादमी का संचालक नियुक्त किया गया।

1924 में तुआन ची गुई के अस्थायी रूप से मुख्य कार्यपालिका बन जाने के पश्चात् उत्तर व दक्षिण में समझौता होना असम्भव हो गया। सन इस उम्मीद से पेकिंग गया कि शायद शान्तिपूर्ण समझौते के माध्यम मै दोनों पक्ष विलय के लिये तत्पर हो जाएं। किन्तु उसके तथा विरोधी पक्ष दोनों के मुखियाओं ने सनयातसेन की योजना का विरोध किया। समझौते के उसके सभी प्रयास असफल हो गए तथा अन्ततः 12 मार्च 1925 में पेकिंग में उसकी मृत्यु हो गई तथा अपनी अन्तिम इच्छा में उसने अपने अनुयाइयों से उसके द्वारा प्रारम्भ की गई अधूरी क्रान्ति को पूरा करने का आग्रह किया था।

सन की मृत्यु के पश्चात् उसके समर्थकों ने दल के मुख्य कार्यालय में एक औपचारिक सरकार का गठन। जुलाई 1925 में किया जो चीन की राष्ट्रीय सरकार कहलाई। कुमितांग दल की केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के द्वारा इस सरकार के लिए 16 सदस्यों की नियुक्ति की गई जिसका अध्यक्ष वांग चिंग वेई बनाया गया।

उत्तरी क्षेत्र के लिए संघर्ष

इस राष्ट्रीय सरकार ने क्वांग-तुंग तथा क्वांगसी में अपनी जड़ों को मजबूत बनाकर फिर सम्पूर्ण चीन को जीतने की महत्वाकांक्षा को पूरी करने की तैय्यारी की। यह प्रयास च्यांगकाई शेक के नेतृत्व में कैंटून से जुलाई 1926 में प्रारम्भ हुआ। यद्यपि इस विशाल सैनिक कार्यवाही के बारे में उस समय भी पर्याप्त सन्देह था। इसका पहला कारण यह था कि दक्षिण चीन अब भी अपेक्षाकृत रूप से दुर्बल था। द्वितीय नई राष्ट्रीय सरकार जिस एकता का प्रदर्शन कर रही थी वह वस्तुतः इसे प्राप्त नहीं थी अनुदारवादियों के बढ़ते हुए प्रभाव से चिन्ता थी और अन्ततः साम्यवादियों को इस संघर्ष के नेता च्यांग काई शेक की महत्वाकांक्षाओं के बारे में सन्देह हो गया।[17]

तथापि तीन महीने के अन्दर राष्ट्रवादी सेनाओं ने हेनकोन पर विजय प्राप्त कर ली तथा जनवरी 1927 में शासन का क्षेत्र हेनकोवा, हेनयांग तथा पूयांग नगरों में स्थानान्तरित कर दिया गया तथा इसे वूहान शासन की संज्ञा दी गई। इस समय साम्यवादियों तथा राष्ट्रवादियों के मध्य संघर्ष प्रारम्भ हो गया। साम्यवादी राष्ट्रवादी सरकार की स्थापना के पश्चात् मौन रहे। सन के सिद्धान्त के अनुसार जब राष्ट्रवादी धीमे हुए तब समाजवादी क्रान्ति को मात्र आगे बढ़ाने से सन्तुष्ट नहीं हुए।

वांग चिंग वेई जो कुछ समय के लिए चीन को छोड़ कर चला गया था वह मार्च 1927 में वूहान लौट आया तथा उसने साम्यवादियों के साथ सहयोग पर जोर दिया। किन्तु मध्य यांग्ज नगरों में वुहान शासन द्वारा विदेशों के द्वारा दी गई सुविधाओं के विरुद्ध किये गये विरोध ने दक्षिण पंथ तथा च्यांग काई शेक को चौंका दिया। दक्षिण पंथियों ने नार्नकिंग में अप्रेल 1927 में विरोधी सरकार की स्थापना की। निचले यांग्ज में वाम पन्थियों का सफाया किया गया। पेकिंग में सोवियत कार्यालय पर हमला किया गया तथा एम. एन. रॉय जो वुहान सरकार से संलग्न एक भारतीय साम्यवादी था, की गतिविधियों से जो कुछ जानकारी मिली उससे दक्षिण पंथियों का पक्ष प्रबल हुआ। दोनों घटनाओं ने स्पष्ट कर दिया कि रूसी चीनी क्रान्ति को अपने लाभ का साधन बनाना चाहता था। वुहान शासकों ने स्वयं को शुद्ध किया तथा 1927 के पतझड़ तक कैंटून में एक बार शक्तिशाली होने के पश्चात् नानकिंग की राष्ट्रीय सरकार में सम्मिलित हो गए।

17. अगस्त 1925 में सनयातसेन के विश्वसनीय किन्तु क्रान्तिकारी समर्थक लिआओ-चुग-काई की हत्या से दल की एकता को धक्का पहुँचा। पिकिंग में पश्चिमी शिखर समूह (उस स्थान का नाम डा० सन का शव दफनाया जाना था) ने वामपंथियों की आलोचना की तथा उन्हें दल से निष्कासित कर दिया। उसके बदले में 1926 में दल के द्वितीय सम्मेलन में पश्चिमी शिखर आन्दोलन की भर्त्सना की गई तथापि इस संघर्ष को दबा दिया गया। इसके तत्काल पश्चात् स्वयं च्यांग-काई-शेक ने कैंटून के विभिन्न साम्यवादियों का सफाया करना प्रारम्भ किया। विस्तार के लिए चेइन-तुआन शेंग की रचना दि गवर्नमेंट एण्ड पॉलिटिकल इन चाइना, कैम्ब्रिज, 1950 पृ. 91-95 देखिये।

राष्ट्रवादी अभूतपूर्व सफलता से शंघाई व नानकिंग क्षेत्र पर बढ़ गये तथा उसके पश्चात् उत्तर क्षेत्र के युद्ध सामन्तो के सामने दो ही विकल्प थे कि या तो वे राष्ट्रवादियों से सन्धि कर लें अथवा पराजित हो जाएँ। फेंग यू हसिश्रांग तथा येन हसी शान ने सन्धि करना बेहतर समझा तथा वे सेनापति च्यांग काई शेक की सेना में कमाण्डर बन गए। च्यांगत्सोलिन पेकिंग से भाग गया तथा उत्तरपूर्व में लौटने के पश्चात् वह रहस्यपूर्ण ढंग से मर गया।[18] जापानियों के स्पष्ट स्वार्थ के कारण मार्शल च्यांग ने उत्तरपूर्व में स्वेच्छा से राष्ट्रवादी पताका फहराकर संघर्ष को टाला। इस प्रकार 1917 में मंचुओं के आधीन अस्थायी एकता प्राप्त होने के पश्चात् चीन पहली बार एकता के सूत्र में बद्ध हुआ।

किन्तु पुराने गणराज्य की समाप्ति तथा उत्तरी क्षेत्र में संघर्ष की असफलता के दूरगामी प्रभाव पड़े। यह जानने के लिए हमें कुमितांग के पुनर्गठन, उसके साम्यवादियों से सम्मिलन तथा फिर पृथकता, च्यांग काई शेक के उदय तथा कुछ युद्ध सामन्तों से उसकी सन्धियों तथा युवा मार्शल के आधीन उत्तरपूर्व प्रान्तों की अर्द्ध स्वतन्त्र स्थिति को समझना होगा।

प्रारम्भिक गणराज्य सरकारों का मूल्यांकन

1912–1928 का गणराज्य काल राजनीतिक प्रयोग का काल था। जैसाकि प्रोफेसर सी. पी. फिट्जगेरल्ड ने चीनी क्रान्ति के अपने अध्ययन में बताया है कि एकमात्र प्रजातन्त्र जो गणराज्य स्थापना के बाद वहाँ आया वह पश्चिमी यूरोपीय अथवा जापान जैसी जनता के निर्वाचित प्रतिनिधित्व का प्रजातन्त्र नहीं था अपितु यह राष्ट्रवादी अथवा साम्यवादी दल की अधिनायकता में अर्द्ध प्रजातन्त्र था।[19] प्रारम्भिक गणराज्य के संविधानों का प्रारूप स्पष्टतया यह बताता है कि चीन के अनेक राजनेता आधुनिक प्रजातन्त्र के कार्यकारी रूप को पूर्णतः जानते थे किन्तु उस समय चीनी जनता में प्रजातन्त्र के लिए आवश्यक बहुत सी शर्तों का अभाव था तथा वे मात्र कानून बनाकर पूरी नहीं की जा सकती थीं।

प्रारम्भिक चीनी क्रान्तिकारियों की सबसे बड़ी गलती विकेन्द्रित रूप से सम्मिलित प्रान्तों पर आधुनिक संसदीय प्रजातन्त्र को थोपना था। चीनी समाज में पारिवारिक तथा वैयक्तिक सम्बन्ध अब भी इतने सुदृढ़ थे कि वहाँ गणराज्य की यान्त्रिकता का सफल होना सम्भव नहीं था। जनसाधारण पेकिंग में होने वाले राजनीतिक परिवर्तनों से प्रभावित नहीं हुआ। उनके लिए मात्र यह परिवर्तन था कि सत्ता सम्राट के हाथ से ले ली गई थी। अधिकांश लोगों को आधुनिक राजनीति विशेष दिलचस्प नहीं लगी थी। सनयातसेन जो सर्वाधिक प्रभावशाली व समझदार क्रान्तिकारी नेता था, चीनी जनता की निष्क्रियता की

18. ये रहस्य बाद में स्पष्ट हो गया। वस्तुतः यह स्वयं जापानी सेना के आन्तरिक संघर्ष का परिणाम था जो अन्ततः इस वध का कारण बना। पाल एस. की 'दि एसोसियेशन ऑफ च्यांग-त्सो लिन' दि फार ईस्टर्न क्वारटर्ली ग्रन्थ संख्या 4 (अगस्त, 1952) में देखिये।

19. चार्ल्स पेट्रिक फिट्ज गेराड की रचना रिवोल्यूशन इन चाइना', न्यूयॉर्क, 1952 देखिये 'विशेषतया इसका छठा अध्याय 'रिवोल्यूशन एण्ड आर्थोडाक्सी' पृ. 143-167 प्रोफेसर फिट्जगेरल्ड ने चीन में साम्यवादी शक्ति के उदय के कारण बड़ी सावधानी से प्रस्तुत किये हैं तथापि उन्होंने चीनी साम्यवादों में चीन की सांस्कृतिक विशेषताओं को अत्यधिक महत्व प्रदान किया हैं।

प्रवृत्ति को पर्याप्त निराशाओं के बाद समझ गया था। उसने यह अनुभव किया कि अधिकांश चीनी लोगों के लिए न्यूनतम राजनीतिक प्रतिरोध की प्रवृत्ति का अर्थ राजनीतिक गतिविधि का पूर्ण अभाव था। अन्ततः 1924 में उसने यह निर्णय किया कि बलपूर्वक चीन का एकीकरण करने के पश्चात् एक दीर्घ राजनीतिक अभिभावकता का काल होना चाहिए। जिसमें जनसामान्य को सरकार से सम्बन्धित उत्तरदायित्वों का प्रशिक्षण दिया जाए।

1912 से 1926 तक उत्तर में पेकिंग का शासन कई संविधानों के अन्तर्गत परिवर्तित हो चुका था। युआन-शीह-काई की मृत्यु के पश्चात् वस्तुतः चीन दो शासनों के अन्तर्गत विभक्त हो गया था किन्तु पश्चिमी सरकारों ने पेकिंग सरकार को ही वैध सरकार के रूप में माना तथा दक्षिणी सरकार को प्रतिद्वन्द्वी सरकार माना। किन्तु अपने अन्तिम दिनों में दक्षिणी सरकार के आधार पूर्णरूप से भिन्न सिद्धान्त थे जिनका वर्णन हम राष्ट्रवादी चीन सम्बन्धित अगले अध्याय में करेंगे। उत्तर में भी कम से कम छः प्रारूप संविधान बने।

(1) 11 मार्च 1922 का अस्थायी संविधान
(2) स्वर्ग का मन्दिर प्रारूप संविधान 31 अक्टूबर 1913
(3) 1 मई 1914 का युआन-शीह-काई का संविधान
(4) 12 अगस्त 1919 का आन फ. संसद का प्रारूप संविधान
(5) 10 अक्टूबर 1923 का त्साओ का संविधान
(6) 12 दिसम्बर 1925 का तुआन-ची-जुई का प्रारूप संविदान।

इतने अधिक संविधान बनने का कारण या तो राजनेताओं की औचित्यता प्राप्त करने की सनक थी तथा अपने द्वारा बनाये गये संविधान को स्वीकार करवाना था। तथापि व्यावहारिक दृष्टि से ये संविधान परस्पर अधिक भिन्न नहीं थे वे सब प्रजातन्त्रीय सिद्धान्तों पर आधारित थे तथा चीन को गणराज्य बनाना चाहते थे।

इन विभिन्न संविधानों में मौलिक मतभेद नहीं था जो समाधान प्रस्तुत किये गये थे वे भी वास्तविक जीवन पर लागू नहीं हो सकते थे। अन्ततः नाममात्र के गणराज्य की समाप्ति को परवा एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था का विकास जो चीनी समाज का अंग बन सके साम्यवादी तथा राष्ट्रवादी दलों के लिए एकमात्र विकल्प बचा। उत्तरी क्षेत्र के संविधान निर्माताओं के लिए जो विषय अत्यधिक जटिल एवं विवादास्पद थे वे वस्तुतः तभी महत्वपूर्ण होते जब उनकी कल्पनाएँ साकार होतीं। जिसमें पहला विवाद राष्ट्रपति व मन्त्रि-मण्डल सरकार के मध्य सम्बन्ध तथा दूसरा राज्य के संघात्मक अथवा एकात्मक स्वरूप को लेकर था। इन विषयों से सम्बन्धित जो विवाद था वह पेकिंग में तुच्छ संघर्षों का प्रतीक था। यह दूरगामी सम्भावनाओं के सन्दर्भ में विवाद नहीं था।

उदाहरण के लिए अध्यक्षात्मक अथवा मंत्रि-मण्डलीय शासन प्रणाली का विवाद नामांकित राष्ट्रपति तथा नामांकित मन्त्रि-मण्डल के मध्य सत्ता के लिए संघर्ष का परिणाम था। भूतकाल में चीनी वैयक्तिक शासन तथा बोर्डों द्वारा शासन दोनों प्रक्रियाओं से परिचित थे। अतः कार्यपालिका के एकल एवं बहुल स्वरूप के मध्य स्पष्ट विकल्प उपलब्ध था। किन्तु यह सन्देहपूर्ण है कि चीनी उस समय शासन के किसी भी संवैधानिक स्वरूप

को समझने के लिए तत्पर थे। चीन में प्रभावशाली शासक अक्सर कानून की उपेक्षा करते थे। गणराज्य के अन्तर्गत अधिकांश लोगों को विश्वास था कि सरकार को एक निर्धारित संविधान के अनुसार कार्य करना होगा। परिपक्व राजनीतिज्ञ संविधान का प्रत्यक्ष उल्लंघन करने के स्थान पर उसे अपनी सुविधानुसार बदल लिया करते थे। अतः गणराज्य के प्रारम्भ में चूंकि एक शक्तिशाली राष्ट्रपति शक्ति में आया अतः उसने अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली की स्थापना की जबकि पृष्ठभूमि में युद्धरत सामन्त अथवा शक्तिशाली संसद मन्त्रि-मण्डलीय शासन प्रणाली का प्रतिपादन करती। यद्यपि पेकिंग की सत्ता छायामात्र थी लेकिन तो भी संविधान सर्वदा वहां की परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन हुआ। किन्तु इसके विपरीत कभी भी संविधान का कोई सा प्रकार पेकिंग की राजनीतिक दशा को परिवर्तित करने में सफल नहीं हुआ।

अध्यक्षात्मक तथा मन्त्रि-मण्डलीय प्रणालियां गणराज्य काल में एक के बाद एक बदलती गईं। 1911–1912 में नानकिंग में सनयातसेन की सरकार अध्यक्षात्मक थी किन्तु जब सन ने त्यागपत्र दिया तो कुमितांग दल ने उसके उत्तराधिकारी युग्रान-शीह-काई पर उत्तरदायी सरकार थोपने का प्रयत्न किया। इस बार अस्थायी संविधान ने यह व्यवस्था की कि राष्ट्रपति राष्ट्रीय परिषद की परामर्श के बिना कोई निर्णय नहीं ले सकता था। युग्रान स्वयं शक्तिशाली व्यक्ति था अतः वह ऐसे संविधान को स्वीकार नहीं कर सकता था अतः उसने अपनी महत्वाकांक्षाओं के अनुरूप एक नवीन संविधान बनाया। इस बार संविधान ने अध्यक्षात्मक प्रणाली की व्यवस्था की। वस्तुतः राष्ट्रपति को तानाशाह की शक्तियां प्राप्त थीं तथा संविधान मात्र उनको औचित्य प्रदान करने के लिए बनाया गया था। किन्तु युग्रान की मृत्यु के पश्चात् ली-युग्रान हुंग जो राष्ट्रपति बना वह अत्यधिक दुर्बल व्यक्ति था जबकि उसके प्रधानमन्त्री तुग्रान-ची-गुई को एनवी गुट का सैनिक समर्थन प्राप्त था तथा वह बहुत शक्तिशाली था परिणामस्वरूप 1919 की ग्रान-फू संसद ने जो संविधान बनाया उसमें प्रधानमन्त्री को अत्यधिक शक्तियां प्रदान की गईं। किन्तु जब तुग्रान स्वयं अस्थायी कार्यपालिका का अध्यक्ष बना तो उसने 1925 के अपने द्वारा निर्दिष्ट संविधान में मन्त्रि-मण्डलीय शासन को अस्वीकार कर अध्यक्षात्मक प्रणाली का प्रतिपादन किया।[20]

इसी प्रकार एकात्मक अथवा संघात्मक व्यवस्था का प्रश्न गणराज्य के प्रारम्भिक काल में वैयक्तिक राजनीति का परिणाम था। सामान्यतः प्रान्तीय सरकारें संघीय व्यवस्था चाहती थीं जबकि पेकिंग के शासक एकात्मक व्यवस्था चाहते थे। बाह्य क्षेत्र स्थानीय स्वायत्तता चाहते जबकि केन्द्र शक्ति का केन्द्रीयकरण चाहता था। किन्तु दोनों ही शासन की मूल प्रभावहीनता को प्रभावित करने में असमर्थ थे।

1912 का अस्थायी संविधान केन्द्र व राज्यों के सन्दर्भ में मौन था। किन्तु चूंकि ऐतिहासिक दृष्टि से चीन एकात्मक व केन्द्रीयकृत व्यवस्था के अन्तर्गत रहा था अतः वही

20. लगभग ऐसी ही व्यवस्था च्यांग-काई-शेक के शासन के दौरान चीन की राष्ट्रवादी सरकार की रही। जब तक च्यांग राष्ट्रपति रहा यह पद शक्तिशाली रहा जब वह मन्त्रि-मण्डल का अध्यक्ष बना तो राष्ट्रपति पद महत्वहीन हो गया। साम्यवादी व्यवस्था में अभी तक यह प्रश्न नहीं उठा है क्योंकि अब तक माओत्से-तुंग ने सरकार तथा दल के अध्यक्ष के रूप में तथा अन्य किसी भी महत्वपूर्ण पद को अपने लिए सुरक्षित रखा है।

बात अब भी अपेक्षित थी। 'स्वर्ग का मन्दिर' नामक मसौदे का मूल विवाद केन्द्रीय व प्रान्तीय सरकारों के मध्य शक्तियों का वितरण था। कुमितांग सदस्य युआन-शीह-काई की शक्तियों को सीमित करने के लिए स्थानीय स्वायत्तता चाहते थे जबकि उत्तरी सैन्यवादी शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार चाहते थे। युआन-शीह-काई की मृत्यु के पश्चात् शक्ति प्रान्तीय सैन्यवादियों में विभाजित हो गई। ये प्रान्तीय शासन पूर्ण परम्परागत चीनी ढंग से शासन करते थे ये प्रान्तीय स्तर पर विशाल सेनाएँ रखते थे तथा केन्द्रीय सरकार के प्रति तभी वफादार होते थे जब उनके मित्र वहाँ के शासक हों। प्रान्तों में अपने शासन को कानूनी बनाने के लिए ये प्रान्तीय सैन्यवादी संघवाद के समर्थक बन गये। 1920 से 1926 तक प्रान्तीय स्वायत्तता का आन्दोलन बढ़ता गया। हूनान प्रान्त में एक प्रारूप संविधान 11 दिसम्बर 1921 को लोक निर्णय द्वारा पारित किया गया तथा 1 जनवरी 1922 को लागू किया गया। इस अस्थायी संविधान ने जनता को निर्वाचन, आरम्भक लोक निर्णय तथा प्रत्यावहन का अधिकार प्रदान किया। 9 सितम्बर, 1921 को चेकिआंग के लिए एक संविधान का प्रारूप प्रकाशित किया गया जिसमें उसे केन्द्रीय सरकार से लगभग स्वतन्त्र घोषित किया गया था। 1 जनवरी 1926 को चेकिआंग में स्वशासन के लिए संविधान प्रकाशित किया गया। इनमें से किसी में भी जनता को प्रजातन्त्रीय अधिकार प्रदान नहीं किये गए थे। ये मात्र केन्द्रीय सरकार की शक्ति को सीमित करने के लिए थे। जेचुआन तथा क्वांगतुग प्रान्तों में भी इसी प्रकार के प्रयास किये गये किन्तु उससे सरकार के स्वरूप में कोई परिवर्तन नहीं आया।[21]

जब त्साओ-कुन अध्यक्ष बना तब तक प्रान्तीय स्वायत्तता की माँग पर्याप्त प्रबल हो चुकी थी। अतः 1923 के संविधान में इसे निहित किया गया। इस संविधान द्वारा यह व्यवस्था भी की गई थी कि स्थानीय मामलों से सम्बन्धित प्रश्नों का समाधान प्रान्तों के स्वशासन के नियमों के अनुसार होगा। यद्यपि यह संविधान भी कभी लागू नहीं किया गया तथापि यह तत्कालीन राजनीतिक प्रवृत्ति का द्योतक है। राष्ट्रवादियों ने इस सम्पूर्ण संघर्ष को समाप्त कर दिया। उत्तर के संघर्ष की विजय के पश्चात् प्रान्तीय स्वायत्तता आन्दोलन को समाप्त कर दिया गया।

अराजकता से शिक्षा

गणराज्य के प्रारम्भिक दिनों की गलतियों के बावजूद 1912 से 1928 के मध्य का काल व्यावहारिक अनुभव की दृष्टि से पूर्णतः व्यर्थ नहीं था। निरन्तर प्रयोग व कुण्ठा के पश्चात् चीनी यह समझ गये कि बिना दीर्घ संघर्ष, गम्भीर अध्ययन तथा वैयक्तिक बलिदान के वास्तविक प्रजातन्त्रीय सरकार सम्भव नहीं थी। इसके अतिरिक्त इस काल के राजनीतिक अनुभव ने चीनियों के समक्ष दो तथ्य स्पष्ट कर दिये—प्रथम यह कि राजतन्त्र सर्वदा के लिए समाप्त हो गया था तथा द्वितीयतः यह कि किसी भी प्रकार की उचित सरकार के लिए उन्हें निराशाओं के मध्य दीर्घ संघर्ष करना था।

किन्तु राजतन्त्र पूर्णतः समाप्त हो गया था यह सत्य था। राजतन्त्र की पुर्नस्थापना के दोनों प्रयास जो युआन-शीह-काई तथा च्यांग-हसुन द्वारा किये गये असफल रहे। इस

21. डाब्लू-वाई-त्साओ द्वारा रचित ग्रन्थ कॉन्स्टीट्यूशन स्ट्रक्चर ऑफ माडेन चायना, मेलबोर्न 1947, पृ. 5–6

दुर्भाग्यपूर्ण असफलता का मूल कारण सैनिक शक्ति का अभाव अथवा राजनीतिक अनुभव-हीनता नहीं था अपितु राजतन्त्र के प्रति जनसामान्य तथा असन्तोष था। जापानी स्वयं अपने राजतन्त्र की सफलता से इतने अधिक प्रोत्साहित हुए कि उन्होंने आधुनिक चीन के इतिहास को जो दीक्षाएँ थी उन्हें समझने की कोशिश नहीं की तथा एक बार फिर मंचूको में यूयी को मुख्य कार्यपालिका तथा बाद में सम्राट् के रूप में प्रतिष्ठापित करने की कोशिश की। उसके सम्राट् बने बिना शायद उसकी सरकार अधिक लोकप्रिय हुई होती। इस सन्दर्भ में चीनी एक मूल तर्क चीग द्वारा राजगद्दी त्यागने की प्रक्रिया के सम्बन्ध में इस प्रकार देते हैं कि 1911 में जब यून्यी ने राजपद त्यागा तो उसने शासन करने का दैवीय अधिकार किसी अन्य व्यक्ति को नहीं अपितु सम्पूर्ण जनता को सौंपा तथा एक बार यह अधिकार सम्पूर्ण जनता को प्राप्त हो जाने के पश्चात् पुनः एक व्यक्ति को किस प्रकार दिया जा सकता है।

अतः तत्काल शासन के लिए किसी प्रकार का प्रयास करना अत्यधिक आवश्यक हो गया। सनयातसेन का तर्क भी यही था कि चूँकि चीनी जनता प्रजातन्त्र के सिद्धान्तों को नहीं समझती है अतः उसे प्रजातन्त्र से वंचित करना अनुचित होगा। 1911 की क्रान्ति के समय मुट्ठी भर चीनी ही गणतन्त्र व प्रजातन्त्र का अर्थ समझते थे। यदि ये प्रारम्भिक क्रान्तिकारी सम्पूर्ण चीन में प्रजातन्त्रीय सिद्धान्तों के प्रयास की प्रतीक्षा करते तो वे कभी भी मंचू राजतन्त्र को अपदस्थ नहीं कर पाते तथा गणराज्य की स्थापना के स्थान पर वे स्वयं वृद्धावस्था में काल के ग्रास बन जाते। उन्हें आशा थी कि वे प्रजातन्त्रीय गणराज्य की स्थापना के पश्चात् जनता को उसका प्रशिक्षण देने में सफल हो सकेंगे किन्तु वे ऐसा करने में असफल हुए। इस असफलता के पश्चात् यह प्रश्न उठा कि चीनियों को राजनीतिक प्रशिक्षण दिया जाए तथा इस प्रशिक्षण के दौरान एक शक्तिशाली सरकार की स्थापना की जाए। राष्ट्रवादियों तथा साम्यवादियों ने इस दिशा में प्रयास किया जबकि अन्य दल असफल रहे।

गणराज्य काल का राजनीतिक अनुभव यद्यपि हास्यास्पद व निराशापूर्ण दोनों ही है तथापि यह बीसवीं शताब्दी के मध्य तक चीनियों की राजनीतिक आकांक्षाओं का प्रतीक था। अब चीनी पर्याप्त परिपक्व तथा सक्रिय हो चुके थे चीन में एक वास्तविक प्रजातन्त्रीय सरकार की स्थापना होने से पहले ही चीनियों को यह अनुभव हो चुका था कि कुप्रजातन्त्र कितना कुरूप हो सकता है।

□□□

अध्याय 7

कुमिंतांग शासन में चीन (1928-1949)

1928 से 1949 के मध्य अधिकांश चीन पर राष्ट्रवादी सरकार का शासन रहा तथा 1930-31, 1937 तथा 1945-47 तक के मध्य काल में लगभग सम्पूर्ण चीन पर इस सरकार का आधिपत्य रहा। यह सरकार चीन की सर्वप्रथम राष्ट्रीय सरकार थी। प्रारम्भिक अध्यायों से स्पष्ट हो जाता है कि इससे पूर्व चीनी सभ्यता से सम्पूर्ण चीनी जगत् को निहित करने वाली नाममात्र की सरकार का अस्तित्व था। चीनी राष्ट्रवादियों ने ही सर्वप्रथम सत्ता में आने के पश्चात् वास्तविक रूप में एक सरकार का संगठन किया जो आन्तरिक तथा बाह्य रूप से बीसवीं शताब्दी के अनुकूल सरकार मानी जा सकती है। राष्ट्रवादी चीन के अस्तित्व में आये बगैर साम्यवादी चीन का जन्म नहीं हो सकता था। यद्यपि अब राष्ट्रवादी चीन विगत की वस्तु हो चुका है तथापि सुदूर पूर्व की राजनीति में वह अभी भी एक प्रभावशाली कारक है।

राष्ट्रवादी सरकार के पूर्ववर्ती

चीन की राष्ट्रवादी सरकार की उत्पत्ति के स्रोत दो थे। कूटनीतिक अर्थों में यह पेकिंग के चीनी गणराज्य की उत्तराधिकारी थी जो स्वयं चीन के मंचू साम्राज्य की उत्तराधिकारी थी।[1] किन्तु आन्तरिक दृष्टि से यह उस नानकिंग सरकार की उत्तराधिकारी थी जो च्यांगकाई शेक के द्वारा अप्रैल 1927 में वुहान साथियों से पृथक होकर सफल पृथकतावादी आन्दोलन का संचालन कर स्थापित की गई थी जबकि वुहान सरकार चीन की उस राष्ट्रवादी सरकार की उत्तराधिकारी थी जो सोवियत रूस के नमूने पर बनाई गई थी जो 1920 में कैंटन में सक्रिय रही तथा जिसने 1925 में कैंटन में ही अपनी शक्ति को दृढ़ बनाया तथा जो 1 जनवरी 1927 को हैनकुल को स्थानांतरित कर दी गई। राष्ट्रवादी सरकार को अपने वंशानुक्रम वृक्ष के अनुसार[2] चीन की राष्ट्रवादी सरकार की पूर्ववर्ती सरकारें—कैंटन में सनयातसेन द्वारा स्थापित सरकार, वूहान शासन तथा च्यांगकाई शेक द्वारा नानकिंग में स्थापित प्रथम राष्ट्रीय सरकार थी।

दो दशाब्दी के पश्चात् राष्ट्रवादी सरकार के दुर्भाग्यपूर्ण पतन के वर्णन के साथ-साथ यह जानने के लिये कि पश्चिमी ढंग से चीन का शासन करने में कौन सी बाधाएं तथा सीमाएं हैं, राष्ट्रवादी सरकार के स्वरूप व कार्यप्रणाली का वर्णन अत्यधिक महत्ता रखता है।

1. इस रूप में 25 जुलाई 1928 से संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा स्वीकार किया गया।
2. देखिये 'आउटलाइन्स ऑफ दि डेवलपमेंट ऑफ दि गवर्नमेंट एण्ड दि पार्टी' चुंगकिंग 1940, पी X X I X यह सभी राष्ट्रवादी सरकारों तथा दलीय संगठन की संरचना व विकास का अच्छाई संकलन है।

कुमितांग के पूर्ववर्ती

कुमितांग जो प्रारम्भ में मंचुओं के विरुद्ध एक गोपनीय समुदाय के रूप में संगठित हुआ था एक औपचारिक ढंग के रूप में गणराज्य काल के प्रथम वर्ष में संगठित किया गया। यद्यपि इस क्रान्ति का मूल कारण उस गोपनीय समुदाय तुंग मेंग हुई के सदस्यों द्वारा किये गये प्रयास थे तथापि गणराज्य की स्थापना के पश्चात् उन्होंने पाया कि वास्तविक शक्ति चालाक राजनीतिज्ञों ने हथिया ली थी तथा वे सरकार में महत्वपूर्ण स्थानों में प्रतिष्ठित हो गये थे। अतः तुंगमेंगहुई के सदस्यों तथा अन्य असन्तुष्ट समूहों ने कुमितांग का संगठन विरोधी दल के रूप में किया।

वस्तुतः कुमितांग की स्थापना सनयातसेन के प्रयासों का परिणाम थी। जिसने 1945 में अपनी मृत्यु काल तक इस दल की नीतियों व गतिविधियों का संचालन वैयक्तिक दृष्टि से किया। सनयातसेन ने अपने व्यापक अनुभव तथा वृहत् ज्ञान से यह अनुभव किया कि देश में व्याप्त बुराइयों का उन्मूलन मात्र मंचू साम्राज्य को उखाड़ फेंकने से नहीं हो सकता था। वह पश्चिमी देशो की प्रजातन्त्रीय राजनीतिक व्यवस्था का आर्थिक सम्पन्नता से अत्यधिक प्रभावित हुआ। सनयातसेन ने राष्ट्रवाद के विचार के अतिरिक्त जिसका समर्थन उसके समकालीन अन्य क्रान्तिकारियों ने भी किया, प्रजातन्त्रीय तथा जनता के जीवन निर्वाह के सिद्धान्तों का भी प्रतिपादन किया। (इन तीनों सिद्धान्तों की चर्चा आगे की गई है) किन्तु बाकी दो विचारों को उनके सहयोगी पूर्वतः नहीं समझा पाए।

1912 का कुमितांग का घोषणा पत्र पाँच राजनीतिक उद्देश्यों को प्रस्तुत करता था। ये थे राजनीतिक एकता, स्थानीय शासन का विकास, विभिन्न जातियों का सात्मीकरण, सन के जनता के जीवन निर्वाह के सिद्धान्त की क्रियान्वति तथा अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति की स्थापना व सुरक्षा।[3] यहाँ यह स्पष्ट होना चाहिये कि उस समय राष्ट्रवादी विचार मात्र मंचुओं के विरुद्ध था पश्चिमी विदेशियों के विरुद्ध नहीं था। क्रान्ति के पश्चात् अल्पसंख्यकों का सात्मीकरण मूल प्रक्रिया बन गया।

1913 की द्वितीय क्रान्ति की असफलता के पश्चात्, कुमितांग दल के लोगों ने यह अनुभव किया कि यह दल असन्तुष्ट लोगों का संगठन था। वहाँ राजनीतिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये प्रभावशाली संगठन नहीं था। अतः उन्होंने टोक्यों में चीनी क्रान्तिकारी दल का संगठन किया। नवीन दल का कार्यक्रम पुराने दल से अधिक भिन्न नहीं था। किन्तु इसमें क्रान्ति पर अत्यधिक जोर दिया गया। क्रान्ति की प्रक्रिया के तीन स्तरों पर विभाजित किया। ये सैनिक शासन, राजनीतिक प्रशिक्षण तथा संवैधानिक सरकार तीन स्तर थे। तथापि बाद में इस दल का नाम वापिस चीन का कुमितांग दल रख दिया गया ताकि चीन व विदेशों में रहने वाले अनेकों कुमितांग सदस्यों को आत्मसात किया जा सके।[4]

सन ने कुमितांग दल को उत्तर में पेकिंग सरकार के विरुद्ध उकसाया। उसने पश्चिमी शक्तियों से सहायता प्राप्त करने का विचार दिया। किन्तु लोगों ने उसकी बातों पर ध्यान नहीं दिया। इसी समय सोवियत रूस की नई सरकार ने स्वयं को विरोधी शक्तियों से घिरा हुआ पाया। रूसी लोग लेनिन के इस उपदेश में विश्वास करते थे कि रूस

3. त्सो लू की रचना 'हिस्ट्री ऑफ दि कुमितांग ऑफ चायना शंघाई, 1946 पृ. 62.
4. दृष्टव्य पृ. 200.

उग्र पूँजीवादी विरोध में विश्व में अकेले नहीं रह सकता था। अतः रूस ने चीन की ओर सहानुभूति के लिये देखा। ऐसी परिस्थिति में सन ने 1923 में चीन में रूसी प्रतिनिधि जोफे से समझौता कर कुमितांग क्रान्ति को सोवियत प्रशिक्षकों के संरक्षण में संचालित करने का प्रयास किया। यद्यपि सनयातसेन मार्क्स के द्वन्द्ववाद के पूर्णतः विरुद्ध था तथा इसका जिक्र कैंटून मास्को समझौते में भी किया गया है तो भी उसने चातुर्यपूर्णता से रूसी सहायता को स्वीकार किया।[5]

1923 में सन जोफे समझौते पर हस्ताक्षर के पश्चात् माइकेल बोरोदिन तथा जनरल ब्लूचर के नेतृत्व में सोवियत परामर्शदाताओं का एक एक दल चीन पहुँचा जो बोरोविक क्रान्ति के नवीनतम अनुभवों से लैस था। 1924 में कुमितांग का पुनर्गठन पूर्णतः सोवियत न्यादर्श (मॉडल) पर किया गया। रूसी आधिपत्य में वैम्पा में स्थापित सैनिक स्कूल द्वारा नवीन दृष्टिकोण व तकनीकी वाली सेना का निर्माण किया गया। नवनिर्मित चीनी साम्यवादी दल के सदस्यों को कुमितांग में सम्मिलित किया गया तथा उन्होंने कुमितांग के लिये काम करना प्रारम्भ किया। कुमितांग दल ने 30 जनवरी 1924 में प्रथम अधिवेशन में एक घोषणा पत्र में तीन नीतियों को घोषित किया गया जो रूस में निकट सम्बन्ध, साम्यवादियों का दल में प्रवेश तथा कृषि श्रम नीति थे। ये नीतियाँ निस्संदेह कुमितांग पर साम्यवादी प्रभाव के चरमोत्कर्ष को स्पष्ट करती थी जो अंततः सनयातसेन की विचारधारा पर निर्भर था।

सन-यात-सेन की विचारधारा · राष्ट्रवाद

सनयातसेन ने अपने विचारधारा की रूपरेखा उन 24 भाषणों के माध्यम से निरूपित की जो उसने 1924 में दिये तथा जिन्हें 'जनता के तीन सिद्धान्तों' के नाम से पुकारा।[6] ये तीन सिद्धान्त जनता में राष्ट्रीय चेतना, जनता की शक्ति तथा जनता का जीवन निर्वाह अथवा मिन त्सू, चुआन तथा मिन शेंग थे। ऊपरी तौर पर इनका अनुवाद राष्ट्रवाद प्रजातन्त्र व जीवन निर्वाह इन पदों में किया गया गया है। किन्तु चूँकि राजनीतिक पदों की व्याख्या अत्यधिक विवादास्पद हो गई है अतः ये अनुवाद उचित मानों को प्रतिपादित करने के स्थान पर, इन अवधारणाओं के बारे में भ्रम उत्पन्न करते हैं। अतः इनके मूल चीनी पद मिन त्सु, मिन चुआन तथा मिन शेंग को यथावत रखना ही ज्यादा उचित होगा।

मिनत्सु (राष्ट्रवाद) के सिद्धान्त में वे विभिन्न विचार निहित थे जो चीन के राजनीतिक विकास के विभिन्न चरणों के अनुसार भिन्न-भिन्न थे। मंचू राजतन्त्र के पतन से पूर्व यह राजतन्त्र विरोधी भावना थी जबकि क्रान्ति के बाद इसका उद्देश्य चीन की सीमाओं में रहने वाले अल्पसंख्यकों का आत्मसात करना था। किन्तु 1924 में जब सनयातसेन ने इसकी औपचारिक घोषणा की तब इसका स्वरूप साम्राज्यवाद विरोधी दृष्टिकोण हो गया

5. इस समझौते के सैद्धान्तिक पक्ष के लिये सन् के सिद्धान्तों पर चर्चा तथा त्सु शु चिन का लेख 'दि इन्पयूलुएंस ऑफ दि कैंटून मास्को एंटीटी अपोन सनयातसेन 'पालिटिकल फिलॉसफी' दि चाइनीज सोस्यल एंड पालिटिकल साइंस रिव्यु पिकिंग 1943, खंड × III। पृ. 177.

6. डा० सन के विचारों का पूर्ण विवरण पॉल एम ए लिनबर्गर की रचना 'दि पॉलिटिकल डाक्ट्रिन्स ऑफ सनयातसेन बाल्टीमूर बाल्टीमूर 1937 में देखिये। सनयातसेन के अपने भाषणों के दो मुख्य अनुवाद फ्रेंक प्राइस द्वारा दि थ्री प्रिंसीपल्स ऑफ दि पीपुल, चुंगकिंग 1943 तथा पश्चल ए डी एलिया द्वारा दि ट्रिपल डेमिजम ऑफ सनयातसेन, कुचांग 1931 प्रकाशित किये गये।

था। अर्थात चीन को साम्राज्यवाद का जुआ उतार फेंकना था तथा एक प्रगतिशील राष्ट्र राज्य के रूप में संगठित होना था।

सन-यात-सेन द्वारा प्रचारित राष्ट्रवाद विशिष्ट तथा विविध प्रकार का था। उसने अमेरिकी, मैक्सीकन, नीदरलैण्ड अथवा स्विट्जरलैण्ड के सामान्य राष्ट्रवाद के स्थान पर हिटलर जैसे प्रजातीय राष्ट्रवाद का प्रचार किया। उसने कहा कि सम्पूर्ण चीनी प्रजाति चीन राष्ट्र था तथा यही एक राष्ट्र था जो मात्र एक जाति अथवा नस्ल को निहित करता था। उसका तर्क था कि इस प्रजाति को अपनी प्राचीन नैतिकता तथा नैतिक ज्ञान व मूल्यों को पुर्नजीवित करना था तथा इस पुनरोदित परम्परा में पश्चिम की राजनीतिक दक्षता तथा भौतिक विज्ञानों के ज्ञान का योग किया जाना चाहिये।

इस प्रकार सन-यात-सेन का सम्पूर्ण जीवन भूतकालीन चीनी सभ्यता को पुनर्जाग्रत करने में तथा उसे आधुनिक शक्ति, तकनीक तथा अस्त्र से लैस करने के प्रयास में बीता ताकि चीन आधुनिक युग में प्राचीन सभ्यता के साथ जीवित रह सके। राष्ट्रवाद को सम्भव बनाने के लिये अपने जीवन के अन्तिम दिनों में वह निरंकुश राजतन्त्र के स्थान पर एक दल की निरंकुश सत्ता की स्थापना के लिये भी तत्पर हो गया। उनका तर्क था कि इस दल को आर्थिक व राजनीतिक राष्ट्रवाद के कार्यक्रम तैयार करने चाहिये। उसका तर्क था कि श्वेत लोगों से संघर्ष में चीन को जापान का साथ देना चाहिये जबकि सर्वहारा वर्ग के, वर्ग संघर्ष में उसे साम्राज्यवादी राज्यों के विरुद्ध रूप का साथ देना चाहिये।

सन-यातवाद-एक सीमित प्रजातन्त्र

मिन चुआन अथवा जन शक्ति का विचार निसंदेह पश्चिम की प्रजातन्त्र की अवधारणा से लिया गया था। किन्तु इसमें प्राचीन चीनी राजनीतिक व्यवहारों का समन्वय भी कर लिया गया। सन-यात-सेन के राजनीतिक आदर्श के चार पृथक-पृथक स्रोत थे (1) गणराज्य सरकार की पश्चिमी अवधारणा (2) प्रारम्भ जनपत संग्रह निर्वाचन तथा प्रत्यावाहन की प्रक्रिया (3) सोवियत रूस के प्रजातन्त्रीय केन्द्रीयकरण का विचार (4) परीक्षा तथा नियन्त्रण की चीनी विधियां। ये सब तत्व मिलकर एक आदर्श सरकार का निर्माण करते। सनयातसेन के अनुसार ये प्रक्रियाए ऐसी तकनीकी क्षमता रखती थी जो जनता की सम्प्रभुता में निहित जनशक्ति की ओर से शासन संचालन को संभव बनाती थी।

एक व्यापक राष्ट्रवादी विचारधारा के संदर्भ में सनयातसेन ने यह तर्क दिया कि चीनी प्रजातन्त्रीय सिद्धान्त को मनुष्यों में प्राकृतिक असमानता को स्वीकार करना चाहिये तथा नागरिकों को तीन श्रेणियों में विभाजित करना चाहिये। उच्चतम वर्ग उन प्रवुद्ध लोगों का वर्ग था जो वास्तविक अर्थ में नेता थे। जो भूतकाल को समझ सकते थे तथा जो होने वाली घटनाओं की व्याख्या के द्वारा भविष्य की विवेचना भी कर सकते थे। द्वितीय श्रेणी में वे नागरिक आते जो नेताओं के विचारों को समझ सकते थे तथा उसे जनता तक पहुँचाते। तीसरी श्रेणी के नागरिक वे लोग थे जो न तो विश्व की गतिविधियों को समझते थे न नेताओं के विचारों को स्पष्ट कर सकते थे। किन्तु जो कम से कम यह बता सकते थे कि नेता उनके लिये जो कुछ कर रहे थे वह उन्हें पसन्द था या नहीं।

सरकार में त्रिपक्षीय शक्ति विभाजन के परम्परागत न्यादर्श के स्थान पर सनयातसेन शक्ति का विभाजन पांच अंशों में—कार्यपालिका, व्यवस्थापिका, न्यायपालिका, परीक्षा तथा

नियन्त्रण में किया। स्पष्टतया पूर्व प्रशिक्षण के अभाव में लोग अपनी शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकते थे। अतः सन ने राजनीतिक संरक्षण की व्यवस्था की। इस समय ये कुमितांग दल संरक्षक के रूप में जनता को राजनीतिक प्रशिक्षण प्रदान करगी। एक निश्चित अवधि के पश्चात् कुमितांग पद त्याग करने वाला था ताकि निर्वाचित प्रतिनिधि सत्तारूढ़ हो सकें। इस प्रकार जनता के राजनीतिक क्षमता प्राप्त कर लेने के पश्चात् संरक्षण काल समाप्त होने वाला था।

डॉ० सन के अनुसार प्रजातन्त्र चीन के लिये आवश्यक था तथा इसके पाँच कारण थे। यह परंपरागत चीन पर आधुनिकता द्वारा छोड़ा गया दायित्व था, यह राष्ट्रवाद का अवश्यंभावी परिणाम था। क्योंकि राष्ट्रवाद का अर्थ स्वतंत्र लोगों द्वारा स्वशासन था तथा स्वशासन का परिणाम प्रजातत्र था। यह सभी आधुनिक राज्यों की पहचान थी, अच्छा प्रशासन, प्रशासन प्राप्त करने के लिये यह सर्वोत्कृष्ट राजनीतिक व्यवस्था थी। यह एक ऐसी शक्ति थी जो मनुष्य को आधुनिकीकरण की ओर ले जाने वाली थी।

जीवन निर्वाह का सनयातवादी सिद्धान्त

मिगशेग का विचार एक ऐसा आर्थिक विचार था जो समाजवाद समष्टिवाद, उन्मुक्त व्यापार तथा मानवतावाद का सम्मिश्रण था। इस सिद्धान्त के लक्ष्य प्राप्त करने की दिशा में सनयातसेन के दो ठोस प्रस्ताव थे भूमि राजस्व की समानता तथा पूँजी का नियमीकरण। व्यावहारिक दृष्टि से उसका प्रस्ताव था कि भूमि से प्राप्त अतिरिक्त मूल्य को राज्य को दिया जाना चाहिये तथा प्रमुख उद्योग व क्षेत्रों का संचालन राज्य द्वारा किया जाना चाहिये।

मिनशुंग पद का अनुवाद प्रायः जनता के जीवन निर्वाह के रूप में किया जाता है। एक अधिक निश्चित किन्तु जटिल अनुवाद आर्थिक हस्तांतरण भी हो सकता है जिसका प्रतिपादत इटली के जेसुत विद्वान पसकल एम० डेलिआ के द्वारा किया गया था। वास्तविकता यह है कि इनमें से कोई भी विचार पश्चिमी विचारकों तक उन भावों को पहुँचाने में समर्थ नहीं है जो वस्तुतः सनयातसेन के मस्तिष्क में थे। इस पुस्तक के लेखकों में से एक ने मिनशुंग विचार को प्रारंभिक रूप में जानने के लिये स्वयं सन के परिवार से संपर्क स्थापित किया। इनमें स्वयं सन का पिता (जो सन का परामर्श दाता भी था) तथा कुमितांग के वे वरिष्ठ नेता थे जो 1930 तक मर चुके थे। इन स्रोतों के पश्चात् वह इस निर्णय पहुँचा कि मिनशुंग का विचार इतना विशिष्ट तथा चीनी स्वरूप वाला है कि इसे अपने मूल चीनी रूप में ही रहने दिया जाना चाहिये तथा उसका अनुवाद करने का प्रयास नहीं करना चाहिये।

सैद्धान्तिक दृष्टि से मिनशुंग को राष्ट्रवाद की मूल कल्पना का पर्यावरण तथा जनसंख्या सम्बन्ध विचार कहा जा सकता है। एक विशाल प्रजाति को जीवित रखने के लिये तथा उसे विश्व का विशालतम देश बनाने के लिये यह आवश्यक था कि इसे वर्तमान में पर्याप्त आर्थिक साधन उपलब्ध हों तथा ऐसी आर्थिक व्यवस्था हो कि इन साधनों को भविष्य के लिये भी सुरक्षित रखा जा सकें।

औपचारिक अर्थशास्त्र की भाषा में सनयातसेन के विचारों को 'अल्पविकसित' देश का उत्थान करने का प्रयास कहा जा सकता है। चीन की क्रांति को संपूर्णता प्रदान

करने के लिये राजनीतिक व सांस्कृतिक क्रान्ति के साथ राष्ट्रीय आर्थिक क्रान्ति का होना अपरिहार्य था। द्वितीयतः चिनशुंग का अर्थ चीन के लिये सकारात्मक राष्ट्रीय समृद्धि थी ताकि वस्तुतः चीन में पूंजी व उपभोक्ता वस्तुओं का संचय हो। तृतीयतः मिनशुंग आर्थिक न्याय की विचारधारा थी जिसमें यद्यपि आर्थिक नीतियों को क्रियान्वित करने के कोई ठोस सुझाव नहीं थे तथापि इसमें जनसामान्य को आर्थिक न्याय प्रदान करने की स्पष्ट मांग की गई थी।

सनयातसेन के पश्चात् सनयातवाद

आज भी चीन में राष्ट्रवादी तथा साम्यवाद दोनों ही सनयातवाद का प्रयोग अपने समर्थन में करते हैं। ताइपेह तथा पीकिंग दोनों ही सनयातवाद के मूल अधिकारी होने का दावा करते हैं। तथापि यह उल्लेखनीय है कि दोनों ही पक्ष सनयातवाद की उन विशेषताओं की चर्चा नहीं करते हैं जो अब पैशन में नहीं है जैसे प्रगतिवाद का उपदेश, हिटलर की नीतियों के कारण प्रगतिवाद को बदनाम होने के पाश्चात् त्याग दिया गया हैं।

स्वयं कुमितांग में सर्वप्रथम मतभेद वामपंथ जो तीव्र संविधानीकरण के पक्ष में तथा दक्षिण पक्ष जो पहले राष्ट्रीय शक्ति को दृढ़ करने के पक्ष में था के मध्य हुआ। 1930 में वांगचिंगवी जो प्रोटेस्टेंटों का नेता था को उदार प्रजातंत्रीय व समाज सुधारक माना जाता था। हूहन पिन जो साद तथा कट्टर नीतिवादी था को इसलिये पदच्युत कर दिया गया क्योंकि वह 1930 में ही देश में प्रजातंत्र की स्थापना करना चाहता था। इसी दौरान विभिन्न कुमितांग-मतभेदों ने विभिन्नतापूर्ण साहित्य को जन्म दिया। तथापि सनयातवाद की मूल प्रक्रिया सरकार तथा दलीय नीति ने निर्धारित की। इसमें च्यांग काई शेक का निजी जीवन, साम्यवादियों के विरुद्ध उसकी प्रतिक्रिया जापान द्वारा मंचूरिया पर अधिकार विरोध तथा संतुष्टीकरण की नीतियों तथा इसी प्रकार की अन्य राजनीतिक समस्याएं थी। च्यांग ने स्वयं अपनी बौद्धिक क्षमता की सीमाओं में सनयातवाद की मूल रूपरेखा को उल्लघंन न करते हुए पर्याप्त योगदान दिया।

दुर्भाग्यवश कुमितांग में क्रांति का संगठनात्मक स्वरूप की तुलना में तीव्रता से विकसित हुआ। कुमितांग दल ने दलीय पद प्राप्त करने तथा अर्द्ध-प्रशिक्षित सदस्यों का निर्माण करने में जितनी सफलता हासिल की उतनी दल को शुद्ध करने तथा सैद्धान्तिक दृष्टि से उसे सक्रिय व सजग बनाये रखने में प्राप्त नहीं की। परिणामतः 1940 तक कुमितांग दल सरकारी व निष्क्रिय बन चुका था।

कुमितांग के अनेकों प्रबुद्ध सिद्धान्तवादी वांग चिंग वी के साथ निष्कासन देशद्रोह तथा आत्म विनाश की ओर अग्रसर हुए। चेन कुंग पो तथा चाउ फू हाई ने सनयातवाद की बड़ी गंभीर व सहिष्णु विवेचना की थी। किन्तु उसने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त तांग लिआंग ली व वांग के साथ चीनी राष्ट्रवाद को बचाने के लिये नानकिंग में विरोधी सरकार की स्थापना करने की दुर्भाग्यपूर्ण चेष्टा की।

कुमिताग की संरचना

1924 के पुर्नगठन के पश्चात् नवीन के सैद्धान्तिक अवधारणाओं तथा सैनिक शक्ति के साथ कुमितांग ने उत्तरी क्षेत्र में प्रगति की तथा उन्हें असंगठित युद्ध रत सामंतों पर निर्णायक विजय प्राप्त हुई। 1925 में सनयातसेन की मृत्यु ने कुमितांग दल में,

दिवंगत नेता की आकांक्षा को पूरा करने के लिये नई प्रेरणा का संचार किया। कुमितांग दल का यह सैनिक स्वरूप अन्ततः 1927 में साम्यवादियों से स्पष्ट पृथकीकरण का कारण बना। रूसी दल से अलग हो गये तथा अन्ततः उन्होंने चीनियों से कूटनीतिक संबंध तक तोड़ लिये।

1924 पुर्नगठन से 1950 के सुधार आंदोलन के मध्य काल तक कुमितांग दल मूल संरचना अपरिवर्तित रही। न केवल दलीय संरचना की मूल विशेषताएं बनी रहीं अपितु इसके पदाधिकारी भी 20 वर्षों तक उन्हीं उत्तरदायी पदों पर बने रहे।

कुमितांग की मूल संरचना की नींव 1924 में दल के प्रथम सम्मेलन में रखी गई जब दल के संविधान को पारित किया गया। इस संगठन के सर्वोच्च शिखर पर केन्द्रीय संगठन मौजूद था जिसके अन्तर्गत फिर क्रमशः प्रांतीय संगठन, हसिंग संगठन जिला संगठन तथा प्राथमिक सदस्य थे। संगठन के प्रत्येक स्तर पर एक कार्यकारिणी समिति तथा एक सर्वेक्षण समिति होती थी। जिला स्तरीय संगठनों में इन समितियों का निर्वाचन प्रत्यक्ष रूप से दल के सदस्यों के द्वारा होता था। दल को राष्ट्रीय परिषद को सर्वोच्च शक्ति प्राप्त थी तथा सैद्धान्तिक रूप में यह दल के संविधान के अनुसार प्रतिवर्ष मिलने वाली थी। तथापि व्यवहार में 20 वर्षों में मात्र पांच राष्ट्रीय सम्मेलन हुए। छठां सम्मेलन 1945 में चुंग किंग में हुआ, सातवां फारमोसा में अक्टूबर 1952 में हुआ। 1952 का अधिवेशन 1950 में प्रारम्भ दलीय सुधार आंदोलन के समाप्ति के पश्चात् हुआ था। दल की राष्ट्रीय परिषद् एक केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के माध्यम से कार्य करने वाली थी। इस प्रकार यहां स्थायी समिति है। कुमितांग के संपूर्ण पद सोपान क्रम में यह शक्ति का केन्द्र बिन्दु थी। केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के समानांतर केन्द्रीय परामर्शदात्री समिति थी जिसका नियंत्रण अनुशासन तथा वित्तीय मामलों पर था। इसकी सदस्यता प्रायः दल वरिष्ठ सदस्यों के लिए सीमित होती थी।

हेनकोव में 1938 में दल के संकटकालीन अधिवेशन के द्वारा महानिदेशक के पद की रचना की गई। इस कार्यवाही का मूल उद्देश्य दल में च्यांगकाई शेक के लिये वही स्थान निर्मित करना था जो पहले दल के नेता के रूप में सनयातसेन को प्राप्त था। तथापि पुराने नेता के प्रति अपने सम्मान को बनाये रखने के लिये दल के जनरल मैनेजर की पदवी सनयातसेन के लिये ही सुरक्षित रखी गई। पार्टी के निदेशक को दल की केन्द्रीय समिति के विरुद्ध निषेधाधिकारी प्रयुक्त करने का अधिकार था तथा दल के सभी मामलों में उसका निर्णय अन्तिम था।

तुलनात्मक शासन संस्थाओं का वह अध्ययनकर्ता जो चीनी राजनीति से अनभिज्ञ है उसके लिये यह विषय शंकास्पद हो सकता है। दलीय सम्मेलन कार्यपालिका, निदेशक समिति तथा समिति क्या ये सब उस दल के अंग थे जिसके वर्षों तक साम्यवादी दल से संघर्ष किया। किन्तु इतिहास इस बात को स्पष्ट करता है कि यह वस्तुतः 1923–24 के मध्य रूस के साथ हुए निकट संपर्क का प्रभाव था। कुमितांग दल के निम्नतम स्तर पर भी क्रान्तिकारी दल के समान औपचारिक सदस्य होते थे। प्रत्येक चीनी व्यक्ति जो सनयातसेन के सिद्धान्तों में विश्वास करता था, सदस्यता के लिये प्रार्थना-पत्र दे सकता था। उसके बारे में पूछताछ करने के पश्चात् उसे एक वर्ष के लिये अस्थाई सदस्यता प्रदान की जाती थी। यदि इस दौरान वह कुमितांग दल विरोधी गतिविधियों में रुचि नहीं

लेता था तो उन्हें स्थायी सदस्यता प्रदान कर दी जाती थी। बाद में ये सदस्य सन-मिन-चू पुवा संगठन (जिसका गठन सनयातसेन के सिद्धान्तों के आधार पर किया गया था) के सदस्य बन जाते थे जिसमें ने फिर उन्हें कुमितांग दल की सदस्यता प्राप्त होती थी। 1945 में कुमितांग के कुल मिलाकर 30,00,000 सदस्य थे जो दल की सबसे छोटी इकाई के सदस्य होते थे। कभी-कभी दलीय इतिहास में ऐसे क्षण भी दृष्टिगोचर होते हैं जब दल के सदस्यों को आत्म कथन व स्वीकृतियां साम्यवादी प्रक्रियाओं से आश्चर्यजनक समानता रखती थीं।[7]

दल तथा सरकार के मध्य प्रत्यक्ष परस्पर संबंध केन्द्रीय राजनीतिक परिषद के माध्यम से स्थापित होते थे जो केन्द्रीय कार्यकारिणी परिषद् की उप-समिति थी। यह रूप की साम्यवादी दल के पॉलिटिब्यूरो के नमूने पर थी। 1924 में स्थापना के पश्चात् इस उपसमिति के गठन के कार्यों में पर्याप्त परिवर्तन हुए। किन्तु 1939 में इसका पुनर्गठन किया गया तथा इसका नाम सर्वोच्च राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् रख दिया गया। इस परिषद् को सरकार को निर्देश देने व उसका निरीक्षण करने का अधिकार दल की ओर से प्राप्त होता था। दल के सिद्धान्त के आधार पर विधि निर्माण सैनिक नीति का निर्धारण वित्तीय प्रशासन तथा महत्वपूर्ण नियुक्तियां ये कार्य परिषद् के थे। अन्य शब्दों में इन साधनों से दल सरकार पर संरक्षण रखता था। युद्ध के पश्चात् जब नवीन संविधान अपनाया गया तो सर्वोच्च राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् को समाप्त कर प्राचीन राजनीतिक परिषद् को पुनर्स्थापित किया गया। इस प्रकार संरक्षण पद्धति समाप्त हो गई। संरक्षण पद्धति के समाप्त होने तक चीन की राजनीतिक व्यवस्था 'कुलीन श्रेणी तंत्र' के रूप में बन चुकी थी।[8]

इस समय कुमितांग दल के मुख्य कार्यालयों द्वारा होने वाले कार्यों का वर्णन विस्तार से करना संभव नहीं है। किन्तु संक्षिप्त में इतना कहना पर्याप्त होगा कि व्यवहार में केन्द्रीय कार्यपालिका व स्थाई समितियां शक्ति का प्रयोग करती थी। किन्तु त्सुंग-त्साई अथवा सर्वोच्च निदेशक के पद की रचना हो जाने पश्चात् इनकी शक्तियों में कमी हुई। पश्चिमी साम्यवादी दलों के आगब्यूरों की समकक्ष यह परामर्शदात्री समिति कभी भी अधिक प्रभावशाली नहीं बन सकी। कुमितांग दल जिसने अपनी विचारधारा के अनुसार संरक्षक की भूमिका स्वीकार की थी उसे राष्ट्रवादी सरकार पर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त था। इस नियंत्रण का प्रयोग वह केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति की केन्द्रीय राजनीतिक समिति के माध्यम से करती थी तथा इन पर सर्वोच्च सुरक्षा समिति का वर्षों तक नियंत्रण रहा (पृष्ठ 154 पर चार्ट इस सम्बन्ध को दर्शाता है)

दल के प्रशासनिक मामलों का संचालन हर स्तर पर एक सचिव तथा अनेकों विभागों के आयोगों द्वारा होता था। राष्ट्रीय स्तर पर अनेकों विभाग व समितियों थीं जो केन्द्रीय कार्यकारी समिति के प्रति उत्तरदायी थी। धीरे-धीरे ये विभाग आकार व प्रतिष्ठा में सरकारी विभागों के समान विशाल हो गये।

7. देखिये चाइना इन्फोर्मेशन की कमीटी, चायना एट वार खंड, संख्या 3 (अक्टूबर, 1940)
8. थाई थाई लू का लेख 'हाउ दि नेशनल गवर्मेन्ट इन नानकिंग वर्क्स' चाइनीज सोश्यल एंड पॉलिटिकल साइन्स रिव्यू खंड ×111 (1933) पृ. 442-456

इस दल से पृथक किन्तु उससे संबंधित एक अन्य संगठन सन-मिन-चु (युवा संगठन) था जो 1939 से 1947 के मध्य स्थित रहा। यह दल के एक संकटकालीन अधिवेशन में बनवाया गया था इसका उद्देश्य दल में युवा रक्त का संचार करना था। इसकी संरचना मूल संस्था के समान ही पृथक रूप से स्वतंत्र थी तथापि इसके महत्वपूर्ण स्थानों पर दल के प्रभावशाली नेताओं का आधिपत्य हुआ करता। किन्तु 1947 में जब यह महसूस किया गया कि दल संगठन का पृथक अस्तित्व न तो आर्थिक दृष्टि से और न ही किसी अन्य दृष्टि से लाभदायक था तो इसे समाप्त कर दिया गया।

कुमितांग दल से बाहर किन्तु उद्देश्य व नेताओं की दृष्टि से बहुत कुछ दल से सम्बन्धित एक नवजीवन आंदोलन 1934 में च्यांग काई शेक के द्वारा कियांग्सी में प्रारंभ किया गया। इस आंदोलन का उद्देश्य साम्यवादियों से प्रभावित ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक तथा सैद्धान्तिक सुधार करना था। शीघ्र ही यह संपूर्ण देश में लोकप्रिय हो गया। सहकारिता आंदोलन कुमितांग दल द्वारा आर्थिक पुनर्गठन के प्रयासों का एक अन्य उदाहरण है।
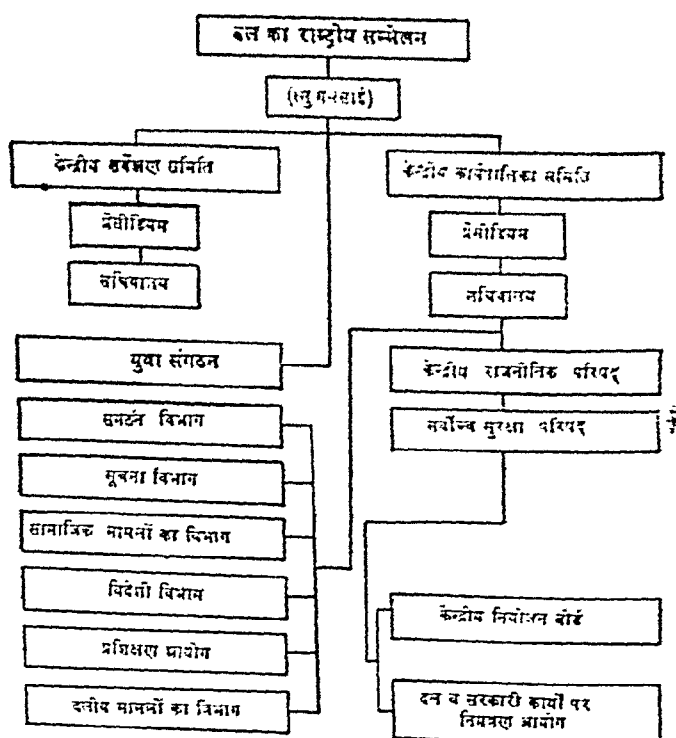
इन्होंने चीनियों में चेतना प्रारम्भ की वह चीन में महत्वपूर्ण सामाजिक चेतना का कारण बनी।[9]

कुमितांग का इतिहास

राष्ट्रीय सरकार कुमितांग दल का परिणाम थी। अतः दलीय नेतृत्व राष्ट्रीय सरकार का भी नेतृत्व बन गया। च्यांग-काई-शेक कुमितांग दल के कारण ही राज्य का अध्यक्ष था। इस प्रकार च्यांग दलीय नेता तथा राज्य का प्रमुख दोनों ही था (नीचे इन दोनों भूमिकाओं का वर्णन किया गया है)।

वस्तुतः युद्धकाल में कुमितांग अथवा साम्यवादी दोनों ही दल जनता के दल नहीं थे। संरक्षण प्रणाली शक्ति तथा नीति की दृष्टि से राष्ट्रीय सरकार एक दलीय सरकार थी किन्तु स्वयं दल में एक दृष्टिकोण वोल विभिन्न व्यक्तियों का समावेश, राष्ट्रीय सरकार को बनाये रखने, दल की शक्ति को सुरक्षित करने तथा दल के नेता के प्रति सामान्य निष्ठा बनाये रखने के उद्देश्य से हुआ था।[10] सत्ता में आने के पश्चात् दल के अन्दर की गुटबन्दी स्पष्ट होने लगी तथा ये गुट धीरे-धीरे सम्पूर्ण दल तथा सरकार की गतिविधियों पर प्रभाव डालने लगे।

यद्यपि च्यांग ने बार-बार अपने दल के सदस्यों को ये निर्देश दिये कि दल के अन्दर गुटबन्दी को आश्रय नहीं दिया जाएगा तो भी ये गुट बने रहे जो दल पर प्रभाव डालने व संरक्षण प्राप्त करने का प्रयास करते रहते थे। इन गुटों में से मुख्य गुट शिक्षा मन्त्री चेन ली फू के नेतृत्व के तथा दूसरा केन्द्रीय राजनीति संस्थान के मुखिया चेन-कू-को का था ये दोनों सरकार व दल में महत्वपूर्ण स्थिति रखते थे। वैम्पा अकादमी के जो स्नातक राजनीति में गए उन्होंने स्वयं को एक अर्द्ध गोपनीय संगठन में संगठित कर लिया। ये प्रकटतः फासिस्टवादी प्रवृत्तियों का समर्थन करते थे। राजनीति का पुलिस कार्य ताई-लाई नायक छोटी सैन्य टुकड़ी के द्वारा किया जाता था। जिसके अस्तित्व को बाद में आसानी से समाप्त कर दिया गया। स्वयं दल की अपनी गोपनीय पुलिस हुआ करती थी जिसका शीर्षक जाँच एवं साँख्यिकी आयोग था। राजनीति विज्ञान समूह में परिपक्व राजनीतिज्ञ होते थे जिन्हें पाश्चात्य प्रशिक्षण प्राप्त था तथा जो राजनीतिक अर्थ व्यवस्था के विकास में रुचि रखते थे तथा उन्हें सरकार में महत्वपूर्ण स्थिति प्राप्त थी।

लगभग आधी शताब्दी तक कुमितांग दल चीन की राजनीति में मुख्य भूमिका अदा करता रहा। गुप्त संगठन के रूप में इसने मंचू राजवंश को समाप्त किया। क्रान्तिकारी दल के रूप में इसने विभिन्न राजनीतिक गुटों व युद्ध सामन्तों से चीन को मुक्ति दिला कर उसे एकता प्रदान की तथा एक नवीन सरकार को संरक्षण प्रदान करने की भूमिका में

9. मैडम च्यांग-काई-शेक ने चायना शैल राइज अगेन न्यूयॉर्क 1941 में चीन में नये जीवन का विवरण देते हुए यह तर्क दिया है कि चीन में स्त्रियाँ महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेंगी। चीन में औद्योगिक सहकारी समितियों के कार्य इन्हें अमेरिकी सहायता प्रदान करने में किये जाने वाले प्रचार के कारण चीन के बाहर भी पर्याप्त जाने जाते हे।

10. पॉल एम. लिनबेंगर, दि चायना ऑफ च्यांग-काई-शेक, ए पॉलीटिकल स्टडी, बोस्टन 1943, पृ. 142। यह अध्ययन जो अपने पूर्ण रूप में कुमितांग दल का अच्छा चित्रण था वस्तुतः युद्धकाल में (1941) में दल तथा राष्ट्रीय सरकार का सरकारी रिकार्ड के आधार पर पूरा विवरण देता है।

इसने चीन का नेतृत्व प्रथम महायुद्ध के दौरान किया। 1937 के जापानी आक्रमण से पूर्व कुमितांग दल की प्रतिष्ठा अपने चरमोत्कर्ष पर थी तथा इसे सीमित काल में इसे पर्याप्त लोकप्रियता व सम्पन्नता भी प्राप्त थी। किन्तु युद्ध व आर्थिक अस्थिरता ने उनकी प्रतिष्ठा को धक्का पहुँचाया। धीरे-धीरे यह पूर्णतः नौकरशाही बन गई तथा साम्यवादी दल के विरुद्ध कार्य करने की इसकी सम्पूर्ण सक्रियता नष्ट हो गई। चीन की मुख्य भूमि पर से अधिकार समाप्त हो जाने के पश्चात् फारमोसा में प्रारम्भ किये गये 1950–52 के सुधार आन्दोलन ने यद्यपि कुछ परिवर्तन किया किन्तु यह इस प्राचीन संगठन को पुनर्जीवित करने में असमर्थ रहे दल की उन क्षमता व साधनों का ह्रास हो गया जो क्रान्ति की अवस्था में इसमें विद्यमान था। राजनीतिक संरक्षण की जिस पद्धति का प्रारंभ सनयातसेन ने संवैधानिक सरकार के लिए लोगों के प्रशिक्षण में किया था वो अन्ततः दल को पूर्णतः नौकरशाही पूर्ण स्वरूप प्रदान कर समाप्त हुआ। सम्भवतः कुमितांग दल को इस कन्फ्यूशियस कथन से कुछ सीखना चाहिए था कि 'चीनी जनता दूसरों को सीख देने के रोग से ग्रस्त है।' दुर्भाग्यवश यह गुट अब वर्तमान साम्यवादी चीनियों के साथ है अतः प्रजातन्त्र अब भी चीन के लिए एक स्वप्नमात्र है।[11]

संरक्षण का संवैधानिक आधार

जब सनयातसेन ने राष्ट्रीय पुनर्गठन के मूल आधार' नामक रचना लिखी उसने अपने विरोधियों पर शीघ्र विजय की भविष्यवाणी की थी। उसने यह तर्क दिया था कि उनके दल को, क्रान्ति के सैनिक चरण से निकलने के पश्चात् कुछ समय के लिए लोगों को स्वशासन के लिए प्रशिक्षण देने का कार्य करना चाहिए तथा इस समय जनता की ओर से उसे सम्पूर्ण प्रभुसत्ता का प्रयोग करना चाहिए। अतः कुमितांग दल को उस समय तक जब तक जनता संवैधानिक सरकार के लिए योग्य न हो जाए। संरक्षक का कार्य करना था।

किन्तु सैनिक विजय की अवधि उसकी पूर्वघोषणा से कहीं दीर्घ निकली। 1923 में उत्तर में कार्य प्रारम्भ करने से पहले जो संस्था यह कार्य कर रही थी वह पूर्णतः सैनिक गुप्ता थी। यह गुप्टा जनरल हैड्क्वार्टर कहलाता था इसके सेनापति स्वयं सनयातसेन थे। 1925 में इस हैड्क्वार्टर का नाम बदल कर राष्ट्रवादी सरकार हो गया जो बाद में वूहान सरकार व नानकिंग सरकार बनी। अक्टूबर 1928 में देश में संरक्षण का दौर प्रारम्भ हो गया तथा यह संरक्षण जो अस्थाई काल का होने वाला था बीस वर्ष तक बना रहा।

सनयातसेन की पुस्तक के अनुसार—"जब किसी प्रदेश की जनगणना करली जाए, जब भूमि सर्वेक्षण करने के पश्चात् एक योग्य पुलिस संगठन का व सड़कों का निर्माण कर जनता को राजनीतिक अधिकारों के सन्दर्भ में प्रशिक्षण दिया जाएगा तथा तब वे प्रदेश स्व-शासन के योग्य समझे जायेंगे। सनयातसेन सूक्ष्मतम निरीक्षण तथा सुनियोजित योजना के बावजूद प्रथम महायुद्ध तथा चीन पर जापानी आक्रमण की कल्पना करने में असमर्थ रहा जिसके परिणामस्वरूप प्रतिरोध के स्थान पर पुनर्गठन अधिक आवश्यक हो गया। कुमितांग पर

11. चेंदन कू ता काग एक 25 सूत्रीय योजना है जो सियोनार्ट-शोह-लीदन-हनू की रचना सनयातसेन, हिज पॉलीटिकल एण्ड सोश्यल आर्टिकल्स, नॉन एन्जिल्स 1933 में पाद आ गि ८।

कई अनुच्छेद नागरिक स्वतन्त्रता तथा वैयक्तिक अधिकारों के बारे में थे। संविधान की व्यवस्था का अधिकार अन्ततः केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति को दिया गया तथा कई बार संविधान में अध्यादेशों के द्वारा संशोधन किये गये। इस प्रकार यह अस्थाई संविधान परिवर्तनशील प्रवृत्ति का था। इस संविधान की प्रस्तावना में स्पष्टतया कहा गया था कि इस प्रलेख का उद्देश्य 'चीन में संवैधानिक सरकार का विकास करना था ताकि अन्ततः जनता द्वारा निर्वाचित सरकार को सत्ता हस्तांतरित कर दी जाए।

आकर्षण का केन्द्रबिन्दु

यह प्रमाणित है कि कुमितांग दल के संरक्षण के दौरान व्यक्तिगत राजनीति ने सरकार में पर्याप्त हस्तक्षेप किया। चीन की अनादि काल से चली आई परम्परा के अनुसार शक्तिशाली व्यक्ति का शासन होता आया था। कानून की शासन की परम्परा वहाँ नहीं रही थी। अतः न्यायिक उत्कृष्टताएँ, राजनीतिक प्रघटनाओं को स्पष्ट नहीं कर सकती थीं। अतः एक शक्तिशाली सरकार को उसके द्वारा बनाये गये कानून के उल्लंघन के लिए उत्तरदायी नहीं माना जा सकता था।

1928 में राष्ट्रीय सरकार की स्थापना के पश्चात् राष्ट्रीय सरकार में दो व्यक्तियों ने राष्ट्रपति पद को ग्रहण किया। राष्ट्रपति वस्तुतः राज्य परिषद का सभापति भी होता था। चूँकि उसका पद संरक्षण काल के चीन का सर्वोच्च पद था अतः सामान्यतः उसे राष्ट्रीय सरकार का राष्ट्रपति कहा गया। राष्ट्रपति तथा पार्षद दोनों का चुनाव कुमितांग दल के केन्द्रीय कार्यकारिणी परिषद् करती थी। राष्ट्रपति की प्रतिष्ठा का कार्य उस व्यक्ति के अनुसार परिवर्तित होते थे जो पद ग्रहण करता था। जब लिन सेन राष्ट्रवादी सरकार का राष्ट्रपति बना तब वह नाममात्र का अध्यक्ष रहा। क्योंकि उसका व्यक्तित्व एक नाममात्र के अध्यक्ष के अनुकूल था। फ्रांस के तृतीय गणराज्य के अध्यक्ष की तरह न थे वह शासन करता था न राज्य करता था। पूर्णतः श्वेत दाढ़ी वाला वह व्यक्ति चीन की परम्परागत वेशभूषा नीला गाउन तथा काली जाकेट पहनता था, गरिमामय व्यक्तित्व वाला लगता था। वह प्रायः अपनी स्पष्ट भाषा में मानवीय गुणों पर संयम से बोलता था। फुकीन प्रान्त का अनुभवी क्रान्तिकारी होने के नाते वह अपने तथा उन लोगों में जो उसके नाम पर वास्तविक शक्ति का प्रयोग करते थे लोकप्रिय था। अतः 1936 में जब उसका पद काल समाप्त हुआ उसके पश्चात् पदाधिकारियों ने उसे पुनः पद पर बनाए रखना चाहा। किन्तु महायुद्ध के छिड़ने के पश्चात् 1943 में उसकी मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु मात्र एक व्यक्ति की मृत्यु नहीं थी क्योंकि इससे एक संस्था की समाप्ति हो गई—ऐसी संस्था जो राष्ट्र के लिए स्थायित्व लाई थी। वह स्थायित्व जो राजनीतिक अस्त-व्यस्तता तथा बर्बर युद्ध से गुजर कर वर्तमान को, धरोहर के रूप में प्राप्त हुआ। किन्तु जब 1943 में च्यांग-काई-शेक राष्ट्रपति बना तो उसने इस नाममात्र के पद को शक्ति के मूल केन्द्र बिन्दु के रूप में परिवर्तित कर दिया।

राष्ट्रपति राज्य परिषद् की बैठकों की अध्यक्षता करता था तथा औपचारिक कार्यों को करता था। सभी सरकारी प्रलेखों पर उसके हस्ताक्षर आवश्यक होते थे। वह विदेशी दूतों का स्वागत करता था। जब च्यांग-काई-शेक राष्ट्रपति बना तो वह राज्य-परिषद् से स्वतंत्र निर्णय लिया करता था तथा कई प्रशासनिक अधिकारियों को प्रत्यक्ष रूप से आदेश देता था। वह मुख्य सेनापति था। युआन की कार्यपालिका को अध्यक्ष का चयन भी वही करता था।

यद्यपि अन्तिम चयन कुमितांग की केन्द्रीय कार्यपालिका समिति करती थी। सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि कार्यपालिका का अध्यक्ष सरकार के प्रशासन के लिए राष्ट्रपति के प्रति उत्तरदायी होता था। (जिसकी राजनीतिक संरचना की रूपरेखा नीचे दी गई है।)

राज्य परिषद् में 24 से 36 सदस्य हुआ करते थे तथा उसकी शक्तियां व महत्ता राष्ट्रपति की शक्तियों के साथ घटती-बढ़ती थी।

प्रारम्भ में राष्ट्रवादी सरकार ने सरकारी निर्णय राज्य-परिषद् के प्रस्तावों के माध्यम से लिये गये। अतः ऐसी स्थिति में राज्य-परिषद् सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अंग हो गया। उन दिनों में जब राज्य-परिषद्

चार्ट संख्या 5 : संरक्षण काल में राष्ट्रीय सरकार की राजनीतिक संरचना

चार्ट 5
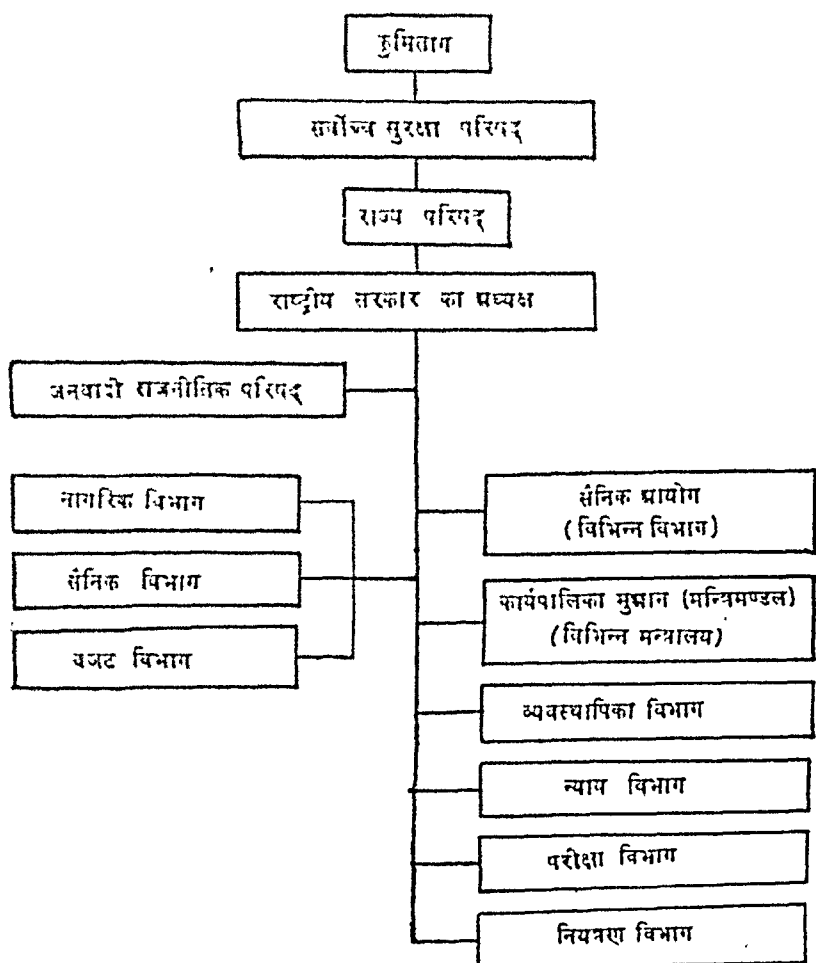
सर्वोच्च स्तर की नीति निर्धारण संस्था थी तब भी कुमितांग दल की राजनीतिक समिति जो दल व सरकार के मध्य जोड़ने वाली कड़ी थी उसकी निकट प्रतिद्वन्द्वी थी। जहाँ तक राजनीतिक संरक्षण के सिद्धान्त का सवाल था दोनों को नीतियों का निर्धारण करना होता था। किन्तु चूं कि नीति सम्बन्धी निर्णय सरकार के स्थान पर दल को करने पड़ते थे अतः राज्य परिषद् वास्तविक सत्ता वाली संस्था के स्थान पर मात्र प्रतिष्ठा वाली संस्था बन गई। वस्तुतः इन दोनों संस्थाओं की सदस्यता जिस प्रकार की थी उसके आधार पर राज्य परिषद् अधिक शक्तिशाली नहीं बन सकती थी। केन्द्रीय कार्यकारिणी परिषद् राज्य परिषद् के लिए कम महत्त्व वाले व्यक्तियों को चुनना पसंद करती थी। इसके प्रायः सक्रिय सदस्यों के स्थान पर पुराने सदस्य निर्वाचन क्षेत्रों के उचित प्रतिनिधित्व के आधार पर रखे जाते थे। राष्ट्रपति लिन सेन की दीर्घ पदावधि के दौरान इस परम्परा का विकास किया गया कि सरकार में सक्रिय पद पर नियुक्त किसी भी व्यक्ति को परिषद् का सदस्य न बनाया जाए।[13]

राज्य परिषद् के अन्तर्गत तीन पूर्णतः प्रशासनिक संस्थाएँ : प्रशासनिक विभाग, सैनिक विभाग व बजट विभाग होते थे। इस प्रकार इन संस्थाओं के साथ राज्य के प्रमुख द्वारा किये जाने वाले कार्य जैसे औपचारिक उत्सव, सैनिक तथा नागरिक मामले, भी राज्य परिषद् द्वारा किये जाते थे। बजट विभाग जो अन्य पांच युआन से स्वतन्त्र था का निर्माण सरकार के पाँचों विभागों के सतत रूप से कार्य करने के लिए किया गया था। साथ ही इस विभाग के माध्यम से सम्पूर्ण प्रशासन पर नियन्त्रण रखना भी सम्भव होता था।

राष्ट्रीय सरकार का प्रशासनिक अंग

तुलनात्मक प्रशासन के अधिकांश अध्ययन कर्ता तथा स्वयं प्रजातन्त्रीय प्रशासक प्रजातन्त्रीय सरकार में उत्तरदायित्व के बिखरे स्वरूप से असन्तुष्ट रहते हैं। प्रजातन्त्रीय न्यादर्श में विश्वास होने के बावजूद वे प्रायः प्रशासन में स्पष्टतया दक्षता पूर्ण विभाजन विशेष तथा युद्ध अथवा संकट में चाहते हैं जो मात्र तानाशाही प्रणाली में सम्भव है। साधारणतया यह तानाशाही की विशेषता को ज्यादा अच्छा समझना होता है। तथा अंशतः यह नीति निर्धारण व उसे कार्यान्वित करना इन दोनों कार्यों में भ्रम उत्पन्न करना है। युद्ध कालीन जापान की स्थिति संभवतः इस प्रकार का उदाहरण है (अध्याय 19 में इसकी चर्चा की गई है)। यह स्थिति बाह्य रूप से अधिनायकवादी थी तथा जिस पर सैन्यवादियों का नियन्त्रण था, पूर्ण युद्ध की स्थिति थी जिसमें नीति निर्धारण व उसे क्रियान्वित करने के कार्य अस्पष्ट रूप से मिल गये थे। नीति सम्बन्धी महत्वपूर्ण निर्णय या तो किये नहीं जाते थे तथा यदि किये भी जाते थे तो उन्हें प्रशासनिक स्तर पर टाल दिया जाता था।

क्या राष्ट्रवादी सरकार निरंकुश थी ? वस्तुतः नानकिंग तथा बाद में चुंग किंग

13. चेन चीह माई की रचना 'दि गवंनमेंट ऑफ चायना' 3 खण्ड शंघाई 1944-1945 प्रथम खण्ड अध्याय XII-XIV पृ० 131-162। यह पुस्तक चीन की प्रमुख पाठ्य पुस्तक थी जो राष्ट्रवादी काल में चीनी विश्वविद्यालयों में चलती थी। बाद में चीनी सरकार में 1945-1947 तक के विकास प्रोफेसर चेइन के द्वारा अंग्रेजी में अपने लेख 'दि पोस्ट वार गवंनमेंट ऑफ चायना' में सारांश में दिये गए। जो टेलर कोल तथा जॉन हेलोवेल द्वारा संपादित पुस्तक 'पोस्टवार गवंनमेंट ऑफ दि फार ईस्ट' गेन्सविले, फ्लोरिडा 1947 पृ० 503 पर है।

की सरकार में एक दल का आधिपत्य था। इसमें भी वैयक्तिक नेतृत्व की भूमिका चीन में पहले की तरह महत्वपूर्ण रही थी। तो भी नीति का निर्माण करना च्यांग काई शेक का विशेषाधिकार था। वह सैनिक मामलों में सर्वोच्च था तथा पारिवारिक सम्बन्ध, दलीय नियन्त्रण, अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा तथा गुटबाजी के कारण उसे किसी भी अन्य व्यक्ति की तुलना में अधिक शक्ति प्राप्त थी। नीति निर्धारण की शक्ति च्याँग व उसके 100 साथियों में निहित थी। उनके कुछ योग्यतम साथी यद्यपि युद्ध सामन्त थे तथापि उन्होंने अत्यधिक संकटकालीन स्थिति का सामना नहीं किया था। किसी भी शक्तिशाली कार्यपालिका जैसे अमेरिका के राष्ट्रपति रुजवेल्ट ट्रूमेन तथा आइजन हावर को नीति निर्धारण में कितने लोग प्रभावित करते हैं च्यांग की समस्या अपने अमेरिकी समवर्तियों के समान अपने दल विभिन्न गुटों तथा शासन के सर्वोच्च प्रशासकों के मध्य सन्तुलन स्थापित करने की समस्या थी।

राष्ट्रवादी चीन की राजनीतिक व्यवस्था पाँच शक्तियों की संरचना पर आधारित आधुनिक विश्व की सर्वाधिक विस्तृत व्यवस्था थी। यह उतनी ही विस्तृत थी जितनी युद्धकाल में वाशिंगटन की व्यवस्था होती थी। एक बार कुमिताँग सचिवालय के सहायक निदेशक डॉ० कान नाईकुआँग ने कहा था "चीन की प्रशासनिक व्यवस्था में सुधार की आवश्यकता है यह इस्पात की तरह कठोर सत्य है।[14] प्रशासनिक विज्ञान की दृष्टि से बोलते हुए उसने कहा कि राष्ट्रीय प्रशासन की मूल दुर्बलताएँ इसके संगठन व्यक्तित्व तथा साधनों में है। यह कहना कठिन है कि उसकी यह घोषणा कहाँ तक उचित थी। राष्ट्रीय सरकार की असफलता का एक कारण प्रशासनिक अयोग्यता भी था। तथापि संस्थाओं व व्यक्तियों की भूमिका महत्वपूर्ण रही थी। इसके अतिरिक्त चीनियों की अपनी कठिनाइयां भी थीं तथापि परम्परागत चीनी व्यवस्था वास्तविकता के स्थान पर आकार में विश्वास करती है। शार्टहैंड की व्यवस्था के बावजूद प्रशासक अपने पत्र नहीं लिखवाया करते थे। प्रलेखों को फाइल में रखने की व्यवस्था नहीं थी क्योंकि चीनी भाषा में वर्णमाला के क्रम की व्यवस्था नहीं थी तथापि अच्छी नीति को क्रियान्वित करने के लिए तकनीक ही पर्याप्त नहीं होती है तथापि ये सब बातें प्रशासनिक व्यवस्था की दुर्बलताओं को इंगित करती है।

प्रशासनिक व्यवस्था का संचालन कार्यपालिका अथवा युआन के द्वारा किया जाता था जिसे नीति निर्माण के सन्दर्भ में मन्त्रिमण्डल राष्ट्रपति तथा प्रधानमन्त्री कहते थे। किन्तु यदि हम संसदीय प्रणाली की मूल विशेषता हम कार्यपालिका का व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायित्व मानते हैं तब चीन का युआन ब्रिटेन की कार्यपालिका तथा फ्रांस के तृतीय गणराज्य की कार्यपालिका से साम्यता नहीं रखता था। कार्यपालिका युआन का प्रारम्भ दल के आधीन संस्था के रूप में हुआ था तथा इसका कार्य दल की नीति को कार्यान्वित करना था 1943 के पश्चात् यह प्रशासनिक कार्यों के लिए राष्ट्रपति के प्रति उत्तरदायी बनी किन्तु मात्र दो अर्थों में युआन मन्त्रिमण्डल था यह विभिन्न विभागों के मध्य समस्याओं का समाधान करता था तथा उनमें सामूहिक उत्तरदायित्व होता था।

कार्यपालिका युआन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण व्यक्ति राष्ट्रपति (युआन चाँग) था। उसका चुनाव कुमितांग की केन्द्रीय कार्यपालिका परिषद् के द्वारा हुआ था 1943 के

14. डॉ. कान के दृष्टिकोण का सारांश चेइन में है पूर्वाद्धत पृ० 74-97।

पश्चात् उसका चुनाव राष्ट्रीय सरकार के राष्ट्रपति के मनोनयन पर होता था। जब राष्ट्रीय सरकार का राष्ट्रपति नाममात्र का अध्यक्ष होता था तब युग्रान स्वयं शक्तिशाली कार्यपालिका बन गया। किन्तु जब राष्ट्रीय सरकार का अध्यक्ष शक्तिशाली बना तब युग्रान की शक्तियाँ तुलनात्मक रूप से कम हो गई।

युग्रान कार्यपालिका के अन्तर्गत कई मन्त्रालय होते थे जैसे आन्तरिक, विदेशी, वित्तीय न्याय विभाग तथा मन्त्रालयों के स्तर के कमीशन भी होते थे इन उप-विभागों के अध्यक्ष भी युग्रान परिषद् के सदस्य होते थे। यह परिषद् प्रत्येक सप्ताह में मंगलवार को सामान्य प्रशासनिक नीति का निर्धारण करने तथा वैयक्तिक मन्त्रालयों की समस्याओं का समाधान करने के लिए मिलती थी। यद्यपि सिद्धान्ततः निर्णय बहुमत से लिए जाते थे तथापि व्यवहार में अध्यक्ष के निर्णयों का स्वागत किया जाता था तथा बिना अधिक वाद-विवाद के उसे स्वीकार कर लिया जाता था।

युग्रान के द्वारा नीति का निर्धारण न करने की प्रक्रिया आधुनिक चीनी राजनीति में निहित दो विवादों को प्रस्तुत करती है। युद्ध के दौरान अमेरिकी समाचार पत्रों के पाठक चीन में विभागों के परस्पर संघर्ष के वर्णन जिनमें रुजवेल्ट प्रशासन पर्याप्त रुचि लेता प्रतीत होता था, पढ़ कर मनोरंजन प्राप्त करते थे। विशेष बात यह है कि चीन की राष्ट्रीय सरकार में पर्याप्त मतभेद थे तथा उन्हें समाप्त करने के तरीके भी भिन्न हुआ करते थे। कार्यपालिका युग्रान की सहायता के लिए दो संस्थाएँ सचिवालय (मी-शू-चू) तथा राजनीतिक मामलों का विभाग (चेंग-चू-चू) होती थी। प्रशासन पर दोनों का महत्वपूर्ण प्रभाव था क्योंकि सभी प्रशासनिक मामले, रिपोर्ट, व स्मरण पत्रों के अध्ययन मन्त्रिमण्डल द्वारा विचार किये जाने से पहले इन सचिवों तथा परामर्शदाताओं के द्वारा देखे जाते थे। सचिवालय विभिन्न मामलों में निहित विवादों को उसी प्रकार निबटा दिया करता था जिस प्रकार अमेरिकी सरकार में मन्त्रिमण्डल के तर्क व विवाद सार्वजनिक रूप से प्रचलित होने से पहले ही बजट विभाग अथवा राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् के द्वारा निबटा दिये जाते हैं। चूँकि युग्रान अथवा कार्यपालिका को स्थानीय शासन पर भी नियन्त्रण प्राप्त था अतः उसके अधिकारी सम्पूर्ण देश में केन्द्रीय सरकार तथा केन्द्रीय प्रशासन के मध्य कड़ी के रूप में कार्य करते थे।

चीन की मुख्य भूमि पर पतन से पहले कुछ छोटे दलों ने जिनमें साम्यवादी मुख्य थे, युग्रान को संविद सरकार में परिवर्तित करने का आग्रह किया था। मन्त्रियों को अधिक प्रभावशाली बनाने का आग्रह किया गया था। इस प्रकार चीनी प्रजातन्त्र में अमेरिकी सरकार को मिली चुनौती मार्शल के संविद कार्यक्रम में स्पष्ट हो गई। किन्तु संकुचित अर्थों में इस कार्यक्रम ने तकनीकी व्यवस्था तथा लोगों की राजनीतिक आकाँक्षाओं में भ्रम उत्पन्न कर दिया था। यह उल्लेखनीय है कि जब स्वयं साम्यवादी शक्ति में आए तो उन्होंने चीन में जितनी एकीकृत तथा संगठित शासन व्यवस्था का प्रतिपादन किया कुमितांग लोग उसकी कल्पना भी नहीं कर सकते थे।

संरक्षणकाल में राष्ट्रीय सरकार के नीति निर्धारण की शक्ति दलीय अंग में निहित थी। अतः व्यवस्थापिका युग्रान का सामंजस्य काँग्रेस अथवा संसद से बिठाना न केवल अयुक्तिसंगत है अपितु अर्थहीन भी है। व्यवस्थापिका युग्रान न तो प्रतिनिधि सभा थी और न ही यह सरकार की नीति निर्धारित करने वाला अंग थी। सैद्धान्तिक रूप से 'विधि

सम्बन्धी सिद्धान्तों' व 'विधि के विषय वस्तु' में अन्तर स्थापित किया जाता था। कुमितांग की केन्द्रीय कार्यकारिणी सीमित को 'विधि सम्बन्धी सिद्धान्तों को निर्धारित करने का अधिकार प्राप्त था। जबकि व्यवस्थापिका का कार्य इन सिद्धान्तों को विधि का स्वरूप प्रदान करना मात्र था। इस प्रकार व्यवहार में व्यवस्थापिका कानून का प्रारूप बनाने वाली समिति मात्र थी। ठीक उसी प्रकार जैसे अमेरिका की कांग्रेस से सम्बन्ध विधि सम्बन्धी सेवाएँ हैं।

1931 के अस्थाई संविधान के अन्तर्गत व्यवस्थापिका मुआन में एक अध्यक्ष एक उपाध्यक्ष तथा 49 से 99 सदस्य होते थे। इनके अधिकारियों की नियुक्ति राष्ट्रीय सरकार के राष्ट्रपति द्वारा मनोनयन होने पर केन्द्रीय कार्यकारिणी परिषद् के द्वारा होती थी। सदस्यता का निर्धारण भौगोलिक प्रतिनिधित्व के आधार पर होता था। अधिकांश सदस्यों की पुर्ननियुक्ति भी की जाती थी। किन्तु वे किसी अन्य सरकारी पद पर कार्य अथवा वकालत नहीं कर सकते थे। ये सदस्य पांच स्थायी समितियां जैसे विधि विदेश विभाग, वित्तीय अर्थ तथा सैनिक विभाग की तथा संविधान प्रारूप समिति जैसी अस्थाई समिति में संगठित होते थे। मुआन का एक सचिवालय तथा एक संकलन व अनुवाद करने वाला अनुभाग होता था जो विधि सन्दर्भों पर पर्याप्त महत्वपूर्ण पुस्तकें प्रकाशित कर चुका था।

विशेषज्ञों द्वारा विधि के कुछ उल्लेखनीय परिणाम थे जैसे विधि की भाषा संमत होती थी, पदविन्यास नियमों का कठोर ढंग से पालन होता था। किन्तु इन कारण चीन में निर्मित विधियां इतनी उन्नत हो गई कि वे चीन की वास्तविक स्थिति से कोई साम्यता नहीं रखती थी। यह उचित नहीं था क्योंकि विधि का शासन प्राप्त करने के प्रयास में प्रारूप निर्माताओं ने विधि निर्माण की प्रक्रिया को अवनति की ओर अग्रसर किया।

सविधान तथा विधि प्रारूप के निर्माण के अध्ययन के अतिरिक्त मुआन का अधिकांश कार्य या तो कार्यपालिका के आदेशों से अथवा सर्वोच्च राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् के आदेशों के द्वारा होता था। यद्यपि इसके क्षेत्राधिकार में (1) विधि, (2) बजट, (3) सामान्य क्षमा, (4) युद्ध की घोषणा, (5) शांति संधि तथा अन्य महत्त्वपूर्ण मामले सम्मिलित होते थे। यहाँ भी मुआन स्वतंत्र रूप से कार्य नहीं कर सकता था तथा उसे सर्वोच्च राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् की स्वीकृति की आवश्यकता पड़ती थी। अक्सर पश्चिमी व्यवस्था से प्रोत्साहित होकर कभी-कभी व्यवस्थापिका कार्यपालिका के अध्यक्ष को सभा में उपस्थित होने को कहती थी किन्तु इसमें उससे सूचना प्राप्त करने के विशेष प्रयास नहीं किये जाते थे। इस प्रथा से व्यवस्थापिका के सदस्यों को थोड़ी लोकप्रियता प्राप्त हो जाती थी तथापि व्यवस्थापिका मुआन को कार्यपालिका से प्रश्न पूछने का अथवा मंत्रियों को जवाब देने के लिए बाध्य करने का कोई कानूनी अधिकार प्राप्त नहीं होता था।

परीक्षा का मूल्यांकन करने व सेंसर करने की जो शक्तियां कार्यपालिका व्यवस्थापिका व न्यायालय को प्राप्त थीं वे चीन की प्राचीन परम्पराओं का परिणाम थीं। हजारों वर्षों तक प्राय: सभी शासकों के अन्तर्गत चीन में प्रशासनिक सेवाओं के लिए परीक्षाओं का आयोजन किया जाता रहा था। इस व्यवस्था की रूपरेखा सुविचारपूर्ण थी किन्तु व्यवहार में इसके संचालन में कभी-कभी त्रुटि हो जाती थी। प्राचीन व्यवस्था में परीक्षा में निष्पक्षता प्राप्त करने के लिए विस्तृत आधार पर सतर्कता का आयोजन किया गया था। अन्य शब्दों में व्यवहार में होने वाले दोषों के बावजूद परीक्षक की स्थिति स्वतंत्र थी तथा डॉ० सनयात

सेन के अनुसार इस स्थिति को बनाए रखना चाहिए था। इसके अतिरिक्त सेंसर लगाने वाले लोगों का एक समूह जो 'दैवीय पुत्र के आँख व कान' कहलाते थे भी होता था।

परीक्षा तथा नियंत्रण युआन अथवा विभाग उतने उल्लेखनीय नहीं थे जितना कार्यपालिका था तथा न हीं यह व्यवस्थापिका के समान सक्रिय था। कालांतर में बहुत से व्यवहार परम्पराओं की चमक में दबते गए। फिर भी उपरोक्त दोनों विभाग राष्ट्रीय सरकार के अन्तर्गत महत्त्वपूर्ण कार्य करते थे। दोनों विभागों की आंतरिक संरचना अन्य विभागों के समान होती थी अर्थात् इसमें एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष तथा एक सचिव होता था। परीक्षा विभाग में एक परीक्षा आयोग एक मंत्रालय तथा नियंत्रण विभाग में एक नियन्त्रण मंत्रालय होता था। नियंत्रण विभाग अन्य विभागों से भिन्न था क्योंकि इसमें 17 स्थानीय संगठन होते थे जिन पर एक-एक नियंत्रण आयोग हुआ करता था।

प्रशासनिक सेवाएँ : चयन व नियंत्रण

ग्यारहवीं शताब्दी के महान् राजनीतिज्ञ सू-या कुआंग ने एक बार कहा था कि 'राजनीति में सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात उचित व्यक्तियों का चयन करना होता है यदि प्रत्येक पद पर उचित व्यक्ति नियुक्त किये जाते हैं तो प्रत्येक व्यवस्था उचित ढंग से चल सकेगी'। राष्ट्रीय सरकार के अन्तर्गत इन उत्तरदायित्वों का निर्वहन परीक्षा आयोग तथा नियुक्ति मंत्रालय के द्वारा किया जाता था। तथापि संरक्षण के बीस वर्षों में भी प्रशासनिक अधिकारियों की नियुक्ति मात्र परीक्षा के माध्यम से नहीं हुई : उसमें अन्य कई साधन जैसे सिफारिश, गुटबंदी, पारिवारिक सम्पर्क, वैयक्तिक प्रभाव, स्कूल तथा स्थानीय संबंध चीनी प्रशासनिक सेवाओं के गठन को प्रभावित करते रहे। यदि राष्ट्रीय सरकार ने परम्परागत आदर्श को गम्भीरतापूर्वक ढंग से बनाये रखने का प्रयास किया होता तो प्रशासनिक सेवा का पतन इतनी शीघ्रता व पूर्णता से नहीं होता।

जब परीक्षाएँ होती थीं तो बाहर से विद्वानों को भी परीक्षक बनाया जाता था। तीन प्रकार की प्रशासनिक परीक्षाएँ उच्च, सामान्य तथा निम्न स्तर पर होती थीं। उच्च स्तरीय परीक्षाएँ सामान्यतया उच्च प्रशासनिक पदों के लिए होती थी जिन पर मात्र विश्वविद्यालय के स्नातक भाग ले सकते थे। सामान्य परीक्षा अधीनस्थ प्रशासनिक सेवाओं के लिए होती थी जिसमें मिडिल पास स्नातक भाग लेते थे। विशिष्ट परीक्षाएँ विशिष्ट पदों पर नियुक्ति के लिए की जाती थीं पहली विशिष्ट परीक्षा का आयोजन 1928 में फिर द्वितीय महायुद्ध के प्रथम चार वर्षों में अस्थाई रूप से यह व्यवस्था स्थगित कर दी गई। चीन में प्रशासनिक अधिकारियों का अंश मात्र परीक्षा के माध्यम से भर्ती किये जाते थे।

अधिकारियों के मंत्रालय का कार्य अधिकारियों की नियुक्ति की पुष्टि करना होता था। चीनी कानून 'राजनीतिक अधिकारियों' व प्रशासनिक अधिकारियों के मध्य कठोर अंतर स्थापित करता है। मात्र प्रशासनिक अधिकारियों पर ही प्रशासनिक कानून लागू होता था। चीनी कानून में 'राजनीतिक अधिकारी की परिभाषा पूर्णतः अपर्याप्त थी क्योंकि इसके अनुसार वे सभी अधिकारी जिनकी नियुक्ति केन्द्रीय राज्य परिषद् के प्रस्ताव के अनुसार होती थी वे ही राजनीतिक अधिकारी होते थे। इस प्रकार के अधिकारियों में राष्ट्रीय सरकार का अध्यक्ष, राज्य परिषद् के सदस्य, पाँचों युआन के अध्यक्ष तथा अन्य उच्च अधिकारी सम्मिलित होते थे। ये सभी पद निर्वाचित थे।

इसके अतिरिक्त, अन्य अधिकारी थे जिनकी नियुक्ति कुमितांग की केन्द्रीय राज-

नीतिक परिषद् के प्रस्ताव से होती थी। इसमें मंत्रिगण, आयोगों का अध्यक्ष, विधि तथा नियंत्रण विभाग के अध्यक्ष मंत्रालयों के राजनीतिक उपमंत्री राजदूत, विदेशों के प्रतिनिधि मंत्री, प्रांतीय सरकार के सदस्य तथा कुछ अन्य विभागों के सचिव हुआ करते थे। वे सभी राजनीतिक अधिकारी हुआ करते थे। उनकी नियुक्ति राजनीतिक आधार पर होती थी वे प्रशासनिक नियमों से बाध्य नहीं होते थे तथा विशिष्ट स्थिति वाले अधिकारी कहलाते थे।

अधिकांश सरकारी कर्मचारी प्रशासनिक अधिकारी कहलाया करते थे। इनकी नियुक्ति या तो प्रशासनिक परीक्षाओं के माध्यम से अथवा उच्च अधिकारियों द्वारा नियुक्ति से होती थी जिसे बाद में सरकारी मान्यता दी जाती थी। संक्षेप में सरकारी अधिकारी तीन स्तरों पर विभाजित थे तथा प्रत्येक स्तर कई श्रेणियों में विभाजित थे सभी स्तरों तथा श्रेणियों का कुलयोग 38 था। कुछ अधिकारियों की नियुक्ति जिनमें उच्च अधिकारी व उपमंत्री होते थे सरकार द्वारा आमंत्रित कर की जाती थी। यह आमंत्रित स्तर प्रशासनिक सेवाओं के मध्यम वर्ग का निर्माण करता था इनमें विभिन्न मंत्रालयों के अनुभाग अधिकारी भी सम्मिलित हुआ करते थे। प्रशासनिक सेवाओं का विशालतम अंश अधीनस्थ कर्मचारियों का होता था।

युद्ध से पूर्व इन अधिकारियों का वेतन पर्याप्त अच्छा होता था किन्तु युद्ध के दौरान आर्थिक स्थिति बिगड़ती गई तथा अधिकारियों के लिए निश्चित वेतन में जीवनयापन करना कठिन हो गया। परिणामतः कुछ अधिकारियों ने भ्रष्ट तरीकों व अनियमितताओं का सहारा लेना आरम्भ किया परिणामतः सम्पूर्ण व्यवस्था अनैतिक हो गई।[15]

आवयविक कानून के अनुसार नियन्त्रक युआन सरकार का सर्वोच्च संरक्षक अंग होने वाला था उसे महाभियोग लगाने तथा जांच पड़ताल करने का अधिकार प्राप्त था।" इस प्रकार सनयातसेन ने सेंसर विभाग को चीन की परम्परा के अनुसार सर्वोच्च स्थान प्रदान किया था तथा इस प्रकार पश्चिमी तरीके में संसद द्वारा महाभियोग की प्रक्रिया को परिवर्तित रूप में स्वीकार किया गया था। वस्तुतः चीन द्वारा नियन्त्रण करने की व्यवस्था प्रश्न पूछने तथा अविश्वास प्रस्ताव पारित करने से पूर्णतः भिन्न थी। इसी प्रकार यह कांग्रेस द्वारा जांच पड़ताल करने के अधिकार से भिन्न है। इसके कार्य वित्त क्षेत्र में अमेरिकी कन्ट्रोलर जनरल तथा सैनिक क्षेत्र में अमेरिका की सेना का इंस्पेक्टर जनरल करता है। सैद्धान्तिक रूप से यह नियन्त्रण की व्यवस्था सम्पूर्ण रूप में थी क्योंकि उस समय राजनीतिक अथवा नैतिक दृष्टि से विषयों का बंटवारा नहीं हुआ करता था। राष्ट्रीय सरकार के देशी व विदेशी दोनों प्रेक्षक यह स्वीकार करते हैं कि इस विभाग द्वारा नियन्त्रण की संभावनाएँ पर्याप्त अधिक थीं तथा उसकी अत्यधिक आवश्यकता भी थी। व्यवहार में विभागों के आधुनिक बंटवारे के अनुसार शक्ति का इस प्रकार से प्रसार संभव नहीं था। युद्धकाल में दल, युद्धकालीन मन्त्रिमण्डल तथा सेना के विकास ने इस नियन्त्रण की शक्ति को द्वितीय श्रेणी का बना दिया। इस काल में नियन्त्रण की शक्ति पूर्णतः अराजनीतिक स्वरूप वाली हो गई इसकी पुष्टि इस तथ्य से होती है कि महाभियोग के मामले नियन्त्रण अधिकारियों अथवा विधायकों द्वारा नहीं सुलझाए जाते थे अपितु राष्ट्रीय सरकार के जजों के द्वारा सुलझाए जाते थे। सैद्धान्तिक रूप में महाभियोग की शक्ति भी अत्यधिक व्यापक थी इसकी परिभाषा

15. चेइन पूर्वोद्धृत खंड II अध्याय XXXII से XXXI पृ० 199-243।

भ्रमपूर्ण थी तथा इसका प्रयोग निर्भयतापूर्ण ढंग से नहीं किया जाता था अतः सिद्धान्त महत्वाहीन हो गया तथा सम्पूर्ण व्यवस्था अर्थहीन हो गई ।[16]

चीन में समानता की ओर स्वाभाविक झुकाव है । इसकी अभिव्यक्ति शाही दरवार तथा पुराने पेकिंग के नगर की संरचना में स्पष्ट है । अतः सरकार के अन्य चार विभाग मुआन कहे जाते थे तथा पांच की संख्या पूरी करने के लिए न्याय विभाग को पांचवे विभाग के रूप में स्वीकार कर लिया गया । न्याय विभाग राष्ट्रीय सरकार का सर्वोच्च न्यायिक अंग माना जाता था तथा इसके अध्यक्ष व उपाध्यक्ष राज्य परिषद् तथा सर्वोच्च राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् के सदस्य होते थे । जहां तक क्षेत्राधिकार का प्रश्न था न्याय विभाग न्यायालयों में हस्तक्षेप नहीं कर सकता था तथा वह प्रायः स्वतन्त्र होते थे । 1943 में न्याय विभाग का स्वरूप इतना अधिक प्रशासनिक हो गया कि उसे प्रशासन विभाग को सौंप दिया गया ।

न्याय विभाग (मुआन) के तीन विशिष्ट कार्य हुआ करते थे । सर्वप्रथम विधि तथा आदेशों की व्याख्या करना था तथा इसके अतिरिक्त सर्वोच्च न्यायालय के सर्वोच्च न्यायाधीश तथा न्याय विभाग के अध्यक्ष मिलकर कानूनी पूर्वनिर्णयों को परिवर्तित भी कर सकते थे । अन्य कार्य क्षमादान, दण्ड कम करना, नागरिक अधिकार प्रदान करवाना भी होता था । तीसरा कार्य विभाग से सम्बन्वित कानूनी मामलों पर विचार करना होता था । प्रशासनिक आघात से नागरिक अधिकारों की सुरक्षा करने में प्रशासनिक न्यायालय की प्रभावशक्तिता कभी भी प्रमाणित नहीं हो पाई थी क्योंकि सार्वजनिक अधिकरियों के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही करने वाला आयोग अधिक से अधिक अपराधी अधिकारी को पद से वियुक्त कर सकता था इस प्रकार इस आयोग की उपयोगिता संदिग्ध थी ।

1 जुलाई 1930 में एक कानून के द्वारा चीन में नवीन न्याय-व्यवस्था की गई जिसके अनुसार एक सर्वोच्च न्यायालय प्रत्येक प्रान्त में एक उच्च न्यायालय तथा विशिष्ट जिला न्यायालय तथा स्थानीय न्यायालय होता था । अन्ततः प्रत्येक 2000 प्रदेश तथा नगरपालिकाओं के मध्य एक स्थानीय न्यायालय होना था । 1946 के आंकड़ों के अनुसार तव मात्र 500 स्थानीय न्यायालय विद्यमान थे । अधिकांश प्रदेशों में सरकार से संबद्ध न्यायिक अनुभाग थे ।

सैन्य मामलों का आयोग

सामान्य चीनी के लिए पांच विभागों का संविधान तथा राजनीतिक संरक्षण का काल में पद कोई अर्थ नहीं रखते थे । वह मात्र तीन शक्तियों को मानता था जिनके आदेश का पालन करना अनिवार्य था । ये दल सरकार तथा सेना थे । यद्यपि परम्परागत चीनी

16. दिलचस्पी रखने वाले पाठक को राष्ट्रवादी सरकार के अन्तर्गत शक्ति पर नियन्त्रण का अध्ययन करना चाहिये—उदाहरण के लिए वे वर्णन जिन्हें अक्सर सरकार पर आरोप मानकर अस्वीकार कर दिया जाता था किन्तु वाद में उन वर्णन को विवादास्पद पाया गया । प्रोफेसर चेइन जो वाद में सरकारी अधिकारी वनाने नियन्त्रण सम्वन्धी कार्य को पश्चिमी संदर्भ में महानियोग लगाने जैसे कार्य माना । प्रोफेसर लिनवर्गर ने अपनी पर्याप्त लोकप्रिय रचन 'चायना ऑफ च्याग काई शेक' जिसको पहले उद्धृत किया गया है ने नियंत्रण व्यवस्था तथा वाद में कार्यपालिका में युद्ध के दौरान उनके विलीनीकरण का समर्थन किया है । प्रोफेसर चेइन का विचार था कि नियंत्रण व्यवस्था सरकार के सुचारू रूप से कार्य करने के लिए अनिवार्य थी । ये तीनों राजनीति वैज्ञानिको की दृष्टि से शासन की कला को चीनियों का योगदान है ।

दृष्टिकोण में सेना को संदेह की दृष्टि से देखा जाता था यद्यपि चीन में आधुनिक शक्ति की राजनीति को सेना महत्वपूर्ण बना दिया। तथापि सेना का विलीनीकरण सरकार की सामान्य प्रक्रिया में पश्चिमी प्रजातन्त्रों के समान नहीं हो पाया है। 1937 में युद्ध के प्रारम्भ होने पर सैन्य आयोग के कार्यों में वृद्धि हो गई तथा यह 1925 से सरकार के छठे अंग के रूप में विकसित हो गया। इस सैनिक आयोग का सभापति च्यांगकाइ शेक तथा नौ अन्य सदस्य थे जिनकी नियुक्ति राज्य परिषद् के द्वारा सर्वोच्च राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् की अनुमति से होती थी। युद्ध का संचालन सफलतापूर्वक करने के उद्देश्य से मन्त्रालय के स्तर के कई उप-विभाग इससे सम्बन्धित किये गये तथा साथ ही कई अन्य निम्न स्तर के कार्यालय नागरिक तथा सैनिक मामलों का संचालन करते थे। युद्ध मंत्रालय इस आयोग तथा कार्यपालिका के संयुक्त नियन्त्रण में कार्य करता था। आयोग के अन्तर्गत अन्य महत्वपूर्ण विभाग सैनिक कार्यवाही विभाग, सैन्य प्रशिक्षण व अपूर्ति राजनीतिक विभाग तथा उड्डयन विभाग जिसने चीन की हवाई, सेना को संगठित करने का महत्वपूर्ण कार्य किया। जबकि नौसेना के कार्यालय का मुख्य कार्य विभिन्न योजनाओं का निर्माण करना होता था।

इस आयोग के सभापति के सहायक के पद को यद्यपि बहुत कम प्रसिद्ध प्राप्त थी तथापि उसका प्रभाव बहुत अधिक था। इसका एक अनुभाग गुप्तचर गतिविधियों का संगठन करता था। दूसरा अनुभाग शासन के मामलों पर सभापति को सम्पूर्ण राष्ट्र के प्रशासन के बारे में राय देता था। तीसरा अनुभाग सभी सैनिक नागरिक तथा प्रशासनिक कर्मचारियों के बारे में रिकार्ड रखता था। वस्तुतः यह सभी कर्मचारियों की नियुक्ति की सिफारिश कर सकता था अथवा उन्हें अपदस्थ करवा सकता था क्योंकि इसका सभापति सरकार व दल का भी सभापति होता था। परीक्षा विभाग के अधिकारियों का काम नियुक्तियों की पुष्टि करना मात्र था।[17]

स्थानीय शासन के लिए संघर्ष—सनयातसेन के विचारानुसार प्रदेश को इतना विकास करना चाहिए था कि उसके लोग प्रान्तीय सरकार की उपेक्षा कर प्रत्यक्ष केन्द्रीय सरकार से सम्बन्ध स्थापित करने में सफल हो सकें। तथापि व्यवहार में प्रान्तीय सरकार पर्याप्त महत्वपूर्ण रही तथा 20 वर्ष के संरक्षण काल के बावजूद इस सरकार के समाप्त होने की कोई सम्भावना दृष्टिगोचर नहीं हुई। युद्ध ने प्रान्तीय सैन्यवाद को प्रायः समाप्त कर दिया। प्रान्तीय अध्यक्ष प्रायः एक गैर सैनिक अधिकारी होता था जिसका प्रभाव सैनिक अधिकारी के समान नहीं होता था तथा वह शान्ति स्थापित करने वाला अधिकारी कहलाता था।

चीनियों के लिए 1937 में प्रारम्भ होने वाला युद्ध राष्ट्रीय राज्य का युद्ध नहीं था अपितु प्रान्तों द्वारा युद्ध था इनमें से कई प्रान्त यूरोप के एक-एक राज्य के समान विशाल

17. चीन में सेना व सरकार के मध्य सम्बन्ध के विवरण के लिए लिनबर्गर की पुस्तक 'दि चाइना ऑफ च्यांग काई शेक, उद्धृत अध्याय 2, हो माओ त्सु की रचना' 'दि नेशनल मिलिटरी काउंसिल' दि चाइनीज ईयर बुक. 1928-34 शंघाई एण्ड हांगकाग 1939 पृ० 361-63 तथा इवान्स फोर्डास कार्लसन की 'दि चाइनीज आर्मी : इट्स आर्गेनाइजेशन एण्ड मिलिट्री एफीशियंसी' न्यूयोर्क, 1940। 1945 तक युद्ध स्वतन्त्र चीन का संघर्ष, अमेरिकी सहयोग तथा साम्यवादियों के बढ़ते हुए संघर्ष के सन्दर्भ में साहित्य उत्पादन विशाल पैमाने पर पहुंच गया था तथा उन्हे उद्धृत करने के लिए सम्पूर्ण पृष्ठ का उद्धरण भी अपर्याप्त होगा।

थे। यह युद्ध प्रान्तीय स्तर पर सरकार का निर्माण करने के लिए था 1940 में चीन के 28 प्रान्तों में से चार जापान के आधीन थे तथा वे मंचू-को कहलाते थे, 14 पूर्णतः चीनी नियन्त्रण में थे तथा वे स्वतन्त्र चीन कहलाते थे इन चार में से चार सिक्यांग, यूनान, क्वांग्सी तथा फूकने कहलाते थे जो यद्यपि राष्ट्रीय सरकार के साथ सहयोग करते थे तथापि उनमें प्रान्तीय स्वायतता के चिह्न अत्यधिक रूप में विद्यमान थे। 10 प्रान्त दो या तीन सत्ताओं तक के अधीन थे। ये शक्तियाँ जापान या जापान समर्थक चीनी शासक अथवा वैधानिक दृष्टि से स्वीकृत अथवा अस्वीकृत साम्यवादी दल थे।[18]

स्थानीय स्तर पर सरकार का स्वरूप पूर्णतः अस्पष्ट था। चीन उतने ही अर्थों में ग्रामीण था जितने अर्थों में एक सुदूर पूर्वी क्षेत्र ग्रामीण होते हैं। सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार, आर्थिक जीवन में शोषण पारिवारिक जीवन को नैतिक पतन में सब विशेपताएँ विद्यमान थीं। प्रचलित नगरीय प्रतिमान चीन के प्रत्येक गाँव में विद्यमान थे तथा वे चीन के राजनीतिक जीवन के व्यापक पतन का प्रतीक थे।

संरचनात्मक अर्थों में 1931 के आवयविक कानून के अन्तर्गत स्थानीय प्रशासन दोहरे ढंग से संगठित था। प्रान्तीय सरकार केन्द्रीय व स्थानीय सरकार के मध्यस्थ का कार्य करती थी। नगरपालिका तथा प्रदेश संस्था स्वशासन की मूल इकाई थे। प्रान्तीय सरकारों का स्वरूप आयोग के रूप में था जिसमें राष्ट्रीय सरकार द्वारा नियुक्त सात से नौ सदस्य होते थे। यह व्यवस्था बहुत कुछ अमेरिका की नगरपालिकाओं के लिये गाल्वेस्टन योजना से मिलती थी।

नगरपालिकाओं के दो प्रकार होते थे। एक विशिष्ट नगरपालिकाएँ कार्यपालिका मुआन के प्रत्यक्ष नियंत्रण में थीं तथा सामान्य नगरपालिकाओं प्रान्तीय सरकार के नियंत्रण में होती थी। प्रत्येक संगठन में एक मेयर उसकी परिपद् सचिवालय तथा मेयर के अन्तर्गत सामाजिक मामलात, सार्वजनिक सुरक्षा, सार्वजनिक निर्माण विभाग हुआ करते थे।

हसिन अथवा प्रदेश को प्रजातन्त्र का स्रोत माना जाता था। सिद्धान्त के विपरीत स्थानीय शासन की माँग इतनी आवश्यक थी कि 1939 में युद्ध के दौरान ही राष्ट्रीय सरकार को 'नवीन प्रादेशिक व्यवस्था' के बारे में अध्यादेश जारी करना पड़ा। तथापि संरक्षण काल की समाप्ति के समय तक मात्र 2023 प्रदेशों ने नवीन व्यवस्था को स्वीकार किया था। प्रत्येक प्रदेश में एक मैजिस्ट्रेट होता था जो स्थानीय मामलों की देखभाल करता था तथा प्रान्तीय व केन्द्रीय आदेशों को क्रियान्वित करता था। प्रदेश के अन्तर्गत ईकाइयों में गाँव, कस्बा, पड़ौस तथा मकानों का एक झुन्ड होता था।

शासन के सर्वोच्च शिखर से लेकर स्थानीय इकाई तक युद्ध के दौरान प्रतिनिधि शासन की तात्कालिक अनिवार्यता के परिणामस्वरूप प्रतिनिधि स्वरूप वाली प्रान्तीय जनवादी राजनीतिक परिपदें, नगरपालिका परामर्शदात्री सभाएँ तथा जिला स्तरों पर प्रतिनिधि परिपदों की स्थापना नवीन व्यवस्था के अन्तर्गत की गई। किन्तु सनयातसेन के विश्वास के विपरीत प्रजातन्त्र का विकास निम्नतम इकाई से नहीं हुआ। इसके विपरीत शासन के उच्चतम स्तर पर प्रजातन्त्र के लिये गम्भीर प्रयोग किये गये।

18. हेरोल्ड एम्युस्ले 'प्रो. चाइना इंटरनेशनल कन्सीलियेशन' संख्या 359 (अप्रेल 1946) इन प्रदेशों की स्पष्ट परिभाषा देती है।

सर्वोच्च स्तर पर प्रजातन्त्र : राजनीतिक दृढ़ीकरण तथा संवैधानिक सरकार से संलग्न करने वाली कड़ी के रूप में जनवादी राजनीतिक परिषद् की स्थापना मार्च 1938 में हैन्थावे में कुमितांग दल के संकटकालीन अधिवेशन द्वारा पारित एक प्रस्ताव के आधार पर की गई। इस सम्मेलन में यह संकल्प पारित किया गया कि एक ऐसी संस्था का निर्माण किया जाए जिससे राज्य की नीतियों के निर्माण में सभी प्रभावशाली बुद्धिमान लोगों का परामर्श लिया जा सके।

जनवादी राजनीतिक परिषद् की स्थापना में यूरोपियन प्रकार के संयुक्त मोर्चा जो प्रतिनिधि प्रणाली पर संगठित हों तथा सरकार पर संरक्षण के रूप में कुमितांग दल के एकाधिपत्य के दो भिन्न न्यादर्शों के मध्य समझौता था।[19] इस प्रकार जनवादी राजनीतिक परिषद् अपनी सम्पूर्ण दुर्बलताओं के बावजूद चीन में प्रतिनिधि सरकारों में से एक थी तथापि इस परिषद् के सदस्यों का उचित रूप से निर्वाचन कभी नहीं हुआ था तथा इस पर सर्वदा कुमितांग दल द्वारा आधिपत्य स्थापित करने का प्रयास रहा। धीरे-धीरे इस पर कुमितांग दल का आधिपत्य बढ़ता गया तथा अन्य दलों का प्रतिनिधित्व घटता गया। अन्ततः जनवादी राजनीतिक परिषद् भी अन्य संस्थाओं के समान सरकार को परामर्श देने वाली संस्था मात्र बन गई। अन्ततः परिषद् विभिन्न राजनीतिक दलों की परामर्शदाता समिति के रूप में बनी रही, यह जनरल जार्ज केटलेट मार्शल के अन्तर्गत संविदात्मक प्रयास था।

निश्चय ही जनवादी राजनीतिक परिषद् यद्यपि प्रतिनिधित्व नहीं करती थी तथापि यह एक तड़क-भड़क वाली संस्था थी। जून 1938 में जब सर्वप्रथम इसका संगठन किया गया था इसमें 200 सदस्य थे जिनमें सात साम्यवादी (जिनमें एक माओत्से तुंग भी था) तथा एक भूतपूर्व प्रधान मन्त्री, एक पंछेण लामा से सम्बन्धित बौद्ध, तृतीय इंटरनेशनल की कार्यकारिणी का एक सुरक्षित सदस्य, मेंग कबीले का सदस्य व मेनसियस का उत्तराधिकारी आदि भी थे।[20] जनवादी राजनीतिक परिषद् के नियमों के अनुसार इसके सदस्य चार शृंखलाओं में विभाजित किये जा सकते थे जैसे ये (1) प्रादेशिक प्रतिनिधि, (2) तिब्बत व मंगोलिया के प्रतिनिधि, (3) विदेशी चीनियों के प्रतिनिधि तथा सांस्कृतिक व आर्थिक

19. राष्ट्रवादी सरकार की स्थापना तथा जनवादी राजनीतिक परिषद् की स्थापना के मध्य पर्याप्त समय निकाल चुका था। चीन में साम्यवादी विरोधी नारे तथा जापान के आघात बढ़ गये थे। दिसम्बर 1936 में स्यान में जिस प्रकार च्यांगकाई शेक का अपहरण हुआ उससे सम्पूर्ण विश्व में जापान विरोधी आवाजें उठी। इन अर्थों में सम्भवतः जनवादी राजनीति परिषद् की पूर्ववर्ती राष्ट्रीय मुक्ति के लिये अखिल चीनी संस्था थी। इसके मई 1936 में प्रेषित घोषणा पत्र में राष्ट्रवादी व साम्यवादियों के मध्य गृह-युद्ध को समाप्त करने का आग्रह किया गया था। साथ ही सभी दलों का एक शत्रु विरोधी संगठन बनाने, राजनीतिक बन्दियों की रिहाई तथा संगठन तोड़ने वाले दल के विरुद्ध कदम उठाने की व्यवस्था भी की गई थी। चीनी साम्यवादियों ने विश्व व्यापी रूसी नीतियों से प्रभावित होकर अपना पृथक् एकता घोषणा-पत्र (1935) प्रेषित किया तथा बाद में च्यांग के अपहरण व स्वतन्त्रता के पश्चात् एकता सम्बन्धी कथन (1931) प्रेषित किया। लारेंस के रोजिंगर ने इन्स्टीट्यूट को प्रेसीफिक रिरेशन्स की कांग्रेस कमीटी के सम्मुख बयान देकर प्रसिद्धि प्राप्त करने से पहले एक पुस्तक चाइनाज वार टाइम पॉलिटिक्स प्रकाशित की प्रिंसिटन 1744। यह पुस्तक अपने प्रलेखों के कारण उपयोगी है।

20. लिनबर्गर, चाइना ऑफ च्याग काई शेक, पूर्वोद्धृत पृ. 70-71

संगठनों के प्रतिनिधि होते थे। किसी प्रकार के चुनाव नहीं होते थे। सभी सदस्यों का चयन कुमितांग द्वारा होता था जिनकी अवधि दो वर्ष होती थी।

जनवादी राजनीतिक परिषद् का दूसरा अधिवेशन 1941 में हुआ किन्तु इसको साम्यवादी सदस्यों ने इस आधार पर वहिष्कार किया कि उनकी चतुर्थ सेना को भंग कर दिया गया था। उन्होंने यह शर्त रखी कि सरकार सीमान्त प्रान्त में साम्यवादी आधिपत्य को स्वीकार कर ले। इसे सरकार ने मानने से इन्कार कर दिया। इस परिषद् का तीसरा अधिवेशन 1944 में हुआ। इसके पश्चात् परिषद् ने यूनान को पांच व्यक्तियों का मिशन भेजा किन्तु उसका कोई परिणाम नहीं निकला। बाद में परिषद् की सदस्य संख्या बढ़ा दी गई तथा उसे वित्तीय तथा जांच पड़ताल की शक्तियाँ भी प्रदान की की गई। चतुर्थ परिषद् की तीन मीटिंग हुई जिनमें से अन्तिम 1949 की मई में हुई। अपने नौ वर्ष के अस्तित्व में जनवादी परिषद् की 13 मीटिंग हुई जिनमें कुल मिलाकर दो हजार प्रस्ताव पारित किये गये।[21] परिषद् के क्षेत्र में निम्नांकित शक्तियाँ निहित थीं: (1) युद्ध के दौरान घरेलू तथा विदेशी नीति से सम्बन्धित प्रस्तावों को क्रियान्वित करना, (2) सरकार को संकल्प प्रेषित करना, (3) सरकार के विभिन्न अंगों की रिपोर्ट सुनना तथा सरकारी अधिकारियों से पूछताछ करना आदि। 1944 में परिषद् को राष्ट्रीय बजट के सन्दर्भ में पूछताछ करने का अधिकार भी प्रदान किया गया।

यद्यपि जनवादी परिषद् इस बात का दावा कभी नहीं कर सकी कि उसने चीन में प्रजातन्त्र की स्थापना की थी तथापि इसने ऐसे अनेक उपयोगी संकल्प पारित किये जिसे सरकार ने स्वीकार किया। 29 मार्च, 1948 में नवीन संविधान के अन्तर्गत जब नवीन राष्ट्रीय सभा को आमन्त्रित किया गया तब यह परिषद् समाप्त हो गई। यद्यपि कुमितांग दल के अन्तर्गत सरकार में अक्सर तानाशाही प्रवृत्तियाँ विद्यमान थी। यह परामर्शदात्री संस्था परामर्श दे सकती तथा आलोचना कर सकती थी तथा उसकी यह भूमिका लगातार दो दशाब्दियों तक बनी रही।

संयुक्त मोर्चा व मार्शल योजना : यह ध्यान देने योग्य बात है कि संरक्षक सरकार 1937 से महायुद्ध के अन्त तक कठोर परीक्षण के दौरान रही। क्योंकि उस समय चीन का अधिकांश सीमा तक प्रदेश जापान के अधिकार में रहा तथा उत्तर में साम्यवादी सरकार का अस्तित्व राष्ट्रीय सरकार के लिये निरन्तर चुनौती बना हुआ था। पहले उत्तरी चीन में जापानी हस्तक्षेप तथा जनता द्वारा उसका विरोध होने के कारण कुमितांग दल के लिये साम्यवाद से समझौता करना आवश्यक बना दिया। परिणामतः 1937 में साम्यवादियों से एक समझौता हुआ जिसके अनुसार उन्होंने कुमितांग को वरिष्ट दल माना तथा उसके बदले में कुमितांग के साम्यवादी दल को शीघ्र ही प्रजातन्त्रीय सुधार करने का आश्वासन दिया। इस समझौते के अनुसार साम्यवादियों को चीन का सोवियत करण करने की योजना का परित्याग करना था तथा भूमि के शक्तिपूर्ण अधिग्रहण करने की योजना को छोड़ कर तीन जनवादी सिद्धान्तों में आस्था व्यक्त करनी थी। सीमान्त प्रदेशों की साम्यवादी सरकारें राष्ट्रीय सरकार का अंश बनने वाली थी तथा लाल सेना राष्ट्रीय सरकार का अंश बनने वाली थी। यह नवीन प्रयोग अन्य देशों के लिये ही नहीं चीन के लिये भी आश्चर्यजनक

21. चाइना हेंडबुक, 1950 न्यूयोर्क पृ. 139

था। इनमें सबसे अधिक परेशानी शायद जापान को थी जो संयुक्त चीन से सर्वाधिक भयभीत था। विशेषत: ऐसा चीन जिसमें साम्यवाद को स्वीकार किया गया था। अतः जापानियों ने बिना प्रतीक्षा किये मार्को पोलो पुल पर तत्काल आक्रमण किया।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि संयुक्त मोर्चे के बने रहने का मूल कारण अस्तित्व समाप्त होने का भय तथा राष्ट्रीय मुक्ति की इच्छा थी। किन्तु चीन के दोनों दलों में जब तक परस्पर सहमति उत्पन्न नहीं होती तब तक चीन के लिये जापान के आक्रमण का सामना करना सम्भव नहीं था।

युद्ध समाप्त होने तक दोनों दलों में संघर्ष व सन्देह काफी बढ़ गया था। शान कान निग सीमान्त प्रदेश की साम्वयादी सरकार कभी भी राष्ट्रीय सरकार का अंग नहीं बनी थी तथा उनकी सेना जो अठाहरवीं टुकड़ी कहलाती थी ने चीन की सेना के आदेश को कभी भी स्वीकार नहीं किया था।

युद्ध समाप्ति के पश्चात् प्रजातन्त्रीकरण तथा एकीकरण की एक नई व्यवस्था का सूत्रपात हुआ तथा युद्ध के पश्चात् प्रजातन्त्रीय देशों को सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से अमेरिका ने चीन की सहायता करने का निश्चय किया। चीन में प्रजातन्त्र, एकता व शान्ति लाने की योजना को संक्षेप में इस प्रकार रख सकते हैं—

(1) सभी दलों की संविद सरकार स्थापित करने का विचार था जिसमें साम्यवादी दल को कुमितांग के समकक्ष स्थान प्रदान किये गये थे।

(2) दोनों दल देश में उत्पन्न गृह-युद्ध की स्थिति को समाप्त कर सेना को पुनर्गठित करने का प्रयास करेंगे।

(3) यह संविद सरकार कुमितांग दल की तानाशाही समाप्त कर अनेक दलीय व्यवस्था की स्थापना करेगी जिससे चीनी लोगों को प्रजातन्त्रीय व्यवस्था प्राप्त होगी।

(4) नवीन संविधान पर आधारित इस कई संविद सरकार को लाखों लोगों के लिए काम, भोजन तथा कपड़ों की व्यवस्था करने के लिए सरकार आर्थिक सहायता देगी।

दिसम्बर 1945 में जब जनरल जार्ज सी मार्शल चीन में मध्यस्थ के रूप में पहुँचा तो उसके पास इस सन्दर्भ में तैयार योजना थी। किन्तु यह योजना दुर्भाग्यवश अमेरिका में बनाई गई थी तथा चीनी अवस्थाओं के अनुकूल यह नहीं थी। एक व्यावहारिक अमेरिकी के समान वह इस योजना को कार्यान्वित करने में जुट गया जबकि चीनी इसके द्वारा किसी चमत्कार की प्रतीक्षा करने लगे।

जनवरी 1946 में चीन के सभी राजनीतिक दलों ने इसे स्वीकार कर लिया तथा ऐसा लगा मानों चीन समृद्धि व सम्पन्नता के द्वार पर खड़ा था। पेपिंग में एक कार्यकारिणी का मुख्यालय की स्थापना की गई तथा राष्ट्रवादी, साम्यवादी तथा अमेरिकी प्रतिनिधियों सहित एक शान्ति मिशन बनाया गया। जिसका काम सभी संघर्ष स्थलों पर युद्ध विराम लागू करना था किन्तु दोनो दलों में सैनिक तत्त्व इतने मुख्य थे कि वे संविद सरकार पर समझौता करने में असमर्थ थे। ये उग्रवादी समझौते की वास्तविक इच्छा नहीं रखते थे तथा उसके उल्लंघन का आरोप परस्पर लगाने में उन्हे हिचकिचाहट नहीं थी। संघर्ष तथा समझौते की इस द्वन्द्वात्मक मनःस्थिति में ये दोनों दल शान्ति का समर्थन करते थे तथापि अवसर आने पर संघर्ष का सहारा लेने को भी तत्पर रहते थे।

जापान के आत्मसमर्पण के पश्चात् से जनवरी तक जब मार्शल ने चीन छोड़ा, इसके मध्य का काल एक अस्थिर शान्ति का काल रहा। मार्शल के जाने के पश्चात् चीन में पूरे पैमाने पर गृह-युद्ध छिड़ गया तथा राजनीतिक गतिविधियों का स्थान सैनिक गतिविधियों ने ले लिया।

जनरल मार्शल ने यह स्वीकार करते हुए कि राजनीतिक गाड़ी के सेना रूपी घोड़े के सामने रखना सम्भव नहीं था अपने मिशन की असफलता को माना तथा इसका आरोप दोनों दलों के उग्रवादियों पर लगाया। 7 जनवरी, 1947 में एक वक्तव्य प्रसारित करते हुए उसने कहा कि कुमितांग के कुछ समूह चीन पर अपना सामन्ती प्रभाव बनाए रखना चाहते थे तथा वे मार्शल की योजना को लागू करने के इच्छुक नहीं थे। दूसरी ओर साम्यवादी इतने उग्र हो गए थे कि उन्होंने अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए चीन की अर्थव्यवस्था को नष्ट करने के लिए संचार के साधनों तक को नष्ट किया जिससे सरकार का शीघ्र पतन हुआ किन्तु इसका प्रभाव जनता पर प्रतिकूल पड़ा। दोनों दलों में इतना अधिक अविश्वास था कि राजनीतिक गतिरोध उत्पन्न होना पर्याप्त स्वाभाविक था। इस दुविधापूर्ण स्थिति से मुक्ति तभी मिल सकती थी जब उदारवादी छोटे दल आगे आते। वे लोग जिन्हें अभी तक राजनीति में प्रभाव प्राप्त नहीं हुआ था। यदि च्यांग काई शेक ने ऐसे लोगों के नेतृत्व सरकार में बनाई होती तो वह सरकार की एकता को बनाए रखने में सफल होते।

स्पष्ट है कि जनरल मार्शल का प्रयास असफल रहा। यह अधिक दुर्भाग्यपूर्ण इसलिए रहा कि शान्तिकाल में अमेरिका में अपने इतिहास में पहली बार एक मित्र देश की राजनीति व सरकार में इतना हस्तक्षेप किया था। मार्शल के मिशन का एक परिणाम 1947 के संविधान का सूत्रपात था जिसके परिणामस्वरूप कुमितांग दल का संरक्षण काल समाप्त हो गया। यह कदम 20 वर्ष तक संविधानवाद की स्थापना तथा सनयातसेन के आदर्श को प्राप्त करने की दिशा में एक प्रयास था।

संविधानवाद एक सजीव समस्या के रूप में : युद्ध काल में संवैधानिक ढांचे का निर्माण सम्भव नहीं होता है। यही स्थिति 1931-45 के मध्य चीन में रही। जब प्रशान्त महासागर में चीन से सम्बन्धित प्रथम युद्ध मुकदन में सितम्बर 1931 में प्रारम्भ हुआ तो सम्पूर्ण चीन युद्ध से आतंकित हो गया। ऐसी स्थिति में न तो जनता और न ही सरकार के पास स्वशासन की ओर ध्यान देने की शक्ति बची थी। किन्तु जब युद्ध का प्रथम धक्का समाप्त हुआ तो कुमितांग दल सहित कई लोगों ने यह महसूस किया कि एक दलीय सरकार के स्थान पर संवैधानिक सरकार की स्थापना की जानी चाहिये ताकि सभी शक्तियों को संकट का सामना करने के लिए संगठित किया जा सका। 1932 में सिआन में प्रथम राष्ट्रीय संकट सम्मेलन में विधायनी युआन ने यह भी निर्णय लिया कि एक प्रारूप संविधान तैयार किया जाए जिसके अन्तर्गत सभी स्वतन्त्र प्रान्तों में राष्ट्रीय संविधान परिषद् के चुनाव के लिए तैयारी की जाए।

इसके बाद चीन में संविधानिक आन्दोलन तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम स्तर 1933 में प्रारम्भ हुआ जिसमें एक संविधान का निर्माण किया गया जो सम्पूर्ण युद्ध के प्रारम्भ होने तक (1937 तक) अस्तित्व में रहा। द्वितीय चरण युद्ध प्रारम्भ होने से युद्ध में विजय तक रहा। तीसरा चरण विजय के पश्चात् 1947 तक रहा।

प्रथम चरण के दौरान कुमितांग दल की केन्द्रीय कार्यकारिणी के प्रस्ताव के अनुसार 42 सदस्यों की एक समिति का गठन संविधान निर्माण करने के लिए किया गया। इस समिति ने तीन वर्ष के निरन्तर कार्य व विचार विमर्श के पश्चात् इस कार्य को पूरा किया। यह प्रारूप कुमितांग दल के पांचवे सम्मेलन को नानकिंग में 12 नवम्बर, 1935 को प्रस्तुत किया गया। इस कांग्रेस ने शीघ्र ही 1935 में राष्ट्रीय परिषद् का सम्मेलन आमन्त्रित करने का निर्णय किया। इस प्रारूप का सरकारी संस्करण राष्ट्रीय सरकार के द्वारा 3 मई, 1936 को राष्ट्रीय विज्ञप्ति में प्रकाशित किया गया तब से यह 'दोहरा पंचम प्रारूप संविधान' कहलाया।

किन्तु चीन में मतदान करवाना कोई सरल कार्य नहीं था। प्रारम्भिक सरकारी व्यवस्था गड़बड़ थी। स्थानीय अधिकारियों द्वारा जनगणना नहीं की गई थी। गाँवों तथा कस्बों के मतदाताओं का कोई रजिस्टर नहीं था। परिणामतः केन्द्रीय अधिकारियों के निर्देशों का पालन करने में स्थानीय अधिकारियों ने बार-बार देर की। अतः 1936 में राष्ट्रीय संविधान सभा का अधिवेशन आमन्त्रित नहीं किया जा सका। अतः अगले वर्ष फरवरी में राष्ट्रीय कार्यकारिणी ने दुबारा 12 नवम्बर, 1937 को अस्थाई तारीख के रूप में घोषित किया। किन्तु 7 जुलाई, 1937 में मार्कोपोलो पर आक्रमण ने महायुद्ध का प्रारम्भ कर दिया। राष्ट्रीय संविधान सभा के लिए प्रचार तथा तैयारियाँ समाप्त कर दी गई।

संविधानिक आन्दोलन के द्वितीय चरण में संविधान के लिए मांग बढने लगी तथा दोहरे पंचम प्रारूप संविधान की आलोचना बढ़ने लगी। 1938 में जनवादी राजनीतिक परिषद् ने संविधानवाद को प्रारम्भ करने के लिए एक संगठन बनाया। 1934 में सरकार ने संविधानिक कानून लागू करने के लिए एक तैयारी आयोग की नियुक्ति की। इस आयोग में विभिन्न राजनीतिक समूहों के 49 सदस्य थे। जिसका कार्य तथ्यों को इकट्ठा करना था। इसका अर्थ राष्ट्रव्यापी प्रचार के द्वारा संविधान के बारे में लोगों की राय जानना था।

संविधानिक आन्दोलन का तीसरा चरण जनवरी 1946 में चुगकिंग में राजनीतिक परामर्शदाता सम्मेलन के उद्घाटन से प्रारम्भ हुआ। इस सम्मेलन में साम्यवादी सहित सभी राजनीतिक दलों को आमन्त्रित किया गया था। इनका उद्देश्य विभिन्न दलों के दृष्टिकोण को समझकर राष्ट्रीय मामलों में विशेष रूप से साम्यवादियों से कोई समझौता करना था। इसका एक उद्देश्य राष्ट्रीय सभा का अधिवेशन आमन्त्रित करना था तथा द्वितीयतः दोहरे पंचम संविधान को दोहराना था। जिन मूल सिद्धान्तों के आधार पर संविधान को दोहराना था उनमें से कुछ निम्नलिखित थे: (1) जनता की स्वतन्त्रता को सीमित करने वाले नियमों को दोहराना, (2) आधुनिक व संसदीय प्रतिनिधि व्यवस्था की स्थापना, (3) मन्त्री मण्डलीय शासन की स्थापना, (4) प्रान्तों को अपने संविधान बनाने की स्वतन्त्रता। इन शर्तों को पूरा करने के लिए व्यवस्थापिका का निर्वाचित होना तथा प्रजातन्त्रीय व्यवस्था के अनुसार शक्तिशाली होना तथा कार्यपालिका का व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी होना भी आवश्यक था।

राजनीतिक परामर्शदाता सम्मेलन में दोहरे पंचम प्रारूप संविधान पर विचार करने के लिए कुछ नियमों का निर्धारण किया तथा जाँच के लिए एक समिति की स्थापना की।

यह समिति कई बार मिली किन्तु साम्यवादियों द्वारा इस आग्रह के कारण को सम्मेलन के सभी प्रस्ताव उसमें यथावत रखे जाएँ इसमें गतिरोध उत्पन्न हो गया। दूसरी ओर मार्च 1946 में कुमितांग की केन्द्रीय कार्यकारिणी की परिषद् की बैठक में एक प्रस्ताव पारित किया गया जिसमें राजनीतिक परामर्शदाता सम्मेलन द्वारा प्रस्तुत सभी सिद्धान्तों का खंडन कर दिया गया। अन्ततः इन सिद्धान्तों के बारे में समझौता हो गया। जिसके पश्चात् राष्ट्रीय संविधान परिषद् का अधिवेशन शीघ्र आमंत्रित करने का निर्णय ले लिया गया।

15 नवम्बर 1946 को 1744 सदस्यों की राष्ट्रीय संविधान सभा को आमंत्रित किया गया। इस समय बड़े पैमाने पर साम्यवादियों के साथ युद्ध चल रहा था। साम्यवादियों तथा प्रजातंत्रीय लीग के सदस्यों ने इस सभा का बहिष्कार किया।[22] 25 दिसम्बर 1946 को राष्ट्रीय सभा में नए संविधान को पारित कर दिया तथा 1947 के नववर्ष दिन के अवसर पर इसे लागू करने का निर्णय किया गया। यह भी निश्चय किया गया कि संविधानिक सरकार को प्रारम्भ करने के लिए प्राथमिक प्रयास भी प्रारम्भ कर लिये जाएँ।

1947 का संविधान : राष्ट्रीय सभा द्वारा बनाया गया संविधान आज भी फारमोसा में लागू है। इसमें 14 अध्याय 175 अनुच्छेद हैं। यह सनयातसेन के सरकारी पाँच शक्तियों, निर्वाचकों के चार अधिकारों तथा जनवादी सिद्धान्तों को अपना मूल दर्शन मानता है तथा 1946 में राजनीतिक परामर्शदाता समिति द्वारा प्रस्तुत सभी सिद्धान्तों को भी स्वीकार करता है। नवीन संविधान की अनिवार्य व्यवस्थाओं को इस प्रकार किया जा सकता है :—

वैयक्तिक अधिकारों व स्वतन्त्रता की सुरक्षा : अधिकार पत्र सभी वैयक्तिक स्वतन्त्रताओं व अधिकारों की गारंटी देता है। किन्तु इस प्रकार के विचार कि 'बिना कानूनी सम्मति के स्वतन्त्रता सीमित नहीं की जाएगी जो इसमें से हटा दिया गया है।

राष्ट्रीय सभा : राष्ट्रीय सभा की सर्वोपरी संस्था होगी जिसमें जनता की संप्रभुता का निवास होगा। इसके कार्य संविधान सभा के समान थे। यह राष्ट्रपति व उपराष्ट्रपति का निर्वाचन करती है संविधान से संशोधन करती है राष्ट्रपति अथवा उपराष्ट्रपति के विरुद्ध महाभियोग लगा सकती है तथा राष्ट्रीय विधेयक को प्रारम्भ करती है।

सरकार की संरचना : सरकार को पाँच शक्तियाँ अवश्य प्रदान की गई हैं किन्तु यह स्पष्ट नहीं किया गया कि सरकार का स्वरूप अध्यक्षात्मक होगा या संसदात्मक होगा। राष्ट्रपति का निर्वाचन छः वर्षों के लिए राष्ट्रपति सभा के द्वारा होता है तथा राष्ट्रपति व्यवस्थापिका युआन की सहमति से कार्यपालिका युआन के सभापति की नियुक्ति करता है। सामान्यतया राष्ट्रपति की शक्तियाँ अध्यक्षात्मक सरकार के शक्तिशाली राष्ट्रपति के समान हैं। कार्यपालिका संयुक्त उत्तरदायित्व के आधार पर कार्य करती है। विभागों अथवा

22. मार्च 1941 में चीन के वे दल जो धन बारूद अथवा शक्ति के अभाव में शोचनीय स्थिति में थे ने एक केन्द्री में वामोन्मुख दल चीन प्रजातंत्रीय दलों का संगठन बनाया। अर्द्ध संवैधानिक सरकार का प्रारम्भ होने पर इन दलों को प्रजातंत्रीय लीग के रूप में स्वीकार किया गया। इनमें से एक दल चीनी राष्ट्रीय समाजवादी कहलाया। जिसके नेता डॉ० दासेन चांग थे। इन्होंने राष्ट्रीय संविधान सभा की कार्यवाही की विस्तृत चर्चा 'दि थर्ड फोर्स इन चायना' न्यूयॉर्क 1952 [illegible]

विभाग मन्त्रियों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा कार्यपालिका सभापति की परामर्श पर की जाती है। व्यवस्थापिका द्विसदनात्मक है। इसके सदस्यों का निर्वाचन क्षेत्रीय व्यवसायात्मक प्रतिनिधित्व के आधार पर तीन वर्षों के लिए होता है तथा इनका पुनर्निर्वाचन हो सकता है तथा इनका प्रत्यावर्तन भी किया जा सकता है। न्यायिक विभाग न्याय व्यवस्था तथा संविधान की व्याख्या के लिये उत्तरदायी है। इसके सभापति तथा जजों की नियुक्ति गणराज्य के राष्ट्रपति द्वारा नियंत्रण विभाग (युआन) की सहमति से होती है। परीक्षा युआन की व्यवस्था पहले के समान ही रही। नियन्त्रण युआन का काम उच्च पदाधिकारियों की नियुक्ति की अनुमति देना महाभियोग लगाना तथा आर्थिक जांच पड़ताल करना है इसके सदस्यों का निर्वाचन छः वर्षों के लिए प्रांतीय सभाएं करती हैं।

मंत्रि मंडल उत्तरदायित्व : कार्यपालिका युआन गणराज्य के राष्ट्रपति की सहमति से व्यवस्थापिका के प्रस्तावों के विरुद्ध निषेधाधिकार का प्रयोग कर सकती है। किन्तु व्यवस्थापिका दो तिहाई बहुमत से यदि दुबारा उस प्रस्ताव को पारित कर दे तो निषेधाधिकार निरस्त हो जाता है। तब कार्यपालिका के अध्यक्ष को या तो वह प्रस्ताव स्वीकार करना होता है अथवा उसे त्यागपत्र देना होता है।

स्थानीय सरकार : केन्द्रीय व प्रांतीय सरकारों की शक्तियों की गणना कर दी गई है। प्रांत तथा हृसिन स्थानीय स्वशासी इकाईयाँ हैं प्रत्येक इकाई में लोकप्रिय सभा होती है। प्रांत का राज्यपाल तथा प्रदेश अथवा हृसिन का मैजिस्ट्रेट जनता के द्वारा निर्वाचित होता है। एक प्रांत अपने प्रशासन के लिए पृथक कानून का निर्माण भी कर सकता है।

राष्ट्रीय नीतियां : सुरक्षा, वैदेशिक नीतियां, राष्ट्रीय आर्थिक नीति, सामाजिक सुरक्षा, शिक्षा तथा संविधान में विशेष रूप से उल्लिखित प्रांतों के सीमा निर्धारण से सम्बन्धित नीतियों का संविधान में विशेष रूप से उल्लेख किया गया है। संधियों के पालन तथा संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के सम्बन्ध में विशेष निर्देश संविधान में दिए गए हैं।

संविधान में संशोधन व व्याख्या की पद्धति : संविधान में संशोधन या तो स्वयं राष्ट्रीय सभा के द्वारा किया जा सकता है अथवा व्यवस्थापिका युआन के प्रस्ताव पर राष्ट्रीय सभा की अनुमति से किया जा सकता है। संविधान की व्याख्या सम्बन्धी शक्ति न्यायपालिका युआन में निहित की गई है। किसी भी राष्ट्रीय अथवा स्थानीय कानून को न्यायपालिका युआन असंवैधानिक घोषित कर सकती है।[23]

मूलत : 1947 का संविधान एक प्रजातन्त्रीय अभिलेख है। इसके कुछ प्राविधानों में पर्याप्त कमियां तथा परस्पर विरोध हैं। इसका कारण विभिन्न दलों द्वारा किए गए समझौते के प्रयास हो सकते हैं। क्योंकि उनके परस्पर मतभेदों को राष्ट्रीय स्तर पर सुलझाने का कोई अवसर नहीं आ सका था। नई सरकार को संरक्षक सरकार को जो संरक्षक सरकार के स्थान पर स्थापित हुई शीघ्र ही चीन की मुख्य भूमि से फारमोसा में स्थानांतरित होना पड़ा।

राष्ट्रीय सरकार संक्रमण की स्थिति में : 1 जनवरी 1947 को जब यह संविधान लागू किया गया साम्यवादियों ने इसे अवैधानिक घोषित कर दिया क्योंकि साम्यवादियों

23 एक तत्कालीन चर्चा के लिए सोजेक गाड का लेख 'दि चाइनीज कोर्स्टी लो क्वटिली ट्यूशन' 'न्यूयार्क यूनीवर्सिटी रिव्यू (अप्रेल 1843) में देखिए।

द्वारा शासित प्रदेशों का प्रतिनिधित्व राष्ट्रीय सभा में नहीं था। किन्तु सरकार अपने निर्णय पर दृढ़ रही क्योंकि साम्यवादियों के साथ किसी प्रकार के समझौते की सम्भावना नहीं थी। कुमितांग दल ने अपनी संरक्षक दल की भूमिका को समाप्त कर चीन में संविधानिक सरकार की स्थापना करने की प्रक्रिया का निर्धारण तीन चरणों में किया। सर्वप्रथम संविधान से विरोध रखने वाले सभी कानूनों को समाप्त किया जाना चाहिये। द्वितीयतः राष्ट्रीय सभा तथा पाँचों विभागों से सम्बन्धित नियमों का निर्माण करना तथा सार्वजनिक अधिकारियों को वापिस बुलाने से सम्बन्धित नियम बनाना था। तृतीयतः सभा के सदस्यों तथा व्यवस्थापिका नियंत्रण युआन के सदस्यों के चुनाव करवाये जाने चाहिये थे।

18 अप्रेल 1947 में राष्ट्रीय सरकार में राज्य के आवयविक कानून में परिवर्तन कर शुरुआत की। इसका अर्थ यह नहीं था कि राजनीतिक संरक्षण का काल पूर्णतः समाप्त हो गया था तथापि इस परिवर्तन से सरकार में गैर कुमितांग लोगों को अवसर मिलने लगा। व्यवस्थापिका युआन तथा नियंत्रण की सदस्यता कर दिया गया ताकि अन्य राजनीतिक दलों को भी उसमें सम्मिलित किया जा सके। कुमितांग दल की केन्द्रीय कार्यकारिणी परिषद् ने सर्वोच्च सुरक्षा परिषद् बनाने का निर्णय किया। इन 40 सदस्यों में से 17 कुमितांग दल के, 4 निर्दलीय, 4 युवक चीनी दल तथा 4 समाजवादी प्रजातंत्रीय थे तथा 71 स्थान साम्यवादियों तथा प्रजातंत्रीय लीग के प्रतिनिधियों के लिये रखे गए थे। इस राज्य परिषद् के तत्परता से एक नवीन मंत्री मण्डल की स्थापना की जिसमें अनेक गैर कुमितांग मंत्रियों को सम्मिलित किया गया था। सैनिक मंत्रालय समाप्त कर दिया गया तथा एक अन्य राष्ट्रीय सुरक्षा मंत्रालय का निर्माण किया गया। सनयित्सु जो प्रथम युवक संगठन था समाप्त कर दिया गया तथा उसके स्थान पर दलीय संगठन के अन्तर्गत युवा विभाग का निर्माण किया गया।

राष्ट्रीय सभा का चुनाव 21 नवम्बर 1947 की शुरुआत में तीन दिन में करवाया गया। 19 अप्रेल को राष्ट्रीय सभा ने च्यांग काई शेक को गणराज्य का अध्यक्ष बना लिया। 8 मई को नवीन व्यवस्थापिका युआन का सत्र आमंत्रित किया गया तथा प्रसिद्ध भू-गर्भ शास्त्री वेंग वेन हो को कार्यपालिका युआन का अध्यक्ष निर्वाचित किया गया। तत्पश्चात् उसने अपने मंत्री मंडल की सूची प्रस्तुत की जिसे तत्परता के साथ स्वीकार कर लिया गया। इस प्रकार बीस वर्ष से स्थित कुमितांग दल की संरक्षक सरकार का अन्त हुआ।

नई सरकार का जन्म भयंकर गृह-युद्ध के मध्य हुआ जिसने अन्ततः इसके अस्तित्व को चुनौती दी। इतना कहना पर्याप्त होगा कि इस संविधान को लागू होने का अवसर ही नहीं मिला। एक वर्ष से पहले ही इसे चीन की मुख्य भूमि से उखाड़ फेंका गया। अतः इसके अनेकों प्रावधान अनावश्यक हो गए तथा इसके कई अभिकरण नाममात्र को रह गए। अतः संवैधानिक दृष्टि इन प्राविधानों की आलोचना करना यहाँ उचित नहीं है। 1948 की सरकार का जो ऊपरी ढाँचा है वह जिस प्रकार द्वीप की सरकार को प्रभावित करता है उसका फारमोसा की सरकार के शापक के अन्तर्गत अगले अध्याय में किया जाएगा। यहाँ यह कहना ही पर्याप्त होगा कि फारमोसा में सरकार ने काफी तरक्की की है। उचित बजट, उचित भूमि सुधार, नियंत्रित मूल्य प्रजातंत्रीयकरण के वास्तविक प्रयास आदि संदर्भ में में पर्याप्त सफलता प्राप्त की गई है। किन्तु इन सबका श्रेय मुख्य भूमि से हटने से पहले

1948 में कुछ समय के लिये चीन में संवैधानिक सरकार के अनुभव को नहीं दिया जा सकता है। क्या इस परिवर्तित व्यवस्था का आधार परिवर्तित विचार है ? क्या फारमोसा के निर्वाचित अधिकार प्रदत्त सत्ता का दबाव कर सकते हैं जबकि उनके निर्वाचन क्षेत्र साम्यवादी शासन के अन्दर जा चुके हैं।

चीन के संरक्षक सरकार से, कुछ समय के संवैधानिक तन्त्र के पश्चात् फारमोसा में दीर्घ संकट के मध्य चल रही कुमितांग सरकार में कुछ निरंतरता लक्षित होती है। सम्पूर्ण प्रक्रिया के दौरान च्यांगकाई शेक प्रभावशाली रहे। चाहे यह उचित हो अथवा अनुचित तथापि राष्ट्रीय सरकार की सम्पूर्ण प्रक्रिया च्यांगकाई शेक के व्यक्तित्व, विचार तथा जीवन से पृथक नहीं की जा सकती है।

च्यांगकाइ शेक की राजनीतिक विचार धारा :

च्यांगकाई शेक विदेशों में अपने 'जनरलिस्सियो' पद से अधिक प्रचलित है।[24] वह अपनी पत्नी की तरह पद्धति पर अधिक विश्वास करता है तथा अपने युवाकाल में वह पश्चिमी युद्ध विज्ञान में पर्याप्त पटु था। संभवतः शायद उन्हीं पश्चिमी विशेषताओं के कारण तटस्थ एशियाई दर्शक राष्ट्रीय सरकार की नियति के बारे में प्रोत्साहित करने वाले विचार नहीं करते हैं। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि पश्चात्य दर्शक चीनी विशेषताओं को समझने में असमर्थ हैं जबकि च्यांगकाई शेक मूलतः चीनी है।

च्यांगकाई शेक की सैनिक सफलताएँ तथा राजनीतिक कार्य तथा असफलताएँ विश्व को ज्ञात हैं। किन्तु वे अब इतिहास की बातें हो चुकी हैं तथा सरकार व शासन व्यवस्था से सम्बन्धित पुस्तक में उसकी विवेचना करना आवश्यक नहीं है। दूसरी ओर च्यांगकाई शेक के बौद्धिक योगदान पर पश्चिम में बहुत कम ध्यान दिया गया है। यह संयोग मात्र नहीं है कि च्यांगकाई शेक का राजनीतिक व्यक्तित्व तथा विचार चीनियों को अधिक स्पष्ट हैं।

स्वयं साम्यवादियों ने समय-समय पर उसके कुछ विचारों को लेकर उसके दर्शन को विकृत करने तथा उसे अपमानित करने का प्रयास किया है। अधिकांश गैर मार्क्सवादी पाश्चात्य प्रेक्षकों के अनुसार यदि च्यांगकाई शेक को प्रजातन्त्र का समर्थन करने वाला भी माना जाए तो वह अपने महान गठबंधन के प्रतिक्रियावादी पक्ष में, नई व्यापार नीति वाले अमेरिकी राष्ट्रपति तथा ब्रिटेन के अवसरवादी प्रधानमंत्री से कहीं ज्यादा दक्षिणपंथी था। जबकि च्यांगकाई शेक न तो ऐसा पूँजीवादी नेता साबित होता है जिसने विदेशी स्वार्थों को पूरा किया हो तथा न ही वह ऐसे युद्धरत सामन्तों के रूप में स्पष्ट होता है जिसने अपना कल्याण किया हो। इस ज्ञान से पश्चिमी प्रेक्षक स्तंभित हो जाते हैं। वे उस समय यह भूल जाते हैं कि च्यांगकाई शेक सनयातसेन का शिष्य था जो एक विशिष्ट प्रकार के

24. च्यांग काई शेक सैनिक समिति का अध्यक्ष, दल का अध्यक्ष तथा फिर राष्ट्रपति भी बना। वस्तुतः उसका वास्तविक नाम च्यांग चीह शीह था जिसे पश्चिमी प्रेस ने च्यांग काई शेक के नाम से सम्बोधित किया। विभिन्न लेखों व भाषणों के बावजूद च्यांग काई शेक की सम्पूर्ण जीवनी नहीं है। एक सरकारी तौर पर लिखी गई जीवनी एक राष्ट्रवादी सार्वजनिक संबंधों के विशेषज्ञ द्वारा लिखी गई (जो अब जापान में चीनी गणराज्य का राजदूत है) इसके अतिरिक्त हालिंगटन के टोंग की रचना 'च्यांग काई शेक : सोल्जर एण्ड स्टेट्समेन' शंघाई 1937 है। एक चतुर किन्तु आलोचनात्मक विवरण थियोडर एच व्हाइट तथा एनाली जैकोबी द्वारा थन्डर आउट ऑफ चायना, न्यूयार्क 1946 में दिया गया है।

प्रजातंत्र में विश्वास करता था। यह प्रजातंत्र जिन सिद्धान्तों पर आधारित है वे न तो मार्क्सवादी थे न अमेरिकी अपितु शुद्धतम रूप में चीनी थे।

च्यांग व सनयातसेन में यही अन्तर है कि उसने मन की विचारधारा को सीमित कर दिया। सनयातसेन सम्पूर्ण विश्व को अपना क्षेत्र मानता था तथा सम्पूर्ण समष्टि को ध्यान में रखता था। उसने अवसर मिलने पर सन्त थॉमस एक्वीनाज तक का मुकाबला किया होता जबकि च्यांग ऐसा नही कर सकता था।

सनयातसेन अपने विचार का प्रारम्भ सभ्यता के प्रारम्भ से करता है वह प्रकृति के स्वरूप की व्याख्या करता है, समाज के स्वरूप को देखता है तथा एक चिकित्सक के रूप में समाज की बुराई को समझने का प्रयास करता है जबकि च्यांग मात्र सौ वर्ष पुराने चीन पर ही अपना ध्यान केन्द्रित करता है। च्यांग की प्रथम रचना 'चायनीज् डेस्टिनी' है। यह महत्व की बात है कि पुस्तक चुंगकिंग में 1943 प्रकाशित हुई। किन्तु इस पुस्तक के अंग्रेजी संस्करण को प्रकाशित करने में राष्ट्रीय सरकार ने जानबूझकर देर की तथा यह 1947 में प्रकाशित हुआ। यह पुस्तक पाश्चात्य प्रेक्षकों को कुंठित करने वाली है। कुछ अमेरिकियों को तो यह कटु भी लगती है।[25]

च्यांग के विचारों को समझने के लिए यह जानना आवश्यक है कि वह एक ऐसा राजनीतिक दार्शनिक नहीं है जैसा सनयातसेन था। वह एक सक्रिय कार्यकर्ता था जो अत्यधिक आवश्यकता पड़ने पर ही रचनात्मक विचार की ओर उन्मुख होता था। प्रयोजनात्मक दृष्टि से च्यांग के विचार, उसके सम्मुख जो समस्यायें थी उनको प्रतिबिंबित करते हैं। 1920 में वह क्रान्ति का नेता था। 1930 में उसने देशभक्त के रूप में देश को एकताबद्ध करने की कोशिश की। 1940 में उसने चीन को विश्वशक्ति के रूप में प्रस्तुत करने की कोशिश की।

"चायनीज डेस्टिनी" में पूंजीवादी देशों द्वारा चीन के शोषण के प्रकाश में उसने चीनी क्रान्ति की चर्चा की है। इस समय चीनी क्रान्ति की चर्चा सनयातसेन के दृष्टिकोण से की गई। सर्वप्रथम यह चीनियों की विदेशियों के विरुद्ध संघर्ष था। मंचू जो पुराने साम्राज्य के संचालक थे उनके विरुद्ध तथा यूरोपीय तथा अमेरिकी विदेशियों के विरुद्ध भी संघर्ष था जो नवीन विश्वव्यापी दमनपूर्ण आर्थिक व्यवस्था का संचालन करते थे। च्यांग ने अपने राष्ट्रवाद में ब्रिटेन, फ्रांस, रूसी, अमेरिकियो द्वारा की गई असमान सन्धियों का खण्डन किया। मात्र इस रचना के छठे अध्याय में वह उन निर्णयों पर पहुँचा जिन्हे अमेरिकी भविष्य के लिए उचित समझते हैं। जैसे-जैसे च्यांग-काई-शेक वृद्ध होने लगा वह अधिक सादा तथा अनुदारवादी दार्शनिक बनता गया। उसकी 'क्रान्ति तथा पुनर्गठन की समस्याओं' पर रचना पूर्णतः चीनी भावना तथा पश्चिम के लिए अपरिचित है तथा

25. अंग्रेजी में तीन अनुवाद उपलब्ध है। प्रथम फिलिप जेफे का। चाइनीज डेस्टिनी एण्ड चाइनीज इकोनोमिक थॉट, रॉय प्रकाशन न्यूयॉर्क 1947 है जो अत्यधिक कटु व तीखी आलोचना है। एक सरकारी विवरण वांग चुंग हुई (अनुवादक) द्वारा चाइनाज डेस्टिनी, है जिसमें लिन युतांग द्वारा भूमिका लिखी गई है (दि मैकमिलन कम्पनी, न्यूयॉर्क, 1947) तृतीय अनुवाद वाग शॅग चीह को 'दि डेस्टिनी ऑफ चायना बाई जनरलिसीमो च्यांग-काई-शेक, सिंगापुर (1946) है।

साथ ही यह उस विश्व के लिए पूर्णतः विचित्र थी जिसकी कल्पना रूजवेल्ट तथा चर्चिल ने इतने विश्वस्त ढंग से तेहरान तथा माल्टा सम्मेलनों में की थी।

वस्तुतः च्यांग-काई-शेक चीनी साहित्य में उपलब्ध नैतिक ज्ञान की ओर उत्तरोत्तर उन्मुख होता गया। वह अपने समकालीन यूरोप तथा अमेरिकी विश्व को पीछे छोड़ चुका था। किन्तु पश्चिमी सचिवों ने सर्वदा उसके विचारों को अस्पष्ट सामान्यीकरणों में प्रस्तुत किया जिससे ऐसा लगता था मानों वह भी टू मेन, आदिनावर, चर्चिल अथवा आइजनहावर के विचारों के प्रजातन्त्र में विश्वास करता था। किन्तु यदि इन विचारों को च्यांग-काई-शेक के दृष्टिकोण से देखा जाए तो यह विरोधाभास है। यदि लोग ऐसा महसूस कर लेते हैं तो उचित है यदि नहीं देख पाते हैं तो उन्हें प्रतीक्षा करनी चाहिए क्योंकि महत्वपूर्ण समस्या कहीं और ही विद्यमान है। च्यांग ने अपने लेखों तथा भाषणों में जो कुछ लिखा है वह चीन के लिए वस्तुतः महत्वपूर्ण है।

1930 में पूर्वार्द्ध से ही च्यांग को यह विचार चिन्तित करने लगा था कि जिन साम्यवादियों को वह भ्रष्ट समझता था वे जिस उत्साह का प्रदर्शन करते थे वह उसके सैनिक प्रदर्शित नहीं करते थे। बाद में वह जापानियों की दोषपूर्ण नीतियों के बावजूद उनकी सैनिक तथा आर्थिक नीतियों की सफलता से वह बड़ा दुखी हुआ। उसकी राजनीति विचारधारा का मूल आधार मानव व्यक्तित्व था अत उसने उस मानव व्यवहार की आचार संहिता को अपने विचार का केन्द्र बनाया जो मनुष्य के राजनीतिक निर्णयों के व्यावहारिक तथा तत्वदर्शन के पक्षों को स्पष्ट कर सके।

एक राष्ट्र के व्यस्त नेता के लिए महायुद्ध तथा गृहयुद्ध के समय अपने तत्वदर्शन का निर्माण करना कोई सरल कार्य नहीं है। च्यांग चाहे हमारे दृष्टिकोण से सफल नहीं हुआ हो किन्तु इस सम्बन्ध में स्वयं उसका दृष्टिकोण अधिक महत्वपूर्ण है। उसके कई उत्तर धर्म तथा राजनीति को मिश्रित करते हैं। इस दृष्टिकोण के अध्ययन की जितनी आवश्यकता पश्चिमी छात्रों व लेखकों के लिए 1930 में नहीं जितनी 1950 में है।

च्यांग नेहरू तथा योशिदा से अधिक एशियाई है। वस्तुतः वह एशिया के कई नेताओं से अधिक एशियाई है। च्यांग अभी भी अपना ध्यान वैयक्तिक भ्रष्टहीनता पर केन्द्रित करता है। वह 19वीं शताब्दी में जनरल त्सेंग-कू-फान द्वारा लिखी गई रचनाओं से उद्धरण देता है। यह वही प्रभावशाली व्यक्ति था जिसने चीन के नागरिक स्वयं सेवकों को प्रोत्साहित किया तथा उन्हें चीनी साम्राज्य को ताईपिंग विद्रोहियों से बचाने के लिए प्रेरित किया। सम्भवतः ऐसा दृष्टिकोण च्यांग की शक्ति व दुर्बलता दोनों के लिए उत्तरदायी है तथा उसकी सफलओं व असफलताओं दोनों का कारण हैं।

राष्ट्रवादी पतन : एक तथ्य स्पष्ट है। 1949 में राष्ट्रवादी चीन के पतन का कारण च्यांग-काई-शेक ही स्पष्ट नहीं कर सकता है। न ही मात्र कुमितांग दल की दुर्बलताएँ चीन की मुख्य भूमि से उसके पतन को स्पष्ट करती हैं। क्योंकि दो महायुद्धों के मध्यकाल में तथा द्वितीय महायुद्ध के दौरान सभी पाश्चात्य उदारवादी तथा अनुदारवादी यह मानते हैं कि यूरोप में एकमात्र चैकोस्लोवाकिया में प्रजातन्त्र सफल रहा था। किन्तु अन्ततः चैकोस्लोवाकिया में भी तानाशाही की स्थापना हुई।

सौभाग्यवश यह भी प्रमाणित नहीं किया जा सकता है कि राष्ट्रवादी सरकार के

पतन में सोवियत राजनीतिज्ञों का भी हाथ था। परिणामतः यह धारणा प्रबल बनती है कि राष्ट्रवादियों के पतन में संयोजन व संयोगों का भी हाथ था।[6]

चीन की व्यापक क्रान्ति के नवीनतम शिखर च्याग-काई-शेक तथा उसका कुमितांग दल बने। माओत्सतुंग चीनी साम्यवादी तथा सोवियत यूनियन बच कर आने वाले सौभाग्यशाली लोग सिद्ध हुए। इससे पहले ताइपिग विद्रोहियों ने बॉक्सर तथा बौद्धिक सुधारवादी तथा सौ दिन आन्दोलनकर्ताओ ने इस श्रेय को प्राप्त करने की कोशिश की थी? स्वयं डॉ० सन जिसने इस शक्ति को एक दक्ष क्रान्तिकारी के समान प्रयुक्त करने की कोशिश की, वह भी इसे राजनीतिक शक्ति में बदलने में असफल रहा।

राष्ट्रीय सरकार की समाप्ति का कारण पृथक रूप से ढूँढना कठिन है। यदि कोई राजनीतिक वैज्ञानिक एक समाज की सम्पूर्ण क्रान्ति का कारण मात्र राजनीतिक कारकों में ढूँढता है तो वह बुद्धिहीनता का कार्य है। क्रान्ति को पहचान सरकार में परिवर्तन होता है तथा उसका दबाव राजनीति पर भी पड़ता है क्रान्ति पर कोई अनुशासन लागू नहीं होता है।

यह आशा की जाती है कि राष्ट्रीय सरकार का प्रस्तुत विवरण सम्पूर्ण चित्र के एक कोण पर प्रकाश डालता है। राष्ट्रीय सरकार के साथ प्रारम्भ से ही राजनीतिक सिद्धान्तों में निहित कमजोरी थी। कितना ही अच्छा शिक्षक उपलब्ध हो अथवा न हो प्रजान्त्र प्रजातन्त्रीय माहौल में ही सीखा जा सकता है। यह न केवल वैय्याकरण के विपरीत है अपितु अतार्किक भी है। स्वयं अमेरिकी भी अभिजात वर्ग द्वारा संरक्षण के प्रति संशयपूर्ण हैं। अमेरिकियों के सामने जापान में वही उभयपक्षी स्थिति प्रस्तुत हुई जो चीन में सन तथा च्यांग के सामने उत्पन्न हुई थी फिर भी अमेरिकियों ने विजयी पक्ष की संरक्षक सरकार की स्थापना की तथा जापानियों के तानाशाही राजतन्त्र के स्थान पर प्रजातन्त्र की शिक्षा प्रदान की।

फिर भी युद्धोत्तर कालीन जापान में अमेरिकी तथा राष्ट्रवादी चीन मे कुमितांग दल गलत ढंग से शक्ति का प्रयोग करने के उत्तरदायी है। कुमिताग दल ने चीन में सरक्षक के रूप में भूमिका निभाई किन्तु जब प्रतियोगिता का समय आया तो वह मात्र एक सामान्य दल के समान कार्य करने में असमर्थ रहा। यह बताया गया है कि सरकार में वैयक्तिक नेतृत्व, गुटबाजी तथा भ्रष्ट प्रशासन के सभी प्रयास प्रस्तुत थे। इन दोषों के अतिरिक्त उन लोगों में आवश्यकता से अधिक आत्मविश्वास था।

जहाँ तक अन्य सरकारों के सम्बन्ध का प्रश्न है पड़ौसी राष्ट्रीय राज्यों के सन्दर्भ में सोवियत रूस को उत्तरदायी माना जा सकता है जिसने अपनी अनेको अन्य प्रतिज्ञाओं की तरह एक और प्रतिज्ञा को तोड़ा था। इस प्रकार चीनी सरकार की अपनी अक्षमता के साथ-साथ सम्पर्क वाली अन्य सरकारें भी उसकी प्रतिष्ठा को बढ़ाने में सहायक नहीं हुई। 14 अगस्त 194` में सूंग मोलतोव समझौते में रूस ने यह आश्वासन दिया था कि 'चीन को नैतिक समर्थन देगा तथा उन्हें सैनिक तथा अन्य सहायता देगा यह सम्पूर्ण

26. ये निष्कर्ष मेकगविलोक की महत्वपूर्ण पुस्तक सोवियत पॉलिसी इन दि फारईस्ट 1944–1951 लन्दन न्यूयार्क एण्ड टोरंटो 1953 मे प्राप्त किये गये है।

सहायता देगा यह सम्पूर्ण सहायता रूस राष्ट्रवादी सरकार को चीन की केन्द्रीय सरकार मानकर देने वाला था।' प्रस्तुत शब्दों को रेखांकित रूस द्वारा जापान के समर्पण के पश्चात् मंचूरिया में उठाए गए कदम के बाद किया गया था।

चीन में कुमितांग दल की सरकार के पतन में अमेरिकियों का क्या हाथ रहा इसके बारे में अमेरिकी इतिहासकार अभी से कोई निर्णय नहीं दे सकते हैं। किन्तु अमेरिका के रिपब्लिकन व डेमोक्रेट लोग इतिहासकारों से कहीं अधिक धैर्यहीन हैं क्योंकि वे यह इस भाँति वाद-विवाद में संलग्न हैं मानों पोटोमेक के किनारे पर लिए गये निर्णय ही राष्ट्रवादी चीन के भाग्य के निर्णायक हुए या नहीं हुए।

यह सम्भव है कि राष्ट्रवादी चीन के पतन में संयुक्त राज्य अमेरिका का योगदान वर्ष बीतने के साथ-साथ बढ़ता जाएगा। तथापि 1947, 1948 अथवा 1949 में किसी भी अनुदार अथवा उदार व्यक्ति ने इस मान्यता के बारे में कोई सन्देह प्रकट नहीं किया था कि अमेरिका का हस्तक्षेप राष्ट्रवादी सरकार को मजबूत नहीं बनाया जाएगा। चीन के साम्यवादी हो जाने के सन्दर्भ में अमेरिकियों में मतभेद निम्नांकित प्रश्नों पर उत्पन्न हुए हैं कि कितनी सहायता उचित थी? कितना हस्तक्षेप? उसका मूल्य कितना होता? सहायता किस प्रकार की तथा किसे देनी चाहिये थी?[27]

तथापि ये मामले अन्तर्राष्ट्रीय उद्देश्य के लिए कूटनीति पर छोड़ दिये जाने चाहिए तथा यह चर्चा भविष्य की नीति की रूपरेखा का निर्धारण करने के लिए ही की जानी चाहिए। कुछ ऐसे मामले हैं जिनका समाधान मात्र बुद्धिमता से नहीं किया जा सकता है नहीं किया जा सकता है फिर निकटभूत में घटित घटनाओं के लिए और भी कठिन है जिनसे सम्बन्धित साहित्य गुप्त प्रलेखों व सरकारी कागजों में छुपा होता है ये मामले कुछ व्यक्तियों के जीवन से भी सम्बन्धित हो सकते हैं। अतः हर्ले, वेदेमेयर, रिटवेल तथा मार्शल जैसे जनरलों का विश्लेषण मात्र बौद्धिक स्तर पर उसी प्रकार नहीं किया जा सकता है जिस प्रकार ऐतिहासिक व्यक्तियों अथवा राजनीतिक दर्शनों की चर्चा में किया

27. इस पुस्तक के एक सहयोगी लेखक का विचार है कि अमेरिका चीन में जो कुछ कर रहा था उसे मापने की स्थिति में था। देखिये पॉल एम. ए. लिनवर्गर की 'आउट साइड प्रेशर्स ऑन चाइना 1945–50' दि अनाल्स ऑफ अमेरिकन एकेडमी ऑफ पॉलिटिकल एण्ड सोश्यल साइंस फिडफिया को प्रस्तुत रिपोर्टों में है। दूसरा लेखक जो स्वयं को चीनी मामले का विशेषज्ञ नही मानते है इस पुस्तक की कुछ बातों से असहमति व्यक्त करता है। उनके विवाद में पड़े बिना इतना कहना पर्याप्त होगा कि उसका विचार यह है कि अमेरिका द्वारा अत्यधिक हस्तक्षेप का अर्थ बड़े पैमाने पर सैनिक उत्तरदायित्व स्वीकारना था। यह असम्भव व अवांछनीय भी था। इस प्रकार चीन की क्रान्ति में अमेरिका का योगदान मात्र सीमित था।

जा सकता है।[28] एक दशाब्दी एक पीढ़ी अथवा एक शताब्दी के बाद ही अमेरिकन लोग चीन के राष्ट्रवादी पतन के सन्दर्भ में अमेरिका के योगदान का मूल्यांकन कर सकेंगे।

इस समय चीन व अमेरिका दोनों के सम्मुख मूल समस्या दो चीनों की है। क्योंकि इस फारमोसा में चीन की राष्ट्रवादी सरकार है तथा चीन की मुख्य भूमि पर साम्यवादियों की सरकार है तथा दोनों के मध्य सैद्धान्तिक मतभेद पर्याप्त विस्तृत हैं।

□□□

28. राष्ट्रवादी चीन के पतन के पश्चात् अमेरिका की नीति का एक पक्ष चीन पर विदेश विभाग द्वारा प्रकाशित श्वेत पत्र में दिया गया जिसे यूनाइटेड स्टेट्स रिलेशन्स विद चाइना विद स्पेशल रेफरेन्स टू दि पीरियड 1944–1949 कहा जाता है। यह विदेश विभाग प्रकाशन में सम्भाव 3572 सुदूरपूर्व श्रृंखला 30, सार्वजनिक मामलात विभाग द्वारा 1949 में प्रेषित किया गया। तीन वर्ष पश्चात् इस विभाग का अन्य पक्ष मेकारन उपसमिति द्वारा इन्स्टीट्यूट ऑफ पैसेफिक रिलेशन्स के बारे में की गई सुनवाई के प्रकाशन से प्रस्तुत हुआ। दोनों ही प्रलेख चीन में पतन के निहित कारणों तथा अमेरिका के सम्मुख नीति सम्बन्धी विकल्पों पर विचार करने से परे दिखते हैं। इस पुस्तक को लिखे जाते समय यद्यपि इस विषय पर विद्वत कार्य प्रारम्भ हो गए थे। इस प्रकार का अथक प्रयास जो पर्याप्त निष्पक्ष तथा प्रभावशाली लगता है हर्बर्ट फैस का दि चाइना टेंगल : दि अमेरिकन एफर्ट इन चाइना फ्रोम पर्ल हार्बर टू दि मार्शल मिशन, प्रिंसटन 1953 है। इस तथ्य से विशेष हानि नहीं हुई है कि जब ये सब घटनाएं हुई उस समय डॉ. फैस विदेश विभाग में थे उनके इस सरकारी सम्बन्ध के परिणामस्वरूप वे उन कई लोगों से साक्षात्कार कर सके जिन्होंने इस सम्पूर्ण कार्यक्रम में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। वह स्वयं चीनी नीति के लिए उत्तरदायी नहीं थे तथा उनका पूर्णतः बौद्धिक दृष्टिकोण को लेकर या फिर चाहे वह स्पेन की कहानी पर्ल हार्बर अथवा चीन की कहानी क्यों न हो।

अध्याय 8

चीन की फारमोसा में राष्ट्रवादी सरकार

चीन की मुख्य भूमि पर साम्यवादी सरकार की स्थापना के पश्चात् भी चीन की राष्ट्रवादी सरकार फारमोसा में बनी रही। यह फारमोसा 50 वर्ष तक जापान के नियन्त्रण में बना रहा था।[1] तथा सम्पूर्ण 20वीं शताब्दी में मात्र चार वर्ष 1945-49 में यह चीन के अन्तर्गत रहा था। (फारमोसा नाम जो इसे पुर्तगालियों ने दिया था अब प्रायः सभी पश्चिमी लेखकों के द्वारा स्वीकारा जाता है)। इस प्रकार राष्ट्रवादी चीन अपने घर में भी है व निर्वासित भी है। यदि तैवान को चीन का भाग माना जाए तो राष्ट्रवादी सरकार चीन के एक छोटे किन्तु सम्पन्न अंश पर जिसे 'स्वतन्त्र भूमि का' नाम दिया जाता है चीन में ही है। किन्तु यदि तैवान को चीन से बाहर माना जाए तो चीनी राष्ट्रवादी निर्वासित की जिन्दगी बिता रहे हैं।

दो मूल बातों पर च्यांग काई शेक तथा माओत्सेतुंग सहमत हैं। प्रथम चीन व फारमोसा एक ही राजनीतिक इकाई हैं। द्वितीयतः सम्पूर्ण चीन पर जिसमें फारमोसा भी शामिल है, एक ही सरकार होनी चाहिये। किन्तु इसके पश्चात् उनके मतभेद प्रारम्भ हो जाते हैं। माओ का दावा है कि मात्र उनकी ही सरकार चीन की एकमात्र सरकार है। जबकि च्यांग का विचार है कि नैतिकता के आधार पर तथा दुनिया के सम्मुख उसी की सरकार सम्पूर्ण चीन की प्रतिनिधि है। इस प्रकार जब यह पुस्तक लिखी गई दो चीन विद्यमान थे तथा निकट भविष्य में एक के द्वारा दूसरे को समाप्त करने की कोई सम्भावना नहीं थी। वस्तुतः लोग यह सम्भावना व्यक्त करते हैं कि आने वाले कई वर्षों तथा दशाब्दियों तक दोनों चीन बने रहेंगे। शांति अक्सर गत युद्ध द्वारा छोड़े गए कई विकल्पों का सम्मिश्रण होती है जिसमें कई विवादों का समाधान नए युद्ध के प्रारम्भ होने पर ही होता है। दुर्भाग्यवश जो लोग एक नये युद्ध की ओर आशापूर्ण ढंग से देखते हैं वे भूल जाते हैं कि अगला युद्ध स्वयं कई ऐसे विवाद छोड़ सकता है जिनके समाधान के लिये फिर एक युद्ध की आवश्यकता प्रतीत हो।

यदि इस स्थिति के सकारात्मक पक्ष की ओर देखा जाए तो यह एक बड़े भाग्य की बात थी कि चीन का एक भाग साम्यवाद के विपरीत प्रयोग व विरोध के रूप में गैर साम्यवादी सरकार के लिये छोड़ दिया गया इस प्रकार चीन को परस्पर विरोधी राजनीतिक प्रयोगों से लाभ उठाने का मौका मिला है। उसे राष्ट्रों की संस्था में दोहरा प्रतिनिधित्व प्राप्त है तथा वह मास्को व वाशिंगटन दोनों राष्ट्रों के समूह का सदस्य है। जिस भी समूह की विजय होती है एक चीन अवश्य विजयी होगा। यद्यपि यह बौद्धिक दृष्टिकोण है किन्तु

1. देखिये पृ. 80,420

कई चीनियों को यह स्वीकार्य नहीं है। चीनी राष्ट्रवादी अपने पतन से असंतुष्ट हैं तथा पुनः सत्ता प्राप्त करना चाहते हैं। जबकि साम्यवादी चीनी फारमोसा प्रश्न का ही निबटारा करना चाहते हैं।

राष्ट्रवादियों का मुख्य चीन से पलायन

जब राष्ट्रवादी सरकार की मुद्रा सेना सरकार तथा आत्मबल एक साथ नष्ट हुए तब राष्ट्रपति च्यांग काई शेक ने स्वयं को राष्ट्रपति पद से वियुक्त करने की घोषणा की तथा वह 21 जनवरी 1949 को हंगचू चला गया। उप-राष्ट्रपति ली त्सुंग जेन कार्यवाहक राष्ट्रपति बना। बाद की घटनाएँ इस बात को साक्षी है कि च्यांग द्वारा शक्ति से पलायन ने उसे पुनः शक्ति प्राप्त करने लायक बनाया तथा ली कभी भी कार्यवाहक राष्ट्रपति से अधिक नहीं बन सका।

च्यांग ने स्वेच्छापूर्वक राजनीति से अवकाश लेकर बाद में और अधिक शक्तिशाली बन कर सत्ता प्राप्त करने की विधि का प्रयोग इससे पहले भी किया था। उसके द्वारा अवकाश ग्रहण करने की परिस्थितियाँ पूर्णतः स्पष्ट हैं। चीनी साम्यवादी दल ने अष्टसूत्रीय योजना के आधार पर समझौता करना चाहा था। इनमें से एक सूत्र साम्यवादियों द्वारा घोषित युद्ध अपराधियों की गिरफ्तारी तथा उन पर मुकदमा चलाना भी था। यह सूची प्रायः सभी प्रमुख राष्ट्रवादी नेताओं तथा उनसे सहानुभूति रखने वाले लोगों के नामों को निहित करती थी अतः च्यांग के लिये साम्यवादियों के हाथों गिरफ्तार हो जाना निश्चित था। यह साम्यवादियों द्वारा वार्ता प्रारम्भ करने की प्रारम्भिक शर्त थी। पेकिंग तथा तियन्तीन का साम्यवादियों के हाथों पतन हो चुका था।

राष्ट्रवादियों का प्रस्ताव था कि पहले युद्ध विराम घोषित किया जाए उसके बाद वार्ता के लिये दोनों पक्ष प्रतिनिधि मंडलों की नियुक्ति करें। जब कि चीनियों ने अमरीकी हस्तक्षेप को अन्यायपूर्ण बताते हुए पहले शांति वार्ता प्रारम्भ करने के पश्चात् युद्ध विराम घोषित करने का प्रस्ताव किया। साम्यवादियों द्वारा किसी प्रकार का समझौता करने की कोई संभावना नहीं थी फिर भी प्रयास करना आवश्यक था। इसके लिये च्यांग का पद से मुक्त होना आवश्यक था तथा ली ने तत्परता से च्यांग का स्थान ग्रहण किया।

जनवरी 24 को ली ने मार्शल ला समाप्त कर दिया तथा राजनीतिक बन्दियों की रिहाई तथा गुप्त राजनीतिक गतिविधियों की समाप्ति की। इसी समय कुमितांग की केन्द्रीय राजनीतिक परिषद् ने राष्ट्रीय सरकार का आफिस नानकिंग से कैंटन ले जाने का निश्चय किया। राष्ट्रवादियों ने बड़े पैमाने पर पलायन प्रारम्भ किया। 15 वर्ष पूर्व साम्यवादियों के उद्देश्यपूर्ण पलायन की तुलना में राष्ट्रवादियों का पालन अव्यवस्थित तथा उद्देश्यहीन था। व्यापक अव्यवस्था तथा नैतिक पतन की स्थिति में कई जनरलों ने अपनी कई टुकड़ियों को अनावश्यक रूप से लड़ते रहने का आदेश दिया। अन्यों ने जहाजों पर अपने सैनिकों को रखने के स्थान पर भारी अमेरिकी शस्त्रास्त्र भरे। जहाँ विश्व प्रेस के द्वारा राष्ट्रवादियों के पलायन की बर्बरता का व्यापक प्रचार किया गया वहां जिन-जिन राष्ट्रवादियों ने साहसपूर्ण ढंग से सामना किया उन्हें जिद्दी व बेवकूफ बताया गया। हंगचू में च्यांग अपने एक विश्वसनीय सहयोगी चे इन के जाल का शिकार बनते-बनते बचा। च्यांग ने जनरल चेइन को जो फारमोसा में पूरी तरह से असफल रहा था चेकिआंग की प्रान्तीय सरकार का अध्यक्ष नियुक्त किया। उसने अर्से तक चेइन पर विश्वास किया। किन्तु चेइन ने

विश्वासघात किया। उसने च्यांग का अपहरण करने, साम्यवादियों से मिल जाने की साजिश की। किन्तु इस षड़यन्त्र का पता चल गया। चेइन को फारमोसा ले जाया गया जहां उस पर मुकदमा चला कर उसे मृत्युदंड दे दिया गया। यदि च्यांग का विचार पूर्ण अवकाश का रहा होता तो चेइन के षड़यन्त्र ने उसे पर्याप्त असंतुष्ट कर दिया होता। वस्तुतः सरकारी औपचारिकताओं से छूटने के बाद उसे अपनी सरकार का पुर्नगठन करने तथा साम्यवादियों का अन्तिम वार सामना करने का अवसर मिला।

15 मार्च 1949 को व्यवस्थापिका मुआन ने एक संकल्प स्वीकार किया जिसके अनुसार सरकारी तन्त्र के संगठन को सरलीकृत किया गया तथा कार्यपालिका मुआन में मात्र आठ विभाग तथा दो कमीशन रखे गए। 29 अप्रेल को कार्यपालिका मुआन ने यह घोषणा की कि सभी विभाग कैंटून को स्थानान्तरित कर दिये गए तथा उनके साथ मात्र उतने ही अधिकारी रखे गये थे जितने अनिवार्य थे। कैंटून से कुछ सरकारी विभाग चुंगकिंग को इस आशा से भेजे गए कि एक वार फिर राष्ट्रवादी चीन के दक्षिण पश्चिमी प्रदेश में अपनी स्थिति को उसी प्रकार मजबूत बना सकेंगे जैसे जापान के विरुद्ध युद्ध के समय कर सके थे किन्तु जब तक राष्ट्रवादी चुंगकिंग में अपनी स्थिति को मजबूत बनाते चीन में साम्यवादी व्यापक सफलताएँ प्राप्त कर चुके थे। पश्चिमी स्रोतों के अनुसार च्यांग काई शेक दुख व निराशा से इतना संतृप्त हो गया था कि उसने कुंठित व अल्पसंख्यक राष्ट्रवादियों को चुंगकिंग में साम्यवादियों से लड़ने को वाध्य किया तथा उसे साम्यवादी गिरफ्तारी से बचाने के लिये उसके निजी स्टाफ को उसे विमान में जबर्दस्ती खदेड़ना पड़ा। जेचआन प्रान्त के पतन के पश्चात् फारमोसा एक मात्र ऐसा प्रदेश था जहां सुरक्षापूर्ण शरण ली जा सकती थी।

सैद्धान्तिक रूप से अध्यक्ष पद से अवकाश प्राप्त करने के पश्चात् भी च्यांग काई शेक कुमितांग दल के अध्यक्ष पद से नहीं हटा था तथा व्यावहारिक रूप में भी अपने पलायन के समय भी उसने राजनीतिक व सैनिक मामलों पर अपने नियन्त्रण को कभी समाप्त नहीं किया था। कार्यवाहक राष्ट्रपति ली इस वात से अत्यधिक संतृप्त तथा दुखी हुआ था तथा अंततः वह अमेरिका अपने उपचार के लिये चला गया। ली की परवाह न करते हुए च्यांग ने कुमितांग के अध्यक्ष के रूप में तैवान कि ताइपेह नगर में 1 अगस्त, 1949 को मुख्यालय की स्थापना की तथा च्यांग काई शेक फिलीपिन्स के राष्ट्रपति क्यूरिनो से वात करने राष्ट्रपति की हैसियत से नहीं अपितु दल के अध्यक्ष अथवा त्सुंग-त्साई की हैसियत से गया था। च्यांग दुबारा राष्ट्रपति तभी वना जब ली ने अपने स्वेच्छापूर्ण निर्वासन से वापिस आने को इन्कार कर दिया।[2]

फारमोसा में कुमितांग के सुधार : चीन से पलायन के वाद कुमितांग दल ने प्रथम कार्य स्वयं अपने दल में आमूल चूल परिवर्तन करने का किया। इसका संगठन अस्तव्यस्त हो गया था इसमें अनुशासन हीनता आ गई थी तथा क्रान्ति की भावना समाप्त हो गई थी। अतः यह दल अत्यधिक संगठित व अनुशासित साम्यवादी दल का सामना करने में असफल हुआ था। वर्षों से कुमितांग दल इन दोषों से युक्त था। इस दल में नई शक्ति उत्पन्न करने के लिये इस प्रकार का रचनात्मक परिवर्तन बहुत जरूरी था।

2. च्यांग ताइपेह में त्सुंग त्साई दुबारा निर्वाचित हुआ। 19 अक्टूबर 1952 को यह अवसर दल के सातवें सम्मेलन पर आया। देखिये मूल रचना।

कुमितांग दल में सुधार करने के उद्देश्य से च्यांग काई शेक ने 26 जुलाई 1950 को दो समितियां—सर्वेक्षण समिति तथा सुधार समिति की नियुक्ति की।[3]

सर्वेक्षण समिति में 25 सदस्य थे जिनमें कई अनुभवी दलीय नेता भी थे। इसका कार्य सुधार योजना को क्रियान्वित करना था।

सुधार समिति में भी 25 सदस्य थे किन्तु प्रारम्भ में केवल 16 सदस्यों की नियुक्ति की गई, अवशिष्ट सदस्यों की नियुक्ति बाद में विदेशी चीनियों, स्त्रियों तथा सीमान्त प्रदेश की जनजातियों में से की जानी थी। सुधार समिति का मुख्य कार्य सुधार योजना को क्रियान्वित करना था। समिति को व्यापक शक्तियां दी गई थीं। सुधार के अनिश्चित काल के दौरान दोनों समितियां स्थगित कर दी गई तथा सभी शक्तियां सुधार समिति को दे दी गई।

सुधार समिति को सुधार योजना के अनुसार कार्य करना था तथा उसे दल के सभी प्रान्तीय तथा स्थानीय शाखाओं की व्यवस्था करनी थी। सुधार समिति की चार उप-समितियां भी जो वित्त नियोजन, अनुशासन तथा प्रशिक्षण से सम्बन्धित था। यह घोषणा की गई थी कि जब सम्पूर्ण दल की सुधार योजना पूरी हो जाएगी तो एक दलीय कांग्रेस आमन्त्रित की जाएगी।

कुमितांग दलीय सम्मेलन 1924 से 1952 के दौरान राष्ट्रवादी राजनीतिक व्यवस्था की सामान्य विशेषता नहीं रहे थे। इस दौरान मात्र छः ऐसे सम्मेलन बुलाए गए थे जिनमें 1938 में हैंकावे का संकटकालीन सम्मेलन भी था तथा एक वांग चिंग के द्वारा आमन्त्रित उद्देश्यहीन सम्मेलन भी था जिसमें उस व्यक्ति ने स्वयं को चीन का राष्ट्रपति निर्वाचित करने का प्रयत्न किया था। इस दल का सातवां राष्ट्रीय सम्मेलन 10 अक्टूबर 1952 को ताइपेह में बुलाया गया। इस सम्मेलन के पश्चात् कुमितांग दल के सुधार का 27 माह पुराना आन्दोलन समाप्त हो गया। इस सम्मेलन में केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के लिये जो केन्द्रीय सुधार समिति के स्थान पर चुनी गई थी 32 सदस्यों का निर्वाचन किया गया। इसके अतिरिक्त कांग्रेस ने 48 अन्य वरिष्ठ सदस्यों का नामांकन परामर्शदाताओं के रूप में किया। इस अधिवेशन में दल के दो सौ प्रतिनिधि सम्मिलित हुए जो विभिन्न प्रान्तों तथा नगरपालिकाओं तथा समुद्र पार चीनियों का प्रतिनिधित्व करते थे। स्पष्टतः मात्र समुद्र पार चीनी ही इन पदों के लिये निर्वाचित किये गए। 52 प्रतिनिधियों में से 32 एशिया से, 18 उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका से, एक यूरोप से, दो अफ्रीका से तथा दो ऑस्ट्रेलिया से थे।[4]

इस सुधार समिति के उद्देश्यों का विवरण त्सुई शू चिन द्वारा जो स्वयं उस समिति का एक सदस्य तथा राजनीति वैज्ञानिक था निम्नांकित शब्दों में किया गया था—"हमारा दल यह महसूस करता है कि भूतकाल में इसने कई भयंकर भूलें की हैं अतः अब यह अपने कार्य करने के तरीके को बदलना चाहता है। विशेष रूप से यह अपने सभी सदस्यों से दल के इतिहास को पढ़ने का आग्रह करेगा ताकि वे दल के क्रान्तिपूर्ण सिद्धान्तों को समझें, दलीय गतिविधियों में भाग लें, अनुशासित रहें तथा लोगों में दल के प्रति विश्वास उत्पन्न

3. चाइनीज न्यूज सर्विस, एन एन एल–2, न्यूयॉर्क अगस्त, 15, 1950
4. चाइनीज न्यूज सर्विस, एल एन–एन–2, 45 न्यूयॉर्क नवम्बर 4, 1952

करें ताकि जनता दल के सिद्धान्तों, नियमों व नीतियों को समझ सके। दल अपनी प्रशासनिक क्षमता को बढ़ा सके तथा गुटबन्दी को समाप्त करे ताकि एक परस्पर सहयोग व सामंजस्य की भावना का विकास किया जा सके.......

संरक्षण काल में कुमितांग दल ने देश के संरक्षक की भूमिका को पूर्णतः स्वीकार कर लिया था किन्तु संवैधानिक काल के प्रारम्भ होते ही इसे पूर्णतः भिन्न प्रकार की भूमिका का निर्वाह करना था। विशालतम दल होते हुए भी अब यह दल सरकार पर पहले की तरह नियन्त्रण रखने में समर्थ नहीं था। अब यह एक साधारण दल की भूमिका ही निभा सकता था। इस दृष्टिकोण से अब दल को सरकार के साथ अपने सम्बन्धों को नियमित करना था। केन्द्रीय, प्रान्तीय तथा स्थानीय दल इन स्तरों की सरकारों के साथ नीतियों का निर्धारण करने वाले थे तथा जनता द्वारा निर्वाचित विधान सभाओं के सदस्य इन्हें क्रियान्वित करने में सहायता देने वाले थे इसका अर्थ यह कदापि नहीं था कि दल के सदस्यों को सरकारी गतिविधियों में प्रत्यक्ष रूप से हस्तक्षेप करने का अधिकार था। उनका कार्य मात्र यह देखना था कि क्या जनता की सभाएँ दलीय नीतियों के अनुसार ही विधि निर्माण करती हैं तथा सरकार उन नीतियों को सरकारी तौर पर स्वीकार कर ले।[5]

विधि निर्माण तथा प्रतिनिधित्व : कानूनी सिद्धान्त के विपरीत व्यावहारिक राजनीति में राष्ट्रवादियों के सम्मुख प्रतिनिधित्व की दोहरी समस्या थी। मुख्य चीन में 20 वर्ष तक सत्ता में रहने के पश्चात् भी उन पर वहाँ प्रतिनिधित्व शासन प्रणाली लागू न करने का आरोप था। कई निर्दलीय तथा बुद्धिमान सदस्यों के साम्यवादी दल बदलने का मूल कारण यही विचार था कि कुमितांग अपने अलावा अन्य किसी का प्रतिनिधित्व नहीं करता था। इसके बावजूद यह विरोध इतना कटु व दीर्घकालीन हो चुका था कि उसका कोई सामान्य समाधान सम्भव नहीं था। राष्ट्रवादियों को कुछ राष्ट्रवादी प्रशासकों तथा सैनिक अधिकारियों के अलावा अन्य जनता का प्रतिनिधित्व भी करना चाहिये था। चीन की मुख्यभूमि का आदर प्राप्त करने के लिए तथा फारमोसा से निकलने के लिये यह अत्यधिक आवश्यक था। इसके अतिरिक्त उनके लिये स्थानीय प्रतिनिधित्व प्राप्त करना भी आवश्यक था ताकि तैवान द्वीप पर पीढ़ियों से रहने वाले चीनी परिवार जिनके प्रति राष्ट्रवादी सरकार बिना किसी औपचारिकता को निवाहे बस गई थी, उपेक्षित महसूस न करे।

चीन से पलायन व राजनीतिक चयन की अस्त व्यस्त प्रक्रिया के मध्य व्यवस्थापिका युआन के कई सदस्य पीछे छूट गये थे। 1948 में निर्वाचित सदस्यों की कार्य अवधि तीन वर्ष थी जो अप्रेल 1951 में समाप्त होने वाली थी। सोभाग्यवश राष्ट्रीय सभा ने 18 अप्रेल 1948 को राष्ट्रपति को संकटकालीन शक्तियाँ प्रदान की थीं तथा फारमोसा में निर्वाचित प्रतिनिधियों की कार्यअवधि अंततः राष्ट्रपति के अध्यादेश द्वारा 1950 तक बढ़ा दी गई।

बाद की घटनाएँ यह दर्शाती हैं कि यह सब भले के लिये ही हुआ था। तैवान हवाई से कहीं सुन्दर द्वीप है। जब तक यह जापान का भाग था यह पर्याप्त मात्रा में जापान को अतिरिक्त खाद्य पदार्थ देता था। राष्ट्रवादियों ने जापानियों से इस द्वीप को छीनने के

5. 'रिफोर्म ऑफ दि कुमितांग' मार्डन चायना मंथली; ताइपेह संख्या। (अक्टूबर 1950) पृ. 24-26

बाद इसका पर्याप्त दुरुपयोग किया था। परिणामतः तैवानवासियों में राष्ट्रवादी शरणार्थियों के प्रति बड़ी कटु भावना व्याप्त थी। अतः बाद के अनुभव से यह प्रतीत होता है कि सितम्बर 1950 से परिस्थितियाँ निरन्तर सुधरती गई। सेना पर व्यय में कटौती कर दी गई अनावश्यक सेना भंग कर दी गई। कार्यपालिका युआन के अध्यक्ष चेदन चेंग ने 1950 में यह बताया कि सेना की 82 अनावश्यक टुकड़ियाँ भंग कर दी गई थी। राष्ट्रवादी सरकार का सम्पूर्ण ढांचा 874 व्यक्तियों तक सीमित कर दिया गया जो मुक्त संख्या का नौवाँ अंश मात्र था। उत्पादन में बढ़ोतरी कर तथा कर व्यवस्था में सुधार के द्वारा वित्तीय व्यवस्था में सुधार किया गया। 1950 में सुधार प्रारम्भ करने के बाद भी राष्ट्रवादी मूल्य वृद्धि के उस दुष्परिणाम से बच गए जिसने उन्हें मुख्य चीन में नष्ट कर दिया गया था। चेइन चेंग ने कहा 'पिछले छः महिनों में सरकार ने आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये न तो नई मुद्रा छापी है और न ही नये कर लगाए हैं।[6]

फारमोसा में सरकार की संरचना : फारमोसा की राष्ट्रवादी सरकार। जन. 1947 को प्रतिपादित संविधान के आधार पर स्वयं को न्यायोचित सरकार मानती है। इसकी संरचना 1948 की संकटकालीन व्यवस्था (पृष्ठ) के आधार पर है तथा इसका अधिकार क्षेत्र इसके अन्तर्गत भूमि तक ही सीमित है।

1948 की व्यवस्था के अन्तर्गत राष्ट्रपति की शक्तियाँ प्राचीन राष्ट्रीय सरकार के अध्यक्ष की तुलना में पर्याप्त भिन्न है। उसके कार्यों पर दलीय नियन्त्रण नहीं था। उसे सीमित अर्थों में व्यवस्थापिका युआन के प्रति उत्तरदायी बनाया गया था। राज्य अध्यक्ष की सामान्य शक्तियों के अलावा उसे संविधान के अनुसार व्यापक रूप में संकटकालीन शक्तियाँ भी प्रदान की गई थी। 18 अप्रेल 1948 को अध्यक्ष का निर्वाचन करने से एक दिन पहले राष्ट्रीय सभा के निर्वाचित होने वाले राष्ट्रपति को साम्यवादी विद्रोह के विरुद्ध संघर्ष करने के लिये व्यापक संकटकालीन अधिकार प्रदान किये गए।

25 मार्च 1948 को व्यवस्थापिका युआन द्वारा राष्ट्रपति पद के लिये कानून पारित किया गया। राष्ट्रपति पद का निर्माण सैनिक आयोग के अध्यक्ष पद के नमूने पर किया गया था। वस्तुतः पुराने पद की बहुत कुछ शक्तियों नए राष्ट्रपति को दे दी गयीं थीं। अध्यक्ष के कार्यालय में एक मुख्य कार्यालय तथा एक महासचिव का कार्यालय रखा गया था। महासचिव कार्यालय के अन्तर्गत छः विभाग थे जिनके कार्य सचिवालय सम्बन्धी, गोपनीय, सैनिक, समझौते पुरातत्व तथा सामान्य मामले थे (देखिये चार्ट संख्या छः)

कार्यपालिका युआन कुछ अर्थों में पुरानी कार्यपालिका से भिन्न थी क्योंकि यह आंशिक रूप से व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी बनाई गई थी। न केवल कार्यपालिका युआन को अध्यक्ष की नियुक्ति की स्वीकृति व्यवस्थापिका के द्वारा पूछे गए प्रश्नों का जवाब भी देना आवश्यक था।

व्यवस्थापिका युआन अपने पूर्ववर्ती की तुलना में पूर्णतः भिन्न थी। इसके सदस्यों का निर्वाचन होना था नियुक्ति नहीं। पुरानी युआन के विपरीत इसके अध्यक्ष व उपाध्यक्ष का निर्वाचन किया जाना था। इसी प्रकार पुरानी युआन के विपरीत नई व्यवस्थापिका युआन में विधि निर्माण प्रारम्भ किया जा सकता था, राष्ट्रीय बजट पर विचार, मन्त्रियों से

6. चाइनीज न्यूज सर्विस, एन आई-एल-6 न्यूयॉर्क अक्टूबर 11, 1950
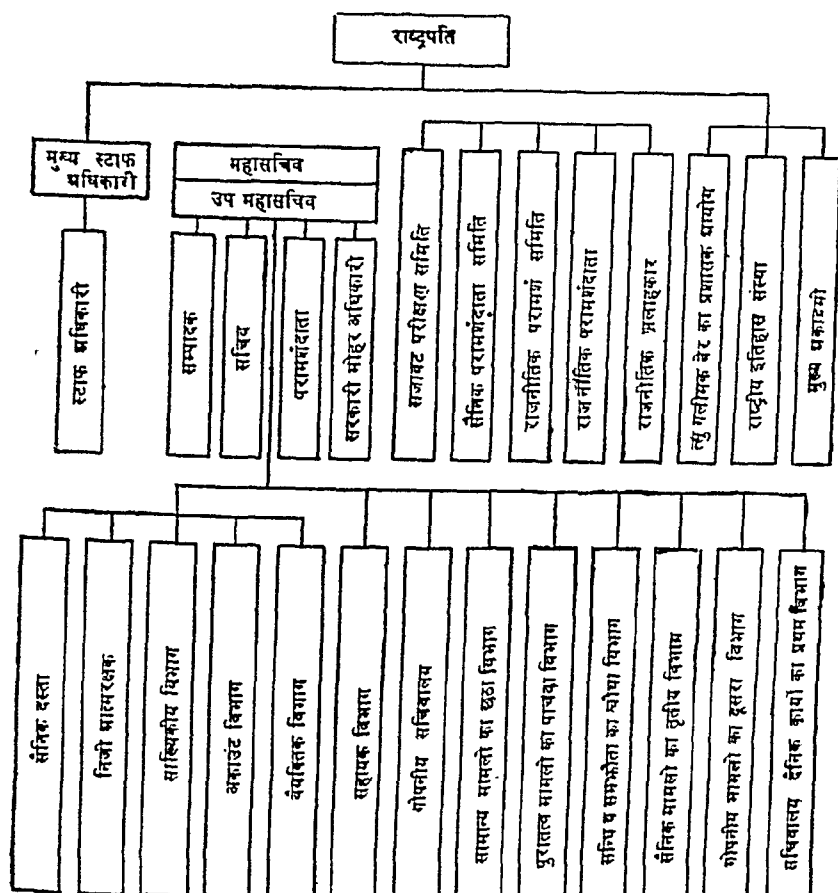
स्रोत : चीनी दैनिक केन्द्रीय समाचार 26 मार्च, 1948 को प्रकाशित चार्ट, नानकिंग

टिप्पणी : यह विधान व्यवस्थापिका युआन द्वारा 25 मार्च, 1948 को स्वीकृत किया गया

चार्ट संख्या 6 : राष्ट्रपति कार्यालय का संगठन

प्रश्नोत्तर तथा स्वतन्त्र जाँच ये इसके अन्य कार्य थे सामान्यतः इसे सम्पूर्ण प्रशासन पर नियन्त्रण रखने का अधिकार था।[7]

नियन्त्रण युआन को भी प्रतिनिधि संस्था के रूप में पुर्नगठित किया गया। इसके सदस्यों का निर्वाचन प्रान्तीय तथा नगर पालिका सभाओं द्वारा छः वर्ष के लिये किया जाना था। इसके अध्यक्ष व उपाध्यक्ष का निर्वाचन इन सदस्यों में से होना था। नवीन संविधान के अनुसार नियन्त्रण युआन सहमति महाभियोग नियन्त्रण तथा वित्तीय जाँच में कार्य कर सकती थी।

7. देखिये जार्ज ई टेलर 'ए न्यू लुक एट फारमोसा' 'दि एटलांटिक मंथली, ग्रंथ 191 संख्या (4 अप्रेल 1953)

परीक्षा मुआन के एक अध्यक्ष एक उपाध्यक्ष तथा 19 परीक्षक अधिकारी होने वाले जिनमें से प्रत्येक का कार्यकाल छः वर्ष होने वाला था।

न्यायपालिका मुआन की एक महान्यायपालिका की परिषद् होने वाली थी। इसमें एक सर्वोच्च न्यायालय एक प्रशासनिक न्यायालय तथा एक अनुशासन मण्डल होने वाला था। महान्यायपरिषद् एक नवीन संस्था थी जिसमें राष्ट्रपति द्वारा 17 सदस्यों की नियुक्ति की जानी थी जिसके लिये नियन्त्रण मुआन की सहमति आवश्यक थी। महान्यायपरिषद् के कार्य संविधान की व्याख्या करना तथा विधि व आदेशों की व्याख्या करना था।
किन्तु 1947 का संविधान तथा 1948 की सरकार अब दोनों ही समाप्त हो गए हैं। शीघ्र ही यह स्पष्ट हो गया कि फारमोसा में पंचविभाग सरकार होना आवश्यक था तथा फारमोसा उसका व्यय वहन करने की स्थिति में नहीं था। केन्द्रीय सरकार में कई अंगों ने अपने कार्यों को भले ढंग से करने का प्रयास किया तथापि इस समय वहाँ इस प्रकार के बसने के अधिकार अथवा स्थानीय सरकार की समस्या पर विचार करने के बजाय इस सरकार पर बौद्धिक चर्चा करना तात्कालिक रुचि का विषय है क्योंकि यह गणराज्य अभी भी संकट की स्थिति में है—जिसके असाधारण प्राविधानों की व्यावस्था की गई है।

फारमोसा में नीति व प्रशासन : साम्यवादियों के विपरीत राष्ट्रवादियों की यह दुर्बलता रही है कि वे अपनी सरकार के संदर्भ में स्थायीत्व की मानना प्राप्त नहीं कर पाए हैं। चीनी गणराज्य के साम्यवादी तब तक चीन के एकीकरण को पर्याप्त नहीं मानेंगे जब तक अवशिष्ट फारमोसा को समाप्त नहीं किया जाता तथापि साम्यवादियों में इस कारण अस्थिरता अथवा अस्थाइत्व की भावना आने का प्रश्न ही नहीं उठता है क्योंकि वे चीन की मुख्यभूमि में हैं जबकि राष्ट्रवादियों की स्थिति इसके पूर्णतः विपरीत है। राष्ट्रवादी न तो फारमोसा में स्थाई रूप से स्थापित होकर शासन का संचालन कर सकते हैं ताकि फारमोसा एक छोटे किन्तु स्वतन्त्र राज्य के रूप में रह सके तथा न ही वे अब भविष्य में संपूर्ण चीन पर शासन करने का स्वप्न देख सकते हैं। उनके सभी प्रकार के निर्णय दो मान्यताओं के बीच अधर में हैं कि या तो वे यथार्थवादी बन कर निकट भविष्य में चीन पर विजय प्राप्त करने के विचार को त्याग दें या वे अपनी राजनीतिक क्षमता को बढ़ावें ताकि वे आशापूर्ण ढंग से सम्पूर्ण चीन की वैधानिक सरकार के रूप में स्वयं को जीवित रख सकें।

दोनों दृष्टिकोणों से राष्ट्रवादियों के लिये सेना अत्यधिक महत्वपूर्ण है। विशाल साम्यवादी चीन पर आक्रमण करने के लिये जिस विशाल पैमाने पर सेना के संगठन व अभ्यास की आवश्यकता है वह इस द्वीप की क्षमता के परे है। चीन की पुर्नविजय करने से परे फारमोसा का मूल उद्देश्य आत्मरक्षा तथा स्वयं को जीवित रखने के लिये इस रूप में संगठित बने रहने है ताकि चीन के लिये उस पर विजय प्राप्त करना सैनिक दृष्टि से हानिकारक हो जाए। परिणामतः फारमोसा की सुरक्षा सर्वाधिक महत्वपूर्ण विषय बन गया है तथा राष्ट्रवादी सरकार का अधिकांश बजट सैनिक लक्ष्यों के लिये खर्चा जाता है।

यदि फारमोसा की राष्ट्रवादी सरकार सैनिक दृष्टि से अत्यधिक सुसज्जित है तो इसको बनाये रखने के साधन सरकार की राष्ट्रीय स्तर पर अन्य गतिविधियों को सीमित बनाए रखे गये हैं। राष्ट्रवादी अधिकारी यदि चीन की वैधानिक सरकार के प्रतिनिधि के रूप में संयुक्त राष्ट्र संघ में स्वयं को प्रस्तुत करना चाहते हैं, तो उनके लिये यह आवश्यक हो जाता है कि संयुक्त राष्ट्र संघ में उनका पूर्ण प्रतिनिधित्व हो, उनकी सैनिक क्षमता पर्याप्त

ान्तर्राष्ट्रीय सामाजिक व आर्थिक अपकिरणों में उसकी पर्याप्त पहचान हो ताकि विश्व स्वीकार ले कि वे साम्यवादियों की तुलना में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चीन का अधिक निधित्व करते हैं। परिणामतः ताइपेह सरकार के लिए प्रान्तीय स्तर पर सरकार को ये रखने से ज्यादा महत्वपूर्ण उसका केन्द्रीय स्तर पर विस्तार है किन्तु अधिकांश सरकार ये यह सत्य नहीं है। दैनिक उद्देश्य की दृष्टि से तैवान सरकार द्वीप के निवासियों की आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम है। 1949 से राष्ट्रवादी सरकार के स्वरूप काट छांट कर छोटा कर दिया गया है। परिणामतः मात्र ढाँचा अवशिष्ट है जिसे कभी ावश्यकता पड़ने पर अर्थात् जब सैनिक शक्ति से राष्ट्रवादी मुख्य चीन को लौटने में न हो पुनः सक्रिय बनाया जा सकता है।

तैवान सरकार का सरल संगठन चार्ट संख्या 7 में दिखाया गया है। मुख्यभूमि की ार के कई विभाग जैसे—
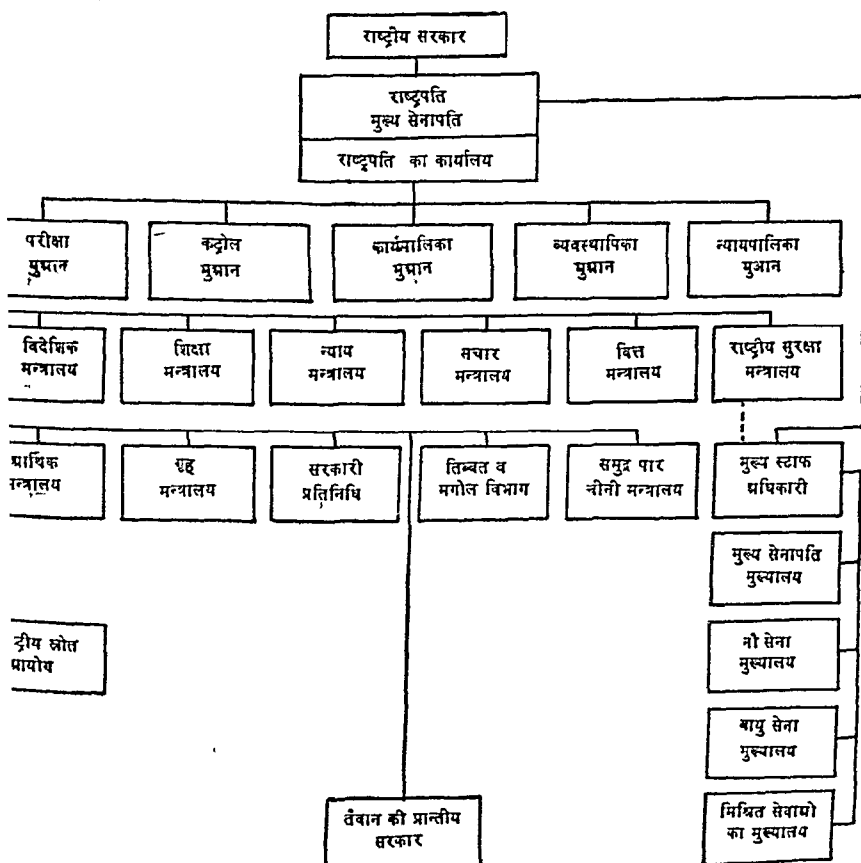
प्पणी—सरकार का यह सरल सगठन 15 मार्च, 1949 के संकटकालीन अधिवेशन के प्रस्ताव से प्राप्त किया गया। मूल संरचना वही बनी रही किन्तु कुछ अनावश्यक विभागों व कमिशनों को समाप्त कर दिया गया।

चार्ट संख्या 7 : तैवान की चीनी सरकार का सरल स्वरूप।

तिब्बत व मंगोल मामलों का मन्त्रालय के विशेष कार्य नहीं थे सिवाय इसके कि कभी-कभी मुट्ठी भर गैर साम्यवादी शरणार्थियों की व्यवस्था करना। शिक्षा, संचार व गृह मन्त्रालय जैसे विभाग विद्यमान है तथा तैवान सरकार में संबंधी कार्य करते हैं। राष्ट्रवादी सरकार के कुछ ही अंग ऐसे कार्य करते जो न तो उनके अनुकूल हैं तथा न ही वे राष्ट्रवादी सरकार के मुख्य चीन से हट जाने के बाद महत्वपूर्ण रहे हैं। वैदेशिक मामलों तथा राष्ट्रीय सुरक्षा के विभाग ऐसे हैं जो अब भी अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं।

इस प्रकार फारमोसा की राष्ट्रीय सरकार च्यांग काई शेक के निजी मुख्यालय की सैनिक व कूटनीतिक आवश्यकताओं को पूरा करने वाली च्यांग काई शेक के शिखर स्थित मुख्यालय तथा सतह पर तैवान के स्थानीय प्रशासन के मध्य जड़ हो गई/अधिकांश राष्ट्रीय विभागों का कार्य नाम मात्र का है। अधिकारी प्रायः मुख्य चीन पर लौटने के स्वप्न देख कर कागजी योजनाएँ बनाते रहते हैं। जब 1952 में एक बार यह अफवाह उठी कि एक योजना आयोग में नियुक्ति मुख्य चीन की भूमि पर अधिकार करने के पश्चात् चीन में प्रान्तीय सरकार में नियुक्ति के समान मानी जाएगी। यह सूचना हांगकांग में रहने वाले कई चीनियों तक जा पहुँची तथा उन्होंने इस आयोग में नियुक्ति के लिये बड़े पैमाने पर प्रार्थना पत्र भेजे।[8]

यह विचित्र संयोग है कि चीन की राष्ट्रवादी सरकार फारमोसा के लिये सर्वोत्तम सरकार साबित हुई है। फारमोसा में स्थित चीनियों के साथ जो विदेशी प्रायः समाचार पत्रों में पहाड़ियों में रहने वाली जनजातियों की तुलना में फारमोसा वाले कहे जाते हैं तथा जिनके बारे में समाचार पत्रों में बहुत कम ध्यान दिया जाता है के साथ पर्याप्त मात्रा में सामंजस्य बैठा लिया गया है।

फारमोसा की प्रान्तीय सरकार : जब राष्ट्रवादी सरकार ने फारमोसा पर अधिकार किया तब यह जापान का मूल्यवान उपनिवेश था। यह इतना उपयोगी था कि इसे जापान के मूल साम्राज्य में विलीन कर लिया गया था। संचार साधन श्रेष्ठ थे, सिंचाई की पूर्ण व्यवस्था थी, आर्थिक संपन्नता थी तथा चीन के किसी भी भाग से शिक्षा का स्तर ऊँचा था। राष्ट्रवादी सरकार के प्रारम्भिक चार वर्ष, जब राष्ट्रवादी लुटेरों ने राष्ट्रवादी सरकार के अधिकारियों के रूप में फारमोसा के निवासियों को लूटा, फारमोसा वासियों के लिये काले वर्ष थे। एक बार जब फारमोसा राष्ट्रवादियों का मूल आधार बन गया तथा च्यांग काई शेक के सुदृढ़ नियन्त्रण में आ गया तब यहाँ की परिस्थितियाँ सुधरने लगीं। निस्संदेह 1949 के पश्चात् इस द्वीप के कल्याण व सुरक्षा की दिशा में पर्याप्त प्रयास किये गए हैं।

सर्वाधिक प्रगति स्थानीय प्रशासन के क्षेत्र में हुई है। राष्ट्रवादियों ने स्थानीय स्वशासन को काउंटी तथा नगरपालिका के स्तर पर सफल बनाया। अप्रैल 1950 में कार्यपालिका युआन ने काउंटी तथा नगरपालिका के लिये स्वशासन सम्बन्धी कानून बनाये जिन्हें एक सीमित समय के अन्तर्गत लागू किया जाना था। अगस्त 1950 में कार्यपालिका युआन ने काउंटी तथा नगरपालिका के पुर्नगठन का नियत पारित किया, जिसके अनुसार सम्पूर्ण प्रान्त को 16 काउंटी तथा पांच नगरपालिकाओं में विभाजित किया गया जो इससे

8. यू आओ कू 'आन दि बैंक आफ दि डान गुई रिवर' हुनिन वेन टिन्न डी (न्यूज डॉन) हांगकांग संख्या 167 पृ. 4–6

पहले 5 काउंटी व 9 नगरपालिकाओं में विभाजित था। इस पुनर्गठन के द्वारा प्रत्येक छोटे प्रशासनिक इकाई को एक सामान्य स्तर के अन्तर्गत लाया था ताकि स्वशासन के उद्देश्य को प्राप्त किया जा सके।

(चार्ट आठ प्रान्तीय तैवान का संगठन दर्शाता है)
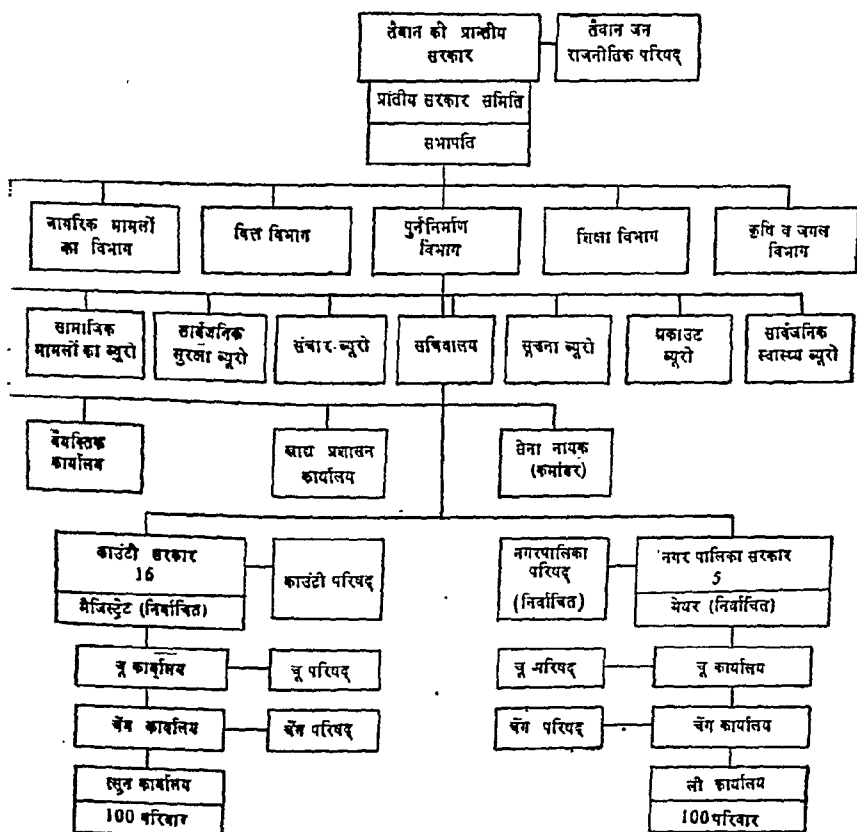
प्रान्तीय तैवान का संगठन दर्शाता है)

चार्ट 8 तैवान प्रान्तीय सरकार का संगठन 1950

नगर अथवा काउंटी के स्वशासन का संचालन करने के लिये नगर अथवा काऊंटी परिषद् ने अपनी सभा का अधिवेशन आमन्त्रित करके स्व-शासन कानून पारित किया। यह कानून राष्ट्रीय कानून तथा तैवान के प्रान्तीय कानून का विरोध नहीं कर सकता था इसके बारे में पर्याप्त सावधानी वरती गई थी। अधिकांश नगरों व काऊंटियों में लोकप्रिय रूप से निर्वाचित परिषदें अपनी विधायनी शक्ति का पूर्ण प्रयोग कर रही थीं। संविधान में यह व्यवस्था की गई थी कि नगर अथवा काऊंटी के लोग कानून के अनुसार, नगर तथा काऊंटी के संदर्भ में आरम्भक व जनमत संग्रह के अधिकार का प्रयोग करेंगे तथा उन्हें

मजिस्ट्रेट तथा अन्य सार्वजनिक अधिकारियों को चुनने तथा वापिस बुलाने का अधिकार प्राप्त होगा। नगर अथवा काऊंटी में एक निर्वाचित मेयर अथवा मजिस्ट्रेट होगा जिसे स्वशासन को लागू करने की कार्यपालिका शक्ति तथा साथ ही केन्द्रीय तथा प्रांतीय सरकार से प्राप्त प्रशासनिक शक्ति होती थीं।

इस विधान के अनुसार अप्रेल 1951 तक मजिस्ट्रेट, मेयर तथा व्यवस्थापिका परिषदों के चुनाव पूरे कर लिये गये। कुछ समय पश्चात् निर्वाचन पर आधारित तैवान प्रान्तीय परिषद् की स्थापना जनवादी राजनीतिक परिषद् के स्थान पर की गई। यह परिषद् पूर्णतः एक परामर्शदात्री समिति हुआ करती थी जो चीन की मुख्य भूमि पर होने वाली राष्ट्रवादी सरकार का अवशिष्ट प्रतीक थी।[9]

तैवान को एक आदर्श प्रान्त के रूप में चित्रित करना सहज होगा तथा इस प्रकार पूर्ण हृदय परिवर्तन का श्रेय राष्ट्रवादियों को जाता है। क्या उन्होंने तैवान को यह श्रेष्ठतम प्रजातांत्रीय प्रशासन प्रदान नहीं किया है जिसके लिए उनके विरोधी यह कहते हैं कि वे चीन को ऐसा प्रशासन प्रदान नहीं कर सकते थे।

दुर्भाग्यवश इस शंका का समाधान मात्र हाँ या नहीं में देना संभव नहीं है। चीन की मुख्य भूमि से राष्ट्रवादियों के पतन का मूल कारण भ्रष्टाचार अथवा अयोग्यता नहीं थी अपितु यह तथ्य था कि संपूर्ण चीन के लिए प्रशिक्षित अभिजात राष्ट्रवादी वर्ग बहुत छोटा था। यह सरकार अपने युद्ध कालीन सीमित रूप में ही स्वतन्त्र चीन के लिए ही अपर्याप्त थी तथा यह अपर्याप्तता तब और बढ़ गई जब उसका प्रयोग युद्ध के पश्चात् सम्पूर्ण चीन के लिए किया जाने लगा। वे राष्ट्रवादी अधिकारी जो चीन के व्यापक तथा जटिल समाज के लिए अपर्याप्त हो गए थे वे तैवान के छोटे तथा सम्पन्न द्वीपीय के लिए पर्याप्त सिद्ध हुए। इसके अतिरिक्त यद्यपि जापानी तैवान वासियों में आत्म सम्मान, राजनीतिक अहम् तथा राजनीतिक सम्प्रदाय की भावना का विकास तो नहीं कर सके किन्तु उन्होंने अच्छी सरकार का ढांचा नीति निर्माण, सार्वजनिक स्वास्थ्य, अच्छी बेसिक शिक्षा, सामाजिक सुरक्षा-स्थापित करने में निस्संदेह सफलता प्राप्त की। वे राष्ट्रवादी जो युद्ध तथा क्रान्ति से त्रस्त चीन में शासन का संचालन करने में असफल रहे वे उस तैवान के लिए सफल साबित हुए जो पिछले पचास वर्षों से जापान के दमनपूर्ण शासन के अन्तर्गत रहा था। राजनीतिक प्रयोग की जो परिस्थितियाँ चीन में उपलब्ध नहीं थी वे फारमोसा में पर्याप्त मात्रा में थी। चीन में राष्ट्रवादी मानवीय तथा प्रयोगकर्त्ता दोनों ही नहीं हो सकते क्योंकि प्रयोग के लिए सत्ता आवश्यक थी सत्ता के लिए शक्ति तथा शक्ति के लिए निर्णायकता तथा कभी-कभी अवसरानुकूल आतंक का प्रयोग भी आवश्यक हो जाता है जबकि राष्ट्रवादी 'अच्छाई' की भावना में इस कदर विश्वास करते थे कि वे क्रान्ति का नेतृत्व नहीं कर सकते थे।

इस प्रकार तैवान में राष्ट्रवादियों को राजनीतिक सफलता मिली वह उन्हें चीन की मुख्य भूमि पर भी मिली होती इसके बारे में कोई प्रमाण नहीं दिया जा सकता। तैवान की सफलता की तुलना चीन से कर सकना संभव ही नहीं अवांछनीय भी है। फारमोसा में राष्ट्रवादियों को सुधार करने में सफलता मिली क्योंकि वे अपने निपुण अधिकारियों को वहां केन्द्रित करने में सफल हुए तथा तैवानवासी जापान के पचासवर्षीय शासन से पर्याप्त

9. चाइनीज न्यूज सर्विस, एन. एन. एल.-21, न्यूयोर्क, दिसम्बर 27, 1950

नम्र व भीरु बन चुके थे। जापानी प्रशासन ने तैवानवासियों की राजनीतिक स्वतन्त्रता समाप्त कर उन्हें पर्याप्त दक्ष बनाया, यह एक ऐसा उपनिवेशवाद था जिसने अच्छा स्वास्थ्य तथा शिक्षा तो प्रदान की किन्तु न्यूनतम स्वतन्त्रता प्रदान करने के प्रयास बर्बरतापूर्ण ढंग से अस्वीकार कर दिए।[10]

फारमोसा में भूमि सुधार : 1952 में राष्ट्रवादियों के सामने फारमोसा में यह मूल प्रश्न उत्पन्न हुआ कि साम्यवादियों ने मुख्य चीन में जिस प्रकार भूमि का वितरण किया था यदि राष्ट्रवादी वापिस उस चीन में लौटे तो उस व्यवस्था का क्या किया जाएगा। क्या राष्ट्रवादी पुराने भूमि सामंतों को पदवियाँ लौटा दें ? या वे उन उपाधियों को स्वीकार कर लें जो साम्यवादियों ने उन लोगों को दी थीं जो राष्ट्रवादियों की दृष्टि में डाकू या विद्रोही थे। इसका समाधार व्यावहारिक दृष्टि से न सही भौतिक दृष्टि से जरूरी था। राष्ट्रवादियों ने साम्यवादियों द्वारा उत्पन्न किए गए नए सामन्तों के बारे में कोई परिवर्तन नहीं किया किन्तु पुराने सामन्त जिनको हानि हुई थी उन्हें मुआवजा दिया गया।

किन्तु फारमोसा में ऐसा सरल समाधान लागू करना संभव नहीं था। 50 वर्ष का जापानी शासन भी जमींदार व किसान के मध्य सम्बन्ध को प्रभावित नहीं कर सका था। फारमोसा दक्षिण चीन से मात्र इन अर्थों में भिन्न था कि यह भूस्वामियों को उत्पादन को अत्यधिक भाग प्राप्त करने से रोकता था। परम्परागत काश्तकारी व्यवस्था जो फुनेन प्रान्त की भूमि व्यवस्था से अत्यधिक भिन्न नहीं थी में किसान भू-स्वामियों को 50% से अधिक उपज देते थे। यह व्यवस्था सम्पूर्ण द्वीप के आधार पर नहीं थी। यह व्यवस्था वैयक्तिक समझौते पर आधारित थी। इस प्रकार के समझौते में काश्तकार प्रायः नुकसान में रहता था क्योंकि जमींदार यह व्यवस्था ऐसे समय भी कर सकता था जब काश्तकार अत्यधिक परेशानी में होता था। इसके अतिरिक्त किराये के काश्तकार कभी-कभी कुल उत्पादन का 70% तक जमींदार को दिया करते थे। फिर भी इन लोगों को सुरक्षा प्राप्त नहीं थी क्योंकि जमींदार कभी भी अपनी जमीन वापिस ले सकता था। गारंटी की राशि कभी-कभी वार्षिक किराये से दुगनी भी हुआ करती थी। इन परिस्थितियों ने तैवानी किसान की परिस्थिति बड़ी शोचनीय व दयनीय बना दी थी।

राष्ट्रवादियों को फारमोसा में आते ही इस समस्या का सामना करना पड़ा। च्याग तथा उसके सहयोगियों ने यह महसूस किया कि यदि वे चीन की मुख्य भूमि पर कभी भी लौटना चाहते थे तो उन्हें फारमोसा की आर्थिक तथा राजनीतिक व्यवस्था को सर्वोत्तम स्वरूप प्रदान करना चाहिए तथा इसका अर्थ यह था कि तैवान की भूमि समस्या का उचित समाधान किया जाए ताकि वहाँ के स्थानीय साम्यवादी एजेन्ट कृषकों को प्रोत्साहित न कर सकें तथा राष्ट्रवादी सरकार की आलोचना नहीं करें कि यह इतने छोटे द्वीप की भूमि व्यवस्था का समाधान भी नहीं कर सकी।

10. यह ध्यान योग्य बात है कि लिउ चिउ का प्राचीन राज्य जो अब ओकिनावा कहलाता है तथा संयुक्त राज्य अमेरिका के शासन के अन्तर्गत है, के लोगों ने विदेशी शासन के प्रति उतनी ही सरलता से आत्मसमर्पण किया जितनी सरलता से फारमोसा के लोगों ने किया। फारमोसा के चीनी लोगो ने प्रारम्भ मे थोड़ा विरोध किया था किन्तु एक बार राष्ट्रवादी शासन की स्थापना के बाद वे काफी नम्र बन गए। अमेरिकी उदारवादी अथवा चीनी साम्यवादी चाहे फारमोसा पर राष्ट्रवादी अत्याचारों की सहानुभूति में आंसू बहा सकते हैं ठीक उसी प्रकार जैसे मास्को रेडियो ओकिनावा वासियों की हमदर्दी में आंसू बहाता है तथापि एक निष्पक्ष प्रेक्षक को इन प्रदेशों में कोई विशेष बात नजर नहीं आ सकती है।

अप्रैल 1950 में ही तैवान की प्रान्तीय सरकार ने लगान की सीमा कुल फसल का 37·5% निर्धारित करने के नए नियम लागू किए तथा इसे शीघ्र ही क्रियान्वित भी कर दिया गया। व्यावहारिक स्तर पर यह भी जाँचा गया कि क्या ये सुधार फारमोसा के किसानों का कल्याण करते थे। राष्ट्रवादियों ने पर्याप्त गम्भीर व बुद्धिमानी से इस कानून को क्रियान्वित करने की कोशिश की।

37·5 प्रतिशत अधिकतम लगान का नियम लागू करते समय यह स्पष्ट कर दिया गया था कि किसी भी अर्थ में लगान कुल फसल के निर्धारित अंश में आगे नहीं बढ़ेगा। प्रारम्भ के जो समझौते इन शर्तों को उल्लंघ घटा दिया गया। जहाँ दरें इनसे कम थीं वहाँ उन्हें निर्धारित दर पर ला कर निश्चित कर दिया गया। किस फसल में कितना उत्पादन हुआ इसका निर्धारण इस विधान द्वारा स्थापित स्थानीय समितियों के द्वारा किया जाता था। यह भी व्यवस्था कर दी गई कि भूमि समझौते तीन से छः सालों के लिए हों ताकि काश्तकार स्वयं को सुरक्षित महसूस कर सकें। नए समझौते नए विधान के द्वारा किए जाने थे।

ऊँची लगान को कम करने के अलावा भूमि सुधार ने गारंटी रकम की राशि में भी कमी कर दी। ये कुल वार्षिक किराये का 1/4 कर दी गई। कठोर किराये की परम्परा अर्थात् चाहे कैसी परिस्थिति हो (अर्थात् अकाल, तूफान फसल की बीमारी अथवा किसी भी अन्य असफलता के बावजूद) लगान देना अनिवार्य था को समाप्त कर दिया गया। सूअर तथा मुर्गियों पर से अतिरिक्त कर को माफ कर दिया गया। किराये के दुबारे चुकाने का निषेध कर दिया गया।

भूमि सुधार के ग्रामीण पक्ष में, फसल उत्पादन का $37\frac{1}{2}$% लगान के रूप में देने पर ध्यान केन्द्रित किया गया जिसके लिए 1951 में किसानों को सार्वजनिक भूमि को बेचा गया। ये शर्तें पर्याप्त सरल थीं।

1953 में काश्तकार को जमीन मिले इस सिद्धान्त को स्वीकार किया गया। भूस्वामियों से अतिरिक्त भूमि को खरीदकर उसे कृषकों को दस वर्ष के समझौते के आधार पर बेचा गया।

इन सुधारों के आर्थिक परिणाम पर्याप्त लाभकारी सिद्ध हुए। उत्पादन बढ़ा तथा उसके साथ ही पूँजी भी बढ़ी। 1956 तक प्रान्तीय सरकार ने जनगणना तथा नगरीय भूमि को मापने की कार्यवाही प्रारम्भ की जो 1956–57 में मुख्य गतिविधि रही।[11] इस कार्यक्रम का उद्देश्य सनयातसेन वाद के आधार पर नीतियों को क्रियान्वित करना था। (पश्चिमी प्रेक्षकों का विचार है कि फारमोसा के सुधारों ने साम्यवादी चीन के विरुद्ध

11. दि चाइनीज न्यूज सर्विस, न्यूयार्क एन. एन. एल. वी. आई-27 जुलाई 3, 1956 सी के मेन द्वारा प्रस्तुत कार्यक्रम की रूपरेखा रखता है। तैवानी सुधारों का पूर्ण विवरण गेराल्विक की रचना फारमोसा बीच हैड, शिकागो, 1953 में विशेष रूप से पृ 195–120 पर मिलता है। नगरभूमि सुधार योजना में यद्यपि निजी भूमि रखी गई थी किन्तु बढ़ते हुए मूल्य के साथ 30% से 90% तक कर लगाया गया था। सनयातसेन द्वारा प्रस्तुत कर विधि अपनाई गई थी अर्थात् यदि कोई सम्पत्ति मालिक अपनी सम्पत्ति का मूल्य सरकारी मूल्य की तुलना में 20% से कम आंकता था तो वह उस भूमि पर सरकार को उसी मूल्य पर अधिकार प्रदान कर देता था। नगर सम्पत्ति पर कर 1·5% से 6·5% के मध्य रखा गया। राष्ट्रवादी चीन अपने तौर पर हमेशा समाजवादी रहा है। तैवान में समाजवाद सैद्धान्तिक दृष्टि से ब्रिटेन की समाजवादी सरकार से कहीं ज्यादा है। एक आदर्श पूर्ण उपनिवेश सर्वदा प्रयोग के उपयुक्त होता है।

मनोवैज्ञानिक दवाव का काम किया। ऐसा करने में उन्होंने साम्यवादियों द्वारा इनके स्वरूप को जिस विकृत स्वरूप में प्रस्तुत किया गया है उसकी चर्चा नही की। फारमोसा में सुधार वाह्य विश्व से उसके सम्वन्धो को सुधारते हैं।)

श्रम वीमा : श्रमिकों के सम्वन्व में जो सुधार राष्ट्रवादियों द्वारा किए गए वे यद्यपि अमेरिकी स्तर की तुलना में प्रारम्भिक स्तर के थे तथापि चीनियों के लिए क्रान्तिकारी थे। सम्वन्धित श्रमिकों की संख्या मात्र 300,000 इतनी ही थी किन्तु राष्ट्रवादी इस संदर्भ में चूंकि साम्यवादियों के प्रति अत्याधिक सतर्क थे अतः उन्होंने इनकी स्थिति सुधारने के लिए हर संभव प्रयास किया। श्रमिक झगड़ों को टालने के लिए मध्यस्थता तथा पंचनिर्णय का आश्रय लिया गया। वे सभी उद्योग अथवा फैक्ट्री जिसमें 20 अथवा अधिक श्रमिक थे प्रान्तीय सरकार द्वारा वनाए गए नियमों के अन्तर्गत आते थे। आघात, अयोग्यता, वच्चों के जन्म तथा मृत्यु, बुढ़ापे अवकाश की स्थिति के लिए वीमा की व्यवस्था विद्यमान थी। ऐसे प्रत्येक वीमा की देय राशि श्रमिक के मासिक वेतन का 3 प्रतिशत होती थी। श्रमिक स्वयं मात्र पाँचवा भाग अदा करता था तथा 3/5 भाग मालिक द्वारा तथा 1/5 भाग सार्वजनिक कोप से दिया जाता था। इस प्रकार श्रमिक का अंश व्रिटेन अथवा अमेरिका की तुलना में काफी कम था।[12]

फारमोसा को जीवित रखने वाले तत्व : राष्ट्रवादी यद्यपि फारमोसा में कई सुधार करने में सफल हुए हैं तथापि वे इन्हीं योजनाओं को मुख्य चीन में लागू करने में असमर्थ रहे थे। फारमोसा सरकार को दीर्घकालीन स्तर पर वने रहने के लिए वाह्य रूप से सैनिक सुरक्षा तथा कूटनीतिक मान्यता को प्राप्त करना जरूरी है तथा साथ ही इस द्वीप की आर्थिक स्वावलम्वन को वनाया रखना भी जरूरी है। अमेरिका का सातवाँ वेड़ा भी फारमोसा को वचाने में सफल नहीं होता यदि फारमोसा किसान आन्दोलन, हड़ताल तथा साम्यवादी दवाव की वजह से अस्त-व्यस्त व कमजोर हो जाता है।

इस प्रकार फारमोसा के अस्तित्व की समस्या दोहरी है–प्रथम प्रश्न यह है कि क्या राष्ट्रवादी गैर साम्यवादी व्यवस्था के सदस्य वन कर पेंकिंग के उग्र विरोध के वावजूद वने रह सकते हैं। द्वितीयतः क्या फारमोसा में आर्थिक परिस्थितियों में ऐसा उदाहरण प्रस्तुत किया जा सकता है जो पूर्णतः मुख्य चीन के साम्यवाद की टक्कर हो।

इन प्रश्नों के लिए 1945–1949 का काल पूर्णतः अपर्याप्त था। राष्ट्रवादियों के न तो कोई राजनीतिक उद्देश्य थे न कोई ऐसी प्रशासनिक क्षमता थी जो वाह्य शक्ति को वहाँ आने के लिए आकर्पित करती। जापानी जो स्वयं चीन पर अपने अधिकार को लेकर अत्यधिक मस्त हो गए थे माओ की वढ़ती हुई शक्ति के वारे में कुछ भी नहीं कर सके थे। 1945–1949 के मध्य स्वयं राष्ट्रवादियों का भला चाहने वाले लोग भी निरन्तर मुद्रास्फीति, सैनिक पराजय तथा आर्थिक कार्यक्रम जो देश की आवश्यकताओं से तादात्म्य नहीं रखते थे के सम्मुख उसकी सफलता के वारे में शंकास्पद थे। शंघाई नगर पर अपने नियन्त्रण के अन्तिम दिनों में राष्ट्रवादियों ने अनुदारवादी अमेरिकी व व्रिटेनवासियों को चिन्तित कर दिया था क्योंकि राष्ट्रवादियों की आसान पराजय के वावजूद जो कुछ व्यापार

12. फारमोसा पर राष्ट्रवादी शासन का निष्पक्ष वर्णन एफ. डब्ल्यू रिग्व की रचना फारमोसा एंड चाइनीज नेशनलिस्ट, हल, न्यूयॉर्क, 1952 में देखिये।

देश में बचा था उसे भी राष्ट्रवादियों ने अव्यावहारिक नीतियों को अपना कर उसे भी असंभव बना दिया।

राष्ट्रवादियों की आर्थिक असफलता का कारण 1945 में जापान से स्वतन्त्र किए गए चीनी क्षेत्र में राष्ट्रवादी सरकार को व्यापक विस्तार रहा होगा। प्रारम्भ में आर्थिक असफलता स्पष्ट तथा कटु रही थी। राष्ट्रवादी अपने पतन से पहले पर्याप्त अप्रिय हो चुके थे क्योंकि वे कृषक, श्रमिक व्यापारी अथवा बुद्धिजीवियों के लिए कुछ भी करने में असमर्थ रहे थे। राष्ट्रवादी नीतियों में विश्वास रखने वालों की संख्या धीरे-धीरे सिमट कर बहुत कम रह गई थी। मात्र वे मध्यमवर्गी तथा श्रमिक लोग जो साम्यवादी शासन के अन्तर्गत रहने का अनुभव उठा चुके थे 1949-50 के मध्य राष्ट्रवादी शासन को स्वीकार करते थे।

इसके विपरीत 1950-56 में राष्ट्रवादियों की गतिविधियाँ पर्याप्त प्रोत्साहित करने वाली रहीं थी। राष्ट्रवादियों ने चीन में अपने अन्तिम वर्षों में चीन में जो कुछ भी किया था उसका पूर्ण पश्चाताप फारमोसा में कर लिया गया था। चीन में जो भ्रष्टाचार चरमसीमा पर था फारमोसा में आकर वह समाप्त हो गया (अपने अन्तिम दिनों में भ्रष्टाचार राष्ट्रवादियों का प्रमुख दुर्गुण रहा था। इसका कारण यह नहीं था कि भ्रष्टाचार बड़े पैमाने पर घटित हुआ था अपितु यह था कि स्वयं राष्ट्रवादी चीन की अर्थव्यवस्था इतनी खराब, असुरक्षित नैतिकता विहिन व अन्यायपूर्ण थी कि इन सबमें राष्ट्रवादियों का भ्रष्टाचार बड़े पैमाने पर दृष्टिगोचर होता था। मुद्रास्फीति बड़ी तेजी से फैली बार-बार मुद्रा का अवमूल्यन हुआ पहले राष्ट्रीय डॉलर बाद में कस्टम यूनिट तथा फिर स्वयं स्वर्ण डालर का अवमूल्यन हुआ तथा अंततः राष्ट्रवादियों की कोई मुद्राप्रणाली ही नही बची। राष्ट्रवादी अब जिस मुद्रा का उपयोग करते हैं वह स्वयं फारमोसा प्रान्त की मुद्रा है। इस मुद्रा का जापान के मेन की तुलना में बहुत कम अवमूल्यन हुआ है तथा यह ओकिनावा द्वीप पर अमेरिकियों द्वारा प्रेषित येन के समान है।

जो राष्ट्रवादी मुख्य चीन में अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में असफल हुए थे फारमोसा में अपने प्रयास में सफल हुए। राष्ट्रवादियों ने फारमोसा में अतिरिक्त जनता के लिए खाद्य पदार्थ प्राप्त करने के लिए अपने आधिपत्य के दौरान ही अन्न का उत्पादन दुगना कर लिया। अर्थव्यवस्था असंतुलित होने के बावजूद अमेरिका की अर्थव्यवस्था के समान गम्भीर नहीं थी। फारमोसा से चीनी, चावल चाय तथा कपूर का निर्माण किया जाने लगा। इस द्वीप में आयात जापान के साथ द्विपक्षीय समझौते के अन्तर्गत तथा संयुक्त राज्य अमेरिका से आर्थिक व सैनिक सहायता के अन्तर्गत हुआ करता था। इस प्रकार फारमोसा संविधानिक प्रजातन्त्र का सीमा चिह्न शुद्ध प्रतीक नहीं। इसकी जनता का कल्याण जितना जापानी औपनिवेशिक संरक्षण पर निर्भर करता है उतना ही राष्ट्रवादियों के शासन की अच्छाइयों पर भी निर्भर करता है। क्योंकि इस द्वीप पर स्वशासन के संपूर्ण विकास के बावजूद महान शक्तिशाली चीन राज्य की दुश्मनी से उत्पन्न चिन्ता के कारण इस द्वीप को निरन्तर पुलिस प्रशासन के अन्तर्गत रहने के लिये बाध्य होना पड़ेगा। फारमोसा के अन्दर की मात्रा पर्याप्त सुरक्षा व्यवस्था की निगरानी में ही की जा सकती है। क्योंकि राष्ट्रवादी जानते हैं कि एक साम्यवादी क्रान्ति के साथ उनका सब-कुछ नष्ट हो सकता है। वे इस बात के लिए कटिबद्ध हैं कि फारमोसा में कोई साम्यवादी क्रान्ति नहीं होगी। अलोकप्रिय जनमत का दमन युद्ध स्तर पर किया जाता है। स्पष्ट है कि चीन से भागे हुए साम्यवादी विरोधी लोग ब्रिटिश हांगकांग या सिंगापुर में प्रदर्शन कर सकते हैं किन्तु स्वयं फारमोसा में नहीं कर सकते हैं।

साम्यवादियों की पीकिंग अथवा कोरिया में प्रत्येक हार के साथ फारमोसा में राष्ट्रवादियों की प्रतिष्ठा बढ़ती जाती है। 1952–53 के मध्य राष्ट्रवादियों ने समुद्र पार बसे चीनियों का समर्थन प्राप्त करने का व्यापक प्रयास किया था।[13] समुद्र पार चीनियों के कारण ही सनयातसेन के नेतृत्व में राष्ट्रवादी क्रान्ति चीन में प्रविष्ट हुई थी तथा आज भी मूल चीन के लिए समुद्र पार चीनियों का समर्थन प्राप्त महत्वपूर्ण है।

1947 के संविधान के अन्तर्गत गणराज्य के राष्ट्रपति के रूप में च्यांग काई शेक की कार्यविधि 1954 में समाप्त हो गई। प्रथम राष्ट्रीय सभा ने उसे 1948 में चुना था तथा तत्पश्चात् यह फरवरी 1954 में फिर बुलाई गई। इसे संपूर्ण गैर साम्यवादी चीन का प्रतिनिधित्व प्राप्त था। डॉ० हुशीह की अध्यक्षता में दुवारा आमन्त्रित सभा के दूसरे अधिवेशन में च्यांग को फिर से छः वर्ष के लिए राष्ट्रपति चुना गया। उपराष्ट्रपति ली-त्सुंग जो अमेरिका चला गया था जिसने वहाँ से वापिस आने से इन्कार कर दिया था को अपदस्थ कर दिया गया तथा चेंग चेंग को नया उपराष्ट्रपति चुना गया। इसी बीच रमोसा में लम्बे अर्से से रह रहे चीनियों तथा नवागंतुक राष्ट्रवादियों के बीच सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध स्थापित हो गए। राष्ट्रवादी चीन से मुख्य चीन को बहुत कम लोग पक्ष बदल कर गए। राष्ट्रवादी शक्ति के रूप में ही ताइपेह विश्व में राजधानी के रूप में विख्यात हो सकता था। इस प्रकार फारमोसा जापान के उपनिवेश मात्र के स्थान पर स्वयं में एक पृथक राष्ट्रवादी शक्ति बन गया। इस राज्य में सैनिक तथा कृपक दोनों ही संतुष्ट थे। फारमोसा के अपमान व दुखांत के दिन समाप्त हो चुके थे। अब सभी कठिनाईयों फारमोसा के बाहर विद्यमान थी।

फारमोसा में बना रहना अपने आप में कोई चिन्ताजनक विषय नहीं है। क्योंकि राष्ट्रवादियों ने इसे पूरा करके दिखा दिया है। किन्तु कुमितांग के नेतृत्व का प्रश्न अभी नहीं सुलझा है। मूल प्रश्न यह है कि क्या राष्ट्रवादी सरकार तथा कुमितांग पुनः चीन पर आधिपत्य स्थापित कर सकते हैं यह आधिपत्य विश्वव्यापी युद्ध के माध्यम से स्थापित हो सकता है क्या उस युद्ध में साम्यवाद विरोधी शक्तियां कुमितांग का समर्थन करेंगी, क्या तब चीन के लोग कुमितांग के नेतृत्व में किसी प्रकार की रुचि दिखाएंगे तथा तब क्या स्वयं साम्यवादी नेता उनका विरोध नहीं करेंगे क्योंकि उस वक्त साम्यवादी नेता चीन के आक्रामकों को राष्ट्रवादियों की तुलना में कहीं अधिक सुविधा प्रदान करने की स्थिति में अवश्य होंगे। ये प्रश्न राष्ट्रवादियों की स्थिति को गम्भीर बना देते हैं।

इसके विकल्प भी कठिन हैं। यदि राष्ट्रवादी चीन में किसी विदेशी सत्ता के आक्रमण के परिणामस्वरूप शक्ति प्राप्त नहीं कर सकते हैं तो उन्हें स्वयं को शक्तिशाली बनना चाहिए। चीन में स्वयं शक्ति प्राप्त करने के लिए राष्ट्रवादियों को तीन कारकों का प्रयोग करना चाहिये।

सर्वप्रथम मात्र वे ही एक गैर साम्यवादी चीनी क्रान्तिकारी दर्शन के प्रणेता हैं। सौभाग्य कहा जाए चाहे दुर्भाग्य वे सनयातवाद गणराज्य तथा राष्ट्रवादी क्रान्ति के वंशज

13. समुद्र पार चीनी सम्मेलन में 12,500,000 चीनियों के 260 प्रतिनिधि ताइपेह में 20 अक्टूबर 1952 में मिले। इस सम्मेलन में अन्य बातों के अलावा साम्यवादियों का बहिष्कार करना तथा अपने देशों की सरकार की साम्यवाद के विरुद्ध सहायता करना इन बातों को भी स्वीकारा गया। चाइनीज न्यूज सर्विस, एन. एन.-एन. 11-45 नवम्बर 4, 1952

है। वे उस स्वतन्त्र तथा उग्रवादी चीन के समर्थक है जिसमें कन्फ्यूशियसवाद मात्र वाद रह जाएगा।

द्वितीयत: मास्को तथा उसके आश्रित राज्यों तथा नाटों से सम्बन्धित राज्यों अथवा अमेरिका व जापान के गठबन्धन से सम्बन्धित राज्यों के मध्य संबंध देखने पर स्पष्टतया अधिकांश चीन से बाहर रहने वाले चीनी साम्यवादी देशो में न रह कर गैर साम्यवादी देशों में रहते हैं। अतः साम्यवादियो की तुलना में ये राष्ट्रवादी समुद्र-पार रहने वाले चीनियों को अधिक आसानी से प्रभावित प्रेरित व संगठित कर सकते हैं। समुद्र पार रहने वाले चीनियों का नेतृत्व यदि राष्ट्रवादी चीनी प्राप्त कर लेते हैं तो यह उसकी सफलता की दिशा में एक प्रभावशाली कदम होगा।

तृतीय तथा अन्तिम रूप से फारमोसा में भी क्रान्तिकारी चीन की भावना विद्यमान है। तथा 1935 के साम्यवादियों की तुलना में उनके पास फारमोसा अधिक व्यापक आधार प्राप्त है। प्रत्येक बड़े चीनी प्रान्त तथा नगर से उनके सम्बन्ध हैं। वे स्वयं क्रान्ति से शक्ति प्राप्त कर सके थे तथा क्रान्ति के समाप्त होने पर उनकी शक्ति भी समाप्त हो गई। वापिस उस शक्ति को प्राप्त करने का तरीका सरल व सहज नहीं हो सकता है। अतः राष्ट्रवादी पुनः शक्ति की प्राप्ति क्रान्ति के माध्यम से ही कर सकते हैं। इसका अर्थ स्वयं चीन के अन्दर राष्ट्रवादी गुरिल्ला स्थानों की स्थापना करना तथा साम्यवादी आधिपत्य से अधिकाधिक भूमि को स्वतन्त्र कराना हो सकता है ताकि माओत्सेतुंग के शासन से अधिक सक्रिय व गत्यात्मक क्रान्तिकारी स्थिति का निर्माण किया जा सके। किसी भी उदारवादी तथा प्रजातन्त्रीय स्वरूप वाली सरकार के सम्मुख इससे अधिक जटिल एवं कठिन कार्य नही हो सकता है।

यदि राष्ट्रवादी भविष्य में विश्वव्यापी युद्ध में साम्यवादी विरोधी खेमे की सहायता के बिना स्वयं अपने प्रयासों के बूते पर चीन की मुख्य भूमि पर लौट जाते है तो यह चीन के आधुनिक इतिहास की एक अतुलनीय घटना होगी। इस प्रकार की सफलता के सामने कई कठिनाइयाँ है किन्तु ये कठिनाइयाँ 1930 के मध्य में साम्यवादियों के सम्मुख भी थी। फारमोसा या तो एशिया में प्रजातन्त्र की असफलता का अन्तिम क्षेत्र हो सकता है या साम्यवाद का दृढ़तापूर्वक ढंग से सामना करने वाला सुदृढ़ गढ हो सकता है या तो इसे अत्यधिक सफलता मिलनी चाहिए अथवा पूर्ण नाश। तथापि वर्तमान में अधिक संभावना इन दोनों में से किसी भी विकल्प की नहीं है संभावना इस बात की है कि आने वाले कई वर्षों तक दोनों चीन विद्यमान रहेंगे। तथापि वाशिंगटन तथा मास्को कैंप के मध्य जितनी कटुता व्याप्त है उसके आधार पर इन दोनों पक्षों से सम्बन्धित इस क्षेत्र का बिना किसी व्यवधान के बने रहना भी संभव नहीं लगता है।

भविष्य के बारे में राष्ट्रवादी कल्पना : चाहे दोनों चीन बने रहे अथवा राष्ट्रवादी चीन की मुख्य भूमि या आधिपत्य करें इनमें से कोई भी निकल विकल्प भविष्य में प्रस्तुत हो तथापि फारमोसा सरकार के सम्मुख तात्कालिक कार्य पर्याप्त स्पष्ट है। राष्ट्रवादी फारमोसा में अपनी स्थिति को मजबूत बनाए रखें। भविष्य की चाहे कोई भी संभावनाएँ क्यूँ न हो वे आत्म विश्वास से पूर्ण दिखने चाहिए।

गैर साम्यवादी चीनियों से राष्ट्रवादी कह सकते हैं कि मात्र वे हीं स्वतन्त्र चीन की आवाज प्रस्तुत करते हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ में चीन के प्रतिनिधि डा० तिंगफू एफ त्सीं आग

ने इस बात को प्रस्तुत ढंग से कहा था : "चीन की मुख्य भूमि के मानचित्र का रंग बदल गया है। किन्तु मुख्य चीन के लोगों के रंग में परिवर्तन नहीं हुआ है। वे चीनी हैं तथा चीनी रहेंगे, सोवियत रूस के हाथ का खिलौना नहीं बनेंगे। वे कूटनीतिज्ञ जो अपना संपूर्ण जीवन संधि समझौते लिखने में बिताते हैं, सोचते कि वे लिखित रूप में चीन को भी समाप्त कर देंगे किन्तु चीनी इस प्रकार समाप्त होने के लिए तैयार नहीं हैं।

विशेष रूप से डॉ० त्सीग्राग वास्तविक मान्यता के सूत्र को अस्वीकार करता था। उसका कहना था कि कुछ लोगों के विचार में मुख्य चीन पर साम्यवाद का विजय स्थापित तथ्य है तथा विश्व भी इसे स्वीकार लेगा किन्तु यह स्थापित तथ्य नही है।[14]

मुख्य चीन के हाथ में अभी भी तैवान के भाग्य की कुंजी है। राष्ट्रवादी जानते हैं कि स्वयं उनके 1911 तथा 1926 की क्रान्तियाँ वर्षों की असफलता के बाद समाप्त हुई थीं। फारमोसा के राष्ट्रवादी, चीनी होने के नाते यह जानते हैं कि यदि एक बार साम्यवाद का पतन प्रारम्भ हो जाएगा तो स्वयं माओत्सेतुंग अपनी पेशबन्दी के बावजूद उसे नहीं रोक सकेंगे। किन्तु वे साम्यवाद के पतन की प्रतीक्षा नही कर सकेंगे उन्हें स्वयं साम्यवाद के पतन के लिए प्रयास करने चाहिए थे। 20 मई 1954 में च्यांग ने अपनी दूसरी अवधि शपथ लेते हुए कहा था—

.......संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारियों के अनुसार में जनता के सेवक के रूप में अपने कर्तव्यों का निर्वाह करते हुए अपने लोगों की स्वतन्त्रता, साम्यवादी दमन से मुक्ति तथा राष्ट्र के पुनर्जागरण का प्रयास करूंगा।

.... साम्यवादी लुटेरों द्वारा प्रारम्भ किए गए भूमि सुधार आन्दोलन तथा उद्योग व वाणिज्य के विरुद्ध प्रारम्भ किये गए प्रयास जनता की संपूर्ण स्वतन्त्रता पर पूर्ण नियन्त्रण प्राप्त करने का षडयंत्र है।........हमारी भूमि जोतने वाले को दी जाय इस सूत्र के अनुसार औद्योगिक तथा वाणिज्य को पूर्ण संरक्षण की नीति को हम न केवल अपने स्वतन्त्र क्षेत्र पर लागू करेंगे अपितु बाद में चीन की मुख्य भूमि को स्वतन्त्र कराकर उस पर भी लागू करेंगे।[15]

एक वर्ष के बाद उसने चीनियों को सहिष्णुता तथा आत्म तुष्टि का नारा दिया जो साम्यवादियों द्वारा भूतकाल में की गई इसी प्रकार की अपील से अधिक भिन्न नही था। साम्यवादियों के असंतोष से साम्यवादियों की विजय हुई। राष्ट्रवादी परिवर्तन भी आत्म विश्वास से ही आ सकता था विदेशी सहायता से नही।

"सर्वप्रथम राष्ट्रीय क्रान्ति की कुंजी को अपने हाथों में लेना चाहिये। यदि हम विश्व की समस्याओं से प्रभावित होते हैं तथा बाह्य सहायता पर अत्यधिक निर्भर करते हैं तो हम उसी यथास्थिति को बनाए रखने की कोशिश कर रहे हे जिसे हम बदलना चाहते हैं.......

द्वितीयत: हमें अपनी क्रान्ति तथा अन्य देशों से सम्बन्ध के परस्पर सम्बन्ध को समझना चाहिए। चीन अमेरिका से सहायता प्राप्त कर रहा है। संयुक्त राज्य अमेरिका हमें

14. डॉ० तिंगफु एफ त्सीआग का भाषण, वेस्ट ओरंग, न्यूजर्सी, जून 18, 1853 जो फ्री चाइना रिव्यू में अगस्त 1953 में पुन: प्रकाशित किया गया।, पृ. 56-57

15. दि चाइनीज न्यूज सर्विस, एन. आई. एल.-4 मई 20, 1954

इतने बड़े पैमाने पर सहायता दे रहा है कि इस सहायता का आकार पिछले 15 वर्षों में अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया है।

तृतीयत: हमें पेकिंग की कठपुतली सरकार में निहित संकट की संभावनाओं की जांच करनी चाहिए.......स्वयं साम्यवादी अनुमान के अनुसार लौह आवरण के पीछे इस वर्ष (1955) के जनवरी से मई तक 364,604 क्रान्ति विरोधी व आर्थिक षडयंत्रकारी पकड़े गए हैं। क्या इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक मिनट व प्रत्येक सैकिण्ड कोई न कोई व्यक्ति मुख्य चीन में साम्यवादी व्यवस्था पर प्रहार कर रहा है। यह मात्र लोगों के असंतोष का ही प्रतीक नहीं है अपितु राष्ट्र में नैतिक न्याय की भावना के प्रसार का प्रतीक भी है।

अब हमें अपनी सहायता को व्यावहारिक दृष्टि से देखना चाहिए तथा स्वतन्त्र चीन साम्यवादी तथा रूसी आक्रामक नीति के विरुद्ध सुदृढ़ बनना चाहिए। हमारी शक्ति का आधार मात्र हमारी सेवाएँ ही नहीं है अपितु संपूर्ण इतिहास के दौरान निर्मित राष्ट्रीय भावना भी इसका आधार है।

हम साम्यवाद का सामना मात्र सैनिक शक्ति से नहीं कर सकेंगे.......संपूर्ण चीन की भूमि पर *साम्यवादियों के विरुद्ध हम संघर्ष करेंगे* प्रत्येक राष्ट्रभक्त चीनी हमारे संघर्ष का समर्थन करेगा।[16]

यदि चीनी साम्यवादी विश्व के कठोरतम व निपुणतम साम्यवादी है तो उल्लेखनीय है कि राष्ट्रवादी भी इस विश्व के सर्वाधिक अनुभवी साम्यवाद विरोधी हैं। इन राष्ट्रवादियों ने 30 वर्षों तक साम्यवादियों से संघर्ष किया था।

□□□

16. पूर्वोद्धृत, एन. आई. एल. वी.-5 अक्टूबर 10,1955

अध्याय 9 | साम्यवादी चीन : जनवादी गणराज्य

राष्ट्रवादियों के साथ दीर्घ तथा कठिन संघर्ष के दौरान साम्यवादी जान चुके थे कि क्रान्ति करना दुखदायी था। कटु अनुभव के पश्चात् वे इस नतीजे पर पहुँचे कि एक अच्छी सरकार को प्राप्त कर सकना आसान नहीं था। चीन में साम्यवाद के संघर्ष की कहानी को दो भागों में बांटा जा सकता है। 1921 से 1927 का प्रथम काल था जिसमें साम्यवादी दल ने कुमितांग के साथ सहयोग करते हुए अपने आधार को मजबूत बनाने का प्रयास किया। किन्तु यह सहयोग 1927 में समाप्त हो गया। 1927 से 1937 के काल में साम्यवादियों ने अपरिपक्व अवस्था में ही सरकार की स्थापना की जो बाद में उन्हें समाप्त करनी पड़ी। बाद में चीन के साम्यवादियों ने सरकार को शक्ति प्राप्त करने का साधन बनाया स्वयं में एक साध्य के रूप में स्वीकार नहीं किया। अन्त में भी सम्यवादियों ने अपनी सरकार की घोषणा तब तक नहीं की थी जब तक चीनियों ने सम्पूर्ण चीन में सेना तथा दल के माध्यम से आधिपत्य स्थापित नहीं कर लिया।

चीनी साम्यवादी दल के निर्माण के वर्ष : चीन में मार्क्स-लेनिन-स्टालिनवाद का प्रारम्भ 1919 के छात्रों के उस आन्दोलन से हुआ जिसमें बौद्धिक वर्ग के एक समूह ने, शांहुंग में जापान को जर्मनी के अधिकार दिये जाने के विरोध में वर्साय की सन्धि की आलोचना व आन्दोलन करना प्रारम्भ किया। इस छात्र आन्दोलन ने चीन में एक राजनीतिक राष्ट्रीय चेतना का निर्माण किया जिसने अन्ततः राज्य में राजनीतिक व सामाजिक सुधार की मांग को लोकप्रिय बनाया।

साम्यवादी दल के अस्तित्व में आने से पहले की यह एतिहासिक पृष्ठभूमि थी। 1920 में एक युवा प्रोफेसर चेन तू हसु ने मार्क्सवाद के इंस्टीट्यूट की स्थापना की। इसी वर्ष लेनिन ने अपने एक सचिव मेरिन को चीन में अपने प्रतिनिधि के रूप में चीन के साम्यवादी दल के संगठन के प्रयास करने भेजा। इस दल का प्रथम राष्ट्रीय सम्मेलन शंघाई में 1921 में हुआ। इसी समय यूरोप स्थित चीनियों ने साम्यवादी दल की शाखाएँ अपने देशों में संगठित की। उदाहरण के लिये चाउ-एन-लाइ ने पेरिस में तथा चू तेह ने बर्लिन में साम्यवाद की शाखाओं की स्थापना का कार्य किया।

दल के प्रथम सम्मेलन में चेन तू हसी इसका प्रथम सचिव चुना गया। 1922 में इस दल के द्वितीय अधिवेशन में यह प्रस्ताव पारित किया गया कि चीनी साम्यवादी दल को तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय संगठन का सदस्य बन जाना चाहिये तथा तदुपरान्त उसको चीनी शाखा के रूप में कार्य करना चाहिये।

तथापि उस समय साम्यवादी दल के सम्मुख मूल समस्या इसके कुमिताँग दल से संम्बन्धों का स्वरूप निर्धारित करना था। चूँकि लेनिन के अनुसार औपनिवेशिक तथा अर्द्ध औपनिवेशिक देशों के साम्यवादी आन्दोलन को मूल राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आन्दोलनों के साथ सम्मिलित होना चाहिये था अतः चीनी साम्यवादी दल को कुमिताँग के साथ सम्मिलित होना पड़ा। 1922 के अन्त से चीनी साम्यवादियों ने कुमिताँग की सदस्यता ग्रहण करनी प्रारम्भ की हालाँकि गुप्त रूप से उन्होंने साम्यवादी दल की सदस्यता को बनाए रखा।

रूस से कई परामर्शदाता चीनियों को क्रान्ति की प्रविधियाँ सिखाने चीन गए। सोवियत सरकार का प्रतिनिधि एडोल्फ-जोफे पेकिंग सरकार तथा कुमिताँग से बातचीत करने पेकिंग गया। उसके बाद लिओ कार कहान भी इसी प्रकार के उद्देश्य से 1924 में पेकिंग सरकार के पास गया। जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है बाद में माइकेल बोरोदिन तथा जनरल ब्लूचर को कैंटून कुमिताँग के पुनर्गठन के लिए तथा सेना के प्रशिक्षण के लिए भेजा गया। इस सम्पूर्ण काल में सोवियत सरकार ने पेकिंग के साथ औपचारिक उचित कूटनीतिक सम्बन्ध रखे जबकि तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में कुमिताँग व साम्यवादी एकता के प्रयास जारी रखे।

कुमिताँग के पुनर्गठन के पश्चात् जनवरी 1924 में सम्मेलन में कुमिताँग दल ने यह निर्णय किया कि उनके दल में उन्हीं साम्यवादियों को शामिल किया जाएगा जो कुमिताँग सिद्धान्तों को स्वीकार करते थे। कई साम्यवादियों को कुमितांग में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त थे। लिन त्सु हेन कृषक संगठन का अध्यक्ष था तथा माओत्से तुंग कुमितांग की केन्द्रीय कार्यकारिणी परिषद् का सदस्य था। साम्यवादियों ने कुमितांग के अन्दर संगठित हो कर कई ब्रिटिश तथा विदेशी विरोधी आन्दोलनों का संगठन किया था जिन्होंने राष्ट्रव्यापी ध्यान आकर्षित किया था। इसी समय सोवियत संघ के निर्देशों के आधार पर जनरल ब्लूचर ने परामर्श से एक नई सेना का संगठन किया गया तथा क्रान्ति को सफल बनाने के लिए कई सहायक संस्थाओं का निर्माण भी किया गया।

उत्तरी मोर्चे के दिनों में जब यह आन्दोलन दक्षिण से मध्य चीन की ओर तीव्र गति से फैला कुमितांग ने अपना ध्यान विदेशी साम्राज्यवादियों तथा देशी युद्ध सामन्तों के प्रभाव को समाप्त करने में लगाया। जबकि इस काल में साम्यवादियों ने नगर तथा ग्रामीण प्रदेशों के श्रमिकों तथा कृषकों को संगठित करने के तरीकों में सुधार किया। 1926 तक उत्तरी मोर्चे की सेना ने कई विजय प्राप्त कर ली तथा यांग्ज तक पहुँच गए तथा राष्ट्रवादी सरकार हेन्कोव को स्थानान्तरित कर दी गई।

किन्तु धीरे-धीरे साम्यवादी दल तथा कुमितांग दल के परस्पर सम्बन्धों में तनाव दृष्टिगोचर होने लगे। धीरे-धीरे कुमितांग दल ने महसूस किया कि साम्यवादी जो लोकप्रिय संगठन का स्वरूप रखता था तीव्रता से राष्ट्रवादी तथा प्रजातान्त्रिक क्रान्ति को महान वर्ग संघर्ष के रूप में परिवर्तित करता जा रहा था जो कुमितांग दल का उद्देश्य कभी नहीं रहा था। उन्होंने यह भी महसूस किया कि धीरे धीरे सरकारी नेतृत्व व महत्वपूर्ण स्थान भी साम्यवादियों को मिलते जा रहे थे। परिणामतः च्यांग काई शेक ने वुहान की वामपंथी सरकार से सम्बन्ध विच्छेद करने का निर्णय किया तथा अपना मुख्यालय नानाचांग को स्थानान्तरित कर लिया। तथापि जब च्यांग काई शेक की सेनाओं ने शंघाई पर पूर्ण अधिकार स्थापित कर लिया तथा उसे यह विश्वास हो गया कि इस विशाल नगर की

आर्थिक सहायता से वह स्वयं को सोवियत संघ की आर्थिक सहायता से मुक्त कर सकेगा तभी उसने कुमितांग दल को साम्यवादियों से शुद्ध करने का प्रयास प्रारम्भ किया।

वुहान शासन के पतन से पहले भी वामपंथी कुमितांग नेता अपने साम्यवादी सहयोगियों से रुष्ट हो चुके थे। तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में भारतीय प्रतिनिधि एम० एन० राय ने हेन्कोव के नेताओं को कुमितांग दल को अपरस्थ करने के मास्को षड्यन्त्र से अवगत कराया। 15 जुलाई 1927 में कुमितांग की केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति ने कुमितांग दल से सभी साम्यवादी सदस्यों को वहिष्कृत करने; तथा साम्यवादी दल को अवैध दल घोषित करने का प्रस्ताव पारित किया।

इस बीच पेकिंग सरकार ने 6 अप्रेल 1927 को रूसी दूतावास पर नाटकीय ढ़ंग से छापा मारने के पश्चात् सोवियत यूनियन से दौत्य सम्बन्ध तोड़ लिये। बाद में यह प्रमाणित हो गया कि सोवियत कूटनीतिक अधिकारी चीनी साम्यवादियों का सक्रिय रूप से समर्थन कर रहे थे तथा उत्तरी युद्ध सामन्त यु हसिआग को इस दृष्टि से सोवियत संघ आर्थिक सहायता भी दे रहा था।

जब नानकिंग में 1928 में कुमितांग की नई सरकार की स्थापना की गई तो कई नेताओं ने अपनी निष्ठा नयी सरकार के प्रति बदल ली। कई साम्यवादी नेता या तो मार डाले गये या वन्दी बना लिए गए तथा अधिकांश भूमिगत हो गये। अगस्त 1927 में कुछ साम्यवादी नेताओं ने किवाँन्सी में क्रान्तिकारी शासन की स्थापना की। इसके पश्चात् मध्य व दक्षिण चीन के कई नगरों में बड़े पैमाने पर रक्तपात तथा असफल विद्रोह हुए। दिसम्बर 1927 में कैंटून कम्यून की असफलता के पश्चात् कठोर से कठोर साम्यवादी भी यह स्वीकार करने लगा कि चीन में प्रथम क्रान्ति समाप्त हो चुकी है तथा साम्यवादी असफल रहे हैं। इसके पश्चात् साम्यवादी दल में व्यापक रूप से शुद्धिकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई जो लोग घटनाओं का सही अन्दाजा लगाने में असफल हुए थे हटा दिए गए। तथा वे लोग नए नेताओं के रूप में उभरे। 1927 से 1932 के मध्य के समय दलीय नीतियों व नेतृत्व में अत्याधिक परिवर्तन हुए जिनके परिणामस्वरूप साम्यवादी आन्दोलन असफल हुआ।

तथापि चीनियों ने अपने प्रारम्भिक वर्षो की सफलताओं तथा असफलताओं से [बहुत कुछ सीखा। नई स्टालिन नीति से प्रोत्साहित होकर वे कुमितांग दल पर आधिपत्य करने का विचार करने लगे जो पर्याप्त शक्तिशाली, प्रभावशाली व क्रान्तिकारी थी। किन्तु वे कुमितांग दल की सैनिक शक्ति पर नियन्त्रण नहीं कर सके। अन्ततः यह खाई रूस की लाल-सेना को पाटनी पड़ी।

दूसरी ओर अपने प्रारम्भिक वर्षों में साम्यवादी दल ने मास्को से निकट सम्बन्ध रखे तथा पूर्णतः दलीय संगठन व लेनिनवादी विचार को समझा। परिणामतः चीन में मार्क्सवाद व लेनिनवाद अत्यधिक लोकप्रिय हो गया तथा साम्यवादी जनवादी नेतृत्व प्राप्त

करने में सफल हो गए। मार्क्स-लेनिन-स्टालिनवाद को अभी चीनी संदर्भ में ढलना था तथा इस कार्य को माओत्सेतुंग ने किया।[1]

चीनी सोवियत गणराज्य : चीन के जनवादी गणराज्य तथा पुराने चीनी सोवियत गणराज्य से फर्क है। चीनी सोवियत गणराज्य बहुत कम समय के लिए अस्तित्व में रहा इसकी स्थापना 1931 में हुई तथा 1937 में यह समाप्त भी हो गयी। जबकि चीन का जनवादी गणराज्य एक स्थायी सरकार है जिसकी घोषणा 1949 में हुई थी तथा यह अब भी विद्यमान है।

चीनी सोवियत गणराज्य, संयुक्त सरकार की असफलता तथा दिसम्बर 1927 में कैंटून काम्यून की असफलता के बाद नाटकीय ढंग से उदित हुआ। वस्तुतः प्रथम चीनी सोवियत सरकार की घोषणा कैंटून के पास हैकग में 1927 की नवम्बर में हुई जो कम्यून के पतन के बाद भी बनी रही तथापि 1931 नवम्बर में कैंटून कम्यून के चतुर्थ वार्षिक सम्मेलन के पश्चात् ही किआंग्सी में चीनी सोवियत गणराज्य की स्थापना की गई। (सोवियत सरकार के संगठन को विस्तार में चार्ट संख्या नौ में बताया गया है)।

प्रथम अखिल चीनी सोवियत सम्मेलन जिसने नई सरकार की घोषणा की दिसम्बर 1931 में बुलाया गया। माओत्से तुंग केन्द्रीय सोवियत चीनी सरकार की परिषद् का अध्यक्ष चुना गया तथा चू तेह मुख्य सेनापति चुना गया। माओत्सेतुंग ने यह अनुभव किया कि चीनियों में अधिकांश कृषक थे तथा औद्योगिक मजदूरों की संख्या कम थी अतः उसने उदार भूमि सुधार योजना प्रारम्भ की। इन अर्थों में उसने साम्यवाद की औद्योगिक विद्रोह तथा क्रान्ति की अन्तर्राष्ट्रीय नीति से भिन्न नीति का अनुसरण किया।

राष्ट्रवादियों ने सेना के द्वारा साम्यवादियों के दमन का प्रयास किया। साम्यवादियों को ऐतिहासिक नगर मेनान की ओर कूच करने को बाध्य करने से पहले राष्ट्रवादियों को को कठोर संघर्ष करना पड़ा। 1937 में चीनी-जापान युद्ध के प्रारम्भ होने के पश्चात् चीनी साम्यवादियों ने केन्द्रीय सोवियत सरकार को भंग कर दिया तथा अपनी सेना को एर्थ रूट आर्मी के नाम से संगठित कर लिया।

प्रारम्भिक वर्षों में चीनी साम्यवादियों ने कड़ा संघर्ष अपनी पृथक सरकार को बनाए रखने के लिये किया ऐसी सरकार जिसे स्वयं सोवियत रूस भी स्वीकार नहीं करता था। उन्होंने मुद्रा छापना व सिक्के ढालने को प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया। चतुर्थ सेना के क्षेत्र को राजनीतिक आधार के रूप में बनाए रखना साम्यवादियों के लिए काफी मंहगा पड़ा तथा बाद में इसने साम्यवादियों को विशेष सहयोग नहीं दिया।

1936 में चीनी साम्यवादी निरन्तर संघर्ष से काफी थक चुके थे किन्तु उन्होंने हिम्मत नहीं हारी। सर्वप्रथम रूस-जापान, चीन-जापान तथा चीन-रूस के परस्पर सम्बन्धों

1. रूसी तथा चीनी स्रोतों के साथ चीन के प्रारम्भिक निर्माणात्मक वर्षों का वर्णन बेंजमिन स्वार्ड के द्वारा चाइनीज कम्यूनिज्म एण्ड द राइज ऑफ माओ, केम्ब्रिज 1951 में माओ की सफलताओं के साथ दिया गया है, विशेषतया इसका पांचवां अध्याय "मूल प्रवृत्तियों का मूल्यांकन"। इसी प्रकार का एक विलक्षण वर्णन जो कुछ सीमा तक पक्षपाती है ट्रोस्टकी वादी हैराल्ड आइजेक की रचना द ट्रेजडी आफ द चाइनीज रिवोल्यूशन (संशोधित संस्करण) स्टेनफोर्ड 1951 है जो कुमितान तथा साम्यवादी दोनों को प्रतिबन्धित करता है। नवीन समालोचन के लिए देखिये ब्रिगेडियर जनरल पी बोर्डो द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट। चीनी दृष्टिकोण के लिए देखिये लाइन् की रचना ड्राफ्ट हिस्ट्री आफ कुमितांग चुंगकिंग 1944।
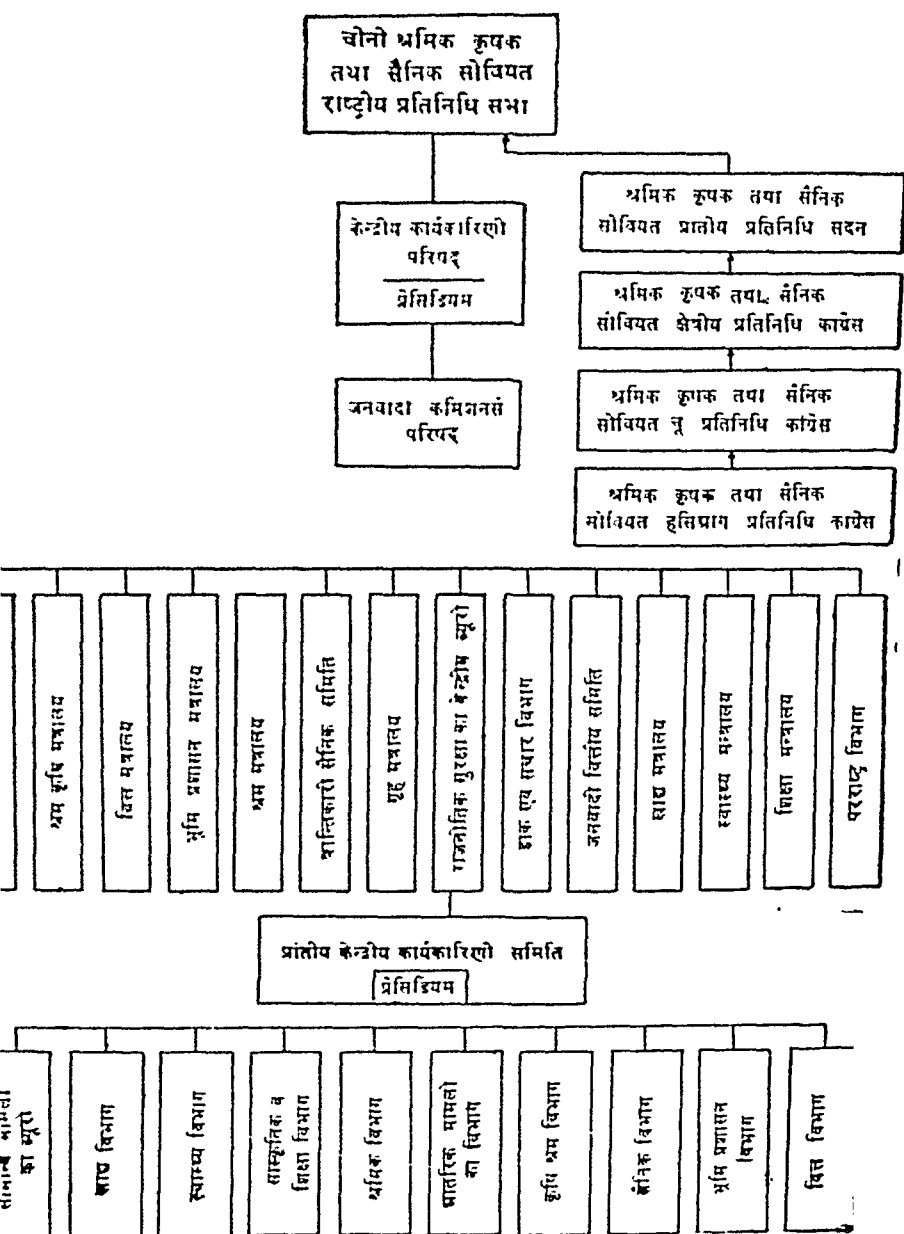
चार्ट संख्या 9 चीनी सोवियत गणराज्य की केन्द्रीय सरकार का संगठन
(7 नवम्बर में किआंग्सी में स्थापित)

ने उनकी आन्तरिक स्थिति को प्रभावित किया। कुमितांग साम्यवाद तथा अन्य अल्पसंख्यकों समूहों के मध्य काम चलाऊ समझौते ने कुछ समय के लिए साम्यवादियों को साँस लेने का मौका दिया। जापानी आक्रमण ने राष्ट्रवादी चीन की तुलनात्मक रूप से परम्परागत सेना के पाँव उखाड़ दिये तथा जापान विरोधी राष्ट्रवादी साम्यवादी छापामार दूर तक चीनी क्षेत्र में घुसपैठ करने में सफल हुए। इस प्रकार चीन में साम्यवादियों की सफलता का कारण न केवल 1920-30 की दशाब्दियों में कठिन परिस्थितियों के बावजूद उनके निरन्तर संघर्ष करने की क्षमता ही थी अपितु उनकी सामाजिक परिस्थियों को समझने की क्षमता भी थी जब उन्होंने दक्षिण चीन में अपनी पराजय के पश्चात् 1931-45 में राष्ट्रवादी जापान विरोधी छापामार व्यवस्था के रूप में उसका पुर्नगठन किया।

पुर्नगठन व पुनर्निर्माण का काल: 1936 से 1939 के मध्य में चीनी साम्यवादी दल विश्व की सर्वाधिक सामंजस्य कर सकने वाले दल के रूप में सिद्ध हुआ। अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए इसने शक्ति के आकर्षण को पूर्णतः छोड़ दिया तथा यह सत्ता के प्रति उदासीन हो गया। इस वक्त साम्यवादी दल ने यह निर्णय लिया (और यह निर्णय निस्सन्देह माओत्सेतुंग का सर्वाधिक बुद्धिमता पूर्ण निर्णय था) कि साम्यवादी दल शक्ति के लिए संघर्ष करने के बजाय अपनी सेना व संगठन के लिये वास्तविक समर्थन प्राप्त करने का प्रयास करेगा। यहाँ तक कि साम्यवादियों ने कुमितांग दल का झण्डा भी उड़ाना स्वीकार किया। उन्होंने अपनी सेना को आठवीं राष्ट्रवादी सेना के नाम से संगठित किया यद्यपि अपनी दक्षिणी सेनाओं को उन्होंने पूर्णतः नवीन चतुर्थ सेना के नाम से संगठित किया।

1937 से 1949 में जनवादी गणराज्य के घोषणा के समय तक चीनी साम्यवादी अपनी सरकारी भाषा में बड़े सतर्क रहे। उन्होंने राष्ट्रवादियों को सभी पदों व पदवियों का उपयोग करने दिया। वे मात्र वास्तविक शक्ति चाहते थे यह शक्ति, भूमि तथा सैनिकों के दस्तों पर नियन्त्रण तथा विभिन्न क्षेत्रों पर नियन्त्रण रखने वाले दलीय संगठनों के अर्थों में थी। प्रशासनिक सन्दर्भ में साम्यवादी दल ने मात्र उन्हीं कार्यों को करने की कोशिश की जो वे चीनी सोवियत गणराज्य के अन्तर्गत कह चुके थे। इस दल ने कोई सरकार नुमा संगठन न होते हुए भी अपने अधिकृत प्रदेश में सरकारी तौर पर नीतियों का निर्धारण किया तथा अपने प्रतिनिधियों को चुंगकिंग व सेन-फ्रेंसिस्को आठवीं सेना के प्रतिनिधि के रूप में भेजा। जहाँ-जहाँ साम्यवादियों की गुरिल्ला सरकारें थी वहाँ उन्होंने कुमितांग सरकार के अधिकार का स्पष्ट विरोध नहीं किया तथा वस्तुतः इस प्रकार के संघर्ष से सर्वदा बचने की कोशिश की। कई वर्षों तक चीन के राष्ट्रवादी तथा साम्यवादी क्षेत्रों का परस्पर सीमा विभाजन मात्र चुंगी चौकियों के आधार पर रहा। इस प्रकार लगभग दस वर्ष तक साम्यवादियों के एक क्षेत्र पर निरन्तर अधिकार बनाए रखा तथा उसका विकास किया वह प्रदेश यूरोप के किसी भी औसत राज्य के क्षेत्र से ज्यादा था। इस क्षेत्र का शासन उन्होंने किसी केन्द्रीय सरकार के अभाव में किया। 1940 के पश्चात् भी सरकारी उत्तरदायित्व को ग्रहण करने में उन्होंने पर्याप्त सतर्कता प्रकट की।

राष्ट्रवादियों के साथ संघर्ष में साम्यवादी अत्याधिक सतर्क व यथार्थवादी बन गए। निरन्तर संघर्ष ने उन्हें यह सिखा दिया था कि क्रान्तिकारी संदर्भ में मात्र सरकार रूपी यन्त्र होना उतना आवश्यक नहीं था जितना सैद्धान्तिक राजनीतिक तथा आर्थिक नियन्त्रण प्राप्त करना था। माओ के एक लोकप्रिय कथन के अनुरूप क्रान्ति करना सैर सपाटे पर निकलना नहीं

है, सैर सपाटे से पहले कठोर संघर्ष करना पड़ता है। 26 वर्ष के कठोर संघर्ष के पश्चात् जिसमें लाखों मित्रों व लाखों शत्रुओं की मृत्यु के पश्चात् ही चीनी वास्तविक शक्ति प्राप्त कर सके। यह उल्लेखनीय बात है कि उन्होंने जनवादी गणराज्य की घोषणा की है सोवियत गणराज्य की नहीं तथा ऐसा उन्होंने परम्परागत राजधानी पीकिंग में किया है। अपने जन्म से ही चीन की साम्यवादी सरकार शक्तिशाली आत्मविश्वास से पूर्ण तथा इस सरकार का प्रधान अन्य कोई व्यक्ति नहीं स्वयं सर्वाधिक संकट का सामना करने वाला, सुदृढ़ यथार्थवादी तथा आत्मविश्वास से पूर्ण माओ-त्से-तुंग है।[2]

माओ-त्से-तुंग तथा नवीन प्रजातन्त्र : जब माओत्सेतुंग का वर्णन साम्यवादी चीन के नेता के रूप में किया जाता है जो स्वयं कठोर रूप से राष्ट्रवादी रहा है तो अक्सर पश्चिमी प्रेक्षक माओत्सेतुंग को चीनी सभ्यता के किसी विशिष्ट पहलू को प्रस्तुत करने वाला मानते हैं। किन्तु यथार्थ इसके पूर्णतः विपरीत है। माओत्सेतुंग अपने विचारों में च्यांगकाई शेक से भी अधिक पाश्चात् है।[3]

साहित्यकार व दार्शनिक होने के नाते माओ ने तुलनात्मक रूप से प्राप्त निम्न स्तर के बौद्धिक लोगों के बावजूद एक पूर्णतः सफल नेता के रूप में कार्य किया है। यद्यपि वह स्वयं मार्क्सवाद से इतना अधिक जुड़ा हुआ है कि वह पृथक रूप से यह नहीं सोच सकता है कि मार्क्स का जो कुछ विश्वास था तथा बाद में लेनिन ने उसे जिस ढंग से प्रस्तुत किया उसका खण्डन किस प्रकार एक त्रुटिपूर्ण अर्थव्यवस्था, भ्रमपूर्ण समाज शास्त्र,अमान्य दर्शन व निकृष्ट-राजनीति के रूप में किया जा चुका है। तथापि माओ ने अपनी भौतिक रचनात्मकता निपुणता, तथा आन्तरिक वैयक्तिक तीक्ष्ण दृष्टि से कार्य किया है। उसकी मूल रचना 'आन न्यू डिमोक्रेसी' अपने समय की असाधारण मार्क्सवादी रचना है। यह मार्क्सवाद को चीनी संघर्ष में प्रस्तुत करने का सफल प्रयास है तथा यह इसे ऐसे राजनीतिक दर्शन व सामाजिक व आर्थिक सिद्धान्तों में रूपान्तरित करना है जो चीनी क्रान्ति की सन्दर्भ में कार्य कर सकेंगे।[4]

2. दक्षिण चीन में संघर्ष के सचित्र वर्णन के लिए देखिए गुस्ताव अम्मान की वारक्रीग इन चाइना, होइडबर्ग, 1939, यह साम्यवादी स्रोतों से पर्याप्त सभ्यता रखता है। 1931-32 में चीनी सोवियत गणराज्य के क्षेत्र के लिए विक्टर याकीन्तों की रचना द चाइनीज सोवियत्स, न्यूयार्क है जो रूसी भाषा के प्रेस द्वारा प्रस्तुत ऊपरी वर्णनों पर आधारित है। सौभाग्यवश इस तथा इसके बाद के मूल प्रलेख अब अंग्रेजी में कौन्रेड ब्रांट, बैंजमिन स्वार्ड तथा जॉन के फेयरबैंक की रचना ए डाक्यूमेंट्री हिस्ट्री आफ चाइनीज कम्युनिज के ब्रिज, 1952 में प्राप्त है। विशेषतया चौथा भाग देखिये जिसमें सोवियत गणराज्य का नवम्बर 1931 का संविधान तथा नवम्बर 1931 का भूमि कानून लिखित है।

3. विरोधाभास के लिये देखिये पृष्ठ 179-281।

4. सैद्धान्तिक विचारधारा तथा नीतियों पर माओ की मुख्य रचनाएं निम्न हैं, द चाइनीज रिवोल्यूशन एण्ड चाइनीज कम्यूनिस्ट पार्टी 15 नवम्बर 1939 जिसका अंग्रेजी अनुवाद चाइना डाइजेस्ट में खण्ड 5 संख्या 9 व 10 में प्रकाशित हुआ। आन न्यू डेमोक्रेसी, 19 जनवरी, 1940, इसका अंग्रेजी अनुवाद चाइनीज न्यूज सर्विस द्वारा न्यूयार्क 1947 में प्रकाशित किया गया। कोइलीशन गवर्नमेंट है 24 अप्रैल, 1945 इसका अनुवाद फाइट फार ए न्यू चाइना न्यूयार्क, 1945 पृष्ठ 40 में दिया गया, द प्रजेंट सिचवेशन एण्ड अवर स्टाक, 25 दिसम्बर, 1947, जान द पिपुल्स डेमोक्रेटिक डिक्टेटरशिप 15 जुलाई, 949, जिसका अंग्रेजी अनुवाद संक्षिप्त रूप में प्रजातंत्रीय सुदूर पूर्व की नीति के लिए गठित समिति द्वारा न्यूयार्क में "जनवादी प्रजातंत्र की तानाशाही" के शीर्षक से प्रकाशित किया गया में, "नवीन प्रजातंत्र" में सम्मिलित सरकार तथा जनवादी प्रजातंत्र की अधिनायकता का मूल प्रारूप दिया गया है।

चाहे ड्वाइट आइजनहावरकालीन अमेरिका की दृष्टि से माओ के विचार मध्य विक्टोरियाकालीन नजर आते हों तथा उसका समाजशास्त्र व मनोविज्ञान चाहे कितना ही दकियानूसी क्यों न हो उसकी क्रान्ति की प्रविधि बड़ी कठोर है तथा पश्चिमी दृष्टिकोण से माओ के विचार पर्याप्त ठोस हैं।

यूरोपियन नमूने का चिन्तन चीनी साहित्य में उपलब्ध नहीं है। आधुनिक चीनी राजनीतिक विचार अब भी ऐसी तुलना के आधार तर्क है जो काल्पनिक है तथा जो सहानुभूति अथवा घृणा उत्पन्न करता है। भावनारहित बौद्धिक विश्वास जो पश्चिमी जगत् की विशेषता है चीन में प्राप्त नहीं है। चीन में पूर्णतः पश्चिमी तरीके से चिंतन माओ त्से तुंग के अलावा बहुत कम चीनी कर सकते हैं।

ऑन 'न्यू डेमोक्रेसीज' पुस्तक में इस विचार का विकास किया गया है कि चीन में साम्यवादी क्रान्ति के दो स्तर रहे हैं। यह विचार 19 वीं शताब्दी के इस मार्क्सवादी विचार का समर्थन करता है कि क्रान्ति के दो स्तर होने चाहिये। प्रथम क्रान्ति सामन्तवाद से पूँजीवादी प्रजातन्त्र की ओर होनी चाहिये तथा द्वितीय क्रान्ति पूँजीवाद से समाजवाद की ओर होनी चाहिये। माओ चीन के सन्दर्भ में इस सिद्धान्त को स्वीकार करता है तथापि उसका विचार है कि उचित परिस्थियाँ उपलब्ध होने पर क्रान्ति की दोनों स्थितियों का संचालन साथ साथ किया जा सकता है। माओ का विचार है कि इसके लिये साम्राज्यवादी, सामन्तवादी, प्रशासनिक तत्वों को छोड़कर सभी प्रगतिवादी तत्वों का सहयोग आवश्यक होता है। इस प्रकार का संयोजन मात्र पूर्व समाजवादी परिस्थितियों के लिये आवश्यक होता है जिसमें बाद में धीरे धीरे समाजवादी परिवर्तन किये जाते हैं। इस प्रकार वह पर्याप्त सतर्कतापूर्ण ढंग से प्राचीन सामाजिक व्यवस्था से किसी प्रकार के संघर्ष से बचाव करता है विरोध को कम करता है तथा बाहर से किसी प्रकार के दबाव की सम्भावना से भी बचाता है। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि चीनी साम्यवाद में संघर्ष की आवश्यकता नहीं है अपितु इसका तात्पर्य मात्र यह है कि पूर्ण शक्ति प्राप्त न करने तक हिंसा के प्रयोग को टाला जा सकता है। आन न्यू डेमोक्रेसी में दूसरा विशेष विचार यह है कि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में चीन को सोवियत यूनियन के नेतृत्व का अनुसरण करना चाहिये तथा विश्व के अन्य सर्वहारा वर्ग से भी यथासंभव सहायता प्राप्त करनी चाहिये। यह अन्तिम विश्वास पहली दो प्रतिविधियों में निहित सुधारवादी प्रवृत्तियों के समानान्तर है। इस प्रकार माओ-त्से तुंग की मूल प्रविधि गैर साम्यवादियों के सहयोग से साम्यवादी उद्देश्यों को प्राप्त करना है।

माओ का मूल उद्देश्य सोवियत विचार द्वारा खण्डित सुधारवाद तथा वामपंथ दोनों से बचना है। 'आन न्यू डेमोक्रेसी' में न केवल चीनी साम्यवादियों द्वारा शक्ति प्राप्त करने के तरीकों का वर्णन किया गया है अपितु इसमें मार्क्सवाद का एक संशोधित ऐसा रूप सम्भावित किया गया है जो चीन के समकालीन विकास से विशेष साम्यता रखता है।

व्यावहारिक राजनीति के संदर्भ में 'आन न्यूडेमोक्रेसी, एक ऐसी शासन प्रणाली की कल्पना की गई है जिसे 'प्रजातन्त्रीय तानाशाही, कहा जा सकता है। मार्क्सवाद के अनुसार सभी प्रकार की सरकारें एक या अन्य वर्ग की तानाशाही होती हैं अतः तानाशाही सरकार का पर्यायवाची है तथा इसको अन्यथा किसी रूप में प्रकट करने का प्रयास अनावश्यक है। साम्यवादी शासन को मानो प्रजातन्त्रीय मानता है क्योंकि इसमें विभिन्न वर्गों का संयोजन होता है तथा इसमें निर्वाचित प्रतिनिधित्व संख्या होती है। 1949 में चीन में साम्यवाद

सरकार की स्थापना करने में माओ ने अपनी विचारधारा को व्यवहारिक रूप प्रदान किया तथा माओ ने शक्ति प्राप्त करने का मार्ग साम्यवादी दल को बनाया।

साम्यवादी दल की संरचना : चीनी साम्यवादी दल जो पचास-साठ लाख सदस्यों को निहित करती है जो विश्व का सर्वाधिक विशाल सजातीय समूह है तथा यह सम्भवतया सोवियत रूस के बाहर सर्वाधिक शक्तिशाली दलीय संगठन है। चीनी साम्यवादी दल का संगठन सोवियत दल के नमूने पर ही दलीय संगठन में सामान्य पद सोपान क्रम है जो प्रारम्भिक ईकाई समूह से जिला क्षेत्र प्रांतीय तथा केन्द्रीय स्तर पर संगठित है। दल का सर्वोच्च संस्था राष्ट्रीय दलीय कांग्रेस है तथापि रूस के समान ही दल की वास्तविकशक्ति केन्द्रीय समिति में निहित है जिसमें 42 सदस्य नियमित तथा 30 सदस्य सुरक्षित हैं। केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के अन्तर्गत केन्द्रीय राजनीतिक व्यूरो तथा विभिन्न केन्द्रीय विभाग हैं हैं जो संगठन प्रचार, प्रशिक्षण युवावर्ग, कृषक तथा श्रमिक आन्दोलन के लिए उत्तरदायी हैं।

केन्द्रीय राजनीतिक व्यूरो जो सोवियत पोलिट व्युरो का समकक्षी है वास्तविक नीति निर्धारण करने वाली संख्या है जिसका अध्यक्ष माओ है। यह सभी प्रशासनिक क्षेत्रों को अपने प्रनिनिधि भेजती है। यह गोपनीय सेवाओं तथा नवीन प्रजातन्त्रीय युवा सेना पर भी नियन्त्रण रखती है।

दलीय कार्यों को नियन्त्रित करने वाला मूल सिद्धान्त लोकप्रिय साम्यवादी विचार 'प्रजातन्त्रीय केन्द्रीयकरण है,।[5] दलीय सिद्धान्तवादियों के अनुसार दलीय नीति तथा दलीय प्रशासन में अन्तर स्थापित किया जाना चाहिए। दलीय सदस्यों से दलीय नीति को स्वीकारने की अपेक्षा की जाती है तथा दल के निम्न स्तरीय संगठनों को उच्चस्तरीय संग-ठनों द्वारा निवारित कार्यक्रम को बिना किसी विवाद के पूरा करना होता है किन्तु सिद्धा-न्ततः कोई भी सदस्य दलीय नीति पर विचार होते समय उस पर विचार व्यक्त कर सकता है तथा नीति को क्रियान्वित करने के तरीकों की आलोचना भी कर सकता है किन्तु वस्तुतः चूंकि नीति को निर्धारण करने व उनको क्रियान्वित करने के मध्य बहुत कम अन्तर है अतः बहुत छोटे व गैर महत्वपूर्ण विषयों पर ही खुलकर विचार किया जा सकता है।

निम्नांकित चार्ट चीनी साम्यवादी दल में स्थानीय तथा केन्द्रीय सम्बन्धों तथा महत्व-पूर्ण दलीय अंगों को सरल रूप में प्रस्तुत करता है :

केन्द्रीय जनवादी सरकार का संवैधानिक स्तर

युद्ध के दौरान चीनी साम्यवादियों ने तीन तिहाई व्यवस्था का अनुसरण किया।[6] इस व्यवस्था का उद्देश्य वाह्य रूप से साम्यवादियों को अल्प मत में रखते हुए वास्तविक राजनीति व आर्थिक शक्ति पर अधिकार करना था। जिन जनवादी गणराज्य की स्थापना

5. सरकारी व्यवहार में इस सिद्धान्त को निहित करने के लिए देखिये पृष्ठ 220–24। दलीय गठन तथा प्रालेखों की आलोचनात्मक व्याख्या के लिए देखिये ब्रांड स्वार्ड तथा फेयरबैंक की पूर्वोद्धृत पुस्तक।

6. तीन तिहाई की व्यवस्था को चीनी साम्यवादियों ने मुक्त किये गये क्षेत्रों पर शासन करने के लिए अपने 1949 की सैनिक विजय से पहले प्रयुक्त किया था। इस व्यवस्था के अन्तर्गत साम्यवादियों ने अपने सभी प्रशासनिक एवं प्रतिनिधित्व संगठनों में अपना प्रभुत्व कुल सदस्यता का एक तिहाई कर दिया था बाकी दो तिहाई स्थान प्रगतिवादी तत्वों तथा मध्यवर्गीय सदस्यों द्वारा भरे गये थे। किंतु वास्तविक व्यवहार में उन्ही लोगों को नियुक्त किया जाता था जो साम्यवादियों के समर्थक थे। यह स्वनिर्धारित नियन्त्रण प्रजातंत्रीय मोर्चे को प्रस्तुत करने का छल मात्र था।

चार्ट संख्या 10 : चीनी साम्यवादी दल का सरलीकृत संगठन
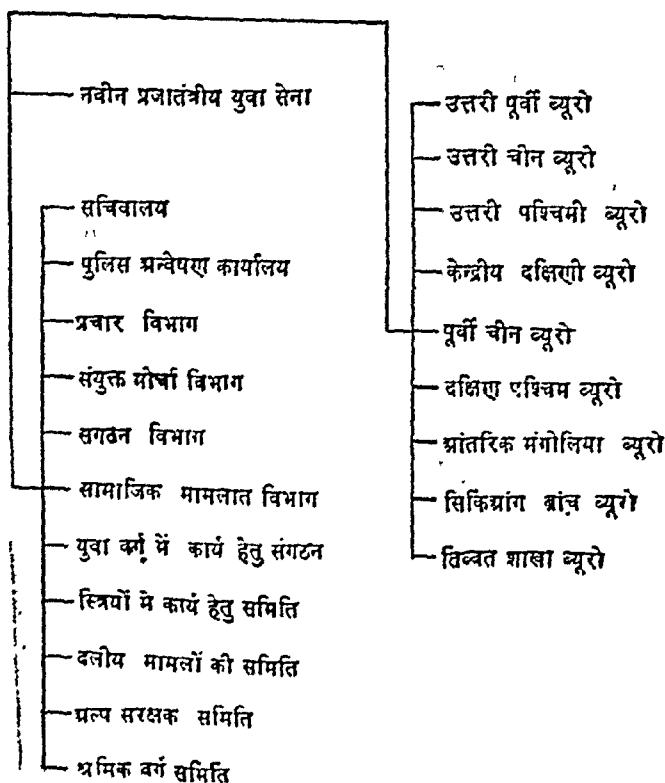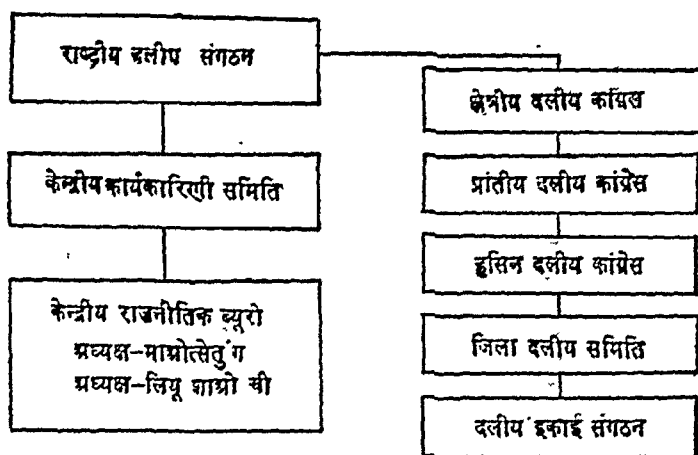
साम्यवादियों ने की थी वह स्वयं साम्यवादी दल के सुदृढ़ नेतृत्व के हाथों में था तथापि विभिन्न प्रजातंत्रीय दलों के संयुक्त मोर्चे का संयोजन भी किया गया था। साम्यवादी अपने संशोधित स्वरूप को बनाए रखने के लिए अत्यधिक सतर्क था ताकि वह कई दलों में से एक दल के रूप में प्रतीत हो तथा जनता के प्रजातंत्र के लिए संविद सरकार की स्थापना की जा सके।

1948 के वसन्त में चीनी साम्यवादी दल की केन्द्रीय समिति ने एक परामर्शदात्री सम्मेलन बुलाने का निर्णय किया जो जनवादी मुक्ति सेना द्वारा संपूर्ण चीनी पर अधिपत्य स्थापित करने के तुरन्त पश्चात् एक औपचारिक सरकार की घोषणा कर सके।[7]

जनवादी ताजनीतिक परामर्शदाता सम्मेलन 21 दिसम्बर 1949 में तब बुलाया गया जब साम्यवादियों कों मुख्य भुमि पर विजय निश्चित हो चुकी थी। यह सम्मेलन भी अपनी पूर्वज सम्मेलन के समान सत्ता वाला था मात्र उसके आगे जनवादी शब्द का प्रयोग किया गया था। (यह सम्मेलन 45 प्रतिनिधि ईकाइयों के 662 प्रतिनिधियों के निहित करता था जिसमें राजनीतिकदल, क्षेत्रीय सरकार, क्षेत्रीय सेनाओं, सामाजिक व व्यावसायिक संगठनों, के प्रतिनिधियों, कुमितांग जनरल्स गणमान्य व्यक्तियों, सामाजिक नेताओं, विद्वानों तथा रंगमंच कलाकार सम्मिलित थे)।[8] अपने 12 दिन के व्यस्त अधिवेशन में जनवादी राजनीतिक परामर्शदात्री सम्मेलन ने स्वयं को अर्द्ध विधायनी संस्था का स्वरुप प्रदान करते हुए आवश्यक कानून को अंगीकृत किया तथा अखिल चीनी जनवादी कांग्रेस को स्थगित करते हुए इसने आगामी सरकार द्वारा अपनाये जाने वाले कार्यक्रम की घोषणा की तथा केन्द्रीय जनवादी सरकार की आवयविक विधि को भी स्वीकार किया इस पर नया शासन आधारित था।

इन विधि निर्माण गतिविधियों के अलावा जनवादी राजनीतिक परामर्शदाता सम्मेलन ने चीन के नवीन झंडे का नमूना भी स्वीकार किया जिसमें लाल रंग के झंडे पर एक बड़ा पीला सितारा तथा चार छोटे सितारे स्वीकृत किए गएं। ये चार सितारें चीन के चार वर्गों—श्रमिक, कृपक, बर्जुआ, समर्थक तथा राष्ट्रवादी पूंजीपतियों का प्रतिनिधित्व करते

7. फिलहाल चीनी साम्यवादी सेना पर सर्वोत्तम पुस्तक लेफ्टिनेन्ट कर्नल रावर्ट बी० रिग्ज की रचना रेड चाइनाज फाइटिंग होड्स हैरिजबर्ग की 1951 है। पष्ठ संख्या 265 पर उसके द्वारा राष्ट्रवादियों की पराजय का चित्रण सर्वाधिक सजीव है।

8. इन प्रनिधियों के नामों की सूची इनके दल अथवा सम्बन्धित समूहों के लिए देखिये पीपुल्स इयर बुक 1950 ता कुंग पाओ।

9. द आर्गेनिक लॉ आफ़ द पीपुल्स पालिटिकल कान्सटेटिव कान्फ्रेन्स, द कामन प्रोग्राम आफ द पीपुल्स पोलिटिकल कन्सलटेटिव तथा द आर्गेनिक ला आफ द पीपुल्स सेन्ट्रल गवर्नमेंट नवीन शासन के सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रलेख है जिन्हें अब जवादी गणराज्य का मेग्नाकार्टा कहा जाता है। इनके मूल प्रारूप राजनीतिक अध्यापकों के सभी चीनी मंदर्भों में पाये जाते हैं। उदाहरण के लिए पीपुल्स इयर बुक 1951 ता कुंग पाओ हागकांग। दो संवैधानिक विधियों का अंग्रेजी अनुवाद चाइना डाइजेस्ट के खण्ड सात संख्या दो 19 अक्टूबर 1949 में तथा सामान्य कार्यक्रम खन्ड 7 संख्या 1 पृ० 1–9 में प्रकाशित किया गया है।

थे। इसी सम्मेलन में संघर्षकाल का प्रसिद्ध गुरिल्ला गान राष्ट्रीय गान के रूप में स्वीकार किया।[10]

जनवादी राजनीतिक परामर्शदाता सम्मेलन ने आर्थिक, सांस्कृतिक, सैनिक तथा विदेशी नीति के सिद्धान्तों का भी निर्धारण किया। इसने जनता के कर्तव्यों व दायित्वों को स्पष्ट रूप से वर्णन किया तथा सामंतवादी जमींदारों, प्रशासनिक पूँजीपतियों, प्रतिक्रियावादियों तथा प्रतिक्रान्तिकारियों को नागरिक व राजनीतिक अधिकारों से वंचित कर दिया। माओ द्वारा 'आनन्यु डेमोक्रेसी में प्रतिादित विचारों की अभिव्यक्ति थी। यह सामान्य कार्यक्र अपने स्वरूप में मार्क्सवादी होते हुए भी चीनी आवश्यकताओं के अनुकूल था। इस सामान्य कार्यक्रम में पहले वाले 'न्यूनतम कार्यक्रम, के अतिरिक्त कोई नया सिद्धान्त निहित नहीं किया गया था तथा इसको वास्तविक समाजवाद प्राप्त करने की दिशा में न्यूनतम कदम माना गया था।

इस गंभीर साम्यवादी दृष्टिकोण के कई कार्यकारी सिद्धान्तों ने एक विचारधारा का स्वरूप धारण कर लिया है। चीनी साम्यवादी दल का न्यूनतम कार्यक्रम क्रान्तिकारी प्रक्रिया की अन्तरिम व्यवस्था थी। एक चतुरतापूर्ण प्रविधि का निर्माण किया गया तथा चीन की विशिष्ठ आवश्यकताओं को चीन के आर्थिक व सामाजिक विकास के संदर्भ में महत्व दिया गया। चीनी साम्यवादी दल जो सैद्धान्तिक रूप से मार्क्स लेनिन तथा स्टालिन के ऐतिहासिक भौतिकवादी द्वन्द्ववाद से आगे नहीं बढ़ पाया था ने इस साम्यवाद को स्थानीय परिस्थितियों में ढालने में अद्भुत क्षमता का प्रदर्शन किया। अन्तिम उद्देश्यों में से किसी को भी नहीं छोड़ा गया तथा न्यूनतम कार्यक्रम अन्ततः समाजवाद व साम्यवाद को पूर्ण रूप से प्राप्त करने के लिए ही था।[11] सामान्य कार्यक्रम को स्वीकार करने में साम्यवादी दल ने अपनी मूल वैचारिक विषय वस्तु में कुछ भी संशोधन नहीं किया था अपितु यह सभी दृष्टिकोण वाले लोगों को साम्यवादियों के साथ संगठित करने में सफल हुआ था।

आवयविक कानून तथा सामान्य कार्यक्रम सम्मिलित रूप से चीन में 1957 तक मूल व्यवस्था रहे थे तथा 1954 में चीन का नवीन संविधान घोषित किया गया। आवयविक कानून के अनुसार चीन का 'जनवादी गणराज्य, जनता की प्रजातंत्रीय तानाशाही है जिसका नेतृत्व श्रमिक वर्ग कर रहा है जो श्रमिक कृषकों तथा देश को विभिन्न राष्ट्रीयताओं वाले संगठन पर निर्भर है। जनता की प्रजातंत्रीय तानाशाही के दो सैद्धान्तिक अर्थ हैं। प्रथम अर्थ यह है कि नई सरकार परम्परागत लेनिन की भाषा में सर्वहारावर्ग की

10. जनवादी राजनीतिक परामर्शदाता की प्रक्रिया का सम्पूर्ण वर्णन चीनी गणराज्य की स्थापना की स्थापना पर प्रकाशित प्रलेख हांगकांग 1941 में उपलब्ध है। अंग्रेजी में अनुवादित प्रलेखों का एक अत्यधिक उपयोगी संग्रह एच. आर्थर स्टेनर की रचना चाइनीज कम्युनिज्म इन एक्शन, लास एंजिल्स 1953 है। इसके प्रथम खण्ड में पहला व तीसरा अध्याय "चीनी नीतियों का अंतरंग दृष्टिकोण", "मूल मूल संवैधानिक तथा सरकारी संरचना" तथा चीनी साम्यवादी दल को निहित करता है। दूसरे खण्ड के चौथे से नौवां अध्याय प्रशासन, निर्वाचन विधि, पुलिस प्रचार तथा गैर साम्यवादी दलों का वर्णन निहित करता है। इसका तृतीय खण्ड दिसम्बर 1953 में प्रकाशित होने वाला था।

11. इस विचार के और विकास के लिए देखिए केन्द्रीय जनवादी सरकार के उप सभापति लू पाओ ची द्वारा 21 सितम्बर 1949 को जनवादी राजनीतिक परामर्शदाता सम्मेलन को सम्बोधित किया गया भाषण "चीन का जनवादी प्रजातंत्रीय युग में प्रवेश", चाइना डाइजेस्ट खण्ड 7 संख्या 1 पृष्ठ 6 से 7।

तानाशाही नहीं है तथा यह पूर्वी यूरोपियन देशो के समान एक सविद सरकार है। द्वितीयत: चीनियों ने अपने इस कदम का चीनी तरीके से समर्थन किया।[12] द्वितीयतः इस पद का प्रयोग यह जताता है कि राज्य नवीन शासक वर्ग के हाथ में यंत्र है जबकि नवीन शासक वर्ग अन्य वर्गों पर शासन करते हैं।

आवयविक कानून न केवल श्रमिक व कृषिकों को नेतृत्व दिया अपितु अन्य प्रजातांत्रीय वर्गों की उपयोगिता को भी स्वीकारा। इन प्रजातंत्रीय समूहों में लघु पूँजीपति व राष्ट्रीय पूँजीपति भी सम्मिलित थे। यह कदम परम्परागत मार्क्सवाद से भिन्न है। निसन्देह चीनी साम्यवादी 26 वर्षों के संघर्ष से काफी समझदार बन गए थे। साथ अपनी संस्कृति के अनियन्त्रित दर्शन को व्यवस्थित बनाने की उनकी क्षमता भी अपार थी।

चीनी साम्यवादी साम्यवादी विचारधारा का समायोजन युद्धोत्तर स्टालिन स्थिति तथा विशेषकर चीनी स्थिति से साम्यवादी उद्देश्यों को बनाये रख कर करने में सफल हुए थे उन्होंने चीन में ऐसा कोई कदम नहीं उठाया जो पोलैण्ड, चैकोस्लोवकिया हंगरी तथा तंजानीया में नहीं उठाया गया था। उन्होने रूस की सहमति से रूस से पृथक मार्ग का अवलम्बन किया। उन्होंने स्वयं रूस के इतिहास में पूर्वोदाहरण प्रस्तुत करने की कोशिश की। स्वयं लेनिन ने अपनी प्रसिद्ध रचना लेफ्टविंग कम्यूनिजम एण्ड इनफेंटाइल डिस आरडर में कहा था कि साम्यवादियों को सुधार आन्दोलन से पृथक नहीं रखना चाहिए तथा उनमें भाग लेना चाहिए तथापि ऐसा करते समय 'उन्हें अपने साम्यवादी स्वरूप को बनाये रखना चाहिए तथा अपने किसी भी उद्देश्य का त्याग नहीं करना चाहिए।

अन्य दलों के साथ सहयोग करने से साम्यवादी पुनः कठिनाइयों का सफलतापूर्वक ढंग से सामना कर सके जिन्होने 1930 में उन्हें समाप्त कर दिया था तथा जिस कुमितांग दल भी नष्ट हुआ क्योंकि उसने चीन का शासन एकांकी चलाने का प्रयास किया। चीनी साम्यवादियों ने युद्धोत्तर काल में जनवादी प्रजातंत्र के चीनी सिद्धान्त का प्रयोग सफलतापूर्वक अपने देश के लिए किया। चीनी सोवियत गणराज्य के पूर्णतः वामपंथी अनुभव ने उन्हें यह शिक्षा दी कि वे चीनी जनता सहयोगी तत्वों की पूर्णतः उपेक्षा न करें। 1949 में चीनी साम्यवादी दल ने वर्ग संघर्ष के परम्परागत तरीकों से क्रान्ति विरोधी दबावों से छुटकारा पाने की प्रविधि को छोड़कर एक ऐसे प्रजातन्त्रीय समाज की स्थापना का प्रयास किया जिसमें

12. दैनिक प्रगति मे प्रकाशित एक लेख की आंशिक तुलना के लिए "......लेनिन ने कहा था कि एक क्रान्ति का मूल प्रश्न राजनीतिक शक्ति मे निहित होता है। दूसरे शब्दों में कौन किस पर शासन करेगा अथवा कौन किस पर तानाशाही स्थापित करेगा। अतः एक सर्वहारा वर्ग की तानाशाही का अर्थ है पूंजीवादियो पर वर्ग का शासन तथा उसी तानाशाही का उद्देश्य पूंजीवादियों को समाप्त करना होता है।"

"......तथापि चीन में आज की जनवादी प्रजातंत्रीय सरकार सर्वहारा, कृषक, लघु पूंजीपति तथा राष्ट्रवादी पूंजीवादियों की त्रिमुखी शत्रुओं साम्राज्यवादी, सामन्तवादी तथा प्रशासनिक पूंजीवादियो के विरुद्ध संयुक्त संघर्ष है। यह मात्र सर्वहारा वर्ग की पूंजीपतियों पर स्थापित तानाशाही नही है।

"आज चीनी क्रान्ति का उद्देश्य चीन से सामाज्यवाद का निष्कासन, सामन्तवादी तत्वों का नाश तथा पूंजीपतियों के एक अंश मात्र-प्रशासनिक पूंजीवादी की समाप्ति करना है। अभी भी सभी पूंजीवादियों को समाप्त करने का समय नही आया है। आज भी पुर्नस्थापना तथा विकास के प्रयास मे राष्ट्रवादी पूंजीपतियों को निर्णायक भूमिका अदा करनी है, अत: यह कहना उचित नहीं है कि चीन मे मुख्यतया सर्वहारा वर्ग की तानाशाही है। याग फू द्वारा जनवादी प्रजातंत्रीय तानाशाही पर प्रस्तुत कुछ विचार प्रोग्रेस डेली, तियनत्सन, 5 अक्टूबर, 1949।

पहले सभी प्रजातन्त्रीय वर्गों की संविद तानाशाही की स्थापना के पश्चात् बाद में सभी वर्गों को समाप्त कर धीरे धीरे सर्वहारा वर्ग की तानाशाही की स्थापना करना था।[13]

अनेक वर्गीय नीति के आधार पर चीनी साम्यवादियों ने शक्ति के सन्दर्भ में अन्य सामाजिक वर्गों को सम्मिलित कर के 'नवीन प्रजातन्त्र' के संक्रमण काल को पूरा करने का प्रयास किया। तथा कथित राष्ट्रवादी पूँजीपति तथा छोटे पूँजीपतियों को सम्मिलित करने वाली नीति विशेष महत्त्व की है। राष्ट्रवादी पूँजीवादी उन लोगों को कहा गया था जिनका वास्तविक उत्पादन के साधनों पर था किन्तु जो साम्यवादी सिद्धान्तों में विश्वास रखते थे तथा जिनका सहयोग चीन की तत्कालीन आर्थिक पुर्नगठन की दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण था। छोटे पूँजीपतियों में बुद्धिवर्ग, सरकारी अधिकारी, कारीगर, विभिन्न व्यावसायिक वर्ग तथा छोटे व्यापारी थे। साम्यवादियों के द्वारा इनमें से अधिकांश लोग शोषित वर्ग थे तथा उनमें से कुछ ही शोषक थे। तथापि सर्वहारा वर्ग की तुलना में इन लोगों की भावना पृथक है। छोटे पैमाने पर उत्पादक वर्ग होने के नाते वे सामुहिक जीवन के आदि नहीं होते हैं। साम्यवादियों का विश्वास था कि इन लोगों के साथ उदार व्यवहार उन्हें क्रान्तिकारी मार्ग की ओर अग्रसर करेगा।

व्यावहारिक रूप से 'जनता की प्रजातन्त्रीय तानाशाही का अर्थ यही है कि सत्ता उन चार वर्गों के संगठित समूह में विद्यमान है जो प्रतिक्रियावादियों पर शासन करते हैं जो 'जनता' नहीं है पर राष्ट्र के हैं। प्रतिक्रिया तत्वों पेकिंग शासकों के अनुसार वे लोग हैं जिन्हें क्रान्तिकारी समूह में सम्मिलित नहीं किया जा सकता है। ऐसे लोग जिन्हें सम्मिलित नहीं किया जा सकता है या तो उनकी पुर्नशिक्षा की जानी चाहिए अथवा यदि उसकी परम्परा घरोहर तथा रूचियां उन्हें आत्मसात होने के अयोग्य बना देती हैं तो उन्हें नष्ट कर दिया जाना चाहिए।

जनता व राष्ट्रीय लोगों में इसे पूर्णतः कल्पनाजन्य भिन्नता को स्थापित करते हुए साम्दवादी राष्ट्रीय लोगों में प्रशासनिक पूँजीवादी युद्ध अपराधी सामन्त जमींदार, साम्राज्यवादी कर्मचारी तथा अन्य प्रतिक्रियावादी वर्ग सम्मिलित थे। सामान्य कार्यक्रम के ऊपर टिम्पणी करते हुए जनवादी सरकार के प्रधानमन्त्री चाउ एनलाई ने कहा था —

जनता व राष्ट्र के लोगों में फर्क है। जनता में श्रमिक वर्ग, कृपक, छोटे पूंजीवादी राष्ट्रीय पूंजीवादी तथा अन्य राजभक्त प्रजातन्त्रीय तथ्य थे। बाकी प्रतिक्रियावादी तत्व जनता में नहीं राष्ट्रीय लोगों में आते हैं। कुछ समय के लिए इन लोगों को जनता को प्राप्त होने वाली सुविधाएं नहीं दी जा सकती हैं तथा उन्हें राष्ट्रीय लोग होने के नाते अपने से सम्बन्धित उत्तरदायित्वों को निभाना चाहिए।

प्रजातंत्रीय केन्द्रीयवाद—आवयविक विधि का द्वितीय अनुच्छेद राजनीतिक व्यवस्था की व्याख्या साम्यवादी व्यवस्था के वर्णित प्रजातन्त्रीय केन्द्रीयवाद के अर्थों में करता है। सिद्धान्त तथा प्रशासन के अर्थों में विभिन्न स्तरों पर लोकप्रिय ढ़ंग से निर्वाचित कांग्रेसों की स्थापना की जाएगी। ये काग्रेंस फिर अपनी प्रशासनिक परिषदों के लिए व्यक्तियों का चयन

13. चीनी साम्यवादी आंदोलन के सैद्धान्तिक स्वरूप पर सर्वाधिक विलक्षण वर्णन बोल्टन उप समिति द्वारा चीन पर प्रस्तुत मूल रिपोर्ट है। द्विदेशी मामलों पर पाचवीं उपसमिति रिपोर्ट देखिये—द स्ट्रेटजी एण्ड टैकटिक्स ऑफ वर्ल्ड कम्यूनिज्म, कम्यूनिज्म इन चाइना इकाइमवीं कांग्रेस का प्रथम अधिवेशन सदन की प्रलेख संख्या 153 खण्ड 3 वाशिंगटन 1949 पृष्ठ 24 से 28।

करेंगी जो जनवादी सरकारें कहलायेगी। जब एकबार जनवादी सरकार के प्रतिनिधि चुन लिए जायेंगे तो चयनित प्रतिनिधियों की पुष्टि उच्च स्तरीय जनवादी सरकार के द्वारा की जाएगी तथा निम्न स्तरीय सरकार को उसके आदेश मानने होंगे। जनवादी सम्मेलनों को ये चुनाव चाहे कितना ही नियंत्रित क्यों न हो उसके बनाए रखने का मूल उद्देश्य प्रजातन्त्र के वाहरी स्वरूप को बनाये रखना भर था। निम्न स्तरीय जनवादी सरकार द्वारा उच्च स्तरीय जनवादी सरकार के आदेश को मानना केन्द्रीयवाद का प्रतीक माना गया तथा प्रजातंत्र व केन्द्रीयवाद के सामंजस्य को प्रजातन्त्रीय केन्द्रवाद का नाम दिया गया।[14]

स्वयं साम्यवादी नेताओं का यह कहना था कि प्रजातन्त्र का अन्तिम उद्देश्य जनता की इच्छा को पूर्णरूप से प्राप्त करना था तथापि जनता की इच्छा के विचार को भी साम्यवाद के दृष्टिकोण से समझना होगा। जनता की वास्तविक इच्छा वह नहीं है जो रहने वाले लोग समझते हैं अपितु वह यह है जो साम्यवादी विशेषज्ञ मानते हैं कि उनकी होनी चाहिए तथा जो उनके लिए कल्याणकारी है। इस प्रकार केन्द्रीयवाद की उस इच्छा को पूर्णतः क्रियान्वित करना है। यह साम्यवादी के पश्चिमी संस्करण का पर्याप्त लोकप्रिय पहलू है जो अपने स्वरूप में चीनी नहीं है।

जनवादी गणराज्य के प्रारंभिक वर्षों में सिद्धान्तों के अनुसार केन्द्रीयवाद, साम्यवाद अथवा मान्य प्रजातन्त्र में कोई गम्भीर संशोधन नहीं किये गए। जैसे जैसे नवीन शासन का दृढ़ीकरण होता गया केन्द्रीयवाद को प्रजातन्त्रीयकरण पर विजय मिलती गई। प्रजातन्त्रीय केन्द्रीयवाद एक प्रभाव जो स्पष्ट रूप से देखने में आया वह यह था 'अवयविक कानून में शक्ति पृथक्करण के सिद्धान्त का पूर्णतः निषेध किया गया था।

आवयविक कानून के अन्तर्गत साम्यवादी राष्ट्र की सत्ता ने स्पष्ट स्वरूप प्राप्त किया। राज्य की सर्वोच्च सत्ता को केन्द्रीय जनवादी सरकार की परिषद में निहित किया गया। इस परिषद् का एक सभापति छः उप.सभापति, तथा 56 परिषद् के सदस्य होते थे जो जनवादी राजनीतिक परामर्श सम्मेलन के प्रथम अधिवेशन में चुने जाते थे। जब परिषद् खुद अधिवेशन में नही होती थी तो वह अपनी शक्ति राज्य प्रशासनिक परिषद् को हस्तान्तरित कर देती थी जिसमें लगभग 20 सदस्य होते थे। इस संस्था को पश्चिमी मन्त्रिमन्डल के सर्वाधिक समर्थ संस्था कहा जा सकता है।

यह शासक परिषद् महिने में दो वार मिलती थी यह कानून बनाती थी उनकी व्याख्या करती थी, विज्ञप्तियां जारी करती थी, राज्य नीतियों का निर्धारण सन्धियां करती थी, युद्ध व शान्ति के मामलों का निपटारा, सरकारी वजट की पुष्टि तथा प्रशासनिक परिषद् के सदस्यों की नियुक्ति करती थी। संक्षेप में शासक परिषद् अपनी पूर्ववर्ती शाही कार्यपालिका से बहुत अधिक भिन्न नहीं थी क्योंकि यह व्यवस्थापिका कार्यपालिका व न्यायपालिका स्वयं ही थी। इसे संविधान की व्याख्या का अन्तिम अधिकार प्राप्त था।

राज्य की प्रशानिक परिषद्, शासक परिषद् के प्रति उत्तरदायी थी। जब शासक परिषद् अनुपस्थित होती थी तो यह परिषद् सभापति जो माओ-त्सेतुंग थे के प्रति उत्तरदायी

14. प्रजातंत्रीय केन्द्रीयवाद के सिद्धान्त की एक दार्शनिक परिचर्या जनवादी सर्वोच्च न्यायालय के उप मुख्य न्यायाधीश तथा पिकिंग विश्वविद्यालय के भूतपूर्व विधि के प्रोफेसर चान चिह जेन द्वारा लिखित लेख :एटेन्टिटिव एनालिसिट आफ द.आर्गेनिक लॉ आफ द सेन्ट्रल पिपुल्स गवर्नमेंट।

होती थी। इस परिषद् के अन्तर्गत चार समितियां राजनीतिक व कानूनी मामलों की वित्त व अर्थ, संस्कृति व शिक्षा तथा जनता पर नियन्त्रण से सम्बन्धित होती थी। इनमें से प्रथम तीन समितियां अपने क्षेत्र में आने वाले मन्त्रालयों पर नियन्त्रण करती थी अन्तिम समिति सर्वव्यापी नियन्त्रण संस्था थी जिसका कार्य रूस के समान सरकारी कार्यों का वफादारी से निर्वहन होते देखना था तथा वह अपराधी व्यक्तियों के विरुद्ध खोज बीन भी कर सकती थी।

राज्य प्रशासनिक परिषद् इस दृष्टि से चीन के लिये विशिष्ट संस्था थी कि चीन के सम्पूर्ण इतिहास में इस प्रकार की संस्था का अभाव रहा था। इसके अधिकार के अन्तर्गत तीस मन्त्रालय, आयोग बोर्ड तथा पृथक प्रशासनिक इकाइयाँ थी। इस नवीन संगठन की मूल विशेषता इसके द्वारा आर्थिक मामलों पर दिया जाने वाला महत्त्व था। व्यापार मन्त्रालय के अलावा भारी उद्योग वस्त्र, खाद्य तथा लघु उद्योगों के पृथक मन्त्रालय की स्थापना भी की गई थी।[15]

राज्य प्रशासनिक परिषद् में अनेक उप-प्रधानमन्त्री तथा वे पार्षद भी होते थे जिन्हें मन्त्रिपद अथवा आयोग के अध्यक्ष के पद प्राप्त भी थे व नहीं भी थे। सभी मन्त्री व आयोग के सम्पति राज्य प्रशासनिक परिषद् के पदेन सदस्य होते थे। जिन लोगों को इस परिषद् की विशिष्ट सदस्यता प्राप्त नहीं थी वे इसकी बैठकों में भाग नहीं ले सकते थे। सदस्यता वैयक्तिक थी तथा वाह्य प्रेक्षक के लिये जानना कठिन था कि प्रशासक समूह में कैसी व्यक्तिगत राजनीति चल रही है।

जनवादी सरकार के केन्द्रीय संगठन में शासक परिषद् के अन्तर्गत प्रशासकीय परिषद् के समकक्षी अन्य उच्च संगठन भी होते थे जैसे जनवादी क्रान्तिकारी सैनिक परिषद् जिसका नियन्त्रण सम्पूर्ण शस्त्र सेनाओं पर होता था, जनवादी सर्वोच्च न्यायालय जो देश की सर्वोच्च न्यायायिक संस्था थी जो केन्द्रीय प्रशासनिक संस्था से ऊँची नहीं थी। प्रोसीक्यूटर जनरल का विभाग था जिसका कार्य यह देखना था कि सम्पूर्ण सरकारी विभागों तथा चीनियों द्वारा सरकार द्वारा बनाये गए कानूनों को पालन हो रहा था। जनता व राष्ट्रीय लोग समान रूप से उनका पालन कर रहे हैं या नहीं तथा जहां कहीं इनका विरोध हो रहा हो उसके विरुद्ध कार्यवाही करना (देखिये चार्ट संख्या 11)

संविधानिक तैय्यारियां : 1953 के आरम्भ में साम्यवादी सरकार ने यह घोषणा की कि स्थायी साम्यवादी आधार पर नियमित सरकार की स्थापना करने के लिये अखिल चीनी जनवादी कांग्रेस का सम्मेलन तैय्यारियां पूरी होते ही बुला लिया जाएगा।

15. केन्द्रीय सरकार की परिषद ने अपनी सत्रहवीं अधिवेशन में 7 अगस्त, 1952 को प्रशासनिक ढांचे में कई परिवर्तन करने का प्रस्ताव किया। व्यापार मंत्रालय को विदेश व्यापार मंत्रालय तथा वाणिज्य मंत्रालय में विभक्त कर दिया। पांच नवीन निम्नांकित मंत्रालय बनाए गए—प्रारम्भिक मशीन उपयोग, प्रमुख मशीन उद्योग, भवन निर्माण उद्योग, भू सर्वेक्षण तथा खाद मंत्रालय। अंतिम मंत्रालय की स्थापना मूल खाद्य उद्योग मंत्रालय के स्थान पर की गयी। जिसे 1950 में समाप्त कर दिया गया था। इसी समय समाप्त किये गए मंत्रालयों में व्यापार, रचना का केन्द्रीय ब्यूरो तथा समाचार पत्रों का केन्द्रीय ब्यूरो थे। 15 नवम्बर, 1952 को अपनी उन्नीसवीं मीटिंग में केन्द्रीय जनवादी परिषद ने केन्द्रीय सरकार में चार भव्य संगठनों की रचना का निर्णय किया ये थे राष्ट्रीय नियोजन आयोग, राष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा आयोग, उच्च शिक्षा मंत्रालय तथा अशिक्षा समाप्त करने के लिए बनायी गयी समिति। ये सभी नवरचित संगठन प्रत्यक्षतः राज्य प्रशासनिक परिषद के नियंत्रण में है। देखिये ताकुंग पाओ संघाई, 12 अगस्त, 1952 तथा ताकुंग पाओ, हांगकांग 17 नवम्बर, 1912।

चार्ट सख्या 11 : केन्द्रीय जनवादी सरकार के अन्तर्गत नीति निर्धारण करने वाले अंग 1949से1954के मध्य आवयविक कानन के क्रम के अन्तर्गत।
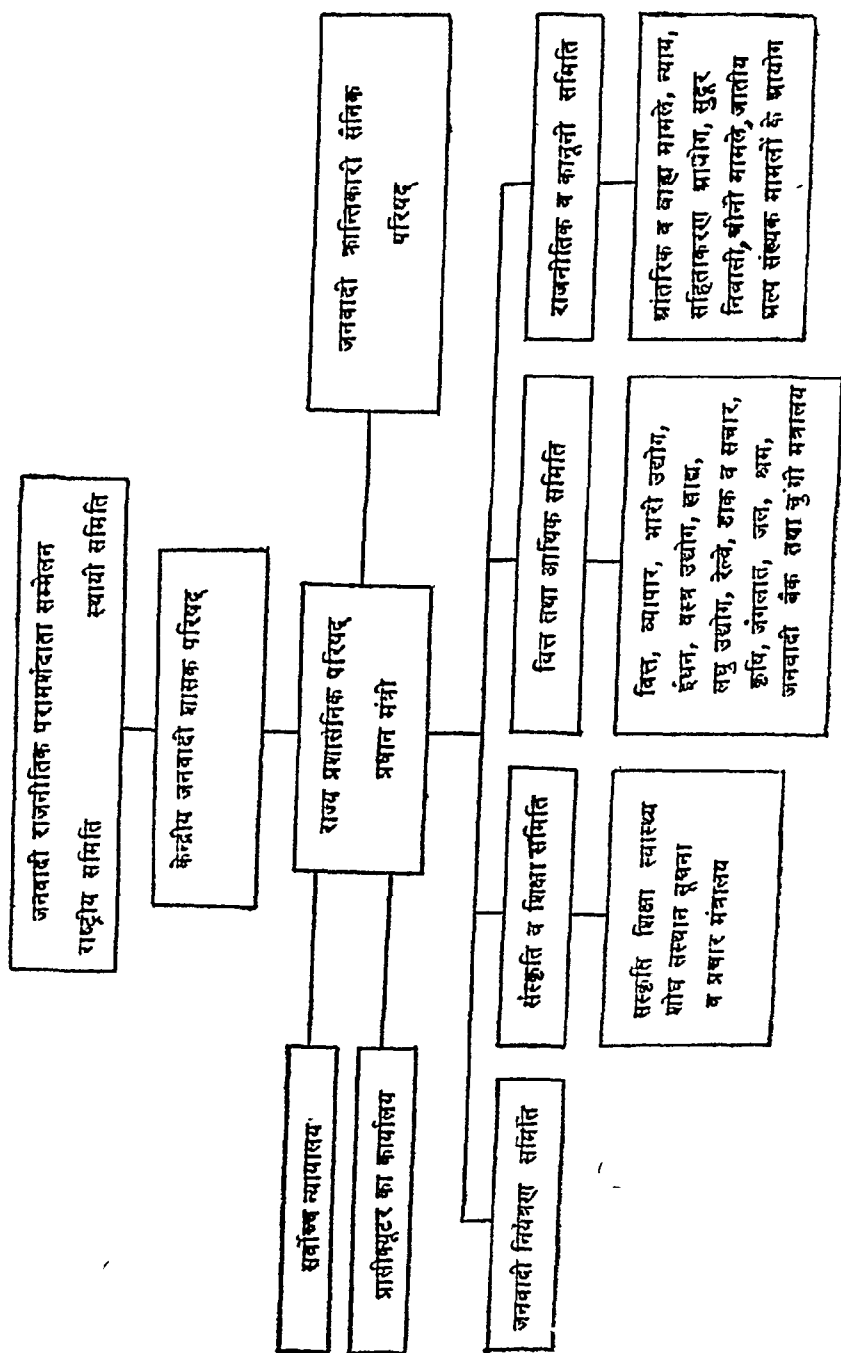
इन तैय्यारियों में से एक जनगणना भी थी। चीनियों की संख्या 60 करोड़ के करीब मानी गई थी।

अन्य तैय्यारियों में से प्रशासन तथा निर्वाचन के उद्देश्यों से ग्रामों का पुनर्गठन करना था ताकि स्थानीय सरकार का पुनर्गठन ग्राम, कस्बे काउंटी तथा नगरों के स्तर पर पर किया जा सके इस निर्वाचक क्रम शृंखला के प्रत्येक स्तर पर एक निर्वाचन समिति थी जिसका कार्य सरकारी उम्मीदवारों की सूची तय करना था।

1 मार्च 1953 को राष्ट्रीय निर्वाचन विधि लागू की गई। 500,000 से अधिक जनसंख्या वाले नगरों को प्रस्तावित राष्ट्रीय कांग्रेस में एक स्थान मिला तथा प्रान्तीय क्षेत्रों में प्रत्येक 800,000 जनसंख्या पर एक स्थान प्राप्त हुआ। अधिकांश सदस्य प्रान्तीय अथवा नगर पालिका कांग्रेस द्वारा चुने जाते थे। इसके अतिरिक्त 150 स्थान गैर हेन अल्पसंख्यकों को प्राप्त हुई जो 'राष्ट्रीय अल्पसंख्यकों, के नाम से जाने गए। 30 स्थान समुद्र पार रहने वाले चीनियों को दी गई। निर्वाचन कानून के अन्तर्गत प्रत्येक 18 वर्ष के नागरिक को मताधिकार दिया गया तथापि जमींदारों तथा प्रतिक्रियावादियों को कोई मताधिकार नहीं दिया गया। 1954 के प्रारम्भिक दिनों में निर्वाचन हुए। कांग्रेस सर्वप्रथम रूप में लोकप्रिय पिरामिड शैली पर हुई। कस्बे तथा हसिआंग की कांग्रेस ने हसिन कांग्रेस के प्रतिनिधियों को चुना जिन्होंने फिर प्रांतीय कांग्रेसों के लिए प्रतिनिधि चुने। प्रान्तीय कांग्रेसों के नगर पालिकाओं के साथ प्रथम अखिल चीनी कांग्रेस के लिए प्रतिनिधियों का निर्वाचन किया।

कांग्रेस नवीन शासन की कानूनी तथा राजनीतिक आधारशिला बन गई।

प्रथम अखिल चीनी जनवादी कांग्रेस 15 सितम्बर 1954 को मिली तथा यह 28 सितम्बर को स्थगित भी हो गई। अपने 13 दिवसीय अधिवेशन में इसने नये संविधान को अंगीकार किया तथा प्रान्तीय सलाहकार संस्थानों को स्थगित किया जिनके स्थान पर अब अधिक प्रभावशाली व संगठित संस्था का निर्माण कर दिया गया था।

चीनी साम्यवादी सरकार का निर्माण कार्य किसी भी तानाशाही सरकार की तुलना में अधिक स्वेच्छापूर्ण रहा है। इससे पहले के तानाशाही शासन प्रकटतः तथा वास्तविकता में नाटकीय शीघ्रता से शक्ति हथियाने को स्थापित किये गए थे तथापि चीनी साम्यवादी शासकों के द्वारा स्थाई सरकार की स्थापना में 1949-54 तक पांच वर्षों का विलम्ब इस बात का प्रमाण है कि साम्यवादी चीनियों के सोचने का तरीका भिन्न था। कई अर्द्ध-सरकारों के पश्चात् ऐसा प्रतीत होता था कि चीनी वास्तविक सरकार की स्थापना में सफल हो गए थे।

नवीन स्थायी संविधान पिछले डेढ़ वर्ष खुले रूप से बनाया जा रहा था। 1953 के बसंत से एक समिति इसके प्रारूप पर विचार कर रही थी। मार्च 1954 में माओ-त्से-तुंग ने चीनी साम्यवादी दल की ओर से 'एक प्रारम्भिक प्रारूप' इस समिति को प्रस्तुत किया तथा कई मीटिंग करने के पश्चात् चीनी साम्यवादी दल इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि वे दीर्घ काल से इसी प्रकार के प्रारूप की खोज में थे।

तत्पश्चात् इस प्रारूप को अनेकों सार्वजनिक व अर्द्ध सार्वजनिक संस्थाओं के सार्वजनिक विचार विमर्श के लिए प्रेषित किया गया। इसके पश्चात् साम्यवादियों ने अपनी पर्याप्त लोकप्रिय प्रविधि का प्रयोग किया जिसमें जनता का साम्यवादी शासन में निष्ठा व्यक्त करने का आह्वान किया।

20 सितम्बर 1954 को कांग्रेस ने नवीन संविधान को अंगीकार कर लिया। उसने स्वयं के लिए विधि स्वीकृत की। तथा साथ में राज्य परिषद् जनवादी न्यायालय, जनवादी प्रोक्यूरेटर तथा विभिन्न स्तरों की जनवादी कांग्रेसों के लिए विधि स्वीकृत की। कांग्रेस ने अपनी स्थायी समिति का निर्वाचन किया तथा सरकार के गणमान्य सदस्यों को नामांकित किया। यह सब नवीन संविधान के अन्तर्गत किया गया था।[16]

***1954* का संविधान** : संविधान में एक प्रस्तावना चार अध्याय हैं जिसमें 106 अनुच्छेद हैं। 1947 के राष्ट्रवादी संविधान की तुलना में यह संक्षिप्त प्रलेख है क्योंकि उसमें 14 अध्याय व 175 अनुच्छेद थे। चीन का नवीन संविधान सोवियत रूस के 1936 के संविधान के समान सामान्य सिद्धान्त राज्य की संरचना नागरिकों के मौलिक अधिकार व कर्तव्य, राष्ट्रीय राजधानी, राष्ट्रचिन्ह व राष्ट्र पताका का विवरण निहित करता है।

संविधान का प्रस्तावना स्वयं को 1949 के सामान्य कार्यक्रम से आगे बढ़ने का निश्चय व्यक्त करती है यद्यपि यह सामान्य कार्यक्रम पर आधारित है। सामान्य कार्यक्रम ने चीन को नवीन प्रजातन्त्र के रूप में प्रस्तुत करता है। जिसका तात्कालिक कार्य साम्राज्यवाद, सामन्तवाद, प्रशासनिक पूँजीवाद के विरुद्ध क्रान्ति को पूरा करना है। जबकि इस संविधान के अनुसार इन उद्देश्यों को प्राप्त कर लिया गया है तथा चीनी समाजवादी राज्य को प्राप्त करने के मार्ग पर अग्रसर हो रहे हैं। प्रस्तावना यह भी घोषणा करती है कि विभिन्न दल अपने कार्यों को करते रहेंगे तथा चीन में रहने वाली विभिन्न राष्ट्रीयताओं के मध्य मैत्रिपूर्ण सम्बन्ध रखे जाएंगे (इन अर्थो में 1954 के साम्यवादी 1912 के गणतंत्रीय सिद्धान्तों की ओर अग्रसर हुए क्योंकि पहले वाले प्रथम गणराज्य ने भी पाँच रेखाओं वाली पताका को स्वीकार किया था जिसमें प्रत्येक रेखा चीनी, मंगोल, मंचू, तिब्बत व मुसलमोना के लिए थी तथा जातीय सहिष्णुता का प्रचार तो किया किन्तु वास्तव में उसका पालन नहीं किया तथा स्वयं राष्ट्रवादियों ने उसकी अवहेलना की। 'राष्ट्रीय अल्पसंख्यकों' के बारे में साम्यवादी सिद्धान्त वस्तुतः चीनी पूर्वादाहरण से अधिक स्टालिन के विचारों से प्रभावित था।)

प्रस्तावना का अधिक महत्वपूर्ण कथन वस्तुतः चीनी सोवियत रूस तथा सभी जनवादी प्रजातन्त्रों के मध्य मैत्री को प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति है। निश्चय ही सम्पूर्ण आधुनिक इतिहास में यह विदेशी सम्बन्धों के लिए अद्भुत पृष्ठभूमि है। सम्पूर्ण संविधान में चीन की विदेश नीति के लिए मात्र इतना ही संदर्भ है इसके अतिरिक्त थोड़ा संदर्भ साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष का भी दिया गया है।

प्रथम अध्याय परिपक्व है तथा माओ विचार का प्रस्तुतीकरण है। किन्तु इस व्यवस्था को शब्दशः स्वीकारना बेवकूफी होगी क्योंकि चीन में भी व्यवहार व सिद्धान्त में उतना ही अन्तर है जितना स्टालिन कालीन रूस में था। इसमें उन सिद्धान्तों का भी वर्णन किया गया है जिनसे माओ तथा उसके समर्थक सत्ता प्राप्त करने में सफल हुए। 'प्रजातंत्रीय केन्द्रीयवाद' का पुनः समर्थन किया गया है। चीन के जनवादी गणराज्य को प्रजातन्त्र घोषित किया गया है जिस पर कृषकों व श्रमिकों का सम्मिलित शासन है। गणराज्य की

16. देखिये फ्रेंकलिन हून का साम्यवादी चीन का प्रारूप संविधान पेसिफिक एफेयर्स 27 वां खण्ड संख्या 4 (दिसम्बर 1954) पृ. 319-336

सम्पूर्ण शक्ति जनता में निहित हैं इसमें वे प्रतिक्रियावादी सम्मिलित नहीं है (अनुच्छेद 19) जो तभी नागरिक बन सकेंगे जब उनकी पुनर्स्थापना की जाएगी। जो इस शक्ति का अखिल चीनी जनवादी कांग्रेस, स्थानीय कांग्रेसों के माध्यम से विभिन्न स्तरों पर करेगी। इस प्रकार संविधानिक अर्थों में चीनी जनवादी गणराज्य सोवियत न्यादर्श के संसदीय प्रजातन्त्र पर आधारित है जो अधिकांश पूर्वी यूरोपीयन देशों में भी पाई जाती है किन्तु इसमें कहीं नाम अथवा औपचारिक संगठन में पहले वाले चीनी सोवियत गणराज्य के समान सोवियत राज्य का जिक्र नहीं किया गया है (देखिये पृ. 209–211)

अध्याय प्रथम के अवशिष्ट अनुच्छेद राज्य के आर्थिक व सामाजिक संगठन का वर्णन करते हैं। संविधान चार प्रकार के सम्पत्ति स्वामित्व को स्वीकारता है: राज्य, सहकारी, श्रमिक वर्ग की तथा पूंजीवाद स्वामित्व। राज्य द्वारा सम्पत्ति का स्वामित्व अर्थव्यवस्था का मूल प्रकार माना गया है तथा इसे विकास में सर्वाधिक महत्व दिया जाएगा किन्तु इसके साथ तीन प्रकार के अन्य सम्पत्ति स्वामित्व को भी स्वीकार गया है। अतिरिक्त प्रावधानों द्वारा यह व्यवस्था की गई कि राज्य कृषकों के भू-स्वामित्व के अधिकार की रक्षा करेगा तथापि वह उन्हें उत्पादन वितरण व ऋण (ऋण) के लिए सहकारी संस्थाएँ बनाने के लिए प्रोत्साहित करेगा। राज्य पूंजीवादी स्वामित्व की रक्षा भी करेगा किन्तु साथ ही पूंजीवादी व्यवस्था का उपयोग नियन्त्रण व सुधार इस प्रकार करेगा धीरे-धीरे वह समाप्त हो जाए। कार्य को प्रत्येक सक्षम व्यक्ति के लिए गौरवपूर्ण दायित्व माना गया है तथा राज्य प्रत्येक नागरिक के कार्य करने की शक्ति व क्षमता को प्रोत्साहित करता है।[17]

संविधान का दूसरा अध्याय राज्य की संरचना का वर्णन करता हैं। वस्तुतः सरकार के तत्कालीन ढांचे में नए संविधान के द्वारा कहुत कम परिवर्तन किए गए तथापि व्यापक

17. यदि यह संविधान 50 वर्षों पूर्व एक आदर्शवादी स्वप्न के रूप में लिया गया होता तो विश्व के अनेक देशों के उदारवादियों तथा बुद्धि जीवियों ने इसकी स्पष्टता व महानता के लिए इसकी प्रशंसा की होती। एक साम्यवादी सरकार के अन्तर्गत जीवन की कटु वास्तविकताएं उन मानवीय सिद्धान्तों से प्राप्त नहीं की जा सकती जिन्हें यह संविधान प्रस्तुत करता हुआ प्रतीत होता है। हमारे बाद के युग के राजनीतिक के छात्र व इतिहासज्ञ अपने भूत कालीन ज्ञान के आधार पर शायद यह पता लगा सके कि प्रत्येक साम्यवादी शासक कठोर दण्ड, गोपनीयता तथा निर्दयता से ग्रसित क्यों होता है। यद्यपि बहुत से नग्न स्पष्टीकरण गैर साम्यवादी दल द्वारा प्रस्तुत किए गए हैं पर वे सब आक्रमक हैं। चीन द्वारा साम्यवाद के मानवीयकरण की असफलता का सर्वाधिक मानवीय मूल्यांकन माइकेल लिन्डसे द्वारा चाइना एण्ड द कोल्ड आर-ए स्टडी इन इन्टरनेशनल पालिटिक्स, मेल बार्न 1955 में किया गया है। मेनान युग में लिंडसे चीनी साम्यवादियों के मध्य रहा था तब वह उनका प्रशंसक था और उन्हें मित्रों के समान स्नेह करता था। इस पुस्तक में उसने यह जानने का वास्तविक बौद्धिक प्रयास किया है कि जो साम्यवादी क्रान्तिकारियों के रूप में अत्यधिक प्रिय थे वे शासकों के रूप में अप्रिय क्यों बन गये। इससे पहले कि विश्व यह जान सके कि क्या उन्मादपूर्ण सार्वजनिक नीति साम्यवादियों द्वारा मानवीय बौद्धिकता को सम्माननीय मूल्यों से विच्छेदित करने का अपरिहार्य परिणाम है अथवा एक मात्र दुर्भाग्यपूर्ण ऐसा संकेत हो जिनका प्रदर्शन प्रत्येक साम्यवादी सरकार ने किया है। चीनी साम्यवादी संविधान अपनी सामान्य जनता के प्रति अविश्वास के बहुत कम वैसे संकेत देता है जैसे प्रायः साम्यवादी शासकों के द्वारा अभिव्यक्त किये जाते हैं।

रूप से संगठनों के नामों में परिवर्तन तथा कार्यों का पुनर्वितरण हुआ। इस प्रलेख में पिछले पांच वर्षों में सरकार में हुए परिवर्तनों का वर्णन भी किया गया था।[18]

सभी परिवर्तनों में एक सर्वाधिक उल्लेखनीय परिवर्तन सम्भवतया महान प्रशासनिक क्षेत्रों को सरकारी इकाईयों में परिवर्तित करना था। यह सैनिक पृथकवाद को समाप्त करने की दृष्टि से भी किया गया था। नई सरकार के विस्तृत वर्णन आगामी पृष्ठ पर किया गया है

साम्यवादी चीन में नागरिकों के मूल अधिकार तीसरे अध्याय में सम्मिलित किए गए हैं। इसमें प्रजातन्त्रीय देशों के नागरिकों द्वारा उपयोग किए जाने वाले प्रायः सभी मौलिक अधिकारों व विशेषाधिकारों का वर्णन किया गया है। सब नागरिक कानून के सम्मुख समान घोषित किए गए हैं। बिना राष्ट्रीयता, जाति, लिंग, व्यवसाय, सामाजिक पृष्ठभूमि, धर्म शिक्षा निवास आदि के नियन्त्रण के प्रत्येक 18 वर्षीय चीनी को जिनमें पागल तथा राजनीतिक अधिकारों से वंचित लोगों को शामिल नहीं है, मत देने का तथा निर्वाचित होने का अधिकार प्रदान किया गया है। धर्म, व्यक्ति, भाषण, प्रकाशन संगठन, सभा आयोजित करने तथा अन्य इसी प्रकार की स्वतन्त्रताएँ भी प्रदान की गई हैं। संविधान अपने नागरिकों को काम करने, आराम, शिक्षा, वृद्धावस्था पेंशन तथा बीमारी व अयोग्यता के दौरान सहायता का अधिकार भी प्रदान करता है। संविधान नागरिकों को वैज्ञानिक शोध में लगने, साहित्यिक व कलात्मक सृजन तथा सांस्कृतिक गतिविधियों का अधिकार भी प्रदान करता है। संविधान यह घोषणा करता है कि नारी को पुरुष के समान आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, सामाजिक तथा घरेलू मामलों में पूर्ण अधिकार प्राप्त होंगे तथा यह भी घोषणा करता है कि राज्य विवाह, परिवार, माता तथा बच्चे की रक्षा करेगा। नागरिकों को यह भी अधिकार प्राप्त है कि राज्य अथवा सरकारी अधिकारियों द्वारा इन अधिकारों का हनन करने पर नागरिक प्रार्थना कर सकता है। अन्ततः सुदूर पार रहने वाले चीनियों के अधिकारों व हितों के प्रावधान हैं तथा विदेशों से न्यायपूर्ण बात के लिए संघर्ष करने, लोगों को राजनीतिक शरण प्रदान करने की व्यवस्था भी है।

18. इन पांच वर्षों में साम्यवादी चीन के बारे में सर्वश्रेष्ठ आख्यान निस्संदेह रिचर्ड एल. वाकर का चाइना अण्डर कम्यूनिज्म—द फर्स्ट फाइव इयर्स, न्यूहैवन 1955 है। वाकर चीन जनता से स्नेह करता है तथा कभी-कभी साम्यवादी शासन की आलोचना भी करता है। इन्हीं तथ्यों को अधिक संयत रूप से डब्लू डब्लू रोस्टो तथा अन्यों ने द प्रास्पैक्टस फॉर कम्यूनिस्ट चाइना, कैम्ब्रिज, (मैसाचूसेट्स न्यूयॉर्क 1955)। अन्य सामग्री का संदर्भ जॉन के फेयरबैंक तथा मसातोका बानो की रचना जापानीज स्टडीज ऑफ मार्डन चाइना, रटलैंड तथा टोकियो 1955 में दिया गया है पर इनका अनुवाद उपलब्ध नहीं हैं। यहाँ पर कहा जा सकता है कि रूस ने 1955-56 में समाजवादी कानून की ओर पर्याप्त प्रगति की है। विधि के पालन की तरफ लौटना इस बात का प्रमाण है कि स्टालिन वाद के दौरान व्यक्तित्व के शासन के विपरीत प्रगति हुई है। इस बात की सम्भावना व्यक्त करना बहुत कठिन कार्य है कि सामान्य जनता की मांग के बदले में सोवियत यूनियन कितना बदलेगा क्योंकि जनता की स्वतन्त्रता की मांग श्रेणी तंत्रीय शासकों को भयभीत कर देगी। जैसा कि गतनीति के प्रारम्भ में ही बढ़ती हुई स्वतन्त्रता ने सतर्क लोकतन्त्रीय शासकों को भयभीत किए है तथा उन्हें पुनः दमन, निर्दयता एवं क्रूरता की नीति अपनाने के लिए प्रेरित करेगी इस समय सिर्फ यही कहा जा सकता है कि 1956 में जनवादी चीन व ख्रुश्चेव का रूस परस्पर विरोधी दिशाओं में जा रहे थे। चीन 1954 के संविधान के अन्तर्गत अधिक स्टालिन वादी बनता जा रहा था जब कि रूस इस इस प्रभाव से निकलता जा रहा था।

नागरिकों के इन अधिकारों के साथ यद्यपि कोई नियन्त्रण नहीं लगाए गए हैं तथापि इनका अध्ययन 1854 के संविधान के मूल सिद्धान्तों के सन्दर्भ में किया जाना चाहिए। ये वे सिद्धान्त हैं जो देशद्रोही तथा प्रतिक्रान्तिकारियों के लिए इन अधिकारों का पूर्णतः निषेध करते हैं। संविधान का अनुच्छेद 19 स्पष्ट रूप से घोषणा करता है कि—

चीन का जनवादी गणराज्य जनवादी प्रजातन्त्रीय व्यवस्था को सुरक्षा प्रदान करता है। इसके नागरिकों की सुरक्षा व अधिकारों को संरक्षण प्रदान करता है तथा सभी प्रकार के देशद्रोहियों व प्रतिक्रान्तिकारियों का तथा गतिविधियों का दमन करता है।

इस प्रकार राज्य कानूनी रूप से सामन्ती जमींदारों, प्रशासनिक पूँजीपतियों के राजनीतिक अधिकार कुछ समय के लिए नियन्त्रित रखेगा तथापि साथ ही उन्हें रहने की सुविधाएँ प्रदान करेगा ताकि समयानुसार वे स्वयं को नागरिकों में परिवर्तित कर अपने जीवनयापन के लिए श्रम द्वारा धन अर्जन करने लायक बन सकें।

किसी भी व्यक्ति को आसानी से राजद्रोही अथवा प्रतिक्रान्तिकारी साबित किया जा सकता है—दीर्घकालीन सदस्यता वाले साम्यवादी नेता भी इससे नहीं बच सकते। पुलिस अनभिज्ञ नागरिकों के न्यायालय के सम्मुख किसी भी व्यक्ति पर यह आरोप लगा सकती है कि वे विद्यमान राजनीतिक व्यवस्था के विरुद्ध है। अतः ये अधिकार तथा स्वतन्त्रताएं मात्र उसी व्यक्ति के द्वारा प्राप्त की जा सकती हैं जो वर्तमान शासन से पूर्णतः सहमति रखते हैं अन्यथा इनका अस्तित्व मात्र लिखित रूप में ही विद्यमान है।

चौथा अध्याय राष्ट्रीय ध्वज को लाल रंग को घोषित करता है राज्य का चिन्ह पाँच सितारों की रोशनी में तियन एन का द्वार' है तथा इसकी राजधानी पेकिंग है।

नवीन संविधान को ध्यान से देखने पर स्पष्ट हो जाता है कि इसका मूल उद्देश्य चीन की जनता का तीव्र गति से सामाजिकरण करना है। समाजवादी कृषक गणराज्य के माध्यम से सरलतापूर्वक ढंग से क्रान्तिकारी बुद्धिवर्ग के नेतृत्व में जिस गणराज्य की स्थापना की जा सकती उसकी सम्भावना समाप्त कर दी गई है। एक औद्योगिकृत राज्य-पूंजीवादी व्यवस्था को एक सहकारी राज्य की व्यवस्था को सम्पन्न बनाए चाहे उसके बनाने वाले श्रमिकों तथा कृषकों को कितना ही त्याग करना पड़े इसका मूल उद्देश्य है। इसका आदर्श समाजवादी लंका नहीं जापान है।

चीनी राज्य की सम्पूर्ण शक्ति शोषण को समाप्त कर समाजवादी समाज की स्थापना औद्योगीकरण तथा रूपांतरण के माध्यम से करने की है।

नवीन संविधान की दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता जनवादी गणराज्य के राष्ट्रपति को दी गई व्यापक शक्तियां हैं वह शक्ति का केन्द्र बिन्दु है। उसे न केवल राज्य के नाममात्र के अध्यक्ष की शक्तियां प्राप्त हैं अपितु वह जनवादी गणराज्य की सशस्त्र सेनाओं का सेनापति है (अनुच्छेद 41 के अनुसार जनवादी गणराज्य का राष्ट्रपति सशस्त्र सेनाओं का सेनापति है तथा वह राष्ट्रीय सुरक्षा समिति का भी अध्यक्ष है।) यह स्पष्ट है कि साम्यवादी उपशासकों की व्यवस्था को पूर्णतः समाप्त करते जा रहे हैं। माओ के अन्तर्गत होने वाले पांच या छः उपसभापतियों के पद की समाप्ति न केवल माओ की महत्ता को इंगित करता है अपितु इसने सर्वोच्च शासक परिषद् से गैर साम्यवादी तथा सनयात सेन जैसे लोगों को हटा दिया।

इस नवीन संविधान की दूसरी विचित्र विशेषता न्यायालय को दी गई विशेष महत्ता है। शासन के प्रत्येक स्तर पर जनवादी न्यायालय जनवादी कांग्रेस के प्रति उत्तरदायी बनाए

गए हैं, अगले उच्चतर न्यायालय के प्रति नहीं। यह तथ्य इस बात का अवशेष जिससे कानूनी व्यवस्था को नियन्त्रित कर दिया गया है तथा न्याय व्यवस्था को नीति निर्धारण करने वाले शासकों के मध्य निष्पक्ष निर्णायक के स्थान पर वर्ग युद्ध में एक राजनीतिक यंत्र के रूप में माना गया है।[19]

नवीन संविधान को यह शक्ति लाल सरकार की अपरिमित सत्ता की वजह से मिली है। स्वायत्तता का स्थान केन्द्रीयकरण ने ले लिया है। चीन के 1954 का संविधान उतना ही सुन्दर है जितना 1936 का रूस का संविधान तथापि यह रूस के संविधान के समान ही जीवन की वास्तविकताओं से पर्याप्त दूर है।

स्थायी साम्यवादी सरकार : चीन में इस नवीन संविधानिक सरकार का उदय बहुत से छोटे विवादों के बीच जैसे संयुक्त राष्ट्र संघ में ताइपेह के स्थान पर पेकिंग की सदस्यता, वाशिंगटन तथा पेकिंग के दौत्य सम्बन्ध अथवा वियतनाम तथा लाओस के स्थानीय संघर्ष ने गौण बना दिया। वस्तुतः साम्यवादी चीन की आर्थिक व सैनिक सफाता साम्यवादियों की शासन कर सकने की क्षमता पर निर्भर करती है। विश्व में सभी स्थानों पर तथा चीन में विशेष रूप से सरकार का कार्य अपने लोगों के प्रति अपने उत्तरदायित्वों को पूरा करना है। कई चीनी साम्यवाद को मात्र समाजवादी व्यवस्था अथवा विश्वशान्ति स्थापित करने का माध्यम मानते हैं अपितु आधुनिकता प्राप्त करने की गारंटी भी मानते हैं।[20]

1943 के अर्द्ध विद्रोह की स्थिति से 1949 में सम्पूर्ण चीन में व्यापक सत्ता प्राप्त करने में माओ ने जिस विधि का प्रयोग किया वह परम्परागत रूप से युद्ध से तथा छल की नीति है जो साम्यवाद को प्राप्त करने के लिए अपनाई गई। सनयातसेन त्सु तथा कार्लमार्क्स में उल्लेखनीय साम्यताएँ हैं। जिन अस्थाई तथा नष्ट प्रायः स्थानीय संस्थाओं के माध्यम से साम्यवाद ने शक्ति उस समय ग्रहण की जब सैनिक तथा राजनीतिक समितियों तथा विशाल प्रशासनिक क्षेत्र विद्यमान थे। 1953 में इनके स्थान पर प्रशासनिक समिति का नवीन प्रशासनिक संगठन बनाया गया। 1954 में सम्पूर्ण संगठन समाप्त कर दिया तथा 1954 का संविधान अंगीकृत किया गया।

नवीन संविधान के अन्तर्गत सरकार का ढांचा चार्ट संख्या 12 में दिखाया गया है। सरकार के अध्यक्ष की शक्तियाँ पर्याप्त बढ़ दी गई हैं। सर्वोच्च समिति को सरलीकृत कर दिया गया है। पांच उपाध्यायों को समाप्त कर दिया गया है। चीन की जनवादी सरकार सोवियत रूस की सरकार का परिष्कृत रूप है।

अखिल चीन जनवादी कांग्रेस[21] वार्षिक रूप से बहुत कम समय के लिए मिलती है। यह राज्य शक्ति की सर्वोच्च समिति है। एक बाह्य प्रेक्षक को यह संसद नाममात्र की

19. साम्यवादी सरकार की उत्पत्ति के सतर्कता पूर्ण अध्ययन के लिए एच. बी. थॉमस की पुस्तक गवर्नमेंट एण्ड एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ कम्युनिस्ट चाइना, न्यूयॉर्क 1955 का संशोधित संस्करण में विस्तृत विश्लेषण तथा वर्णन देखिये।

20. राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस पद का प्रयोग पिकिंग के अंग्रेजी भाषा के प्रसारण में प्रायः किया जाता है किन्तु राष्ट्रीय पद राष्ट्रवादियों से इतना जुड़ा हुआ है कि लेखकों ने कूमि राष्ट्रीय जन का अधिक साहित्यिक अनुवाद, साम्यवादी पद सम्पूर्ण राष्ट्र के रूप में किया है।

21. एक बार एक भोज के समय अपने अंतरंग मित्रों से हिटलर ने कहा है कि उसके लिए रिस्टाक का एक उपयोग अवश्य था।

दृष्टिगोचर हो सकती है तथापि वास्तविकता यह है कि तानाशाही राज्य तभी जीवित रह सकता है जब उन्हें अपने नेतृत्व में उत्पन्न संकटों को समाप्त करने की क्षमता हो (हिटलर की मृत्यु के पश्चात् प्रकाशित उसके वार्तालाप उसकी अपने उत्तराधिकारियों के बारे में शंका को व्यक्त करते हैं इस प्रकार की शंकाएं माओ में भी हो सकती हैं जिन्हें वह फिलहाल व्यक्त नहीं कर पा रहा है)।[22] अपनी स्थायी समिति द्वारा आमन्त्रित कांग्रेस ने अपने मुख्य अधिकारियों का चयन किया तथा माओ व अन्य नेताओं द्वारा प्रस्तुत आर्थिक योजना को स्वीकार किया तथा कानून बनाए।
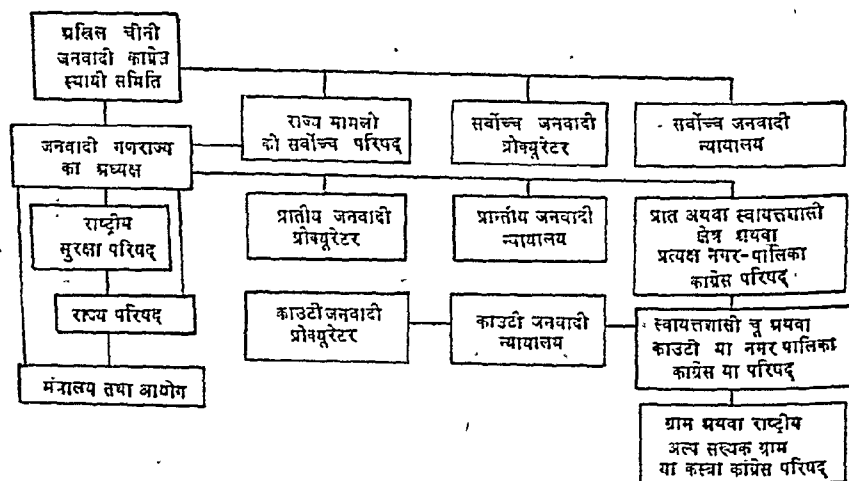
चार्ट 12 : 1954 के संविधान में केन्द्रीय तथा प्रान्तीय जनवादी चीनी सरकारों की नीति का निर्धारण करने वाले नवीन संगठन।

स्थायी समिति सामान्यतया वे कार्य करती है जो कुमितांग शासन की दो शताब्दियों के दौरान कुमितांग की केन्द्रीय कार्यकारिणी परिषद् के द्वारा किए जाते थे (देखिए पृ० 353–354)। यह कार्यपालिका प्रशासक तथा व्यवस्थापिका भी है। यह विधियों की व्याख्या कर सकती है नवीन राज्य परिषद् के वार्षिक आदेशों तथा निर्णयों को निरस्त कर सकती है तथा सरकार के विभिन्न अंगों के कार्य का निरीक्षण कर सकती है। इस संविधान में सोवियत रूस की सुप्रीम सोवियत में प्रेसीडियम जैसी कोई संस्था नहीं है इसका अध्यक्ष सरकार का नाममात्र का अध्यक्ष नहीं है तथा गणराज्य के अध्यक्ष के अधीन है।[23]

गणराज्य के अध्यक्ष का निर्वाचन अखिल चीनी जनवादी कांग्रेस के द्वारा किया

22. 12 मई, 1956 को हांगकांग से भेजे गये समाचार में बताया गया कि चीन के भारी औद्योगिकरण की योजना को सफल बनाने के लिए मंत्रालयों की संख्या बढ़ायी गयी। न्यूयार्क टाइम्स के अनुसार 10 नये मन्त्रालय व 2 नये आयोग स्थापित किये गये जिनमें एक राष्ट्रीय आर्थिक आयोग, एक राष्ट्रीय तकनीकी औद्योगिक आयोग, मौसम विभाग, शक्ति उत्पादन के साधन नगर निर्माण, खाद्य, भूमिकर, भूमि की पुनर्विभक्ति तथा सामूहिक उत्पादनों के मंत्रालय थे।

23. राष्ट्रवादियों ने इस समस्या का समाधान करने का प्रयास किया तथा च्यांग ने एक विलक्षण प्रबन्ध कार्य का दर्शन लिखा जिसमें उसने क्रांतिकारी जीवन के मध्य मूल्यों को प्राप्त करने का प्रयास किया था। यह लेखपाल एम लिनबर्गर इन द वादना ऑफ च्यांग काई शेक पूर्वोधृत, 373-88 पर उपलब्ध है

जाता है वह पुनर्निर्वाचित भी किया जा सकता है। उपरोक्त लिखित शक्तियों के अलावा यह राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् तथा राज्य के मामलों की सर्वोच्च परिषद् का अध्यक्ष है। यह दूसरी संस्था शासन की शाही प्रीवी परिषद् के समान है जो 1889 से 1945 तक विद्यमान रही (देखिये पृ.) तथा इस प्रकार की संस्था संपूर्ण जनवादी विश्व में कहीं भी नहीं पाई जाती है। यह सलाहकार तथा परामर्शदात्री संस्था है।

राज्य के मामलों में सर्वोच्च परिषद् होने के बजाय राज्य परिषद् सुप्रीम सोवियत की समकक्षी संस्था है। इसके कार्य पश्चिमी मंत्रिपरिषद् से साम्यता रखते हे तथा उससे व्यापक है। सभी मन्त्री तथा आयोग के अध्यक्ष 23 राज्य परिषद् के सदस्य होते हैं जो न केवल पूर्ववर्ती सरकार की प्रशासनिक परिषद् से अधिक शक्तिशाली ह अपितु जनवादी क्रान्तिकारी सैनिक परिषद् के प्रशासनिक स्वरूप से भी अधिक शक्तिशाली हैं।

नवीन स्थानीय प्रशासन : विशाल प्रशासनिक क्षेत्र जो साम्यवाद की शक्ति को दृढ बनाने में सहायक हुए 1949 से 1953 से विद्यमान रहे तथा फिर समाप्त हो गए। तथापि प्रान्तीय सरकार में विशेष परिवर्तन नही हुआ। कुछ प्रान्त समाप्त हो गए जैसे 1952 में कछार का कसु के एक भाग निन घसिया, सुई युआन को अंदरुनी मंगोलिया के स्वायत्तशासी प्रान्त में सम्मिलित कर लिया गया। कुल प्रान्तों की संख्या जो राष्ट्रवादी चीन में 35 थी। 1956 में घट कर 25 रह गई।

1954 में चीन की शासन व्यवस्था को त्रिस्तरीय बना दिया गया। पेकिंग के नीचे सर्वप्रथम प्रान्त स्वायत्तशासी प्रदेश तथा केन्द्र के नियन्त्रण में नगरपालिकाएँ थी। इन प्रान्तों तथा स्वायत्तशासी प्रदेशों को स्वायत्तशासी चाऊ, काउंटी, स्वायत्तशासी काउंटी तथा नगरपालिकाओं में विभाजित किया गया था तथा तृतीय स्तर पर ये इकाइयाँ, ग्राम, अल्पसंख्यकों के गाँव तथा कस्बों में विभाजित थीं।

इस प्रकार एक बार फिर प्रान्तीय व्यवस्था प्रमुख थी।

इस प्रकार पेकिंग की नवीन रूपरेखा साम्यवाद के साथ परम्परागत शाही चीनी व्यवस्था की अवशेष थी।

चीनी साम्यवादी प्रत्येक स्तर पर निर्वाचित संस्थाओ को कॉंग्रेस के नाम से सम्बोधित करते है तथापि चीनी भाषा इसका समकक्षी पद 'जेन मिन ताई पिआओ ताई हुई' वस्तुतः अमेरिका अथवा ब्रिटेन की अंग्रेजी में प्रमुख कांग्रेस पद पर्याप्त भिन्न है तथा यह सोवियत रूस में प्रयुक्त 'जनता के प्रतिनिधियों की सोवियत पद' के अधिक समीप हैं।

साम्यवाद की प्रशासनिक सेवाएं

यह महत्वपूर्ण तथ्य है कि चीन द्वारा स्वतन्त्रता तथा प्रगति की साम्यवादी सफलता का बहुत कुछ श्रेय विभिन्न महत्वपूर्ण व्यक्तियों का बुद्धिमत्तापूर्ण चयन को है। चीनी भाषा में 'काउर' उस आदर्श व्यक्ति को कहते हैं जिससे अन्य लोग अनुकरण से सीख सकते हैं न कि वह कैसा है तथा क्या करता है न कि उसके द्वारा रचित पुस्तक से।[24] साम्यवादियों की अधिकतम सफलता उनकी व्यक्ति प्रधान राजनीति का परिणाम है। उनमें नीति सम्बन्धी अनुशासन पुरानी प्रक्रिया की सेना से भी अधिक कठोर है। उनकी चयन तथा तरक्की की प्रणालियाँ जितनी व्यावहारिक तथा दक्ष हैं उतनी विश्व मे अन्य कहीं नहीं पाई जाती है।

24. जान दोने, कम्पलीट पोइट्री एण्ड सलेक्टेड प्रोज लन्दन व न्यूयार्क, 1949 पृष्ठ 525।

उन्होंने अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए मानव स्वभाव का प्रयोग सफलतापूर्वक किया है उन्होंने उन्हीं चीजों का उपयोग किया है जिनसे कन्फ्यूशियस तथा ईसाई पर्याप्त परिचित थे। उन्होंने एक प्राचीन सिद्धान्त का प्रतिपादन नवीन रूप में किया 'हमें हमेशा अधिक अच्छा तर्क तथा स्पष्ट प्रदर्शन को स्वीकारने के लिए तत्पर रहना चाहिए, इस विश्व की सम्पूर्ण महानता इसमें है कि यह अन्यों के मत पर निर्भर करती है तथा इनमें सबसे अधिक वास्तविक व ठोस स्वयं मनुष्य का हृदय है। हृदय हमेशा सक्रिय रहता है, सर्वदा व्यक्त प्रत्येक कार्य को करने वाला, सभी शक्तियों का उपयोग करने वाला तथा अपने सभी दक्षताओं का प्रयोग करता है। इसके बावजूद भी यदि कोई खतरा उत्पन्न हो जाता है व कोई दुश्मन खड़ा हो जाता है तो उस खतरे को बढ़ने से पहले ही समाप्त कर देना चाहिए।'[25] यह जॉन डोन ने 1623 में लिखा था तथा इसे माओ ने शायद ही कभी पढ़ा होगा तो भी उसने इस सिद्धान्त का पूर्ण उपयोग किया।

सम्पूर्ण साम्यवादी नेताओं व उपदेश का मूल साम्यवादी क्रान्ति के नेतृत्व में है किन्तु क्रान्ति को समर्थन प्रदान करने का एकाधिपत्य मात्र उन्हीं को प्राप्त नहीं है।

इस प्रकार साम्यवादियों को राष्ट्रवादियों के समान कानूनी रूप से 'संरक्षण काल' की स्थापना नहीं करनी पड़ी। जिसका सहारा कुमितांग ने लिया था (देखिए पृ. 156-58) वे यह मान कर चलते हैं कि उनके दर्शन व चतुरता के कारण नेतृत्व पर उनका अधिकार है तथा उन्हें 'जनवादी शक्ति' का अपने हाथों में दृष्टिकरण करने का पूरा अधिकार है। साम्यवादी दल का नेतृत्व अनेक लोकप्रिय तथा विशिष्ट तरीकों से प्राप्त किया जाता है (1) सभी सरकारी पदों तथा नीति निर्धारण करने वाले पदों पर अपने विश्वसनीय लोगों को नियुक्त करना। (2) युवा तथा उत्साही कार्यकर्त्ताओं को अनेकों सरकारी व क्षेत्रीय कार्यों में लगाना। (3) सामाजिक रूप से सम्मानित व्यक्ति को अपने भूतकाल को भुला कर साम्यवाद का समर्थन करना चाहते हैं उन्हें इसके लिये अवसर प्रदान करता।

25. पॉल एम डब्लू लिन बर्गर ए कान्ट्री ऑफ द सनमिन फस्टं, टंकित प्रतिलिपि 1933 में वाशिंगटन में लिखी गई तथा अप्रकाशित है का एक भाग द कुमिताग पार्ट इन द थ्री प्रिंसिपल्स है। राष्ट्रवादियों ने दमन के द्वारा स्वाधीनता तथा विरोध के निषेध के द्वारा स्वतन्त्रता प्रदान करने का पूर्णतया परंपरागत तरीका अपनाया। इस पुस्तक का सह रचियता पॉल लिनबर्गर उस पॉल एम डब्लू विनबर्गर का पुत्र है जो 1906 से 1936 के मध्य 30 वर्षों तक कुमितांग क्रान्तिकारी तथा सरकारी अधिकारियों में विद्यमान कुछ अमेरिकीयों में से एक था। कुमितांग के एक दलीय शासन के सम्बन्ध में काफी सामग्री लेखक द्वारा पूर्वप्रयुक्त रूप में उसके पिता द्वारा सनयातसेन से प्राप्त की गयी। सनयातसेन स्वयं प्रथम गणतन्त्र के अन्तर्गत बहुदलीय सरकार की पूर्ण असफलता, से आवेगपूर्ण रूप से निश्चय तथा बौद्धिक रूप से चकित था तथा क्रान्तीकारी नेता के रूप में ज्यादा आसक्त महसूस कर रहा था। एक बार उसने जोफे वोरोदिन तथा अन्य साम्यवादी परामर्श दाताओं की सहायता से अपने विरोधियों के विचारों का सम्मान करने के दायित्व से मुक्त कर दिया था उसके विचार प्रजातन्त्रीय नहीं थे कुमितांग तथा साम्यवादी दोनों ही अपने बौद्धिक विरोध को स्वीकार नहीं करते। इसमें चीनियों का बौद्धिक स्वाधीनता के प्रति वह भय झलकता है जो विभिन्न चरणों में साम्यवादी संस्कृति की मूल विशेषता रहा है। अतः यह मानना कि चीन में साम्यवादियों द्वारा स्थापित एक दलीय शासन की व्यवस्था किन्ही अर्थों में चीन विरोधी है एक गलत विश्वास है। भविष्य में यदि कभी चीन में साम्यवाद समाप्त भी हुआ तो भी आने वाली व्यवस्था अवश्य ही इसकी परम्परागत विशेषताओं का अनुकरण करने का प्रयास करेगी यहाँ तक कहा जा सकता है कि यदि स्वतन्त्रता को प्रजातन्त्र के साथ अनिवार्य मूल्य के रूप में संलग्न न किया जाय तो चीन प्रजातन्त्र को स्वीकार कर लें।

स्पष्टतया सरकार के संविद स्वरूप के बावजूद अधिकांश महत्वपूर्ण स्थान साम्यवादी दल को प्रदान किये जाते हैं। साम्यवादी दल का अध्यक्ष ही जनवादी सरकार का अध्यक्ष होता है। विदेश मन्त्रालय वित्त तथा भारी उद्योग जैसे महत्वपूर्ण मन्त्रालय मुख्य साम्यवादी नेताओं के अधीन होते है तथा जिन मन्त्रालयों के अधिकारी साम्यवादी नहीं होते हैं वहाँ साम्यवादी उपमन्त्री नियुक्त किये जाते हैं। स्थानीय सरकार तथा स्थानीय दलीय सगठनों में यह परस्पर आच्छादन और भी अधिक है। जनमत को ठीक ढंग से व्यक्त करने के लिये दल सभी जनवादी सम्मेलनों में अपने बहुमत को बनाए रखने का प्रयास करते है। तथापि कुमितांग दल के संरक्षण में दो दशाब्दि तक रहने के पश्चात् चीन के लोगों ने शासन तथा दल की इस स्थिति को बिना किसी विवाद के स्वीकार कर लिया है।

स्वयं सनयातसेन ने भी अनुशासन तथा किसी विश्व के अधीन रह कर स्वतन्त्रता प्राप्त करने का उपदेश दिया था। सनयातसेन ने 1922 में जन पाल लिनबंजर से कहा था कि उसे स्वयं अपने सिद्धान्तो का पालन करना चाहिए उसने स्वीकार किया था कि स्वतन्त्रता को आज्ञाकारी होना पड़ता है।

सर्वप्रथम हमें अपने दल के अधीन होना चाहिए ताकि हम अपने तीन सिद्धान्तों को क्रियान्वित कर सकें। चीन कभी भी कैसे स्वतन्त्र हो सकेगा यदि हम अपनी निजी स्वतन्त्रता राष्ट्रवाद की सामूहिक भावना को समर्पित नहीं कर पाते है। चीन के लिए आधुनिक प्रजातन्त्र बनने के लिए भी यह जरूरी है कि स्थानीय इकाईयों के व्यक्ति तथा वे इकाईयों स्वयं भी दलीय प्रभुता को स्वीकार करें ताकि दल अपने सिद्धान्तों को प्रभावशाली ढंग से लागू कर सके। तथा यदि हम मिन शेंग को प्राप्त करने के लिए राष्ट्रवादी तथा जनतन्त्रीय दल को साधन नहीं बना पाये तो किस प्रकार हम चीन को दरिद्रता तथा कष्ट से मुक्ति दिला सकते हैं ताकि चीन के आम स्त्री-पुरुष व बच्चे उसी प्रकार सुख प्राप्त कर सकें जैसे विश्व के अन्य नागरिकों को प्राप्त हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण विश्व में मानवता की स्थिति में सुधार होगा तथा इस प्रकार विश्व में ऐसी शासन व्यवस्था की स्थापना होगी जिससे आज की सम्यता में व्याप्त कई दुख: व कष्ट समाप्त हो जायेंगे।

मानवता के प्रति इस सेवा को पूरा करने के लिए सर्वप्रथम हमें अपने दल के माध्यम से चीन को स्वतन्त्र बनाना चाहिए तथा एक स्वतन्त्र चीन के माध्यम से हम सम्पूर्ण विश्व की उन्नति का प्रयास कर सकते है तथा यह कितना आश्चर्यजनक है कि यह सब चमत्कार मात्र दल की आधीनता तथा इस सिद्धान्त का निर्देशन स्वीकारने से हो जाएगा।[26]

चीन के लिए एक दलीय शासन व्यवस्था नवीन नहीं है। कुमितांग दल ने यद्यपि अपने लेनिनवादी एक दलीय शासन प्रणाली को स्वीकार कर यूरोपीय अवधारणा को आमन्त्रित किया था तथापि वास्तव में यह चीन के वर्षों पुराने कन्फ्यूशियस सैद्धान्तिक नियन्त्रण को स्वीकार कर रहा था।

साम्यवादी तथा कार्यकर्त्ता : साम्यवादी दल की वास्तविक शक्ति वस्तुत: उसके स्टॉफ के लोगों के निस्वार्थ कार्य में निहित हैं। ये कार्यकर्त्ता सामान्यतया युवा तथा उत्साही लोग होते हैं कभी-कभी दल द्वारा गैर सदस्य लोगों को भी सरकार तथा दल में महत्वपूर्ण

26. चीनी साम्यवादी दल की केन्द्र कार्यकारिणी समिति ने दल के अन्दर शुद्धिकरण अभियान प्रारंभ करने का निर्णय किया, न्यू चाइना मथली ग्रन्थ 2 सख्या 311 अगस्त 1950।

स्थान दिया जाता है। कार्यकर्त्ता के प्रत्येक स्तर पर जनता को संगठित करने की आवश्यक विशेषताएँ स्वामीभक्ति आज्ञाकारिता सक्रिय योग्यता होती हैं। 30 वर्ष के व्यक्ति को कार्यकर्त्ता बनने के लिए अधिक उम्र वाला माना जाता है।

जापान से युद्ध के दिनों में साम्यवादियों ने येनान में कार्यकर्त्ताओं के प्रशिक्षण के लिए केन्द्रीय दलीय स्कूल, सैनिक इंस्टीट्यूट, येनान जापान विरोधी विश्वविद्यालय तथा लू हसिन विश्वविद्यालय की स्थापना की गई। इन संस्थानों में मात्र उत्साही साम्यवादी या साम्यवादी समर्थकों को ही स्थान दिया गया। ये लोग व्यावसायिक, राजनीतिक सैद्धान्तिक अथवा सांस्कृतिक क्षेत्र में प्रशिक्षण पाने के पश्चात् दक्षता प्राप्त करने वाले हो सकते थे। औपचारिक शिक्षा उनके प्रशिक्षण का एक अंग मात्र थी। इन सुविधाओं के माध्यम से अन्तिम बात वे 'जनता से सीखने' की प्रक्रिया से सीखते थे जिसका अर्थ क्षेत्रीय कार्य था श्रमिक तथा कृपक वर्ग से आने वाले कार्यकर्त्ताओं को सांस्कृतिक विषयों की कक्षाओं में जाना पड़ता था तथा जो उच्च स्तर से आते थे उन्हें कृषक लोगों के मध्य रह कर जनसामान्य की भाषा को समझना होता था। इस प्रकार एक या दो वर्ष के पूर्ण प्रशिक्षण के बाद ही ये कार्यकर्त्ता क्षेत्रीय कार्य के लिए भेजे जाते थे।

इन कार्यकर्त्ताओं ने राष्ट्रीय सरकार के विरुद्ध सैनिक आन्दोलनों में पर्याप्त भाग लिया। उन्होंने गैरसाम्यवादी सेना के बहुत से कार्य जैसे प्रचार, जनसंगठन, अस्थाई भूमि सुधार तथा भूमि ग्रहण कार्य किये तथाकथित दक्षिण स्थित कार्यकर्त्ता समूह का संगठन राष्ट्रवादी साम्यवादी था जो राष्ट्रवादी बनाम साम्यवादी संघर्ष के अन्तिम चरण में थे तथा अन्ततः ये जनवादी मुक्तिवाहनी में सम्मिलित किये गए। राष्ट्रवादी अपने पतन के अन्तिम चरण में साम्यवादियों के पास इतने प्रशिक्षित लोग थे कि उनमें से 150,000 तो नये मुक्त प्रदेशों में ही तैनात किए गए।

इन कार्यकत्ताओं के अभाव में साम्यवादी शक्ति प्रदान करने में असमर्थ हुए होते।

स्वयं साम्यवादी दल अपनी विजय के बाद इन कार्यकर्त्ताओं के अभाव में तत्कालीन राजनीतिक आर्थिक तथा सामाजिक स्थिति का सामना करने में असमर्थ रहते। तबसे चीन के साम्यवादी दल की सदस्यता में तीव्रता से तेजी आई। 1937 में उसमें मात्र 40,000 सदस्य थे। 1945 में यह संख्या बढ़कर 1210 000 हो गई। 1952 में यह सदस्यता 5000,000 हो गई। आज की स्थिति में इस सदस्यता के बारे में 50 से 60 लाख का अनुमान लगाया जाता है। ये कार्यकर्त्ता वे स्वयं सेवक हैं जो उत्साहपूर्वक जनता के मध्य साम्यवादी दल का कार्य करते हैं। एक सफल कार्यकर्त्ता सदस्य बाद में कार्य करने में असमर्थ होता है तो उसे कार्यकर्त्ता भी नहीं रहने दिया जाता है।

साम्यवादी दल के तीव्र विस्तार ने अन्ततः इस दल में अवसरवादी लोगों को भी आकर्षित किया। अतः साम्यवादी दल ने समय-समय पर शुद्धिकरण की प्रक्रिया को अपनाया है। सर्वप्रथम इस प्रकार का प्रयास 1942 में उच्च स्तर पर उन लोगों के विरुद्ध किया गया जो अत्यधिक व्यक्तिवादी प्रवृत्ति के पाए गए थे। दूसरा इस प्रकार का आन्दोलन 1947-48 में छिड़ा तथा यह भूमि सुधार आन्दोलन में लगे उस वर्ग की ओर था जिनकी प्रवृत्ति जमीदारों की अथवा पूँजीपति की ओर थी। तीसरा शुद्धिकरण आन्दोलन अप्रेल 1950 में प्रारम्भ हुआ। प्रत्येक आन्दोलन को स्वयं दल में से तथा जनता की आलोचना का सामना करना पड़ा।[27]

27. जमींदारों, कृषकों के बीच प्रारम्भिक संघर्ष तथा रक्तपात एवं विनाश का वर्णन जैक बेल्डन की पुस्तक चाइना शेक्स द वर्ल्ड का न्यूयॉर्क 1949 में है।

वास्तविक व्यवहार में इस प्रथा का यह तात्पर्य है कि साम्यवादी दल के प्रत्येक सदस्य तथा कार्यकर्त्ता को आवश्यकता पड़ने पर अपनी त्रुटियों को स्वीकारने के लिए तैयार रहना चाहिए। उसे न केवल अपनी त्रुटियों को स्वीकारना चहिए अपितु उसे माओ अथवा जिऊ द्वारा समय सयय-समय पर प्रेषित घोषणाओं से अवगत होना चाहिए तथा उसके अनुसार अपने व्यवहार में परिवर्तन करना चाहिए।

साम्यवादी पूंजीपति : चीन में सत्ता ग्रहण करने के पश्चात् साम्यवादियों ने जहां तक सम्भव होसका। चीनी पूंजीपतियों का समर्थन प्राप्त करने का प्रयास किया। 1948-49 में ऐसा प्रतीत होता था कि साम्यवादी सत्ता प्राप्त करने के बाद उसे खो बैठेंगे क्योंकि राजनीतिक क्षमता व सैनिक चातुर्य के साथ उनमें आर्थिक कुशलता का अभाव लगता था। साम्यवादी स्वयं अपनी इस दुर्बलता के प्रति सजग प्रतीत होते थे तथा इसका समाधान करने के लिए उन्होंने जितने अधिक उद्योगपतियों का समर्थन प्राप्त हो सकता था उन्होंने पाने का प्रयास किया इस संदर्भ में शंघाई की स्थिति शोचनीय थी।

शंघाई पर नियन्त्रण प्राप्त करते ही साम्यवादियों ने सुप्रसिद्ध चीनी पूंजीपतियों को जनवादी राजनीति परामर्शदात्री सम्मेलन में आमन्त्रित किया। जुंग ते शेंग नामक प्रसिद्ध उद्योगपति जो अनेकों सूती तथा आटा मिलों का मालिक था तथा चाऊ त्सांग पो जो सार्वजनिक भाषणों का उद्योगपति था को बड़े विनयपूर्ण निमन्त्रण भेजे गए। साम्यवादियों ने उन चीनी पूंजीपतियों को भी पुनः आमन्त्रित किया जो ब्रिटिश हांगकांग भाग गए थे तथा उनसे शंघाई की पुर्नव्यवस्था करने में सहायता देने का आग्रह किया। ऊनी वस्त्रों तथा माचिस के प्रसिद्ध निर्यात लिऊ हुंच शेंग से लौटने का आग्रह किया गया तथा जब वह वापिस आ गया तो उससे यह कहा गया कि वह समाजवाद में अपनी आस्था व्यक्त करे। वह पेकिंग गया तथा उसे माओत्सेतुंग से मिलने का अवसर मिला उसने कई सम्मेलनों में भाग लिया, भाषण दिए तथा शंघाई लौट आया तथा आज भी वह अपने उद्योगों का संचालन पहले की तरह से कर रहा है यद्यपि उसके आधीन एक साम्यवादी कार्यकर्त्ता रहता है। शंघाई की सार्वजनिक परिषद् का सदस्य होने के नाते लिउ सर्वशक्तिशाली श्रमिक विवाद बोर्ड तथा कीमत मूल्यांकन बोर्ड में उपस्थित रहता था। यद्यपि उसे कोई वैयक्तिक तथा सम्पत्ति सम्बन्धी नुकसान नहीं हुआ। तथापि वह अपनी फैक्ट्री का पहले के स्वामी नहीं था। उसे व्यवस्था समिति का सामना करना पड़ता था जिसमें स्टॉफ के कार्यकर्त्ता तथा फैक्ट्री के श्रमिकों के प्रतिनिधि होते थे तथा उत्पादन व व्यवस्था के प्रश्न समिति के द्वारा निबटाये जाते थे। श्रमिकों की यूनियन कार्य की स्थिति तथा नौकरी की शर्तों का निर्धारण करती थी। उसकी फैक्ट्री का माल सरकार को बेच दिया जाता था तथा लिऊ को सरकार के द्वारा किये सभी आदेशों का पालन करना पड़ता था। उत्पादन की वस्तुएँ सरकार द्वारा निर्धारित की जाती थी। संक्षेप में यद्यपि लिऊ स्वयं अपनी फैक्ट्री का मालिक नजर आता है तथापि वह पूंजीपति के स्थान पर साम्यवादी आर्थिक व्यवस्था के एक अंश के रूप में परिवर्तित हो गया है। लिउ अकेला नहीं है।

लिऊ तथाकथित राष्ट्रवादी पूंजीपति को प्रस्तुत करता है जिसका प्रतिनिधित्व साम्यवादी झंड़े में एक सितारे के रूप में किया गया है तथा जिसे सामान्य कार्यक्रम के अनुसार उसे समाजवादी राज्य में पूंजीपति बने रहने का अवसर दिया गया है। सैद्धान्तिक रूप से इन पूंजीपतियों की सम्पत्ति सुरक्षित रही किन्तु व्यवहार में यह साम्यवादी अर्थ-

व्यवस्था का एक अंश मात्र बन कर रह गई। वैयक्तिक जीवन में प्रारंभ में अधिकांश राष्ट्रवादी पूँजीपतियों को पर्याप्त मात्रा में भौतिक सुख प्राप्त थे किन्तु बाद में कोरिया युद्ध के प्रारंभ के कारण उनमें से अधिकांश को अनिवार्य रूप से अपनी सम्पत्ति का अधिकांश भाग देना पड़ा। यद्यपि उन्हें अपनी चल सम्पत्ति पर पूर्ण अधिकार नहीं तब भी उन्हें पर्याप्त सुरक्षा प्रदान की गई बशर्ते वे नए शासन के प्रति आज्ञाकारी व स्वामिभक्त बने रहें। साम्यवादियों ने इस प्रकार अपनी शर्तों पर पूँजीपतियों को बनाए रखा।

तथापि जमींदारों को एक वर्ग के रूप में कभी भी नहीं रहने दिया गया। प्रायः उन्हें बिना किसी दया तथा विचार के सम्पत्ति से वंचित कर दिया जाता था चाहे उन्होंने अपनी सम्पत्ति को छोड़ा तथा अपने आप को श्रमिक वेश में छुपाना चाहा तब भी उनके कोमल हाथों तथा बातचीत करने के तरीके से उन्हें पहचान लिया जाता था तथा उनका पीछा किया जाता था। जमींदारों द्वारा आत्महत्या तथा उनकी स्त्रियों द्वारा नौकरानी अथवा वेश्यावृत्ति करना आम बात हो गई। पूँजीपतियों को साम्यवाद ने मात्र इसलिए सहा क्योंकि उनमें कुछ दक्षता थी जो चीन का आधुनिकीकरण करने में सहायक हो सकती थी। जबकि जमींदारों को असहनीय घोषित कर दिया गया। इनकी मृत्यु के बारे में लगाए गए अनुमान अविश्वसनीय हैं तथापि यह माना जाता है कि यह संख्या लाखों में थी। चूँकि प्रायः प्रत्येक समाज में जमींदार सर्वाधिक अलोकप्रिय व्यक्ति होते हैं अतः उनके विरुद्ध किये गए अत्याचार का कारण साम्यवादी सरकार द्वारा निश्चित नीति के स्थान पर सामान्य जनता द्वारा उनके विरुद्ध क्रोध अधिक था। वस्तुतः जमींदार तथा सम्पन्न किसानों के प्रति साम्यवादी चीन की नीति में भिन्न प्रदेशों में भिन्नता पाई जाती है। कुछ क्षेत्रों में सम्पन्न कृषकों के साथ पर्याप्त भद्र व्यवहार किया गया।[28]

बौद्धिक तथा स्वतंत्र वर्ग : 1949 में सत्ता के आने के पश्चात् प्रारंभ में चीनियों ने बौद्धिक, व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित तथा कुमितांग कालीन निम्न वर्ग के प्रशासकों के प्रति उदार दृष्टिकोण अपनाया। इस प्रकार विशाल मात्रा में वे उन प्रशिक्षित लोगों का सहयोग प्राप्त करने में सफल हुए जिनके सहयोग के अभाव में शासन का संचालन सम्भव नहीं होता। 25 अप्रेल 1949 को माओत्सेतुंग तथा चू तेह द्वारा प्रेषित संयुक्त प्रसारण में यह आश्वासन दिया गया कि युद्ध अपराधी तथा प्रतिक्रियावादी तत्वों को छोड़ कर कुमितांग सरकार के उच्चस्थ तथा मध्यम वर्ग के प्रशासकों को क्षमा कर दिया जाएगा। नगरपालिका प्रांत तथा राष्ट्रीय स्तर पर इन प्रशासकों को अपने पदों पर बने रहने दिया गया। किन्तु उन्हें प्रतिक्रियावादी तत्वों से सावधान कर दिया गया। इस घोषणा के पश्चात् राष्ट्रवादी सरकार के 95 प्रतिशत कर्मचारी शंघाई में साम्यवादियों द्वारा सत्ता ग्रहण करने के पश्चात् भी अपने पद पर बने रहे।[29]

किन्तु इन लोगों की कार्यावधि सीमित थी। इन्हें बनाये रखने के समय ही साम्यवादी दल ने स्पष्ट कर दिया था कि इस वर्ग की उपयोगिता साम्यवादी दल को कुछ समय के

28. मेयर इन फर्स्ट की रिपोर्ट का अंग्रेजी अनुवाद चाइना डाइजेस्ट संख्या 6 पृष्ठ 8-9 21 दिसंबर 1950 में प्रकाशित हुआ।

29. मेयर के इन फर्स्ट की रिपोर्ट का अंग्रेजी अनुवाद चाइना डाइजेस्ट संख्या 5 पृष्ठ 8–9 21 सितम्बर 1950 में प्रकाशित हुआ।

लिये थी तथा मूल साम्यवादी सिद्धान्त में उसका अस्तित्व नहीं था। अतः नौकरी में बने रहने के निरंतर आत्मआलोचना करना आवश्यक था। साम्यवादी कार्यकर्ता अक्सर उनसे पूछताछ कर सकते थे। साम्यवादीयों ने इन लोगों की पुनर्शिक्षा तथा साम्यवादीकरण की पूर्ण व्यवस्था की। इन सुविधाओं को प्राप्त करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को अपनी भूतकालीन गतिविधियों की समीक्षा करनी पड़ती थी तथा व्यक्तिगत रूप से यह प्रमाणित करना पड़ता था कि उसके विचार व कार्य करने का तरीका कितना गलत रहा था तथा वे लोग जो स्वयम की आलोचना करने में तथा साम्यवादियों के प्रति आभार व्यक्त करने में असमर्थ रहे वे शनैः शनैः समाप्त हो गए।

वस्तुतः साम्यवादियों ने अधिक सभ्य तथा सुसंस्कृत तरीका अपनाया था। साम्यवादी निरन्तरता को बनाए रखने के इतने उत्सुक थे उन्होंने तत्कालीन सामाजिक नेताओं को स्वीकार कर लिया। प्रसिद्ध लोगों को सरकार में स्थान प्रदान किया गया तथा अपने व्यावसायिक स्तर को बनाए रखने की उन्हें अनुमति दी गई है। समय समय पर उन्हें वर्तमान सरकार के समर्थन में लेख लिखने को कहा जाता है। यह माना जाता है कि इन लोगों को साम्यवाद में आस्था हो गई है तथा इसके बदले में उन्हें पर्याप्त सुविधाएं प्रदान की गई हैं।

साम्यवादी शासन के अन्तर्गत पर्याप्त भौतिक सुविधाएं दी जातीं हैं। एक प्राध्यापक यदि साम्यवादी आस्था को स्वीकार कर लेता है तो उसे कनिष्ठ साम्यवादी अधिकारी से तिगुनी तनख्वाह मिलती है। चूंकि सभी सार्वजनिक तथा शैक्षणिक लाभकारी तथा अलाभकारी पद सरकारी हैं तथा निजी क्षेत्र में समाप्त कर दिये गए हैं अतः चीन के बुद्धिजीवी सरकार के साथ सामंजस्य स्थापित करके ही रह सकता है।

परिणामतः पिछले वर्षों में चीनी समाचार पत्र सामान्य समीक्षा के अन्तर्गत आत्मस्वीकृति प्रकार के निबंधों से भरे होते हैं जो आम चीनी की प्रगति का द्योतक है। ये निबंध दुराग्रहपूर्ण होते हैं। प्रत्येक लेख लेखक द्वारा अपने भूतकाल की भर्त्सना से प्रारम्भ होता है। यदि लेखक इत्तफाक से अमेरिका में रह चुका है तो वह अमेरिका में रहने के कारण अमेरिकी सभ्यता के दुष्प्रभाव से उसमें आई विकृतियों की भर्त्सना उसे करनी होगी। चीनी अमेरिकियों के प्रति विशेष रूप से कटु हैं क्योंकि वे चीनी व संयुक्त राज्य अमेरिका के मध्य विद्यमान दीर्घकालीन संवेदपूर्ण धार्मिक तथा बौद्धिक संबंधों से डरते हैं। इस प्रकार इन लोगों में समाजवादी उद्देश्य की ओर व्यक्ति की प्रगति पर हर्ष व्यक्त किया जाता है तथा यह बताया जाता है कि उसने कितनी प्रसन्नता व हर्ष के साथ क्रान्तिकारी विचारों को स्वीकार किया है। प्रायः इस प्रकार के लेखों के अन्त में महान् नेता माओत्सेतुंग के प्रति अपनी स्वामिभक्ति प्रकट की जाती है।[30]

इस आत्म आलोचना की प्रक्रिया में लिप्त रहने वाले बुद्धिजीवी न केवल आत्म भर्त्सना करते हैं अपितु अपने मित्रों व सम्बन्धियों की भी आलोचना करते हैं जो साम्यवादी ढांचे से बाहर बने हुए है। हुआंग चिआ तेह जो पहले एक लोकप्रिय पत्रिका का संपादक

30. साम्यवादी अधिकृत प्रदेश में प्रोफेसरों की आत्म समालोचना नामक पुस्तक कुमिताग सुधार समिति द्वारा फार्मोसा से सम्पादित एवं प्रकाशित की गयी इस में कू ची कांग माओ येंग, ओ यू युवान हुवाई जैसे गणमान्य प्राफेसारों के लेख हैं।

रह चुका था को बाद में सार्वजनिक रूप से खेद व्यक्त करना पड़ा था कि उसने अमेरिकी निकृष्ट साहित्य का अनुवाद अपनी पत्रिका में प्रकाशित किया था।[31]

हुसू तू को अपने पिता हू शीह को एक प्रतिक्रियावादी तथा बुद्धिजीवियों में प्रथम कोटि का शत्रु करार करना पड़ा। यह सब अत्यधिक ग्लानिपूर्ण हैं क्योंकि हू शीह को आधुनिक चीन महानतम दार्शनिक माना जाता है तथा वह चीन की क्षेत्रीय भाषा का महान् समर्थक है तथा साम्यवादी स्वयं उस भाषा का समर्थन करते हैं।

परिणामतः चीन का बौद्धिक पर्यावरण अत्यधिक निष्प्राण है। जब पहले युद्धकाल में भी चीनी पत्र पत्रिकाएँ विविधता तथा हासपूर्ण होती थी। कुमितांग दल के दीर्घ शासन काल में कभी भी ऐसा नहीं हुआ कि उनके दमन की कहानी चीन से बाहर विश्व तक नहीं पहुँची हो। वर्तमान में साम्यवादी चीन में कोई शिकायत नहीं करता है। सुरक्षापूर्वक ढंग से इतना ही कहा जा सकता है कि 1949 से 1953 तक साम्यवादी चीनियों ने चीन के संपूर्ण बुद्धिजीवी वर्ग पर कुछ इस प्रकार शासन किया कि वे निष्क्रिय हो गए हैं। यद्यपि पत्र-पत्रिकाएं अभी भी प्रकाशित होती है किन्तु उनकी पूर्व विषय-वस्तु अब अनुपस्थित है।

कृषि सुधारों की क्रियान्विती: राष्ट्रवादी नियंत्रण के अन्तर्गत सर्वाधिक विवादास्पद प्रश्न भूमि सुधार का रहा था। साम्यवादियों ने इस प्रश्न को लेकर राष्ट्रवादियों को पर्याप्त बदनाम किया तथा उनके विरुद्ध प्रचार किया।

कृषक को भूमि दी जाए यह नारा मात्र साम्यवादियों का ही नहीं था। इसका प्रतिपादन सनयातसेन ने भी किया था तथा इस प्रकार यह राष्ट्रवादियों का मूल सिद्धान्त था। 1930 में ही राष्ट्रवादी सरकार ने एक विधेयक पारित कर के संपूर्ण भूमि कर में 25 प्रतिशत की कटौती कर दी। भूमि की सम्पूर्ण उपज का 3/8 अंश से अधिक भूमिकर नहीं लिया जा सकता था तथा सभी कृषकों को भूमि सम्बन्धि आश्वासन प्रदान करने की व्यवस्था थी। तथापि प्रशासनिक अयोग्यता तथा अत्यधिक कानूनी जटिलताओं के कारण राष्ट्रीय सरकार इन विधियों को कभी भी क्रियान्वित नही कर सकी। यदि ऐसा सम्भव हुआ होता तो वे आज भी चीन की मुख्यभूमि पर विद्यमान रहते।

साम्यवादियों ने चीनी सोवियत गणराज्य के दौरान ही भूमि सुधार को अत्यधिक उत्साह किन्तु निर्दयता से क्रियान्वित किया तथा जब उत्तर पश्चिमी तथा उत्तर में इसे दुबारा लागू किया गया तो यह पर्याप्त सहिष्णुता तथा कुशलता पर आधारित था।

1931 से 1934 तक नीति सम्बन्धि नारा इस प्रकार था "भूस्वामि को कोई भूमि नहीं संपन्न कृषक को निम्न भूमि दो"। जापान से युद्ध के समय साम्यवादियों ने अपनी भूमि सम्बन्धी नीति को परिवर्तित कर लिया तथा व्यवहार में उन्होंने राष्ट्रवादियों की नीति को क्रियान्वित करने से अतिरिक्त कुछ नहीं किया। उन्होंने वस्तुतः जमींदारों को और अधिक सम्पन्न बनने में भी सहायता पहुँचाई तथापि विजय के पश्चात् साम्यवादियों ने पुनः अपनी भूमि सम्बन्धी नीति शक्तिपूर्ण ढंग से छिनने व वितरित करने के साधनों से

31. हुवाग चिया तेह, में अपने पूर्णतया प्रतिक्रिया वादी विचार को मेरे द्वारा सम्पादिक वैस्ट मैगजीन की आलोचना करके पूर्णतया समाप्त करता हूं प्रकाशित द लिबरेशन डेली, हांगाई, 16 जुलाई, 1952। इसी प्रकार ह त्स द्वारा अपने पिता [illegible]

क्रियान्वित की। इस आशय का साम्यवादी आदेश 4 मई 1946 में ही प्रेषित कर दिया गया था। सितम्बर 1947 में साम्यवादियों ने स्वयं राष्ट्रीय भूमि सुधार सम्मेलन आमंत्रित किया तथा पर्याप्त विचार-विमर्श के पश्चात् भूमि सुधार की स्वयं तैयार की गई रूपरेखा प्रेषित की।[32]

1947 में भूमि सुधार की इस रूपरेखा में यह निश्चय किया गया कि सम्पन्न कृषकों की सम्पूर्ण भूमि को जब्त कर लिया जाए। अतिरिक्त भूमि की परिभाषा उस भूमि के अर्थों में की गई जिस पर कृषक व उसके परिवार के लोग खेती करने में असमर्थ हो। पारिवारिक संगठनों मन्दिरों, स्कूलों तथा सार्वजनिक संगठनों की भूमि को जब्त करने की व्यवस्था भी की गई। इस प्रकार से जब्त की गई भूमि कृषक संगठनों के माध्यम से निर्धन कृषकों में वितरित की जाती थी। ये कृषक समुदाय मध्यवर्गी कृषकों, निर्धनों कृषकों तथा खेतीहर मजदूरों से बनाये जाने वाले थे। इस प्रकार यह परिवर्तन संपन्न भूस्वामियों तथा संपन्न कृषकों के विरुद्ध किया जाना था।

इस प्रकार कृषक जनसंख्या में आर्थिक वर्गों की परिभाषा सम्पूर्ण साम्यवादी भूनीति की आलोचना का केन्द्र रही है। 1947 में साम्यवादियों ने इस कठिन विषय के लिए दो महत्त्वपूर्ण प्रलेख प्रस्तुत किये : कृषक वर्गों का निर्धारण कैसे किया जाए तथा भूमि सुधार से सम्बन्धित कुछ समस्याओं के बारे में निर्णय। इस संदर्भ में यह महत्त्वपूर्ण है कि ये प्रलेख 1933 के साम्यवादी चीनी सोवियत गणराज्य द्वारा की गई दो घोषणाओं का ही अधिक कठोर तथा सैद्धान्तिक पुर्नघोषणा थे।[33] इन प्रलेखों के द्वारा सम्पूर्ण जनसंख्या को पांच वर्गों में विभाजित किया :

(1) भूस्वामी वर्ग में वे लोग थे जिनके पास व्यापक स्तर पर भूमि थी तथा जो स्वयं कोई श्रम नहीं करते थे तथा अपने जीविकोपार्जन के लिये पूर्णतः शोषण व किराए पर निर्भर थे।

(2) सम्पन्न कृशक भी भू-स्वामियों के समान ही थे तथापि वे खेतों पर काम करते थे तथा अपनी भूमि का कुछ ही अंश वे कृषकों को किराए पर देते थे।

(3) मध्यमवर्गी किसानों की अपनी भूमि होती थी वे अपने पशु व औजार भी रखते थे तथा अन्य किसानों का शोषण नहीं करते थे।

(4) गरीब कृषकों के पास कुछ भूमि तथा खेती के औजार होते थे तथा उन्हें अपनी जमीन का कुछ अंश अन्यों को बेचता था।

(5) अन्तिम वर्ग उन कृषकों का था जो सम्पन्न कृषकों के खेत पर मजदूरी करता था।

व्यवहार में गरीब कृषक की स्थिति को मजबूत बनाना मध्यवर्गी कृषक को छोड़कर भूसामंत तथा धनी कृषक को समाप्त करना था। कुमितांग के साथ संघर्ष में साम्यवादियों ने गरीब किसानों से बड़े पैमाने पर सहायता मांगी तथा उनसे कार्यकर्त्ता तथा अनाज दोनों

32. 1947 के भूमि सुधार की रूपरेखा का प्रारूप 1947 से चीनी साम्यवादी दल के महत्वपूर्ण प्रलेखो में उपलब्ध है। हांगकाग 1949 पृष्ठ 11 से 14, अंग्रेजी अनुवाद चाइनीज प्रेस सर्वे के तृतीय खण्ड संख्या 3 में है (21 मार्च 1949)।

33. मूल प्रारूप के लिए जैंक पी ची का भूमि सुधार आन्दोलन से सम्बन्धित कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्न उन फुटनोट में पूर्वोदधृत इपोरटेंट डाक्यमैन्ट्स के पृष्ठ 32 से 55 पर देखिये।

प्राप्त किया। चीनी समाज के निर्धनतम वर्ग का समर्थन प्राप्त करने के लिये भू-स्वामियों तथा सम्पन्न किसानों से भूमि को छीनना जरुरी था।

सितम्बर 1947 से 1949 के अन्त में जब भूमि कानून प्रभावशाली हुआ तो उत्तर चीन के प्रांत में कटु संघर्ष हुआ। अनेकों लोगों का वध किया गया तथा विनाश किया गया। सामाजिक सम्बन्धों में तनाव आ गया तथा कृषि उत्पादन में कमी आ गई। सामाजिक क्रान्ति के लिये भूमि की उपज का बलिदान कर दिया गया (सामाजिक क्रान्ति में गरीब किसानों तथा किरायेदारों को अपने द्वारा की गई मजदूरी का पर्याप्त पारिश्रमिक मांगने को प्रोत्साहित किया गया) तथा सार्वजनिक आरोप आंदोलन का संचालन किया गया (साम्यवादियों ने भू-स्वामियों को सार्वजनिक घृणा का शिकार बनाया जिनके वध से सामान्य व्यक्ति की प्रतिशोध की भावना तुष्टि हुई तथा इस प्रकार चीनी समाज इस सामुहिक गतिविधि के लिये तैयार हुआ)

भूमि के सामुहिक आधिपत्य के लिये तीव्रतम चुनौती चीनी लोगों में अधिकाधिक 1955 से 1956 के मध्य उत्पन्न हुई। इस बात के संकेत थे कि चीनी साम्यवादी कुछ मामलों में अपनी प्रगति से संतुष्ट नहीं थे तथापि भूमि समाजवाद के लक्ष्य अधिकाधिक स्पष्ट होते गए। इसे क्रियान्वित करने के लिये लोगों को अपूर्व व अनैतिहासिक संकटों का सामना करना पड़ेगा तथा यदि इसे बुद्धिमत्ता ढंग से लागू नहीं किया गया तो चीन की जनवादी सरकार का सैनिक तथा राजनीतिक आधार चटख सकता है।

अन्य राजनीतिक दल: 1949 में साम्यवादियों के शासन के प्रारम्भ में बहुदलीय सरकार की स्थापना का प्रयास किया ताकि शासन का प्रजातंत्रीय स्वरूप बना रहे। चीन की जनवादी सरकार के उपाध्यक्ष गैरसाम्यवादी थे जो अपहृत, युद्ध समांत, सामाजिक क्षेत्र की स्त्रियां अधिक उदारवादी तथा अंततः वे लोग थे जो सरकार के लोकप्रिय स्वरूप के समर्थक थे।

1950 के मध्य से परिस्थितियों में परिवर्तन हो गया। ये उपाध्यक्ष या तो प्रभावहीन हो गए अथवा बाद में उन्हें एशिया के देशों में रहने वाले तटस्थ लोगों को प्रभावित करने के लिये भेजे गए। जनवादी परामर्शदाता सम्मेलन का प्रथम अधिवेशन 1949 में बुलाया गया जिसमें 18 साम्यवादियों के अलावा 142 अन्य दलों के प्रतिनिधि भेजे गए। 1956 तक अन्य दलों के प्रतिनिधियों को दिखावटी तौर पर बनाए रखा गया तथापि उनको सावधानीपूर्वक वास्तविक शक्ति से पृथक कर दिया गया। गैर साम्यवादी सदस्यों को इसी शर्त पर सहन किया गया कि वे साम्यवादियों का समर्थन करेंगे। किन्तु अब यही शर्त पर्याप्त नहीं है अब साम्यवादी उन्हें निश्चित रूप में साम्यवादी बनाना चाहते हैं।

अब अन्य दल नाममात्र को जीवित हैं।[34] साम्यवादी उन्हें प्रारंभ में सतर्कतापूर्ण

34. इन दलों एवं समूहों के बारे में 30 जून 1949 के द लिबरेशन डेली में, कुछ प्रजातंत्रीय दलों एवं समूहों के बारे में टिप्पणी देखिये, एलन बी कोल का द यूनाईटेड फ्रंट इन न्यू चाइना, तथा एच आर्थर स्टेनर द्वारा सम्पादित रिपोर्ट ऑन चाइना इन द एनाल्स में ए डो स्टेन का प्रकाशित लेख साम्यवादी चीन में राजनीतिक संगठन देखिये। पृष्ठ 45 से 51 में एच. बी. योनस की पूर्वोद्धृत रचना निष्पक्ष रूप से इन दलों का वर्णन करती है जब कि रिचार्ड वाकर की पूर्वोद्धृत रचना इनकी वास्तविक प्रभावहीनता को स्पष्ट करती है।

ढंग से देखते हैं तथा प्रवासीय लोग जो साम्यवादी दल के सदस्य नहीं हो सकते हैं उन्हें पहले साम्यवादी समर्थक दलों का सदस्य बनाकर उनकी जांच करते हैं। व्यापारी एक दल के सदस्य हो सकते हैं, पूर्व कुमितांग दूसरे दल के तथा बुद्धिजीवी किसी अन्य तीसरे दल के सदस्य हो सकते हैं। चीन में सामाजिक जाति के स्तर पर व्यवस्था का निर्धारण नवीन है तथा यह चीन में हिन्दू व्यवस्था का आभास देता है। भारत में नेहरू ने पुरानी जाति-व्यवस्था के अछूतों की असमानता को समाप्त किया है जबकि माओ नवीन अछूतों का निर्माण कर रहा है। इस प्रकार दल मात्र प्रचार का साधन नहीं है। वे पुलिस जैसी संस्थाएं हैं जो शासन के अन्तर्गत विरोधी तत्वों पर निगाह रखती हैं तथा इसके सदस्य जनता के वास्तविक प्रतिनिधि बनने का प्रयास करते हैं।

अन्य छोटे राजनीतिक दल 1949 से पहले के कार्यक्रम व नीतियों को भूलते जा रहे हैं। इस पुस्तक के लेखकों में से एक का अपने कुछ वर्षों के जनरल कैंग यू अतिमांग से सम्पर्क के आधार पर विश्वास है कि वह संयुक्त राज्य अमेरिका वापिस चीन पेकिंग में छोटे दलों के संविद सरकार बनाने के दृष्टिकोण से आ रहा था किन्तु वह रास्ते में सोवियत जहाज में मर गया (शायद वध किया गया) तथा उसकी महत्त्वाकांक्षा काल्पनिक बन कर रह गई। छोटे दलों की महत्त्वाकांक्षाएं बहुत थी किन्तु शक्ति व नेतृत्व का अभाव था साम्यवादियों के काल में वे मात्र अपनी छायाएं रह गए। विदेशी चीनियों तथा राजनीतिक संघर्ष के लिये[35] इन दलों की महत्ता है तथापि इनका और कोई मूल्य नहीं है।

कुमितांग दल की क्रान्तिकारी परिषद् उस समिति का अवशेष है जो ट्रिनिडाड के चीनी डा. यूगने चेन यी के नेतृत्व में तब बनाई गई थी जब वह वूहान सरकार में विदेशी मंत्री था तथा विश्वविख्यात व्यक्ति था (देखिये पृष्ठ 139) तथा एक दशाब्दी बाद वह हांगकांग का शरणार्थी बन गया अब इसका नेतृत्व श्रीमति सनयातसेन करती हैं जो राष्ट्रवादी नेता की छोटी विधवा हैं। डेमोक्रेटिक लीग एक जमाने में पर्याप्त महत्त्वपूर्ण समूहों का संगठन थी जिसने द्वितीय महायुद्ध के दौरान राष्ट्रवादी तथा साम्यवादी गतिरोध के दौरान शक्ति प्राप्त करने का प्रयास नहीं किया। तीसरा दल (ती-सन तांग) साम्यवादी तथा राष्ट्रवादी के मध्य समन्वय करने का सर्वोत्तम तरीका था जिसे दोनों दलों से बाहर रखा गया इसका नेता चेंग पो चुन था। ची कुंग दल विदेशी स्थित चीनियों का दल है जो अपना संबंध हुंग पेन हुई (एक मंचू विरोधी गुप्त संगठन चिंग काल में बनाया गया था) से मानता है तथा यह माओ विरोधी व चिआंग विरोधी संगठन के रूप में विद्यमान है। दि डेमोक्रेटिक रिकांस्ट्रक्शन एसोसिएशन उच्च स्तरीय सिद्धान्तों के आधार पर संगठित सुधारवादियों का एक संगठन था जो कुमितंग संगठन के अन्तर्गत वास्तविक प्रजातंत्र चाहता था जब यह साम्यवादियों द्वारा व्यापारियों के लिये उपयुक्त दल के रूप में माना जाता है। दि

35. इस संदर्भ में राजनीतिक संघर्ष का अर्थ राष्ट्रीय नीति के उन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए जिन्हें परम्परागत कूटनीति से प्राप्त नहीं किया जा सकता है व्यक्तियों तथा संगठनों का प्रयोग करता है; यह मनोवैज्ञानिक संघर्ष से भिन्न है। क्योंकि संकुचित अर्थ में मनोवैज्ञानिक संघर्ष मात्र संचार के साधनों पर निर्भर करता है जब कि राजनीतिक संघर्ष व्यक्तित्व तथा व्यक्तियों के समूहों का प्रयोग भी कर लेता है। इस क्षेत्र में पिकिंग सरकार ने पाकिस्तान भारत, हांगकांग के चीनियों तथा अन्य लक्ष्यों की प्राप्ति कर लिए पर्याप्त सीमा तक प्रयोग करने में सफलता प्राप्त की है।

पिपल्स एल्वेशन ऐगोसिएशन 1930 देशभक्त जापान विरोधी दल था जो स्वेच्छापूर्ण ढंग से हाल ही में विघटित कर दिया गया अब उसकी स्मृतिमात्र बाकी है। उसका एक सदस्य साम्यवादी सर्वोच्च न्यायालय में है।[36]

गैर चीनी राष्ट्रीयताओं के लिए स्वायत्तशासी क्षेत्र—यद्यपि कुमितांग शासन काल में एक मंगोल तथा चीनी मामलों का आयोग था तथापि आदिवासी लोगों के बारे में जो सम्पूर्ण अन्दरुनी चीन में बिखरे पड़े हैं कोई विशेष ध्यान नहीं था। केन्द्रीय तथा दक्षिणी इस प्रकार के लोगों से भरे पड़े थे।

सामान्य कार्यक्रम के अन्तर्गत चीनियों ने इस समस्या पर गंभीर रूप से सोचना शुरू किया शायद वे स्टालिन की राष्ट्रीयताओं से सम्बन्धित नीति से प्रभावित हुए थे।

1954 के संविधान के 5 अनुभाग के 4 अनुच्छेद में इन राष्ट्रीयताओं को विशिष्ट संवैधानिक स्तर प्रदान किया गया। तथा विभिन्न आकार तथा प्रकार के स्वायत्तशासी प्रदेश बनाए गए।

काफी तीव्रता से प्रगति हुई। अक्तूबर 1953 में ही काउंटी स्तर के 50 राष्ट्रीय स्वायत्तशासी क्षेत्रों का निर्माण कर दिया गया। अन्दरुनी मंगोलिया तथा तिब्बत इतने विशाल प्रदेश थे कि उनके शासन में अनेकों समस्याएं थीं इनके अतिरिक्त पश्चिमी क्वांगसी में चुआंग लोगों का स्वायत्तशासी प्रदेश संगठित किया गया। इसी प्रकार ताई लोगों के लिये यूनान में, कोरिया के लोगों के किरीन प्रांत के येनपियन क्षेत्र में प्रदेशों का गठन किया गया। इस दौरान साम्यवादियों ने राष्ट्रवादी आंदोलन को रोकने के लिये पहाड़ों से आक्रमण की नीति को अपनाया।

मंगोलिया वासियों का आक्रोश चीन में जनवादी सरकार की स्थापना के पहले ही व्यक्त हो चुका था; साम्यवादी क्षेत्र में 5 मई 1947 को अन्दरुनी मंगोलिया स्वायत्तशासी क्षेत्र का संगठन किया गया। नवंबर 1952 में इस क्षेत्र में कचार प्रांत को भी सम्मिलित कर दिया गया तथा मार्च 1954 में इसमें सुई युआन का प्रांत मिला दिया गया। यह साम्यवादियों द्वारा राष्ट्रीयताओं के समझौता करने आगे बढ़ने की उस नीति से पीछे हटना था, जिसके अनुसार सम्पूर्ण मंगोलिया प्रदेश में चीनी सरकार की इकाईयां स्थापित करने की महत्त्वाकांक्षा थी।

तिब्बत पर आधिपत्य की कहानी पूर्णतः भिन्न थी तथा इसके लिये लगभग एक दूसरे देश को जीतने की सी तैय्यारी करनी पड़ी। अपने आश्रित राज्यों में से तिब्बत पर चीन का शासन न्यूनतम रहा था तथा राष्ट्रवादी व साम्यवादी संघर्ष के दौरान तिब्बत ने दृढ़तापूर्वक अपनी पृथकता को बनाए रखने का प्रयास किया था। चीनी साम्यवादी प्रारंभ से ही तिब्बत पर अपनी संदेहास्पद सत्ता को ठोस प्रभुसत्ता में परिवर्तित करने के उत्सुक दृष्टिगोचर होते थे। जनवरी 1950 में उन्होंने घोषणा की कि तिब्बत को मुक्ति दिलाना उनका तात्कालिक उद्देश्य था। उन्होंने तिब्बत चीनियों की मिश्रित सीमा टुकड़ियों के साथ चीन की नियमित सेना को मिलाकर 1950 की अक्तूबर में तिब्बत पर आक्रमण कर दिया।

36. इच्छुक अध्ययनकर्ता इन दलों पर द चाइना ऑफ च्यांग काई शेक पूर्वोद्धृत पृष्ठ 175 से 182 में दलों पर लिनबर्गर द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट की तुलना एच. वी. थोमस के विवरण से कर सकते हैं।

तिब्बत की राजनीति जो लामा धार्मिक सम्प्रदाय के इर्द गिर्द संगठित है चीनियों के लिये पर्याप्त परिचित अड़चन भी था। उन्हें एक धार्मिक सम्प्रदाय जिसका मुखिया पंचेन लामा था का पर्याप्त सहयोग प्राप्त था तथा बाद में उसे अन्य दलाई लामा का समर्थन प्राप्त हो गया। पहले दलाई लामा भाग गया था। किन्तु बाद में विचार-विमर्श के बाद वह वापिस लौट आया।

23 मई 1951 को एक समझौते के द्वारा इस प्रदेश में शांति स्थापना कर दी गई तथा इसके द्वारा तिब्बत को जनवादी चीन का मूल अंग बना दिया गया। इस समय भारत ने तिब्बत की स्वायत्तता जिसे भारत के पराधीनता काल में ब्रिटिश लोग बनाये रखने में सफल हुए थे को प्राप्त करने के पर्याप्त कूट नीतिक प्रयास किये। यह भार के सीमांतक प्रदेश की सुरक्षा के लिए मनोवैज्ञानिक मांग थी किन्तु विश्वसनीय नहीं थी।

इस समझौते में यह कहा गया कि तिब्बतवासियों को अपनी मातृभूमि की ओर लौट आना चाहिये। इसका शीर्षक 'दि एग्रीमेंट ऑन पेपर्स फार दि पीसफुल लिबरेशन ऑफ तिब्बत' था इसके 17 अनुच्छेद थे। इसके द्वारा तिब्बत को चीन की जनवादी सरकार के नेतृत्व में राष्ट्रीय स्तर पर स्वायत्तशासी स्तर प्रदान कर दिया गया। तिब्बत निवासी अपने प्रदेश से साम्राज्यवादी प्रसारवादियों को हटाने के लिए सहमत हो गए। इसके बदले में चीन ने यह आश्वासन दिया कि वह तिब्बत की राजनीतिक व्यवस्था को अथवा दलाई लामा तथा पांचेन लामा की स्थिति कार्य तथा शक्तियों को बदलने का कोई प्रयास नहीं करेगा विभिन्न धार्मिक स्तर के मुखिया तथा तिब्बत के कार्यालय अपने पूर्व स्तर को बनाये रखने वाले थे। पेकिंग सरकार ने प्रारम्भ में अपने भूमि सुधार कार्यक्रम को शक्तिपूर्ण ढंग से लागू करने का भी प्रयास नहीं किया तथा इसे ल्हासा सरकार पर छोड़ दिया किन्तु तिब्बत के विदेशी मामलों पर पूर्णतः जनवादी चीनी सरकार का नियन्त्रण हो गया। तिब्बत की सेना को चीनी सेना में मिला लिया गया तथा भारत, नेपाल भूटान व सिक्किम की सीमा पर चीन के सैनिक तैनात कर दिये गए। उस समय के अनुकूल एक सर्वोच्च सैनिक तथा प्रशासनिक समिति की स्थापना तिब्बत में सर्वोच्च राष्ट्रीय सरकार के प्रतिनिधि के रूप में की गई।

प्रस्तावित सैनिक तथा प्रशासनिक समिति की स्थापना मई। 1952 में की गई। इसके पश्चात् तिब्बत में जनवादी मुक्ति सेना के भाग की स्थापना 10 फरवरी 1953 में की गई। 1956 के बसंत में तिब्बत को स्वायत्तशासी प्रदेश का दर्जा देने के लिये एक समिति का निर्माण किया गया किन्तु यह दर्जा एकदम प्रदान नहीं किया गया।

चीन की इस नीति को रूस की अपनी राष्ट्रीयताओं के गणराज्य बनाने वाली नीति से नहीं मिलना चाहिये। रूस तथा उससे सम्बन्धित सोवियत देश संघात्मक व्यवस्था के अन्तर्गत कार्य कर रहे हैं जबकि चीन की शासन व्यवस्था एकात्मक है। इनकी तुलना रूस के संघात्मक समाजवादी गणराज्य के अन्तर्गत स्थित स्वायत्तशासी प्रदेशों से की जा सकती है। चीन को तिब्बत के समानांतर रूस में यूक्रेन अथवा अन्दरूनी मंगोलिया अथवा बाइलोरशिया हैं। वस्तुतः दोनों मंगोलिया साम्यवादी देशों की सीमाओं में दो पूर्णतः विरोधी प्रकार के नमूनों को प्रस्तुत करते हैं। मूल मंगोलिया रूस से उसी प्रकार स्वतन्त्र है जैसे क्यूबा संयुक्त राज्य अमेरिका से स्वतंत्र है। जबकि आंतरिक मंगोलिया पूर्णतः जनवादी चीन के द्वारा बनाया गया है इसकी कोई अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति, पृथक मुद्रा अथवा संप्रभुता के कोई अन्य विशेषता विद्यमान नहीं है।

इस प्रकार की समस्या सीकियांग अथवा चीनी तुर्किस्तान की है। पहले साम्यवादियों ने पर्याप्त सावधानी बरती तथा साम्यवादी तथा भूतपूर्व कुमितांग सैनिक तथा स्थानीय पूर्वी तुर्किस्तानी नेता सभी शासन में सम्मिलिए हुए। शासन में प्रमुख रूप से वांग वेन उभरा जो जनवादी मुक्ति सेना के सिकियांग सैनिक जिले का अधिकारी था तथा साथ ही वह सिकिआंग में साम्यवादी दल के मुख्य कार्यालय का अध्यक्ष भी था।

सम्पूर्ण स्वायत्तता की कोई योजना नहीं बनाई गई। 1950 के पश्चात् इस क्षेत्र में रूस व चीन के सहयोगी प्रतिष्ठानों ने यहां की स्थिति को और भी जटिल बना दिया।

1953 में कुछ स्थानों जहां अल्पसंख्यक सुदृढ़ स्थिति में वे कुछ सीमा तक प्रादेशिक स्वायत्तता प्रदान कर दी गई थी। 1954 में संविधान को अंगीकार करने के समय पांच स्वायत्तशासी क्षेत्र अस्तित्व में आ चुके थे। अक्टूबर 1955 में सिकियांग उगर के स्वायत्तशासी प्रदेश की घोषणा कर दी गई। सिकियांग पेकिंग की जनवादी सरकार के प्रत्यक्ष नियन्त्रण के अन्तर्गत है।

चीन के दक्षिण पश्चिम में साम्यवादी यहां के आदिवासी पिछड़े जन-जातियों को प्रभावित करने में सफल हुए प्रतीत होते हैं। तानाशाही शासक प्रायः अपने अधिक पिछड़े लोगों पर शासन करने में अधिक दिलचस्पी लेते हैं क्योंकि वे प्रगतिशील जनता के समान उनके तरीकों का विरोध नहीं करते है। पेकिंग के शासक इसके अपवाद नहीं लगते हैं। लोलो जन-जातियों को विशेष सम्मान प्रदान किया गया है (जो संयोगवश ईसाई धर्म प्रचारकों द्वारा उन्हें दे दिया गया था, तथा अन्य आदिम जन जातियों को अन्तर्राष्ट्रीय लोककला, नृत्य तथा संगीत के उत्सवों पर पेकिंग लाया जाता है। एक जनजाति का व्यक्ति जब पेकिंग में माओत्सेतुंग की बगल में पूर्व जर्मनी के लियनिग से आए जर्मन को खड़ा देखता है तो वह चीनी साम्यवाद को विशाल चीनी साम्राज्य की प्रेरणादायक शक्ति मान बैठता है। वह यह भूल सकता है कि यदि युद्ध पूर्व शंघाई की नानकिंग सड़के पर इससे भी भिन्न संस्कृति व सभ्यता के दर्शन तब और अब भी कर सकता है।

राष्ट्रीयताओं के सन्दर्भ में चीनी साम्यवादियों की नीति में उनके सोचने व उदाहरण देने के तरीका उन पर पश्चिमी प्रभाव को प्रमाणित करता है।

न्याय का शासन : चीनी जनवादी सरकार में अन्य छोटे राजनीतिक दलों की उपस्थिति से बाह्य प्रेक्षक इस भ्रम में पड़ सकता है कि यह चीनी सोवियत गणराज्य से महत्त्वपूर्ण भिन्नता रखता है तथापि चीन की साम्यवादी न्यायव्यवस्था तथा साम्यवादी विधि व्यवस्था की जांच इस भ्रम को शीघ्र ही समाप्त कर देगी कि चीन में पश्चिमी प्रकार का प्रजातन्त्र विद्यमान है। तथा यह सिद्ध कर देगा कि चीन में कठोरपूर्वक ढंग से साम्यवादी अनुशासन व्याप्त है जो विधि व न्याय की व्यवस्था का समाधान परम्परागत मार्क्सवादी तरीके से करता है।

सामान्य कार्यक्रम के अनुच्छेद 17 में कहा गया था—'प्रतिक्रिया वादी कुमितांग सरकार द्वारा जनता के दमन के लिये बनाये गए सभी कानून आदेश तथा न्यायिक व्यवस्था समाप्त कर दी जाएगी तथा जनता की सुरक्षा के लिए आदेश व कानून दिए जाऐंगे तथा न्याय की जनवादी व्यवस्था की स्थापना की जाएगी।' इस प्रकार राष्ट्रवादी काल की विधि संहिता को जमींदारों तथा प्रशासकों द्वारा जनसामान्य का दमन करने वाली तथा प्रतिक्रियावादी शक्तियों के स्वार्थों की रक्षा करने वाली माना गया। परिणामतः चीन की

विधि व्यवस्था में अराजकता सी उत्पन्न हो गई क्योंकि साम्यवादियों ने राष्ट्रवादी विधि को समाप्त कर दिया तथा स्वयं अपनी विधि व्यवस्था का प्रतिपादन नहीं किया। चीन के नए कानून चेन शाओ यु के नेतृत्व में स्थापित विधि आयोग के द्वारा बनाए गए।

नए कानून बनने तक की अन्तरिम स्थिति में न्यायाधिश ने मामलों का निबटारा साम्यवाद के मूलभूत सिद्धान्तों पर आधारित अपनी न्याय की भावना के आधार पर किया, चीनी साम्यवादियों को रूसी साम्यवादियों की तुलना में विधि व्यवस्था के बारे ये विशेष कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ा। चीन में कोई ए. वाई विशंस्की मौजूद नहीं था। पूर्व साम्यवादी गुरिल्ला क्षेत्रों में जो सर्वप्रथम मुक्त क्षेत्र घोषित किए गए में चीनी साम्यवादियों ने जनवादी न्यायालयों को प्रभावशाली अस्त्र के रूप में प्रयुक्त किया। इन जनवादी न्यायालयों में साम्यवादियों द्वारा एकत्र की गई उग्र भीड़ होती थी। ये भीड़ ही प्रतिवादी, वकील, न्यायाधीश तथा सजा देने वाली होती थी। कभी-कभी अपराधियों को मारा नहीं जाता था उन्हें अपमानित किया जाता था अथवा अपनी संपत्ति सौंपने के कागज पर उन्हें हस्ताक्षर करने होते थे। किन्तु नगरों में यह संभव नहीं था।

जब चीनियों ने विशाल नगरों पर आधिपत्य किया तो उन्होंने सैनिक संरक्षण में साम्यवादी न्यायालयों की स्थापना की। इन न्यायालयों में नियुक्ति सेना के माध्यम से होती थी। कोई विधि संहिता नहीं थी। शंघाई जनवादी न्यायालय की स्थापना अगस्त 11, 1949 में नगर पर कब्जा करने के तीन माह पश्चात् की गई। स्वाभाविकता इस दौरान अनेकों फौजदारी तथा दीवानी मामले इकट्ठे हो गए। तथापि अन्य शहरों में भी इसी प्रक्रिया को दोहराया गया।

शंघाई जनवादी न्यायालय की स्थापना 6 भागों में की गई। मध्यस्थता आयोग, न्यायिक आयोग, जेल आयोग, न्यायिक शोध कार्यालय, औषधि शोध आयोग तथा सचिवालय की स्थापना की गई। विधि के अभाव में शंघाई के सैनिक नियन्त्रण आयोग ने दीवानी तथा फौजदारी मामलों को निबटाने के लिए अस्थाई आदेश प्रेषित किये जिसके दूसरे अनुच्छेद के अनुसार 'मामलों का निबटारा तथ्यों व परिस्थितियों के अनुसार किया जाएगा जो जनवादी सरकार, जनवादी मुक्ति सेना तथा नवीन प्रजातन्त्र द्वारा प्रेषित रूपरेखा विधि, आदेशों नियमों तथा निर्णयों के अनुसार होगा।"[37]

जनवादी विधि संहिता तथा उसके क्रियान्वित होने तक न्यायाधीशों को मामलों का निबटारा साम्यवादी सरकार तथा सेना द्वारा समय-समय पर दिये गये आदेशों माओ अथवा लिऊ के मामलों तथा साम्यवादी दल के प्रेलेखों, उसके विश्वास तथा नवीन प्रजातन्त्र के बारे में दिये गये उनके स्पष्टीकरण के आधार पर करना था। केन्द्रीय जनवादी सरकार द्वारा आवयविक विधि के प्रारम्भ करने के बाद एक जनवादी सर्वोच्च न्यायालय, जनवादी प्रोसीक्यूटर कार्यालय एक संहिताकरण आयोग तथा एक न्यायविभाग की स्थापना की गई, किन्तु इन संस्थाओं के अलावा आवयविक विधि चीन की न्यायिक व्यवस्था के सगठन के बारे में मौन था।

प्रकटतः विधि सहिता आयोग की स्थापना साम्यवादी विधि संहिता के निर्माण के लिये तथा न्याय मंत्रालय की स्थापना चीन की भविष्य की न्याय व्यवस्था का निर्माण

37. ता कुंग पाओ शंघाई, 12 अगस्त 1949।

करने के लिये किया गया था। सर्वप्रथम 30 अप्रेल 1950 को विवाह सम्बन्धी कानून प्रेषित किया गया।[38] जो केन्द्रीय जनवादी सरकार द्वारा बनाया गया था। इस कानून की तात्कालिक आवश्यकता इस दृष्टिकोण से थी कि चीनी साम्यवादी चीन की पारिवारिक व्यवस्था में जिसे वे परम्परागत तथा सामंतवादी मानते थे मूलभूत परिवर्तन करना चाहते थे। इसके तुरन्त बाद 23 जुलाई 1950 को एक सुरक्षा सम्बन्धी कानून बनाया गया जो प्रतिक्रान्तिकारी प्रवृत्तियों का दमन करने का निर्देश देने वाला कानून कहलाया। इसके द्वारा जनवादी न्यायालयों तथा स्थानीय जनता के न्यायालयों को प्रतिक्रियावादी अपराधियों, प्रति क्रान्तिकारियों, आंतकवादियों तथा कुमितांग के जासूसों को मृत्यु दण्ड देने का अधिकार प्रदान कर दिया गया। इसके पश्चात् जनवादी न्यायालय पर्याप्त सीमा तक सैनिक न्यायालयों द्वारा किया जाने वाला कार्य करने लगे।[39]

भूमि सुधार के लिए एक विशिष्ट न्यायालय की स्थापना की गई। केन्द्रीय जनवादी सरकार ने एक विशिष्ट जनवादी न्यायालय की स्थापना भूमि सुधार के लिये जनवादी न्यायालयों की सहायता के दृष्टिकोण से की। इसके आदेश 20 जुलाई 1950 को[40] प्रेषित किये गए जिसके अन्तर्गत एक मुख्य न्यायधीश एक उपन्यायाधीश तथा अनेकों अन्य न्यायाधीश होते थे। मुख्य न्यायाधीश तथा अन्य आधे न्यायाधीशों की नियुक्ति जनता के प्रतिनिधि सम्मेलनों में से चुने जाते थे। इन न्यायालयों को वर्ग स्तर का निर्धारण करने का अधिकार दिया गया था तथा उन्हें उन अपराधियों को जिन्होंने भूमि सुधार का विरोध किया था अथवा भूमि सुधार का विरोध किया था अथवा क्रान्ति का विरोध किया था को मृत्यु दण्ड तक देने का अधिकार दिया गया। इन्हें बंदी बनाने मुकदमा चलाने तथा दण्ड देने का अधिकार दिया गया था तथा ये न्यायालय कानूनी रूप में अपराधियों को मृत्यु दण्ड दे सकते थे बंदी बना सकते थे उनकी सम्पत्ति छीन सकते थे उन्हें सार्वजनिक रूप से क्षमा मांगने के लिये बाध्य कर सकते थे अथवा छोड सकते थे। सैद्धान्तिक रूप से सभी निर्णयों को प्रांतीय जनवादी सरकार के द्वारा दोहराया जा सकता था। मृत्यु दण्ड की स्वीकृति प्रांतीय सरकार के सभापति से लेनी होती थी। किन्तु लुटेरों, जासूसों तथा प्रतिक्रान्तिकारियों को अपील करने का अधिकार नहीं दिया गया था। जनता के संगठनों तथा समूहों में से जजों की नियुक्ति प्रारम्भ में साम्यवादियों द्वारा 'आम अभियोग' प्रणाली का अवशेष थी तथापि भूमि सम्बन्धी झगड़ों के समाधान के लिये न्यायालय की स्थापना करना तथा एक प्रणाली को स्वीकारने की कोशिश करना इस बात का साक्षी था कि साम्यवादी अपने ग्रामीण क्रान्ति की रफ्तार को धीमा करना चाहते थे तथा वे ग्रामीण क्षेत्रों के उत्पादन को बनाये रखना चाहते थे।

नवीन संविधान जनवादी न्यायालयों के पद सोपान क्रम की रचना करता है जो प्रादेशिक प्रशासनिक ढांचे के समानांतर है। इनमें सर्वोच्च, सर्वोच्च जनवादी न्यायालय है जो अखिल चीनी जनवादी कांग्रेस की स्थाई समिति के प्रति उत्तरदायी है। जनवादी न्यायालयों के जजों का निर्वाचन उसके समानांतर जनवादी कांग्रेसों के द्वारा चार वर्ष के लिये किया जाता है। न्यायिक व्यवस्था में जनवादी सहायक न्यायाधीश भी सहायता करते

38. ता कुंग पाओ, शंघाई 1 मई 1950
39. ता कुंग पाओ, शंघाई, 25 जुलाई 1950
40. ता कुंग पाओ शंघाई, 21 जुलाई 1950

हैं। संविधान सरकार के विभिन्न स्तरों पर अधिकारियों पर 'नियन्त्रण करने के लिये प्रोक्यूरेटेर की व्यवस्था भी करता है (जो रूस के अांग व्यूरो तथा राष्ट्रवादी नियन्त्रक मुआन के समान है) यद्यपि चीन का सर्वोच्च प्रोक्यूरटेर जनरल अखिल चीनी जनवादी कांग्रेस के प्रति उत्तरदायी होता है किन्तु इसके अतिरिक्त नवीन संविधान अन्य स्तरों पर स्थानीय प्रोक्यूरेटेर को स्थानीय कांग्रेस से स्वतन्त्र घोषित करता है। इस प्रकार शक्ति के केन्द्रीयकरण से वचा गया। यह परम्परागत चीन में सेन्सर विभाग की स्वतन्त्रता की अवशिष्ट स्मृति है। (पृ 52, 57) तथा आधुनिक पुलिस राज्य की आवश्यकताओं के पर्याप्त अनुकूल है।

इसी दौरान प्रकटतः संहिताकरण का कार्य पेकिंग में आयोग के द्वारा किया जा रहा था। साम्यवादी प्रेस के अनुसार नवीन विधि व्यवस्था दीवानी मामलों के लिये मध्यस्थता तथा शिक्षा का प्रतिपादन करने वाली थी जबकि फौजदारी मामलों में दण्ड की व्यवस्था की जानी थी। यह स्पष्ट है कि चीन की भविष्य की विधि संहिता सोवियत ढांचे पर गठित की जाएगी। तथा शासन के विरोधियों को कठोरतम दण्ड दिया जाएगा। सैद्धांतिक रूप से नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा के लिये बड़े उदार कानून बनाए जाएगें इन अधिकारों में काम करने का अधिकार, स्वतन्त्र विचार, तथा संगठन का अधिकार आदि दिए जाएँगे तथापि चीन रूस दोनों व्यवस्थाओं में सुरक्षा सम्बन्धी मामले अर्थात् वे मामले जिनमें सरकार का विरोध करने की संभावना विद्यमान हो—सर्वदा विशिष्ट पुलिस अथवा सेना द्वारा निबटाये जाते हैं जिनकी न तो कोई सूचना होती है और न जिनका रिकार्ड रखा जाता है। चूँकि साम्यवादियों को बड़े पैमाने पर सामाजिक परिवर्तन लाना है तथा चीनी जनता ने इससे पूर्व की सरकारों का इस सन्दर्भ में पर्याप्त विरोध किया है अतः इस सन्दर्भ में साम्यवादी दमन के तरीकों का उदारता से प्रयोग करें इसकी संभावना बहुत कम है। इस प्रकार कानून मूल उद्देश्य नहीं बन सकेगा तथापि सहायक के रूप में यह उपयोगी सिद्ध होगा।

साम्यवादी विदेश नीति : चीनी साम्यवादियों ने मेनान के दिनों में विदेशी प्रेक्षकों को आश्वस्त कर दिया था कि वे साम्यवादी न हो कर भूमि सुधारक मात्र थे। अतः पश्चिम में कुछ समय के भूमि सुधार आंदोलन तब तक बड़ा लोकप्रिय हुआ जब तक स्वयं चीन में 1949 में साम्यवादी सफल नहीं हुए। तत्पश्चात् भूमि सुधार सिद्धान्त का ध्यान अन्य सिद्धान्त ने ले लिया। जिसके अनुसार कुछ समय पश्चात् चीनी साम्यवादी कुछ समय बाद सुदूरपूर्वी टीटोवादी बन जाने वाले थे तथापि पश्चिमी प्रेक्षकों की यह सद्भावना तब समाप्त हो गई जब चीन में 1950 में कोरिया युद्ध मे प्रत्यक्षतः हस्तक्षेप किया।

चीनी साम्यवादियों भूमि सुधार आंदोलन को तो प्रोत्साहित किया किन्तु टीटोवादी विचारधारा का खुले आम खंडन किया। प्रथम विचार को प्रोत्साहित करने का मूल कारण वह सहानुभूति प्राप्त करना था जो उस समय साम्यवादियों के लिए पर्याप्त जरूरी थी जबकि दूसरे विचार का खंडन इसलिये किया गया कि वह साम्यवादियों के विचारों में कभी भी विद्यमान नही रहा था। दोनों ही मामलों में चीनी पर्याप्त वफादार साम्यवादी रहे हैं।

चीनी साम्यवादियों द्वारा की गई घोषणाओं से स्पष्ट लगता है कि भूमि सुधार सिद्धान्त एक अंधविश्वास मात्र था। वांग चिंग्रा हिसांग जो मास्को में चीनी साम्यवादी

दूत था ने यूनान में स्पष्ट संकेत दिया था कि चीनी साम्यवादी भी कभी मार्क्सवादी लेनिनवादी आदर्शों से नहीं हटेंगे—ये आदर्श हैं—राष्ट्रीय प्रजातन्त्रीय क्रान्ति का न्यूनतम कार्यक्रम तथा सामाजिक क्रान्ति का अधिकतम कार्यक्रम क्रियान्वित करना। चीनी साम्यवाद पर स्वयं माओत्सेतुंग की रचनाएँ ब्रह्मवाक्य हैं। उन्होंने अपने लेख 'ऑन न्यू डेमोक्रेसी' में 1941 में लिखा था—

चीन की क्रान्ति सम्पूर्ण विश्व की क्रान्ति का भाग है। चीनी क्रान्ति दो चरणों से निकलेगी। प्रथम अपने औपनिवेशिक अर्द्ध औपनिवेशिक तथा अर्द्ध साममंतवादी व्यवस्था को पूर्ण प्रजातंत्रीय व्यवस्था में रूपांतरित करना है, द्वितीयतः समाजवादी समाज की स्थापना का कार्य है। प्रथम हमारा उद्देश्य है एक नवीन बुर्जुआ प्रजातन्त्रीय क्रान्ति है। किन्तु उसे पूँजीवादी देशों में होने वाली बुर्जुआ प्रजातन्त्रीय क्रान्ति से नहीं उलझाना चाहिये। यद्यपि प्रथम चरण में हमारा उद्देश्य अनेकों क्रान्तिकारी वर्गों का गठबन्धन कर एक नवीन प्रजातन्त्र की स्थापना करना है जिसका नेतृत्व सर्वहारा वर्ग करेगा। प्रथम चरण की समाप्ति के बाद क्रान्ति दूसरे चरण में प्रवेश करेगी जो समाजवादी समाज की स्थापना करना होगा।

इस प्रकार प्रारम्भ में चीन के साम्यवादी नेताओं ने जिस मूल नीति का प्रतिपादन किया था तथा जिसके बाद भूमि सुधार की नीति प्रचलित हुई वह थी (1) सोवियत रूस से गठबन्धन स्थापित करना (2) सभी साधनों से साम्यवाद की स्थापना करना। समयानुसार यद्यपि इस नीति में संशोधन किये गए तथापि चीनी साम्यवादी दल के मूल उद्देश्य निरन्तर स्थाई बने रहे हैं।

इसी पृष्ठभूमि में चीन की विदेशनीति का निर्माण हुआ। वस्तुतः इस बात की रत्ती भर संभावना भी नहीं है कि चीनी साम्यवादी टीटोवादी बन जाएँगे। साम्यवादी चीन की विदेशदीति को माओ के प्रस्तुत वाक्य से समझा जा सकता है कि 'एक ओर झुकाव रखो'। जुलाई 1949 को अपने भाषण में माओत्सेतुंग ने विश्व के सम्मुख चीनी साम्वादी दल के उद्देश्य को इस प्रकार रखा था -

यह सोवियत रूस से गठबंधन करना है तथा नवीन प्रजातन्त्रीय देशों से तथा अन्य देशों के सर्वहारा व जनसामान्य से गठबन्धन स्थापित कर एक अन्तर्राष्ट्रीय मोर्चे की स्थापना करना है। 'एक ओर झुको' संक्षेप में यह नीति है सनयातसेन के 40 वर्षों के तथा साम्यवादी दल के 28 वर्षों के अनुभव ने यह विश्वास दिला दिया है कि विजय प्राप्त करने के लिये तथा अपनी स्थिति को मजबूत बनाने के लिये हमें एक ओर झुकने की नीति अपनानी पड़ेगी। 40 तथा 28 वर्षों में बिना अपवाद सिद्ध कर दिया है कि हमें एक ओर गठबंधन करना होगा वह चाहे समाजवाद के साथ हो या साम्राज्यवाद के साथ। किनारे पर बैठना संभव नहीं है। कोई मध्य वर्ग उपलब्ध नहीं है……न केवल चीन ही अपितु सम्पूर्ण विश्व साम्राज्यवाद अथवा समाजवाद की ओर झुका हुआ है। तटस्थता अस्पष्ट है तथा तीसरा मार्ग विद्यमान नहीं है।

कुछ समय के लिये चीन की इस नीति के कुछ लाभ हुए। 4 फरवरी 1950 को चीन ने रूस के साथ मैत्री तथा परस्पर सहायता की संधि की। जिसने दोनों साम्यवादी देशों में सैनिक तथा आर्थिक दृष्टि से निकट संबंध स्थापित किये। 14 फरवरी 1950 को चीन के साथ सोवियत रूस ने दीर्घावधि ऋण की संधि पर हस्ताक्षर किये जिसमें सोवियत रूस चीन सरकार को 30 करोड़ डॉलर का ऋण देने वाली थी। शायद ही कोई संधि

व्यावहारिक दृष्टि से इतनी सफल हुई हो। चीन कभी भी कोरिया युद्ध में भाग नहीं ले पाता यदि रूस ने उसे सैनिक शस्त्रों तथा नैतिक समर्थन नहीं दिया होता।

साम्यवादी चीन को भविष्य के प्रति दृष्टिकोण : युद्ध विराम के पश्चात् चीन की साम्यवादी सरकार ने अपना संपूर्ण ध्यान देश के आर्थिक विकास पर केन्द्रित किया। चीन साम्यवादियों ने आर्थिक पुनर्निर्माण के क्षेत्र में तात्कालिक उद्देश्यों का निर्धारण किया जिनको पूरा करना रूसी सहायता के कारण संभव हुआ। ये चार उद्देश्य निम्न हैं : (1) नवीन अथवा नवीनीकृत उद्योगों का उपभोग कर चीन की आर्थिक व्यवस्था का व्यवस्थित विकास करना जिसका केन्द्र विन्दु रूस से प्राप्त होने वाली आर्थिक सहायता होने वाली थी तथा जिससे राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का आनुपातिक विकास करना था (2) पूंजी के पुनर्निर्माण दृढ़ करना, विशेषतया भूगर्भ सर्वेक्षण तथा संभावनाओं का पता लगाना (3) सोवियत सहायता से पूरे होने वाले उद्योगों की तैय्यारी करना (4) सोवियत अनुभव से अधिकाधिक लाभ उठाना तथा कार्यकर्त्ताओं को प्रशिक्षित करना तथा इस पुस्तक को लिखते समय की परिस्थितियों के आधार पर चीन व रूस में अधिकाधिक आर्थिक सहयोग की संभावना सुरक्षित रूप व्यक्त की जा सकती थी।

चीन के संदर्भ में एक वात जो अक्सर पश्चिमी प्रेक्षकों के द्वारा गलत समझी जाती है वह चीनी साम्यवादियों द्वारा भविष्य की रूप रेखा है।[41] इसमें जनवादी प्रजातन्त्र के लिये निम्नतम कार्यक्रम तथा समाजवाद के लिये अधिकतम उद्देश्य थे। चाउ एन लाई ने निजी आर्थिक गतिविधि पर सर्तकता पूर्वक ध्यान देने की आवश्यकता को स्पष्टतया स्वीकारते हुए कहा—

मात्र इसी प्रक्रिया से चीनी अर्थव्यवस्था नवीन प्रजातन्त्र से समाजवाद में रूपातंरित हो सकती है अन्यथा यदि निजी आर्थिक मामलों को विना किसी निर्देश व नियंत्रण के बढ़ने दिया तो चीनी अर्थव्यवस्था में परिवर्तन नवीन प्रजातन्त्र की दिशा में न होकर पूंजीवाद की दिशा में होगा। वह समाजवाद की ओर न होकर पराश्रित तथा साम्राज्यवादी उपनिवेशी दिशा में होगा। अर्थव्यवस्था की एक स्पष्ट दिशा ग्रहण करनी होगी। कोई मध्यम मार्ग उपलब्ध नहीं है।[42]

आधुनिक चीन में विचारधाराओं का संघर्ष : एक अर्थ में चीन की सरकारों का जो सर्वेक्षण इस पुस्तक में प्रस्तुत किया गया है वह इस मूल कल्पना का दिग्दर्शन है कि चीनी राजनीति प्राथमिक रूप में सैद्धान्तिक गत्यात्मकता को परिवर्तन है जिसमें सेनाएँ अर्थव्यवस्था तथा सरकारें गौण द्वितीय तथा तृतीय श्रेणी की भूमिका निभा रहे हैं। चीन में राजनीति संघर्ष मात्र इस तथ्य पर निर्भर नहीं करता है कि वहाँ लोग किसमें विश्वास करते हैं तथा किस प्रकार अपनी सत्ता का औचित्य स्थापित करते हैं अपितु इसके साथ यह अधिक महत्त्वपूर्ण है कि सामान्य विश्वासों की खोज करते है या नहीं। चीन में राजनीतिक संघर्ष मात्र प्रस्तुत समाज में प्रभावशाली स्थिति प्राप्त करने के लिये नहीं है अपितु यह नवीन

41. राष्ट्रवादी दृष्टिकोण की तुलना के लिए देखिये पृष्ट 204–5।

42. चाउ एन लॉई चीनी अर्थव्यवस्था की प्रगति 'चौंतीसवी' सत्रीय समिति को प्रस्तुत रिपोर्ट 5 जनवरी 1952 (न्यू चाइना न्यूज एजेंसी 7 जनवरी, 1952।

समाजों का निर्माण में भी हैं। इस संघर्ष में दोहरी प्रक्रिया विद्यमान हैं जो सर्वप्रथम सैद्धान्तिक तथा द्वितीयतः व्यवहारिक है।

सैद्धान्तिक संघर्ष में विश्वासों का सुव्यवस्थित प्रस्तुतीकरण तथा चीनी सांस्कृतिक अनुभव के प्राचीन विश्व का तादात्म्य राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय शक्ति राजनीति के आधुनिक विश्व में बैठाना है। दो मूल विश्वास जो आधुनिक चीन में लोकप्रिय हुए हैं वे हैं सनयातसेन का राष्ट्रवाद तथा मार्क्सवाद जिसे माओत्सेतुंग ने 'जनवादी प्रजातन्त्र' के शीर्षक से प्रस्तुत किया है।

स्वाभाविकतया कोई भी विचारधारा तब तक आगे नहीं बढ़ेगी जब तक उसको संगठनात्मक रूप से क्रियान्वित नहीं किया जाए। इस प्रकार आधुनिक चीन में सरकार के लिये भी संघर्ष है। दूसरे शब्दों में विश्वासों को प्रभावपूर्ण बनाने के लिये उनमें मात्र विश्वास करना ही पर्याप्त नहीं है किन्तु उनके लिये लोगों को संगठित होकर अन्यों को उन विश्वासों में प्रशिक्षित करना होता है ताकि वे लोग युद्ध अथवा क्रान्ति के द्वारा उन विश्वासों का प्रसार करें तथा उसके विरोधी विश्वासों का दमन आग्रह, कानूनी व्यवस्था अथवा सैनिक शक्ति की सहायता से करें।

यह सैद्धान्तिक संगठनात्मक दृष्टिकोण तब समझना कठिन हो जाता है जब इसे संयुक्त राज्य अमेरिका के सुरक्षित तथा स्थाई राजनीतिक समाज की दृष्टि से देखा जाता है। अमेरिका से चीन की राजनीति विस्फोटक स्थिति में प्रतीत होती है। चीनी आसानी से सरकार के एक रूप के प्रति सहमत नहीं हुए हैं तथा वे इसी पृष्ठभूमि में सरकार से सम्बन्धित समस्या पर विचार करते हैं। ये एक समाज के एक स्वरूप पर भी सहमत नहीं है तथा इसी को पृष्ठभूमि में वे संपूर्ण विश्व के बारे में चर्चा करते हैं। चीन की प्रत्येक राजनीतिक तथा प्रशासनिक प्रश्न के आगे सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि 'हम चीनी कौन हैं तथा क्या करना चाहते हैं।'

सातवें अध्याय में चीन में पश्चिमी प्रभाव की चर्चा राष्ट्रवादी चीनी सरकार की ओर अमेरिकी नीति के रूप में की गई थी जिसे एक दीर्घ ऐतिहासिक अनुसंधान का विषय मान गया था। चूंकि अब हम चीनी साम्यवादियों के बारे में कुछ ज्यादा मानते हैं खास तौर पर 1947 व 48 के दौरान अमेरिका ने चीन के राष्ट्रवादी तथा साम्यवादियों के मध्य जो समझौता कराने का प्रयास किया था वह सर्वाधिक साहसिक राजनीतिक प्रयोग था। इस तथ्य के बावजूद कि राष्ट्रवादी तथा साम्यवादी दोनों ने इस सामंजस्य को ऊपरी समर्थन प्रदान किया था तथा कोई भी पक्ष इस समझौते को सुविधाजनक नहीं समझता था यह प्रयोग काफी साहसिक था। चीनियों से करारोपण, स्थानीय पुलिस शक्ति प्रजातन्त्रीय प्रतिनिधित्व आदि विषयों पर संगठित होने को कहा गया था जबकि वे इन महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर सहमत नहीं हो सके थे कि वे कौन थे, विश्व किस ओर जा रहा था तथा मानव जीवन का क्या अर्थ था। यूरोप में धर्म युद्धों के समय मध्ययुगीन पोप व्यवस्था तथा खलीफा संस्था के सम्मिश्रण से बने संगठन जितने संकटपूर्ण साबित हुए होते उससे भी अधिक संकटपूर्ण चीन में राष्ट्रवादियों तथा साम्यवादियों तथा साम्यवादियों के मध्य समझौता कराने के प्रयास थे

फिर भी अमेरिकियों ने यह प्रयास किया। कम से कम मध्ययुगीन इसाईयों तथा मुसलमानों में एक समानता तो थी कि वे एक सर्वोच्च ईश्वर में विश्वास करते थे किन्तु कुमितांग तथा चीनी साम्यवादी दल में इतनी भी समानता नहीं है क्योंकि वे समान रूप से एक ईश्वर में भी विश्वास नहीं करते हैं।[43] □□□

43. साम्यवादी कभी-कभी प्रजातन्त्र प्रदान करने की बात करते है जबकि राष्ट्रवादी प्राय: उससे विचलित होते है। साम्यवादियों द्वारा दिसम्बर 1951 में महान शुद्धीकरण के प्रयास में आन्दोलन किए गए अथवा फरवरी 1952 में पांच विरोधी आन्दोलन किये गये (रिश्वत, करो की चोरी, धोखाधड़ी राज्य की सम्पत्ति की चोरी, राज्य के अधिक रहस्यों के प्रति विश्वासघात विरोधी आन्दोलन जब कि 1956 तक वातावरण कम कम भयानक लगा था फिर भी साम्यवाद में वास्तविक प्रजातन्त्र आने की सम्भावनाएँ बहुत कम हैं। जब कि 1949–59 के मध्य राष्ट्रवादियों की अधिनायकवादी प्रवृत्तियां गोण हो गई है।

परिशिष्ट

चीन का संविधान व राजनीति

चीन के लोक गणराज्य का संविधान 20 सितम्बर 1954 को एक संक्षिप्त प्रपत्र के रूप में संक्रमणकालीन व्यवस्था मानकर परिवर्तित किया गया था। तथा यह माना गया था कि कुछ समय के व्यवहारिक अनुभव के पश्चात् उसमें वांछनीय परिवर्तन किया जाना सहज होगा। इस लेख के अन्त में उस नवीन संविधान की चर्चा की जाएगी जिसकी घोषणा चीन में 20 जनवरी 1975 को की गई। पिछले 20 वर्षों से चीन में जो संविधान अस्तित्व में रहा उस पर विशद टिप्पणी अनूदित पुस्तक के नौवे अध्याय में विस्तृत रूप से की गयी है। यहां हमारा उद्देश्य संविधान के मूल प्रावधानों की चर्चा करना है ताकि उसके प्रकाश में इस मूल्यांकन को समझना अधिक सहज हो सके।

चीन का 1954 का संविधान अपेक्षाकृत संक्षिप्त प्रलेख था। इसमें मात्र 106 अनुच्छेद थे। यह मूल रूप से चीनी भाषा में लिखा गया था तथा यहां इसकी विवेचना 1961 में प्रकाशित अधिकृत सरकारी आंग्ल भाषा के अनुवाद के आधार पर की गई है।[1] संविधान के प्रथम अध्याय में प्रस्तावित व्यवस्था के आधारभूत सिद्धान्तों का उल्लेख किया गया है। संविधान चीन को जनवादी गणराज्य घोषित करता है जो श्रमिकों तथा कृषकों के सहयोग से स्थापित प्रजातन्त्र के रूप में कार्य करेगा। सम्पूर्ण शक्ति जनता में निहित है तथा जनता अपनी इस शक्ति का प्रयोग राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस तथा स्थानीय जनवादी कांग्रेसों के माध्यम से करेगी। राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस तथा स्थानीय जनवादी कांग्रेसों का गठन प्रजातन्त्रीय केन्द्रीयवाद के आधार पर होगा।

1. लेस्के वुल्फ़ फिलिप्स कोंस्टीट्यूशन्स ऑफ माडर्न स्टेट्स, पोल माल प्रेस लंदन 1998.

चीन का संविधान सम्पूर्ण चीन के लिए अनेक राष्ट्रीयताओं वाली एकात्मक शासन की व्यवस्था करता है। जिसमें सभी राष्ट्रीयताओं को समान स्तर प्रदान किया जाएगा। किसी राष्ट्रीयता के प्रति भेद भाव अथवा दमन की नीति नहीं अपनाई जाएगी तथा ऐसा कोई भी कार्य अवैधानिक माना जाएगा जो राष्ट्रीयताओं की एकता व समानता का विरोध करता हो। सभी राष्ट्रीयताओं को अपनी भाषाओं का प्रयोग एवं विकास करने तथा अपने रीति-रिवाजों को बनाये रखने की स्वतन्त्रता होगी। जिन क्षेत्रों में अल्पसंख्यक राष्ट्रीयताएं संगठित रूप में निवास करती हैं उन्हें स्थानीय स्वायत्ता प्रदान की जाएगी। तथापि ये सभी राष्ट्रीय स्वायत्ता प्राप्त क्षेत्र चीन के जनवादी गणराज्य के अविभाजनीय अंग रहेंगे। इस प्रकार चीन का संविधान अनेकता में एक रूपता बनाए रखने का वृहत प्रयास है।

राष्ट्रीय एकता संगठन के पश्चात् चीन का संविधान राज्य की आर्थिक व सामाजिक व्यवस्था के रूपान्तरण पर विशेष ध्यान देता है। यह स्वीकारा गया कि चीन का जनवादी गणराज्य राज्य व्यवस्था तथा सामाजिक शक्तियों के माध्यम से सामाजिक औद्योगीकरण तथा रूपांतरण के द्वारा धीरे-धीरे शोषण की व्यवस्था को समाप्त करेगा तथा एक समाजवादी समाज की स्थापना का प्रयास करेगा (अनुच्छेद चार)

प्रारम्भ में चीन में उत्पादन की चार अवस्थाओं को मान्यता प्रदान की गई—राज्य का स्थायित्व अर्थात् सम्पूर्ण जनता का स्थायित्व, सहकारी स्वामित्व अर्थात् कार्यशील श्रमिकों का सामूहिक स्वामित्व, श्रमिकों का निजी अथवा व्यक्तिगत स्वामित्व तथा अन्ततः पूंजीवादी स्वामित्व। व्यवहार में उसी पूंजीवादी स्वामित्व को स्वीकारा गया जो राष्ट्रीय हित में सक्रिय था। (अनुच्छेद पांच) चीन की अर्थव्यवस्था को राज्य का क्षेत्र माना जाता है जिस पर समग्र जनता का स्वामित्व है। यह राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का मूल स्त्रोत है तथा सामाजिक रूपांतरण के लिए मूल भूत आधार प्रदान करता है। राज्य में इस क्षेत्र के विकास को प्राथमिकता प्रदान करने की व्यवस्था की गई है।

संपूर्ण खनिज जल, जंगल, भूमि तथा राज्य के स्वामित्व के अन्तर्गत आने वाले अन्य स्त्रोत सम्पूर्ण जनता की सम्पत्ति है।

अर्थ व्यवस्था का सहकारी भाग या तो पूर्ण समाजवादी अर्थात् कार्यशील जनता के स्वामित्व में है अथवा अर्द्ध समाजवादी अर्थात् अंशतः कार्यशील जनता के स्वामित्व में हैं। कार्यशील जनता के द्वारा अंशतः सामूहिक स्वामित्व की स्थिति संक्रमणकालीन है जिसके माध्यम से व्यक्तिगत कृषक तथा उद्यम कर्ता स्वयं को संगठित कर कार्यशील जनता के पूर्ण सामूहिक स्वामित्व की ओर बढ सकेंगे।

राज्य सरकार सहकारी संस्थाओं की सम्पत्ति की रक्षा करती है। अर्थव्यवस्था के सहकारी क्षेत्र के विकास को प्रोत्साहित करती है तथा परामर्श एवं सहायता देती है। चीन के संविधान में उत्पादन के क्षेत्र में सहकारिता के विकास को व्यक्तिगत कृषि तथा उद्योगों के रूपांतरण का मूल साधन माना गया है। (अनुच्छेद 7)

राज्य कृषकों के भूमि तथा उत्पादन के अन्य साधनों पर स्वामित्व की रक्षा करता है। राज्य कृषकों को उत्पादन बढ़ाने के लिये निर्देश तथा सहायता देगा तथा उन्हें स्वेच्छा से उत्पादन, आपूर्ति तथा क्रय विक्रय के लिये सहकारी संस्थाएँ बनाने के लिये प्रोत्साहित करेगा। दूसरी ओर अन्य संपन्न कृषकों पर नियन्त्रण लगाकर धीरे धीरे उन्हें समाप्त करने की नीति अपनाएगा। अनुच्छेद नौ के अनुसार राज्य गैर कृषि क्षेत्रों में संलग्न उद्यमकर्त्ताओं

के उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व की रक्षा करेगा। उनके उत्पादन में वृद्धि करने हेतु उन्हें उत्पादन आपूर्ति तथा क्रय-विक्रय के लिए सहकारी संस्थाएँ स्वेच्छा से बनाने के लिये प्रोत्साहित करेगा।

चीन का संविधान आर्थिक रूप से पूँजीपतियों के उत्पादन के साधनों व पूँजी पर स्वामित्व को स्वीकार करता है। तथापि इस दिशा में राज्य की नीति पूँजीवादी उद्योग तथा वाणिज्य को नियन्त्रित करने की तथा अन्ततः उसका रूपान्तरण करने की होगी। राजकीय प्रशासन, अर्थ व्यवस्था में राज्य के नेतृत्व, तथा जन सामान्य श्रमिकों की देख रेख में राज्य पूँजीवादी व उद्योगों के सम्पूर्ण उस अच्छे पक्ष का सदुपयोग करने का पूरा प्रयास करेगा जो राष्ट्रीय कल्याण तथा लोगों के जीवन निर्वाह के लिये आवश्यक है तथा इस व्यवस्था के उस नकारात्मक पक्ष को समाप्त करेगा तथा धीरे धीरे उसे राज्य प्रधान अर्थ व्यवस्था में परिवर्तित होने के लिये प्रोत्साहित करेगा। इस प्रकार अन्ततः पूँजीवादी स्वामित्व का स्थान सपूर्ण जनता का स्वामित्व ले लेगा तथापि राज्य सरकार पूँजीपतियों द्वारा सार्वजनिक हितों, तथा सामाजिक आर्थिक व्यवस्था में व्यवधान उत्पन्न करने वाले कार्यों तथा राज्य की आर्थिक व्यवस्था को अस्त व्यस्त करने वाली गति विधियों का निषेध करती है।

चीन के संविधान का अनुच्छेद ग्यारह चीन के नागरिकों द्वारा कानूनी तौर पर उपार्जित आय, बचत मकान तथा जीवन निर्वाह के अन्य साधन संचित करने का अधिकार देता है, राज्य संपत्ति के उत्तराधिकार को भी स्वीकारता है। तथापि राज्य सार्वजनिक हित को ध्यान में रखते हुए वैधानिक तरीके से किसी भी संपत्ति का अधिग्रहण, उपयोग, नगरीय ग्रामीण तथा उत्पादन के साधनों का राष्ट्रीयकरण कर सकता है। राज्य किसी व्यक्ति द्वारा निजी संपत्ति का सार्वजनिक हित के विपरीत प्रयोग करने का निषेध करता है। इस प्रकार निजी संपत्ति का अधिकार चीन के संविधान में पर्याप्त प्रतिबंधों व मर्यादाओं के साथ दिया गया है ताकि राज्य सामाजिक व आर्थिक रूपांतरण के कार्य को प्रभावशाली ढ़ंग से कर सके। चीन के संविधान का अनुच्छेद पंद्रह आर्थिक नियोजन को विशेष महत्त्व देता है। ताकि राज्य, राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था का विकास तथा रूपान्तरण निरन्तर उत्पादनों के साधनों में वृद्धि करके कर सके। लोगों के जीवन में भौतिक तथा सांस्कृतिक सुधार करे तथा राज्य की सुरक्षा तथा स्वतन्त्रता को मजबूत बनाये।

चीन के जनवादी गणराज्य में कार्यशीलता प्रत्येक व्यक्ति के लिये गौरव का विषय है तथा राज्य प्रत्येक नागरिक में कार्य सम्बन्धी उत्साह तथा रचनात्मकता को प्रोत्साहित करता है। बिना कार्य किये किसी भी व्यक्ति को चीनी गणराज्य में गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त नहीं हो सकता इसलिए अनुच्छेद 19 के अन्तर्गत सामन्तों जमींदारों तथा नौकरशाही पूँजीपति जो दूसरों के श्रम पर जीवित रहते हैं, को निश्चित अवधि के लिये राजनीतिक अधिकारों से वंचित कर दिया गया है। इस बीच उन्हें स्वयं श्रम द्वारा जीविकोपार्जन का अवसर प्रदान किया जाएगा ताकि वे अपनी आदतों में सुधार कर अन्ततः जनवादी गणराज्य के गौरवपूर्ण नागरिक बनने का श्रेय प्राप्त कर सके।

संविधान के अनुच्छेद सत्रह तथा अठ्ठारह में गणराज्य के जनवादी स्वरूप पर जोर दिया गया है। राज्य के सभी अङ्ग जनता से निकट संपर्क रखेंगे। तथा जनमत का मार्गदर्शन स्वीकार करेंगे। राज्य के सभी पदाधिकारी जनवादी प्रजातंत्र के प्रति निष्ठावान रहेंगे तथा संविधान व विधि का पालन करेंगे। चीन का जनवादी गणराज्य इस व्यवस्था के विरुद्ध

किसी भी गतिविधि को सहन नहीं करेगा तथा सब क्रांतिकारी अथवा प्रति-क्रांतिकारी गतिविधियों को राजद्रोह का दण्ड दिया जाएगा। चीन की सशस्त्र सेनाएँ जनता के लिये हैं। उनका यह कर्तव्य है कि वे जनवादी क्रांति द्वारा प्राप्त राष्ट्रीय निर्माण की उपलब्धियों, राष्ट्र की संप्रभुता, प्रादेशिक अखण्डता तथा सुरक्षा की रक्षा करें। इस प्रकार चीन के संविधान का प्रथम अध्याय राज्य व्यवस्था के मूल सिद्धान्तों, नागरिकों अधिकार व कर्तव्यों की चर्चा करता है जबकि द्वितीय अध्याय में राज्य सरकार के ढांचे का वर्णन किया गया है।

राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस :

राज्य सरकार का सर्वोच्च अङ्ग राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस है जिसमें राज्य की सर्वोच्च विधायी शक्ति निहित है। इसके सदस्यों का निर्वाचन प्रान्तों, स्वायत्तशासी प्रान्तों तथा नगरों से, सशस्त्र सेनाओं तथा विदेशों में रहने वाले चीनियों के द्वारा केन्द्रीय सत्ता के अन्तर्गत होगा। जनवादी कांग्रेस के सदस्यों की संख्या का निर्धारण जिसमें अल्पसंख्यक समुदाय प्रतिनिधि भी सम्मिलित हैं राष्ट्रीय निर्वाचन विधि के द्वारा किया जाता है।

राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस का निर्वाचन चार वर्ष के लिए होता है। राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस की अवधि समाप्त होने से दो माह पहले उसकी स्थायी समिति को अपनी उत्तराधिकारी कांग्रेस के प्रतिनिधियों का निर्वाचन पूरा कर लेना होगा। तथापि यदि असाधारण परिस्थितियों के कारण इस प्रकार निर्वाचन न हो सकें तो उत्तराधिकारी कांग्रेस के प्रथम अधिवेशन के होने तक पूर्ववर्ती कांग्रेस अधिवेशन में रहेगी। राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस की स्थायी समिति वर्ष में एक बार उसका अधिवेशन आमन्त्रित करेगी। इसके अतिरिक्त जब चाहे स्थाई समिति अधिवेशन आमन्त्रित कर सकती है अथवा कुल सदस्यों का पाँचवा भाग इस प्रकार के अधिवेशन की माँग कर सकता है। जनवादी राष्ट्रीय कांग्रेस अपने प्रथम अधिवेशन में कार्यवाही संचालन करने के लिए प्रेसीडियम का निर्वाचन करती है। राष्ट्रीय कांग्रेस के कार्य पर्याप्त विस्तृत एवं व्यापक हैं। यह संविधान में संशोधन कर सकती है, विधि निर्माण करती है तथा संविधान को क्रियान्वित करती है। वह अनेकों निर्वाचन तथा नियुक्ति सम्बन्धी कार्य भी करती है। जैसे चीनी गणराज्य के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष का निर्वाचन, अध्यक्ष के परामर्श पर राज्य परिषद् के प्रधानमन्त्री का चयन तथा स्वयं राज्य परिषद् के सदस्यों का चयन, अध्यक्ष के परामर्श पर उपाध्यक्षों तथा सुरक्षा परिषद् के सदस्यों का चयन, और सर्वोच्च जनवादी न्यायालय के अध्यक्ष मुख्य प्रोक्यूरेटर का निर्वाचन करना आदि है। राष्ट्रीय कांग्रेस वित्तीय कार्य भी करती है, वह राष्ट्रीय आर्थिक योजना का निर्धारण करती है तथा राज्य के बजट व वित्तीय प्रावधानों का सर्वेक्षण व मूल्यांकन करती है। इन संवैधानिक, वैधानिक निर्वाचन तथा नियुक्ति सम्बन्धी कार्यों के अतिरिक्त कांग्रेस अन्य कार्य भी करती है जैसे प्रशासनिक खंडों, प्रान्तों, स्वायतशासी क्षेत्रों तथा केन्द्रीय सरकार के अन्तर्गत नगरों का प्रशासन, क्षमादान तथा शान्ति व युद्ध के प्रश्नों का निवटारा तथा इसके अतिरिक्त समय समय पर वे कार्य जिन्हें कांग्रेस करना उपयुक्त समझे। इसके अतिरिक्त कांग्रेस को व्यापक निषेधात्मक शक्तियां भी प्राप्त हैं वह गणराज्य के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष को, प्रधान मन्त्री, उपप्रधान मन्त्रियों, मन्त्रियों के सभा पतियों तथा राज्य परिषद् के महासचिव को, राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् के उपाध्यक्ष तथा सदस्यों को सर्वोच्च न्यायालय के अध्यक्ष तथा प्रोक्यूरेटर जनरल को अपदस्थ कर सकती है। इस प्रकार जनवादी कांग्रेस को व्यापक शक्तियां प्रदान की गई है जिनका प्रयोग उसकी 'अनुपस्थिति में उसकी स्थायी

समिति करती है । इसके अतिरिक्त यह वजट विवेयक राष्ट्रीयताओं तथा प्रमाणपत्र की समितियां भी नियुक्त करती है । चीन का संविधान जनवादी कांग्रेस के सदस्यों को राज्य परिषद् से अथवा उसके मन्त्रियों तथा आयोगों से प्रश्न पूछने का अधिकार प्रदान करता है तथा मन्त्रिगण उन प्रश्नों का जवाब देने के लिए बाध्य होंगे । व्यवस्थापिका के किसी भी सदस्य को विना कांग्रेस की सहमति के, तथा जव कांग्रेस अधिवेशन में नहीं हो उसकी स्थायी समिति की सहमति के बिना गिरफ्तार नही किया जा सकता है तथा न ही उस पर कोई मुकदमा चलाया जा सकता है । स्वयं जनवादी कांग्रेस के सदस्य उन क्षेत्रों के प्रति उत्तरदायी होते हैं जिनके द्वारा वे चुने जाते हैं । तथा यदि ये निर्वाचन क्षेत्र अपने प्रतिनिधियों से असन्तुष्ट हों तो वे विधि द्वारा प्रतिवादित तरीके से उन्हें अपदस्थ कर नये प्रतिनिधियों का चुनाव कर सकते हैं ।

जनवादी कांग्रेस की स्थाई समिति :

यह राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस का स्थाई कार्यशील अङ्ग है । इसमें राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा निर्वाचित अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, महासचिव तथा सामान्य् सदस्य होते हैं । संविधान द्वारा इस स्थाई समिति को अनेकों कार्य सौंपे गये हैं जैसे राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के सदस्यों का निर्वाचन करना, कांग्रेस का अधिवेशन आमन्त्रित करना, विधियों की व्याख्या करना, राज्य परिषद्, सर्वोच्च जनवादी न्यायालय तथा प्रोक्यूरेटर जनरल के कार्यो की देखभाल करना, तथा राज्य परिषद् द्वारा किये गये, गैर संविधानिक कार्यो को समाप्त करना । इसी प्रकार प्रान्तों, स्वयातशासी प्रदेशों तथा नगरों द्वारा किये गये कार्यो की निगरानी करना; जनवादी कांग्रेस के अधिवेशन की अनुपस्थिति में उसके कार्यो को पूरा करना, जनवादी न्यायालय के उपाध्यक्ष तथा न्यायाधीशों व न्याय समिति के सदस्यों को अपदस्थ करना, सहायक प्रमुख प्रोक्यूरेटर तथा सर्वोच्च जनवादी प्रोक्यूरेट के अन्य सदस्यों को अपदस्थ करना, विदेशों के साथ की गई संधियों की पुष्टि करना अथवा उन्हें समाप्त करना, सैनिक कूटनीतिक अथवा अन्य पदवियाँ या उपाधियाँ प्रदान करना, क्षमादान के वारे में निर्णय करना, जनवादी कांग्रेस के अधिवेशन की अनुपस्थिति में देश पर सशस्त्र आक्रमण की स्थिति में युद्ध की घोषणा करना, अथवा आवश्यकता पड़ने पर आक्रमण का सामना करने के लिये किसी देश के साथ संयुक्त सुरक्षा व्यवस्था के लिए संधि करना । देश की सुरक्षा को मजवूत करने के लिए सेना को आदेश देना, देश में संपूर्ण अथवा आंशिक तौर पर मार्शल लॉ की घोषणा करना, तथा जनवादी कांग्रेस में निहित अन्य सभी प्रकार की शक्तियों का प्रयोग करना ।

स्थायी समिति नवनिर्वाचित जनवादी कांग्रेस द्वारा गठित नवीन स्थायी समिति के अस्तित्व में आने तक कार्य करती है तथा यह जनवादी कांग्रेस के प्रति उत्तरदायी होती है । जनवादी कांग्रेस अपने द्वारा नियुक्ति स्थायी समिति के सदस्यों को वापिस बुला सकती है । जनवादी कांग्रेस की राष्ट्रीयताओं तथा विधेयकों की समितियों उसकी अनुपस्थिति में इसी स्थायी समिति के निर्देश में कार्य करती है । यह समिति जनवादी कांग्रेस की अनुपस्थिति में आवश्यकता पड़ने पर अन्य समितियों व जाँच आयोग की नियुक्ति होने पर राज्य के सभी संगठनों तथा नागरिकों के लिये इनके द्वारा पूछी गई सभी प्रकार की जानकारी व सूचना देना आवश्यक होगा ।

चीन के जनवादी गणराज्य का अध्यक्ष :

चीन का संविधान, जनवादी कांग्रेस द्वारा राष्ट्राध्यक्ष या राष्ट्रपति के निर्वाचन की व्यवस्था करता है। चीन का कोई भी नागरिक जिसे मत देने व चुनाव लड़ने का अधिकार है तथा जो पैंतीस वर्ष की आयु प्राप्त कर चुका है राष्ट्रपति पद के लिये चुनाव लड़ सकता है। राष्ट्रपति का कार्यकाल चार वर्ष है।

राष्ट्रपति की शक्तियां व कार्य :

संविधान के अनुसार चीन का राष्ट्रपति जनवादी कांग्रेस अथवा उसकी स्थायी समिति के निर्णयों के अनुसार विधि तथा नियुक्तियां प्रेषित करता है, प्रधानमन्त्री, उपप्रधान मन्त्री अन्य मन्त्रियों, आयोगों के अध्यक्षों, राज्य परिषद् के महासचिव, सुरक्षा परिषद् के उपाध्यक्ष तथा अन्य सदस्यों को नियुक्त करता है तथा अपदस्थ भी कर सकता है। राज्य की ओर से उपाधियों तथा पदवियां प्रदान करता है। क्षमादान देता है मार्शल लॉ की घोषणा करता है, युद्ध की घोषणा करता है तथा सेनाओं को आदेश देता है।

चीन का राष्ट्रपति विदेशों में चीन की जनता का प्रतिनिधित्व करता है, विदेशों के कूटनीतिक प्रतिनिधियों का स्वागत करता है तथा राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के परामर्श पर विदेशों को प्रतिनिधि भेजता है तथा विदेशों से की गई संधियों की पुष्टि करता है।

चीन के जनवादी गणराज्य का अध्यक्ष सशस्त्र सेनाओं का अधिकारी है तथा राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् का अध्यक्ष है। राष्ट्रपति जब भी आवश्यक समझे महत्त्वपूर्ण मामलों पर विचार करने के लिए सर्वोच्च राज्य सम्मेलन आमंत्रित करेगा तथा उसके अध्यक्ष के रूप में उसका संचालन करेगा। इस सम्मेलन में चीनी गणराज्य के उपसभापति, राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस की स्थाई समिति का अध्यक्ष, राज्य परिषद् का प्रधानमन्त्री तथा अन्य संबंधित अधिकारी भाग लेते हैं। तत्पश्चात् जनवादी गणराज्य का अध्यक्ष सर्वोच्च राज्य सम्मेलन के विचारों को जनवादी कांग्रेस, उसकी स्थायी समिति, राज्य परिषद् अथवा ऐसी अन्य संस्थाओं के सम्मुख रखेगा जो उन विषयों से संबंधित व निर्णयों के लिये आवश्यक हों। गणराज्य का उपाध्यक्ष उन कार्यों में अध्यक्ष की सहायता करता है तथा वह उन सभी कार्यों को करता है जो समय समय पर अध्यक्ष द्वारा उसे सौंपे जाते हैं। संविधान में उपाध्यक्ष के निर्वाचन की भी वही विधि है (39 अनुच्छेद) जो अध्यक्ष के निर्वाचन की है। राष्ट्रपति तथा उपराष्ट्रपति उस समय तक पद पर बने रहते हैं जब तक नवीन पदाधिकारियों का निर्वाचन नव-निर्वाचित जनवादी कांग्रेस द्वारा नहीं हो जाता है। यदि राष्ट्रपति अस्वस्थता के कारण दीर्घ समय तक कार्य करने में असमर्थ हों तो उसके समस्त कार्य उपराष्ट्रपति द्वारा किये जाएँगे। अथवा राष्ट्रपति का पद रिक्त होने पर उप राष्ट्रपति का पद ग्रहण करेगा।

राज्य परिषद् :

जनवादी कांग्रेस तथा गणराज्य के राष्ट्रपति व उपराष्ट्रपति के बाद राज्य परिषद् चीनी राज्य व्यवस्था में एक अन्य महत्त्वपूर्ण अंग है। राज्य परिषद् जनवादी गणराज्य की सरकार अथवा सर्वोच्च कार्यपालिका एवं प्रशासनिक यंत्र है। संविधान के 48 वें अनुच्छेद के अनुसार राज्य परिषद् में निम्न व्यक्ति होंगे : प्रधान मन्त्री, उप प्रधान मन्त्री, मन्त्रीगण, आयोगों के अध्यक्ष तथा महासचिव। राज्य परिषद् के विभिन्न सदस्यों का चयन जनवादी

कांग्रेस में से होता है तथा यह उसके प्रति ही उत्तरदायी होती है तथा उसकी अनुपस्थिति में उसकी स्थायी समिति के प्रति उत्तरदायी होती है।

चीन का संविधान राज्य परिषद् को व्यापक शक्तियां प्रदान करता है जिनका वर्णन संविधान के अनुच्छेद 49 में किया गया है। राज्य परिषद् प्रशासनिक प्रस्तावों निर्णयों तथा आदेशों को संवैधानिक विधियों तथा विज्ञप्तियों के अनुसार क्रियान्वित करती है। यह जनवादी कांग्रेस के सम्मुख अथवा उसकी अनुपस्थिति में उसकी स्थायी समिति के सम्मुख विधायनी प्रस्तावों को प्रस्तुत करती है। यह विभिन्न मन्त्रालयों तथा आयोगों के मध्य कार्यो का संयोजन करती है। प्रशासन के विभिन्न स्तरों को संपूर्ण राष्ट्रीय स्तर पर संयोजित करती है। विभिन्न मंत्रालयों, आयोगों; प्रान्तों की प्रशासनिक ईकाइयों द्वारा किये गये अवैधानिक निर्णयों को निरस्त करती है। राष्ट्रीय आर्थिक नियोजन तथा बजट को क्रियान्वित करती है। घरेलू तथा विदेशी व्यापार का संचालन करती है। साँस्कृतिक, शैक्षणिक, सार्वजनिक स्वास्थ्य, विभिन्न राष्ट्रीयताओं से संबधित मामले, व विदेशों में रहने वाले चीनियों के हितों की देखभाल करती है। राज्य परिषद् राष्ट्रीय हित की देखभाल करती है तथा यह सार्वजनिक शान्ति व्यवस्था तथा नागरिकों के अधिकारों की रक्षक है। यह वैदेशिक संबंधों का संचालन करती है तथा सशस्त्र सेनाओं का गठन करती है। विभिन्न प्रशासनिक ईकाइयों जैसे, स्वायत्तशासी चौ कांउटी, स्वायतशासी क़ांउटी तथा नगरों पर नियन्त्रण रखती है। वह विधि द्वारा निर्धारित पद्धति से प्रशासनिक अधिकारियों को नियुक्त अथवा विमुक्त कर सकती है तथा अन्य वे कार्य करती है जो समय समय पर जनवादी कांग्रेस या उसकी स्थायी समिति द्वारा उसे सौपे जाते हैं। राज्य परिषद् सभी कार्य प्रधान मन्त्री के नेतृत्व में करती है तथा वह इसकी अध्यक्षता करता है। विभिन्न उप प्रधान मन्त्री कार्य संचालन में प्रधान मन्त्री की सहायता करते हैं। तथापि विभिन्न मंत्रीगण तथा आयोगो के अध्यक्ष अपने अपने विभागों का कार्य संचालन राज्य परिषद् द्वारा प्रेषित आदेशों तथा विज्ञप्तियों के अनुसार करते हैं। अपने इन सभी विभागीय व सामूहिक कार्यो के लिए राज्य परिषद् जनवादी कांग्रेस के प्रति उत्तरदायी होती है।

प्रान्तीय शासन– स्थानीय जनवादीकाँग्रेस तथा जनवादी परिषदें–

चीनी संविधान में राष्ट्र की एकता पर बल दिया गया है अतः अपने विशाल आकार के बावजूद संघीय व्यवस्था के स्थान पर एकात्मक प्रणाली का प्रतिपादन किया गया है अतः सम्पूर्ण शक्ति केन्द्रीय सरकार में निहित है। शासन की सुविधा हेतु सम्पूर्ण राष्ट्र को विभिन्न प्रशासनिक इकाइयों में विभक्त किया गया है, चीन के सविधान का अनुच्छेद 53 इन इकाइयों का विभाजन इस प्रकार करता है– केन्द्रीय सरकार के प्रत्यक्ष नियन्त्रण में सम्पूर्ण राज्य को प्रान्तों स्वायतशासी प्रदेशों तथा नगरों में विभाजित किया गया है। ये प्रान्त तथा स्वायतशासी प्रदेश, स्वायतशासी चौ कांउटी, स्वायतशासी काउंटी तथा नगरों की आंग्रुत इकाइयों में विभक्त है। काउंटी तथा स्वयतशासी कांउटी हसिआंग, पृथक राष्ट्रीयतावादी हसियांग तथा कस्बों में विभाजित है। स्वायतशासी प्रदेशों, चौ तथा काउंटी में स्थानीय संस्थाएं कार्य करती हैं। जिनका विशद वर्णन आगे के पृष्ठों में किया जाएगा।

ऐसे प्रान्त तथा नगरों की स्थानीय जनवादी कांग्रेस के सदस्यों का निर्वाचन, जो लघुतर प्रादेशिक इकाइयों में बंटे हुए हैं केन्द्रीय सरकार के तत्वाधान में निम्नतर जनवादी कांग्रेस के सदस्यों द्वारा किया जाता है। वे नगर जो लघुतर इकाइयों में विभाजित नहीं है

तथा हसियांग, राष्ट्रीयतावादी हसियांग तथा कस्बों की कांग्रेसों का निर्वाचन प्रत्यक्ष निर्वाचकों द्वारा किया जाता है। स्थानीय स्तर पर जनवादी कांग्रेस के सदस्यों की संख्या पृथक विधि द्वारा निर्धारित की जाएगी।

प्रान्तीय जनवादी कांग्रेसों का कार्यकाल चार वर्ष है। जबकि केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण में काउंटी, नगरों, प्रदेशों, हसियांग तथा कस्बों की जनवादी कांग्रेस का कार्यकाल दो वर्ष है।

संविधान स्थानीय जनवादी कांग्रेस को व्यापक कार्य व शक्तियां प्रदान करता है। ये अपने निर्धारित क्षेत्रों के लिये विधि तथा विज्ञप्तियों का निर्माण करती हैं तथा उन्हें क्रियान्वित करती हैं स्थानीय आर्थिक निर्माण, सांस्कृतिक विकास तथा सार्वजनिक उपयोग की वस्तुओं का आयोजन करती हैं। स्थानीय बजट की जांच पड़ताल तथा पुष्टि करती हैं। सार्वजनिक सम्पति की सुरक्षा के लिए उत्तरदायी होती है। सार्वजनिक व्यवस्था बनाये रखती है नागरिकों तथाअधिकारों तथा विशेषतया अल्पसंख्यकों के अधिकारों की सुरक्षा की देख भाल करती है।

स्थानीय जनवादी कांग्रेस परिषदों के सदस्यों का निर्वाचन करती है तथा उन्हें अपदस्थ भी कर सकती है। वे अपने स्तर के न्यायधीशों का निर्वाचन करती हैं तथा उन्हें अपदस्थ भी कर सकती हैं। जनवादी कांग्रेस के सदस्य अपनी सभी गतिविधियों व कार्यों के लिए अपने निर्वाचक गुणों के प्रति उत्तरदायी होते हैं जो असन्तुष्ट होने पर उन्हें वापिसी बुलाकर उनके स्थान पर नवीन प्रतिनिधि चुनने का अधिकार रखते हैं।

स्थानीय परिषदें जनवादी कांग्रेस द्वारा निर्वाचित कार्यकारिणी परिषदें हैं जो स्थानीय प्रशासन का संचालन करती हैं। प्रशासन के विभिन्न स्तरों के अनुसार एक स्थानीय परिषद में प्रान्तीय गवर्नर या राज्यपाल व उपराज्यपाल, मेयर या डिप्टी मेयर, काउंटी अध्यक्ष, तथा उपाध्यक्ष, जिला अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष आदि होते हैं। स्थानीय स्तर की परिषदों की अवधि तत्संबंधित कांग्रेस की अवधि के समान होती है। उनके संगठन से संबंधित नियम समय समय पर बनाए जाएंगे।

स्थानीय परिषदों के विभिन्न प्रशासनिक तथा कार्यपालिका संबंधी कार्य हैं। वे निर्धारित विधियों के अनुसार प्रशासन का संचालन करती है। तथा जनवादी कांग्रेसों द्वारा लिये गए निर्णयों को क्रियान्वित करती है। काउंटी स्तर की परिषदें अपने अधीनस्थ सभी विभागों का निर्देशन करती हैं तथा विधि द्वारा निर्धारित प्रणाली से प्रशासनिक अधिकारियों की नियुक्ति करती है तथा अपदस्थ भी करती है। जनवादी परिषदों को अपने आधीन कार्यरत जनवादी कांग्रेसों, परिषदों, तथा विभागों के द्वारा लिये गए अवैधानिक निर्णयों को निरस्त करने का अधिकार भी है।

अपने सम्पूर्ण कार्यों के लिए जनवादी परिषदें जनवादी कांग्रेसों के प्रति, तथा प्रशासनिक क्रम में अपने से वृहतर इकाइयों के प्रति उत्तरदायी होती हैं, इस प्रकार वे दोहरे उत्तरदायित्व का निर्वहन करती हैं।

चीनी राजव्यवस्था की अन्तिम तथा पर्याप्त महत्त्वपूर्ण अंग जनवादी न्यायालय तथा प्रोक्यूरेट है। चीन के संविधान का 73 वां अनुच्छेद यह घोषणा करता है चीन का सर्वोच्च जनवादी न्यायालय तथा विभिन्न स्तरों पर स्थानीय न्यायालय में न्यायाधीशों का कार्यकाल चार वर्ष होगा। जनवादी न्यायालय किसी भी मामले के निर्णय में जनता के हितों को

महत्व देंगे। सभी मामलों की सुनवाई कुछ मामलों को छोड़ कर जो विधि द्वारा स्पष्ट कर दिये गये हैं सार्वजनिक रूप से होगी। अपराधी को अपना बचाव प्रस्तुत करने का अधिकार होगा। सभी अल्पसंख्यकों को न्याय प्रक्रिया में अपनी भाषा का लिखित व मौखिक प्रयोग करने का अधिकार होगा। न्यायालय को किसी भी पक्ष को उसकी भाषा में कार्यवाही का विवरण देना होगा। जिस प्रदेश में एक विशिष्ट अल्पसंख्यक समुदाय रहता हो वहाँ मामले की सुनवाई तत्वसंबंधित भाषा में होगी, तथा न्यायालय जनता की भाषा में ही निर्णय, नोटिस, तथा अन्य प्रलेख प्रकाशित करेगा। जनवादी न्यायालय स्वतन्त्र रूप से न्याय करेंगे तथा मात्र विधि के अधीन रहेंगे।

न्याय व्यवस्था की शृंखला में सर्वोच्च न्यायालय सर्वोपरि है। वह अपने अधीनस्थ जनवादी न्यायालयों की न्याय व्यवस्था की देखभाल करता है। सर्वोच्च न्यायालय राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के प्रति उत्तरदायी होता है तथा उसकी अनुपस्थिति में उसकी स्थायी समिति के प्रति उत्तरदायी होता है। इसी प्रकार स्थानीय न्यायालय स्थानीय कांग्रेस के प्रति उत्तरदायी होते हैं।

सर्वोच्च प्रोक्यूरेट जनरल का कार्य यह देखना है कि देश के सभी विभाग तथा स्थानीय ईकाइयां विधि का भली प्रकार पालन करती हैं या नहीं। स्थानीय प्रोक्यूरेट स्थानीय क्षेत्र में अपने कर्तव्य का निर्वाह करते हैं। निम्नत्तर प्रोक्यूरेट अपने उच्चत्तर प्रोक्यूरेट के अन्तर्गत कार्य करते हैं तथा सर्वोच्च नियंत्रण सर्वोच्च प्रोक्यूरेट जनरल का होता है। प्रमुख प्रोक्यूरेटर का कार्यकाल चार वर्ष होता है। उनकेगठन से संबंधित नियम संबंधित विधि द्वारा निर्धारित किये जाते हैं। स्थानीय प्रोक्यूरेट अपना कार्य स्वतन्त्र रूप से करते है तथा उनके कार्यों में स्थानीय संगठन किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं कर सकते हैं। सर्वोच्च प्रोक्यूरेटर जनरल अपने संपूर्ण कार्यो के लिए सर्वोच्च जनवादी कांग्रेस के प्रति उत्तरदायी होती है तथा कांग्रेस की अनुपस्थिति में उसकी स्थायी समिति के प्रति उत्तरदायी होती है।

चीन के संविधान में नागरिकों के मौलिक अधिकारों का वर्णन अध्याय तीन में किया गया है तथा अधिकारों के साथ नागरिकों के कर्तव्यों को भी महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। चीन का संविधान अपने नागरिकों को सैद्धान्तिक रूप से व्यापक अधिकार प्रदान करता है। सभी नागरिकों को विधि के सम्मुख समानता का अधिकार प्राप्त है। अठारह वर्ष की आयु के सभी नागरिकों को मत देने का, निर्वाचन में खड़े होने का अधिकार है। इस विषय में राष्ट्रीयता, नस्ल, लिंग, व्यवसाय, सामाजिक स्थिति, धर्म, शिक्षा, सम्पत्ति अथवा निवास काल के आधार पर किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाएगा। स्त्रियों को पुरुषों के समान मत देने व चुनाव लड़ने का अधिकार है। चीन का संविधान नागरिकों को स्वतन्त्रता का अधिकार भी प्रदान करता है। अनुच्छेद 87 के अनुसार चीन के नागरिकों को बोलने की, प्रकाशन की, सभा-सम्मेलन करने, संगठन बनाने, जलूस निकालने व प्रदर्शन करने की स्वतन्त्रता है। इन स्वतन्त्रताओं को वास्तविक जीवन में उपलब्ध करने का प्रयास सरकार करेगी। नागरिकों को किसी भी धर्म में विश्वास करने की स्वतन्त्रता है। राज्य व्यक्ति की निजी स्वतन्त्रता का उल्लघंन नहीं कर सकता है। बिना न्यायालय की आज्ञा अथवा प्रोक्यूरेट की सम्मति के किसी भी व्यक्ति को गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है। परिवारों की गोपनीयता सर्वोपरि है तथा विधि निजी पत्र व्यवहार को संरक्षण प्रदान करती

है। चीनी नागरिकों को अपने आवास स्थान का चयन करने तथा उसे परिवर्तित करने का अधिकार प्राप्त है।

चीन का संविधान अपने नागरिकों को कार्य प्राप्त करने का अधिकार भी देता है। वास्तव में नागरिकों को कार्य प्राप्त हो इसके लिए राज्य राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था का नियोजित विकास करेगा, अधिकाधिक रोजगार उपलब्ध करायेगा, कार्य परिस्थितियों में सुधार करेगा। वेतन में वृद्धि तथा अन्य सुविधाओं व लाभ की व्यवस्था करेगा। चीन के कार्यशील नागरिकों को अवकाश तथा आराम करने का अधिकार भी प्राप्त हैं। इस अधिकार को संरक्षण प्रदान करने के लिए राज्य कार्य के घंटों का निर्धारण करेगा तथा उनके अवकाश की व्यवस्था करेगा। राज्य धीरे धीरे भौतिक सुविधाओं में इस प्रकार सुधार करेगा कि श्रमिकों को अधिकाधिक अवकाश करने तथा स्वास्थ्य बनाने के अवसर उपलब्ध हों।

चीन के श्रमिकों को वृद्धावस्था, बीमारी तथा शारीरिक अयोग्यता के दौरान राज्य सरकार से भौतिक सहायता प्राप्त करने का अधिकार भी है। इस अधिकार को संरक्षण प्रदान करने के लिए सरकार सामाजिक बीमा, सहायता तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाएँ प्रदान करेगी। राज्य सरकार नागरिकों को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार प्रदान करती है। इसके लिए राज्य सरकार स्कूलों की स्थापना करेगी तथा विभिन्न प्रकार के शैक्षणिक तथा सांस्कृतिक संस्थाओं की स्थापना करेगी। इस प्रकार सरकार अपने वर्ग के मानसिक व शारीरिक विकास के लिये उपयुक्त अवसरों को उपलब्ध करायेगी। चीन का जनवादी गणराज्य अपने नागरिकों को वैज्ञानिक अनुसंधान, साहित्यक व कलात्मक रचना तथा सांस्कृतिक गतिविधियों की स्वतन्त्रता प्रदान करता है। स्त्रियों को राजनीतिक, आर्थिक सांस्कृतिक तथा पारिवारिक क्षेत्र में समान अधिकार प्रदान करता है। विवाह, परिवार, माता तथा शिशु को विशेष संरक्षण प्रदान करता है। चीन के नागरिकों के अधिकारों का यदि किसी व्यक्ति अथवा संगठन के द्वारा उल्लंघन होता है तो वे लिखित अथवा मौखिक रूप से शिकायत कर सकते हैं। तथा राज्य द्वारा पहुंचाई गई किसी क्षति के विरुद्ध क्षतिपूर्ति की मांग कर सकती है। चीनी गणराज्य विदेशों में रहने वाले चीनियों के उचित अधिकारों को भी संरक्षण प्रदान करता है। चीन किसी भी ऐसे विदेशी को राजनीतिक शरण प्रदान करेगा जो किसी न्यायपूर्ण कार्य के लिए संघर्ष कर रहा हो। ये सब अधिकार उन्हीं चीनी नागरिकों को प्राप्त होंगे जो संविधान तथा विधि का पूर्ण पालन करते हों। चीन की राष्ट्रीय संपत्ति पवित्र व अनुल्लघनीय है तथा प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य है कि वह इसकी रक्षा करे। प्रत्येक चीनी नागरिक ईमानदारी से विधि अनुसार कर चुकायेगा। प्रत्येक चीनी नागरिक का यह प्राथमिक कर्तव्य है कि वह अपनी मातृभूमि की रक्षा करे तथा इसके लिये विधि अनुसार आवश्यकता पड़ने पर सैनिक सेवा करना उसका महान् सम्मानपूर्ण कर्तव्य होगा।

चीनी संविधान का पिछले दो दशकों में व्यवहारिक स्वरूप :

इस प्रकार चीन का संविधान अपने नागरिकों को व्यापक स्तर पर मौलिक अधिकार प्रदान करता है। तथापि इस सम्पूर्ण संवैधानिक रूप रेखा का वास्तविक जीवन में व्यावहारिक स्वरूप क्या है इस बारे में अधिकृत सूत्रों से जानकारी अति संक्षिप्त तथा अनियमित रूप से ही मिल पाती है। इस प्रकार अन्य प्रजातंत्रीय राज व्यवस्थाओं के समान चीनी राज्यव्यवस्था के अधिकृत अध्यन से संबंधित व्यापक साहित्य का अभाव है

तथापि पिछले कुछ वर्षों में इस सन्दर्भ में कुछ अधिकृत अध्ययन प्रकाशित हुए है। अन्य साम्यवादी राजनीतिक व्यवस्थाओं के समान चीन में सरकार का संवैधानिक ढांचा यद्यपि पर्याप्त व्यापक है तथापि उसके संचालन का मुख्य स्रोत साम्यवादी दल में निहित है। तथा साम्यवादी दल की भूमिका को समझे बिना चीनी राजनीतिक व्यवस्था के व्यावहारिक पहलू को समझना असम्भव है। साम्यवादी चीन की प्रथम दो दशाब्दियों में चीन का साम्यवादी दल सरकार, सेना तथा सत्ता का प्रयोग करने वाले किसी भी अभीकरण का केन्द्र विन्दु रहा है।[2] यद्यपि चीन में साम्यवादी दल ने समाज की अन्य ताकतों के साथ सहअस्तित्व से शासन का संचालन प्रारम्भ किया था तथापि शनैः शनैः साम्यवादी दल शक्ति का केन्द्र विन्दु बनता गया। शीघ्र ही साम्यवादी दल चीन में ऐसा वृहतम राजनीतिक संगठन बन गया जिसकी जड़ें राजधानी पेकिंग से लेकर सुदूर पूर्व ग्रामों तक फैल गई। 1961 तक प्राप्त अधिकृत सरकारी आंकड़ों के अनुसार साम्यवादी दल की सदस्यता 4448080 से बढ़ कर 17000000 हो गई।[3] इस दल में शक्ति का स्रोत कतिपय नेताओं के व्यक्तित्व में केन्द्रित रहा है जिसमें सर्वाधिक प्रभावशाली माओत्से तुंग तथा स्व. प्रधानमन्त्री चाउ एन लाई रहे अन्य महत्त्वपूर्ण नेताओं में चू तेह, चेइन चुन, तेंग सिआओपिंग, लिन पिआओ, ल्यू शाओ ची थे, जिनका समयांतर में पतन होता गया। दल की सम्पूर्ण शक्ति उसकी अनुशासित एकता में निहित है जिसका स्रोत स्वयं माओत्सतुंग है। दलीय अनुशासन को बनाये रखने के लिए समय समय पर अधिकृत घोषित नीति का विरोध करने वालों की सार्वजनिक आलोचना की जाती है।

माओत्से तुंग तथा साम्यवादी दल के सम्मुख सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण चुनौती चीन के परम्परागत रूढ़ीवादी समाज की परम्परागत सामन्तवादी निष्ठाओं को समाप्त कर एक नवीन जागरूक समाज का संगठन करना था जो संविधान द्वारा प्रस्तुत सामाजिक व आर्थिक रूपान्तरण की प्रक्रिया में सक्रिय योगदान कर सके। इसके लिये समाज में व्याप्त निहित स्वार्थी तथा प्रतिक्रियावादी तत्वों का उन्मूलन आवश्यक था। साम्यवादी दल के सिद्धान्त के अनुसार क्रान्ति के वास्तविक दुश्मन कौन थे इसका निर्धारण मात्र साम्यवादी दल ही कर सकता था। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत 1951 से 1953 के मध्य असंख्य जमींदारों की जमीन छीनी गई तथा उन्हें भूमि हीनों को वितरित किया गया। इस भूमि सुधार का मूल उद्देश्य चीन के परामपरागत समाज के ग्रामीण नेतृत्व वर्ग में आमूलचूल परिवर्तन करना था। इस प्रकार साम्यवादी दल ने ग्रामों में अपने लिए सुदृढ़ आधार निर्मित किया। जन जाग्रती उत्पन्न करने के लिए शिक्षा के प्रसार के लिए व्यापक प्रयास किये गए। प्रचार के माध्यम से चीनियों के चिंतन को परिवर्तित करने के पर्याप्त प्रयत्न किये गये। शिक्षा, साहित्य, समाचार पत्र, रेडियो, रंगमंच तथा फिल्मों के माध्यम से साम्यवादी मूल्यों तथा सिद्धान्तों को जनता में लोकप्रिय बनाया गया।

चीन में साम्यवादी व्यवस्था की सफलता उसकी आर्थिक सुदृढ़ता पर निर्भर करती थी जिसका प्रारम्भ चीन में 1953 में घोषित पंच वर्षीय योजना से हुआ। राज्य के नियंत्रण में व्यापक स्तर पर भारी उद्योगों की स्थापना के साथ साथ कृषि उत्पादन में वृद्धि

2. पॉल एच. क्लाइड बर्टन एफ बीकर्स, दि फार ईस्ट पांचवां संस्करण प्रिंटस हाल, नई दिल्ली 1974, पृ. 445

3. पूर्वोक्त 446।

के प्रयास किये गये। किन्तु व्यक्तिगत कृषि से सहकारी वृद्धि की नीति का अनुसरण करने पर चीन को गम्भीर खाद्य संकट का सामना करना पड़ा। 1953 के प्रारम्भ में छोटे छोटे निजी खेतों को सामूहिक फार्मों में बदला गया। 1957 तक कृषि उत्पादन में कोई सुधार नहीं हुआ, खाद्य संकट पर्याप्त बढ़ गया तथा उसके साथ ही सोवियत रूस से मिलने वाली आर्थिक सहायता घटती गई अतः औद्योगिक विकास भी असंभव हो गया। इस प्रकार चीनी शासकों को अर्थ व्यवस्था के सभी पहलुओं पर संकट का सामना करना पड़ा। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य अन्तर्राष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय परिस्थितियाँ भी शंकास्पद थीं। 1953 में चीन की जनगणना के परिणाम चिंताजनक थे जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में न तो कृषि उत्पादन बढ़ा था तथा न ही उद्योगों का विकास हो सका था। इसी समय अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर दो महत्त्वपूर्ण घटनाएं हुईं। सोवियत साम्यवादी दल की 20 वीं कांग्रेस में स्टालिन की आलोचना व निन्दा की गई इसके साथ ही 19 8 में रूस द्वारा हंगरी विद्रोह के दमन ने माओ को चिंतित किया। माओ के विचार से रूस ने विरोध का सामना उचित ढंग से नहीं किया। इसके प्रतिक्रिया स्वरूप चीन में 'हंड्रेड फ्लावर्स आन्दोलन' चलाया गया जिसमें विभिन्न असंतुष्ट वर्गों को अपने विचार प्रकट करने की स्वतन्त्रता दी गई। किन्तु यह आन्दोलन अपेक्षा से अधिक व्यापक तथा गम्भीर रूप धारण कर बैठा। यहाँ तक कि चीन में राजनीतिक सत्ता पर साम्यवादी दल के एकाधिपत्य को चुनौती दी गई। यह विरोध इतना व्यापक था कि मात्र शुद्धिकरण की नीति से दल की एकता को बनाना संभव नहीं था। माओ को पूर्ण विश्वास हो गया कि लोगों में असन्तोष का मूल कारण राज्य का व्यापक नौकर शाही रूप था तथा उसके स्वरूप में परिवर्तन आवश्यक था ताकि व्यक्तिगत हितों में संतुलन स्थापित हो सके। इतना ही नहीं माओ को यह भी विश्वास हो गया कि आर्थिक दृष्टि से केन्द्रीय कृत, नियोजित तथा पूँजी प्रधान अर्थ व्यवस्था का नगरों पर आधरित रूसी मॉडल चीन के लिये उपयुक्त नहीं था।[4] साथ ही माओ इस तथ्य से भी प्रभावित हुआ कि हंड्रेड फ्लावर्स आन्दोलन के दौरान चीन की रूस पर निर्भरता की भी कटु आलोचना की गई थी। इस प्रकार चीन की आर्थिक समस्याओं का समाधान आत्मनिर्भर चीनी ढंग से करने के उद्देश्य से जनता में नई चेतना भरने के लिये साम्यवादी दल के नेता माओ ने एक नवीन रचनात्मक कार्यक्रम 'महान् प्रगति का प्रयास' की 1958 में घोषणा की। जिसका अर्थ था कि न्यूनतम समय में अधिकतम आर्थिक लक्ष्यों को प्राप्त किया जाए। " साम्यवादी चीन की महान् प्रगति का प्रयास तथा कम्यून व्यवस्था पूर्णतः माओवादी व्यापक आर्थिक प्रयोग थे। जिसका उद्देश्य लाखों चीनियों को सक्रिय करना, पूँजी तथा तकनीक के स्थान पर मानव शक्ति का प्रयोग करना, कृषि तथा उद्योगों की प्रगति के लिये राजनीतिक तथा सैद्धान्तिक प्रेरक प्रस्तुत करना तथा चीन को कुछ ही वर्षों में उत्कृष्टतम आधुनिक आर्थिक शक्ति बनाना था।[5]

तथापि महान् प्रगति का प्रयास असफल रहा। इसकी आंशिक जिम्मेदारी नेताओं की अवास्तविकता महत्त्वकांक्षाएं तथा अंशतः बाढ़, सूखा तथा कृषि की असफलता जैसी प्राकृतिक विपदाएं थीं। कम्यून एक ग्रामीण प्रशासनिक इकाई थी जिसके अन्तर्गत 10,000

4. रैंड ग्रे संपादक, माडर्न चाइना, मर्च फार ए पोलीटिकल फॉर्म (आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस, लंदन 1969) ग्रिफ्थ्स, रैंड ग्रे, पृ. 354।

5. आई मुंग एन मार्क्सिस्ट नुंगस कल्चरल रिवोलुशन (सीएटल, यू. एस. ए. 1972) पृ. 5।

एकड़ भूमि तथा 5000 परिवारों को रखा गया। 1958 तक कुल 26000 इस प्रकार के कम्यून बनाये गयें। प्रत्येक कम्यून में एक उत्पादक संघ बनाया गया। इस प्रकार ग्रामीण मानव शक्ति को संगठित कर अर्थ व्यवस्था में नवसंचार करने का प्रयास किया गया।[6] किन्तु यह जनजागरण कुछ ही समय के लिये रह सका और शीघ्र ही उत्पादन घट गया। चीनी नेताओं ने प्रकटतः यद्यपि अपनी असफलताओं को नहीं स्वीकारा तो भी साम्यवादी दल में इसे लेकर असंतोष उत्पन्न हो गया। प्रगति के महान् प्रयास तथा कम्यूनों की असफलता ने कई चीनी नेताओं का माओ पर से विश्वास डिगा दिया तथा यह असत्य हो गया कि माओ कोई गल्ती नहीं कर सकता।[7] दल में अंतर्द्वंद प्रारम्भ हुआ तथापि शीर्षस्थ नेताओं ने माओ का समर्थन किया। माओ ने विरोधी सुरक्षा मन्त्री तेंग को अपदस्थ कर दिया तथा निष्ठावान लिन पिआओ को सुरक्षा मन्त्री बनाया गया। 1958 में माओ ने जनवादी गणराज्य के राष्ट्रपति पद से त्यागपत्र देने की घोषणा की। इस निर्णय का मूल उद्देश्य माओ द्वारा अपना संपूर्ण समय साम्यवादी दल को मजबूत बनाने में लगाना था। चीनी साम्यवादी दल में माओ की लोकप्रियता को पर्याप्त धक्का पहुँचा। राष्ट्रीय राजनीति के समान अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी चीनी नेताओं को पराजय का सामना करना पड़ा। सोवियत रूस के साथ सम्बन्ध निरन्तर बिगड़ते गये, इंडोनेशिया में चीनी समर्थक साम्यवादी दल द्वारा प्रेरित क्रान्ति असफल रही तथा साम्यवादी चीनी कूटनीतिज्ञों को निष्कासित कर दिया गया। इसी प्रकार का विरोध चीन के कई मित्र अफ्रीकी देशों को भी करना पड़ा। इनके परिणामस्वरूप ल्यू शाओ ची तथा तेंग हसिआओ पिंग ने माओ की उग्र नीतियों का विरोध करना प्रारम्भ किया। ऊपरी तौर पर माओ दर्शन का समर्थन करते हुए उन्होंने कुछ उदार नीतियों का अनुसरण करना प्रारम्भ किया जैसे कृषकों को छोटे निजी खेत प्रदान किये, सीमित उन्मुक्त बाजार की सुविधाएँ दीं तथा उत्पादन की वृद्धि के लिये निजी प्रेरक दिये गये।[8]

साँस्कृतिक क्रान्ति :

1965 तक इन प्रयासों से कुछ सीमा तक चीन की आर्थिक स्थिति में सुधार हुए। 1965 में वियतनाम में अमेरिकी दबाव बढ़ने के साथ ही चीन में कुछ सूत्रों ने अमरिका का सामना करने के लिये रूस के साथ सम्बन्धों को सुधार कर अमेरिका के विरुद्ध संयुक्त मोर्चा बनाने पर भी बल दिया जो माओ की आत्मनिर्भरता की उग्र नीति के विपरीत था। इसी समय सेना में भी कुछ अधिकारियों ने साम्यवादी दल की परम्परागत गुरिल्ला युद्ध शैली को युद्ध के आधुनिक परिष्कृति रूप के सम्मुख अपर्याप्त कहना प्रारम्भ किया। माओ तथा उसके समर्थकों के लिये 1960 से 65 के बीच की ये सब गतिविधियाँ रूस व पूर्वी यूरोप में व्याप्त बुर्जुआ प्रतिक्रियावाद में समान थी जो पूँजीवाद की ओर झुकाव को इंगित करती थी। ये माओ के शाश्वत क्रान्ति के सिद्धान्त के विपरीत थी। साम्यवादी दल में अपने विरोध को समाप्त करने के लिये माओ को दल से बाहर किसी सुदृढ़ आधार की आवश्यकता थी जो उसे निष्ठावान सुरक्षा मन्त्री लिन पिआओ से प्राप्त हुआ। उसने 1959 से सेना को माओ

6. पॉल एच क्लाइड। वर्टन एफ वी अर्स—पूर्वोत्तर पृ. 452।
7. ताई सु ग एन पूर्वोक्त पृ. 6।
8. पूर्वोक्त पृ.

के विचारों से आपूरित कर उसे आदर्श माओ संगठन बना दिया था। 1965 तक माओ ने यह अनुभव किया कि चीनी साम्यवादी दल उसके नियन्त्रण से निकल गया है तथा उसे सन्देह था कि सम्पूर्ण चीनी साम्यवादी दल संशोधनवादी आकर्षणों का शिकार बन गया है। वे लोग माओ की मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहे थे जिसके पश्चात् वे चीन में माओ विरोधी अभियान प्रारम्भ कर अन्ततः रूस के ख्रुश्चेव जैसे संशोधनवाद की स्थापना करेंगे।[9] सितम्बर 1965 में कई महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय मामलों पर चीनी साम्यवादी दल की एक गुप्त मीटिंग में माओ का पक्ष अल्पमत में था तथा संशोधनवादी बहुमत में थे।[10] परिणामतः कुंठित माओ ने निष्ठावान लिनपियाओ तथा उसकी सेना की सहायता से संपूर्ण दल के पुर्नगठन का श्री गणेश किया। इस संपूर्ण प्रक्रिया को सांस्कृतिक क्रान्ति की संज्ञा दी गई, इसका श्री गणेश चीन की जनवादी मुक्ति सेना ने एक लघु माओ पुस्तिका का प्रकाशन कर के किया जो बाद में सांस्कृतिक क्रान्ति का मूल आधार बन गई। वस्तुत. यह क्रान्ति की आड़ में अल्पमत वाले माओ समर्थकों तथा. तथाकथित संशोधनवादियों के मध्य सत्ता का संघर्ष था।.इस क्रान्ति का दोहरा उद्देश्य था प्रथमतः उस साम्यवादी दल के संपूर्ण संगठन को समाप्त करना था जिस पर संशोधनवादी नेताओं का अधिकार हो गया था तथा द्वितीय साम्यवादी दल-के संपूर्ण संगठन को निष्ठावान माओ समर्थकों से भर कर उसे "क्रान्तिकारी माओवादियों का संगठन बनाना था[11]

प्रेक्षकों द्वारा चीन की सांस्कृतिक क्रान्ति को चीन में 29 वर्ष के साम्यवादी शासन का सर्वाधिक व्यापक राजनीतिक शुद्धिकरण माना गया है। इस प्रक्रिया के लिए माओ को दल के बाहर संगठन का निर्माण करना पड़ा क्योंकि स्वयं दल को शुद्ध बनाना था। अतः माओं ने जनता में से लाल सैनिकों (रैड गार्डस) को भर्ती किया। ये अधिकांशतः स्कूलों में पढने वाले लड़के व लड़कियां थीं जिन्होंने गैर दलीय नागरिकों के नेतृत्व में आन्दोलन प्रारम्भ किया। जिन्होंने दलीय सत्ताधिकारियों का विरोध करना,प्रारम्भ किया। उन्होंने माओं को आश्वासन दिया कि वे सांस्कृतिक क्रान्ति के उद्देश्य को प्राप्त करके रहेंगे तथा क्रान्ति के उग्र अधिकारी बनेंगे। उन्होंने सम्पूर्ण देश में दल तथा सरकार के सभी स्तर के पदाधिकारियों पर प्रहार किया, माओ विरोधियों को संशोधनवादी, क्रान्ति विरोधी, व पूंजीवादी समर्थक कहकर आलोचना की। माओं तथा उसकी उग्र सांस्कृतिक क्रान्ति की प्रशंसा की, स्कूलों, अजायबघरों, पुस्तकालयों तथा निजी घरों में जबर्दस्ती प्रवेश कर बड़े पैमाने पर अनुपम वस्तुओं तथा साहित्य प्राचीन ग्रन्थों को प्रतिक्रियावादियों तथा बुर्जुआ लेखकों की रचनाएं कहकर नष्ट किया।[12]

किन्तु यह सांस्कृतिक क्रान्ति की भी कुछ अपनी मूलभूत कमजोरियां थीं जिनकी वजह से ये वह चमत्कारिक प्रभाव नहीं दिखला सकी जिनकी अपेक्षा की गयी थी। सर्वप्रथम सेना जिनके बल पर इस क्रान्ति का आयोजन किया गया था सांस्कृतिक क्रान्ति के प्रश्न पर एक मत नहीं थी। ऊपरी तौर पर सुरक्षा मन्त्री के नेतृत्व में संगठित होने के बावजूद सेना क्षेत्रीय निष्ठाओं में बंटी हुई थी। इसके अतिरिक्त जिस युवा वर्ग का आवाहन

9. पूर्वोक्त पृ. 15।
10. पूर्वोक्त पृ. 17।
11. पूर्वोक्त पृ. 102।
12. पूर्वोक्त पृ. 23।

माओ ने संशोधनवादी दल को सुधार करने के लिए किया था वे माओ की आशाओं के अनुकूल नहीं थे। इसके विपरीत वे भ्रष्ट थे तथा आंशिक शक्ति मिलते ही उसका दुरुपयोग करने को व्यग्र हो गए। उनका उद्देश्य माओ की महत्वाकांक्षाओं का समतावादी समाज स्थापित करना न होकर शक्ति का तत्कालिक स्तर पर उपभोग करना था। वे साम्यवादी दल के पुराने संगठन को तो बनाये रखने में सफल हुए किन्तु उसके स्थान पर साम्यवादी दल के लिए एक वैकल्पिक संगठन प्रदान करने में असमर्थ रहे। शीघ्र ही ये लाल सैनिक विभिन्न गुटों में विभाजित होकर परस्पर सत्ता के लिए संघर्ष करने लगे। परिणामतः स्थान स्थान पर सेना का हस्तक्षेप बढ़ने लगा। उग्र क्रान्तिकारियों ने सेना का विरोध करना प्रारम्भ किया किन्तु लिनपिआओ तथा माओ जानते थे कि चीन को बढ़ती हुई अराजकता की स्थिति से सेना ही बचा सकती थी जो अपेक्षाकृत अनुशासित तथा संगठित थी। 1967 के मध्य में माओ तथा लिन ने चीन में शान्ति व्यवस्था बनाए रखने का दायित्व सेना को सौंपा।[13] अतः बाध्य होकर माओ को उग्र क्रान्तिकारी गुट का दमन करना पड़ा जो उत्तरोत्तर सेना के विरुद्ध होता जा रहा था। तत्पश्चात चाउएनलाई के नेतृत्व में उदारवादियों का प्रभाव बढ़ता गया। 1968 के उत्तरार्ध में माओ ने क्रान्ति के अग्रदूत लाल सैनिकों का दमन प्रारम्भ किया, उन पर श्रमिकों, कृषकों तथा सैनिकों को निराश व रुष्ट करने का लांछन लगाया गया[14] तथा अन्ततः उन्हें अराजकता फैलाने वाले समाज विरोधी तत्व कहा गया। रैड गार्ड्स् अथवा लाल सैनिकों से माओ द्वारा प्रतिपादित नवीन शिक्षापद्धति के अन्तर्गत स्कूलों में वापिस जाने को कहा गया। अधिक उग्र लाल रक्षकों को सुदूर तथा सीमांत प्रदेशों में खानों, फैक्ट्रियों, कम्यून तथा फार्मों में काम करने के लिए भेज दिया गया।[15] इसी बीच अक्टूबर 1968 में चीनी साम्यवादी दल की आठवीं केन्द्रीय समिति की बैठक में जिसमें बाहरी लोगों को भी सम्मेलन में सम्मिलित होने का अधिकार दिया गया था ल्यू शोआ ची जो 1958 से चीन के जनवादी गणराज्य का अध्यक्ष था को सभी दलीय तथा राजकीय पदों से अपदस्थ कर दिया गया। ल्यू शाओ ची को सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान प्रमुख संशोधनवादी तथा पूंजीवादी समर्थक की संज्ञा दी गयी थी। इस बैठक में साम्यवादी दल के नवीन संविधान का प्रारूप भी प्रस्तुत किया गया जिसे साम्यवादी दल के प्रस्तावित 7 वें सम्मेलन से पहले व्यापक प्रचार के लिए प्रेषित किया गया। इस प्रारूप के अधिकांश भाग में माओ की प्रसंशा की गई थी उसे मार्क्स तथा लेनिन के पश्चात् महानतम् साम्यवादी विचारक बताया गया जिसने मार्क्सवाद को चीनी परिस्थितियों तथा आवश्यकताओं के अनुरूप ढाला। इसी प्रारूप में लिनपिआओ को माओ का उत्तराधिकारी घोषित किया गया जो माओ की मृत्यु के पश्चात् अथवा अस्वस्थता के कारण पद त्याग करने पर जनवादी गणराज्य का राष्ट्रपति बनने वाला था।

चीनी साम्यवादी दल की नौवीं कांग्रेस :

1 अप्रैल 1969 को, सांस्कृतिक क्रान्ति से उत्पन्न स्थिति पर कुछ नियंत्रण प्राप्त कर लेने के पश्चात् चीनी साम्यवादी दल का पेकिंग में नौवां सम्मेलन बुलाया गया। यह

13. महान् सांस्कृतिक क्रांति संबंधी प्रलेख, यूनियन रिसर्च इंस्टीट्यूट, हांगकांग, 1968 पृ. 463–64।

14. फार ईस्टन इकोनोमिक रिव्यू, हांगकाग, अगस्त, 29, 1968 पृ. 377–78।

15. न्यू चाइना न्यूज एजेंसी 2 तथा 19 नम्बर 1962।

सम्मेलन 1 अप्रैल से 24 अप्रैल 1969 तक चला। 1921 में चीन के साम्यवादी दल के स्थापना से यह उसका नौवां सम्मेलन था तथा 1949 में क्रान्ति की सफलता के पश्चात् यह दूसरा सम्मेलन था। चीनी साम्यवादी दल की राष्ट्रीय कांग्रेस सर्वोच्च संस्था है जो दलीय समिति का निर्वाचन करती है जो दलीय पालिटब्यूरो तथा शासकों का चयन करती है।

चीनी साम्यवादी दल का सम्मेलन दो कारणों से महत्वपूर्ण था। प्रथमतः इसने दल के लिए नवीन संविधान स्वीकार किया तथा द्वितीयतः इसने सांस्कृतिक क्रान्ति से उत्पन्न अस्थिरता की स्थिति को समाप्त करने की सरकारी घोषणा की। कांग्रेस का प्रारम्भ माओ के संक्षिप्त-उद्घाटन भाषण से हुआ जिसके पश्चात् पदाधिकारियों का निर्वाचन किया गया। माओ के साम्यवादी दल का अध्यक्ष सर्वसम्मति से चुना गया, लिन पिआओ उपाध्यक्ष तथा चाऊ एन लाई महासचिव चुने गये। दलीय प्रेसीडियम के उच्च स्तरीय चौदह सदस्यों में माओ तथा लिन पिआओ समेत आठ सदस्य माओ के उग्र समर्थक थे। किन्तु साथ ही वे पर्याप्त मात्रा में उदारवादी भी थे। चुनावों के पश्चात् लिन पिआओ ने सांस्कृतिक क्रान्ति की उत्पत्ति, विकास तथा भविष्य के बारे में जो अपनी रिपोर्ट पढ़ी। उसमें ऐसी कोई चमत्कारिक बात नहीं थी जिसे सांस्कृतिक क्रान्ति का प्रत्यक्ष प्रभाव कहा जा सके। किसी प्रकार के क्रान्तिकारी कृषि सुधारों आदि की चर्चा नहीं की गई। लिन पिआओ की रिपोर्ट के पश्चात् सम्मेलन के प्रतिनिधि विभिन्न समूहों में बंट गए तथा उन्होंने रिपोर्ट तथा दल के प्रस्तावित नवीन संविधान पर चर्चा की तथा लगभग एक पखवाड़े के विचार विमर्श के पश्चात् दल के नवीन संविधान को तथा लिन पिआओ की रिपोर्ट को स्वीकार किया गया। वस्तुतः यह नवीन संविधान पुराने संविधान से बहुत ज्यादा भिन्न नहीं था।[16]

दल का नवीन संविधान :

संक्षेप में दल के नवीन संविधान की विशेषताओं को इस प्रकार वर्णित किया जा सकता है :

(1) चीन के माओ को साम्यवादी जगत में मार्क्स तथा लेनिन के स्तर का चिंतक स्वीकारा गया उसके विचार को "मार्क्स-लेनिन तथा माओ वाद कहा गया तथा उसे चीन की मूलभूत विधि की संज्ञा दी गई। (2) इस संविधान द्वारा लिन पिआओ को, अध्यक्ष माओ की अवकाश प्रान्तीय अथवा मृत्यु के पश्चात् उसका उत्तराधिकारी घोषित किया गया। (3) सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में माओ की शाश्वत क्रान्ति के विचार की पुष्टि की गई। (4) रूस की राष्ट्रीय तथा अन्तराष्ट्रीय स्तर पर संशोधनवादी नीतियों की कटु आलोचना की गई (5) विदेशी मामलों में रूस तथा अमेरिका के निरन्तर विरोध का समर्थन किया गया। (6) दलीय संगठन को अपेक्षाकृत सरल बनाने की व्यवस्था की गई। (7) दल के प्रमुख पदाधिकारियों का चयन प्रजातन्त्रीय विचार विमर्श तथा निर्वाचन द्वारा किये जाने का सुझाव दिया गया (8) दल में नवीनसदस्यों की भर्ती चुनाव के बजाय सिफारिश के आधार पर की जाए तथा कोइ परीक्षा काल नहीं रखा जाए (9) दलीय सदस्यों

16. दल नौवें सम्मेलन को प्रेसीडियम द्वारा प्रेषित प्रेस विज्ञप्ति, 14 अप्रेल 1969, 30 अप्रेल 1969 के पेकिंग रिव्यू में पृ. 42-44।

को निम्न स्तरीय पदाधिकारियों से असहमत होने पर उन्हें प्रत्यक्षतः माओ से शिकायत करने का अधिकार दिया गया।[17]

इस प्रकार प्रत्यक्षतः माओ सांस्कृतिक क्रान्ति के पश्चात् दल पर अपना प्रभुत्व कायम करने में सफल हुआ। जिसका पतन "प्रगति के महान् प्रयास की असफलता" से प्रारम्भ हुआ था। तथापि इस नौवें सम्मेलन में वस्तुतः दल पर्याप्त विभाजित था तथा यद्यपि इस की प्रक्रियाएँ पूर्णतः गोपनीय रखी गई थी तो भी यह माना जाता है कि माओ तथा लिन पिआओ के प्रयासों को पर्याप्त आलोचनाओं तथा शंकाओं का सामना करना पड़ा था। इस प्रकार चीनी साम्यवादी दल का नौवां सम्मेलन न केवल सांस्कृतिक क्रान्ति की उथल पुथल के पश्चात् सामान्य स्थिति की पुनर्स्थापना का प्रयास करने में सफल हुआ अपितु उसने चीन के आगामी राष्ट्राध्यक्ष का नामांकन भी कर दिया जबकि सिद्धान्तः यह निर्णय सर्वोच्च जनवादी कांग्रेस के द्वारा किया जाना चाहिये था। तत्पश्चात चीन ने राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीयस्तर पर अपनी स्थिति व सम्बन्धों को सामान्यीकृत करने की कोशिश की।

सेना की प्रमुख भूमिका :

सांस्कृतिक क्रान्ति जिसने चीन को तीन वर्षों तक आन्दोलित रखा, कहां तक सफल हुई इस बारे में विभिन्न विचार हैं। सरकारी तौर पर इसे महान सफलता घोषित करने के बावजूद वस्तु स्थिति भिन्न थी। साम्यवादी दल को संशोधन वादियों से मुक्त करने के प्रयास में जो शक्ति छीनी गई वह सर्वहारा दल के कार्यकर्ताओं को मिलने के स्थान पर सेना के स्थानीय मुख्यालयों में केन्द्रित हो गई। इस प्रकार सांस्कृतिक क्रान्ति के पश्चात् सेना चीनी राजनीति में अत्यधिक प्रभावशाली कारक बन गई है। साम्यवाद के पिछले दो दशकों में राष्ट्राध्यक्ष माओ को यह दृढ़ विश्वास कि बंदूक शक्ति का स्रोत है।[18] तो सही रहा है किन्तु उसके बाद का यह कथन कि "साम्यवादी दल इस बंदूक पर नियन्त्रण रखता है तथा बंदूक को दल पर नियन्त्रण नहीं करने दिया जाएगा" अब बदल गया है क्योंकि चीन में सांस्कृतिक क्रान्ति के पश्चात् सेना अत्यधिक प्रभावशाली हो गई है। दुर्भाग्यवश इसका प्रारम्भ स्वयं माओ ने दल पर अपना आधिपत्य स्थापित करने के लिये किया था। उदाहरण के लिये दल के नौवें सम्मेलन को अपने भाषण में लिन पिआओ ने सेना को सर्वहारावर्ग की तानाशाही का आधार स्तंभ तथा राज्य का मुख्य अंग कहा था।[19]

1970 तक चीन में राष्ट्रीय स्तर पर सामान्य स्थिति की स्थापना और अधिक सक्रिय प्रयास किये गए। 1964 के पश्चात् संविधान द्वारा स्थापित राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के चुनाव नहीं हुए थे जबकि संविधान के अनुसार उसकी अवधि चार वर्ष है। चुनाव के पश्चात् तृतीय कांग्रेस का एक मात्र अधिवेशन 21 दिसम्बर 1964 से जनवरी 1965 के मध्य हुआ था। 23 अगस्त 1960 से 6 सितम्बर 1970 को साम्यवादी दल की केन्द्रीय समिति की बैठक में यह निर्णय लिया गया कि शीघ्र ही चौथी जनवादी कांग्रेस के निर्वाचन कराये जायेंगे। इस प्रकार सैद्धान्तिक रूप से जनवादी कांग्रेस जो राज्य व्यवस्था का सर्वोच्च अंग है लगभग 6 वर्ष तक निष्क्रिय रही। स्पष्ट है कि वास्तविकता राजनीति में जनवादी कांग्रेस की कोई महत्त्वपूर्ण भूमिका नहीं है वह वस्तुतः निर्णय करने वाली संस्था नहीं है

17. चाइ मुंग एन, पूर्वोक्त, पृ. 75।
18. माओ त्से तुंग, सिलेक्टेड वर्क्स इंटरनेशनल पब्लीशर्स, न्यूयार्क, 1935, खंड प्रथम, पृ. 75।
19. पेकिंग रिव्यू, 30 अप्रेल 1969, पृ. 25।

अपितु चीन के साम्यवादी दल द्वारा लिये गये निर्णयों पर मोहर लगाने वाली संस्था मात्र है। यह भी माना गया था कि चौथी जनवादी कांग्रेस जब भी मिलेगी वह चीन के लिये नवीन संविधान को स्वीकार करेगी। जिस नवीन संविधान के प्रारूप की चर्चा की जा रही थी उसके मूल प्रस्ताव इस प्रकार थे।[20]

1. माओत्से तुंग को पुनः संम्पूर्ण जनवादी राष्ट्रीयताओं का महान् नेता, सर्वहारा वर्ग की अधिनायकता वाले राष्ट्र का अध्यक्ष तथा संपूर्ण राष्ट्र व सेना का सर्वोच्च कमांडर बनाया गया। उसका मनोनीत उत्तराधिकारी लिन पिआओ "सेना का सह कमाण्डर तथा संपूर्ण राष्ट्र का सहायक सर्वोच्च अध्यक्ष" कहा गया है।

2. साम्यवादी चीन में चीनी साम्यवादी दल को सर्वोच्च भूमिका प्रदान की गई अर्थात् सर्वहारा वर्ग की तानाशाही का प्रयोग दल के माध्यम से किया जाएगा जिसका सर्वोच्च अध्यक्ष माओ है (इस प्रकार माओ में राज्य, दल तथा सेना की सर्वोच्च शक्ति निहित है।) राष्ट्र की जनवादी कांग्रेस चीनी साम्यवादी दल की केन्द्रीय समिति के परामर्श पर ही संविधान में संशोधन कर सकती है नवीन संविधान बना सकती है तथा राज्यपरिषद् के प्रधान मन्त्री को नियुक्त अथवा अपदस्थ कर सकती है (1954 का संविधान जनवादी कांग्रेस को संविधान में संशोधन करने का स्वतन्त्र अधिकार देता था तथा प्रधानमन्त्री को राष्ट्र के अध्यक्ष के परामर्श पर नियुक्तियां करने का अधिकार देता था।

3. राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस की अवधि 1954 के संविधान के विपरीत चार से बढ़ा कर पांच कर दी जाए।

4. साम्यवादी चीन को जनवादी गणराज्य के स्थान पर "सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व वाला साम्यवादी राज्य" कहा जाये तथापि प्रत्येक को अपनी योजना के अनुसार कार्य के मूल सिद्धान्त को बनाये रखा जाए।

5. इस प्रस्तावित संविधान में माओ के विचार दर्शन को संपूर्ण राष्ट्र की जनता के सारी कार्यों का निर्देशन सिद्धान्त कहा गया तथा चीन नागरिकों का मूल अधिकार तथा कर्तव्य राष्ट्राध्यक्ष माओ तथा उसके उत्तराधिकारी लिन पिआओ का समर्थन करना है।

6. यह भी प्रस्ताव था कि 1954 के संविधान में प्रतिपादित जनवादी गणराज्य के राष्ट्रपति तथा उप राष्ट्रपति के पद को समाप्त कर दिया जाए तथा प्रधानमन्त्री को ही शासन का सर्वोच्च अधिकारी माना जाए जो कि राज्य परिषद् का अध्यक्ष होता है। (1958 में ल्यू शाओ चीं राष्ट्रपति बनाया गया था (जिसने माओ की सत्ता को चुनौती दी परिणाम स्वरूप सांस्कृतिक क्रांति के दौरान उसे सभी पदों से अपदस्थ किया गया।)

7. सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान चीन के 29 प्रान्तों में जिन क्रान्तिकारी समितियों की स्थापना की गई थी उन्हें प्रान्तीय सरकार का स्थायी अंग बना दिया जाए। इस प्रकार सांस्कृतिक क्रान्ति दौरान सेना की प्रान्तीय समितियों में है जो महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त हो गया था उसे स्थायी स्वरूप प्रदान कर दिया जाए।

जनवरी 1975 में चीन में जिस नवीन संविधान की घोषणा की गई वह बहुत कुछ प्रारूप पर आधारित थी तथापि इस संविधान को घोषित करने में काफी समय लगा।

20. ताई सुंग एन. पूर्वोक्त, पृ. 96।

सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान चीनी राज्य व्यवस्था के मूल स्तम्भ साम्यवादी दल को जो आघात पहुँचा उसके पश्चात् उसका पुनंगठन उतनी तीव्रता से नहीं हो सका जितना चीनी नेता चाहते थे। सेना के बढ़े हुए प्रभाव को रोकना कठिन हो गया। तथा एक बार फिर माम्रो द्वारा मनोनीति उत्तराधिकारी लिन पिम्राम्रो ने स्वयं माम्रो की सत्ता को चुनौती देना प्रारम्भ किया यह चुनौती ल्यूशाम्रो ची की चुनौती से भी गम्भीर थी क्योंकि उसे सेना का समर्थन प्राप्त था। फलतः चीन की चौथी जनवादी कांग्रेस के चुनाव का उत्तरोत्तर टलते गए तथा 1975 में 11 वर्ष के पश्चात् जनवादी कांग्रेस के चुनाव हुए तथा दस वर्ष में पहली बार उसका अधिवेशन जनवरी के प्रथम सप्ताह में हुआ। 19 जनवरी को चीन में नवीन संविधान की घोषणा की गई इसके मूल प्रावधान इस प्रकार थे :—

1. राष्ट्रपति का पद समाप्त कर दिया गया। इस प्रकार लिन पिम्राम्रो जिसे माम्रो के उत्तराधिकारी के रूप में मनोनीति किया गया था पर माम्रो का विरोध करने, उसके विरुद्ध क्रान्ति करने तथा उसकी सत्ता को चुनौती देने का आरोप लगाया गया। यह भी आरोप लगाया गया कि उसने माम्रो के विचार दर्शन का "कि दल बंदूक पर नियन्त्रण रखता है" का विरोध किया था तथा दल पर सेना का नियन्त्रण रखने की कोशिश की थी

2. नवीन संविधान के अन्तर्गत सशस्त्र सेनाओं को साम्यवादी दल के अध्यक्ष माम्रो के नियन्त्रण में रखा गया। इस प्रकार 'दल शक्ति व सेना का नियन्त्रण करता है इस विचार को क्रियान्वित किया गया।

3. माम्रो के दर्शन को चीन की राजनीतिक व्यवस्था का मूल आधार घोषित किया गया तथा प्रत्येक सरकारी अधिकारी के लिये उसे सम्भावना तथा विश्वास करना आवश्यक बना दिया गया। सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान बनाई गई क्रान्तिकारी समितियों को प्रान्तीय सरकारों के संगठन का अंग स्वीकारा गया। उत्पादन के क्षेत्र में नवीन संविधान में थोड़ा उदार दृष्टिकोण अपनाया गया है तथा कम्यून के सदस्यों को निजी खेत रखने की स्वतन्त्रता दी गई बशर्ते उससे कम्यून के प्रति उनके कार्य में किसी प्रकार की कमी नहीं आए। इस प्रकार कुछ सीमा तथा निजी प्रेरकों को स्वीकारा गया।

इस नवीन संविधान में यद्यपि माम्रो की स्थिति को प्रकटतः मजबूत बनाया गया था तथा उसके विरोध के आधार को समाप्त कर दिया गया था किन्तु प्रेस रिपोर्ट के अनुसार जनवादी कांग्रेस के सम्मेलन अथवा साम्यवादी दल की केन्द्रीय समिति की बैठक में माम्रो उपस्थिति नहीं था।

चौथी जनवादी कांग्रेस के अधिवेशन में अन्य कई महत्त्वपूर्ण निर्णय भी लिये गये पिछले दिनों से रोगी चले आ रहे चाउ एन लाई को पुनः प्रधानमन्त्री पद पर चुन लिया गया जो राष्ट्रपति पद की अनुपस्थिति में राज्य व्यवस्था का सर्वोच्च पद बन गया तथा लिन पिम्रम्रो से रिक्त सुरक्षा मन्त्री के पद पर चाउ के विश्वस्त सहयोगी चेइन पिंग को निर्वाचित किया गया।

इसके अतिरिक्त साम्यवादी दल की केन्द्रीय समिति की बैठक में चाऊ के अन्य पुराने सहयोगी तथा प्रथम उप प्रधान मन्त्री तेंग हसिम्रागो पिंग को साम्यवादी दल का उपाध्यक्ष तथा दल के नौ सदस्यीय पॉलिटब्यूरो का सदस्य बनाया गया अर्थात् दलीय नेतृत्व में उसे

माओ के बाद उसे दूसरा स्थान दिया गया। तेंग हसिआओ पिंग ने "प्रगति के महान् प्रयास की असफलता" के पश्चात् माओ की उग्र क्रान्तिकारी नीति का विरोध ल्यू शाओ ची के साथ करना प्रारम्भ किया था व ल्यू शाओ ची को सभी पदों से हटा दिया गया था। तथापि 1975 में तेंग हसिआओ पिंग को न केवल पुनः दल द्वारा अपना लिया गया अपितु उसे पर्याप्त उच्च स्थान भी प्रदान किया गया। प्रकटतः यह कहा गया कि चूँकि तेंग हसिआओ पिंग ने अपनी पहली गल्तियों को सुधार लिया था अतः दलीय नेता माओ ने उसे क्षमा कर दिया था। प्रथम उपप्रधान मन्त्री होने के नाते तेंग चाऊ की दीर्घ अस्वस्थयता के दौरान प्रधानमन्त्री के सभी कार्यों को पूरा कर रहा था। तथा चीनी प्रेक्षकों का यह विचार था कि चाउ एन लाई की मृत्यु के पश्चात् वह चीनी गणराज्य का प्रधानमन्त्री बनेगा इस प्रकार चीनी राजनीति में माओ तथा उसकी उग्र क्रान्तिकारी पत्नी मैडम चिआग चिंग जो सांस्कृतिक क्रान्ति के पश्चात् अत्यअन्त महत्त्वपूर्ण बन गई थी के स्थान पर चाउ एन लाई तथा वेंग हसिआओ पिंग के नेतृत्व में उदारवादियों का प्रभाव बढ़ रहा था।

किन्तु 1976 में चाउ एन लाई की मृत्यु ने सत्ता के लिये नवीन संघर्ष उत्पन्न कर दिया। चाउ एन लाई की मृत्यु के पश्चात् आशा के प्रतिकूल प्रधानमन्त्री तेंग हसिआओ को दलीय अध्यक्ष माओ ने प्रधानमन्त्री पद पर नियुक्त नहीं किया तथा उसके स्थान पर हुआ कुओं पेंग को कार्यकारी प्रधानमन्त्री के पद पर नियुक्त किया गया। इससे तेंग हसिआओ पिंग का भविष्य शंकापूर्ण बन गया। इससे साम्यवादी दल के उदारपक्षी नेता चिंतित हो उठे उन्हें डर था कि दलीय अध्यक्ष माओ ने फिर मैडम चिआग चिंग तथा उग्रवादियों केप्रभाव में आजाएगा। तेंग के विरुद्ध सबसे गम्भीर आरोप यही था कि उस पर सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान पूँजीवादी समर्थक तथा संशोधनवादी होंने का आरोप लगाया गया था यद्यपि चाउ एन लाई के संरक्षण में उसे पुनः दल में ले लिया गया था' किन्तु चाउ की मृत्यु के पश्चात् उग्रवादियों को बदला लेने का मौका मिल गया। चाउ एन लाई की मृत्यु पर जब संपूर्ण राष्ट्र ने उसे राष्ट्र के महान् नेता के रूप में श्रद्धाजंली अर्पित की उदारवादियों ने अपने प्रभाव को प्रदर्शित करने के लिये बड़े पैमाने पर प्रदर्शन आयोजित किये। ऐसी स्थिति में दल के लिये अनिश्चय की स्थिति गम्भीर थी अतः उसे समाप्त करते हुए माओ ने हुआ कुओ पैंग को प्रधानमन्त्री पद पर नियुक्त कर दिया तथा तेंग को सभी महत्त्वपूर्ण पदों से अपदस्थ कर दिया इस प्रकार ल्यू शाओ ची व लिन पिआओ के पश्चात् एक अन्य महत्त्वपूर्ण नेता का पतन हुआ। ऊपरी तौर पर साम्यवादी दल की सर्वोच्च शक्ति माओत्से तुंग में निहित है। 1946 की क्रान्ति के पश्चात् कुछ समय को छोड़ कर सपूर्ण महत्त्वपूर्ण निर्णय माओ तथा उसके सहयोगियों के द्वारा लिये गये हैं। तथा जिस नेता ने माओ का विरोध किया उसका पतन हुआ है। अपनी इच्छा से प्रधानमन्त्री का चयन करके एक बार माओ ने फिर यह सिद्ध कर दिया है कि माओ अपनी वृद्धावस्था तथा तरुणावस्था के बावजूद साम्यवादी दल पर अपना सुदृढ़ नियन्त्रण बनाये हुए हैं इस प्रकार चीन में शक्ति का केन्द्रीयकरण साम्यवादी दल में ही नहीं उसने नेता में है। तथा सैद्धान्तिक संविधान द्वारा प्रतिपादित सभी संस्थाएँ जनवादी कांग्रेस व राज्यपरिषद् औपचारिक संस्थाएँ है जो दल द्वारा लिये गये निर्णयों को स्वीकृति मात्र देती हैं। इस प्रकार चीन के संविधान व राजनीति में सिद्धान्त व व्यवहार में व्यापक अन्तर है। सिद्धान्त जनवादी कांग्रेस सर्वोच्च राष्ट्रीय संस्थाएँ है जबकि व्यवहार में

ग्यारह वर्ष तक देश का शासन उसकी अनुपस्थिति में चलता रहा है। चीन की राजनीति का केन्द्र बिन्दु चीनी साम्यवादी दल, उसका अध्यक्ष माओ तथा उसके सहयोगी रहे हैं तथा इस दल का संघर्ष, उत्थान तथा पतन का इतिहास चीन की राजनीति का इतिहास रहा है। किसी संस्था या ढांचे का संस्थाकरण नहीं हुआ है किसी पद की महत्ता इस बात पर निर्भर करती है उससे संबंधित व्यक्ति कौन है। इसके बावजूद चीन का 1970 के पश्चात् एक प्रभावशाली शक्ति के रूप में उदय हुआ है। चीनी राजनीति के प्रेक्षकों का विचार है कि चीन के साम्यवादी दल में सत्ता के लिये संघर्ष विद्मान हो तथा वृद्ध व रुग्ण माओ की मृत्यु के साथ चीन की राजनीति में एक बार फिर उथेल-पुथेल प्रारम्भ होगी।

अध्याय 10
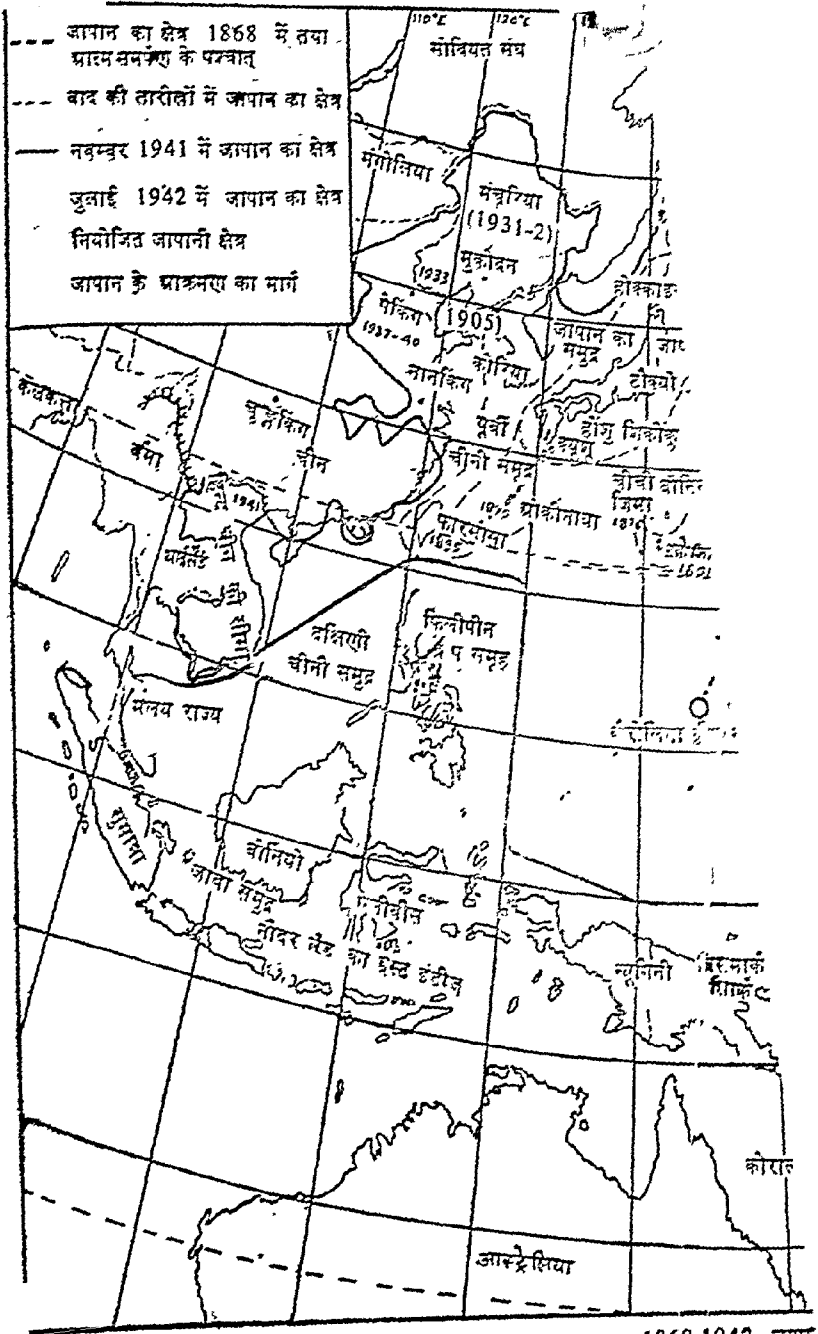
जापान की शासन प्रणाली सांस्कृतिक एवं भौतिक पृष्ठभूमि

कई मामलों में चीन, जापान व संयुक्त राज्य अमेरिका एक राजनीतिक त्रिकोण का निर्माण करते हैं। अमेरिका व जापान में कई विशेषताएँ समान रूप से पाई जाती हैं जैसे—आधुनिकता, संवैधानिकता, राष्ट्रभक्ति तथा स्थायित्व में विशेषताएँ चीन में नहीं है। कई विशेषताएँ अमेरिका व चीन में समान रूप से पाई जाती हैं। उनमें ये उल्लेखनीय हैं सरकार के प्रति सम्मान की भावना का अभाव, दैनिक सामाजिक मामलों में प्रजातन्त्रीयता, धर्म निरपेक्षता तथा उदार सामाजिक समानता के साथ आर्थिक स्तरीकरण का सम्मिश्रण। ये विशेषताएँ जापान में नहीं पाई जाती हैं। कुछ समान विशेषताएँ जापान व चीन में पाई जाती है जिनका अमेरिका में अभाव है। जैसे कन्फ्यूशियस वाद की नैतिकता, बुद्ध धर्म से प्राप्त धरोहर, बौद्धिक किन्तु सामान्य चेतना के सिद्धान्त तथा दैनिक जीवन में प्रतिष्ठा सम्बन्धी कारकों का व्यवस्थित स्वरूप आदि हैं।

इस प्रकार की त्रिकोणात्मक अवधारणा का यह लाभ है कि इसके माध्यम से हम जापान व चीन को मात्र पूर्वी देशों के नाम से संबोधित करने के प्रचलित प्रयास के स्थान पर, जापानी विशेषताओं की अधिक प्रशंसा कर सकते हैं अथवा चीन के पिछड़ेपन की तुलना में जापान व अमेरिका को मात्र प्रगतिशील देश कह कर उनमें साम्यता स्थापित नहीं कर सकते हैं। भाषा के संदर्भ में भी यह त्रिकोणात्मक स्थिति विद्यमान है। स्वयं भाषा जटिल अंतर्वक्रताओं से सरल आकार की ओर विकसित हुई है, चीन भाषा में भी सरल आकारों का प्रयोग किया जाता है। इन अर्थों में चीनी व आंग्ल भाषा के मध्य साम्यता है। तथापि क्रियाओं के निर्माण में आंग्ल तथा जापानी भाषाएँ साम्यता रखती हैं। मानचित्रों के प्रयोग के संदर्भ में चीनी व जापानी भाषा, आंग्ल भाषा से कहीं अधिक साम्यता रखतीं हैं। अमेरिकियों द्वारा जापान को समझने के संदर्भ में ये सूचनाएँ क्या महत्व रखती हैं ?

साधारणतया इसका अर्थ यही है कि अमेरिकी चीन के बारे में जो स्थिर धारणाएँ रखते हैं उनको जापान पर लागू नही किया जा सकता है। तथा जापान के राष्ट्रीय चरित्र व राजनीति को सर्वश्रेष्ठ ढंग से समझने के लिये अमेरिकियों को जापान के संदर्भ में ज्ञान प्रत्यक्षतः शान्तिपूर्ण ढंग से, तर्क संगत रूप में तथा प्राथमिक सूत्रों से प्राप्त करना चाहिये। जापान की अत्यधिक रहस्यमय दिखने वाली विशेषता भी तर्क संगत तथा आग्रहपूर्ण स्पष्टीकरणों के साथ प्रस्तुत करने पर समझ में आ जाती है। जापान की भौतिक पृष्ठ भूमि इसकी चीन से अनेक भिन्नताओं को स्पष्ट कर देती हैं। सांस्कृतिक पृष्ठभूमि इन भिन्नताओं पर और अधिक प्रकाश डालती है ? वर्तमान के जापान की सरकार को समझने

का प्रयास करने से पहले हमें जापान की उन विशेषताओं को समझना चाहिये जो उसे किसी भी अन्य देश की तुलना में अधिक अनूठा बना देती हैं।

सम्राट के बारे में कल्प कथा:

सैद्धान्तिक अर्थों में जापान के बारे में हमारे काल में सर्वाधिक उल्लेखनीय विशेषता इसमें प्रचलित सम्राट के बारे में कल्प कथा है। इस कल्प कथा की व्याख्या भिन्न प्रकार से, की गई है। इन व्याख्याओं में दो समूह विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं एक विदेशियों द्वारा की जाने वाली व्याख्या तथा दूसरी जापानियों द्वारा की जाने वाली व्याख्या। इन दो समूहों में भी किसी प्रकार की मतैक्यता का अभाव है। जो अमेरिकी दस वर्ष पहले जापान के सम्राट की परम्परा को कुरूप अथवा सैन्यवाद के लिये अंधविश्वास पूर्ण आधार मानते थे वे ही अब इसे संवैधानिक नियन्त्रणों से जब इन के पश्चात् जापान के प्रजातन्त्रीयकरण के लिये उपयोगी मानते हैं। रूसी प्रचार में जापान के सम्राट को सामंतवाद तथा फासीवाद का प्रतीक माना जाता था तथा उन्हें अभी भी ऐसे कोई कारण नजर नहीं आते जिसके आधार पर यह विचार बदला जा सके। यदि दस वर्ष पूर्व जापान के सम्राट की तुलना एडोल्फ हिटलर से करना भूल थी तो दस वर्ष पश्चात् उसकी तुलना जार्ज चतुर्थ से करना भी भूल है। जापान के सम्राट की स्थिति अनूठी है। वर्तमान विश्व में राजनीतिक सत्ता को धारण करने वाला पाषाण काल का वह एक मात्र उत्तराधिकारी राजा है जिसके वंशज सीधे नवपाषाण काल से चले आ रहे हैं। (अथवा जैसा कुछ जापानी दावा करते हैं) तथा यह सम्राट जिस देश पर शासन करता है वह संभवतया भारत को छोड़ने के पश्चात् ऐसा देश है जिस अपना विशिष्ट राष्ट्रीय पंथ (Cult) हैं जो रोमन राज्य के राज्य धर्म को ईसाई द्वारा अपदस्थ किये जाने के पश्चात् किसी भी पश्चिमी राज्य में नहीं पाया है। स्याम देश के राजा की धार्मिक स्थिति की तुलना जापान के सम्राट से की जा सकती है किन्तु वह भी जापान के सम्राट के निष्कलंक वंशावली की कल्प कथा से तुलना नहीं कर सकता है। विश्व के अन्य राजाओं में वह निरन्तरता नहीं पाई जाती है जो जापान के सम्राट में पाई जाती है। यह निरन्तरता जापानी जनभ्रान्त तथा परम्परा में सम्राट को अत्यधिक महत्व प्रदान कर और बढ़ा दी जाती हैं।

निरन्तरता की यह भावना जापान को स्वयं अपने इतिहास से प्राप्त होती है। जापान के इतिहास में निहित अच्छे व बुरे दोनों ही कालों में सर्वदा पारिवारिक एकता की भावना तथा राज्य स्तर पर सम्राट के प्रतीक में राष्ट्रभक्ति की भावना को प्रमुख हाथ रहा है। चाहे इस संदर्भ में सम्राट की भूमिका कुछ भी रही हो।

कुछ बाधाओं के बावजूद चाहे पश्चिमी सूत्रों द्वारा स्थापित तथ्यों अथवा जापान परम्परा द्वारा प्रस्तुत कल्पनाशील पौराणिक गाथा के आधार पर देखा जाये तो जापान की राजनीतिक कथा एतिहासिक निरन्तरता की गहरी छाप छोड़ती है। कुछ अर्थों में यह निरन्तरता एक महान् संगीत की लय के समान अथवा एक प्रतिष्ठित चित्रकारी के समान लगती है। इसकी आंतरिक सामंजस्यता तर्क संगत होने से अधिक कलात्मक है। यह संवेगों पर जो प्रभाव डालती है वह एक महान् कलात्मक रचना द्वारा डाले जाने वाले प्रभाव के समान है। इस प्रकार सरकार के प्रति सामान्य अमेरिकी विचारों की तुलना में धर्म की संस्थागत विशेषताओं के अधिक निकट हैं।

3 मई 1947 के पश्चात् से संवैधानिक भाषा में सम्राट राज्य तथा जनता की एकता का प्रतीक हैं, जो अपनी स्थिति उस जनता की इच्छा से प्राप्त करता है जिसमें संप्रभु

शक्ति निहित करती है। इस कथन के प्रथम अंश से प्रायः सभी जापानी सहमत है। किन्तु जहाँ तक दूसरे अंश का प्रश्न है यह अनेकों नवीन संविधानों के समान एक विदेशी विचार है जिसके बारे में कई जापानी संदेह रखते हैं। सम्प्रभुता की निश्चित स्थिति अनिवार्यतः कानूनी रूप से ही गलत नहीं है अपितु यह जापान के सोचने के तरीके के अनुसार शायद अनावश्यक जापान के स्पष्ट लिखित संविधान के बावजूद सम्राट के लिये अभी प्रचलित पद तीनो है (जिसका अर्थ स्वर्ग का संप्रभु होता है।)

1 जनवरी 1946 को सम्राट ने इस विश्वास का खंडन किया कि सम्राट का पद दैवीय आज्ञा पर आधारित था। निस्सदेह बहुत कम शिक्षित जापानी सम्राट को ईश्वर मानते होंगे। तथापि सम्राट के बारे में, शाही घोषणा के ये शब्द भी सत्य हैं कि "हमारे व हमारी जनता के मध्य संबन्ध परस्पर विश्वास तथा स्नेह पर आधारित रहे हैं। वे मात्र पौराणिक गाथाओं व् कल्प कथाओं पर आश्रित नहीं है।" यह शाही घोषणा पूर्णतः उस विश्वास तथा स्नेह की पुष्टि करती है जिसे वर्तमान सम्राट के पितामह मेयजी (1868-1912) अपनी जनता से प्राप्त करने में सफल हुए थे। यह विश्वास पूर्ण स्नेह इतना शक्तिशाली कारण रहा है कि जापान का सम्राट हिरोहितों इतिहास के सर्वाधिक विशिष्ठ अवसर पर वैयक्तिक रूप से द्वितीय महायुद्ध में जापान की नागरिक सैनिक तथा विशेष रूप से नो सेना का ध्यान रखते हुए युद्ध व शांति में से-शांति की स्थापना में सफल रहा। 14 अगस्त 1945 को शाही परामर्श दाता के सम्मेलन के सम्मुख हिरोहितों ने कहा- "मैं अब इस देश की जनता को और अधिक युद्ध से पीड़ित होते हुए नहीं देख सकता-अपने पूर्वजों तथा अपने लोगों पर असहनीय दुखों को झेलने के पश्चात् अब मैं वह करना चाहता हूँ जिसका निश्चय मैंने बहुत पहले कर लिया है।" इस घोषणा के बाद अपने शासन काल के 20 वें वर्ष में उसने आत्म समर्पण कर दिया। उसका समर्पण अणु बम का राजनीतिक प्रत्युत्तर था। अमेरिका युद्ध जीत सका क्योंकि हिरोशिमा व नागासाकी पर बम डाल कर अमेरिका जो कुछ करना चाहता था उसको क्रियान्वित करने की पूर्ण सत्ता सम्राट के हाथ में थी। --वस्तुतः यह पूर्णतः चित्रित विरोधाभास सा प्रतीत होता है कि मानवीय इतिहास के नवीनतम अस्त्र का प्रभाव तभी हुआ जब वह विश्व में स्थित प्राचीनतम मानवीय संस्था द्वारा क्रियान्वित किया गया।

आत्म समर्पण के बाद भी जापान के सम्राट ने अपनी प्रजा को यह आश्वासन दिया कि" जापान की राष्ट्रीय राजनीति व्यवस्था को दैवीय राष्ट्र की शाश्वतता के साथ सुरक्षित रखा गया था।[1]

1. सम्राट के शब्द उसके कथन में, 14 अगस्त, 1945 को मैचीची में शिम्बेन में प्रकाशित किये गए। सम्राट के नाटकीय निर्णय का सर्वोत्तम वर्णन मेर्जा ओकुबो की रचना की प्राबलम्स ऑफ दि एम्परर सिस्टम इन पोस्टवार जापान, टोकियों, 1948। पेसिफिक सिरीज अध्याय 1 में दिया गया है। 1 जनवरी 1946 की शाही घोषणा के लिये देखिये परिशिष्ट 25, विदेश विभाग, दि आक्यूपेशन ऑफ जापान, पालिसी एण्ड प्रोग्रेस (प्रकाशन 2671, सुदरपूर्व क्रम 17) वाशिगटन, 1945 पृष्ठ 133-35 नवीन संविधान, विदेश विभाग ने अंग्रेजी में प्रकाशित किया दि कांस्टीटूयूशन ऑफ जापान (प्रकाशन 2836, सुदूरपूर्व क्रम 22) वाशिगटन 1947। यह बताना आवश्यक होगा कि सम्राट का प्रचलित नाम तैनो है जिसका प्रयोग नवीन संविधान में किया गया है। मिकादो का प्रयोग यद्यपि गिलबर्ट तथा सलिवन ने किया है तथापि यह विदेशी तथा जापानी दोनों ही साहित्यों में प्रचलित नहीं है।

का प्रयास करने से पहले हमें जापान की उन विशेषताओं को समझना चाहिये जो उसे किसी भी अन्य देश की तुलना में अधिक अनूठा बना देती हैं।

सम्राट के बारे में कल्प कथा:

सैद्धान्तिक अर्थों में जापान के बारे में हमारे काल में सर्वाधिक उल्लेखनीय विशेषता इसमें प्रचलित सम्राट के बारे में कल्प क्या है। इस कल्प कथा की व्याख्या भिन्न प्रकार से की गई है। इन व्याख्याओं में दो समूह विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं एक विदेशियों द्वारा की जाने वाली व्याख्या तथा दूसरी जापानियों द्वारा की जाने वाली व्याख्या। इन दो समूहों में भी किसी प्रकार की मतैक्यता का अभाव है। जो अमेरिकी दस वर्ष पहले जापान के सम्राट की परम्परा को कुल्प अथवा सैन्यवाद के लिये अंधविश्वास पूर्ण आधार मानते थे वे ही अब इसे संवैधानिक नियन्त्रणों से जब इन के पश्चात् जापान के प्रजातन्त्रीयकरण के लिये उपयोगी मानते हैं। रूसी प्रचार में जापान के सम्राट को सामंतवाद तथा फासीवाद का प्रतीक माना जाता था तथा उन्हें अभी भी ऐसे कोई कारण नजर नहीं आते जिसके आधार पर यह विचार बदला जा सके। यदि इस वर्ष पूर्व जापान के सम्राट की तुलना एडोल्फ हिटलर से करना भूल थी तो दस वर्ष पश्चात् उसकी तुलना जार्ज चतुर्थ से करना भी भूल है। जापान के सम्राट की स्थिति अनूठी है। वर्तमान विश्व में राजनीतिक सत्ता को धारण करने वाला पाषाण काल का वह एक मात्र उत्तराधिकारी राजा है जिसके वंशज सीधे नवपाषाण काल से चले आ रहे हैं। (अथवा जैसा कुछ जापानी दावा करते हैं) तथा यह सम्राट जिस देश पर शासन करता है वह संभवतया भारत को छोड़ने के पश्चात् ऐसा देश है जिस अपना विशिष्ट राष्ट्रीय पंथ (Cult) है जो रोमन राज्य के राज्य धर्म को ईसाई द्वारा अपदस्थ किये जाने के पश्चात् किसी भी पश्चिमी राज्य में नहीं पाया है। स्याम देश के राजा की धार्मिक स्थिति की तुलना जापान के सम्राट से की जा सकती है किन्तु वह भी जापान के सम्राट के निष्कलंक वंशावली की कल्प कथा से तुलना नहीं कर सकता है। विश्व के अन्य राजाओं में वह निरन्तरता नहीं पाई जाती है जो जापान के सम्राट में पाई जाती है। यह निरन्तरता जापानी जनभ्रान्त तथा परम्परा में सम्राट को अत्यधिक महत्व प्रदान कर और बढ़ा दी जाती हैं।

निरन्तरता की यह भावना जापान को स्वयं अपने इतिहास से प्राप्त होती है। जापान के इतिहास में निहित अच्छे व बुरे दोनों ही कालों में सर्वदा पारिवारिक एकता की भावना तथा राज्य स्तर पर सम्राट के प्रतीक में राष्ट्रभक्ति की भावना को प्रमुख हाथ रहा है। चाहे इस संदर्भ में सम्राट की भूमिका कुछ भी रही हो।

कुछ बाधाओं के बावजूद चाहे पश्चिमी सूत्रों द्वारा स्थापित तथ्यों अथवा जापान परम्परा द्वारा प्रस्तुत कल्पनाशील पौराणिक गाथा के आधार पर देखा जाये तो जापान की राजनीतिक कथा एतिहासिक निरन्तरता की गहरी छाप छोड़ती है। कुछ अर्थों में यह निरन्तरता एक महान् संगीत की लय के समान अथवा एक प्रतिष्ठित चित्रकारी के समान लगती है। इसकी आंतरिक सामंजस्यता तर्क संगत होने से अधिक कलात्मक है। यह संवेगों पर जो प्रभाव डालती है वह एक महान् कलात्मक रचना द्वारा डाले जाने वाले प्रभाव के समान है। इस प्रकार सरकार के प्रति सामान्य अमेरिकी विचारों की तुलना में धर्म की संस्थागत विशेषताओं के अधिक निकट हैं।

3 मई 1947 के पश्चात् से संवैधानिक भाषा में सम्राट राज्य तथा जनता की एकता का प्रतीक हैं, जो अपनी स्थिति उस जनता की इच्छा से प्राप्त करता है जिसमें संप्रभु

इसमें बहुत कुछ चीनी विचार का अनुकरण है तथा यह निरन्तर कई शताब्दियों से विद्यमान है। इसे जापान का आधुनिक राष्ट्रीय पंथ कहा जा सकता है।[4]

निहोगी तथा कोगिकी द्वारा प्रस्तुत विवरणों में अनेकों ऐतिहासिक त्रुटियां दृष्टिगोचर होती है। अपने मूल रूप में वे सम्भवतया उतने ही ऐतिहासिक है जितने विओवुल्फ तथा आर्थेरियन साइकिल ऐतिहासिक है। फिर भी जापान के मूल समाज को समझने के लिये वे अमूल्य है। अन्य कल्प कथाओं के समान ये भी स्वर्ग व धरती की उत्पत्ति, मनुष्य का प्रारम्भ तथा मनुष्य की मृत्यु की नैतिक अनिवार्यता का का वर्णन करते हैं। इन ग्रन्थों को अपनी मूल भाषा में बहुत कम जापानियों ने पढ़ा होगा ठीक उसी प्रकार जैसे बहुत कम अमेरिकी बाइबिल को हिन्दू, अरेमेक तथा ग्रीक में पढ़ते हैं। किन्तु जिस प्रकार अमेरिकी बाइबिल का ज्ञान द्वितीय अथवा तृतीय स्त्रोत से प्राप्त करते हैं इसी प्रकार जापानी भी अपनी कल्पनाओं को दूसरों के मुँह से सुनकर ज्ञात करते हैं। जापानियों के अनुसार पुराने टेस्टोमेन्ट में बहुत सी हास्यास्पद बातें हैं जैसे ईडन का बाग, लाटे की का नमक वाला वृतान्त, जोना का व्हेल के पेट में होना तथा नोह की कथा। निस्सन्देह जापानियों को यह आश्चर्य होता है कि बी 29 मांडल का वायुयान बनाने वाले अमेरिकी किस प्रकार इन कथाओं पर विश्वास कर लेते हैं?

जब अमेरिकी निहोगी तथा कोगिकी की प्रारम्भिक कथाओं को पढ़ते हैं तो उनको आश्चर्य होता है। इन पुस्तकों की कल्पनाएँ प्रमुख देवताओं का (कापी सूर्य देवी तथा ओमीकामोकी) शाही प्रतीकों (दर्पण, हीरे तथा तलवार) का तथा उस प्रथम जापानी व्यक्ति का परिचय कराती हैं जिसने दैवीय स्वरूप से मानवीय स्वरूप धारण किया (जिम्मू तिनो)।[5]

4. जापानी भावना नामक उक्ति का प्रयोग प्रोफेसर इनोयू द्वारा भी आर्मस्ट्रांग की पुस्तक लाइट फ्राम दि ईस्ट, स्टडीज इन जापानी कनफ्यूसियनिज्म टोरेन्टो 1914 के प्रस्तावना में किया। कभी-कभी जापानी धर्म को शितो के रूप में स्वीकारा जाता है। इसका शाब्दिक अर्थ देवताओं का मार्ग है। क्योंकि इस पद का प्रयोग सर्वप्रथम निहोन शोकी (720 ई.) द्वारा किया गया जब जापानियों तथा चीनी विद्वानों के सम्पर्क 300 वर्ष पुराना हो चुका था। शितो को पूर्वजों की पूजा से भिन्न समझना भी इतना ही महत्वपूर्ण क्योंकि इसे अक्सर निरापंण रूप से एक ही प्रकार समझा जाता है। जापान में व्यवहृत पूर्वज पूजा ऐसी प्रथा है जिसे चीन से लिया गया है]। देखिये ओका कूटा योशी मा बुरी की रचना दि जापानीज स्प्रिट न्यूयार्क 1905 इन राजनीतिक धार्मिक विचारों के प्रति निष्पक्ष दृष्टिकोण के लिए देखिये प्रो. कूमी वाके कूमी की रचना जापानीज रिलीजियस विलीफ्यास (टोवोकामी) अध्याय 8 पृष्ठ 22 तथा काउन्ट ओ कूमा की रचना कल्चर एण्ड एजूकेशन इन ओल्ड जापान अध्याय 7 पृष्ठ 113 कोकूमा शी गेनोवू की रचना फिफ्टीयर्स आफ न्यू जापान केई कोकू गो,जू नेम्स लन्दन 1910 (दो ग्रन्थ) की पृष्ठ संख्या 119, जान एफ ऐम्ब्री की पुस्तक दि जापानी नेशन ए सोशियल सर्वे न्यूयार्क, 1945 पृष्ठ 155 तथा जार्ज वी सेमसर जापान ए शार्ट कल्चरल हिस्ट्री, न्यूयार्क, 1947, पृष्ठ 55, विशेषतया इसकी टिप्पणी संख्या 1 सर जार्ज सेमसन का साइंटिफिक हिस्ट्री अमी]नो विशेषज्ञों की दृष्टि से एक अधिकार पूर्ण विश्लेषण तथा जापानी वस्तुओं का परिचय प्राप्त करने वाले नवीन छात्र के लिए एक नवीन मनोरंजक रचना है।

5. वर्तमान में समाजशास्त्र के]तकनिकी अर्थ में कामी भय उत्पन्न करने वाली कोई भी वस्तु हो सकती है। पौराणिक कथाओं का एक]मनोरंजक सारांश जे. एफ. ऐम्ब्री की रचना दि जापानीज वाशिंगटन 1943 स्मिथ सोनियन इन्स्टिट्यूशन]वार]बैकग्राउण्ड स्टडीज के पृष्ठ 108 में है।

जापान की उत्पत्ति सम्बन्धी जो कल्प कथाएँ महत्त्वपूर्ण है उनमें सम्राट का देवीय वंश का होना, उसकी पवित्र उपस्थिति से समुद्र में धरती का प्रकट होना (आज का जापान जो समुद्र के अन्दर भूभाग से प्रारम्भ होता है) तथा जापान के लोगों को सहस्त्रों कापी एवं अति मानवीय पूर्वजों का प्रतीक मानना है। इस कल्प कथा की और चाहे कोई भी उद्देश्य हो तथापि यह अन्य देशों के समान जापान वासियों को भी यह विश्वास दिलाती है कि वे देवीय उत्पत्ति के हैं।

जब जिम्मू तिनो ने मध्य जापान में अपनी विजय का उत्सव मनाया तथा उसके उपलक्ष में ममातों (आज का होंशू) के काशीहरा में अपना प्रथम शाही महल बनाया तथा यह महत्त्वपूर्ण शाही घोषणा प्रेषित की।

"आज के पश्चात् इस राजधानी का क्षेत्र स्वर्ग के (हक्को) तले सम्पूर्ण भूमि पर व्याप्त होगा जिस पर तिनो का शासन होगा जो एक विशाल परिवार के समान संगठित होगा। (इची यू) क्या ऐसा अच्छा नहीं लगेगा ?"

यह हक्को इची यू (स्वर्ग तले—एक परिवार) का प्रारम्भ था। जो प्रारम्भ में जापान के राष्ट्रीय परिवार के लिये ही था किन्तु बाद में जिसका विस्तार दाई तोया क्योई केव (वृहतर पूर्वी एशिया परस्पर) सम्पन्न क्षेत्र पर लागू होने वाला था। पुनः राजगद्दी पर बैठते समय जिम्मू तिनो ने मात्र अमानेरसू ओमीकापी द्वारा दिये गये निर्देश का ही पालन किया था—

"सम्पन्न फसलों वाले प्रदेश के मेरे वंशज स्थायी होंगे। जाओ मेरे महान महापौत्र उस प्रदेश पर जाकर शासन करो। जाओ तुम्हारे वंश को सम्पन्नता प्राप्त हो तथा यह सर्वदा स्वर्ग व भूमि पर बना रहे।"[6]

यह देवीय आशीर्वाद शाही सत्ता की स्थापना के अवसर पर होना चाहिये था किन्तु यह यमातों पर प्रथम सम्राट की विजय के अवसर पर दिया गया। पौराणिक कथा के अनुसार यह जापान के नव पाषाण कालीन राजा द्वारा सत्ता पर पुनः विजय प्राप्ति थी। प्रतिष्ठित जापानी विद्वान इस तथ्य को इंगित करते हैं कि जापान का शाही परिवार, शासन परिवार के कल्पित कथाओं में निहित प्रस्थिति के अतिरिक्त जापान के प्रमुख परिवार के रूप में पृथक अस्तित्व रखता है। परिवार के रूप में इसे किसी कुल नाम की आवश्यकता नहीं पड़ती है, ओमके (महान परिवार) पद का प्रयोग पहले शाही दरबार अथवा बादशाह के लिये किया जाता था तथा अब इसका प्रयोग जनता अथवा 'सरकार' के लिये प्रचलित है।[7]

आज भी जापानी, शाही घराने के अन्तः परिवार सम्प्रदाय को स्वीकारते हैं तथा सम्राट को जापान का शासक मानते हैं। यह आचरण पूर्णतः चीन की शाही परम्परा के

6. केंजी आकियामा मे अनुवादित पूर्वोघृत पृष्ठ 51।

7. टोक्यों इम्पीरियल यूनिवर्सिटी के लॉ फेकल्टी के प्रोफेसर हो जूमी नोबू शिगे ने पितृात्मक अवधारणा को इस प्रकार स्पष्ट किया राष्ट्र को एक विशाल परिवार के रूप में माना जाता है जिसमें साम्राज्यीक शाही परिवार शिखर पर मुख्य परिवार रूप में अवस्थित होता है—यही कारण है कि साम्राज्यीक घराने का न तो कोई गोत्र है और न कोई पारिवारिक उपनाम पूर्वज पूजा तथा जापानी विधि, टोक्यों 1914 पृष्ठ 103 एक श्रेष्ठ संक्षिप्त विश्लेषण के लिए देखिये नी गो ताका इशी की रचना ए स्टडी आफ दी ऑरीजन आफ जापानी स्टेट, न्यूयार्क 1917 (एक शोध प्रबन्ध)।

अनुरूप है तथा धार्मिक व राजनीतिक सिद्धान्तों को सम्मिलित करता है। आंग्ल भाषा के पद गवर्नमेन्ट के अर्थों में जापानी में मात्सुरीगोटो पद का प्रयोग किया जाता है जो मात्सुरी (सम्मान करना) तथा गोटो (प्रशासन) से मिल कर बना है।

प्रत्येक वर्ष जापानी अपना नया वर्ष 4 जनवरी को गोमो-हाजीये अथवा राज्य कार्यों के प्रारम्भ होने के उत्सव से प्रारम्भ करते हैं। इस उत्सव में प्रथम पूर्वज के मन्दिर में पूजा से प्रारम्भ किये जाते हैं।[8]

इस देवीय वंश परम्परा के दावे के साथ-साथ निहोन शोकी तथा कोजिकी में कुछ सहयोगी राष्ट्रीय नैतिक सिद्धान्तों जैसे उदारता, परस्पर स्नेह, जन कल्याण तथा पूर्वजों का सम्मान का भी वर्णन किया गया है। कोदो अथवा सम्राट के व्यवहार में मात्र जापान को देवीय स्वरूप ही निहित नहीं है अपितु इसमें एकता भी निहित है जो एक प्रकार से पारिवारिक सहानुभूति के समान है। जापान के गम्भीर लोग 1940 में भी अपने राष्ट्र की 26वीं शताब्दी के आयोजनों के अवसर पर इसकी सफल निरन्तरता तथा अविभौतिक उत्पत्ति से पर्याप्त प्रभावित हुए थे। जापानियों तथा उनके सम्राटों की कई पीढ़ियाँ परस्पर वफादारी तथा सम्पूर्ण जापान के कल्याण से प्रेरित होकर अनेकों शताब्दियों तक साथ-साथ रह सकी हैं।

जापान की पौराणिक कथा के आधुनिक अर्थ

विश्व की सभी महान पौराणिक कथाओं के दो प्रकार के स्पष्टीकरण होते हैं। प्रथम अर्थ में यदि यह कल्प कथा (Myth) अभी भी उचित है तथा यह अधिकांश लोगों को प्रभावित करती है तथा इसमें अभी भी आध्यात्मिकता जीवन्त है चाहे वह अपनी ऐतिहासिकता से मेल नहीं खाती हो। आधुनिक अमेरिकी पुनरोदयवादी जिस प्रकार के ईसा में विश्वास करते हैं वह प्रथम शताब्दी के दो प्रारम्भिक यहूदी राज्यों में विद्यमान ईसा के ऐतिहासिक स्वरूप से बहुत कम साम्यता रखता है। तथापि जिस अर्थ में 20वीं शताब्दी में ईसा में अमेरिकी पुनरोदयवादी विश्वास करते हैं वह विद्वानों द्वारा ईसा को समझने से कही अधिक अमेरिकी संस्कृति में महत्ता रखता है। किसी भी कल्प कथा का यह दूसरा स्पष्टीकरण इतिहासकारों तथा उन लोगों के लिये महत्त्वपूर्ण है जो मानवीय विश्वासों की उत्पत्ति का अध्ययन करना चाहते हैं तथापि वर्तमान मानवीय विश्वासों के लिये यह अनिवार्यतः महत्त्वपूर्ण नहीं है।

अतः जापानी कल्प कथा की ऐतिहासिक उत्पत्ति के अर्थ को बड़ी तटस्थता के साथ यह मानते हुए समझना चाहिये कि ये स्पष्टीकरण मात्र अध्ययन सम्बन्धी मूल्य के हैं तथा आम जापानी के सामान्य जीवन पर उसका व्यावहारिक प्रभाव नाम मात्र को भी नहीं है।

जापानी राष्ट्रीय पंथ का विकास कैसे हुआ? जापान की इन कल्प कथाओं के स्त्रोत क्या हैं?

प्रोफेसर आर के रैशोर ने बताया है कि जापानी पौराणिक कथाओं का मूल जिन कहानियों को निहित करता है वे पहाड़ों पर रहने वाले लोगों द्वारा कहीं गई थी। जिनको

8. हो यूमी पूर्वोद्धृत पृष्ठ 34। राजनीतिक चिन्तन पर जापानी भाषा के प्रभाव के विलक्षण वर्णन के लिए देखिये रॉबर्ट काल योर का जापान, गवर्नमेंट-पालिटिक्स, न्यूयार्क, 1939, अध्याय 1 दुर्लभ्य यद्यपि होने के बावजूद यह अब भी द्वितीय महायुद्ध के पूर्व की जापानी राजनीति पर सर्वोत्तम ग्रन्थ है।

बाद में यमातो में रहने वाली जनजाति ने विस्तार दिया। पौराणिक कथाओं को दूसरे और आदिम प्रकार में ये कहानियां निहित हैं जो समुद्र से यात्रा करने वाले लोग सम्भवतया उत्तरी क्यूशू में रहने वाले लोगों द्वारा कही गई। सर्वाधिक प्रारम्भिक काल से सम्बन्धित तीसरे समूह की कथाएं वे हैं जो दक्षिणी समुद्रों तथा ईस्ट इण्डीज के लोगों की पौराणिक कथाओं से सम्बन्धित है। पौराणिक कथा का चौथा समूह इज्यू (वर्तमान का पश्चिमी होन्शू) से सम्बन्धित है। अन्ततः पौराणिक कथाओं के एक भिन्न समूह जिम्मू तिनो द्वारा यमातो में विजय की मूल कथा पर आधारित है। इन पौराणिक कथाओं में तथा उनके प्रयोग से सम्बन्धित स्पष्टीकरण में जापानी राजनीतिक विचार की विशेषताओं के बारे में कुछ संकेत अवश्य प्राप्त हो पाते हैं।

एक पर्याप्त कल्पनाजन्य स्पष्टीकरण एक जातीय सिद्धान्त के आधार पर सम्राट की स्थिति को उचित ठहराने का प्रयास करता है। तथापि शाही परिवार जो इस कल्पना प्रधान सिद्धान्त का समर्थन कर सकता था, ने कभी भी इस प्रकार की कथा का दावा नहीं किया। इसके विपरीत शाही जाति के प्रभुत्व तथा उत्तराधिकार से सम्बन्धित सिद्धान्त दीर्घ परम्परा वाला दृष्टिगोचर होता है क्योंकि कोजिकी तथा निहोनशाकी में इसका उल्लेख है *तथा 7वीं शताब्दी के पश्चात् से प्रत्येक महत्वपूर्ण विज्ञप्ति में इसका उल्लेख किया गया है।* अन्य ऐतिहासिक परिकल्पना जो यमातो के अभियान से सम्बन्धित कल्पकथा से अपने तथ्यों को प्राप्त करती है यह बताती है कि पौराणिक कथाएं युद्ध को अपने सरलतम तथा अपरिष्कृत रूप से उचित ठहराती हैं। यह सिद्धान्त उतना ही उचित है जितना ओल्ड टेस्टामेन्ट की कथाएं तुलनात्मक रूप से उचित हैं। तथापि ये कथाएं एक समय में प्रचलित किन्तु अब लुप्त इस सिद्धान्त का समर्थन करती थी कि राज्य, सरकारें आर्थिक व्यवस्थाएं तथा धर्म जिस प्रक्रिया से विकसित हुए वे इतिहास में एक समय विजय के परिणामस्वरूप प्रारम्भ हुई थी। समाजशास्त्रीय आधार पर अब इनमें से किसी सिद्धान्त पर अत्यधिक जोर देना हानिकारक होगा।[9]

पैतृक सिद्धान्त का विकास चाहे कैसे भी हुआ हो तथापि यह जापानी विचारधारा में राष्ट्र में प्रचलित भाव को प्रस्तुत करने वाला मूल तत्त्व बन गया जो शाही घराने का समर्थन करता है तथा जिसका शाही घराना समर्थन करता है। इस सिद्धान्त का अन्तिम

9. प्रोफेसर आर. के. रीर ने इन पौराणिक कथाओं की उत्पत्ति अपनी दो ग्रन्थ वाली बहुमूल्य रचना, अर्ली जापानीज हिस्ट्री (40 ई. पूर्व से 1167), सिंसिटन. 1900 ग्रन्थ 1 पृष्ठ 6 महत्वपूर्ण विश्लेषणात्मक अध्ययनों के लिए देखिए प्रोफेसर असाकावा। कानिची की रचना व अर्ली इन्सटीट्यूशनल लाइफ आफ जापान, टोक्यो 1903 विशेषतया पृष्ठ 26 से 31 कार्ल डबलू विशप की द हिस्टोरिकल जियोग्राफी आफ अर्ली जापान—जियोग्रफिकल रिव्यू 13 न. 1923 पृष्ठ 40-63। इसका सर्वाधिक प्रयासपूर्ण वर्णन मेनीफेस्टो आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी लन्दन 1888 अधिकृत अंग्रेजी अनुवाद में है। तथापि *इस सिद्धान्त को अनेकों गैर मार्क्सवादियों जैसे ओपनहेम, जेंक्स, ट्रिट्स्के* द्वारा भी स्वीकारा गया है। फ्रेडरिक शूमा ने अपनी पुस्तक इन्टरनेशनल पालिटिक्स के पुर्नसंशोधित संस्करण न्यूयार्क 1949 में इसका उल्लेख किया है किन्तु साथ ही में उसने राबर्ट मैकाइवर की आधुनिक समालोचना का भी उल्लेख किया है। द वेब्स गवर्नमेंट न्यूयार्क 1947 पृष्ठ 12-38 था ताकाशाही का यह निष्कर्ष था कि जापानी राज्य—जो जापानी राष्ट्र से प्रजातीय दृष्टि से पृथक है—का जन्म यमातो की विजय में हुआ था। इस प्रकार उसने अपने अध्यापक चार्ल्स ए बियर द्वारा प्रस्तुत दृष्टिकोण का समर्थन किया कि पश्चिमी यूरोप में राज्य की उत्पत्ति संसार में विजय से हुई (पालिटिक्स पृष्ठ 17-18)।

रूप से सूत्रीकरण व अन्तर्निविष्टी आधुनिककाल के प्रारम्भ से हुई है। जापान के राजनीतिक वर्ग शिटों के रूप में यह आत्म समर्पण से पूर्व के जापान की सर्वाधिक उल्लेखनीय सैद्धान्तिक विशेषता है। 1947 के संविधान के अन्तर्गत भी पैतृक सिद्धान्त को स्पष्ट रूप से स्वीकार किया गया है तथा इसके सिद्धान्तों में वे अव्यक्त मान्यताएँ हैं जो विधि तथा कानून के प्रायः सभी जापानी अध्ययन कर्त्ताओं की चर्चाओं में प्रकट होती हैं।

राज्य की दो प्रमुख जापानी परिभाषाएँ (प्रथम महायुद्ध के बाद) अव्यक्त रूप से पैतृक मान्यताओं को स्वीकारती है. यद्यपि इनमें से प्रथम परिभाषा राज्य को मनुष्यों का ऐसा समुदाय मानती है जो अपने संयुक्त प्रयासों से सब का कल्याण तथा भला करना चाहता है, जबकि दूसरी परिभाषा राज्य को एक ऐसा मनुष्य या कई मनुष्य मानती है जिसमें सम्प्रभुता निहित है।[10]

आत्म समर्पण, अधिकृत होने, नवीन संविधान, पुनर्मूल्यांकित सम्राट तथा डिमोकुराशी के बावजूद जापानी साम्यवादियों को छोड़कर, अपनी सरकार के बारे में दीर्घकाल से चली आ रही परिवार प्रधान तथा पैतृक मान्यताओं को चुनौती नहीं देते हैं।

युद्ध के पश्चात् भी पर्याप्त जागरुक जापानी तेजों मुक्यू नो कोई (स्वर्ग व धरती के समान शाश्वत राज सिंहासन) की धारणा के आधार पर अपनी राजनीतिक मान्यताओं का निर्माण कर रहे हैं। ये जापानी अभी भी ये मानते हैं कि शाही परिवार इतिहास के प्रारम्भ में ही राष्ट्रीय परिवार में से उत्पन्न हुआ था।

इस निरंतरता को सम्राट तथा राष्ट्रीय कल्पकथा के आधार पर बनाये रखा गया है। व्यावहारिक रूप में यद्यपि शाही विशेषाधिकारों के देवीय स्वरूप के महत्त्व को कम किया गया है। सरकारी आलेखों के अनुसार विशिष्ट देवीय अधिकारों को। जनवरी 1946 की सरकारी विज्ञप्ति के अनुसार समाप्त कर दिया गया है। एक ओर प्रोफेसर तकाशी मसाका जैसे जापानी विद्वान है जो यह कहते हैं कि—"... ......यदि हमारे इतिहास का निष्पक्ष अध्ययन किया जाए तो कोई भी..........अर्वाचीन सैन्यवाद के कारण...... .... सम्राट की व्यवस्था की सम्पूर्ण समाप्ति को स्वीकार नहीं करेगा इसकी तुलना अल्पमत का प्रतिनिधित्व करने वाले सर विलियम वेब कानूनी आधार पर नैतिक रूप से उत्तरदायी मानता है तथा इसलिये उस पर युद्ध अपराधी के रूप में मुकदमा चलाने का समर्थन करता है।"[11]

10. दिवंगत डॉ. मिनोवे ताकासुकीची, जो एक प्रसिद्ध संवैधानिक विशेषज्ञ थे, ने प्रथम दृष्टिकोण के पक्ष में तर्क कम्पोकोवा (जापानी संविधान पर भाषण) में दिया टोक्यो 1918 पृ. 77-208। अंग्रेजों में सारांश के लिए देखिये ताकाशाही पूर्वोद्धृत भूमिका पृ. 9-14।

11. राजकुमार इतो हिरोबूमी ने अपनी रचना कोमेन्ट्रीज ऑन दि कान्स्टिट्यूशन्स आफ दि एम्पायर आफ जापान (इतो नियोजी द्वारा अधिकृत अंग्रेजी अनुवाद)। टोक्यो 1889 में उदार में एक संयत तथा परम्परागत दृष्टिकोण एक प्रमुख राजनीतिक सिद्धान्तवादी ताकागी यासा का है जो जापान की अमेरिका के समान संस्था एनॉल्स आफ द अमेरिकन अकेडमी आफ पोलिटिकल एण्ड सोशयल साइन्स में है। प्रो. ताकागी टोक्यो विश्वविद्यालय का भूतपूर्व पुस्तकालयाध्यक्ष, संवैधानिक विधि का प्रोफेसर तथा अमेरिकी राजनीति एवं विधि पर प्रमुख जापानी विद्वान है। इस खण्ड के लेखक के साथ, वाशिंगटन में कांग्रेस के पुस्तकालय में 1949 में किये गये साक्षात्कार के अवसर पर प्रो. ताकागी ने दो दृष्टिकोण स्पष्टतया अभिव्यक्त किये। प्रथमतया गत शताब्दी के सैनिक दुःसाहस के लिए उसने सभी जापानियों को उत्तरदायी माना तथा द्वितीयतः

आज के जापानी आत्मसमर्पण तथा विशेषतया सन्धि के पश्चात् की परिस्थितियों में अपनी राष्ट्रीय पौराणिक कथाओं की उत्पत्ति को उचित ठहराने के लिए उल्लेखनीय रूप से उदासीन है। यह पौराणिक कथा दीर्घकाल तक जीवित रही है तथा इसके तत्वों को तर्क अथवा प्रमाण के आधार पर साबित नहीं किया जा सकता है। चूंकि जापानी अपने सांस्कृतिक मानकों को पूर्ण विश्वास से स्वीकारते हैं अतः एक बाहरी व्यक्ति के लिये उनमें से ऐसे सिद्धान्तों को प्राप्त करना जो पश्चिमी स्तर के अनुसार उचित व स्वीकार करने योग्य हों कठिन है। जापान यद्यपि भौतिक व्यवस्था तथा उसकी समस्याओं से सम्बन्धित बातों पर पश्चिम के लोगों से सामान्य बौद्धिक स्तर पर सहमति प्राप्त कर लेते हैं किन्तु यह सहमति तब कठिन हो जाती है जब पश्चिम के लोग उनकी सर्वाधिक निजी नैतिक भावनाओं के लिये परिकल्पित तार्किक आधार प्राप्त करने का प्रयास करते हैं।

गृह साम्राज्य की भौतिक संरचना

जापान की मुख्य भूमि में चार प्रमुख द्वीप होक्काइदो, होंशु, शिकोकू तथा क्यूशू हैं जिनमें होक्काइदो में कुरील लघुद्वीप की पंक्तियाँ इन्हें विभाजित करती हैं। प्रत्येक विभाजन रेखा में कई पहाड़ी इलाके व ज्वालामुखियों के झुण्ड हैं।

इस भौगोलिक स्थिति ने इस देश को दृश्यों व प्राकृतिक सौन्दर्य में सम्पन्न तो बना दिया है किन्तु सुरक्षा अथवा औद्योगिक स्रोतों की दृष्टि से कमजोर बना दिया है। स्वयं भूमि की अस्थिरता ने जापानी उद्योग तथा सैनिक व्यवस्था पर कई नियन्त्रण थोप दिये हैं। देश के अन्दर 500 से अधिक ज्वालामुखी हैं तथा प्रत्येक वर्ष में 1500 के लगभग भूकम्प आते हैं। ऐसी परिस्थिति में जापान की भूमि अत्यधिक सुरक्षित है। उदाहरण के लिये टोक्यो में औसत रूप में तीन दिन में एक बार भूकम्प आता है।

यह भौतिक संरचना जापान की मिट्टी को प्रभावित करती है तथा उसका प्रभाव जापान के लोगों के आर्थिक व राजनीतिक स्वरूप पर पड़ता है। जापान का 2/3 क्षेत्र पर्वतमय है। चट्टान का है जिसमें कृषि नहीं की जा सकती है। 1/3 भूमि में 15 अथवा उससे कम वाले उतार व चढ़ाव में बाढ़ की मिट्टी वाला प्रदेश है। दैनिक जीवन के अर्थों में जापान एक कठोर पहाड़ी अथवा पर्वतीय प्रदेश है जिसके मात्र 16 प्रतिशत भूमि पर खेती की जा सकती है।

जापान चीन की तुलना में छोटा प्रदेश है। तथापि इसकी मुख्य भूमि ब्रिटेन अथवा इटली से बड़ी है। अक्षांश तथा जलवायु की दृष्टि से जापान का फैलाव संयुक्त राज्य अमेरिका के अटलांटिक समुद्र के किनारे पर फैलाव के समान ही है। होक्काइदो की तुलना कैरोलिना से तथा क्यूशू की तुलना जार्जिया से की जा सकती है।

जापान का द्वीपीय स्वरूप न केवल इसकी भौगोलिक विशेषता है अपितु यह इसकी

यह माना कि उत्तरदायित्व मेयजी संविधान को भिन्न तरीके से अपनाने पर कम किया जा सकता था तथा इस प्रकार एक गैर जापानी संवैधानिक विधि से अनुकूल की समस्या से बचा जा सकता था। 1952 के ग्रीष्म में टोक्यो में रीडर्स डाइजेस्ट के अति आधुनिक भवन में किये दूसरे साक्षात्कार के समय डॉ. ताकागी ने बताया कि उन्हें अपने विचार परिवर्तित करने का कोई कारण दृष्टिगोचर नहीं होता था। उस समय के मुख्य पुनर्शस्त्रीकरण तथा असंवैधानिकता थी। 12 नवम्बर, 1948 की अन्तर्राष्ट्रीय सैनिक न्यायाधिकरण टोक्यो के अध्यक्ष सर विलियम वैब ने जापानी युद्ध अपराधियों के दण्ड की घोषणा की तथा एक पृथक निर्णय में सम्राट की यु अपराधों का वास्तविक नेता होने के नाते निन्दा की।

सांस्कृतिक विशेषता भी है। जापान तथा ब्रिटिश इतिहास में किसी भी ऐसे अध्ययनकर्त्ता को जिसे घटनाओं के कालानुक्रम में रुचि हो आश्चर्यजनक समानताएँ दृष्टिगोचर होती हैं जिनका मूल कारण दोनों का द्वीपीय राज्य होना है। जापान का विशिष्ट राष्ट्रीय चरित्र जो यूरोपीय देशों के लिये बात किन्तु पूर्वी एशिया के देशों के लिये असाधारण प्रतीत होता है उसका मूल कारण इसकी स्वतन्त्र भौगोलिक सीमाएँ होता है। जापान पर जापानियों द्वारा आक्रमण के पश्चात् प्रथम सफल आक्रमण जनरल मैकार्थर का था जिसके पश्चात् जापान ने आत्म समर्पण किया। इस प्रकार के देश के लिये समुद्री तथा नौ शक्ति की परम्परा होना स्वाभाविक है आने वाली शताब्दियों में विश्व इतिहास का सर्वाधिक अनिश्चित एक कारक यह भी है कि जापान की समुद्री शक्ति व परम्परा की भविष्य में क्या भूमिका रहेगी।[12]

जापान के लोग :

जापान में द्वितीय युद्ध के पश्चात् से स्कूलों के बच्चों के इतिहास के पाठ्य पुस्तकें, जापान के लोगों की उत्पत्ति के संबंध में काव्यात्मक दैवीय दावे करने के विपरीत यह बताती हैं कि हमारी जाति भी विश्व की अन्य जातियों के समान है तथा फिर वे अपनी जाति की कुछ वैयक्तिक नृतत्वशास्त्रीय विशेषताएँ बताती हैं।"[13] जापान के पूर्व इतिहास को तीन सांस्कृतिक स्तरों पर विभाजित किया जा सकता है : जिसमें प्रथम 11 पाषाण युग है जिसमें धातु का पूर्णत: अभाव था तथा तब ऐसे बर्तन पाये जाते थे जो पहिये की सहायता से नहीं बनते थे। पूर्व इतिहास काल के अवशेष ये प्रमाणित करते हैं कि तत्कालीन भोजन मछली प्रधान था।

द्वितीय तथा अपेक्षाकृत कम भिन्न संस्कृति ताम्बे के प्रमाणों के प्रतीक निहित करती है। यद्यपि अनेकों पुरातत्व प्रमाण यह स्पष्ट करते हैं कि जापान में ताम्बे की सभ्यता दक्षिण एशिया के बजाय मध्य तथा पूर्वी एशिया से आई किन्तु तो भी उनमें कुछ मलाया के तत्वों की उपस्थिति रुचि का विषय है। क्योंकि जो लोग अब मलायावासी नाम से माने जाते हैं वे जापानियों द्वारा अपने द्वीपों के बसने के एक हजार वर्ष बाद ही

12. आधुनिक जापानी लेखकों में से प्रो० जार्ज हनु जीरो उरहारा प्रथम व्यक्ति था जिसने अपनी रचना द पोलिटीकल डवलपमेन्ट ऑफ जापान 1867 से 1909 लंदन 1910 अध्याय प्रथम पृष्ठ 6 से 9 में जापानी राष्ट्र, उसकी पृथक्ता तथा राजनीतिक दृष्टिकोण को परस्पर सम्बन्धित किया।

13 न्यू जेका इसे गावाक लेर्ई अवर सिविलिजेशन एण्ड द सी कन्टम परेरी जापान, फरवरी 1942 इस जनरल का प्रकाशन जापान के विदेशी मामलों के संगठन द्वारा युद्ध के दौरान किया गया तथा यह हमारे फॉरेन एफेयर्स का समकक्षी है (यद्यपि सरकारी दृष्टि से ज्यादा प्रभावित है) इतिहास पर भूगोल के प्रभावों के अन्य संक्षिप्त विवरणों के लिए देखिये ह० ओ० रैशार्ट का जापान-पास्ट एण्ड प्रेजेंट, न्यूयार्क 1947 चैप्टर एफ अथवा द जापान इयर बुक का कोई भी अंक जिसका प्रकाशन भी जापान के विदेशी मामलों का संगठन करता है। 1946–48 के संस्करण में प्रथम तथा द्वितीय अध्याय भूगोल तथा जनसंख्या पर हैं, अथवा भ्रमणार्थियों के लिए यातायात मंत्रालय का भ्रमणार्थी विभाग द्वारा प्रकाशित जापान द आफीशियल गाइड (संशोधित टोक्यो 1952 जापान के एक खण्डीय भौगोलिक विवरण ग्लेन ट्रेवार्था की रचना ए रीजनल एण्ड कल्चरल जियोग्राफी ऑफ जापान, मेडीसन, 1945 है।

जापान का शिक्षा मन्त्रालय, जापान का इतिहास में निहान नोटेकोसी, शोवा 21 (1946) दो खण्ड प्रथम ग्रंथ, प्रथम पृष्ठ, प्रथम अध्याय आदिकालीन संस्कृति का वर्णन करता है, दूसरा अध्याय य मातो सरकार का विकास, राष्ट्रीय सरकार की स्थापना तथा परिवार एवं जनजातीय समूहों के उदय को स्पष्ट करता है।

मलाया में आये थे। ये लोग उराल–अल्परकई समूह के लगते हैं। मूल शरीर रचना मंगोल प्रकार की है जैसे चौड़ी हड्डी, पीली चमड़ी सीधे बाल तथा आंख की ऊपरी पुतली का उभरा हुआ होना। इस मूल नस्ल से बाद में उत्तर पूर्वी एशिया से आने वाले आकार मिल गए। नृतत्वशास्त्रीय दृष्टिकोण से यद्यपि मलाया के लोगों के योगदान प्रमाणित है तथापि अभी इसका पूर्ण मूल्यांकन नहीं हो सका है।

जापान के तृतीय प्रकार की संस्कृति श्मशान खण्डो में प्रति बिंबित होती है। इसमें लौह संस्कृति है जिसकी कोरिया से सुदृढ़ संबंध लगते हैं। परम्परागत रूप में यह संस्कृति मयातों क्षेत्र से घिरी हुई है। ये यमानो समूह के लोग संभवतया 1000 से 500 ई० पू० में क्यूशू में आये थे तथा जापानी स्वयं को इन्ही का वंशज मानते हैं।[14]

यह यमातो संस्कृति हमें जापानी राजनीतिक तथा सामाजिक संगठन के बारे में कुछ प्राचीनतम प्रमाण प्रस्तुत करती है। जैसे चावल का किला का अर्थ मात्र किले बंद अनाज के भंडार से नहीं होता था अपितु यह राजनीतिक शक्ति का प्रतीक भी होता था जो संपत्ति पर अधिकार से ही संभव थी। चावल न केवल दैनिक भोजन था अपितु यह मुद्रा का एक प्रकार तथा करोरोपण का माध्यम भी था। परम्परागत रूप से निहोंगी इस प्रकार की चावल संस्कृति की पूर्व शर्त सिंचाई व्यवस्था सम्राट सुईनिन (6 ई०) को देना बताता है। प्रथम आलेखबद्ध अपराध जिसके लिये मृत्यु दण्ड दिया गया वह खेतों को नाश कर चावल की उपज को नष्ट करने का अपराध ही था। इस काल के जापान के बारे में चीनी उल्लेख भी कोई विशेष सूचना नहीं दे पाते हैं मात्र इसके कि जापानी बौने थे तथा वे राजनीतिक एकता प्राप्त करने में असमर्थ रहे थे।

आधुनिक दृष्टिकोण से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य शायद यह है कि सम्पूर्ण जापान के समान, जापान में सत्ता पर शाही अधिकार भी यद्यपि धुन्धला था तथापि यह बहुत पहले से स्थिर था।

इतिहास के पूर्ण प्रारम्भ से ही शाही कुल देश के अनेको कुलो में से एक था। यह शाही कुल स्वयं को सम्प्रभु ईश्वर का वंशज मानता था अन्य कुल अपने को किसी अधिकृत देवता का वंशज मानता था। कुछ विदेशी कुल स्वयं को कोरिया अथवा चीन के आप्रवासियों का वंशज मानते थे। किन्तु शाही कबीले ने प्रारम्भ से ही तिनो के पद पर अपना अधिकार कर लिया था तथा जापान की प्राचीनतम पुस्तकों में सम्राट की सत्ता के सिद्धान्त की स्थापना कर दी गई थी।

प्रारम्भिक कुल प्रधान अर्थशास्त्र :

जापान में 40 ई० पू० से 645 ई० का काल जातियों तथा वंशानुगत पदवियों का काल कहा जाता है। भूमि पर कई कुलों का अधिकार था। आधुनिक यूनान अथवा

14 यद्यपि पुरातात्विक साक्ष इस संस्कृति को स्वदेशी स्पष्ट करते हैं लेकिन मजबूत कोरियाई साक्ष भी है उदाहरण के लिए सुदूर (समय से तलवार, दर्पण वक्राकार आभूषण, साम्राज्यिक राज चिन्ह) सभी का सम्बन्ध कोरिया से है। अभी भी पुरातात्विक साक्ष का सर्वाधिक पूर्ण सर्वेक्षण नील गोर्डोन मुनरो, का प्री हिस्टोरिक जापान, योकोहोमा 1908 है। इससे संक्षिप्त उसका प्रिमिटिव कल्चर इन जापान ट्रांजेक्शन्स ऑफ द एशियाटिक सोसाइटी ऑफ जापान (इससे आगे टी ए एस जी के रूप मे उदधृत), वॉल्यूम एक्स एक्स, आई, बी भाग द्वितीय (1906) है। इससे भी संक्षिप्त साराश सनेशोम, पूर्वोद्धृत अध्याय 1 में देखा जा सकता है।

मध्य युगीन स्कॉट के पहाड़ी क्षेत्रों के समान जापान की भौगोलिक रचना ने स्वावलम्बी इकाइयों के निर्माण को अपरिहार्य कर दिया। प्रत्येक कुल पर एक मुखिया का शासन होता था जो किसी देवता को अपना संरक्षक मानता था तथा इस मुखिया के अधिकार में प्रत्येक परिवार उस कबीले का अंग माना जाता था। इस व्यवस्था की अर्थ प्रणाली कुल की घरेलू अर्थ व्यवस्था पर निर्भर करती थी (जिसे आधुनिक जापानी शिजोकू सेइदो कहते हैं।) शिजोकू का मूल सिद्धान्त एक ही रक्त संबंध की मान्यता थी क्यूँकि शिजोकू कहे जाने वाले समाज का वास्तविक रक्त संबंधी होना आवश्यक था। वंशानुगतता का सिद्धान्त किसी बाहरी व्यक्ति को ऐसे समूहों का सदस्य नहीं बनने देता था तथापि समूह की बाहरी दृढ़ता बनाये रखने के लिये कभी कभी पर्याप्त कथाओं का सहारा लिया जाता था। (आज भी अर्द्ध कबीला, अर्द्ध समूह तथा अर्द्ध परिवार जैसे पद जापानी जन जीवन में पर्याप्त लोकप्रिय हैं।)[15]

शिजोकू की भूमि को बेचा नहीं जा सकता था। इस प्रकार एक परम्परा प्रत्यक्ष होती है जो आज भी विद्यमान है जो कि भूमि पर वैयक्तिक अधिकार के विपरीत है। भूमि पर अधिकारों का प्रसारण तथा विशिष्ट कार्यों के लिये सभी पदवियों का संकेन्द्रण न होना जापान की भू कर व्यवस्था की उल्लेखनीय विशेषता प्रतीत होती है।

शिजोकू व्यवस्था के स्वयं कुछ ऐसे परिणाम थे जो एक संरचना के संकीर्ण दायरे में नहीं सिमट सकते थे। कुलों के साथ साथ अन्य संगठित समूह भी विद्यमान होते थे। इनमें विभिन्न प्रकार के समूह थे जैसे सामाजिक अथवा संस्कार संबंधी समूह, शाही कुल के इतिहास की महत्त्वपूर्ण घटनाओं को मनाने के लिये बनाये गए समूह तथा श्रमिकों के समूह जो विशेषीकृत जाति का स्वरूप धारण कर लेते थे 1952–53 इन लेखकों में से एक प्राचीनतम संगठित समूहों के आधुनिक वंशजों के स्थान विनेन जो ओक्याया प्रिफेक्चर देखने गया था। वस्तुत यह समूह अब भी इम्बे ग्राम के नाम से जाना जाता है तथा यह जो वर्तन बनाता है उनका काम उन्हें जापान के आदि कालीन इतिहास के वर्तन बनाने वाले परिवारों से सम्बन्धित करता है।

स्थानीय शासन के विभिन्न स्तर भी जैसे साटो (गांव) (कस्वा) कोरी (कस्बे के समाज) तथा कुनी (आधुनिक प्रांत के समान थे) तथापि इसके लिये चीनी भाषा में देश के लिये प्रयुक्त होने वाला भावचित्र लिखा जाता है दृष्टिगोचर होते हैं।[16]

15. गोत्र स्वयं अत्यधिक महत्त्वपूर्ण तथा आधुनिक पड़ोस पर आधारित संगठनों के आदिकालीन उत्पत्तियों के बारे में संकेत देता है। इसमें महान नमन्यता तथा प्राचीनता विद्यमान है। इसी प्रकार समूहों का उच्चस्तरीय विकास तांग कालीन चीन में किया गया)। जापान में इस व्यवस्था का प्रथम सन्दर्भ निहोन शोकी मिलता है जो 652 में प्रारम्भ हुए। देखिये संयुक्त सर्वोच्च कमान के मुख्यालय, नागरिक सूचनालय शिक्षा प्रभाग, विश्लेषण तथा शोध खण्ड, ए प्रिलिमिनरी स्टडी ऑफ नेवरहुड एसेशियेसन्स ऑफ जापान टोक्यो 23 जनवरी 1948 (संक्षिप्त स्वीकृत) पृष्ठ 1 से 2।

16. यह पहले ही बताया जा चुका है प्राचीन काल में सरकार तथा प्रजा का निकटम सहयोग रहा। इसी प्रकार जापान में व्यावसायिक संगठनों का भी धार्मिक आधार दृष्टिगोचर होता है (जैसे कि यूरोप में था)। इसके भी प्रमाण है कि प्रारम्भ में ये व्यावसायिक समूह आदिकालीन सरकार की शाखाएँ थीं। निहोगों के अनुवादक डब्लू जी एस्टन अपनी पूर्वोद्धृत रचना में इन समूहों का पूर्ण वर्णन देता है। ग्रन्थ 1 पृ० 42–43 तथा 5 व 7 टिप्पणी शो जो की अधिकृत परिभाषा के लिए देखिये होन्जो इजीसे की

कुल अर्थ व्यवस्था तेजी से आगे बढ़ी। अपने प्रथम एतिहासिक स्तर पर ही यह मात्र शिकार करने व मछली पकड़ने वाली अवस्था से पर्याप्त आगे थी। तकनीकी दृष्टि से कृषि व्यवस्था का विस्तार हुआ तथा संपत्ति संबंधी जटिल होते गए। पैदावार के कम होने से कृषकों को नुकसान पहुँचा। कृषि की जाने वाली भूमि की तुलना में जनसंख्या बहुत आगे बढ गई। इसका मूल प्रभाव यह पड़ा कि भूमि की कीमत में तेजी से वृद्धि हो गई तथा भूमि की कमी व चावल के संग्रह के परिणाम स्वरूप बढ़ती हुई आर्थिक विषमता के सम्मुख उदार पारिवारिक व्यवस्था भूमि पर सशक्त नियन्त्रण रखने में असफल हुई।

कुल के निजी स्थायित्व की व्यवस्था के परिणाम स्वरूप संपत्ति का एकेन्द्ररण हुआ जिसके परिणाम स्वरूप सुदृढ़ राजनीतिक प्रभाव ओमी अर्थात् महान् व्यक्तियों के हाथ में चला गया। संपत्ति से पक्षपात प्रारम्भ हुआ, साधारण कुलों के मुखिया उन शक्तिशाली परिवारों के समर्थक बन गए जिन्होंने प्रतिभावशाली लोगों को शाही मंत्रियों के पदों पर नियुक्ति करवा कर पर्याप्त महत्ता प्राप्त करली प्रोफेसर असाक्वा ने सातवीं शताब्दी तक जो स्थिति अस्तित्व में आई थी उसका वर्णन निम्न शब्दों में किया है—

सुधार से पूर्व जापान की मूल कठिनाई उस तीव्र विरोधाभास से उत्पन्न हुई जो सम्राट की शक्ति तथा अर्द्ध जन जाती संगठनों की शक्ति के मध्य था ·· ····सैद्धान्तिक रूप में भूमि तथा जनता पर सम्राट का स्वामित्व था तथा वह राज्य का प्रतीक था किन्तु इस सत्ता का प्रयोग सम्राट कुलों तथा समूहों के मुखियाओं तथा स्थानीय सेवकों के माध्यमों से करता था। यदि ये शक्ति पुंज अधिक दृढ़ बनते तो ये सम्राट की सत्ता को चुनौती दे सकते थे। यह उल्लेखनीय है कि इस प्रकार की स्थिति का अर्थ एक जनजातीय राष्ट्र में शाही शक्ति का सीमित करना होता। जापान इस नियम का अपवाद नहीं बना।[17]

सुधार का चीनी मॉडल

यह प्रारम्भिक जापान एक सभ्य जीवन प्रणाली के मॉडल की खोज करते हुए चीन की ओर उन्मुख हुआ। आज के अमरिकी जो चीन और जापान दोनों को देख चुके है आसानी से चीन को पिछडा हुआ, भ्रष्ट तथा विसरा हुआ तथा जापान को प्रगतिशील सुसंगठित तथा सुदृढ़ कह सकते थे। तथापि यहाँ यह याद रखना महत्त्वपूर्ण है कि सातवीं शताब्दी में जापान चीन का महान् प्रशंसक था तथा उसकी ओर उन्मुख हुआ था तथा इस प्रशंसा के प्रर्याप्त उत्कृष्ट कारण तवा मौजूद थे। जैसाकि पहले वता वता दिया गया

रचना निहोंग शाकाई केइ जाइ यी (जापानीज सोश्यो इकोनामिक हिस्ट्री टोक्यों 1928 पृ० 32–35 (प्रो० होन्जो जापान का गणमान्य आर्थिक इतिहासकार है, उसकी रचना सोश्यल एण्ड इकोनामिक हिस्ट्री ऑफ जापान क्योटो 1935 जापान की राजनीति के उन छात्रों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी जो उसे जापान के समानांतर आर्थिक विकास के सन्दर्भ में समझाना चाहते हैं।

17. असाकावा पूर्वोदधृत पृ० 1351 तेइका सुधारो की आर्थिक पृ० भूमि के सर्वश्रेष्ठ वर्णन तथा शिजेको व्यवस्था की पुर्नस्थापना के लिये देखिये ये नो की सीगेजो की रचना तइका कोशिन (तेरका सुधार) निहोन केइ जैसी जितने (जापान के आर्थिक इतिहास की इन्साइक्लोपीडिया ग्रंथ 5 पृ० 960-61। प्रो होन्जो ने यह प्रतिपादित किया है कि प्रारम्भ से ही गोत्रों के नियन्त्रण का उत्थान व पतन आर्थिक सकेन्द्रण का समकक्षी रहा। उदाहरण के लिए प्रारम्भिक शोग्रा गोत्र का नियन्त्रण हाएकुरा, उचिकुरा तथा ओकुश तथा ओकुश नामेक सभी प्रारम्भिक कोशों पर था। होन्जो (अंग्रेजी अनुवाद पू)र्वोदधृत पृ० 2-6।

है तब तक चीनियों ने ऐसी सरकार का विकास कर लिया था जिसमें सर्वोत्कृष्ट गुण व्यवहार तथा सौंदर्य की आवश्यकता होती थी। सातवीं शताब्दी में इन दोनों देशों में एक अन्तर था। चीन ने विद्रोह के सिद्धान्त को स्वीकार कर नवीन धर्म निरपेक्ष राजवंशों के सिद्धान्त को स्वीकार किया था जबकि जापान वंशानुगत उत्तराधिकार को स्वीकार कर चुका था। चीन व जापान में एक अन्तर और भी है 1300 वर्ष पहले ही जापान भविष्य के बारे में चिंतित था जब कि चीन मात्र भूतकाल में रुचि रखता था। 20वीं शताब्दी के जापानी उन लोगों के वंशज हैं जिन्होंने एक विदेशी मॉडल का अनुकरण कर शिजोकू व्यवस्था से अपना बचाव किया था। चाहे उनका इतिहास का ज्ञान कितना ही अपर्याप्त क्यों न हो किन्तु वे जानते हैं कि पहले भी उनके देश ने परिवर्तन का सामना किया है तथा वे यह भी जानते हैं कि विदेशियों का अनुकरण करने से अच्छे परिवर्तन भी हुए हैं। जो कुछ जापानी जानते हैं चीनी नहीं जानते हैं। तथा इस तथ्य में इन दो देशों की सांस्कृतिक स्थितियों के मध्य सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण राजनीतिक अन्तर निहित हैं।

□□□

अध्याय 11 | चीनी साम्राज्य का जापानी मॉडल

मानव इतिहास में ऐसे उदाहरण कम होते है जब अपेक्षाकृत आदिम जाति के लोगों ने अधिक उच्च स्तरीय विदेशी सभ्यता से प्रेरणा ग्रहण कर विकास किया हो। इस प्रकार के सांस्कृतिक अनुकूलन प्रायः युद्ध के भय से होते हैं। आदिम लोगों ने तभी प्रगति की जब उन्हें वाह्य आक्रमण की चुनौती का सामना करना पड़ा फिर भी इस नियम के अपवाद पाए जाते हैं। आयरलैंड महान केल्टिक ईसाई धर्म के रचनात्मक उत्कर्ष तथा सभ्यता के उत्थान के समय भूमध्य सागर से किसी तात्कालिक खतरे से आतंकित नहीं था। प्रारम्भिक हिन्दू धर्म का जिस प्रकार दक्षिण समुद्री क्षेत्रों में विस्तार हुआ वह अपने अहिंसात्मक स्वरूप के लिए उल्लेखनीय है तथापि इसका श्रेय उन हिन्दू व्यापारियों तथा धर्म प्रचारकों जिन्होंने अपनी कला तथा विश्वास का प्रचार किया, तथा उन बुद्धिमान लोगों के मध्य बांटना चाहिए जो इस प्रकार के सांस्कृतिक वैभव को प्राप्त करने के इच्छुक थे। तथापि ईसा के पश्चात् सातवीं शताब्दी में जापानियों का प्रयास एकदम अनूठा था, क्योंकि यह पूर्णतः जापानी प्रयास था, जिसमें चीनियों तथा कोरिया वासियो का योगदान नाममात्र को था, इसके अतिरिक्त जापान में चीनी साम्राज्य के जापानी मॉडल का निर्माण शक्तिशाली चीन की किसी भी प्रत्यक्ष प्रेरणा के अभाव में हुआ था।

कोरिया पर जापान का प्राचीन स्वामित्व—

द्वितीय अथवा तृतीय शताब्दी में किसी अनिश्चित समय से लेकर सातवी शताब्दी के गम्भीरतम नौ–संकट तक आदिम जापानी राज्य तथा इसके प्राचीन जन जातीय राज्यों ने कोरिया पर विभिन्न प्रकार से राजनीतिक आर्थिक तथा क्षेत्रीय नियन्त्रण, बनाये रखा। साम्राज्ञी जिगो (201–270 ई.) जिसका नाम पश्चिमी लोगों को बड़ा विचित्र लग सकता है, को कोरिया में युद्ध करने का श्रेय दिया जाता है।

उस समय स्वयं कोरिया तीन राज्यों में बंटा हुआ था। उत्तर में आज के मंचूरिया तक फैला हुआ कोगुरू का राज्य था। दक्षिणी किनारे पर जो जापानी समुद्र की ओर था में सिला का राज्य था जिसके चिन्ह आज भी कोरिया के आधुनिक अरबी नाम अ–शिला के रूप में विद्यमान हैं। दक्षिण पश्चिमी समुद्री किनारे पर पाखे का राज्य विद्यमान था। ये तीनों राज्य अन्तर्राष्ट्रीय शक्ति सन्तुलन के लिए एक दूसरे को निगल जाने का भयंकर खेल छोटे पैमाने पर खेलते थे। इस स्थिति में जापानी एक या दूसरे पक्ष का समर्थन करते थे। साधारणतया यह समर्थन पाखे राज्य को दिया जाता था। चीन के सुई तथा तांग सम्राटों ने सिला को दृढ़ समर्थन इस सिद्धान्त के आधार पर प्रदान किया कि "निकट वाले का

विरोध कर दूरस्थ राज्य से मित्रता स्थापित करो। ताकि चीन अपने निकटतम शत्रु के सीमान्त वर्बर राज्यों से संधि कर कुचल सके। कोरिया पर चीन का प्रभाव तेजी से बढा उसने चीन की भावचित्र लिपि को स्वीकार किया तथा चीनी राजनीतिक संस्थाओं का उपयोग बढने लगा। इन कोरियाई युद्ध में भाग लेने वाले जापानी या तो उनकी तरफ से युद्ध करते थे या अपने को कोरिया में प्रत्यक्षतः आधुनिक मूसान के निकट मिमाना के छोटे पुल पर स्थित रखते थे। फिर भी वे एक गैर चीनी राज्य पर चीन के प्रभाव को नहीं रोक सके। 622 ई० तक जापान ने कोरिया में अपने प्रत्यक्ष हित को समाप्त कर दिया। तथा 622 ई० के नौ सैनिक युद्ध में चीनी तथा चीनी समर्थक कोरियावासियों ने पाखे को तथा कोरिया समुद्र में जापान समर्थक नौ शक्ति को नष्ट कर दिया।[1]

इस प्रकार जापान का सम्पर्क चीन के साथ उस अंतरंगता से जो परस्पर संघर्ष से उत्पन्न होती है उस उत्सुकता से जो बुद्धिमान लोगों में अपने शत्रु के प्रति होती है, उस कल्पना से जो एक दूरस्थ अथवा धमकी देने वाले शत्रु के बारे में होती है, तथा उस महता से जो एक विदेशी शक्ति का सामना करने में होती है—के माध्यम से हुआ।

स्वयं जापान की सुरक्षा को कोई खतरा नहीं था। कोरिया अथवा चीन से जापान को कोई भय नहीं था। किन्तु कोरिया के मामले से जापान की कल्पना शक्ति बढ़ी तथा कोरिया में जापान की हार से जापान को यह अनुभव हुआ कि राष्ट्रों में जापान की उत्कृष्टता का (जो उनके धर्म के स्वरूप में विद्यमान है) दावा विशाल चीनी साम्राज्य के सांस्कृतिक वैभव तथा युद्ध शक्ति के सम्मुख निरर्थक था।[2]

कन्फ्यूशियस का प्रकाशन—

जैसा कि चतुर्थ अध्याय में बताया गया है कि आधुनिक युग से पूर्व चीन का विश्व-व्यवस्था का विचार युद्ध नीति तथा आर्थिक व्यवस्था के विश्व में असंतुलन के विचार पर आधारित था चीन की विदेशनीति दो प्रकार के राज्यों में विभेद पर आधारित थी। प्रथम वे राज्य थे जिनमें चीन की नैतिकता पनप सकती थी तथा इस प्रकार वे अन्ततः चीन को नैतिक रूप से भेंट देने वाले राज्य बन सकते थे। तथा दूसरे राज्य वे थे जो चीनी-

1. जापानी दृष्टिकोण से इस प्रारम्भिक घुसपैठ का आलोचना विहीन वर्णन अंग्रेजी में याशी एसंकुनो की रचना जापानीज एक्सपान्शन आन द एशियाटिक कॉंटिनेन्ट, ए स्टडी इन द हिस्ट्री आफ जापान विद स्पेशल रिफेंस टु इट इन्टरनेशनल रिलेशन विद चाइना कोरिया एण्ड यूरोप, बर्कले केलिफोर्निया, 1937 (तीन खण्ड)। प्रथम खण्ड में प्रोफेसर कुनो इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि सातवीं शताब्दी के बाद जापान ने कोरिया पर अपने अधिकार का परित्याग कर दिया-यद्यपि सोलहवीं शताब्दी में हिदे योशी की नीतियां अपवाद हैं-उन्नीसवीं शताब्दी तक यही स्थिति रही।

2. विदेशी युद्धों में जापान की भागीदारी पर इतिहास के आधार पर कुछ रोचक निष्कर्ष दिये जा सकते हैं। यह सुझाव दिया जा सकता है कि जापानी किसी भी अन्य राष्ट्रीयता की तुलना में यह अच्छी तरह समझते है कि एक बार युद्ध में पराजित होने के पश्चात किस प्रकार युद्ध से हटा जा सकता है। कोरिया में अपनी पराजय के पश्चात जापानियों ने इस क्षेत्र को 100 वर्षों तक के लिए छोड़ दिया। हिदे योशी के प्रयासों के बावजूद एक बार फिर दुर्भाग्यपूर्ण पराजय के बाद जापानी कोरिया से 1875 तक पूर्णतया पृथक रहा। यदि इनमें से किसी भी पराजय को पूर्व उदाहरण के रूप में माना जाय, तो यह कल्पना की जा सकती है कि 1945 में पराजय के पश्चात दो हजार दो सौ बीसवीं ई० से पहले अथवा दो हजार पैंतालीस तक आक्रमण नहीं करेगा। यह उदाहरण अतिशयोक्ति पूर्ण लग सकता है किन्तु यह जापानी व्यवहार की मूलभूत आधार से सम्बन्धित सांस्कृतिक तथ्यों से प्रेरित है।

करण के प्रभाव में नहीं आ सकते थे। चीन तो उन्हें सम्मान नहीं देता था तथा उन्हें ऐसे बर्बर राज्य मानता था जिनमें सुधार सम्भव नहीं था। इस प्रकार अपनी सीमाओं को सुरक्षित रखने के लिए सहस्त्राब्दियों तक चीनियों ने इस नीति का अनुसरण किया कि पास के राज्यों का चीनीकरण किया तथा साथ ही जब संभव हो दूर के राज्यों के साथ संधियाँ की जाए ताकि चीन की निकटस्थ देश चीन व उसके मित्र राज्य के बीच फंस जाए।

जहां तक भूमि को प्रत्यक्षतः अधिकृत करने का प्रश्न था चीन का साम्राज्यवाद आर्थिक दबाव वाला था। चीन का विकास कई शताब्दियों में धीरे धीरे हुआ था। यांग्ज नदी के दक्षिण का प्रदेश हेन राजवंश के पश्चात से निरन्तर चीनियों के अधिकार में रहा था। 13 वीं शताब्दी तक स्यामवासियों को आज के यूनान प्रदेश से नहीं हटाया गया था तथापि जो क्षेत्र चीन के अधिकार व कृषि के क्षेत्र से बाहर थे उनमे चीन ने उल्लेखनीय रूप से कम व्यापारिक अथवा सैनिक रुचि दिखाई। उन्होंने मध्य एशिया में अपने रेशम के व्यापार को सुरक्षित रखने के लिए व्यापक सेनाएं रखीं। किन्तु फारमोसा में उन्होंने हाल ही में अपनी रुचि रखी। तथा चीन के कई व्यापारियों के फिलीपिन्स तथा बोर्नियो में बस जाने के बावजूद चीनी सरकार ने शताब्दियों तक उन्हें सरकारी तौर पर स्वीकार नहीं किया था।

इस प्रकार जापान में चीनी संस्कृति का प्रसार चीनियों के लिए तत्कालिक महता का नहीं था तथा उनके लिए यह मात्र दूर स्थित सैद्धान्तिक हित की बात थी। यदि जापान चीन के निकट हुआ होता तो यह सम्भव था कि चीनी सेनाएं जापान पर आक्रमण कर उसे अपने नैतिक नियमों तथा आधीनता को स्वीकार करवा लेती। तथा यदि जापान चीन के सीमान्त प्रदेश का निकटस्थ राज्य होता तो यह सम्भव था कि चीनी दूत जापानी नायकों अथवा सम्राट को एक सामान्य शत्रु के विरुद्ध युद्ध करने के लिए बाध्य करता।

जापान की समुद्री स्थिति ने इन दोनों विकल्पों का निशेध कर दिया। जापान वस्तुतः बहुत दूर था। परिणामतः कोरिया जापान के लिए चीन की मुख्य भूमि की संस्कृति का प्राथमिक रूप से मध्यस्थ साबित हुआ। एथेंस की सभ्यता के जो कुछ प्रतीक जापान तक कुछ कलात्मक नमूनों तथा संगीत के प्रकारों के रूप में पहुंचे वे कोरिया के माध्यम से ही पहुंच सके थे। हिन्दू सभ्यता के अच्छे गुणों का स्तब्ध करने वाला प्रभाव भी कोरिया के माध्यम से आया था। जापानी लोगों को जिन्होंने अभी तक किसी तत्व दर्शन का ज्ञान प्राप्त नहीं किया था भारतीय सभ्यता में उदार तथा परिपक्व, तत्व-मीमांसा के दर्शन हुए। अधिकांश चीनी प्रतिमान भी जापान में कोरिया के माध्यम से ही आए थे।

जापानियों के लक्ष्य का निर्धारण तब हुआ जब वे कोरिया गये। जापानियों के लक्ष्य न तो भारत से आने वाले सन्त थे और न ही कन्फ्यूशियसवाद का प्रचार करने वाले चीनी सन्त थे। अपितु ये सरकार के प्रकार थे जिन्होंने कोरियावासियों ने भी चीनियों से ग्रहण किया था। कोरिया के राजा लोग अपने निहित स्वार्थों के लिए जापानियों का समर्थन चाहते थे ताकि जापानी संघर्षरत कोरिया वासियों के लिए खून बहा सके। अतः वे जापानियों को उच्चस्तरीय चीनी संस्कृति के लाभों के प्रति आकर्षित करते रहते थे। कन्फ्यूशियस राजनीतिक एवम् नैतिक विचार तथा बौद्ध धर्म के धार्मिक विचार जापान में उन कोरियावासियों द्वारा ले जाए गए थे जो इन सांस्कृतिक उपहारों के बदले जापानियों का

समर्थन प्राप्त करना चाहते थे। 522 ई० में पाले के राजा ने जापान को एक बुद्ध की मूर्ति भेजी तथा बौद्ध धर्म को स्वीकारने का आग्रह किया। पाले के अन्य दूत अपने साथ कन्फ्यूशियसवाद के प्रतिष्ठित ग्रन्थ लाये तथा साथ में जापान के युवराज को पढ़ाने के लिए एक विद्वान भी भेजा गया।

बौद्ध धर्म ने जापान में स्थानीय अध्यात्म तथा दर्शन की संस्कृति में अभाव को शीघ्रता से पूरा किया तथा कन्फ्यूशियसवाद जापान के लिए अधिक सरल व सहज सिद्ध हुआ। चीनी विचार जापान के लिए विदेशी होते हुए अव्यवहारिक सिद्ध नहीं हुए। कन्फ्यूशियस विचार विश्व के प्रति जापानी दृष्टिकोण के अनुकूल थे तथा वे जापानियों को विदेशी लगने के विपरीत अधिक प्रगतिशील लगे होंगे।

जापान में कन्फ्यूशियस धारणाएं—

कन्फ्यूशियस विचार अपने चीनी स्वरूप के संक्षिप्त आकार में जापानियों द्वारा इतने भले ढंग से समझे गए कि सातवीं शताब्दी में जापानियों को चीनी मॉडल पर्याप्त परिचित लगा।

उदाहरण के लिए कन्फ्यूशियसवाद ने जापानियों के इस विश्वास को और अधिक दृढ़ बनाया कि समाज व्यक्ति से अधिक महत्वपूर्ण है। वस्तुतः सामाजिक सम्पर्कों के अभाव में व्यक्ति का कोई अस्तित्व ही नहीं है। कन्फ्यूशियसवाद द्वारा स्वीकृत पांच सम्बन्धों (प्रजा व शासक, पति तथा पत्नि, माता-पिता व सन्तान वरिष्ठ व अनुज भाई तथा मित्र) ने मानवीय अस्तित्व को अर्थपूर्ण बना दिया। जापानियों ने इसे अपने तरीके से जापान के परिवार रूपी राष्ट्र तक व्यापक बना दिया।[3]

कन्फ्यूशियस विचार कि सम्राट उदार सरकार का पवित्र स्रोत होता है सैद्धान्तिक नियन्त्रण को व्यापक बनाने का प्रयास है। यद्यपि जापानी कभी भी अच्छे आचरण के नियमों का प्रशिक्षण देकर तथा विद्वान प्रशासकों के गैर वंशानुगत वर्ग में अच्छे आचरण को व्यक्तिरूप प्रदान कर, कभी भी नैतिकता का नियन्त्रण करने के परिष्कृत चीनी तरीकों को भली प्रकार से नहीं सीख पाए। जापानी कन्फ्यूशियस भाषा को उस धर्म निरपेक्षता के साथ ग्रहण नहीं कर पाए जो चीनी सन्दर्भ में उसमें निहित थी। सम्राट के सम्बन्ध में चीनी विचार को अपने मूल्यों के अनुकूल ढालने के लिए जापानियों ने, चीनी जो कुछ औपचारिकता में कहते थे उसे वास्तविकता में स्वीकार लिया तथा इस प्रकार अपने धार्मिक

3. इस प्रकार काफी बाद तक परम्परा जापानी पूंजीपतियों द्वारा प्रतिपादित व्यक्तिगत प्रयास अथवा साम्यवादियों के वर्ग संघर्ष के विचार अथवा प्रजातंत्र की दलीय निष्ठा पर अत्यधिक निर्भरता के संशकित रहे। दो विभिन्न क्षेत्रों में आधुनिक जापानी रचनाओं के लिए गए उदाहरण इस विरासत को स्पष्ट करते हैं। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री तथा केओ विश्व विद्यालय के चांसलर प्रोफेसर कोइ जूमी शिजो ने एक अर्थशास्त्री पुस्तक में लिखा कि वास्तविक आर्थिक व्यक्ति राबिन्स क्रूसो है जो डेनियल डीफो अथवा रिकार्डो की कल्पना में ही विद्यमान है। अर्थशास्त्र पर ग्रन्थ टोकियो 1948 पृ. 11)। जापानी सांसदों के डीन ओजाकी यूकियो जो जापानी उदारवाद का नेता था ने सर्वदा यह माना कि जापान में स्थापित राजनीतिक दल व्यक्तिगत गुटबाजी थे। नेता तथा उसके समर्थकों के मध्य सम्बन्ध सामन्त तथा उसकी प्रजा के समान थे चूंकि 1920 व 1930 की शताब्दियों में जापानियों ने दलों को गुट के रूप में देखा अतः उनकी दृष्टि में वे मूल्यहीन हो गयी (के के कावाकामी सम्पादक, व्हाट जापान थिंक्स न्यूयार्क 1931 अध्याय 4, ओ जाकी यूकियो "जापान की त्रुटि पूर्ण संवैधानिक सरकार" पृष्ठ 63 से 78) आर के हलोई की रचना जापान, गवर्मेंट पॉलिटिक्स पूर्वोद्धृत 24 भी देखिए।

विश्वासों को, सम्राट की स्थिति को उचित ठहराने के लिए प्रयुक्त किया। इस प्रकार स्वाभाविक रूप में जापानी यह विश्वास करने लगे कि सांस्कृतिक एकता में धर्म नीति, तथा राजनीति एक होते हैं। एक पश्चिमी प्रेक्षक के लिए जो जापान से अनभिज्ञ हो यह समझ यह समझना कठिन हो सकता है कि किस प्रकार एक वास्तविक जापानी शितोवादी, कन्फ्यूशियसवादी तथा बौद्धधर्मावलम्बी अथवा ईसाई एक साथ हो सकता हैं। किन्तु जापानी के लिए यह बड़ा सरल है शितो उसे यह बताता है कि वह कहाँ से आया है, कन्फ्यूशियसवाद उसे यह बताता है कि उसे क्या करना चाहिए तथा बौद्ध धर्म उसे यह बताता हैं कि वह यहाँ से कहा जाएगा। जापानी के लिए धर्म को राजनीति से पृथक करने की कोई आवश्यकता नही है क्योंकि सरकार या तो नैतिक हो सकती है या अनैतिक हो सकती हैं। किन्तु यह किसी भी प्रकार नैतिकता विहीन नही हो सकती है। अन्ततः शितो तथा कन्फ्यूशियसवाद दोनों ने जापानियों को यह सिखाया कि प्रकृति से ही सभी मनुष्य असमान हैं। शितो पद सोपानक्रम व्यवस्था के अनुसार यह असमानता कुल पर उसी प्रकार आधारित थी जिस प्रकार यूरोप के कुछ देशो में यह अभिजात वर्ग में अभिव्यक्त होती है। कन्फ्यूशियसवाद मूल रूप में इस उच्च कुल की वंशानुगत उत्कृष्टता के सिद्धान्त का विरोध करता है। किन्तु कन्फ्यूशियसवाद इसे इस रूप में स्वीकार करता है कि श्रेष्ठता तथा निम्नता का आधार वैयक्तिक गुण होते हैं,[4] इस प्रकार यह असमानता को एक तथ्य के रूप में स्वीकारता है तथा साथ ही यह व्यवस्था भी करता है कि वैयक्तिक विकास के द्वारा निम्न परिस्थिति को उच्च परिस्थिति में बदला जा सकता है। इस प्रकार जापानियों के लिए यह सम्भव हुआ है कि कन्फ्यूशियसवाद के कुछ तथ्यो को स्वीकार कर अन्य बौद्धिक तत्वों को छोड़ सके ताकि कन्फ्यूशियसवाद उनकी परिस्थितियों के अनुकूल बन सके।

इसी प्रकार के कुछ मूल परिवर्तन बौद्ध धर्म में भी किये गए। जब तक जापान में बौद्ध धर्म की ठीक प्रकार से स्थापना हुई, चतुर जापानी यह मानने लगे थे कि स्वयं बुद्ध भगवान सम्राट में अवतरित हुए थे जो अमातरसू ओमीकामी (सूर्य देवी) के रूप में स्थित था। गौतम बुद्ध के इस जापानीकरण की तुलना जयावरण 7 की धार्मिक विक्षिप्ता से की जा सकती है जिसने यह आदेश निकाला था कि स्वयं उसका "अंह्य" सम्पूर्ण विश्व को संचालन करने वाली शक्ति है अथवा न्यूयार्क के राज्य में जोसेफ स्मिथ की इस सुविवाजनक खोज से की जा सकती है कि ईसा ने अमेरीकी अवतार लिया था।

जापानी सभ्यता पर बौद्ध धर्म का गंभीर प्रभाव पडा क्योंकि इसने जापानियो को वो आध्यात्मिक मूल्य प्रदान किये जिनसे वे आज तक अनभिज्ञ थे। सरकार की आत्मा पर बौद्ध धर्म का गंभीर प्रभाव पड़ा। किन्तु इसके संगठन पर ये प्रभाव नाममात्र को थे। बौद्धधर्म ने सामन्तवादी राजमंत्री जापान् में व्याप्त असमानताओ तथा विषमताओं को स्वीकारने के लिए आध्यात्मिक सहानुभूति प्रदान की। एक बार स्थापित हो जाने के पश्चात्

4. यहा जिसे सद्गुण का सदर्भ दिया गया है वह कन्फ्यूशियस विचार तहे है यह यूरोपीय दृष्टिकोण से इटेलियन पुनंजागरण के काल से सदगुण अधिक साम्यता रखता है। जबकि आधुनिक अंग्रेजो का सद्गुण अपेक्षाकृत सकुचित अर्थ रखता है। चीनी तेह के समान इटली का सद्गुण कुछ मूल प्रश्नो की जिज्ञासा करता है जैसे कि मनुष्य क्यो अच्छा है। उसकी अपनी निजी क्षमता क्या है? वे कौन से कारक हैं जिनसे वह अपने निजी 'वैयक्तिक तथा विशिष्ट गुणों का प्रदर्सन कर सकता है? किस प्रकार सर्वोत्तम तरीके से एक व्यक्ति अपने मानवीय अस्तित्व को परिपूर्ण एवं प्रदर्शित कर सकता है।

बौद्धधर्म सरकार के साधन के रूप में प्रयुक्त किया गया। यद्यपि बौद्ध धर्म जापान में तीन अमूल्य निधियां (बुद्ध धर्म अथवा विधि, तथा संघ अथवा पुजारी) लाया तथा यद्यपि इसने जापानी विश्वास, नैतिक आचरण संस्कार, पारिवारिक, रिवाजों, वास्तु तथा स्थापत्यकला औद्योगिक कला आर्थिक आचरण तथा व्यावहारिक राजनीति को प्रभावित किया तथापि इसने सरकार की संरचना अथवा उसकी तकनीकी प्रक्रिया को उतना प्रभावित नहीं किया जितना कन्फ्यूशियसवाद ने प्रभावित किया।[5]

प्रथम महान् जापानी करण कर्त्ता—शो तोकू तैशी—

प्रथम महान् जापानीकरण कर्त्ता एक जापानी राजकुमार था, जिसका जन्म का नाम उमायदो था (जो वस्तुतः अस्तवल का दरवाजा होता है। तथा इसमें मेंगर की कथा की प्रतिध्वनि प्रतीत होती है) तथा जो बाद में संत राजकुमार के नाम से विख्याति (शोतोकू तैशी) हुआ। वह 573 ई० में पैदा हुआ था तथा जापान की इतिहास की पुस्तकों के अनुसार सम्राट सुइको ने उसे 20 वर्ष की आयु में साम्राज्य का रीजेंट नियुक्त किया था। अपने सरकारी जीवन में प्रारम्भ में ही उसने अपने प्रयास बौद्ध धर्म के अध्ययन तथा प्रचार में केन्द्रित किये। बाद में उसने दरबारी पदों के 12 स्तर निर्धारित किये तथा वंशानुगत पदाधिकार समाप्त कर दिया तथा इस प्रकार योग्य लोगों के लिये भी सरकारी पदों पर नियुक्त होने को अवसर बढ़ गए। उसने स्वयं परम्परागत कथाओं का संकलन किया। शाही घराने तथा कुलों से सम्बन्धित व्यापक तथ्यों को पुनः व्यवस्थित किया तथा जापान में एक कार्यकारी राज्य की आवश्यकता के बारे में चेतना उत्पन्न करने का प्रयास किया।[6]

शोतूकू तैयशी की प्रसिद्धि उसके ग्रंथ कैंपो —जसहिचियो पर निर्भर है जिसको पश्चिमी भाषाओं में अनुवादित करते समय बढ़ा चढ़ा कर "17 अनुच्छेदों वाला संविधान कह दिया जाता है।

वस्तुतः जैसा कि प्रोफेसर असकावा ने बताया है राजकुमार की संहिता आधुनिक अर्थों में न तो संविधान है न कोई कानून है। क्योंकि न तो यह राज्य रूपी संस्था का वर्णन करता है न कोई सकारात्मक विधियों को निहित करता है तथा न ही किसी प्रकार की दंड

5. यद्यपि नारा युग को (710 से 793) बौद्ध धर्म की प्रार्थनाओं द्वारा शासन का काल कहा जाता है। इसके अतिरिक्त अवकाश प्राप्ति उपरोक्त सामान्यीकरण का अपवाद लगती है। अवकाश प्राप्ति सम्राट दरबारी अथवा एक परिवार के मुखिया द्वारा किए जाने वाला व्यवहार था, आज भी जापान में लोगों के द्वारा अवकाश प्राप्त कर मृत्यु के लिए तैयारी करने का आचरण पाया जाता है। कुछ रचनाएँ इस संदर्भ में राजनीतिक दर्शन पर धर्म के प्रभाव को स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त होंगी—कन्फ्यूशियसवाद के लिए देखिए आर०सी० आर्मस्ट्रांग, पूर्वोद्धृत, बुद्धिज्म के लिए एक रेचोर स्टैंडोज इन जापानी बुद्धिज्म न्यूयार्क, 1925, कावड़ा शीरो तथा ओकामोतो हचीरो की रचना द जापानी इकोनोमी एण्ड बुद्धिज्म, टोकियो 1912 (विशेषतया प्रथम अध्याय जो बौद्ध धर्म के आगमन से पूर्व सामान्य अवस्थों का वर्णन करता है)। अंग्रेजी में इन सब प्रभावों को संक्षिप्त वर्णन जापान, गवर्नमेंट एण्ड पोलीटिक्स पूर्वोद्धृत अध्याय 1 में है।

6. इस राजकुमार के (573-621) जन्म का नाम इमेयादो था 604 में अपनी मुख्यतया संहिता के पश्चात् उसका शिक्षा विधि का महान राजा पड़ा। उसके जीवन वर्णन के लिए निहोन शोकी पूर्वोद्धृत पुस्तक संख्या 22 का इवानामी संस्करण देखिए। इस राजकुमार के जीवन काल एवं कार्यों का सर्वाधिक विस्तृत वर्णन हरमन बोनर की शोतोह तेइशी, टोकियो, 1940 (जर्मन भाषा में है। जिसमें गो वो क्तेइची के प्रारम्भिक जीवन के बारे में दो महत्त्वपूर्ण प्रलेख भी अनुमानित किये गये हैं।

व्यवस्था का प्रतिपादित करता है। यह संहिता बौद्ध अथवा चीनी नैतिक सूत्रों समूह मात्र हैं। इसमें जापान के साम्राज्य के लिये किसी विशिष्ट राजनीति संरचना की वैसी स्पष्ट धारणा विद्यमान नहीं है जो 645 ई० के बाद वाले सुधारों में स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। यद्यपि राज्य रूपी विचार तीन अनुच्छेदों में प्रयुक्त है किन्तु यह विचार चीन से लिया गया है तथा यह जापानी संदर्भ में नहीं है। संविधान में जापान के सम्राट को विभिन्न प्रकार से सम्बोन्धित किया गया है सम्बोधन किसी भी गैर जापानी प्रकार के संप्रभु पर भी लागू किया जा सकता है। इसमें मूल महत्व सरकारी अधिकारियों को दिया गया है। कुलों के मुखियाओं को नहीं तथा वरिष्ठ व कनिष्ठ अधिकारियों में भेद नौकरशाही अर्थों में स्थापित किया गया है। स्पष्टतया तथा राजकुमार चीनी विचारों के आधार पर विचार कर रहा था।

तथापि उसके उद्देश्य की दिशा पूर्णतः स्पष्ट थी वह चीनी शासन प्रणाली तथा प्रक्रिया में से उन तत्वों को चुनना चाहता था जो जापानी परिस्थितियों में उपयुक्त होते। यदि जापानी दृष्टिकोण से वह चीनी करण करने वाला था तो जहां तक विषय वस्तु का प्रश्न था वह जापानीकरण करने वाला अधिक था। अपने बाद के उत्तराधिकारियों के समान उसका उद्देश्य जापान को चीनी बनाना नहीं था अपितु चीन की सर्वश्रेष्ठ विशेषताओं को जापानी बना लेना था। यह विशेष दिशा निर्धारण तथा आन्तरिक विलीनीकरण वह उल्लेखनीय विशेषता है जो न केवल सातवीं शताब्दी के सुधारों को अपितु 19 वीं शताब्दी के महान् परिवर्तनों तथा 20 वीं शताब्दी में होने वाले परिवर्तनों को महत्त्वपूर्ण बना देती है। प्रत्येक बार जब जापान किसी विदेशी संस्कृति से कुछ ग्रहण करता है तो विदेशियों की दृष्टि में वह जापान का चीनी करण अथवा यूरोपीयन करण अथवा अमेरिकी करण होता हैं किन्तु यदि दूसरी दृष्टि से देखा जाए जैसा प्रायः बुद्धिमान, महत्वाकांक्षी उद्देश्यात्मक जापानी स्वयं सोचते है तो यह प्रक्रिया जापान के नेताओं अथवा प्रमुख समूह के द्वारा चीनी संस्कृति का, यूरोपियन उद्योगवाद का, तथा अमेरिकी प्रजातन्त्र का जापानीकरण है। इस कार्य में शो तोकू विशेष रूप से प्रथम था। उसके कार्यो की महत्ता इस बात में है कि उसने एक विदेशी संस्कृति के कुछ तत्वों को छोड़कर अन्यों को यह मान कर ग्रहण किया कि वे उसके देश में सफलतापूर्वक स्थापित हो कर उसकी संस्कृति को समृद्ध बनायेंगे।

इस संविधान का संक्षिप्त सारांश इस प्रकार किया जा सकता है। प्रथम, अनुच्छेद चीनी तरीके से गुटबंदी का विरोध कर सामंजस्य का समर्थन करता है। द्वितीय अनुच्छेद बौद्ध धर्म की तीन नितियों की विभिन्नयों की प्रशंसा करता है। तृतीय अनुच्छेद नपे तुले चीनी शब्दों में जापानियों से सम्राट की आज्ञा पालन का आग्रह इस प्रकार करता है—

जब तुम्हे सम्राट के आदेश प्राप्त हों उनको पालन करने में किसी प्रकार की बाधा मत डालो। स्वामी स्वर्ग है तथा राज्य पृथ्वी है। तथा स्वर्ग का विस्तार होता है जिसे पृथ्वी सहती है।

चार तक के अनुच्छेद चीनी प्रभाव को स्पष्ट करते हैं। चौथा मन्त्रियों को गौरवपूर्ण बने रहने तथा। पांचवा व छटा उन्हें चापलूसी व झूठी से सतर्क रहने को कहता है तथा सांतवा अनुच्छेद यह व्यवस्था करता है कि "प्रत्येक व्यक्ति अपने दायित्वों को समझे तथा उनमें किसी प्रकार का भ्रम उत्पन्न नहीं करो। आंठवा अनुच्छेद सरकारी अधिकारियों से

प्रातः काल जल्दी सार्वजनिक कार्य करने तथा रात में देर तक कार्य करने का आग्रह करता है।

नौवां, दसवां तथा ग्यारहवां अनुच्छेद कठोर परिश्रम, सद् विश्वास प्रशंसा गुणों के पुरस्कार, क्रोध की भर्त्सना तथा अपराधों के दंड की व्यवस्था करते है। अनुच्छेद बारह अर्द्ध जन जातीय पद सोपान क्रम का जो उस समय विद्यमान थी, खंडन करता है तथा यह व्यवस्था करता है कि प्रान्तीय अधिकारियों तथा स्थानीय शासकों को अपनी इच्छा से लोगों पर बलपूर्वक आदेश नहीं थोपने चाहिये ···· ····क्योंकि एक देश में दो स्वामी नहीं हो सकते हैं तथा एक ही जनसमुदाय के दो अधिपति नहीं हो सकते हैं।

13 से सोलह अनुच्छेद मन्त्रियों व अधिकारियों के लिये सामान्य निर्देश हैं। सत्रहवां अनुच्छेद यह चेतावनी देता है कि महत्वपूर्ण मामलों पर निर्णय एक व्यक्ति द्वारा नहीं करना चाहिये। कई लोगों द्वारा उन पर विचार विमर्श करना चाहिये। इन अनुच्छेद का मूल चीनी भाषा में लिखा गया था—जिसे पूर्णतः जापान की पुरोहितों की भाषा के रूप में स्वीकार कर लिया गया था।[7] विषय वस्तु की दृष्टि से ये अनुच्छेद शिंतो कन्फ्यूशियसवाद बौद्ध धर्म तथा चीनी विधि व्यवस्था का सम्मिश्रण थे। आर्थिक दृष्टि से शातोयू तैशी का विचार था कि शाही घराने के खजाने की समृद्धि ऐसा महान् लाभ थी जिसके बारे में कुछ कहना पर्याप्त नहीं था। राजनीतिक दृष्टि से संविधान एक दृढ़ शासक तथा दुर्बल कुलों के साथ राज्य के सम्बन्ध का एक नवीन दृष्टिकोण प्रस्तुत करता था। कानूनी दृष्टिकोण प्रस्तुत करता था। कानूनी दृष्टि से इसने न तो तथ्यात्मक न प्रक्रियात्मक विधि का प्रतिपादन किया इसके विपरीत इसने नैतिक मान्यताओं पर जोर देकर कानूनी प्रश्न को टालने की कोशिश की गई।

इस राजकुमार की 621 ई. में कम उम्र में ही चीन के साथ प्रत्यक्ष सरकारी सम्बन्ध स्थापितकरने के अपने अन्तिम महान कार्य की पूर्ति करने के साथ ही मृत्यु हो गई। सुई सम्राट के परिवार ने जापान को इतना प्रभावित किया था कि जापान ने एक राजदूत चीन भेजा जिसके चीन पहुँचने तक महान् एवं शक्तिशाली तांग वंश के सुई का स्थान ग्रहण कर लिया था।

जापान में तांग मॉडल—

तांग मॉडल ने तैयका (646 ई०) तथा तैहो (702 ई०) को प्रेरणा प्रदान की। राजकुमार शोतोकू के संविधान के समान ही तैका सुधार भी एक प्रारम्भिक प्रारूप था। राज्य के मूल आधारों की व्यवस्था करते हुए इनका विचार ऐसी संरचना का निर्माण करता था जो वर्षों तक बनी रहनी। ये मूल आधार निम्न थे भूमि का राष्ट्रीयकरण प्रशासन का केन्द्रीयकरण जनता का रजिस्ट्रेशन तथा उत्पादन पर करारोपण। तैहो सुधारों ने अधिक स्पष्टता व्यावहारिकता तथा प्रभावकारी ढंग से प्रशासनिक तथा न्यायिक संहिता को विस्तार से प्रस्तुत किया।

सातवी शताब्दी का जापान अनेकों विरोधाभासों से परिपूर्ण था। शाही कबीला कला तथा स्थिरता की प्रगति के साथ यद्यपि सरकार बन गयी थी किन्तु अभी भी यह

7. संविधान का अंग्रेजी रूपान्तर पुस्तक में पूर्वोद्धृत अध्याय 2 पृष्ठ 128–132 में आर्थर एल सैडलर की रचना ए शोर्ट हिस्ट्री आफ जापान व सिडनी एण्ड लन्दन 1946, पृष्ठ 327–329 तथा जोसफ एच लौंगफोर्ड की रचना द स्टोरी आफ ओल्ड-जापान न्यूयार्क 1910 पृष्ठ 371–374।

सरकारी तरीके से स्वयं को प्रभावकारी बनाने में साधन ढूंढ़ने में सफल नहीं हुआ था। दरबार में दुर्बलता तथा लापरवाही विद्यमान थी। स्थानींय सरकार में अनियमितताएँ तथा नियन्त्रण का अभाव था। निहोन शोकी से ऐसा प्रतीत होता है कि कई जापानी ये सोचते थे कि उनकी मूल संस्थाएँ संकटकालीन स्थिति में पहुँच गई थी। संकट का मूल कारण कुलों के मुखिया थे जो एक ओर सम्राट की शक्तियों पर आघात पहुँचाते थे तथा दूसरी ओर जनता से अधिक कर तथा बेगार लेकर तथा कभी कभी संम्पत्ति हीन कर उस पर अत्याचार करते थे।

जापान के दरबार में बुद्ध धर्म को स्वीकार करने के प्रश्न को लेकर नाकातोमी नामक कुल ने अपना समर्थन वापिस ले लिया जिसका स्थान सोगा कुल ने ग्रहण किया। सोगा कुल शोतोकू तैशी का समर्थन करता था। तथा इस प्रकार चीन का समर्थक था यह शाही शक्ति को प्राप्त करने की चेष्टा भी कर रहा था। अतः जब तक शाही कुल ने सोगा कुल से युद्ध नहीं कर लिया तब तक सुधारों को स्थगित कर दिया गया। 645 ई० में सोगा का पतन हुआ तथा उसी वर्ष जून में शाही महल के काउंसिल हॉल में सुधारों के प्रथम चरण की घोषणा की गई। इतना समय भी नही मिल सका कि उस हाल के फर्श को साफ कर लिया जाता जिसमें मात्र सात दिन पहले एक सोगा नेता की हत्या की गई थी।

शाही कुल से बाहर दूसरा महान् जापानी करण करने वाला व्यक्ति नाकातोमी कामातारी था जो अपने बाद के नाम फुजीवारा कामातारी से अधिक जाना जाता है। इसने बाद में फुजीवारा कुल की स्थापना की तथा सम्राट समर्थक संविद का यह मुखिया रहा उसके नेतृत्व में सोगा कुल को हराया गया। सोगा कुल के प्रभाव स्थलों का सफाया कर दिया गया। सोगा प्रभाव से जिस साम्राज्ञी को पदारूढ़ किया गया था उसे अपदस्थ किया गया तथा उसके स्थान पर उसके भाई कोतोकू को सम्राट बनाया गया।[8]

द्वितीय महान जापानीकरण कर्त्ता फुजीवारा कामातारी

राजगद्दी के पीछे वास्तविक सत्ता फुजीवारा कामातारी के हाथ में रही जिसने प्रारम्भ से ही दो जापानियों की सहायता से कार्य किया। इन दोनों व्यक्तियों ने चीन में अध्ययन किया था तथा उन्हें बाद में साम्राज्य के विद्वानों की उपाधि से विभूषित किया गया। कामातारी से कन्फ्यूशियस वाद का ज्ञान प्राप्त किया। सम्राट को कोतू स्वयं बौद्ध था स्वयं एक कन्फ्यूशियस वादी था जिसने जापान में ही रह कर द्वितीश्रेणी में तथा उसने बौद्ध धर्म को इतनी अधिक गम्भीरता से स्वीकारा कि वह उन मूल विश्वासों के प्रति भी लापरवाही हो गया जिन पर स्वय उसकी शक्ति तथा व्यक्तित्व निर्भर करता था। सुधारों के पीछे मूल प्रेरणा स्वयं कामातारी का व्यक्तित्व था तथा जिस नये कबीले

8. जैसा कि जार्ज सैमसन ने बताया है सुधारों से पूर्व की प्रक्रिया तत्कालीन जापानी राजनीतिक विकास के विशेषताओ को निहित करती है। कामातारी जो कन्फ्यूशियसवादी था सम्राट की चीनी अवधारणा पर जापानी चिंतन के प्रभाव को प्रस्तुत करता था शोगाकू से संघर्ष गोत्रीय राजनीति की प्रमुखता का प्रतीक था। नवीन सम्राट स्वयं बोद्धवलम्बी था तथा उस धर्म को हीनता की दृष्टि से देखता था जिस पर स्वयं उसकी प्रतिष्ठा निर्भर करती थी। साम्राज्य का त्याग राजसिंहासन द्वारा किए गए अनेकों समर्थकों में से प्रथम था महान मन्त्रियों का परामर्शदाता का कार्य अप्रत्यक्ष सरकार का प्रारम्भिक उदाहरण था। जी. बी. सैंमसम पूर्वोद्धृत पृष्ठ 94।

की स्थापना उसने की थी वह उसकी मृत्यु के पश्चात् भी कई शताब्दियों तक जापान की राजनीति में सक्रिय कारक बना रहा।

अपने शासन काल के प्रारम्भ में ही बादशाह कोतोकू ने जापान के प्रथम शाही युग की उद्घोषणा की जिसे तैका नाम से सम्बोधित किया जिसका अर्थ 'महान सुधार' का युग होता है। वस्तुतः राज्य व्यवस्था के प्रत्येक स्तर पर सुधार का प्रयास किया गया। उसमें केन्द्रीय सरकार में नवीन विभागीय व्यवस्था को प्रारम्भ करने से लेकर स्थानीय प्रशासन की लघुतम ईकाई तक सम्मिलित थी। नौकरशाही के वेतनमानों को निश्चित करने के साथ प्रान्तों में भूमि करारोपण तथा सैनिक दायित्वों का भी समान वितरण किया गया। (एक क्रमवद्ध विवरण परिशिष्ट 8 पृष्ठ 582-583 सुधारों के सन्दर्भ में उठाये गये महत्त्वपूर्ण कदमों को स्पष्ट करता है तथा यह बताता है कि किस सीमा तक ये सुधार नवीनीकरण की योजना प्रस्तुत करते थे।)

645 ई. की विज्ञप्तियाँ वस्तुतः राजधानी के निकट स्थित पूर्वी प्रान्तों को सम्बोधित की गई थी। बाद में सभी प्रान्तों को विशेष दूत जापानी नियन्त्रण में भेजे गये जिन्होंने प्रान्तों में जाकर शस्त्रों का संग्रह किया तथा जनगणना की। किन्तु सुधारकों को अपनी रफ्तार नियन्त्रित रखनी पड़ी। लगभग 60 वर्षों तक उच्च वर्गों में इन सुधारों के बारे में पर्याप्त राजनीतिक अशान्ति रही। क्योंकि वे नवीन व्यवस्था के अन्तर्गत अपने अधिकारों व प्रस्थिति के प्रति सशंकित थे। 646 तैका के दूसरे वर्ष में प्रथम माह में सम्राट ने शाही सुधार घोषणा की। जिसमें चार संक्षिप्त अनुच्छेद निहित थे। यदि ये अनुच्छेद लागू हो गए हो तो इन्होंने जापान की राजनीतिक व आर्थिक संरचना को पूर्णतया परिवर्तित कर दिया होता। इन प्रावधानों को संक्षिप्त में इस प्रकार कहा जा सकता है—

(1) सार्वजनिक भूमि तथा सार्वजनिक नागरिक की अवधारणा के आधार पर राष्ट्रीयकरण तथा कुलों द्वारा नियन्त्रित श्रमिक संघों का निर्माण करना।
(2) काउन्टी तथा प्रान्तीय व्यवस्था में सरकार का केन्द्रीयकरण तथा राजनीतिक अर्थतन्त्र की कुछ प्रधान व्यवस्था को समाप्त करना।
(3) जनसंख्या की परिवारों के आधार पर रजिस्ट्री करना तथा खाने वाले सदस्यों को खेत के आधार पर भूमि का वितरण करना।
(4) भूमि, श्रम तथा उत्पादन का एक निश्चित अनुपात करारोपण के रूप में इस प्रकार निर्धारित करना कि शाही खजाने को प्रत्यक्ष लाभ हो।

इन चार संक्षिप्त अनुच्छेदों के माध्यम से जापान में एक नवीन भूमि व्यवस्था स्थानीय शासन व्यवस्था तथा कर व्यवस्था का प्रारम्भ होना था। इन अर्थों मे तैका का तात्पर्य जापानी में, शिखर से क्रान्ति का होना था जिसमें इन चार अनुच्छेदों के माध्यम से न केवल अर्थ शीक का पुनर्वितरण किया जाना तथा राजनीतिक सत्ता को भी कबीलों से लेकर केन्द्रीय सरकार मे निहित करना था।[9]

9. भोंगमूशो, निहोन नो टेकोशों, उद्धृत अध्याय 3 विशेषतया भाग दो, ता जाकी माशायोसू, तेइका केरचिग शाकाइजू तेइ जे जो ओम्बोवी नी चो शो जो नो इगो (तैइका सुधारो का सामाजिक आर्थिक तथा दार्शनिक अर्थ वाणिज्य के को ने विश्वविद्यालय का नेशनल इकोनोमिक जनरल) खण्ड 17 संख्या 3 सितम्बर 1914। अंग्रेजी में सर्वोच्च विश्लेषण आशाकावा का है पूर्वोद्धृत पृष्ठ 280-270 जिसमें से अधिकांश घटनाओं का क्रम लिया गया है। सैमसम पूर्वोद्धृत पृष्ठ 95-106 तेइका तथा तेहियो सुधारों का स्पष्ट व संक्षिप्त साराश है।

किन्तु जैसा कि परिणामों से दृष्टिगोचर होता है सुधार स्वयं उतने प्रगतिवादी सिद्ध नहीं हुए जितने वे लिखित रूप में लगते थे। ऐतिहासिक तथ्यों के अनुसार 702 ई. में तैंहो संहिता को स्वीकार करने तक राजनीतिक उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं किया जा सका था तथा तब भी इनकी क्रियान्विति कठिन ही रही थी। तथापि तैका विज्ञप्तियों का प्रथम प्रभाव तीव्रकारी राजनीतिक परिवर्तन को प्रस्तुत करना था। वे सरकार के चीनी मॉडल का जापानी कारण थे।

जापानी प्रजातन्त्र के तांग मॉडल के प्रजातन्त्र का विकास होने लगा था। प्रारम्भ में जिन व्यक्तियों को 645 ई० में नियुक्त किया गया इनमें तीन मन्त्री थे तथा दो परामर्शदाता विधि तथा संस्थाओं के लिए थे। इन तीन मन्त्रियों के नाम वामपंथी महान् मन्त्री (सदाईजिन) दक्षिणपंथी महान् मन्त्री (उदैजिन) तथा मध्यवर्ती महान् मन्त्री (नदाईजिन) थे। मध्यवर्ती महान् मन्त्री स्वयं फुजिवारा कामातारी था।

इन मुख्य अधिकारियों के अधिनस्थ अधिकारी दैवू कहलाते थे। 699 में इनका गठन आठ विभागों तथा अनेकों कार्यालयों में किया गया।

इन अधिकारियों के पद का निर्धारण चीनी विधि के अनुकरण पर विधि द्वारा निर्धारित टोपियो के रंग के अनुसार 647 ई० में किया गया जिसमें 649 में संशोधन किए गए। कोकोतू सम्राट की मृत्यु 10 वर्ष के शासन के पश्चात हो गई किन्तु कामातारी की सत्ता बनी रही। युवराज नका-नो-ओम तैंची-तैंनो नामक उपाधि के साथ सिंहासनारूढ हुआ। वह सभी सुधारकों में से सर्वाधिक उत्साहपूर्ण था। उसने अपने सम्पूर्ण प्रयासों को केन्द्रीय सरकार का पुनर्गठन करने, राजधानी को ओमी नो कुनी को स्थानान्तरित करने तथा बाद में ओमी विधियों को सूज बद्ध करने में लगाया। वे जापान के प्रथम दीवानी व फौजदारी कानून थे। कामातारी को उसके द्वारा दिए गए उल्लेखनीय सुधारों के उपलक्ष में नवीन कुल नाम फुजिवारा का दिया गया।

जब 669 में फुजिवारा कामातारी की तथा 671 में तेंची तैंनो की मृत्यु हुई तो सम्राट कोकातू के लघु भ्राता ने तेमू तन्ना की शैली से शासन करते हुए सुधारों के विपरीत प्रतिक्रियाओं का नेतृत्व किया। तथापि ऐसा कर उसने कामातारी तथा उसके सम्राटों के उद्देश्यों को ही पूरा किया। निर्मित ढांचे के संशोधित रूप में ही प्रतिक्रिया करते हुए उसने जापान में चीनी मॉडल की जापानीकरण की प्रक्रिया को पूरा किया। ओमी संहिता को अन्ततः 702 ई. में संशोधित करके पुनः राजकोप के दीवानी व फौजदारी कानून के रूप में लागू किया गया। इसमें विधि के 6 ग्रन्थ तथा आदेशों के 11 ग्रन्थ थे।

तैंहो संहिता शोतोको तैंपी अथवा तैंको अध्यादेशों से कहीं अधिक निश्चित थी तथा इसने सुधारों को व्यावहारिक तथा जीवित संस्थाओं तथा प्रणालियों के रूप में परिवर्तित कर दिया। वर्तमान स्तर से देखने पर यह संहिता संवैधानिक फौजदारी दीवानी तथा सार्वजनिक समारोह की विधियों का सम्मिश्रण प्रतीत होती हैं। तथापि इन संहिताओं द्वारा स्थापित प्रशासनिक व्यवस्था मिश्रित स्वरूप की थी जिसमें समय-समय पर संशोधन किए गए। तथापि आज भी जापान की शासन व्यवस्था के कुछ अंश, तैंहों संहिता के मूल रूप में बिना किसी संशोधन के विद्यमान हैं। अध्यादेशों के द्वारा राज्य के गठन तथा प्रशासन की व्यवस्था के लिये प्राविधान किया गया है। (चार्ट 12 प्रशासनिक व्यवस्था का सरलीकृत स्वरूप प्रस्तुत करता है) कानूनी रूप से सम्प्रभुता एवं सम्राट में व्यक्तिगत रूप से शिखर

चीनी मॉडल का ईमानदारी से अनुकरण करते हुए सर्वप्रथम तैका विज्ञप्तियों ने ही आन्तरिक प्रदेश (किनाई) को स्पष्ट कर दिया था तथा जापान में उन्हें चीन के समान ही केन्द्रीय प्रदेश का महत्त्व प्रदान किया जाता था। इस प्रकार के विशिष्ट केन्द्रीय प्रदेश की तुलना पश्चिमी देशों में मात्र संयुक्त राज्य अमेरिका राज्य अमेरिका में गैर स्वायत्तशासी प्रदेश कोलम्बिया से की जा सकती है। साम्राज्य के पूर्वी भाग में आन्तरिक प्रदेश को आठ सर्किटों (दो) में विभाजित किया गया था—जो प्रान्तों (कुनी) काउन्टी (गन) कस्बे (मुरा) तथा ग्रामों (साटो) में उपविभाजित थे। कुनी अथवा प्रान्त शब्द के लिए जापानी में उसी भावचित्र का प्रयोग किया जाता है जिसका चीन में कू के लिए किया जाता है। जिसका तात्पर्य प्रदेश राज्य अथवा देश होता है। जापानी की बिखरी हुई स्थिति तथा कुलों की स्वतन्त्रता की वजह से जापानियों के लिए अपने साम्राज्य को कई छोटे प्रदेशों का संगठित स्वरूप मानना सम्भव हुआ। प्रत्येक प्रान्त में प्रान्तीय गवर्नर जनगणना, खेती योग्य भूमि की रजिस्ट्री स्थानीय मुखियाओं द्वारा किये जाने वालों दावों की खोजबीन नवीन करारोपण काउन्टी अधिकारियों की नियुक्तिय शस्त्रों का संग्रह तथा कृषि को प्रोत्साहित करते थे।

646 ई. में एक विज्ञप्ति के द्वारा एक गांव का स्तर इस प्रकार निर्धारित किया गया था कि 50 घरों के प्रत्येक समूह को साटो के रूप में किया जाए, प्रत्येक साटों में एक मुखिया हो जिसे घरों तथा लोगों का संरक्षण सौंपा जाए, वह फसलों को बोने शहतूत के पेड़ों के पालन पोषण करने, अपराधों के निरोध व जांचने तथा करों की वसूली व बेगारी करवाने के लिए उत्तरदायी हो।[11] क्यूशू द्विप में एक विशिष्ट गवर्नर जनरल (दाईफ) की नियुक्ति की गई जो प्रशासन विदेशी सम्बन्ध तथा पश्चिमी किनारे की सुरक्षा के लिए उत्तरदायी था।

सैनिक दृष्टि से ये सुधार प्रभावहीन साबित हुए। सुधारों से पूर्व के विशिष्ट गार्ड जिन्हें कुलों के योद्धाओं से पृथक माना गया था, को बने रहने दिया गया। सुधारों के प्रारम्भ में सैद्धान्तिक रूप से पहले सर्वव्यापी रूप से सैनिकों को एच्छिक रूप से भर्ती किया जाता था। 689 ई. तक प्रत्येक कुनी में से सभी मुख्य लोगों के ये को सेना में भर्ती होना था। तैहो संहिता ने यह प्राविधान 1/3 तक लागू किया किन्तु सम्भवतया प्रारम्भ में यह भर्ती कबीलों व समूहों के आधार पर होती रही।

चीनी भूमि व्यवस्था का जापानीकरण

तैका से तैहो संहिता के मध्य, बड़े स्तर पर संक्रमण दृष्टिगोचर होता है जबकि चीन के उच्चस्तरीय औपचारिक मॉडल को जापानियों ने व्यावहारिक दृष्टि से इस लायक

11. निहोंगी के एस्टन द्वारा किए गए अनुवाद से उद्धृत अध्याय 8 पृष्ठ 208। तेइका सुधारों तथा तेइगो संहिता से एक ऐसी प्रशासनिक व्यवस्था का उदय हुआ जो उन्नीसवां शताब्दी तक शासन का आधार रही और जिस पर व्यापक अध्ययन किए गए विस्तृत कानूनी तथा पक्ष के लिए देखिये डॉ० र्‍यूरो शूको, होई सेइशी नो कैंग क्यू (एसेज ओन जापानीज लीगल इन्स्टीट्यूशन) टोक्यो 1925 विशेपतया। जापानी विधि पर चीनी प्रभाव के लिए पृष्ठ 1 से 3, ताइयो संहिता के संक्षिप्त इतिहास व बाद की व्याख्यायों के लिए पृष्ठ 7 से 8। प्रशासन की दृष्टि से जार्ज सैमसन का अध्ययन आठवी शताब्दी में प्रशासन की मूल्यांकन रूप रेखा पर निहित करता है। आरु के० रैयोर, अली जापानी हिस्ट्री पूर्वोद्धृत पृष्ठ 87 केन्द्रीय सरकार का चार्ज दिया गया है जिससे इस पुस्तक में चार्ट संख्या 12 ली गई है।

वना लिया कि वह जापान में उपयुक्त वन सके। तैंका संहिता ने भूमि व्यवस्था की चीन की उस प्रणाली को क्रियान्वित करना चाहा जो स्वयं चीन में लागू होने के समय अपूर्ण थी। यह भूमि राष्ट्रीयकरण तथा समान वितरण के सिद्धान्तों पर निर्भर थी। चीनी उन बातों को विधि में रखते थे जो उन्हें व्यवहार में कठिन लगती थी। जैसे भूमि को सम्पूर्ण जनता के काम आने वाली पूंजी के रूप में सुरक्षित रखना। कई बार क्रान्तिकारियों तथा सुधारकोंने ऋणों को समाप्त कर के भूमि को पुनः वास्तविक उपयोगिता के आधार पर परिवारों को वितरित करने का प्रयास किया था किन्तु फिर भी पीढ़ी दर पीढ़ी चीनियों में, असमान तथा चतुर लोग अन्यों की तुलना में अधिकाधिक भूमि अपने पास संग्रहित करते गए। तैंका संहिता में जापानी मॉडल को तो स्वीकारा गया मगर चीनी तथ्यों की उपेक्षा की गई।

तैंहियो संहिता में अपवादों को स्वीकारने की अधिक गुन्जाइश थी। जहां तक भूमि स्वामित्व का प्रश्न है जापानियों की प्रथा कुलीन तन्त्रीय रही है। तैंहियो संहिता ने उन जापानी विशेषताओं को उचित स्वरूप प्रदान कर दिया जिन्हें तैंको संहिता ने समाप्त नहीं किया था तथा इस प्रकार जापानी आर्थिक संरचना का मूल आधार इतना भिन्न हो गया कि कालान्तर में सम्पूर्ण व्यवस्था चीनी मॉडल से पूर्णत हो गई।

संक्षेप में तैंहियो संहिता ने सम्पूर्ण भूमि को सरकारी व निजी दो श्रेणियों में विभाजित कर दिया। यहां निजी स्वामित्व का अर्थ पश्चिमी अर्वों के समान विना किसी व्यवधान के उस सम्पत्ति का सम्पूर्ण उपभोग करना नहीं होता है। फिर निजी तथा सार्वजनिक दोनों भूमियों को कर देय अथवा गैर कर दायी अथवा किराये की भूमियों में विभाजित किया गया था। निजी भूमि का निजिव इन अर्थों में था कि वह विशिष्ट शैली वाली पदवियों की भूमि के अपने पृथक कानूनी तथा आर्थिक उत्तरदायित्व होते थे।[12]

इस भूमि व्यवस्था का उद्देश्य जापान की वास्तविक सामाजिक व्यवस्था को कृषक अर्थव्यवस्था में परिवर्तित करना था। भूमि ऐसा पुरस्कार वन गई जिसे सामाजिक प्रतिष्ठा अथवा राजनीतिक सत्ता के वदले में दिया जा सकता था। सम्पत्ति से ऊँची स्थिति प्राप्त थी। ऊँची स्थिति से सम्पत्ति प्राप्त नहीं होती थी। दरवारी अपने सामाजिक सम्पर्कों की वदौलत करों से मुक्ति, निजी भूमि की स्वीकृति तथा इसी प्रकार अन्य आर्थिक विशेपाधिकारों को प्राप्त करते थे। एक आधुनिक जापानी अर्थशास्त्री ने यहां तक कहा है कि तैंहियो काल में कानूनी मुद्रा ऊँचे स्तर पर आधारित थी।[13] उसका तात्पर्य यही था कि कुलीन स्तर सम्पत्ति का निर्धारक था तथा इस गतिशील परिस्थिति में जापानियों के लिए आर्थिक क्षेत्र में स्थिति को वनाए रखना अत्यधिक महत्त्वपूर्ण था। सम्पत्ति के वदले में

12. उदाहरण के लिए सदस्यता पर आधारित क्षेत्रों की पदवियां दरवार के अधिकारियों को हस्तांतरित की जाती थी। चोकू शिदेन सम्राट के आदेश द्वारा प्रदान की गई जमीन, शीकूदेन अथवा वास्तविक सेवा के लिए भूमि, शीदेन गुण के आधार पर प्राप्त भूमि याकतदेन धान के खेत, हेनदेन सरकार के द्वारा दी गई जमीन आदि थे।

13. यूनो की एस तइका कार्शन (तेइका सुधार), निहोन केर जाह जितेन उद्घृत, संख्या 5, पृष्ठ 9 से 61 इसमें तथा समान्तर आर्थिक संस्थाओं तथा विचारधाराओं पर टिप्पणी करते हुए लेखक ने अपनी अप्रकाशित निबन्ध लिखा है। ए० डब्लू वर्क्स इकानामिक्स इन जापानी थोट, वाशिगटन स्कूल ऑफ एडवांस स्टडीज, 1946।

कर स्थित थी निश्चित रूप से वाकी सुधार बाद में सम्राटों के द्वारा किए गए यद्यपि उन्होंने स्वयं उसके लिये कोई व्यक्तिगत प्रयास नहीं किये थे। सुधारों के मूलभूत राजनीतिक सिद्धान्त प्रशासन के संगठन के चीनी सिद्धान्त तथा जापान की पवित्र सम्प्रभुता की अवधारणा इन दोनों के मिश्रण थे। बाद के सम्राट के उत्तराधिकारियों ने चीनी मॉडल का जापानीकरण इतनी सफलता से किया कि यह साम्राज्य के परम्परागत स्वरूप के अनुकूल बन गया। नई सरकार ने इस दिशा में और भी प्रयास किये। उसने तांग उदाहरण के तरीकों को अपनाकर जापान की आध्यात्मिक विशेषताओं को बनाये रखने का प्रयास किया जो तोंग जीवन के लिये पूर्णतः विदेशी था क्योंकि यह नैतिकता तथा शासन सम्बन्धी विचार प्रस्तुत करता था।

केन्द्रीय सरकार में एक धर्म विभाग (जिगीकान) तथा एक राज्य की महान् परिषद (दा-जो-कान) थे। जिगीकान की तुलना न तो तांग व्यवस्था के मन्त्री विभाग (शांग शू-शेंग) से की जा सकती है न बलिदान के विभाग (ताई चांग सू) से की जा सकती है। दोजोकान की तुलना उन महान् परिषदों से की जा सकती है जो प्राचीन काल में चीनी शासन की विशेषता रही थी। किन्तु जापान के जिगीकाल की उल्लेखनीय विशेषता इसका धार्मिक स्वरूप था जो उसको प्रथम दृष्टि में ही चीनी मॉडल से प्रथक कर देता था।

चार्ट 12–(तेंको युग से कामात्रा युग तक जापानी सरकार का गठन)
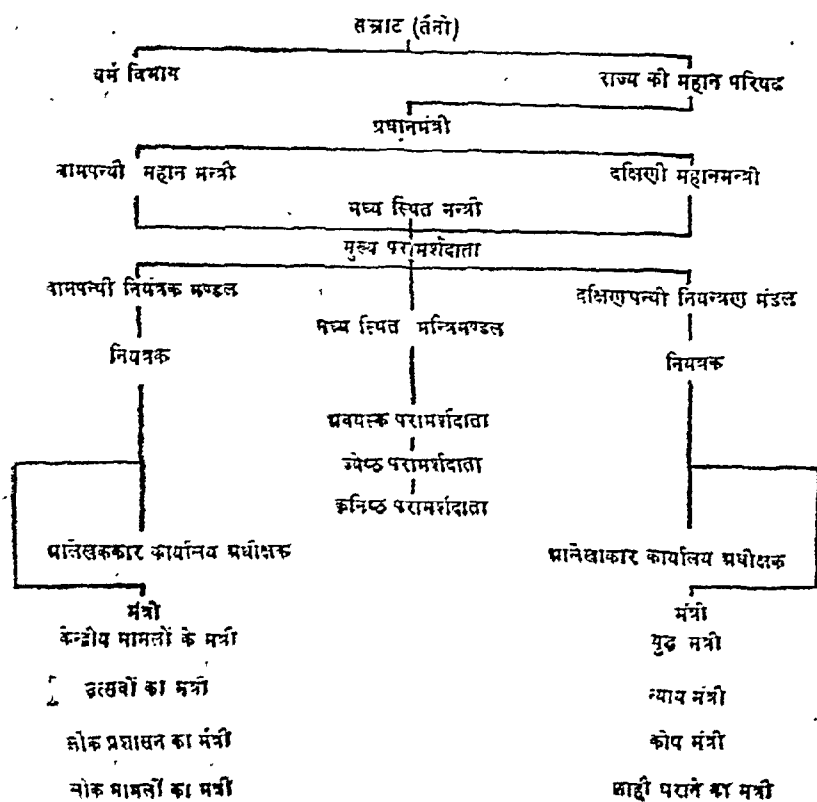
न केवल धर्म विभाग सरकार की एक विशेषता थी अपितु इसका आधिपत्य राष्ट्रीय निष्ठा, धार्मिक अनुष्ठानों, राज्य के उपासना गृहो तक फैला हुआ था यह सरकार का वरिष्ठतम विभाग था। एक आधुनिक जापानी टीकाकार के अनुसार—

यदि एक राज्य की उत्पत्ति मानवीय सैनिक शक्ति से होती तो वही मानवीय अभिकरण राज्य को समाप्त भी कर सकते हैं। इस प्रकार की बाधाओं से बचने के लिए एक राजसिंहासन का आधार मानवीय शक्ति से श्रेष्ठ होना चाहिये। इस आवश्यकता की परिपूर्ति मात्र दैवीय सत्ता ही कर सकती है तथा यही कारण है कि जापान की राजगद्दी का आधार अतिमानवीय है तथा इसका अस्तित्व शाश्वत है। इसी कारण जिगीकाल का स्थान सरकार में सर्वोच्च है।[10]

जहां तक व्यावहारिक तथा वैयक्तिक राजनीति का प्रश्न है यह उल्लेखनीय है कि जिन संस्थाओं की स्थापना कुलों के प्रभाव को समाप्त करने के लिए की गई थी उन्होंने ही उनके प्रभावों को सर्वाधिक बढ़ाया। जिगीकान अपनी सर्वव्यापी स्थिति के कारण फुजीवारा कुल जिसकी स्थापना कामातारी द्वारा की गई थी की धरोहर बन गया।

जहां तक सरकारी की धर्मनिरपेक्षता का प्रश्न है प्रधानमन्त्री के रूप में दाजोदा जिन महान् परिषद का अध्यक्ष होता था जिसमें वाम दक्षिण तथा मध्य पक्ष निहित थे। महान् परिषद में इनके अतिरिक्त परामर्शदाता (दैवगोन) भी होते थे जिनके आधीन आठ भिन्न मन्त्रालय थे—

1. नाका सुकासा शो	केन्द्रीय मामलों का मन्त्रालय
2. शिकिबू शो	अनुष्ठानी का मन्त्रालय
3. जिबू शो	नागरिक प्रशासन मन्त्रालय
4. भिबू शो	सार्वजनिक मामलो का मन्त्रालय
5. ह्यो यू शो	युद्ध मन्त्रालय
6. ग्योबू शो	न्याय मन्त्रालय
7. ओकूरा शो	राजकोष मन्त्रालय
8. कुनाई शो	शाही दरबार मन्त्रालय

यह रूपरेखा अपरिष्कृत रूप में तांग नमूने का जापानी संशोधित रूप प्रस्तुत करती हैं।

यद्यपि प्रशासनिक अर्थों में मन्त्रियों को वाम व दक्षिण पक्ष के नियन्त्रण बोर्डों में विभाजित किया गया था किन्तु व्यावहारिक रूप में वे उच्च व निम्न स्तरों पर विभाजित थे। जिन मन्त्रालयों का सम्बन्ध सम्राट उसके दरबारियों जैसे शाही घराना अनुष्ठान, नागरिक प्रशासन तथा राजकोष से था वे अधिक मूल्यवान माने जाते थे। कम मूल वाले अन्य चार विभाग सार्वजनिक वित्त, निर्माण कार्य, कृषि वाणिज्य तथा सुरक्षा थे। यहां एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इस समय तथा आने वाले कई शताब्दियों तक न तो जापान में तथा न ही चीन में विदेशी मामलों के लिए पूर्णतः स्वतन्त्र मन्त्रालय की स्थापना की गई।

10. भारीगा नागाओ निहोन वो दाइ हो शाकोगू (ए कॉमेन्ट्री आन एनशियेन्ट जापानी लॉ) टोक्यो, 1908, पृष्ठ 29-30।

सम्पत्ति नहीं मिलती थी। इसके विपरीत सम्पत्ति, स्थिति के बदले में प्राप्त होती थी तथा यह स्थिति, योग्यता, सामाजिक सम्पर्क अथवा शाही कृपा इनके परिणामस्वरूप प्राप्त होती थी।

तांग मॉडल का अवशेष रहना

राजनीतिक केन्द्रीयकरण के इस युग के प्रथम काल में जापानियों द्वारा लिया गया अन्तिम प्रमुख निर्णय राजधानी का महान् नगर बनाने तथा उसके लिए स्थान का निर्णय करना था। जापानियों ने कई स्थानों पर विचार करने के पश्चात् इस पर निर्णय लिया।

710 ई. से पहले जापान की प्रथम वास्तविक राजधानी नारा नगर तैय्यार नहीं हो पाया था। नारा नाम स्वयं एक सम्पूर्ण युग का द्योतक था (710-793) जो जापान व चीन की संस्कृति के परस्पर समृद्ध काल का संकेत था। चीनी राजधानी की तरह नारा की रूपरेखा एक रूपता लिए हुई थी। इसकी न केवल स्थापत्य कला चीनी थी अपितु इसका धर्म, विधि, अध्यादेशों तक सार्वजनिक प्रलेख सब चीनी भाषा में लिए गए थे। यह नगर तथा इसकी व्यवस्था दोनों ही उल्लेखनीय थे। यहां एक विदेशी संस्कृति को स्वेच्छापूर्वक अपनाया गया था, बलपूर्वक थोपा नहीं गया था, तथा इसे इस नगर में जो जापान की मुख्य भूमि का प्रमुख नगर था में साकार कर दिया गया था।

784 ई. में राजधानी नारा से नागाओका को स्थानान्तरित कर दी गई। एक अर्थ में इस स्थानान्तरण को स्पष्ट करना कठिन लगता है, क्योंकि नारा को भारी व्यय तथा प्रयासों के परिणामस्वरूप बनाया जा सकता था। इस सन्दर्भ में तात्कालिक कारण यह दिया जा सकता है कि शाही दरबार में विभिन्न कुलों का दबाव पुनर्जीवित हो गया था। अन्ततः 793 ई. में राजधानी प्राचीन हेन्कोव की राजधानी क्योटो को स्थानान्तरित कर दी गई। इस पर तथा नारा पर अमेरिकी बमबारों ने इन नगरों की प्राचीनता तथा सुन्दरता का ध्यान करते हुए बी 29 विमानों से बमबारी नहीं की।

हैन्कोव के नाम पर हैन युग (794-1191) माना जाता है जो एक विशिष्ट प्रकार की जीवन प्रणाली का प्रतीक है। अपने समय में यह अपने समकालीन विश्व का विशालतम नगर रहा होगा—जिसकी जनसंख्या 5 लाख तक मानी जाती है। इस राजधानी में कुलीन तन्त्रीय जीवन चीनी मॉडल तथा जापानी विषय सामग्री का चरम मिश्रण था। तांगा कालीन अनुष्ठान संस्कार व तौर तरीकों का अन्धानुकरण किया गया। बुद्धधर्म ने इस औपचारिकता के वातावरण को सहारा दिया। तथापि शाही दरबार की बढ़ती हुई प्रथकता ने पर्याप्त दृढ़ इच्छा शक्ति वाले शासक के लिए भी राजनीतिक अर्थव्यवस्था की बढ़ती हुई आसन्न समस्याओं का समाधान करना कठिन बना दिया।[14]

14. केप्टिन फ्रैंक ब्रिफर्ल ने जापान इट्स हिस्ट्री आर्टस एण्ड लिटरेचर बोस्टन एण्ड टोक्यो, 1910 पृष्ठ 133, 134 में प्राचीन नारा राजधानी का मनोरंजक वर्णन दिया है। इसी प्रकार क्योटो का वर्णन पृष्ठ 253 पर है इसके पांचवें तथा सातवें अध्याय इस काल की स्थापत्य कला वेशभूषा रीति रिवाज तथा साहित्य के आकर्षक विवरण है। यद्यपि यह पुस्तक अब पुरानी हो चुकी है किन्तु फिर भी जापानी जीवन के बारे में यह सर्वप्रथम लिखा गया विश्वसनीय वर्णन है। इ ओ रेचोर, जापान पास्ट एण्ड प्रेजेण्ट, उद्धृत, भी प्राचीन ह्यांग क्यों की परियोजना का संक्षिप्त वर्णन देता है। जो अब भी, क्योटो में आच्छादित लगती है।

तैंका व तैंहो संहिता से होने वाले सुधार तथा उसके बाद का काल एक विशिष्ट प्रकार की क्रान्ति का प्रतिनिधित्व करता है। जापानियों की अन्य वस्तुओं के समान यह भी ऊपर से नीचे तक पूर्ण था। जापानी जनजातीय संस्कृति के घेरे से निकल-कर, जापान ने एक समय नगर संस्कृति में प्रवेश किया।

यद्यपि राजधानी तथा साम्राज्य जापानी में प्रमुख थे तथापि वे ही सम्पूर्ण जापान नहीं थे। हमारे युग के कुछ आधुनिक चलचित्रों के समान, संयोगवश वे वास्तविकता से भी सम्बन्ध रखते थे। जापान में प्राचीन चीनी साम्राज्य का मॉडल कुछ दृष्टियों से भयंकर दल था। शिजोकू संस्कृति पूर्णतः नष्ट नही हुई थी। कुल जीवन तथा दबाव अपनी सम्पूर्ण शक्ति के साथ बना रहा। इसे गैर सरकारी घोपित कर दिया गया था किताबों के अनुसार इसका अस्तित्व नहीं था। किन्तु कुछ शताब्दियों के पश्चात् यह कुल व्यवस्था पुनर्जीवित हो उठी जो पहले से यह कहीं अधिक दृढ़ तथा अधिक कठोर अर्थों में जापानी थी। चीनी साम्राज्य का जापानी स्वरूप साहित्य आदर्श तथा सरकारी विज्ञप्तियों के द्वारा बनाया गया था। इसका लाभ उठाने वाला वर्ग शिक्षित समुदाय योग्य लोग तथा दरबारी थे।

जापानी विद्वानों ने इस तथ्य को स्वीकारा है। क्योटो इम्पीरियल यूनिवर्सिटी के स्वर्गीय प्रोफे.सर डॉ. मिउरा शुको ने इस बारे में सन्देह व्यक्त किया है कि तैंको युग में हाथ उद्योगों के श्रमिक संघ विघटित हो गए थे। डॉ. कुमे कुमिताक ने भूमि सुधारों की क्रियान्विति के अभाव को दर्शाया है। प्रोफेसर अस्कावा ने सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अवशिष्ट संस्थाओं में, जन्म से कुलीनता तथा उसके प्रभावों को सर्वेक्षण किया है। सर्वाधिक महत्त्व-पूर्ण प्रश्न यह है कि इस कुलीनता के हितों की रक्षा, शिक्षा तथा परीक्षा की चीनी व्यवस्था किस प्रकार कर सकती थी। सुधारवादियों का मूल उद्देश्य एक ओर कुलीन लोगों को राज्य के कुलीन व्यक्तिगत नागरिकों के रूप में एक स्वीकारना तथा दूसरी ओर उन्हें ही राज्य व्यवस्था के उच्चस्तरीय पदाधिकारियों के पदों को प्रदान कर देना था ताकि उनका प्रभाव नवीन व्यवस्था में उचित रूप से स्थापित किया जा सके।[15]

चीनी व्यवस्था के दो मूल आधारों -भूस्वामित्व का गैर कुलीन स्वरूप तथा प्रशासकों का गौरवंशानुगत तथा योग्यता के आधार पर चुनाव—का अभाव इस बात का प्रतीक था कि कालान्तर में जापानी कुलीन वर्ग चीनी मॉडल को अपने सामाजिक जीवन के अनुसार तोड़ मरोड़ लेगा।

सुधार युग में राजनीतिक प्रभावों की आर्थिक व सामाजिक प्रभावों की परस्पर क्रिया महत्त्वपूर्ण है। चूंकि चीन के समान जापान भी कृषि प्रधान राज्य था अतः भू-कर सुधार सम्बन्धी चीनी सिद्धान्तों की प्राचीन जनजातीय भू-व्यवथा को शीघ्र ही आर्थिक दृष्टि से विनिष्ट कर दिया। भू:सम्पत्ति ने जिस अपरिपक्व समाज की रचना की, वह वहां के वास्तविक जीवन से विलग थी। कुलीन वर्ग को प्राप्त सम्पन्नता तथा दरबार में प्रभाव के परिवर्तन के साथ सम्पत्ति के परिवर्तन ने इस व्यवस्था में तोड़ मरोड़ अनिवार्य कर दिया जिसका अर्थ था कि कृषक वर्ग को अपने अस्थाई श्रेष्ठ जनों को अवांछनीय रूप से सहायता

15. मियूस एस तेइका के शिन शैन (टिसावशन ऑफ तेइका रिफॉर्म्स) खण्ड 7 संख्या 1 जनवरी 1896 कूमेके तेइका केश्विन नोरोन्जू, खण्ड 3 संख्या 32 (जुलाई 1892) जोन्तो टोक्यो के शाही विश्वविद्यालय के हिस्ट्री के जनरल में प्रकाशित हुई, के आसाका पूर्वोद्घृत पृष्ठ 321-22।

देनी थी तथा इसका तात्पर्य यह भी था कि, सक्षम व शक्तिशाली निरन्तर करों से बच कर उन्हें दुर्बलों पर थोपेंगे।

इस व्यवस्था की सबसे गम्भीर दुर्बलता उत्पादकों की आमदनी व राज्य के मध्य सही अनुपात के सन्तुलन का अभाव थी। गैर उत्पादक जनसंख्या में वृद्धि होती गई तथा सभ्यता के प्रसार के साथ-साथ उत्पादकों की माँगें भी बढ़ती गईं। शाही परिवार का अंश लघुतर होता गया तथा भू-स्वामियों का बढ़ता गया। कर उन्मुक्त रियासतों के विस्तार तथा वंशानुगत सरदार स्वयं केन्द्रीय सरकार के प्रतिद्वन्दी बन गए। परिणामतः आने वाले समय में इन कारणों से जापान में चीनी साम्राज्य के मॉडल का पतन हुआ।

अध्याय 12

जापान की द्वैध सरकार का पूर्ण विश्वास

यदि तांग मॉडल की सरकार को वास्तविक अर्थों में सभ्य तथा शिक्षित जापान की प्रथम सरकार माना जाए, तो सेनापतियों (शोगुनेल) की दीर्घकालीन सरकार को जापान में सरकार का दूसरा प्रमुख प्रकार कहा जा सकता है। लगभग 1 हजार वर्ष तक जापानी अपनी ही कल्पना, बुद्धि, विद्वत्ता तथा परम्परा की सहायता से निरन्तर, परिवर्तन के साथ ऐसी सरकार का विश्वास करते रहे जो जापान के लिए विशिष्ट थी। अन्य किसी भी सभ्य संस्कृति से कहीं अधिक स्पष्ट द्वैधवाद का उन्होंने विश्वास किया।

द्वैधवाद ऐसी राजनीतिक परम्परा होता है जिसमें राज्य करने के लिए एक सरकार की स्थापना की जाती है तथा वास्तविक शासन की शक्ति दूसरी सरकार को सौंप दी जाती है। यूरोप में इस प्रकार के उदाहरण को फ्रांस के उत्तर मेरोविगिमन कालीन राजतन्त्र के सम्राट तथा उनके साथ महल के मेयरों के सह अस्तित्व में अथवा पवित्र रोमन साम्राज्य के सम्राट तथा पोप दोनों के अस्तित्व में, जबकि दोनों ही धर्म निरपेक्ष शासक होने का दावा करते थे, में पाया जा सकता है। तथापि कोई यूरोपियन द्वैधवाद जापानियों के समान पूर्णता को प्राप्त नहीं कर सका।

जापानी द्वैधवाद का मूल स्रोत संभवतया सभी लोगों में पायी जाने वाली यह मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति है कि अधिक की इच्छा करने वाले लोग प्रत्येक वस्तु को दोहरे रूप में चाहते हैं। यदि इस प्रवृत्ति की विवेचना सरलतम रूप में की जाए तो हम देखते हैं कि घरों में खाने के बर्तनों के दोहरे सैट रखे जाते हैं, एक तो दैनिक प्रयोग के तथा दूसरे उन विशेष अवसरों के लिये जो शायद कभी कभी ही आते हैं। अमेरिकी जीवन में इसका उदाहरण ऐसे अछूते न स्वच्छ मार्गों व स्थलों में देखा जा सकता है जो मात्र अंत्येष्टि, विनाश अथवा किसी स्थानीय धर्म प्रचारक के स्वागत के लिए ही काम में लाये जाते हैं। यह इस मनोवैज्ञानिक प्रवृद्धि का द्योतक हैं कि कुछ वस्तुओं को इतना अच्छा रखा जाए कि उसका उपयोग कभी भी नहीं किया जा सकता है।

दूसरे लोग चाहे इसे किसीभी दृष्टि से क्यों न देखें जापानियों में आग्रहपूर्ण दबाव को बनाये रखने की विशिष्ट तथा कुछ सीमा तक प्रशंसनीय विशेपता है इस प्रकार की एक विशेपता जापानियों का स्वच्छता के प्रति आग्रह का होना है। दूसरी राजनीतिक परिपूर्णता को प्राप्त करने का आग्रह है। राजनीतिक परिपूर्णता का एक ऐसा प्रकार जो इस भूमि पर सामान्य व्यक्तियों द्वारा दैनिक शासन का संचालन करने के संदर्भ में स्वीकार्य होना असंभव है इस परिपूर्ण सरकार को शाश्वत रूप से प्राप्त करने के स्थान पर जापानियों ने सरकारी परिपूर्णता की आकांक्षा तथा व्यावहारिक सत्ता की आवश्यकता के मध्य एक प्रकार का

समझौता कर लिया। उन्होंने एक ऐसी सुन्दर तथा परिपूर्ण सरकार की स्थापना की कि वह शासन नहीं कर सकती थी, यह सरकार जापानियों की इस संवेगात्मक आवश्यकता को पूरी करती थी कि सरकार को किसी भी प्रकार के अपमान, विरोध, पक्षपात अथवा पराजय से परे होना चाहिये। इसी के साथ विभिन्न कालों तथा विभिन्न स्वरूपों में जापानियों ने क्रूर व्यावहारिक, तथा ऐसी दृढ़ सरकारों की स्थापना की जिनकी मात्र इतने सम्मान की आवश्यकता थी कि वे बनी रह सकें तथा जिन्होंने तात्कालिक समस्याओं, घटनाओं तथा पीढ़ियों पर शासन की आवश्यकता को पूरा किया।

दूसरी ओर जापानी द्वैधवाद के स्रोत को सोगा कालीन शक्ति के संघर्ष में भी विद्यमान कहा जा सकता है इन अर्थों में जैसाकि शोवा पुनर्स्थापना के दौरान अनुभव किया गया, सम्राट के दैवीय स्वरूप के लिये अत्यधिक आग्रह को द्वैधवाद के कारण के स्थान पर उसका परिणाम माना जा सकता है। चाहे स्थिति कुछ भी रही हो तथापि सम्राट के प्रति निष्ठा ने, जापानी राजनीति में उसे अप्रत्यक्षता की पृष्ठभूमि प्रस्तुत करने में पूरा सहयोग दिया।

नागरिक अधिनायकों का युग :

जापान की संप्रभुता का विखंडन स्वयं चीनी साम्राज्य के जापानी मॉडल के अन्तर्गत हुआ जिसमें शासन का सर्वोत्कृष्ट रूप एक ओर हो गया तथा व्यावहारिक शासन तंत्र दूसरी ओर। इस द्वैधवाद का विशिष्ट रूप सर्वप्रथम सातवीं शताब्दी से 12 वीं शताब्दी के मध्य प्रकट होने लगा जिसके अनुसार तांग मॉडल से प्राप्त किये गये प्रशासनिक ढाँचे में कुछ परिवर्तन किये गये। इसके साथ साथ सामाजिक तथा आर्थिक विकास ने उस सामन्त-वाद के लिये आधार प्रस्तुत किया जो पूर्णतः राष्ट्रीय स्वरूप में आत्मसात हो गया।

जापानियों ने अत्यधिक उत्साहित रूप में चीनी मॉडल स्वीकारते समय भी तांग मॉडल का पूर्ण प्रतिरूप स्थापित नहीं किया था। तैंका व ताइहो के महान सुधारों के दौरान भी केन्द्रीय सरकार अर्द्ध रूप से मिथ्या थी क्योंकि इसने जापान के प्रान्तीय स्तर पर प्रभावित नहीं किया था। कट्टर से कट्टर चीनी समर्थकों ने भी कुछ चीनी राजनीतिक व्यवहारों से भिन्न कुछ जापानी व्यवहारों को बना रहने दिया था क्योंकि वे अपने स्वरूप में अत्यधिक जापानी थे। उदाहरण के लिए प्राचीन जापान में राष्ट्रीय सम्बन्धों में कुलीनता का जो आग्रह था वह कन्फ्यूशियस चीन से आयातित योग्यता के आधार पर शासन के प्रजातन्त्रीय रूप से अधिक दृढ़ साबित हुआ। जापानियों ने चीनियों के इस सिद्धान्त को भी कभी स्वीकार नहीं किया कि किन्हीं शर्तों की पूर्ति सम्राट को भी करनी चाहिए थी तथा सम्राट के प्राप्त स्वर्ग से आशीर्वाद के समाप्त होने के बाद प्रजा को उसके विरुद्ध विद्रोह करने का अधिकार था। जापान के लिए गुण का साक्षात् एक ही हो सकता था, वही सूर्य देवी का वंशज, तथा तैनो वंश का उत्तराधिकारी था। जापान की दृष्टि में चीन में कई राजवंश हो सकते थे, क्योंकि वे धर्म निरपेक्ष तथा नश्वर थे किन्तु जापान में मात्र एक ही राजवंश था क्योंकि वह अध्यात्मिक तथा अनश्वर था।

किन्तु इतना पवित्र एवं निष्कलंक सम्राट संप्रभुता का प्रयोग कैसे कर सकता था। बिना अपयश पाये वह शासन कैसे कर सकता था, जो एक के बाद एक एकशताब्दी के दौरान सब दोषों व कलंकों को आत्मसात् करके सम्पूर्ण श्रेय सम्राट के लिए छोड़ दे क्योंकि सम्राट् दैवीय था। चीनी इस समस्या का समाधान नहीं कर सकते थे।

चीनियों ने पर्याप्त सीमा तक अपनी राशतन्त्रीय व्यवस्था की विशेषताओं की क्षति-पूर्ति ऐसी प्रशासनिक व्यवस्था से कर ली थी जो योग्यता पर आधारित थी। सिद्धान्त में तथा पर्याप्त सीमा तक व्यवहार में भी कोई भी व्यक्ति परीक्षा व्यवस्था के द्वारा उच्चतम शिक्षा प्राप्त करने पर शाही नियुक्ति की आकांक्षा कर सकता था।

किन्तु जापान में योग्यता के आधार पर सरकार का सिद्धान्त कभी लागू नहीं हुआ। वंशानुगता के आधार पर इस पद की सोपान क्रम व्यवस्था के कारण एक सीमित सामाजिक वर्ग ही सरकारी पदों के लिये परीक्षा में बैठ सकता था। साम्राज्य के चीनी मॉडल को स्वीकारने के कुछ ही शताब्दी पश्चात् सभी महत्त्वपूर्ण जापानी पद वंशानुगत बन गए तथा उन पर कुलीन प्रशासनिक वर्ग का आधिपत्य हो गया। इस प्रवृत्ति का स्पष्ट उदाहरण फुजिवारा कुल की प्रमुखता है जो प्रकट रूप से कंपाकू नामक वंशानुगत नागरिक अधिनायक के रूप में संपूर्ण जापान पर नियन्त्रण रखता है। कंपाकू पद का शाब्दिक अर्थ सम्राट का संरक्षण या रीजेंट से है।

किन्तु यूरोप के समान जापान में यह यह रीजेंट एक संक्रमणकालीन प्रघटना नहीं थी। यूरोप में रीजेंट से तात्पर्य उस व्यक्ति से था जो सम्राट के अवयस्क होने की स्थिति में सरकार पर नियन्त्रण रखता था। किन्तु जापान में रीजेंट प्रधान मन्त्रीसे (दोनों दैणिक) अधिक शक्तिशाली हो गया। वह वस्तुतः प्रशासनिक अधिनायक बन गया। सैद्धान्तिक रूप से यह कंपाकू संप्रभु का अधिवक्ता था जो उसे राज्य के मामलों की रिपोर्ट देता था किन्तु दसवीं शताब्दी के बाद से इस पद पर सर्वदा फुजिवारा परिवार का आधिपत्य रहा तथा इस प्रकार द्वैध राजतंत्र को नियमित स्वरुप प्राप्त हुआ।

इस प्रकार कंपाकू कुल नियन्त्रण के बने रहने का, जापानी राजनीति में शिजोकू सिद्धान्त के पुनरोदय का तथा वैयक्तिक योग्यता के स्थान पर पारिवारिक एकता के माध्यम से प्रभुत्व का प्रतीक था।

सर जार्ज सेंसम ने बताया है कि अन्य देशों में महल के मेयर तथा राजाओं को बनाने वालों जैसी तुलनाएँ प्राप्त करना सरल है किन्तु राजनीतिक द्वैधवाद में पारिवारिक एकता विशेपता रूप से जापानी विशेपता है। तांग मॉडल की स्थापना के पहले भी सोगा कुल ने अपेक्षाकृत ढ़ंग से गैर संस्थागत रूप में प्रभुता का दावा किया था तथा वह काफी सीमा तक संभव भी हुआ था। तथापि प्रशासनिक अधिनायकों के जिस युग की हम यहाँ चर्चा कर रहे हैं उसके बाद तैरा तथा मिनामोतो कुलों को नियन्त्रण प्राप्तु हुआ। तोकूगावा काल के दौरान द्वैधवाद अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँच गया था। आधुनिक काल में गेनरो का अन्तिम वंशज, युवराज कोन, तथा अन्तिम जापानी प्रधानमन्त्री कुंगे, ये सब एक हजार वर्ष पश्चात् भी प्रशानिक अधिनायकों के पारिवारिक वंशज तथा साथ ही उनके राजनीतिक उत्तराधिकारी भी हैं।

जनरल मैकार्थर ने जान बूझ कर या अनजाने में जब जापान पर आधिपत्य स्थापित करने के लिये स्थापित सरकार के समानान्तर दूसरी सरकार की स्थापना की तो उसने भी जापान की दोहरी सरकारों की परम्परा का निर्वाह किया।[1]

1. प्रारम्भिक सामानान्तरो के लिए देखिए सेन्सम, पूर्वोद्धृत पृष्ठ 206-207, बाद की घटनाओं के लिए रैशोर जापान गवर्नमेंट पॉलिटिक्स, उद्धृत पृष्ठ 47।

कंपाकू के विकास के समान ताँग से प्रेरित अन्य विकृत संस्थाओं का विकास भी हुआ। नवीं शताब्दी के अन्त तक फुजिवारा प्रभुत्व वाले एक परिषद् ने अत्यधिक शक्ति प्राप्त की। अपने वास्तविक क्षेत्राधिकार से परे उसे गोपनीय पत्रों पर अधिकार प्राप्त हो गया तथा धीरे धीरे उसे ऐसी वास्तविक व्यवस्थापिका तथा कार्यकारिणी शक्तियाँ प्राप्त हो गई कि राज्य की महान परिषद (दाजोकान) तथा केन्द्रीय मामलों के मन्त्रालय की न्यायिक शक्तियाँ संदेहास्पद हो गई।

इस द्वैधवाद का प्रसार देश के भागों में भी हो गया जहाँ राजधानी के अलावा ताँग सुधारों का प्रसार नहीं हो सका था। राजधानी के साथ प्रान्तों का सम्पर्क दो प्रशासनिक पदों के माध्यम से होता था। सातवीं शताब्दी की महान् संहिताओं ने प्रान्तीय गवर्नरों की व्यवस्था की थी जो सिद्धान्त में राजधानी के सभी विभागों का प्रतिनिधित्व करते थे। वस्तुतः प्रारम्भिक अधिकारी नाम मात्र के वे अनुपस्थित अधिकारी होते थे जो स्थानीय मामलों में व्यावहारिक रूप से बहुत कम हस्तक्षेप रखते थे। गुंशी, अथवा प्रादेशिक गवर्नरों की नियुक्ति सम्राट द्वारा प्रान्तीय गवर्नरों की सलाह पर होती थी तथा वे स्थानीय सहायकों के समान वास्तविक नियन्त्रण रखते थे। प्रादेशिक अधिकारी स्थानीय कुलीन व्यक्ति होता था जो वंशानुगतता के आधार पर पद प्राप्त करता था उसे स्थानीय राजनीति का ज्ञान होता था तथा उसका पर्याप्त प्रभाव व पारिवारिक व मित्रता सम्बन्धी संपर्क होते थे। इस प्रकार प्रान्तीय गवर्नरों के कार्य मात्र संरक्षण व प्रशासन के होते थे तथा वे कालान्तर में नाम मात्र के हो गए जबकि प्रादेशिक गवर्नरों की शक्तियाँ कार्यपालिका तथा न्यायप्रधान थीं तथा वे वास्तविक बनी रहीं।

तैका तथा तैहो सुधारों के कुछ शताब्दियों के पश्चात् संरचनात्मक दृष्टि से मात्र एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन और हुआ। होंशू की मुख्य भूमि के उत्तरपूर्व में रहने वाले बर्बर एनू जो इमीशी नाम स जाने जाते थे, निरन्तर सैनिक दृष्टि से एक चुनौती बने हुए थे। सुरक्षा की दृष्टि से वे उस जापान के लिये उतने ही भयंकर थे जितने राष्ट्रपति वांशिगटन तथा एड्म के जमाने में अमरीकी इंडियन लोगों से संयुक्त राज्य अमेरिका के लिये खतरनाक थे, तथापि अमेरिकी इंडियन लोगों से कहीं अधिक गड़बड़ी करने वाले तत्व अवश्य थे। 784 में पूर्व का दमन करने के लिये एक सैनिक जनरल सेटोशोयुन की नियुक्ति की गई। कुछ समय के व्यवधान के पश्चात् इसकी सेई ई ताई शोगुन (बर्बरों का दमन करने वाला सेनापति) नाम से पुर्नस्थापना की गई। किन्तु यह तभी महत्वपूर्ण हुआ जब बाद में उसे सैनिक तानाशाहों की भांति स्वीकारा गया।

पूर्व में तथा उत्तर में एनू लोगों के विरुद्ध किये गये प्रयासों के प्रभाव को मात्र नये पदों का सृजन करने के अर्थों में स्पष्ट नहीं किया जा सकता है। जापान की सीमान्त नीति के परिणाम स्वरूप उत्पन्न प्रादेशिक भेदभाव की नीति शाही वित्तीय तथा मानवीय शक्ति पर निरन्तर बोझ बनती गई। क्योंकि जापानी सातवीं शताब्दी से दसवीं शताब्दी तक, आदिम जातियों की विजय कर उन्हें आत्मसात करने की पुरानी परम्परा को अपनाते रहे। निरन्तर प्रचार के परिणाम स्वरूप शाही दरबारियों की प्रतिष्ठा का पतन प्रारम्भ हुआ तथा पूर्व में नये नेताओं के उदय के अवसर बढ़ गये। इसी काल में सैनिकों के वंशानुगत

तथा विशिष्ट अधिकारों वाले वर्ग का प्रारम्भ हुआ जो वाद में सामन्तशाही जापान की मुख्य विशेषता वना ।[2]

प्रशासनिक अधिनायक. पुरालेखाकार व्यूरो तथा वर्वरों के दमन हेतु सेनापति इन सब की नियुक्ति सरकारी तन्त्र में शक्ति के केन्द्र विन्दु में कुल स्थान परिवर्तन से अधिक नहीं थी। यह परिवर्तन यद्यपि निर्णायक नहीं था तथापि यह जापान में नारा तथा हैमान में गम्भीर सामाजिक तथा आर्थिक परिवर्तनों का संकेत अवश्य था।

राजनीतिक परिवर्तन ने आर्थिक परिवर्तन का अनुसरण किया। आर्थिक परिवर्तन धीमे होते हुए भी व्यापक प्रभाव वाले थे। जब जापानियों ने ताँग मॉडल पर राजनीतिक अर्थव्यवस्था का संगठन किया तो उन्होंने भूमि के विभाजन की काल्पनिक योजना को भी स्वीकार किया। तथा प्रारम्भ में भुमि के कुछ अंश को ही समानता के आधार पर विभाजित किया गया। भूव्यवस्था के मूल आधार भूमि व्यवस्था के विनाश ने अन्ततः केन्द्रीय नियन्त्रण वाली मूल व्यवस्था के विनाश को संभव धनाया इस प्रकार आर्थिक परिवर्तनों ने राजनीतिक व कानूनी परिवर्तनों को संभव वनाया, जिनके परिणाम स्वरूप सैद्धान्तिक परिवर्तन संभव हुआ अर्थात् ऐसे शृंखलावद्ध परिवर्तन हुए जिन्हें कार्ल मार्क्स ने एक हजार वर्ष पश्चात् "सामाजिक चेतना के प्रकारों" की संज्ञा दी।

उदाहरण के लिये यदि मार्क्स ने जापानियों का अध्ययन किया होता तो उसे जापान में नारा तथा हैमान के उदाहरण प्राप्त होते जिन्होंने राजनीतिक तथा सैद्धान्तिक संस्थाओं के आर्थिक निर्धारण के उल्लेखनीय उदाहरण प्रस्तुत किये। इन सह सम्बन्धों की निकटता से उसे निश्चय ही प्रसन्नता हुई होती (देखिये पृ० 327 पाठ टिप्पणी 6) स्वयं हमारे समय में भी जापानी इतिहासकार तथा अर्थशास्त्री मार्क्सवाद के वौद्धिक आक्रमण से अत्यधिक प्रभावित हुए हैं। कावाकामी हाजीमा जैसे लेखकों ने पर्याप्त सफलता से मार्क्सवादी विकास को जापान के प्रारम्भिक इतिहास पर लागू करने का प्रयास किया।[3]

भूमि के समान वितरण के आदर्श से पृथक् जापान का व्यवहार अधिक प्रगतिशील था। यह ऐतिहासिक आलेखों से प्रमाणित होता है। स्वयं ताओ संहिता ने कुछ निजी भूमि को अपवादात्मक रूप से स्वीकार किया था। 711 ई० पू० में एक अध्यादेश में ऐसे दरवारियों तथा प्रादेशिक भद्र वर्ग की आलोचना की गई थी जो कर-मुक्त भूमि के व्यापक क्षेत्र पर आधिपत्य करते थे। जो दरवार की आय तथा छोटे व कर देने वाले कृषकों के हितों के विपरीत था। 713 ई० में एक अन्य अध्यादेश के द्वारा वौद्ध मठों के इसी प्रकार के व्यवहार की आलोचना की गई। किन्तु राजधानी में स्वयं सरकार ने शाही वंशजों की सामूहिक प्रार्थना पर भार कर-मुक्त भूमि के विशाल क्षेत्रों को मन्दिरों को देना जारी रखा।

धीरे धीरे भूमि-व्यवस्था पर दवाव वढ़ा। जब भूमि-कर-दायी अधिकार-क्षेत्र से कर-मुक्त क्षेत्र में स्थानांतरित हुई तो कर देय भूमि पर भार वढ़ता गया तथा साथ ही कर-देय भूमि को कर-मुक्त कराने के दवाव भी वढ़ते गए। 743 ई० में एक कानून द्वारा भूमि पर

2. सेंसम पूर्वोद्धृत पृष्ठ 196-203।

3. उदाहरण के लिए कोवाकामी हाजिये "ऑन मार्क्स फोर्म्स ऑफ सोश्यल कॉन्शयसनेस" "क्योटो यूनिवर्सिटी इकानामिक रिव्यू अंक प्रथम", संख्या एक (जुलाई 1926)।

निरन्तर निजी स्वामित्व स्वीकार कर लिया गया। तथा यह भूमि के राष्ट्रीकरण की तर्का योजना को समाप्ति की प्रथम स्पष्ट स्वीकृति थी।

बौद्ध धर्म तथा सामन्तवाद :

राजनीतिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया में सर्वप्रथम तथा महत्त्वपूर्ण प्रभाव बौद्ध धर्म का पड़ा। जापान में विद्यमान तीन विचार प्रणालियों—शितोवाद कन्फ्यूशियसवाद तथा बौद्धधर्म में से बौद्धधर्म नारा युग मे सविधान लोकप्रियता प्राप्त कर सका। बौद्धधर्म को ग्रामीण क्षेत्र की सुदृढ़ संस्थागत आर्थिक व्यवस्था का व्यवहारिक लाभ प्राप्त हुआ कन्फ्यूशियसवाद दरबार तक ही समित रहा। इस प्रकार जहाँ कन्फ्यूशियसवाद भव्य दरबारियों का व्यवहार बना, वहाँ, व्यावहारिक बौद्ध भिक्षुओं ने केन्द्र से दूर मठों तथा मन्दिरों की अर्थ व्यवस्था पर आधिपत्य रखा। तथा इस प्रकार उन्होंने जापान की व्यवस्था के सामन्ती व्यवहार में कुछ तत्वों का योगदान दिया।

बौद्धधर्म ने प्रकटतः कभी भी दरबार के विरुद्ध कार्य नहीं किया। इसके विपरीत कुछ विद्वानों ने नारा राजनीतिक युग की चर्चा "बौद्ध प्रार्थनाओं की सरकार" के नाम से की है। राजधानी में महान् टोडाजी मन्दिर एक समानान्तर राज्यधर्म के रूप में बौद्धधर्म का धार्मिक मुख्यालय बना। तथा उसके आधीन प्रान्तों में सरकार द्वारा सुरक्षा प्राप्त मन्दिर (गो को कू जी अथवा को कू बन जी) 741 ई० में शाही आदेश द्वारा स्थानीय सरकारों की राजधानियों में स्थापित किये गए। जापान का आर्थिक इतिहास इन मन्दिरों के आर्थिक हितों पर पर्याप्त विस्तृत सामग्री प्रदान करता है। बौद्ध मन्दिरों के अधिकार क्षेत्रों में भूमि प्रदेश, दास तथा श्रमिक होते थे तथा मन्दिर के अधिकारियों में अपनी सम्पदा की उचित व्यवस्था करने की पर्याप्त संगठनात्मक क्षमता होती थी। अनेकों पुजारी चीन जा कर व्यावहारिक मामलों में अपने समकालीम सैनिक तथा सामन्तों से कहीं अधिक व्यावहारिक दक्षता प्राप्त कर चुके थे। बौद्ध धर्म के धार्मिक अधिकारी इंजीनियर, भूमि सुधारक पूँजीपति तथा महाजन बने।[4]

यह प्रमाणित है कि बौद्ध धर्म ने जापान को महान् आध्यात्मिक तथा भौतिक लाभ प्रदान किये किन्तु साथ ही बौद्ध संस्थागत संरचना ने भयंकर बुराइयाँ भी उत्पन्न की। बौद्ध मठों के सुदृढ़ संस्थागत आधिपत्य तथा सम्पदा में तीव्र प्रगति अनेकों गलत कार्यों का कारण भी बनी ये मठ सर्वदा शाही राजनीति में लिप्त रहने लगे, भौतिक सुखों के लिये संघर्ष तथा जनता का शोषण करने लगे तथा अन्ततः ये आर्थिक दृष्टि से अन्य सभी वर्गों से अधिक सम्पन्न बन गए। को कर युक्त भूस्वामित्व विशाल तथा व्यापक था। बौद्धधर्मावलम्बियों ने जमींदारों को एक आर्थिक इकाई के रूप स्थापित किया, वे जापान के प्रथम-भू स्वामी लॉर्ड बने तथा बाद में उन्होंने स्वयं दरबार की राजनीति में विपर्यायी प्रभाव प्राप्त किया। जब

4. अंग्रेजी में जापान का आर्थिक इतिहास दुर्भाग्यवश तीन खंडीय अनुवाद है ताकेकोशो योसाबुरो, इकॉनामिक ऑस्पेक्ट्स ऑफ दि हिस्ट्री ऑफ दी सिविलिजेशन, ऑफ जापान, टोक्यो 1930। यदि सतर्कतापूर्वक प्रयुक्त किया जाए तो यह रचना पर्याप्त विशिष्ट बौद्ध मंदिरों की सम्पत्ति का वर्णन करती है। कावदा तथा ओकानोतो निहोन केईवाई तो दरयो ट्दबुन अध्याय 2 बौद्ध धर्म के आगमन के आर्थिक प्रभावों का वर्णन किया गया है, तीसरे अध्याय में नारा युग में आर्थिक परिणाम हैं। आधुनिक युद्धोत्तर वाद के लिए कि आज जापान के ग्रामीण क्षेत्रों में प्राचीन कोकुबन-जी से संलग्न छोटे बच्चों के स्कूल हैं। इन प्रकार के नर्सरी स्थापित करने की योजना को अधिग्रहण के दौरान पर्याप्त प्रोत्साहन दिया गया।

मठ सम्पन्न होते गए। तब उन्होंने स्थाई सैनिकों वाली सैनिक टुकड़ियाँ रखना प्रारम्भ किया परिणामतः अन्य स्थानीय प्रभावशाली लोगों ने भी सैनिक रखना प्रारम्भ कर दिया। इस प्रकार बौद्धधर्म ने राज्य के अन्दर एक राज्य की सृष्टि की

अवशिष्ट भद्र वर्ग ने तीव्रता से बौद्ध धर्म का अनुकरण करना प्रारम्भ किया। प्रन्तीय गवर्नरों का पद अधिकाधिक अनुपस्थित दरबारियों के हाथों में पड़ता गया। प्रान्तों में कुल लड़खड़ाती प्राशासनिक व्यवस्था के सम्मुख प्रभावशाली बनते गए। आठवीं शताब्दी के अन्त से लेकर 12 वीं शताब्दी के अन्त तक राजधानी कुलीन तन्त्रीय राजनीतिक (किगोकू) की व्यवस्था में परिवर्तित हो गई, प्रान्तों में पारिवारिक कुलों के नियन्त्रण का पुनरुदय हुआ। बौद्ध धर्म से प्रेरणा पाकर, कर युक्त रियासतें इतनी तीव्रता से विकसित हुई कि वे हेमान कालीन इतिहास की उल्लेखनीय विशेषता दृष्टिगोचर होती हैं। ये कर युक्त रियासतें शोन कहलाई।

शोन अनुदान :

शाब्दिक रुप से शो का अर्थ एक ग्रामीण भवन तथा एन् का अर्थ सुव्यावस्थित भूमि होता है। इस प्रकार शोन ग्रामीण भूमि का भाग अथवा जमींदार होता था। रोम की ग्रामीण कुटियों के समान यह ऐसी भूमि का प्रतीक थी जिनमें होने वाली उपज को कृपक तथा भू-स्वामी में बाँटा जता था। जापानी सामन्तवाद पर प्रतिष्ठित जापानी प्रोफेसर असकावा शोन की तीन मूल विशेपताएँ बतलाते हैं :

(1) भूमि का ऐसा ऋण जिस पर खेती करना प्रारम्भ किया गया हो।(अनुदान की मुख्य आवश्यकता के रूप में)।

(2) उसे किसी प्रभावशाली व्यक्ति अथवा संस्था का संरक्षण प्राप्त हो।

(3) आर्थिक उन्मुक्तता प्राप्त हो या उसका दावा हो या प्राप्त करने की महत्त्वकाँक्षा हो।

सर्वप्रथम् शोन के स्वामी बौद्ध मन्दिर बने। जब बौद्ध लोगों ने कराधीन भूमि को कर उन्मुक्त भूमि में बलना प्रारम्भ किया तो अन्य दो प्रक्रियाओं ने भूमि के इस परिवर्तन का में तीव्रता ला दी। शाही परिवार तथा दरबार के सदस्यों ने भी निजी रूप से कर-मुक्त भूमि का स्वामित्व प्राप्त करना प्रारम्भ किया। इसके अतिरिक्त जिन लोगों ने स्वेच्छा पूर्वक ऐसी भूमि पर कब्जा कर लिया था, जिसका कोई लेखा नहीं था, उन्होंने भी शोन का स्तर प्राप्त किया।

शोन की स्थापना दो तरीकों से सम्भव हुई। पहली प्रक्रिया में कर देने वाला भू-स्वामी अपनी भूमि कर-उन्मुक्त भूमि के स्वामी को सौंप देता था। दूसरी प्रक्रिया में भू-स्वामी भूमि को कृपक को अनुदान अथवा ऋण पर दे देता था। दोनों मामलों में सामन्ती व्यस्था के सीमित अर्थों में कृषक का अधिकार भूमि पर रहता था जिसके बदले में उसे अपने जमींदार का संरक्षण प्राप्त होता था यह जमींदार अथवा भू-स्वामी स्वयं राजनीतिक लाभ प्राप्त करने के लिये, प्राशासनिक व्यवस्था में उच्चत्तम शिखर पर स्थित किसी प्रभावशाली व्यक्ति के नाम इस भूमि को लिखवा सकता था। दोनों ही प्रक्रियाओं का उद्देश्य केन्द्रीय सरकार द्वारा उत्तरोत्तरघटती हुई भूमि पर लगाए गए भारी कर से बचना था। जापान के

आर्थिक इतिहास के इन पहलुओं पर व्यापक विदत्त अनुसंधान वर्तमान काल में जापानी तथा पश्चिमी दोनों विद्वान किए गए हैं।[5]

शक्ति के राजनीतिक तथा आर्थिक परिवर्तन के साथ साथ सामाजिक परिवर्तन भी हुए। सातवीं शताब्दी के सुधारों में सिद्धान्तिक रूप से सुधार से पूर्व वाले कबीलों, कृषकों तथा संघ सदस्यों को भूमि का अनुदान देने के लिये स्वतन्त्र लोगों को निम्न श्रेणी के रूप में वर्गीकृत किया गया। जिसके बदले में वे वस्तुओं अथवा श्रम के रूप में करों का भुगतान कर राज्य की सहायता करने वाले थे। शोन व्यवस्था के प्रारम्भ के साथ ही भूमि का प्रयोग करने का अधिकार कृषक का हो गया जबकि कर लगाने तथा प्रशासन करने पर अधिकार भू-स्वामियों का हो गया। जिन भू-स्वामियों ने विशाल क्षेत्र पर अधिकार किया वे प्रभावशाली तोकूगावा सामन्तों का प्रारम्भिक रूप थे। यह प्रणाली नार्मन कालीन इंग्लैण्ड के समान जापानी समाज में सामन्ती व्यवस्था का प्रारम्भ थी। शोन जापान में एक राजनीतिक व आर्थिक इकाई तथा ऐसे सामाजिक समूह थे जिनका मुखिया स्वयं भू-स्वामी होता था। जिसके नाम पर व्यवस्था उसका सहायक या मुन्शी करता था उसके प्रदेश में मात्र कृषक रहते थे व्यापारी नहीं रहते थे। जमींदारों के मुख्यालय विकसित होते गए तथा उन्होंने ताकूगावा कालीन जापान तक पर्याप्त लोकप्रिय किले वालों नगरों का विकास किया।

सैन्य समूह का प्रारम्भ;

एक अन्य तत्त्व ने भी जापान में विकेन्द्रित सामंती व्यवस्था के प्रारम्भ की गति तीव्र बनादी। यद्यपि जापान में सैनिक जाति की उत्पत्ति के बारे में निश्चित जानकारी नहीं है तथापि उनके बारे में ऐतिहासिक सम्भावनाओं का दमन जापानी इतिहासकारों को परेशान करने वाला है। जापानियों से प्राप्त सैनिक शूरवीरता के साथ कल्पनापूर्ण सम्मान-जनक विचारधारा इस संदर्भ में विस्तृत जांच करने के लिए पर्याप्त है, तथापि प्रारम्भ इतने सहज ढंग से हुआ कि उसकी निश्चित व्याख्या सम्भव नहीं है।

चीनी मॉडल के सुधार के समय तक राजधानी में सैनिक पद पूर्णतया सम्मानित तथा अस्थाई होते थे जिन्हें सीमित अवधि के लिए एनू संकट का सामना करने के लिए बनाया गया था। परिणामतः शाही सैनिक पदवियों वाले लोग प्रायः प्रभावहीन थे, जैसे शोन प्रक्रिया ने धीरे धीरे शाही दरबार की आय के साधन भू-राजस्व को समाप्त करना प्रारम्भ किया तो प्रान्तों में शान्ति तथा व्यवस्था रखने की केन्द्रीय सरकार की क्षमता कम होती गई। आर्थिक दुर्बलता अन्ततः सैनिक दुर्बलता का कारण बनी।

5. यहां सामंतवाद पर विस्तृत शोध की चर्चा करने का कोई प्रयास नहीं किया जाएगा। जापानी में शोएन की अधिकृत चर्चा होंगो इजिरो की रचना निहोन शाकाई के ईकाई शी उद्घृत अध्याय चार "शोएन सेइदो नो जिदाई" (शोएन युग का काल) खंड प्रथम पृष्ठ 136 है। अंग्रेजी में आर. के. रैशोरें ने पर्याप्त परिभाषाओं के साथ एक लेख "दि जापानीज़ शोएन आर मेनोर सम यूजफुल टर्मिनिनोलॉजी" कर्नल ऑफ दि अमेरिकन ऑरियंटल सोसाइटी सत्तावन वां अंक (मार्च 1937) पृष्ठ 78-83 में हैं। प्रोफेसर कसाकावा द्वारा चर्चित न्यूनतम विशेषताएँ "सम आसपेक्ट्स ऑफ जापानीज़ फ्यूडल इंस्टिट्यूशन्स टी. ए. एस. जे. अंक 56 (अगस्त 1918) पृष्ठ 83। प्रोफेसर असाकावा का अध्ययन सामंतवाद की विस्तृत रचना है जिसमें कुछ मूल का संग्रह, अनुवाद तथा टिप्पणियां निहित हैं। दि डाक्यूमेंस ऑफ इराकी, इलस्ट्रेटिव ऑफ दि फ्यूडल इन्स्टीट्यूटशन्स ऑफ जापान, न्यू हैवन 1929 (प्रलेखों के अनुसार शिव्या परिवार इराकी में कामाकुरा युग [illegible])।

सर्वप्रथम बौद्ध मन्दिरों ने अपने प्रदेश में शान्ति व्यवस्था बनाए रखने के लिए, अपने सैनिकों की व्यवस्था को क्योंकि सरकार ऐसा करने में असमर्थ थी। तथा जैसे जैसे विशाल भू-स्वामी सम्पूर्ण प्रान्त में अपने आर्थिक व राजनीतिक शक्ति को बढ़ाने में सफल हुए तो उन्होंने अपनी शक्ति को सैन्य शक्ति में भी परिवर्तित कर लिया। स्वयं अपनी पुलिस व सेना की व्यवस्था करते हुए उन्होंने एक नवीन सैन्य वर्ग का निर्माण किया (बुशी जो बाद में समुराई के नाम से जाने गए।) दैनिक भाषा में इस प्रकार के वर्ग का समाधान सार्वजनिक व्यवस्था के अभाव तथा सम्पन्न जमींदारों के अस्तित्व के आधार पर किया गया।

निम्न स्तर पर कृषकों तथा उच्चतम स्तर पर भू-स्वामियों के मध्य इस योद्धावर्ग के उदय के परिणाम स्वरूप अपेक्षाकृत एक निर्बल वर्ग रोनिन का उदय भी हुआ (शाब्दिक अर्थों में लहरों के आदमी) ये लोग आर्थिक गड़बड़ियों के समय खतरे में पड़ जाते थे। उनकी रक्षा करने वाला न तो कोई भू-स्वामी होता था तथा न वे किसी जमींदारी को अपना घर कह सकते थे तथा ये हमारे युग के राज्य-विहीन लोगों के समान असुरक्षित हो जाते थे। प्रकट रूप से सर्वप्रथम इस पद का प्रयोग दवीं शताब्दी के प्रारम्भ में जापान के उत्तर में विनुक्त एक असंलग्न सैनिकों की टुकड़ी के लिए किया गया था।[6]

साम्राज्य का पतन :

शोन तथा बुशी के दबावों के सम्मुख साम्राज्य के बने रहने के अवसर बहुत कम थे, अतः जब इसके शक्ति से पतन का समय आया तो यह पतन अपमान-विहीनता के अर्थों में नहीं हो सकता था क्योंकि इसकी उत्पत्ति दैवीय तथा राष्ट्रीयता पर आधारित थी। अतः जब दरबार के पतन का समय आया तो यह अपदस्थ अथवा निम्न स्तर पर नहीं गिरा अपितु यह वास्तविकता से हट कर आध्यात्मिक बन गया। चीन में ऐसी परिस्थिति में किसी भी राजवंश की समाप्ति हो सकती थी पर जापान में इसके विपरीत सम्राट् का प्रभाव वास्तविक जगत से पूर्णतः समाप्त हो गया तथा यह पूर्णतः कल्पना तथा स्वप्न की वस्तु बन गया। इस रूप में यह कई शताब्दियों तक उपेक्षित किन्तु सम्मानित बना रह सका।

830–840 की दशाब्दी में जापान में सम्राट् की शक्ति अपने उच्चतम स्तर तक पहुँच चुकी थी किन्तु शाही सत्ता द्वारा प्रदान किये गये निजी लाभ के कार्य अन्ततः शाही परिवार के विनाश का कारण बने। दसवीं शताब्दी तक राजधानी पर फुजिवारा कुल तथा विशाल मन्दिरों का व्यावहारिक नियन्त्रण स्थापित हो चुका था जबकि ग्रामीण जापान पर बौद्ध धर्मों तथा शोन स्वामियों का नियन्त्रण स्थापित हुआ, दोनों ही समान रूप से शाही सत्ता की अवहेलना करते थे। 1070 ई० में सम्राट् शिराकावा ने अपने सीमित तथा पवित्र कार्य के परे, राज्य की व्यवस्था पर वास्तविक नियन्त्रण प्राप्त कर अपनी शाही प्रतिष्ठा को बनाये रखने का अन्तिम निराशापूर्ण प्रयास किया। उसके प्रयास असफल हुए।

साम्राज्य के विलीन होने के साथ-साथ फुजिवारा कुल द्वारा स्थापित नागरिक तानाशाही भी विलीन हो गई।

6. सम पूर्वोद्धृत पृष्ठ 201।

स्वयं फुजिवारा लोगों का पतन उसी व्यवस्था के कारण हुआ जिसकी स्थापना के लिए उन्होंने इतना प्रयास किया था। जिन मन्दिरों की स्थापना इस कुल ने की थी वे कुछ शताब्दियों बाद अपने ही संस्थापकों के वंशजो के विरुद्ध हो गये। फुजिवारा ने अपनी ऐतिहासिक अदूरदर्शिता का परिचय देते हुए अपनी जमींदारी से प्राप्त सम्पूर्ण आय को राजधानी की शाही राजनीति में प्रभाव प्राप्त करने के लिये नष्ट किया। इस प्रकार जब फुजिवारा राजधानी में अपने प्रभाव को स्थापित करने के लिये संघर्ष कर रहे थे, दो अन्य कुलों ने ग्रामीण जापान में शक्तिशाली सैनिक व्यवस्थाएँ स्थापित की दक्षिण में तैरा तथा उत्तर में मिनामोटो नामक कुल शक्तिशाली बनते गये। जब राजधानी में शाही सत्ता का पतन हुआ तो दरबार ने बाहरी भू स्वामियों को राजधानी में व्यवस्था स्थापित करने के लिये सेना लाने को कहा। सर्वप्रथम तैरा कुल ने अपनी सेना का प्रयोग किया तथा वह स्वयं भी सत्ता के आकर्षण तथा दरबार के षडयन्त्र में शामिल हो गया। तत्पश्चात् मियामोतो कुल ने व्यवस्था स्थापित की किन्तु यह स्थानीय राजनीति से पृथक रहा।

दरबार के सभी प्रयास करने के बावजूद शाही सत्ता का निरन्तर पतन होता गया। सरकार के द्वैधवाद को समाप्त करने के प्रत्येक प्रयास ने द्वैधवाद को मजबूत बनाया। तांग मॉडल ने एक शाही योजना द्वारा वास्तविक राजतत्र की स्थापना के विचार को प्रोत्साहित किया, किन्तु अंततः इसकी परिणति द्वैधवाद में हुई। केन्द्रीय प्रशासनिक वर्ग व्यवस्था वंशानुगत विशेषाधिकारों में परिवर्तित हो गई। भूमि का राष्ट्रीयकरण सामंतवादी दबावों के सम्मुख निष्फल हो गया। चीन की आकर्षक प्रशासनिक संहिता अपने महान् तथा असंशोधित रूप में निष्फल रही तथा उनके स्थान पर शूरवीर सेना तथा स्थानीय पूर्व उदाहरणों के आधार पर शासन चलने लगा।

राजधानी में साम्राज्य का पतन बाहरी कुलों के परस्पर संघर्ष के कारण हुआ। मिनामोतों ने तैरा कुल को पराजित कर राजधानी के बाहर अपनी सेना को सुदृढ़ बनाया। साम्राज्य का पतन निम्न दिशा में नहीं हुआ। वह समाप्त नहीं किया गया किन्तु उसे खोखला तथा निरर्थक कर दिया गया। वह सुन्दर रहा तथा शासन के बिना राज्य करता रहा। अंतिम परिवर्तन तब आया जब योरितोमो नामक महान् मिनामोतो नेता ने कामाकुर में एक नवीन तथा पृथक् राजधानी की स्थापना की।

अमेरिकी संदर्भ में इस प्रकार की समता ऐसी कल्पनापूर्ण स्थिति में की जा सकती है—मानो अमेरिका किसी भयंकर अणु अस्त्रों वाले दुश्मनो का शिकार बन जाता है। परिणामस्वरूप अमेरिका की संवैधानिक सरकार अदृश्य हो जाती है तथा उसके स्थान पर थियेटर मुख्यालय में एक कठोर तथा शक्तिशाली सैनिक सरकार की स्थापना की जाती है यह सैनिक सरकार देश की रक्षा करती है। इस सैनिक सरकार की अनुमति से फिर से राज्य सरकारें तथा राष्ट्रीय सरकरें अस्तित्व में आती हैं, किन्तु उनको यह स्पष्ट कर दिया जाता है कि वे सैनिक-उत्पादन मानव-शक्ति-नियत्रण, सैनिक-शिक्षा, सैनिक खबरों के प्रचार तथा सैनिक प्रशासन में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करेंगी। तत्पश्चात् आलंकारिक गवर्नर, विधान सभाएँ तथा सुप्रीम कोर्ट को यह अनुभव होगा कि जीवन के सभी महत्त्वपूर्ण कामों पर सेना का नियंत्रण है तथा राष्ट्रपति व कांग्रेस पूर्णतः प्रभावहीन हो चुके हैं तथा उनका कार्य अवकाशों की घोषणा करना, परेडों की व्यवस्था करना,

राष्ट्रीय गान के शब्दों में परिवर्तन करना तथा प्रत्येक नये वर्ष कारों के लाइसेंस पट्ट पर कौन सा रंग प्रयुक्त किया जाए यह निर्धारित करना मात्र रह गया है तथा बाकी सभी कार्य सैनिक अनिवार्यता के कारण अनिश्चित काल के लिये सेना को सौंप दिये गये है। हमारी कल्पना का यह अमेरिका बहुत कुछ उस जापान से साम्य रखेगा जिसकी स्थापना मोरितोमों के द्वारा की गई। दरबार क्योटों में ही बना रहा किन्तु सम्पूर्ण शक्तियाँ कामाकुरा के सादे तथा छोटे नगर को स्थानांतरित हो गई।

कामाकुरा की अधिनायकता–मिनोमोतो मेरितियों के द्वारा कामाकुरा में द्वैध शासन की स्थापना ने होकेन से दो (सान्मती व्यवस्था) के पूर्ण विकास को सम्भव बनाया। कामाकुरा युग (1185–1338) इस व्यवस्था का यौवन था तथा तोकूगावा काल में (1603 ई० से 1867) इसने परिपक्वता प्राप्त की। इस विशिष्ट सन्दर्भ में सामन्ती व्यवस्था को नियोजित आर्थिक व्यवस्था वोवी शिजोकू व्यवस्था से तँका तथा तैहों द्वारा नियोजित राष्ट्रीयकरण व्यवस्था तथा इसके तात्कालिक पूर्वज शोन जमींदारी व्यवस्था से पृथक् किया जाना चाहिये। इसके अतिरिक्त जापानी आर्थिक इतिहासकार कामाकुरा तथा तोकूगावा काल में एक और अन्तर इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं कि प्रारम्भिक कामाकुरा व्यवस्था विकेन्द्रित सामन्तवादी थी तथा बाद की केन्द्रित सामन्तवादी थी।[7]

जब योरितोमों ने शक्ति प्राप्त की तो उसने क्योटो में वास्तविक सरकार के मात्र दो पहलू उत्सव सम्बन्धी तथा विदेशी मामले ही छोड़े। उसे तथा उसके वंशजों को जापान के विदेशों से सम्पर्क पर भी निषेधाधिकार प्राप्त था। इसका एकमात्र अपवाद आशिकागा योशामित्सू का कुख्यात उदाहरण है जब उसने चीन के मिंग सम्राट् के सम्मुख स्वयं को 'जापान के राजा' के नाम से स्वीकारा। अन्यथा सेनापति शासको (शोगुन्स) के कूटनीति से सम्बन्धित नैतिक सत्ता औपचारिक सम्राट् के हाथों में रहने दी थी तथा अपने अधिकार में मात्र विशेषाधिकार ही था। 1185 में कामाकुरा में पृथक् सेनापति की सरकार की स्थापना की गई। 1192 में मोरितोमों का वास्तविक नियन्त्रण वैधानिक भी बन गया जब उसे सेई ई ताई शोगुन की उपाधि प्राप्त हुई।

शोगुन अथवा सेनापति का शासन शुद्ध सैनिक राजतन्त्र नहीं था। मिनोमोतो किसी भी हालत में अन्य शक्तिशाली कुलों तथा मन्दिरों की सम्पत्ति पर अधिकार नहीं कर सकता था। इस सरकार का स्वरूप बहुत कुछ संघात्मक प्रकार का था जिसमें मोरितोमों में एक बाहरी कुल के रूप में सम्पूर्ण ग्रामीण जापान पर नियन्त्रण कर

7. देखिये होंजो, निहान शाकाई केईजाई शी उद्धृत विशेषतया पृष्ठ पांच भाग प्रथम पृष्ठ195-192 "होकेन नोइवो (सामंतवाद का अर्थ। प्रोफेसर होंजो से अनुसार क्षेत्रिय तथा व्यक्तिगत संबंधी सामंती व्यवस्था के मूल तत्त्व हैं। कावरा के दौरान तथा उसके पश्चात् न केवल योद्धा वर्ग सामंती बन गया। तोकुगावा काल तक व्यावसायिक वर्ग भी मालिक सम्बन्धों से युक्त हो गया। प्रोफेसर नासाकावा (सम "ऑस्पेक्टस···" पूर्वोद्धृत पृष्ठ 78–79) ने जापानी अथवा पश्चिमी प्रकार के सामंतवाद में निम्नांकित विशेपताएँ हैं—(1) ऐसा शासक वर्ग जो योद्धाओं तथा जो परस्पर वफादारी से बँधा होता था। (2) निजी भूमि स्वामित्व से संबंधित वर्गों का विभाजन (3) भूमि पर निजी अधिकार, तथा सार्वजनिक अधिकारों तथा दायित्वों का निर्वाह अर्थात् सरकार वित्त सैनिक मामलों न्याय व्यवस्था में निजी तथा सार्वजनिक हितों में पूर्णतः अस्पष्टता थी इन्होंने जापानी सामंतवाद को तीन चरणों में (1) 1185-1338 (2) 1336–1700 (3) 1600–1868 में बांटा।

शासन की स्थापना की थी उसने शाही नौकरशाही के जटिल स्वरूप के स्थान पर उसके कार्यों को सरल रूप से अपने हाथों में ले लिया था, तथापि उसकी कानूनी स्थिति को वैसेही बना रहने दिया था। मोरितोमो ने उन शासन-सुविधाओं को व्यापक बनाने का प्रयास किया जिनकी आवश्यकता सामंत जमींदारों तथा मंदिरों को थी तथा जिन्हें एक दुर्बल राजधानी देने में असमर्थ रही थी। उसने जापान की संपूर्ण सैनिक शक्ति को अपने हाथों में लिए बगैर सैनिक शक्ति की प्रभावशाली स्थिति प्राप्त की उसके पास अपनी शक्तिशाली सेना थी जिसका प्रयोग वह सैनिक न्याय प्रदान करने के लिए करता था। छोटे तथा बड़े सामन्त अपने झगड़ों को निबटारा करने उसके पास आ सकते थे तथा क्योंठो प्रशासन की कठिन भ्रष्ट व अलोकप्रिय जटिलताओं तथा पेचीदगियों में पड़े बिना, वे अपनी समस्याओं का समाधान कर सकते। मोरितोमों के परामर्शदाताओं ने यथार्थवादी तरीके से प्रारम्भ किया तथा उन्होंने प्रथम जापानी शिन्तो सरकार चीनी सिद्धान्तों के स्थान पर जापानी तथ्यों से निर्मित की। कामाकुरा व्यवस्था सरल, सहज तथा सैनिक मुख्यालय बाकूफ के अनुकूल थी। (टँट सरकार)

प्रारम्भ में कामाकुरा तानाशाही के मात्र तीन अंग एक सैनिक न्यायालय, प्राशासनिक बोर्ड तथा न्यायिक व्यवस्था थे। तीनों ही अंग शाही दरबार की जटिल व्यवस्था की तुलना में पर्याप्त सरल थे। प्रत्येक ने विद्यमान जापानी व्यवहारों को कसौटी के रूप में स्वीकारा। समुराईदोकोरो जिसका कार्य सैनिक वर्ग की समस्याओं का समाधान करना था, का निर्माण फुजिवारा कुल द्वारा स्थापित किया गया था। मानदोकारो नामक प्राशासनिक नीति बोर्ड तथा वंशानुगत प्राशासनिक सेवाओं का संगठन, उन छोटी संस्थाओं का प्रतिरूप था जिन्हें भू स्वामियों ने अपनी जमींदारी की व्यवस्था करने में पर्याप्त उपयोगी पाया था। मोचू जो नामक अपील के अन्तिम न्यायालय की स्थापना उन निजी सामन्ती न्यायालयों के ऊपर की गई जो भूमि के कर-मुक्त तथा स्वायत्त शासी स्तर पर स्थानान्तरित होने पर व्यवस्था के लिये आवश्यक हो गए।

कामाकुरा शासन ने तत्कालीन जापान में भूमि व्यवस्था को तत्कालीन रूप में स्थायी बनाये रख कर सफलता प्राप्त की। भूमि व्यवस्था को सुधारने का काम भी मोरितोमो ने धीरे-धीरे किया। अपने शासन के प्रारम्भ में उसे विभिन्न प्रान्तों में अपने प्रति वफादार सैनिक गवर्नरों को नियुक्त करने की अनुमति शाही दरबार ने बड़ी अनिच्छा से दी, किन्तु जब उसने राजधानी में एक हजार सैनिकों की नियुक्ति शाही शासन से आज्ञा प्राप्त करने के लिए की तो उसे शीघ्र ही शाही अनुमति प्राप्त हो गयी। फिर जहाँ तहाँ सम्भव हुआ उसने निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्रों में जितो (प्रबन्ध कर्ताओं) की स्थापना की। प्रत्येक प्रबन्ध कर्ता के आधीन पर्याप्त मात्रा में सैनिक हुआ करते थे जो करों का संग्रह करते थे तथा शोन में उनकी स्थिति महत्त्वपूर्ण होती थी। प्रारम्भ में ये प्रबन्धकर्ता शोन व्यवस्था के मूल आधार थे किन्तु शोगुनेत अथवा सेनापति शासन व्यवस्था के अन्तर्गत इनकी सभी शक्तियाँ सैनिक गवर्नरों ने छीन ली तथा वे स्वयं स्वायत्त सामन्ती लॉर्ड बन गये। (डेम्यो) जब मोरितोमों ने अपने स्थानीय अधिकारियों को भेजने की अनुमति प्राप्त की तभी उसने सर्वव्यापी सैनिक कर लगाने का अधिकार भी प्राप्त किया। इस कर व्यवस्था ने कर मुक्तता की विनाशकारी व्यवस्था पर प्रतिबन्ध लगाया यद्यपि प्रारम्भ में मोरितोमों ने मन्दिरों से तथा शाही परिवार से सम्बन्धित जमींदारियों

पर कर लगाने की हिम्मत नहीं की। (एक बाद के सेनापति होजो यासुतोकी ने एक शाही उपद्रव को दबाने के बहाने, कर उगाहने की शक्ति के साथ-साथ सम्पूर्ण जापान में अपने गुगो तथा जितो के साथ कर-संग्रह करने की शक्ति को स्थापित किया।)[8]

बारहवीं शताब्दी के अन्त में मोरितोमो की मृत्यु हो गई। किन्तु उसने अपनी शोगुनेत व्यवस्था को इतनी भली प्रकार से व्यवस्थित किया था कि वह उसके पश्चात् भी सैकड़ों वर्षों तक चलती रही। किन्तु जब उसके वंशज इस व्यवस्था को बनाये रखने में असफल रहे तो एक नये परिवार होजो ने मिनामोतो के स्थान पर वंशानुगत पदाधिकारी शिक्कों अथवा रीजेंन्ट की नियुक्ति शासन कर्त्ता के रूप में की। होजो उस तेरा कुल के थे जिसे मिनामो ने अपदस्थ किया था। इस प्रकार शासन त्रस्तरीय बन गया क्योंकि एक वंशानुगत रीजेन्ट उस वंशानुगत सैनिक तानाशाह के लिए कार्य करता था जो वंशानुगत सम्राट की ओर से शासन करता था। क्योटो में भी उथल पुथल होती रही। शक्ति हीन होने के बावजूद भी अक्सर सम्राट औपचारिकता से बचने के लिए पद त्याग देते थे तथा फिर अपने कार्यों को अपने नाम मात्र के उत्तराधिकारियों के नाम से करने को अधिक सुविधजनक महसूस करते थे। तेरहवीं शताब्दी तक जापान में व्यक्तिगत उत्तरदायित्व की देयता तथा प्रतिदेयता जिस जटिल स्थिति तक पहुँच चुकी थी, वह पश्चिमी प्रेक्षक की कल्पना शक्ति से परे है। एक ही समय में पद मुक्त सम्राट नाम मात्र के सम्राट के नाम पर वस्तुतः शासन कर सकता था जबकि नाम मात्र की शक्तियां, नाममात्र के सैनिक तानाशाह के नाम पर निष्क्रिय नागरिक प्रशासन द्वारा एक वंशानुगत सैनिक प्रशासन को सौंप दी गयीई, जिस के नाम पर एक परामर्शदाता कौंसिल वंशानुगत रीजेंन्ट के सभापतित्व में कार्य करती थी।

क्लिष्ट होने के बावजूद यह व्यवस्था कार्य करती रही होनो रीजेंन्ट के अन्तर्गत मोरितोयां का साहसिक प्रयोग अपने इतिहास के चरम उत्कर्ष पर पहुँचा। ये रीजेंन्ट अक्सर निष्पक्ष, दक्ष तथा साहसिक होते थे। उनके आधिपत्य में कामाकुरा व्यवस्था ने कानूनी रूप में परिपक्वता, प्राप्त की।

कानूनी संहिता तथा भूमि रजिस्टर

विकेन्द्रित सामंत-वाद अनेकों नैतिक प्रकारों से विकसित हुआ। आश्चर्यजनक किन्तु आकस्मिक विकास का समानोतर उदाहरण ब्रिटेन में विकसित हो रहे आंग्ल नार्मन कानून का विकास है। 1232 ई. में कामाकुरा की प्रशासनिक परिषद् ने कानूनों का एक संग्रह प्रकाशित किया जो जोई शिकीमोकू अथवा गो सेईबाई षिकीमोकू कहलाया। यथास्थिति सुदृढ बनाने के लिये इस को संहिता की रचना बाकूफू के प्रथम-पचास वर्षों में की गई। यह ब्रिटेन में कामन ला के विकास का निकट समानोतर है। इस संहिता का मूल क्षेत्र भूमि स्वामित्व तथा अधिकारों का नियमीकरण करना था, जिनका समाधान एक सामंतवादी कृषि प्रदान अर्थ व्यवस्था के लिए अत्यधिक आवश्यक था।

यह संहिता जापानी भाषा में न लिखी जाकर चीनी भाषा में लिखी गई है तथापि इस की शैलि सैनिक मुख्यालय के अनुकूल अस्पष्ट एवम् अपरिष्कृत है। ग्यारह सदस्यों की एक

8. ताकेकोशी पूर्वोद्धृत खंड प्रथम अध्याय 13 गुगो व्यवस्था इस ग्रन्थ में अन्य विषयों से अपेक्षाकृत स्पष्ट है ताकेकोशी ने कामाकुरा प्रशासन का वर्णन करने के लिए नैतिक गणराज्य पद का प्रयोग किया है।

परिपद ने इसका प्रारूप तैयार किया तथा तब इसे रीजेंट की स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किया गया तथा जोई शासन काल के प्रथम वर्ष में इसकी उद्घोषणा की गई।

'इंस्टीट्यूट ग्राफ जुडीपेचर' नामक शीर्षक के अंतर्गत इसका अनुवाद अंग्रजी में जॉन केरी हाल के द्वारा किया गया है।

इक्कावन अनुच्छेद वाली यह संहिता, शोतोकू संविधान के समान कानूनी रचना से अधिक नीति वाक्यों की पुस्तिका है। यह निष्ठा की अपेक्षा तथा संतानवत व्यक्ति की प्रशंसा करती है। इसके अंतिम भाग में कानूनी प्रक्रिया की चर्चा की गई है। प्रथम अनुच्छेद में यह कहा गया है कि शितों उपासना गृहों तथा त्योहारों की रक्षा की जाए। द्वितीय अनुच्छेद के अनुसार बौद्ध मंदिरों की निरंतर मरम्मत करवाई जाए तथा बौद्ध अनुष्ठानों को पूरा किया जाए। अनुच्छेद नौ मे विद्रोह का पडयंत्र करने वालों के विरुद्ध अधिकारियों को व्यापक स्वनिर्णय संबंधि शक्तियाँ दी गई है। तैंतीसवाँ अनुच्छेद डाका, चोरी तथा लूटपाट के बारे में है। चौतीसवाँ अनुच्छेद उन बाहरी लोगों के उत्तरदायित्व तथा दंड से संबंधित है तो झगडों में हस्तक्षेप करते हैं। निश्चय ही यह संहिता आदर्शात्मक आचरण के कन्फ्यूशियस-वादी विश्वास को बहुत कम परावर्तित करती है। अपने व्यावहारिक तथा सामंतीवादी रूप में यह संहिता तत्कालीन जापान को परावर्तित करती है।

राजनीतिक दृष्टि से इस संहिता में कैंटों के मैदान में स्थित नई सरकार तथा राजधानी की परंपरागत शाही सरकार के मध्य संबंधों को व्यवस्थित किया। उदाहरण के लिए सैंतीसवें अनुच्छेद के अनुसार—

"कोटो के छोटे भू स्वामी कैयोटो में सहायक पदो (हो बो काल तथा आधुनिक जापानी में दैकान अथवा सहायक अधिकारी) अथवा रियासतों के अधीक्षण के लिए प्रार्थना पत्र दे।"

मिनामोतो कुल के शासन काल में इस प्रकार की प्रथा का कठोर रूप से निषेध किया गया था। किन्तु बाद में कुछ लोगों ने अपनी महत्वाकांक्षाओं के कारण न केवल इस

9. योरितोमो की मृत्यु के पश्चात् सरकारी अधिकारियों ने प्रसिद्ध चीनी कथनों को संकलित कर जोकान सेनो के नाम से प्रकाशित किया। इस प्रकार इस युग की संक्षिप्त संहिता को व्यावहारिक विशेषताएँ अपनी नैतिक पृष्ठ भूमि के लिए चीनियों पर निर्भर करते ये प्रसिद्ध जोई संहिता का प्रकाशन तोकूगावा काल तक नहीं हुआ था तथा उसके बाद भी इसे प्रायः चीनी भाव चित्रों को समझने के लिए प्रयुक्त किया जाता था। इस संहिता को पुराने जापान दो संपूर्ण विफिर के साथ (सातवी शताब्दी से तोकूगावा काल तक) एक हजार पृष्ठ से कम के ग्रंथ के रूप में प्रकाशित किया गया। हैगीनो तोशिमुनी संपादक तथा अन्य निहोन कोराई होते ने (पुराने जापान की विधि के रिकार्ड टोक्यों 1892) इंगियो द्वारा संपादित इस ग्रन्थ का दो वटा पांच भाग शाही विधियों को निहित करता है। (सात बारहवीं सदी) तीन वटा पांच भाग सामंती प्रदेशों की विधि से संबंधित है। नीचे दिए गये गद्यांश जॉन केरी हॉल द्वारा किये अधिकृत अंग्रेजी अनुवाद है "जापानीज फ्यूडल लॉ दि इंस्टीट्यूशन ऑफ ज्यूडीकेचर" "गो सेईबाई शिकीमोकू" का अनुवाद "दि मेजेस्टेरियल कोड ऑफ दि होजो पावर होल्डर्स (1232 ई० टी. ए. एस. ने चौतीसवां अंक खण्ड प्रथम (1906) पृष्ठ 1-44 हैगीनो में संयुक्त रचना में थोड़ा परिवर्तन किया गया है। एक जापानी विधिवेत्ता की टिप्पणी के लिए देखिये मिउरा होईसेशी नो केन्क्यु पूर्वोधृत अंक प्रथम, खंड प्रथम आठ नौ तथा दस अनुभाग सैनिक व्यवस्था तथा उसके कानूनी पक्ष की चर्चा करते हैं। पृष्ठ 26–37 संहिता के आर्थिक पक्ष के लिए देखिये तेराओ कोनी "जोईसेई बाई शिकिमोकू" निहोन केई गाई जिवेन, पूर्वोद्धृत, खंड तीन पृष्ठ 562।

स्वयं फुजिवारा लोगों का पतन उसी व्यवस्था के कारण हुआ जिसकी स्थापना के लिए उन्होंने इतना प्रयास किया था। जिन मन्दिरों की स्थापना इस कुल ने की थी वे कुछ शताब्दियों बाद अपने ही संस्थापकों के वंशजों के विरुद्ध हो गये। फुजिवारा ने अपनी ऐतिहासिक अदूरदर्शिता का परिचय देते हुए अपनी जमींदारी से प्राप्त सम्पूर्ण आय को राजधानी की शाही राजनीति में प्रभाव प्राप्त करने के लिये नष्ट किया। इस प्रकार जब फुजिवारा राजधानी में अपने प्रभाव को स्थापित करने के लिये संघर्ष कर रहे थे, दो अन्य कुलों ने ग्रामीण जापान में शक्तिशाली सैनिक व्यवस्थाएँ स्थापित की दक्षिण में तैरा तथा उत्तर में मिनामोटो नामक कुल शक्तिशाली बनते गये। जब राजधानी में शाही सत्ता का पतन हुआ तो दरबार ने बाहरी भू स्वामियों को राजधानी में व्यवस्था स्थापित करने के लिये सेना लाने को कहा। सर्वप्रथम तैरा कुल ने अपनी सेना का प्रयोग किया तथा वह स्वयं भी सत्ता के आकर्षण तथा दरबार के षड्यन्त्र में शामिल हो गया। तत्पश्चात् मियामोतो कुल ने व्यवस्था स्थापित की किन्तु वह स्थानीय राजनीति से पृथक रहा।

दरबार के सभी प्रयास करने के बावजूद शाही सत्ता का निरन्तर पतन होता गया। सरकार के द्वैधवाद को समाप्त करने के प्रत्येक प्रयास ने द्वैधवाद को मजबूत बनाया। तांग मॉडल ने एक शाही योजना द्वारा वास्तविक राजतन्त्र की स्थापना के विचार को प्रोत्साहित किया, किन्तु अंततः इसकी परिणति द्वैधवाद में हुई। केन्द्रीय प्रशासनिक वर्ग व्यवस्था वंशानुगत विशेषाधिकारों में परिवर्तित हो गई। भूमि का राष्ट्रीयकरण सामंतवादी दबावों के सम्मुख निष्फल हो गया। चीन की आकर्षक प्रशासनिक संहिता अपने महान् तथा असंशोधित रूप में निष्फल रही तथा उनके स्थान पर शूरवीर सेना तथा स्थानीय पूर्व उदाहरणों के आधार पर शासन चलने लगा।

राजधानी में साम्राज्य का पतन बाहरी कुलों के परस्पर संघर्ष के कारण हुआ। मिनामोतों ने तैरा कुल को पराजित कर राजधानी के बाहर अपनी सेना को सुदृढ़ बनाया। साम्राज्य का पतन निम्न दिशा में नहीं हुआ। वह समाप्त नहीं किया गया किन्तु उसे खोखला तथा निरर्थक कर दिया गया। वह सुन्दर रहा तथा शासन के बिना राज्य करता रहा। अंतिम परिवर्तन तब आया जब योरितोमो नामक महान् मिनामोतो नेता ने कामाकुरा में एक नवीन तथा पृथक् राजधानी की स्थापना की।

अमेरिकी संदर्भ में इस प्रकार की समता ऐसी कल्पनापूर्ण स्थिति में की जा सकती है—मानो अमेरिका किसी भयंकर अणु अस्त्रों वाले दुश्मनों का शिकार बन जाता है। परिणामस्वरूप अमेरिका की संवैधानिक सरकार अदृश्य हो जाती है तथा उसके स्थान पर थियेटर मुख्यालय में एक कठोर तथा शक्तिशाली सैनिक सरकार की स्थापना की जाती है यह सैनिक सरकार देश की रक्षा करती है। इस सैनिक सरकार की अनुमति से फिर से राज्य सरकारें तथा राष्ट्रीय सरकारें अस्तित्व में आती हैं, किन्तु उनको यह स्पष्ट कर दिया जाता है कि वे सैनिक-उत्पादन मानव-शक्ति-नियंत्रण, सैनिक-शिक्षा, सैनिक खबरों के प्रचार तथा सैनिक प्रशासन में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करेंगी। तत्पश्चात् आलंकारिक गवर्नर, विधान सभाएँ तथा सुप्रीम कोर्ट को यह अनुभव होगा कि जीवन के सभी महत्त्वपूर्ण कामों पर सेना का नियंत्रण है तथा राष्ट्रपति व कांग्रेस पूर्णतः प्रभावहीन हो चुके हैं तथा उनका कार्य अवकाशों की घोषणा करना, परेडों की व्यवस्था करना,

राष्ट्रीय गान के शब्दों में परिवर्तन करना तथा प्रत्येक नये वर्ष कारों के लाइसेंस पट्ट पर कौन सा रंग प्रयुक्त किया जाए यह निर्धारित करना मात्र रह गया है तथा बाकी सभी कार्य सैनिक अनिवार्यता के कारण अनिश्चित काल के लिये सेना को सौंप दिये गये है। हमारी कल्पना का यह अमेरिका बहुत कुछ उस जापान से साम्य रखेगा जिसकी स्थापना योरितोमो के द्वारा की गई। दरबार क्योटों में ही बना रहा किन्तु सम्पूर्ण शक्तियाँ कामाकुरा के सादे तथा छोटे नगर को स्थानांतरित हो गई।

कामाकुरा की अधिनायकता–मिनोमोतो येरितियों के द्वारा कामाकुरा में द्वैध शासन की स्थापना ने होकेन से दो (सामन्ती व्यवस्था) के पूर्ण विकास को सम्भव बनाया। कामाकुरा युग (1185–1338) इस व्यवस्था का यौवन था तथा तोकूगावा काल में (1603 ई० से 1867) इसने परिपक्वता प्राप्त की। इस विशिष्ट सन्दर्भ में सामन्ती व्यवस्था को नियोजित धार्मिक व्यवस्था बोची शिजोकू व्यवस्था से तैका तथा तैहों द्वारा नियोजित राष्ट्रीयकरण व्यवस्था तथा इसके तात्कालिक पूर्वज शोन जमींदारी व्यवस्था से पृथक् किया जाना चाहिये। इसके अतिरिक्त जापानी आर्थिक इतिहासकार कामाकुरा तथा तोकूगावा काल में एक और अन्तर इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं कि प्रारम्भिक कामाकुरा व्यवस्था विकेन्द्रित सामन्तवादी थी तथा बाद की केन्द्रित सामन्तवादी थी।[7]

जब योरितोमों ने शक्ति प्राप्त की तो उसने क्योटो में वास्तविक सरकार के मात्र दो पहलू उत्सव सम्बन्धी तथा विदेशी मामले ही छोड़े। उसे तथा उसके वंशजों को जापान के विदेशों से सम्पर्क पर भी निषेधाधिकार प्राप्त था। इसका एकमात्र अपवाद आशिकागा योशामित्सू का कल्यात उदाहरण है जब उसने चीन के मिंग सम्राट् के सम्मुख स्वयं को 'जापान के राजा' के नाम से स्वीकारा। अन्यथा सेनापति शासको (शोगुन्स) के कूटनीति से सम्बन्धित नैतिक सत्ता औपचारिक सम्राट् के हाथों में रहने दी थी तथा अपने अधिकार में मात्र निषेधाधिकार ही था। 1185 में कामाकुरा में पृथक् सेनापति की सरकार की स्थापना की गई। 1192 में योरितोमों का वास्तविक नियन्त्रण वैधानिक भी बन गया जब उसे सेई ई ताई शोगुन की उपाधि प्राप्त हुई।

शोगुन अथवा सेनापति का शासन शुद्ध सैनिक राजतन्त्र नहीं था। मिनोमोतो किसी भी हालत में अन्य शक्तिशाली कुलों तथा मन्दिरों की सम्पत्ति पर अधिकार नहीं कर सकता था। इस सरकार का स्वरूप बहुत कुछ संघात्मक प्रकार का था जिसमें योरितोमों में एक बाहरी कुल के रूप में सम्पूर्ण ग्रामीण जापान पर नियन्त्रण कर

7. देखिये होंजो, निहान शाकाई केईजाई शी उद्धृत विशेषतया पृष्ठ पांच भाग प्रथम पृष्ठ195-192 "होकेन सोइवो (सामंतवाद का अर्थ। प्रोफेसर होंजो से अनुसार क्षेत्रिय तथा व्यक्तिगत संबंधी सामंती व्यवस्था के मूल तत्त्व हैं। यात्रना के दौरान तथा उसके पश्चात् न केवल योद्धा वर्ग सामंती बन गया। तोकुगावा काल तक व्यावसायिक वर्ग भी मालिक सम्बन्धों से युक्त हो गया। प्रोफेसर आसाकावा (सम "ऑस्पेक्टस···" पूर्वोद्धृत पृष्ठ 78–79) ने जापानी अथवा पश्चिमी प्रकार के सामंतवाद में निम्नांकित विशेषताएँ हैं—(1) ऐसा शासक वर्ग जो योद्धाओं तथा जो परस्पर वफादारी से बँधा होता था। (2) निजी भूमि स्वामित्व से संबंधित वर्गों का विभाजन (3) भूमि पर निजी अधिकार, तथा सार्वजनिक अधिकारों तथा दायित्वों का निर्वाह अर्थात् सरकार वित्त सैनिक मामलों न्याय व्यवस्था में निजी तथा सार्वजनिक हितों में पूर्णतः अस्पष्टता थी इन्होने जापानी सामंतवाद को तीन चरणों में (1) 1185-1338 (2) 1336–1700 (3) 1600–1868 में बांटा।'

शासन की स्थापना की थी उसने शाही नौकरशाही के जटिल स्वरूप के स्थान पर उसके कार्यों को सरल रूप से अपने हाथों में ले लिया था, तथापि उसकी कानूनी स्थिति को वैसेही बना रहने दिया था। योरितोमो ने उन शासन-सुविधाओं को व्यापक बनाने का प्रयास किया जिनकी आवश्यकता सामंत जमींदारों तथा मंदिरों को थी तथा जिन्हें एक दुर्बल राजधानी देने में असमर्थ रही थी। उसने जापान की संपूर्ण सैनिक शक्ति को अपने हाथों में लिए बगैर सैनिक शक्ति की प्रभावशाली स्थिति प्राप्त की उसके पास अपनी शक्तिशाली सेना थी जिसका प्रयोग वह सैनिक न्याय प्रदान करने के लिए करता था। छोटे तथा बड़े सामन्त अपने झगड़ों को निबटारा करने उसके पास आ सकते थे तथा क्योटो प्रशासन की कठिन भ्रष्ट व अलोकप्रिय जटिलताओं तथा पेचीदगियों में पड़े बिना, वे अपनी समस्याओं का समाधान कर सकते। योरितोमो के परामर्शदाताओं ने यथार्थवादी तरीके से प्रारम्भ किया तथा उन्होंने प्रथम जापानी सिन्तो सरकार चीनी सिद्धान्तों के स्थान पर जापानी तथ्यों से निर्मित की। कामाकुरा व्यवस्था सरल, सहज तथा सैनिक मुख्यालय बाकूफू के अनुकूल थी। (टैट सरकार)

प्रारम्भ में कामाकुरा तानाशाही के मात्र तीन अंग एक सैनिक न्यायालय, प्राशासनिक बोर्ड तथा न्यायिक व्यवस्था थे। तीनों ही अंग शाही दरबार की जटिल व्यवस्था की तुलना में पर्याप्त सरल थे। प्रत्येक ने विद्यमान जापानी व्यवहारों को कसौटी के रूप में स्वीकारा। समुराईदोकोरो जिसका कार्य सैनिक वर्ग की समस्याओं का समाधान करना था, का निर्माण फुजिवारा कुल द्वारा स्थापित किया गया था। मानदोकोरो नामक प्राशासनिक नीति बोर्ड तथा वंशानुगत प्राशासनिक सेवाओं का संगठन उन छोटी संस्थाओं का प्रतिरूप था जिन्हें भू स्वामियों ने अपनी जमींदारी की व्यवस्था करने में पर्याप्त उपयोगी पाया था। मोंचू जो नामक अपील के अन्तिम न्यायालय की स्थापना उन निजी सामन्ती न्यायालयों के ऊपर की गई जो भूमि के कर-मुक्त तथा स्वायत्त शासी स्तर पर स्थानान्तरित होने पर व्यवस्था के लिये आवश्यक हो गए।

कामाकुरा शासन ने तत्कालीन जापान में भूमि व्यवस्था को तत्कालीन रूप में स्थायी बनाये रख कर सफलता प्राप्त की। भूमि व्यवस्था को सुधारने का काम भी योरितोमो ने धीरे-धीरे किया। अपने शासन के प्रारम्भ में उसे विभिन्न प्रान्तों में अपने प्रति वफादार सैनिक गर्वनरों को नियुक्त करने की अनुमति शाही दरबार ने बड़ी अनिच्छा से दी, किन्तु जब उसने राजधानी में एक हजार सैनिकों की नियुक्ति शाही शासन से आज्ञा प्राप्त करने के लिए की तो उसे शीघ्र ही शाही अनुमति प्राप्त हो गयी। फिर जहाँ जहाँ सम्भव हुआ उसने निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्रों में जितो (प्रबन्ध कर्ताओं) की स्थापना की। प्रत्येक प्रबन्ध कर्ता के आधीन पर्याप्त मात्रा में सैनिक हुआ करते थे जो करों का संग्रह करते थे तथा शोन में उनकी स्थिति महत्वपूर्ण होती थी। प्रारम्भ में ये प्रबन्धकर्ता शोन व्यवस्था के मूल आधार थे किन्तु शोगुनेट अथवा सेनापति शासन व्यवस्था के अन्तर्गत इनकी सभी शक्तियाँ सैनिक गर्वनरों ने छीन ली तथा वे स्वयं स्वायत्त सामन्ती लॉर्ड बन गये। (डिम्यो) जब योरितोमो ने अपने स्थानीय अधिकारियों को भेजने की अनुमति प्राप्त की तभी उसने सर्वव्यापी सैनिक कर लगाने का अधिकार भी प्राप्त किया। इस कर व्यवस्था ने कर मुक्ता की विनाशकारी व्यवस्था पर प्रतिबन्ध लगाया यद्यपि प्रारम्भ में योरितोमो ने मन्दिरों से तथा शाही परिवार से सम्बन्धित जमींदारियों

पर कर लगाने की हिम्मत नहीं की। (एक बाद के सेनापति होजो यासुतोकी ने एक शाही उपद्रव को दबाने के बहाने, कर उगाहने की शक्ति के साथ-साथ सम्पूर्ण जापान में अपने शुगो तथा जितो के साथ कर-संग्रह करने की शक्ति को स्थापित किया।)[8]

बारहवीं शताब्दी के अन्त में मोरितोमो की मृत्यु हो गई। किन्तु उसने अपनी शोगुनेत व्यवस्था को इतनी भली प्रकार से व्यवस्थित किया था कि वह उसके पश्चात् भी सैकड़ों वर्षों तक चलती रही। किन्तु जब उसके वंशज इस व्यवस्था को बनाये रखने में असफल रहे तो एक नये परिवार होजो ने मिनामोतो के स्थान पर वंशानुगत पदाधिकारी शिक्कों अथवा रीजेंन्ट की नियुक्ति शासन कर्त्ता के रूप में की। होजो उस तेरा कुल के थे जिसे मिनामो ने अपदस्थ किया था। इस प्रकार शासन त्रस्तरीय बन गया क्योंकि एक वंशानुगत रीजेंन्ट उस वंशानुगत सैनिक तानाशाह के लिए कार्य करता था जो वंशानुगत सम्राट की ओर से शासन करता था। क्योटो में भी उथल पुथल होती रही। शक्ति हीन होने के बावजूद भी अक्सर सम्राट औपचारिकता से बचने के लिए पद त्याग देते थे तथा फिर अपने कार्यों को अपने नाम मात्र के उत्तराधिकारियों के नाम से करने को अधिक सुविधाजनक महसूस करते थे। तेरहवीं शताब्दी तक जापान में व्यक्तिगत उत्तरदायित्व की देयता तथा प्रतिदेयता जिस जटिल स्थिति तक पहुँच चुकी थी, वह पश्चिमी प्रेक्षक की कल्पना शक्ति से परे है। एक ही समय में पद मुक्त सम्राट नाम मात्र के सम्राट के नाम पर वस्तुतः शासन कर सकता था जबकि नाम मात्र की शक्तियां, नाममात्र के सैनिक तानाशाह के नाम पर निष्क्रिय नागरिक प्रशासन द्वारा एक वंशानुगत सैनिक प्रशासन को सौंप दी गयीं, जिस के नाम पर एक परामर्शदाता कौंसिल वंशानुगत रीजेंन्ट के सभापतित्व में कार्य करती थी।

क्लिष्ट होने के बावजूद यह व्यवस्था कार्य करती रही होजो रीजेंन्ट के अन्तर्गत मोरितोमो का साहसिक प्रयोग अपने इतिहास के चरम उत्कर्ष पर पहुँचा। ये रीजेंन्ट अक्सर निष्पक्ष, दक्ष तथा साहसिक होते थे। उनके आधिपत्य में कामाकुरा व्यवस्था ने कानूनी रूप में परिपक्वता, प्राप्त की।

कानूनी संहिता तथा भूमि रजिस्टर

विकेन्द्रित सामंत-वाद अनेकों नैतिक प्रकारों से विकसित हुआ। आश्चर्यजनक किन्तु आकस्मिक विकास का समानोतर उदाहरण ब्रिटेन में विकसित हो रहे आंग्ल नार्मन कानून का विकास है। 1232 ई. में कामाकुरा की प्रशासनिक परिषद् ने कानूनों का एक संग्रह प्रकाशित किया जो जोई शिकीमोकू अथवा गो सेईबाई शिकीमोकू कहलाया। यथास्थिति सुदृढ बनाने के लिये इस को संहिता की रचना बाकूफू के प्रथम पचास वर्षों में की गई। यह ब्रिटेन में कामन ला के विकास का निकट समानोतर है। इस संहिता का मूल क्षेत्र भूमि स्वामित्व तथा अधिकारों का नियमीकरण करना था, जिनका समाधान एक सामंतवादी कृषि प्रदान अर्थ व्यवस्था के लिए अत्यधिक आवश्यक था।

यह संहिता जापानी भाषा में न लिखी जाकर चीनी भाषा में लिखी गई है तथापि इस की शैलि सैनिक मुख्यालय के अनुकूल अस्पष्ट एवम् अपरिष्कृत है। ग्यारह सदस्यों की एक

8. ताकेकोशी पूर्वोद्धृत खंड प्रथम अध्याय 13 शुगो व्यवस्था इस ग्रन्थ में अन्य विषयों से अपेक्षाकृत स्पष्ट है ताकेकोशी ने कामाकुरा प्रशासन का वर्णन करने के लिए सैनिक गणराज्य पद का प्रयोग किया है।

परिषद ने इसका प्रारूप तैयार किया तथा तब इसे रीजेंट की स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किया गया तथा जोई शासन काल के प्रथम वर्ष में इसकी उद्घघोषणा की गई।

'इंस्टीट्यूट आफ जुडीपेचर' नामक शीर्षक के अंतर्गत इसका अनुवाद अंग्रजी में जॉन केरी हाल के द्वारा किया गया है।

इक्कावन अनुच्छेद वाली यह संहिता, शोतोकू संविधान के समान कानूनी रचना से अधिक नीति वाक्यों की पुस्तिका है। यह निष्ठा की अपेक्षा तथा संतानवत व्यक्ति की प्रशंसा करती है। इसके अंतिम भाग में कानूनी प्रक्रिया की चर्चा की गई है। प्रथम अनुच्छेद में यह कहा गया है कि शितों उपासना गृहों तथा त्योहारों की रक्षा की जाए। द्वितीय अनुच्छेद के अनुसार बौद्ध मंदिरों की निरंतर मरम्मत करवाई जाए तथा बौद्ध अनुष्ठानों को पूरा किया जाए। अनुच्छेद नौ वे विद्रोह का षडयंत्र करने वालों के विरुद्ध अधिकारियों को व्यापक स्वनिर्णय संबंधि शक्तियाँ दी गई है। तैंतीसवाँ अनुच्छेद डाका, चोरी तथा लूटपाट के बारे में है। चौतीसवाँ अनुच्छेद उन बाहरी लोगों के उतरदायित्व तथा दंड से संबंधित है तो झगडों में हस्तक्षेप करते हैं। निश्चय ही यह संहिता आदर्शात्मक आचरण के कन्फ्यूशियस-वादी विश्वास को बहुत कम परावर्तित करती है। अपने व्यावहारिक तथा सामंतीवादी रूप में यह संहिता तत्कालीन जापान को परावर्तित करती है।

राजनीतिक दृष्टि से इस संहिता में कैंटों के मैदान में स्थित नई सरकार तथा राजधानी की परंपरागत शाही सरकार के मध्य संबंधों को व्यवस्थित किया। उदाहरण के लिए सैंतीसवें अनुच्छेद के अनुसार—

"कोटो के छोटे भू स्वामी कैयोटो में सहायक पदो (हो वो काल तथा आधुनिक जापानी में दैकान अथवा सहायक अधिकारी) अथवा रियासतों के अधीकरण के लिए प्रार्थना पत्र दे।"

मिनामोतो कुल के शासन काल में इस प्रकार की प्रथा का कठोर रूप से निषेध किया गया था। किन्तु बाद में कुछ लोगों ने अपनी महत्वाकांक्षाओं के कारण न केवल इस

9. योरितोमो की मृत्यु के पश्चात् सरकारी अधिकारियों ने प्रसिद्ध चीनी कथनों को संकलित कर जोकान सेनी के नाम से प्रकाशित किया। इस प्रकार इस युग की संक्षिप्त संहिता की व्यावहारिक विशेषताएँ अपनी नैतिक पृष्ठ भूमि के लिए चीनियों पर निर्भर करते ये प्रसिद्ध जोई संहिता का प्रकाशन तोकूगावा काल तक नहीं हुआ था तथा उसके बाद भी इसे प्रायः चीनी भाव चित्रों को समझने के लिए प्रयुक्त किया जाता था। इस संहिता को पुराने जापान दो संपूर्ण विधि के साथ (सातवीं शताब्दी से तोकूगावा काल तक) एक हजार पष्ठ से कम के ग्रंथ के रूप में प्रकाशित किया गया। हैगीनो लोगिमुनी संपादक तथा अन्य निहोन कोराई होने ने (पुराने जापान की विधि के रिकार्ड टोक्यो 1892) हेगियो द्वारा संपादित इस ग्रन्थ का दो बटा पांच भाग शाही विधियों को निहित करना है। (सात बारहवीं सदी) तीन बटा पांच भाग सामंती प्रदेशों की विधि से संबंधित है। नीचे दिए गये गद्यांश जॉन केरी हॉल द्वारा किये अधिकृत अंग्रेजी अनुवाद है "जापानीज फ्यूडल लॉ दि इंस्टीट्यूशन ऑफ ज्यूडीकेचर" "गो सेंबाई निकोमोकू" का अनुवाद "दि मेजेस्टेरियल कोड ऑफ दि होजो पावर होल्डर्स (1232 ई० टी. ए. एस. जे चौतीसवां अंक खण्ड प्रथम (1906) पृष्ठ 1-44 हेगीनो में मुद्रक रचना में थोड़ा परिवर्तन किया गया है। एक जापानी विधिवेत्ता की टिप्पणी के लिए देखिये मिठाग होईमिशी नो केन्दयु पूर्वोद्धृत अंक प्रथम, खंड प्रथम आठ नौ तथा दस अनुमान सैनिक व्यवस्था तथा उनके कानूनी पक्ष की चर्चा करते हैं। पृष्ठ 26-37 संहिता के आर्थिक पक्ष के लिए देखिये तेराओ शैनी "गोसेंबाई शिकिमोकू" निहोन केई गाई शिचेन, पूर्वोद्धृत, खंड तीन पृष्ठ 562।

निषेध का विरोध किया है अपितु उन्होंने इन पदों को प्राप्त करने के लिए प्रतियोगिताओं में भी भाग लिया है। आज से इस प्रकार की अनियमितताओं में लिप्त किसी भी व्यक्ति को दंड दिया जाएगा तथा उसकी संपूर्ण भूमि को हस्तगत कर लिया जाएगा।

इस निषेध का उद्देश्य ऐसे किसी भी परंपरागत कल्पनाशील व्यक्ति को दंड देना था जो साम्राज्य के पवित्र किन्तु स्थगित विशेषाधिकार की सहायता से बाकूफू की अवहेलना का प्रयास करता। तथापि इस संहिता के क्षेत्राधिकार में आने वाले बहुत कम सैनिक इस संहिता की भाषा को समझते थे तथा इस विधि को सामान्य व्यक्ति की समझ में आने वाली भाषा में निर्मित करने का कोई प्रयास नहीं किया गया। सामान्य व्यक्ति को मामलों का समाधान संबंधित सामंती लार्डों के निर्णय तथा सम्मान पर छोड़ दिया गया। जोई संहिता का उद्देश्य शासक तथा शोषण करने वाले वर्ग की सहायता करना था तथापि यह स्वयं इस वर्ग की बुद्धिमत्ता थी कि उसने अपनी भूमि तथा उसको जोतने वालों की संपन्नता में ही अपनी भलाई समझी।

अपनी उत्पत्ति के कारण जोई संहिता सैनिक विधि थी। पर्याप्त सीमा तक यह सैन्यवाद पर आधारित थी। तथापि क्योटो इम्पीरियल विश्वविद्यालय के प्रोफेसर तेराओं ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि यह संहिता सैनिक सिद्धान्तों (बुके-ग्रुनी) के साथ साथ विधि परायणता (होनी ग्रुनी) को ओर भी झुकी हुई थी। इसका सुदूर पूर्वाधिकार ताइहो संहिता विधि की सुव्यवस्थित रचना थी तथा जोई संहिता, लगभग आधी शताब्दी तक सामंती व्यवस्था के अंतर्गत उसके व्यावहारिक अनुभव का परिणाम थी। ताइहो संहिता जापानी रूप में चीनी साम्राज्य को, भव्य विद्वव कुलीनवर्ग के रूप में प्रस्तुत करती थी। जबकि जोई संहिता जापानी द्वैधवाद के विकसित रूप को ग्रामीण जापान ने सैन्यवाद पर आधारित कुलीनवर्ग को प्रस्तुत करती थी। अपनी व्यावहारिकता तथा यथार्थवाद के साथ इस नवीन संहिता की प्रगति हिमान युग की नैतिक असावधानी तथा मिनामातो युग की अनावश्यक कठोरता के मध्य हुई।[10]

चूंकि जोई संहिता में मात्र इक्यावन अनुच्छेद थे अतः बहुत शीघ्र ही यह अनुभव कर लिया गया कि यह संहिता सभी कानूनी प्रश्नों का समाधान नहीं कर सकती थी। इस स्तर पर जापानी विधि का उस दिशा मे विकास नहीं हुआ जैसा विधि से न्याय प्रदान करने में ब्रिटिश कॉमन लॉ की पृथकता के परिणाम स्वरूप हुआ। इसके विपरीत जापान में तत्परता पूर्वक विधि के संशोधन विधेयकों की आवश्यकता महसूस हुई।

उदाहरण के लिये कैंचो शिकिमोकू नामक विधेयक पारित हुआ जो स्वयं में एक युग का प्रतीक है। (1249 ई. से 1250) तथापि मुरोमाची बाकूफू तथा तोकूगावा बाकूफू ने इसका अनुसरण किया। पश्चिमी राज्य के जापानी करण होने के बाद ही जोई की उत्तराधिकारी संहिताएँ समाप्त हुई।

जोई संहिता के साथ जापानियों ने एक भूमि रजिस्टर का भी निर्माण किया जिसकी तुलना डूम्सडे पुस्तक से की जा सकती है। यह निहों कोफू तेदनबन था (जापानी साम्राज्य का भूमि रिकार्ड रजिस्टर था) ताइहो संहिता को स्वीकारने के पश्चात् पाँच सौ वर्षों में युक्त अधिकारों वाली जमींदारियो के विकास के साथ परस्पर संघर्ष पूर्ण अधिकारों

10. तेराओ पूर्वोधृत पृष्ठ 562।

का प्रसार हुआ था। शोनः तथा शिकी अर्थात् जमींदार तथा उनके कानूनी अधिकार जोई संहिता के मूल विषय वस्तु थे क्योंकि इस संहिता में विभिन्न पदवियों के स्पष्टीकरण का प्रयास किया गया था ताकि व्यक्ति की सुरक्षा तथा उसकी संपत्ति का पूर्ण आनंद संभव हो सके। येल विश्वविद्यालय के प्रोफेसर चितोपी यनागा ने पश्चिमी विचारकों के सामने यह स्पष्ट किया है कि यह संहिता संपत्ति अधिकारों संदर्भ में जापानियों द्वारा व्यक्तिवाद की प्रथम अपरिष्कृत अभिव्यक्ति थी। पश्चिमी प्रकार के स्वामित्व वाली प्रवृत्ति जापान में नहीं, विकसित हो पाई तथा परिवार प्रधान सामन्ती भूमि व्यवस्था अनिवार्य रूप से बनी रही तथापि पहली बार सार्वजनिक तथा निजी अधिकारों के मध्य स्पष्ट कानूनी विभाजन कर दिया गया।[11]

कन्फ्यूशियसवाद जिस प्रकार निजी तथा सार्वजनिक स्वामित्व का विरोध करता था तथा व्यक्तिगत तथा विशेष अधिकारों को जिस प्रकार सार्वजनिक के नाम पर समाप्त करता था वह तत्कालीन जापान जैसी सुगठित वर्ग व्यवस्था वाले समाज में न्याय की गम्भीर कुसमायोजन सम्बन्धी कठिनाईयों को उत्पन्न कर देता। जापानी आंशिक रूप से मध्यकालीन इंग्लैण्ड से साम्य रखते थे किन्तु जापान में व्यक्तिवादी भावना तथा निजी प्रयासों का प्रादुर्भाव नहीं हुआ था जो न्यायिक तथा आर्थिक व्यक्तिवाद के कारण कुछ राष्ट्रों में भाग्यवान अवसरों पर सक्रिय हुआ था।

सामंतवाद तथा धर्म :—

शोगुन की नवीन शुद्ध सैनिक सरकार ने संपूर्ण जापानी जीवन के मन्दिरों की व्यवस्था में परिवर्तन किया। जापानियों ने न केवल अपने अस्पष्ट तथा अव्यवस्थित आर्थिक सम्बन्धों को स्पष्ट किया अपितु उन्होंने धार्मिक क्षेत्र में भी मूलभूत नवीन प्रयोग किए जिसका आने वाली जापानी पीढ़ियों पर गहन तथा प्रेरणापूर्ण प्रभाव पड़ा। जापान का बौद्ध धर्म इस प्रेरणादायी सामंती वातावरण में फला फूला।

उदाहरण के लिए नवीन बौद्ध संप्रदायों में सर्वप्रथम स्थापित संप्रदाय जोड़ो अथवा शुद्ध भूमि संप्रदाय था जिसकी स्थापना बारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में हुई। जीवन के सभी पक्षों से सम्बन्धित जापानी जैसे दरबारी, कामाकुरा का योद्धा वर्ग, अन्य संप्रदायों के पुजारी, सम्राट तथा निम्नतम वर्ग के मछुआरे तक इस नवीन रुढ़ियुक्त तथा लोकप्रिय

11. शिकी पद (शाब्दिक दृष्टि से पद अथवा कार्य जाई शिक्रियोकू ने चर्चित शिकी जिसका अर्थ प्रक्रिया या क्रियान्वति है से भिन्न है) संपत्ति के बारे में जापानी तथा पश्चिमी विचारों के मध्य विद्यमान अंतर को स्पष्ट करता है। यद्यपि स्वामित्व व जमींदारी पदों का प्रयोग जापानी में बड़ी शिथिलता से किया गया गया है फिर भी जमींदारी पद जापानी में यूरोप की जमींदारी से पूर्णतया भिन्न है। प्रत्येक शोएन, शिकी का जटिल रूप हो गया जिसका अर्थ अधिकार की कमी कभी आय तथा बाद में स्वयं भूमि स्वयं भूमि होती थी चूंकि शिकी को उत्पादन की इकाईयों के रूप में मापा जा सकत था अतः इसने मुद्रा का रूप उस काल में धारण कर लिया जब अर्थ प्रदान अर्थव्यवस्था प्रारंभ नहीं हुई थी अतः यह विनियम मात्र्य नहीं बन पाया। तथापि सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान—खेतो का अधिकार—सर्वदा कृषक के पास रहा इस प्रकार सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र भू स्वामित्व की इतनी लोक प्रिय व्यवस्था अविभाजित भूमि तथा विभागनीय शिकी ने नवीन योद्धाओं तथा कृषकों को भूमि पर नियन्त्रण सम्भव बनाया। प्रणाली के रूप में शिकि के लिए देखिये सेंसम "अर्ली जापानीज लॉ" पूर्वोद्धृत अंक पृष्ठ 67–68, यहां चर्चित शिकि के लिये असाकावा "सम ऑस्पेक्टस दृष्टव्य छप्पन अंक पृष्ठ 84, तथा प्रभावों के सारांश लिये असाकावा, डोक्यूमेंट से उद्धृत। समरी ऑफ पाइंट्स पृष्ठ 71 तथा अन्य प्रलेख।

उन्मुक्त चर्चे में सम्मिलित हुए। जोड़ो शिशु अथवा जोड़ो के शुद्ध संप्रदाय ने धर्म को अत्यधिक सरल बनाकर उसे निर्धनतम वर्ग तक पहुंचाया। आज भी क्योटो के नवीनतम रेल्वे स्टेशन से दस मिनट के रास्ते पर कोई भी पर्यटक, सात शताब्दी पूर्व बौद्ध धर्म को लोकप्रिय बनाने वाले होंगाजी मन्दिरों तथा स्मारकों का अवलोकन कर सकता है। होक्के अथवा कमले नामक अन्य संप्रदाय प्रोटेस्टैंट लोकप्रिय उग्रवादी तथा राष्ट्रवादी था।

महान् निचिरेन (1222-1282 ई) की तुलना आधुनिक जापानियों द्वारा प्रायः न्यायगत रूप से जर्मनी के मार्टिन लूथर से की जाती है। वह राष्ट्रवादी तथा धार्मिक दोनों था तथा उसकी भावना का सरलतम रूप उसकी पुस्तक रिशो एंकोकू रोन (ए ट्रिटाइज आॅन दि स्टेबिलशमेंट आफ राइटियसनेस एण्ड दि सेफ्टी आफ कंट्री) ने शीर्षक में देखा जा सकता है। उसने विशेषतया समुराई के नवीन सैनिक वर्ग तथा उसके स्वामियों में धर्म-प्रचार किया। वह इस विश्व में जापान की मुक्ति के लिए जितना चिंतित था उतना ही दूसरे विश्व में जापानियों की आत्माओं की सुरक्षा के लिए भी चिंतित था। उसके द्वारा ऐतिहासिक हिन्दू बौद्धवाद के गहन परमानन्द को दैनिक जीवन की पवित्रता में परिवर्तित कर दिया गया जो प्रारम्भिक जर्मन प्रोटेस्टैंट वाद की नैतिक भावना से भिन्न नहीं थी।

लोटस संप्रदाय के साथ-साथ बौद्धवाद के जैव संप्रदाय का जापानी राजनीतिक चिंतन पर बुरा प्रभाव पड़ा। चीन तथा कोरिया में विकसित यह संप्रदाय जोन वेजने के उपदेशों के समान अनुकम्पा के साथ मुक्ति प्राप्त करने का प्रचार करता था। बौद्ध धर्म ने हीनों तथा आशिकाना काल के अशिक्षित सैनिकों को उस प्रकार की मुक्ति का उपदेश दिया जिसे वे सरलता से समझ कर प्राप्त कर सकते थे। पुजारियों ने स्वयं को सांसारिक मामलों से पृथक नहीं रखा। एक बौद्ध भिक्षु के पास कूटनीतिक प्रलेखों का संग्रह था जबकि अन्य भिक्षु जापान के शोगुनल दरबार तथा चीन के मिंग दरबार के मध्य पत्र व्यवहार के प्रारूप को तैयार करते थे।[12]

शूर वीरता का पूर्ण विकास :

पश्चिमी भाषा में अस्त्र-विहीन शूरवीरता स्वयं विरोधी प्रतीत होता है। तथापि जापान में जेन उपदेशों ने सैनिक के स्वामी तथा कृषकों के परस्पर सम्बन्धों को आध्यात्मिकता पर आधारित नीति सम्बन्धी आचार संहिता का स्वरूप दे दिया। जापानियों ने अपने तरीके से अपने शूरवीरता काल को यह कुलीनता का स्वरूप प्रदान किया—जो प्रत्येक मानवीय इतिहास के शूरवीरता काल की विशेषता रहा है। जो कुछ एक वर्ग को आचार संहिता के रूप में प्रारम्भ हुआ था वह एक जाति का सिद्धांत तथा अंततः एक राष्ट्र की कल्प कथा बन गया। यद्यपि बुशिदो पथ की उत्पत्ति हाल ही में हुई है तथापि सादगी,

12. 1400 तक जैन संप्रदाय केपांचो मठों ने अपना ध्यान कार्य निरपेक्ष दर्शन एतिहासिक अनुसंधान तथा चीनी अध्ययन के पुनरोत्थान की ओर केन्द्रित किया। इस प्रकार इन समूहों ने तोकूगावाकाली जापान के परम्परागत नवीन कन्फ्यूशियसवादियों के लिये प्रत्यक्ष संबंध प्रदान किया। अंग्रेजी में निचिरेने की जीवन कथा के लिये देखिये अनेसकी मसाहरू, निचिरेन दि बुद्धिष्ट प्रोफटे, कोंब्रिज, 1916। अपनी उल्लेखनीय भविष्यवाणियों निचिरेन ने यह घोषणा की थी कि यदि शासकों के झूठे उपदेशों का दमन नहीं किया तो उसके भयानक परिणाम विशेषतया विदेशी आक्रमण होंगे। (मंकोल आक्रमण 1274 तथा 1228 में हुए।

अध्याय 13

पृथकीकृत पुलिस नियंत्रित जापान का वैभव

मानव इतिहास में समय समय पर राष्ट्र अथवा व्यक्ति किसी नाटकीय अथवा सौंदर्यपूर्ण भूमिका का निष्पादन, यथार्थ जीवन की वास्तविकता के रूप में तथा एक प्रभावित करने वाली कलाकृति के रूप में इतनी सम्पूर्णता के साथ करते हैं कि आने वाली पीढ़ियों के मस्तिष्क में उसकी श्रेष्ठता की छाप बनी रहती है।

प्रभावपूर्ण दृढ़ता जैसे सीमित स्तर की दृष्टि से तोकुगावा कालीन जापान मानव सभ्यता की महान् राजनीतिक रचना है। मानवीय इतिहास में और कहीं भी किसी सभ्य देश ने विधि, व्यवस्था तथा शांति, प्राप्त करने का इतना पूर्ण प्रयास नहीं किया है, जितना जापान ने किया तथा जिसे दिमिकोणों तथा मैडम बटर फ्लाई एक शांत तथा लघु देश के रूप में प्रस्तुत करती है। किन्तु इसी जापान में कुछ ऐसे मौलिक मूल्यों, जिन पर सभी आधुनिक लोग विश्वास करते हैं, को चरम स्थिति तक तथा उससे भी परे क्रियान्वित किया गया। अपने दृढ़ तथा उद्देश्यपूर्ण निर्णय द्वारा तोकुग्गावा नेताओं ने मानवीय जीवन के कुछ पक्षों का चयन उनके व्यावहारिक विकास के लिए कर लिया तथा तत्पश्चात् उनको चरमोत्कर्ष तक पहुंचाने का प्रयास किरा। अमेरिका के संयुक्त मुल्य अधिकारियों की कल्पना से भी परे, भौगोलिक सुरक्षा की आवश्यकता से प्रेरित जापानियों ने सुरक्षा की व्यवस्था इतनी संपूर्णता से की थी, कि वे विश्व से पृथक अपने सैनिकीकरण में व्यस्त रहे। वाह्य शक्तियों द्वारा हस्तक्षेप तथा षड़यन्त्रों से संशक्ति जापानियों ने इस प्रकार संसर्गनिरोध (क्वेसटाइन) को अपनाया की उसके सम्मुख लौह आवरण भी अपरिष्कृत घेराबन्दी लगता है। यह संघर्ष-निषेध दो सौ वर्षों से भी अधिक रहा। जैसे अपनी मूर्खता के क्षणों में कभी-कभी हम मान लेते हैं, या मूर्खता लोग हमेशा इस मूर्खतापूर्ण बात को स्वीकारते हैं कि एक राष्ट्र के अन्तर्गत जीवन ही एक सभ्य मनुष्य का ध्येय है, जापान में भी यही माना। जापानियों ने शुद्ध रूप से जापानी बनने का प्रयास किया। उन्होंने राष्ट्रीयता तथा राष्ट्रवाद के आदर्शों को इस चरम उत्कर्ष तक प्राप्त किया कि बाद में अवशिष्ट मानव-समाज के समान बनने के लिए, तथा विश्व-बंधुत्व प्राप्त करने के लिए उन्हें अभूतपूर्व स्तर पर प्रयास करने पड़े।

तोकुगावा जापान के यथार्थ जीवन के श्रेष्ठ मूल्य इतने चरमस्थिति वाले तथा आश्चर्य चकित करने वाले हैं कि मात्र शब्दों द्वारा उन्हें अतिशियोक्तिपूर्ण ढ़ंग से व्यक्त करना संभव नहीं है। अनेक क्षेत्रों में जापानियों की उत्कृष्टता का मोह पराकाष्ठा तक पहुंच गया। उन्होने निरंकुश एकतंत्र में जो प्रयोग किए वे वस्तुत: संपूर्ण मानव-समाज के

लिए एक पूर्वोदाहरण का कार्य कर सकते हैं। इस प्रयोग पर निर्णय अभी स्थगित ही रखना चाहिए। आधुनिक विश्व को, जापान के योगदान की दृष्टि से देखने पर तोकूगावा जापान द्वारा, परिपूर्ण पृथकीकरण, अन्तर्राष्ट्रीय शांति तथा लगभग पूर्ण संसर्ग-निरोध को प्राप्त करने की सफलता के बारे में, आश्चर्यजनक तथ्य उनके द्वारा प्राप्त की गई दक्षता नहीं है अपितु यह है कि इसी युग में भारत तुर्की तथा चीन के इतिहास की तुलना में उनकी दक्षता कम है।

तोकुगावा जापान की रचना यद्यपि उत्कृष्टता के विचार से की गई। किन्तु यह वस्तुतः परिपूर्ण नहीं था। 1920 में अमेरिका की सामान्य स्थिति के समान यह संपन्नता रूपी ऐसा "प्याज" था जिसकी परतें एक एक करके बाद में खुलती गईं।

पृथकीकरण की उत्पत्ति -

स्वयं तोकूगावा इयासू का जन्म तथा पालन पोषण अराजकता तथा अनिश्चितता से मुक्त जापान में हुआ था। उसने घृणायुक्त ढंग से नोबूनागा को, इसाईयों द्वारा बौद्ध-धर्मावलंबियों वध करने के लिए स्वागत करते हुए देखा था। उसने यह भी अनुभव किया था कि यद्यपि ईसाई, मानव के भ्रातृत्व का प्रचार करते थे, किंतु वे एक दूसरे के अपमान तथा वध के लिए षड़यन्त्र पर्याप्त तत्परता से करते थे। इयासू सुरक्षा में विश्वास करने लगा। यहां सुरक्षा, अमेरिकियों द्वारा बनाई गई राष्ट्रीय सुरक्षा में सुरक्षा पद के प्रयोग के समान ही भी कल्पनाजन्य थी। भारत के समान मनोवैज्ञानिक सुरक्षा का प्रचार करने के बजाय वह सुरक्षा जो आत्मा तथा मस्तिष्क के आधार पर हीं प्राप्त की जा सकती है तथा जिस बाह्य विश्व के अस्त्रों का प्रभाव नहीं पड़ता है—इयासू ने पूर्णत- भौतिक तथा व्यावहारिक सुरक्षा प्राप्त करने का प्रयास किया, जिसकी कल्पना निरर्थक रूप से आज भी अमरीकी लोग कम अथवा अधिक मात्रा में करते रहते हैं। उसने जीवन को व्यक्तिगत अथवा अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भ में नहीं देखा जिसमें साहसिक कार्यों तथा अनिश्चितताओं का सामना दृढ़तापूर्ण ढंग से किया जा सके ताकि प्रत्येक कठिनाई पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् उपलब्धि की भावना से ऐसा अनुभव प्राप्त हो सके जिसके सहारे एक व्यक्ति अथवा संसार जीवित रहता है। इसके विपरीत उसने जापान के लिए वही किया जो प्रायः सनकी लोग अपने व्यक्तिगत जीवन में करते हैं। उसने जापान को अंतर्राष्ट्रीय समुदाय से पूर्णतः पृथक कर दिया तथा इस पृथकता में वह सुरक्षा को प्राप्त करने का प्रयास करते लगा। विश्व में अन्यत्र कहीं भी किसी राजनीतिक उद्देश्य को इतनी पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं हुई है, जितनी जापान के इस राजनीतिक प्रयोग को प्राप्त हुई।

तोकूगावा नवीन कन्फ्यूशियसवाद—

प्रारम्भ से ही राजनीतिक स्वामित्व के आदर्श से प्रभावित तोकूगावा इयासू ने अपने सैनिक आधिपत्य का प्रयोग ऐसी सामाजिक व्यवस्था को प्राप्त करने के लिए किया जो पहली किसी भी सामाजिक व्यवस्था से अधिक सुरक्षित हो। तथा जैसा कि बताया गया है, उसे तथा उसके वंशजों को इस उद्देश्य की प्राप्ति में किसी भी आधुनिक राजवंश अथवा गणतंत्र की तुलना में पर्याप्त सफलता मिली। जब उसने सर्वप्रथम जापान में स्थायित्व की स्थापना की तो उसने सैद्धान्तिक धर्म परायणता के नवीन प्रतिमान स्थापित किए। उसने ग्रामीण जापान के सामंती सामान्य ज्ञान के साथ जोई संहिता तथा प्रारम्भिक सामंती नीति शास्त्रीय रचनाओं का संश्लेषण, जापान के नवीन कन्फ्यूशियसवाद के साथ किया। तोकू-

गावा कालीन जापान ने कोई विदेशी मॉडल प्रस्तुत नहीं किया, उसने जापान में विद्यमान तत्वों को ही पुनः संश्लेपित किया।

प्रारम्भिक तोकूगावा जापान में प्रयुक्त राजनीतिक प्रणालियों के बारे में सर्वाधिक ज्ञान होंडा, मासनावू द्वारा रचित होसारोकू (वेसिक गाइड) में प्राप्त होता है। होंडा, सरकार की तकनीक में रुचि रखता था तथा उसने दर्शनशास्त्र की उपेक्षा की। उसका विचार था कि मात्र उदारता से शासन का संचालन संभव नहीं था। सत्ता स्थापित करने के लिए सैनिक शक्ति व षड़यंत्र आवश्यक थे तथा उसे बनाये रखने के लिए निरंतर सतर्कता आवश्यकता थी। होंडा की रचना तोकूगावा प्रशासकों के लिए प्रथम बाईबिल थी तथा वह नवीन शासकों के लिए पर्याप्त विश्वसनीय बन गई। किन्तु उसका योगदान पर्याप्त नहीं था।

तोकूगावा शासकों का ध्यान शीघ्र ही इस प्रकार के व्यावहारिक आधारों से हट गया। इसकी मौलिक विशेषताओं ने शीघ्र ही इसकी प्रयुक्त दुर्बलताओं को अभिव्यक्त किया। व्यापक रूप से सरकारी समर्थक नीतियों तथा विचारों के माध्यम से तोकूगावा शोगुन की प्रजा के नैतिक कल्याण के बारे में बहुत ध्यान दिया जाने लगा। मात्र यत्र-तत्र की राजनीतिक चर्चाओं तथा लेखों में व्यावहारिक राजनीतिक यथार्थताओं तथा आर्थिक आवश्यकताओं की चर्चा की गयी। इस नैतिक प्रवृत्ति के कारण को कन्फ्यूशियसवाद के पुनरुत्थान में ढूंढ़ा जा सकता है। इस काल में सामाजिक राजनीतिक तथा आर्थिक समस्याओं पर लिखने वाले अधिकांश लेखकों का ध्यान चीन की प्रतिष्ठित रचनाओं की ओर आकर्षित हो गया था। शोगुन (सेनानायकों) ने इस प्रवृत्ति को प्रोत्साहित किया तथा कन्फ्यूशियसवाद में दक्ष विद्वानों को विशेष महत्व दिया जाने लगा। कन्फ्यूशियसवादी विद्वान, विधि का प्रारूप तैयार करने में तथा उन नैतिक सिद्धान्तों की रचना करने में सहायता करने लगे; जिन पर संपूर्ण प्रशासनिक ढांचा आधारित था। जापान के राष्ट्रवाद को संगठित बनाने में कन्फ्यूशियसवादी चीनी बौद्धिक अस्त्रों के प्रयोग के विरोधाभास को समझने के लिए यह देखना जरूरी है कि जापान में चीनी विचार-दर्शन की क्या स्थिति थी।

जापानी कन्फ्यूशियसवाद ने अनेक भूमिकाएं पूरी की थी।

सर्वप्रथम चीनी ज्ञान के आयात के बाद जापान में नैका सुधार हुए। प्रारम्भिक काल में जब चीनी संस्कृति का जपानीकरण किया जा रहा था, कन्फ्यूशियसवाद पर्याप्त फलाफूला; फिर सामंतवाद के प्रसार के साथ जापान में बौद्ध धर्म लोकप्रिय हुआ। तोकूगावा काल में भी जापान में एक सक्रिय धर्म के रूप में बौद्ध धर्म पर्याप्त दृढता पूर्वक विद्यमान था। किन्तु इस युग में शिक्षित समुदाय कन्फ्यूशियसवाद की ओर उन्मुख हुआ। यह प्रवृत्ति जापानी समाज के लिए पर्याप्त स्वाभाविक है कि उसके उच्च वर्ग ने अपने लिए एक अपेक्षाकृत अच्छे दर्शन को स्वीकार कर लिया तथा निम्न वर्ग के अंधविश्वासों को प्रभावित करने अथवा दूर करने का कोई प्रयास नहीं किया। नवीन शासकों के दृष्टिकोण में बौद्ध-धर्म सामान्य जनता के लिए उचित था, क्योंकि यह लोगों में वाछांनीय नैतिक अनुशासन स्थापित करता था, किन्तु तोकूगावा का अभिजात वर्ग यह महसूस करता था कि शासन के संचालन के लिए एक अधिक उत्कृष्ट व्यवस्था की आवश्यकता है।

जिस प्रकार सातवी शताब्दी में तांग कालीन उदाहरण ने जापान की प्रशासनिक संरचना को संगठन का आधार प्रदान किया उसी प्रकार सुंग के नवीन कन्फ्यूशियसवाद ने

तोकूगावा की सामाजिक नीति को प्रोत्साहन प्रदान किया। सरकारी नीति तथा अधिकृत शिक्षा का आधार यूहसी का दर्शन बन गया जो जापान में शशी के नाम से जाना जाता है जिसकी जापानी शीर्षक में शिशों शिवू (चार प्रतिष्ठित रचनाओं की नवीन व्याख्या) नामक व्याख्या को जापान में धार्मिक महत्व प्राप्त हुआ। 1130-1200 ई. का यूहसी स्वयं एक प्रमुख चीनी दार्शनिक लेखक तथा सरकारी अधिकारी था। वह इतना मेधावी था कि शताब्दियों के अंतराल से उसकी रचनाएं पुरानी होने के बाद भी वे जापान के लोगों को उत्तेजित कर सकी। अपने जीवन काल में उसने यह दावा किया था कि उसकी रचनाएं कन्फ्यूशियसवादी थीं, यद्यपि उन्हें एक नवीन विचार-दर्शन भी कहा जा सकता था। जापानियों ने इस दावे को स्वीकार कर लिया।

इस प्रकार एक बार फिर अपने नवीन रूप में कन्फ्यूशियसवाद ने जापान के उच्च वर्ग के विचार दर्शन का नेतृत्व किया।

मूलत: कन्फ्यूशियसवादी प्रतिष्ठित रचनाएं व्यावहारिक समाजशास्त्रीय मान्यताओं पर आधारित, अपेक्षाकृत रूप से सरल नीति शास्त्रीय आचार संहिता थीं। (देखिए अध्याय 2 कन्फ्यूशियसवादी विचार-दर्शन) नवीन कन्फ्यूशियसवाद में भी बौद्ध धर्म में निहित भारतीय तत्व दर्शन तथा बौद्ध धर्म की प्रतिक्रिया स्वरूप ताओकाल में विकसित चीनी तत्व दर्शन के परिणावस्वरूप तत्व-दर्शन-व्यवस्था को संलग्न कर लिया गया। चूहसी की रचनाओं में कन्फ्यूशियसवादी सामाजिक सिद्धान्तों में अधिक जटिल कारणवादी सृष्टि व्यवस्था को भी संलग्न कर लिया गया था। इस प्रकार प्राकृतिक-विधि, कन्फ्यूशियस तथा उसके समर्थकों की कल्पना से परे एक नैतिक कानून बन गई।

चूहसी आत्म संस्कृती में विश्वास करता था। उसका विचार था कि मनुष्य आंतरिक रूप से अच्छे व्यवहार की ओर उसी प्रकार प्रेरित होता है जिस प्रकार प्रकृति लाभकारी सिद्धान्तों से प्रेरित होती है तथा मनुष्य के गुणों को समझने के लिए संपूर्ण समष्टि के नियमों को समझना चाहिए। इस ज्ञान के पश्चात् ही उसे यह पता लगेगा कि प्राकृतिक प्रघटना के परस्पर सम्बन्ध, व्यक्तियों के परस्पर सम्बन्धों से साम्य रखते हैं।[1]

चीन से नवीन कन्फ्यूशियसवाद कोरिया में फैला तथा कोरिया से जापान में जहां यह शुशिगाकूहा (चूहसी-का-साम्प्रदाय) नाम से जाना गया। जापान में शुशिगाकू-हा का प्रथम प्रभावशाली प्रवक्ता फुजिवारा सैका (1561-1619 ई.) था। तोकूगावा इयासू उसका प्रमुख अनुयायी था। उसका बौद्धिक उत्तराधिकारी ह्याशी राजान (1583 से1687 ई.) था जिसे जापान में नवीन कन्फ्यूशियसवाद का पिता कहा जाता है। यह तोकूगावा बाकूफ का परामर्शदाता बन गया तथा अपने सम्पूर्ण कार्यकाल में उसका सम्पूर्ण कार्यकाल

1— चूहसी के विचारो को पश्चिमी संकेतो में परिवर्तित करना बड़ा कठिन कार्य है, उदांहरण के लिए कुछ विद्वान यह मानते हैं कि वह भौतिकवादी है जब कि अन्य उसे आस्तिक मानते है। नवीन कन्फ्यूशियसवाद पर नवीनतम रचना इनोयू ते सुजिरो की निहोन शुशी गाकुहा नोह तेत्सुगावा है (जापान में यूइसी दर्शन का संगठन) टोक्यो, 1706 प्रस्तावना में इस संप्रदाय के विकास पर प्रकास डाला गया है। अध्याय एक 1, 2 पृष्ठ 11-113 पर फुजिवारा के जीवन का संक्षिप्त वृतान्त रचना' शिष्यों का वर्णन ह्यांशी तथा बाद के अन्य विद्वानो की रचनाएं हैं और अधिक सांराश के लिए इवानामी शतैन जोहान की रचना तेत्सुकागा जीतनेन (इवानामी प्रकाशन, दर्शन की एनसाईक्लोपीडिया, संशोधित संस्करण) टोक्यो 1922 ,शुशीजाकी (दि डॉक्ट्रिन ऑफ़ चूहसी) पृष्ठ 459।

में उसका सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था पर नियन्त्रण रहा था। यद्यपि दर्शन-शास्त्र के अन्य सम्प्रदाय भी थे किन्तु किसी भी अन्य प्रतिगामी सम्प्रदाय को इतना अधिक प्रभाव प्राप्त नहीं हुआ। नवीन कन्फ्यूशियस- वाद का प्रभाव तब तक दुर्बल नहीं हुआ जब तक 1850 में पश्चिमी दर्शन का वहां प्रसार नहीं हुआ।

तोकूगावा राजनीतिक सिद्धान्त पर केन्द्रीय नवीन कन्फ्यूशियसवाद ने तोकूगावा की युक्तिसंगतता को व्यावहारिक नीति में सिद्ध किया। इनका प्रभाव बाद के दर्शन–शास्त्रियों पर दृष्टिगोचर होता है। हायशी या उत्तराधिकारी किनोशिता जुनान था, जिसका शिष्य आराई हाकूसेकी था। तथा आराई जापान का प्रथम तथा सम्भवत: राजनीतिक अर्थशास्त्र विज्ञान का महानतम गुरु था। वह तथा उसके सहायक तत्कालीन रूढ़िवादिता का प्रतिनिधित्व करते हैं।

जापान में इस विशिष्ट व्यवस्था को महत्ता क्यों प्राप्त हुई? प्रथमत: जापान में बौद्धधर्म की प्रतिद्वन्द्वितास्वरूप, सामान्य कन्फ्यूशियसवाद की प्रतिक्रिया से नवीन कन्फ्यूशियसवाद का जन्म हुआ तथा इस प्रकार जापान में बौद्धधर्म ने अपने प्रतिद्वन्द्वी चीनी तत्व-दर्शन के लिए अवसर प्रस्तुत किया। द्वितीयत:, जापानी मात्र कल्पना के स्थान पर व्यावहारिक नीति शास्त्र की प्राप्ति में रुचि रखते थे। यद्यपि चूहसी ने एक जटिल दृष्टि विज्ञान की रचना की थी, किन्तु जापानियों को सार्वाधिक प्रभावित करने वाले विचार उसकी नीति शास्त्रीय अवधारणाएं थीं। वे तोकूगोवा की पुस्तक के लिए पर्याप्त उचित थी क्योंकि उनका मूल आधार निष्ठा था। इसके अतिरिक्त ज्ञानार्जन पर पर्याप्त जोर दिया गया, किन्तु ज्ञान नियन्त्रित था तथा उसका मूल आधार रुढ़िवादिता था। तोकूगोवा ने अपनी शंकाओं तथा धर्मों का समाधान चूहसी व्यवस्था से किया। विश्व में शायद ही कभी समाज तथा सिद्धान्तों का इतना पूर्ण सामंजस्य स्थापित हुआ हो जितना तोकूगोवा की सुरक्षा प्राप्त करने की व्यावहारिक नीतियों तथा चूहसी के दर्शन में हुआ। चूहसी दर्शन के अनुसार बुराई स्वयं एक अस्पष्टता थी।

संक्षेप में चूहसी तथा उसके जापानी शिष्यों ने उन गुणों का प्रचार किया जिनका प्रचार तोकूगोवा करने के लिए उत्सुक था। अब तक कन्फ्यूशियसवादी नैतिकता रुढिवादी रही थी किन्तु अब यह इतनी परिष्कृत एवं व्यवस्थित हो गयी थी कि यह स्वयं कन्फ्यूशियस की कल्पना से परे थी। स्वयं दैवीय लक्षण भी तोकूगोवा शोगुन की पृथकता तथा सुरक्षा का समर्थन करते बताए गए।

केन्द्रीयकृत सांमतवादी

सातवीं शताब्दी के तैका युग के समान तोकूगोवा युग (1603 से 1867 ई० तक) भी जापान के इतिहास में संक्रमण काल के रूप में महत्वपूर्ण है। इसे तत्कालीन सन्दर्भ में ही समझा जा सकता है। सैद्धान्तिक रूप से चीनी साम्राज्य के जापानी मॉडल के अन्तर्गत जापान को केन्द्रीयकृत कर दिया गया था। व्यावहारिक अर्थों में अस्थाई रूप से केन्द्रीय नियन्त्रण सर्वप्रथम मिनामोतो परिवार के द्वारा स्थापित किया गया था, जिसने बाद में अपनी शक्ति हो-जो-रीजेंटो को प्रतिपादित कर दी। इस समय भी केन्द्रीय नियन्त्रण जटिल रूप से संगठित सामन्ती संस्थानों में प्रसारित हो चुका था। मुरोमोची के काल में यह सीमित केन्द्रीयवाद भी नष्ट हो गया। जब इयासू ने शोगुनल राजवंश की स्थापना की तब उसने इडो में अपनी नवीन राजधानी की स्थापना कर एक ऐसे युग को प्रारम्भ किया जिसमें उसे

अपने से पूर्व किसी भी सेनापति से कहीं अधिक व्यापक नियन्त्रण प्राप्त हुआ था। वस्तुतः कुछ जापानी विद्वान, जैसे फुकूदा-तो-कूजो तथा असकावा-केनीची, इस तथ्य को अस्वीकार करते हैं कि इतने केन्द्रीयकृत राज्य को सांमती कहा जाए। प्रारम्भ से यहां एक बात स्पष्ट हो जानी चाहिए कि तोगूगावा कालीन केन्द्रीकरण के परिणाम स्वरूप ही बाकूफू सरकार के शीघ्र ही मेयजी के अन्तर्गत राष्ट्रीय सरकार में परिवर्तित कर सकना सम्भव हुआ।

यहां जापान के सामाजिक अर्थशास्त्रीय इतिहारकार प्रोफेसर होजों इजोरो की पदावली का प्रयोग अत्यधिक उद्बोधक लगता है जो विकेन्द्रित सांम वाद के प्रारम्भिकचरण तथा केन्द्रीयकृत सांमत वाद के बाद के चरण के मध्य विरोधाभास स्थापित करता है। यह भिन्नता शिथिल सामंतीय व्यवस्थाओं में जापानी तथा यूरोपीय अनुभवों के विरोध को प्रकट करती हैं।

सत्रहवीं शताब्दी में यूरोप सामन्तवादी व्यवस्था से, राजा के नियन्त्रण में राष्ट्रवादी सरकारों की ओर प्रवृत्त हुआ। जबकि उसी शताब्दी में जापानियों ने एक बार फिर सत्ता एक शक्तिशाली सामन्त के हाथ में केन्द्रित कर दी। इसके अतिरिक्त अवशिष्ट देम्यो तथा शोगुन के मध्य सम्बन्ध भी सामन्ती स्वरूप वाले थे। प्रत्येक देम्यो का स्थानीय नियन्त्रण छोटे जमींदारों पर तथा उनके द्वारा रखे गये सैनिकों पर निर्भर करता था। इसके अतिरिक्त प्रारम्भिक तोकूगावा काल में राजनीतिक सत्ता का स्रोत पूर्णतः कृषिप्रधान उपज पर तथा उत्पादनकर्त्ता पर निर्भर करता था। यूरोपियन सामन्तवाद से स्पष्ट भिन्नताओं के बावजूद वहाँ सामन्ती पदवी द्वारा शक्ति के निर्धारण के कारण, तोकूगावा समाज को निश्चित रूप से सामन्तवादी कहा जा सकता है।[2]

जापान के सामन्तवाद के विभिन्न चरणों में यह भिन्नता तोकूगावा के संक्रमण काल को स्पष्ट करने में सहायता देती है। मूलभूत आर्थिक परिवर्तन विधि पूर्ण अराजकता से केन्द्रीकृत सामन्तवाद, तथा केन्द्रीकृत सामन्तवाद से व्यापार प्रधान अर्द्धसामन्ती अर्थ व्यवस्था यह संक्रमण सम्पूर्ण तोकूगावा काल में घटित होता रहा, न कि मात्र उसके अन्त में ऐसा हुआ। इस प्रकार जापान पर पश्चिम का प्रभाव बाद में क्रान्तिकारी परिवर्तन पर दृष्टिगोचर हुआ उसके कारण के रूप में प्रस्तुत नहीं हुआ।

शुद्ध जापानी दृष्टिकोण से पृथकीकृत जापान का सगठित पुलिस व्यवस्था वाला रूप पूर्णतः जापानी स्वरूप व संस्कृति का चरम स्वरूप अभिव्यक्ति करता है। स्वयं तोकूगावा समाज संकुचित विधियों, जातीय विशेषाधिकारों तथा नैतिक सिद्धान्तों पर आधारित थी। किन्तु व्यावहार में जापानियों ने आश्चर्य जनक नगरीयता तथा अपनी सर्वोत्कृष्ट शैली का निर्माण किया। तत्कालीन कोई भी यूरोपियन समाज इतना सभ्य व सुसंस्कृत नहीं था।

2. तोकूगावा केन्द्रीयकरण पर संपूर्ण विचार विमर्श के लिए तथा सामंतवाद के लिए इ हर्बर्ट नोर्मन की रचना जापानस ऐवरेर्जेन्स एन ए माडंनस्टेट पॉलिटिकल एण्ड इकानामिक प्रावलम्स ऑफ दि मेयजी पीरियड, न्यूयोर्क 1940 पृष्ठ 12 (फकूदा तथा असकावा के विचारों का संक्षिप्तीकरण) श्री नामर्न नवोदिक जापान के सर्वाधिक सतर्क अध्यनकर्त्ता हैं तथा उनकी प्रस्तुत रचना जापान के तोकूगावा तथा युग से ही संबन्धित हैं। जी० बी सैंसम की रचना दि वस्टर्न वर्ल्ड एण्ड जापान, न्यूयार्क 1250 अध्याय व दितोकूगावा रिजीमं विशेपतया पृष्ठ 182 केन्द्रीयकृत तथा विकेन्द्रित सामंतवाद में अन्तर के लिए देखिये पृष्ठ 298 तथा होंजो इजरों की रचना (रिचंइन रीजेंट फ्यूडल सौसाईटी टोक्यो, 1930 1 अध्याय विशेपतयापृष्ठ 9।

इसकी अभिव्यक्ति स्वयं उन यूरोपियन लोगों की प्रतिक्रियाओं में प्रस्तुत होती है जो 1853 के पश्चात् जापान को देखकर आश्चर्य चकित तथा उल्लसित हो गए।

इतिहास कई बार शासकों पर ऐसे परिणामों को थोप देता है जिससे पूर्णतः विपरीत नीतियों को क्रियान्वित कर रहे होते हैं। इसी प्रकार का सर्वोत्कृष्ट विरोधाभास तोकूगावा में दृष्टिगोचर होता है। पूर्ण सैनिक तथा सन्देह से युक्त तोकूगावा शासन को विश्व में सर्वाधिक स्थायी शान्ति स्थापित करने का रिकार्ड कायम किया, जबकि एक आधुनिक जापान जिसने सक्रिय रूप से शान्ति प्राप्त करने का प्रयास किया वह 100 वर्षों के ऐसे निरन्तर युद्ध में फंसा कि वह उत्तरोत्तर विनाशकारी होता गया। तोकूगावा की सफलता उन महान् कलाकारों की सफलता के समान है जो उसके सृजन कर्त्ताओं की आंकाक्षाओं के पूर्णतः विपरीत गौरवशाली होती है।

बाकूफ् सैन्य अधिकारीके रूप में—

तोकूगावा प्रशासन प्रारम्भिक बाकूफू के समान था। यह युद्ध के समय उपयोगी सैनिक मुख्यालयों के अधिकारियों की एसी व्यवस्था जिसे शान्तिकाल में भी उपयोगी महसूस किया गया।

निस्सन्देह सिद्धान्त में सभी सैनिक स्वयं को नीति को क्रियान्वित करने का साधन मानते स्वयं को नीति निर्धारण करने वाला नहीं मानते हैं। उदाहरण के लिए तोकूगावा शोगुन ने कभी कभी शाही सिंहासन पर अधिकार करने का प्रयास नहीं किया। इस प्रकार सम्राट की अन्तिम सत्ता की नाटकीय निरन्तरता बनी रही। किन्तु सम्राट के विशेषाधिकार नाममात्र के ही रहे। नियुक्तियाँ, (शोगुन के निर्देश पर की जाती थी) दरबार के लिये नियमित राजस्व (शोगुन द्वारा निर्धारित होता था) तथा नीतियों के बारे में उचित जानकारी (जो उचित नम्र भाषा में सम्राट को सम्बोधित की जाती थी) उत्सव सम्बन्धी व धार्मिक आयोजन भी सम्राट द्वारा किये जाते थे। क्योटो में शोगुन का उपमुख्यालय था। एक उचित सैनिक टुकड़ी सर्वदा शोगुन द्वारा दी गई सिफारिशों को क्रियान्वित करवाने के लिये उपयुक्त दबाव डालने के लिये तत्पर रहती थी। कोई भी देम्यो शाही दरबार से प्रत्यक्ष नहीं मिल सकता था। वह मात्र शोगुन के माध्यम से ही मिल सकता था।

परिष्कृत स्तर के नागरिक अभिजात वर्ग कुगे जिनके पूर्वज एक सहस्र वर्ष पूर्व फुजीवारा के समय में सारे जापान पर छाये हुए थे वे अब शक्ति हीन तथा कभी कभी भूखे भी मरने लगे। एक प्रसिद्ध कुगे इतना निर्धन हो गया था कि शोगुनल पुलिस के संरक्षण में अपने परिवार का जीवन यापन करने के लिये उसने अपने घर पर जुए का अड्डा खोल रखा था। अपने भूतकालीन वैभव को बनाये रखने वाले ये कुगे निस्सन्देह तोकूगावा शोगुनेटा के लिए संकट उत्पन्न करने वाले स्थायी स्रोत सिद्ध हुए। परिणामतः देम्यो से उनके सम्पर्कों पर कठोर नियन्त्रण लगा दिया गया।

तोकूगावा शक्ति का वास्तविक केन्द्र इदो में स्थित था। वह स्थान पहले सेना का मुख्यालय तथा तोकूगावा के सेनापति का मुख्य कार्यालय रह चुका था। सेई ई ताई शोगुन नाम से बाद में के तोकूगावा शासकों ने सामन्ती सेनाओं के मुख्य सेनापतियों के रूप में कार्य किया। तोकूगावा राजतन्त्र की वास्तविकता कानूनी तैकून में परावर्तित होती है। जिससे हमारे आधुनिक शब्द टाईककन की उत्पत्ति हुई है। जब शोगुन अवयस्यक होता था तो उसका कोई परामर्शदाता तैरो (रीजेंट) के रूप में कार्य करता था।

तोकूगावा प्रशासन --

प्रथम दृष्टि में केन्द्रीय प्रशासन पर्याप्त सरल दृष्टिगोचर होता है। नीति निर्धारण शोगुन के द्वारा किया जाता था; जो सम्राट का प्रतिनिधि तथा तोकूगावा शासक परिवार का मुखिया होता था। किन्तु जिस प्रकार जापानी परिवार के कार्य उसके मुखिया द्वारा नाम मात्र को किये जाते हैं तथा वास्तविक निर्णय परिवार की परिषद् द्वारा लिये जाते हैं, उसी प्रकार सरकार का सचालन वस्तुत: स्वयं शोगुन के द्वारा नहीं अपितु अप्रत्यक्ष रूप से उसके परामर्शदाताओं द्वारा किया जाता था।

पांच या छः पार्षदों की सर्वशक्तिशाली गोरोजू (राज्य परिषद्) होती थी। इनका कार्यकाल आजीवन होता था तथा परिषदों में उनका स्थान वंशानुगत विशेषाधिकार के रूप में होता था। वे शोगुन को सलाह देते थे; शाही मामलों तथा देम्यो पर नियन्त्रण रखते थे तथा सम्पूर्ण राष्ट्रीय प्रशासन की देखभाल करते थे। अब इन दों के विभिन्न ब्यूरो की नियुक्ति भी उनके द्वारा की जाती थी। परिषद् के नीचे कनिष्ठ परिषद् थी, जिसमें दो से 5: तक वाकेदोशियारी युवा ज्येष्ठ होते थे। इस समूह का नियन्त्रण छोटे सामन्तों पर होता था तथा ये ब्यूरो प्रमुखों से निम्न अधिकारियों की देखभाल करते थे। इस प्रकार पुलिस सेना शिक्षा तथा वित्त विभाग के कर्मचारी वर्ग पर नियन्त्रण युवा ज्येष्ठ को प्राप्त होता था। सामन्त तथा सामन्त पदसोपान क्रम दैम्यो (शाब्दिक अर्थ में महान् पद) कहलाते थे। मात्र तोकूगावा के प्रति निष्ठावान जागीरदारों को ही केन्द्रीय परिषद् में स्थान प्राप्त होता था।[3]

जापान के नक्शे पर तोकूगावा का प्रादेशिक प्रशासन एक विशाल शतरंज के बोर्ड के समान लगता था। सर्वप्रथम कुछ प्रदेश जिनमें मुख्य नगर जैसे इदो, क्योटो; ओसोका सकाई तथा नागासाकी भी सम्मिलित थे शोगुन के प्रत्यक्ष नियन्त्रण में थे। इन प्रदेशों के अधिकारी तोकूगावा परिवार की तीन शाखाओं, ओवारी, कोई तथा मितो में से नियुक्त किये जाते थे, इस प्रकार एक चतुर्थांश जापान उनका नियन्त्रण था। अविशिष्ट तीन चौथाई जापान विभिन्न देम्यो में विभाजित था। वे देम्यो जिनके पूर्वज तोकूगावा कबीले से सम्बन्धि रहे थे फुदाई देम्यो (आश्रित सामन्ती) कहलाते थे। उनमें से 176 को सरकार द्वारा पद प्रदान किये गए जिन सामन्तों के पूर्वजों ने मात्र सेकीगहारा के भयंकर युद्ध के के पश्चात् आत्मसमर्पण किया था (1600 ई.) जिनकी संख्या लगभग 86 थी को तोजाताम देम्यो (सामन्तों की पदवी दी गई थी उन्हें केन्द्रीय शासन से बाहर रखा गया था तथापि स्थानीय मामलों में उन्हें अपेक्षाकृत स्वायत्तता प्रदान की गई थी। ऐसे परिवार देम्यो में संपन्नतम परिवार होते थे जैसे चौमू के पोरी सतसूमा के शियाजू, सेनादी के दोत, तथा कागा के मीदा।

प्रत्येक दैम्यो को अपने हेन क्षेत्र अथवा कुल पर पूर्ण राजनीतिक नियन्त्रण प्राप्त होता था। हेन नतो स्कॉटिश मॉडल की सुगठित परिवार की इकाई आदि कालीन जापान

3--तोकूगावा प्रशासन के विभिन्न दृष्टिकोण से विस्तृत वर्णनों के लिए देखिये--मरडोक पूर्वोदधृत ग्रंथ तृतीय अध्याय 1 दि सोश्यल एण्ड पॉलिटिकल स्ट्रक्चर 5-1-61 इतिहासकार, हैमेल्ड एन की रचना जापानीज गवर्मेंट एण्ड पॉलिटिकल न्यूयार्क, 1935 अध्याय 'दि पॉलिटिकल सिस्टम आफ्टर टू दि मेइजी एरा'' विशेषता पृष्ठ 6-18, गणमान्य राजनीतिक शास्त्रियों के विचार नार्मन पूर्वोदधृत अध्याय दो मेइजी पुनर्स्थापना की पृष्ठ भूमि, पृष्ठ 11-35 तथा सामंतवाद के पतन का सामाजिक व आर्थिक नर्देशन।

के गिजोकू के समान पूर्व सामन्ती इकाई थी । हेन का तात्पर्य दैम्यो के राजनीतिक नियन्त्रण में होने वाले क्षेत्र तथा लोगों से होता था जिनसे वे चावल के रूप में राजस्व प्राप्त करते थे। उसकी उपाधि उस राजनीतिक अधिकार पर निर्भर करती थी, जिसे उसके पूर्वजों ने प्राप्त कर औचित्यपूर्ण बना दिया था ।

नियन्त्रण व सन्तुलन को बनाये रखने के लिए तोकूगावा जमींदारों को एक दूसरे से संघर्ष रत कराते रहते थे। इस व्यवस्था का एक अपेक्षाकृत कम महत्त्वपूर्ण पहलू यह भी था कि इसके कुछ ऐसे आर्थिक परिणाम होते थे जो प्रारम्भ में कल्पना से परे होते थे। बन्दी बनाये रखने की व्यवस्था की आवश्यकता थी। 1634 में निर्मित सनकिन कोताई के के अनुसार जमींदारों को बारी बारी से इडो में तथा अपने क्षेत्र में रहना होता था । जब ये लोग अपने क्षेत्रों में जाते थे तो अपनी पत्नियों को, अपने सद्आचरण की गारन्टी स्वरूप उन्हें राजधानी में छोड़ना पड़ता था। तोकूगावा पुलिस इस प्रकार सर्वाधिक उल्लेखनीय तथा रोमैंटिक थी उसने निषिद्ध वस्तुओं का सतर्कता से प्रयोग किया (स्त्रियों को बाहर ले जाएँगे तथा बारूद को अन्दर लाएँगे) इस मुहावरे के अनुसार यह बताया गया था कि यदि कोई जमींदार षडयन्त्र करना चाहेगा तो वह किन संकटपूर्ण वस्तुओं का संग्रह करेगा। प्रत्येक विद्रोही लार्ड अपनी पत्नी अथवा पत्नियों को राजधानी में बारूदी अस्त्रों का संग्रह करेगा।

इस प्रकार तोकूगावा अधिकारी बड़ा सतर्क नियन्त्रण रखते थे। विभिन्न क्षेत्रों में यात्राओं को प्रोत्साहन नहीं दिया जाता था। किलों का निर्माण अथवा मरम्मत इदो द्वारा प्रत्यक्ष आज्ञा करने के पश्चात् ही की जा सकती थी। यहाँ तक कि दैम्यो में परस्पर विवाह के लिए भी बकूफू की स्वीकृति आवश्यकथी ।

गुप्तचर (जासूसी) व्यवस्था तथा पुलिस—

स्वयं जापान के इतिहासकारों ने तोकूगावा जापान का विश्व के प्रथम पुलिस राज्य के बाद से सम्बन्ध किया है तोकूगावा की गुप्तचर व्यवस्था का संगठन जिस स्तर पर किया गया वहाँ किसी अन्य सामन्ती राज्य में प्राप्य नहीं है। उसका प्रभाव हमारे काल तक दृष्टिगोचर होता है । ओमेत्सुके (बड़े इंसपेक्टर) शोगुन के आँख और कान कहलाते थे। वे किसी भी जमींदार की गतिविधि पर नियन्त्रण रखते थे। मेतसुके अथवा इंसपेक्टर छोटे जमींदारों तथा उनकी जनता पर आँख रखते थे । प्रारम्भ में इसफैक्टर चीन के सेंसर अधिकारियों के समान लगते थे, बाद में वे न्यायालय अधिकारी के रूप में जाने गए तथा अन्ततः वे गुप्तचर विभाग के प्रशासनिक अधिकारी बन गए । आठवें तोकूगावा शोगुन योशीमुन के अन्तर्गत (1716-1745) मुरागाकी सादायू नामक एक चालाक व्यक्ति के अधिकार में एक विस्तृत व्यवस्था संगठित की गई। मुख्य गुप्तचर का पद भी एक काल्पनिक उपाधि पार्क गार्ड का मुखिया के नाम से वंशानुगत बन गया ।

तोकूगावा प्रशासकों के जनता पर पुलिस का नियन्त्रण प्रभावशाली बनाने के लिए नए नए तरीके अपनाए। उनमें से एक व्यवस्था एक याचना बॉक्स था जो मुख्यन्यायलय के भवन में रखा जाता था जहाँ आप आदमी अपनी शिकायत डाल सकता था। इस बॉक्स में कोई भी व्यक्ति सुझाव भी डाल सकता था। विशेष अधिकारी मतेसुके की सतर्क निगरानी में उस सन्दूक को गोरोजू में ले जाते थे । वहां से उसी प्रकार ताला सन्दूक तोकूगावा के विननेस कक्ष में जाता था वहां स्वयं शोगुन लेता था। फिर स्वयं अपने पास से खरीदार

थैले से उस सन्दूक की ताली निकाल कर वह स्वयं सन्दूक खोलता था। उसके पत्र को पढ़ कर उसकी विषय सामग्री स्वयं सम्बोन्धित अधिकारी को बताता था। कुछ अन्य सूचनाओं को गुप्तचर विभाग द्वारा पुष्टि करने के लिए अलग रखता था। तथा जो सूचना अत्यधिक गुप्त रखनी होती थी उसे किसी को भी न बता कर वह उस पत्र को नष्ट कर देता था।

तोकूगावा का स्थानी शासनय—

स्थानीय सरकार दो स्तरों के मध्य कार्य करती थी। एक ओर शोगुन का नियन्त्रण तथा दूसरी ओर स्थानीय सामन्ती रीति रिवाज। यहां भी वंशानुगत निरंकुशता को जापानी सामान्य ज्ञान से उदार बना दिया गया था।

प्रत्येक सामन्तक्षेत्र चाहे कितना ही लघु क्यों न हो वह तोकूगावा शासन की लघु अनुक्रान्ति थी। प्रत्येक ने कोपुन्याय सेंसर सैनिक मामले, जनगणना मुद्रा तथा सार्वजनिक निर्माण विभाग होते थे। प्रत्येक क्षेत्र जिलों में तथा कस्बों में विभाजित होता था जिसके अपने हतामोता वर्ग के मजिस्ट्रेट होते थे। इन मजिस्ट्रेटों की नियुक्ति शोगुन दैम्यो की सलाह पर स्थानीय भावनाओं का ख्याल करते हुए करता था। मजिस्ट्रेटों के दो स्तर होते थे गुदाई तथा दाईकन, जिसका निर्धारण चावल के कम या अधिक उत्पादन के आधार पर होता था। चीन के हसिन मजिस्ट्रेटों के समान जापान के इन स्थानीय अधिकारियों का काम भी यह देखना था कि राजस्व की वसूली पूरी तरह से हो तथा सार्वजनिक व्यवस्था बनी रहे। बड़े कस्बे जो तोकूगावा के प्रत्यक्ष नियन्त्रण में होते थे उनमें दो मजिस्ट्रेटों (बग्यो) होते थे। वे प्रशासनिक तथा न्याय अधिकारी दोनों होते थे।

सामान्य जिले गांवों से बने होते थे। गांव अपने निम्नतम स्तर पर आश्चर्यजनक मात्रा में अपनी स्वतन्त्रता बनाए रखते थे। गांव का मुखिया प्रायः बड़े भूस्वामियों के द्वारा चुना जाता था। उसका पद अच्छे चाल चलन के आधार पर वंशानुगत होता था प्रत्येक गांव की एक सभा होती थी, जिसमें भूस्वामी तथा उन पांच परिवारों के मुखिया होते थे, जिनमें सम्पूर्ण गांव विभाजित होता था। चीन के समान ही अपरिष्कृत रूप में गांव के अधिकारी मध्यवर्ती संस्थाओं का कार्य करते थे। ये दैम्यो तथा शोगुन तक जनता का प्रतिनिधित्व करते थे।

ये निकटवर्ती क्षेत्रों के संगठन जापान के पूर्वऐतिहासिक काल के हैं। ताइहो संहिता के (701 ई०) निर्माण तक ये पांच परिवारों के परिवार सगठन (कोनिगुमी) पुलिस अर्थव्यवस्था तथा परस्पर सहायता कार्यों के लिए स्थानीय माध्यम प्रस्तुत करते थे। इस व्यवस्था की कामाकुरा काल में उपेक्षा की गई थी। किन्तु तत्पश्चात् मुरोमाची युग के अराजकताकाल में स्थानीय सुरक्षा की दृष्टि से इनकी पुनरावृति की गई। सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में इएमित्सु शोगुन के समय तक यह पांच परिवारों का समूह-ईसाई धर्म के बहिष्कार को लागू करता था। बाद में तोकूगावा काल में सामन्ती व्यस्था की सूक्ष्मतम आवश्यकताएँ. सामाजिक नियन्त्रण के इन साधनों द्वारा पूरी की जाती थी। गोनिगुमी द्वारा क्रियान्वित नियमों को छः वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

1, स्थानीय शान्ति व सुरक्षा की व्यवस्था करना
2. धार्मिक अनुष्ठानों व संस्कारो का नियन्त्रण
3. सुरक्षा तथा करों की वसूली
4. चतुरता तथा मितव्ययता को बढ़ावा देना

5. पारस्परिक सहायता एवं सहयोग

6. नैतिक शिक्षा तथा व्यक्ति का कल्याण[4]

सामन्ती कानून की क्रियान्विति—

जापानी विधि की होजो कालीन बुनियाद से तोकूगावा काल तक जापानी प्रशासक इस विचार में विश्वास करते रहे थे कि कानून का ज्ञान मात्र प्रशासकों को होना चाहिये था। यह पश्चिमी कानूनी सिद्धान्त के पूर्णतया विपरीत विचार है। जहां किसी भी कानूनी मामले का निर्धारण करने के लिए कई मामलों में कानून का ज्ञान उसकी पूर्व आवश्यकता माना जाता है। तथापि कानून के प्रति अज्ञान जापान में क्षमा प्राप्त करने का तरीका नहीं बन सकता था। इसके विपरीत यह जन सामान्य के लिए उचित व्यावहारिक आवश्यकता थी। सामान्य जनता इस प्रकार कानून के बजाय नैतिक अर्थों अच्छे व बुरे कार्य के सामान्य सिद्धान्तों तक ही सीमित थी। यह सिद्धान्त सुपरिचित जापानी कन्फ्यूशियसवादी विचार पर आधारित था कि "बिना जाने लोगों से आज्ञापालन करवाया जाएँ"।

चीनी अनुभव से बहुत कुछ समता रखते हुए प्रारम्भिक ताइहो संहिता ने ऐसे विस्तृत नियमों का निर्धारण किया था जो शासक व शासित दोनों के लिये स्पष्ट निर्देश रखते थे। ये नियम संपूर्ण विश्व पर लागू होते थे। सामंतवाद के आगमन के साथ ही प्रत्येक जागीरदार अपनी प्रजा के लिए कानून बनाने लगा। इस प्रकार एकरूपता तभी संभव थी जब भाषा रीति-रिवाज तथा सामाजिक पृष्ठभूमि में एकरूपता विद्यमान हो। विधि-सिद्धान्त यद्यपि पर्याप्त विस्तृत नहीं थे तथापि वे पर्याप्तएकरूपता रखते थे। अतः तोकूगावा बिना गंभीर संघर्ष के सामान्य संहिता बनाने में सफल हुआ। इक्कीस नियम होजो का शिकीमोकू किसी ताकेदा का गृह-विधियाँ तथा आसकुरा की तरह मान्यताएँ जैसे प्रसिद्ध नयविद अवशेषों को सम्मिलित किया जा सका।

आठवें तोकूगावा शोगुन योशिमुने के शासन काल से यह स्वीकार किया गया कि जो लोग कानून की धाराओं से अपरिचित हैं? उनसे कानून-पालन की अपेक्षा करना गलत था। इसके पश्चात् प्रत्येक निर्मित कानून मजिस्ट्रेटों के द्वारा अपनी सामान्य जनता के सामने सामान्य बोलचाल की भाषा में पढ़ा व समझाया जाता था तथा उसके बाद उन्हें विशेष जनसूचना वाले नोटिस बोर्ड पर लिख दिया जाता था।

4– क्युगिरे पूर्वोद्धृत पृष्ठ 10-13 तोकूगावा स्थानीय सरकार का संक्षिप्त सारांश प्रस्तुत करता है। देखिये असाकावा का जर्नल ऑफ दि अमेरिकन आरिएन्टल सोसाइटी खंड 30-31 (1910-11) में प्रकाशित "नोट्स आन विलेज गवर्मेंट इन जापान आफ्टर 1600, ए, सांदर्स का नोट्स आन जापानीज विलेज लाइफ "टी० ए० एस० जे खंड 33 दिसम्बर, 1905 तथा संयुक्त सर्वोच्च कमान समिति की रिपोर्ट —ए प्रिलिमिनेरी सर्वे ऑफ नेबरहुड एसोसिएशन पूर्वोद्धृत पृष्ठ 14 यद्यपि ये अध्ययन तोकूगावा शासन की बाह्य रूपरेखा ही प्रस्तुत करती है तथा यह नहीं बताते है कि इस सामन्ती नियंत्रण की मूल इकाई कैसे कार्य करती थी। समकालीन समस्याओं में केन्द्रित अध्ययनों के द्वारा जापानी तथा अमेरिकी इतिहासकार इस कमी को पूरा कर रहे हैं। उदाहरण के लिए डा० जॉन विटने हॉल ने मिशीगन विश्वविद्यालय के जापानी अध्ययन केन्द्र में विजेन (ओकायामा) पर अपना। वर्षीय गहन अध्ययन समाप्त कर लिया है। देखिये मेटेरियल्स फॉर दि स्टडी ऑफ लोकल हिस्ट्री इन जापान, प्री मेयजी रिकार्ड्स ओकेमलन पेपर्स सेंटरफोर जापानी स्टडीज एन आर्बर संग्रह (1952)

बाकूफ प्रशासन के साथ तोकूगावा न्याय, वस्तुतः शांति काल में भी सैनिक कानून का प्रसार था। हिदेयोशी के आंतक ने सैनिक तथा कृषक-वर्ग को कठोरता पूर्वक पृथक कर दिया था। तत्पश्चात् तोकूगावा इयासु द्वारा प्रतिपादित सैनिक भवनों के कानून ने (बुके हट्टो) जो 1615 से प्रेषित किया गया था, निष्ठा तथा आज्ञापालन की परंपरा की स्थापना की। यह तोकूगावा न्यायव्यवस्था की मूलविशेषता थी। प्रारम्भिक काल के तैइहो तथा जोई संहिताओंके समान सैनिक भवन कानून, मात्र कानूनी परिभाषाओं, स्तरों तथा प्रणालियों संहितीकरण ही नहीं, अपितु वह चीनी तथा जापानी प्रतिष्ठित रचनाओं पर आधारित उपदेशों, निषेधाज्ञाओं तथा नैतिक आदर्शों का संग्रह भी था।

इस प्रकार के नियमों ने ऐसी आधारशिला का काम किया जिस के आधार पर ऐसे आदेश दिए गए, जो लोकप्रिय आदर्शों की सूक्ष्मतम विस्तार में चर्चा करते थे। इस प्रकार व्यय-विरोधी नियम तोकूगावा विधि की उल्लेखनीय विशेषता थे। इस व्यवस्था की तृतीय तथा अत्यधिक परंपरागत विशेषता ओसादमे-गाकी हमाकांगो (सौ अनुच्छेदों का संग्रह) में दिखाता है जो यह घोषणा करता है कि पचास वर्ष तक निरंतर क्रियान्वित रहने के पश्चात् किसी भी कानून को संशोधित नहीं किया जा सकता है। चाहे वह कितना ही अव्यावहारिक क्यों न हो गया हो। तोकूगावा शासन स्वयं अपने कानूनों को भी मूलभूत तथा संशोधन से परे मानता था। सैनिक-भवन-कानून तथा सौ अनुच्छेदों के अलावा कई विशेष कानून शाही दरबार शोगुनेत तथा तत्कालिक प्रशासन के लिए होते थे तथा इसके अतिरिक्त इदो स्थित आदेशों का एक विशिष्ट वर्ग भी होता था। कानून का यह अंतिम वर्ग विशेष अपराधों जैसे निषिद्ध औषधियों का व्यापार-कार्य करना तथा व्यभिचार के मामलों से संबंधित होते थे। इन सब लिखित कानूनों से परे नैतिक मान्यताओं का निरंतर दबाव रहता था तथा स्थानीय रीतिरिवाज, जापानी ऐतिहासिक पूर्वोदाहरण तथा कन्फ्यूशियसवाद, बौद्ध धर्म तथा शितों की नैतिक शिक्षाएँ इन सबका प्रभाव अर्द्ध कानूनी रूप में हुआ करता था।

वस्तुतः तोकूगावा शासक साम्राज्य के लिए नैतिक आधार बनाने में इतने व्यस्त थे कि अपराध से सम्बन्धित कानून बनाने की आवश्यकता का उन्हें अनुभव ही नहीं हुआ। इस दृष्टि से तोकूगावा न्याय प्रगतिशील व पिछड़ा हुआ दोनों ही था। आज के अमेरिकी यद्यपि अपराधी के स्तर के आधार पर अपराध के दण्ड के निर्धारण की व्यवस्था को अपवादात्मक मानेंगे तथापि तोकूगावा शासकों की यह मान्यता समाजशास्त्रीय आधार पर पूर्णतः उचित थी कि अपराध की गम्भीरता अपराधी की शिक्षा तथा उसकी पृष्ठभूमि से सम्बन्धित होती है। इस दृष्टिकोण का समर्थन व्यावहारिक तथा विधि दर्शन के आधार पर भी होता था जैसे समुराई वर्ग द्वारा किये गए अपराध अधिक गम्भीर परिणाम वाले राज्य के विरुद्ध अपराध माने जाते थे जबकि विदेशियों अथवा अन्य सामान्य राजद्रोहियों के बारे में ऐसी मान्यता नहीं थी।

चोरी के अपराध के विरुद्ध बर्बरतापूर्ण दमन की कार्यवाही की जाती थी। किसी भी वस्तु को चुराने का दण्ड मृत्यु हुआ करती थी। किन्तु जेबकतरों के साथ विशिष्ट विषमता बरती जाती थी। उनके लिए दण्ड स्वरूप गोदने को ही पर्याप्त मान लिया जाता था। यद्यपि पाश्चात्य रचनाओं में अतिश्योक्ति की गई है, तो भी तोकूगावा शासन में दिये जाने वाले दण्ड अत्यधिक कष्ट कारी रहे होंगे। शायद उतने ही कष्टकारी, जितने तत्कालीन सत्रहवीं शताब्दी के ब्रिटेन तथा फ्रांस में दिये जाने वाले दण्ड होते थे। कानून के अनुसार

अध्याय 14 समुद्री-राज्यों का आवागमन

यद्यपि जापान का इतिहास पश्चिमी संपर्क से पहले पर्याप्त गत्यात्मक रहा था, तथापि ईसाई-जगत उससे भी अधिक गत्यात्मक था। जापान एक प्रकार के सामन्तवाद से दूसरे प्रकार के सामन्तवाद की ओर अग्रसर हुआ तथा पुलिस राज्य में सर्वोत्कृष्ट उदाहरण के रूप में विकसित हुआ। तभी मध्य कालीन ईसाई जगत् के सम्पन्न अवशेषों में से यूरोप के राष्ट्र राज्य विकसित हुए तथा मानव इतिहास में सर्वप्रथम उन्होंने सम्पूर्ण धरती को अपनी शक्ति-राजनीति का विश्व बना लिया।

जापान के इतिहास में महानतम् परिवर्तन अन्य एशियाई देशों में महान् परिवर्तन के समान बाह्य सम्पर्क के कारण आया। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में आज भी यह सत्य है कि पश्चिमी यूरोप के लोग अपने अमेरिकी, दक्षिणी अफ्रीकी तथा आस्ट्रेलियाई वंशजों तथा पूर्व यूरोपियन प्रतिद्वद्वियों के साथ विश्व की सर्वाधिक गत्यात्मक मानव जाति है। सोलहवीं शताब्दी के पश्चात् पहले दूर से तथा बाद में निकटता से एशिया में परिवर्तन पश्चिमी जगत द्वारा निर्धारित प्रतिमानों के आधार पर हुआ है।[1]

किन्तु यहां यह कहना अधिक उचित न होगा कि इस काल में जापान की अपनी गत्यात्मकता समाप्त हो गई थी अथवा जो भी परिवर्तन हुए वे सब जापान के बाहर से आने वाले दबाव के कारण थे। यद्यपि पाश्चात्य सम्पर्क महान् था, तथापि उससे भी महान् जापानियों के राष्ट्रीय चरित्र की अत्यधिक रचानात्मकता थी, जिसे पश्चिम से प्रोत्साहन मिला इस प्रकार एक प्रमुख कारक एक मात्र कारक बता देना अतिशयोक्ति करना होगा अतः पाश्चात्य सम्पर्क में आने पर जापान की सरकार में जो परिवर्तन आए, उन्हें बताने से पहले उस काल में स्वयं ताकूगावा जापान में क्या हो रहा था, उसकी भूमिका बता देना अधिक बुद्धिमतापूर्ण होगा।

संकट का वर्ष —

1869 के वर्ष को जापान द्वारा समुद्री राज्यों के आगमन पर उनके साथ अपनी शासन-व्यवस्था के अनुकूल की प्रक्रिया का चरमोत्कर्ष काल कहा जा सकता है। इन समुद्री राज्यों की शक्ति पर, पैदल सेना पर अथवा घुड़सवारों पर निर्भर नहीं करती थी, अपितु उन समुद्री सेनाओं पर निर्भर करती थी, जो विश्व में कहीं भी समुद्र पर जा सकती थी।

1868 तक का काल जापान में दबाव, चुनौती, प्रयास तथा तैयारियों का काल था। उनके बाद जापानियों ने आधुनिकीकरण की प्रतिद्वंद्विता को स्वीकार लिया तथा अपनी सेनाओं, विधि तथा अधिकांश सरकार पाश्चात्यीकरण की अनिवार्यता को पूरा किया।

1—इस परस्पर सांस्कृतिक प्रभाव के परिपक्व अध्ययन के लिये जिसमें जापान को मूल उदाहरण के रूप में लिया गया है, जार्ज सैनसम की नवीनतम रचना दि वेस्टर्न वर्ल्ड एण्ड जापान देखिये।

14 मार्च, 1868 को नैनो ने सभी राजकुमारों तथा उच्च अधिकारियों को शिशिदेन अथवा शाही महल के अन्दरूनी उपासनागृह में बुलाया तथा अपने कुल - देवताओं के सम्मुख नई विचित्र शपथ ली। इस शाही शपथ ने एक नवीन शासन की नींव के रूप में कार्य किया सम्राट ने अन्त में कहा —"इस अभूतपूर्व सुधार को पूरा करने के लिए हम अपनी जनता के सम्मुख जाएँगे तथा स्वर्ग तथा इस धरती के देवताओं के सामने उन मूलभूत राष्ट्रीय सिद्धान्तों की घोषणा करेंगे जिन के आधार पर सार्वजनिक कल्याण हो। हमारी सम्पूर्ण प्रजा, इन सिद्धान्तों के आधार पर एकताबद्ध होगी।[2]

इस शपथ में परम्परा तथा नवीनता का विशिष्ट मिश्रण था। एक बार फिर जापानियों के सामने आन्तरिक कठिनाईयां तथा वाह्य चुनौती थी और जापानियों ने इसका प्रत्युत्तर एकता की ओर उन्मुख होकर अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा करते हुए किया था। एक बार फिर सम्राट के नाम पर तथा जापानी देवताओं की उपस्थिति में मूलभूत राष्ट्रीय सिद्धान्तों को प्राप्त करने के लिए सम्पूर्ण प्रयासों का आह्वान किया गया। इस शपथ के साथ जापानियों ने शोगुनेत के संकट को आन्तरिक रूप से बहुत पीछे खदेड़ दिया तथा वाह्य रूप से वे पश्चिमी देशों के संकट का सामना करने के लिए तत्पर हुए। इस बार जापानी स्वयं अपने देश को राष्ट्रीय राज्य बनाने के लिए तत्पर हो गए।

एक राष्ट्रीय राज्य की स्थापना करना मात्र पाश्चात्यीकरण की प्रक्रिया नहीं है। इस प्रक्रिया के दौरान पाश्चात्य विद्वानों ने पहले तो इसकी मुक्त कंठ से प्रशंसा की। बाद में मुक्त कंठ से इसकी आलोचना की तथा ये उस पूर्वी मेयजी जापानी जीवन को कौतुक की दृष्टि से देखते हैं जिन्होंने मेयजी आधुनिकीकरण को संभव बनाया।[3]

इस सामंजस्य की प्रक्रिया की सर्वाधिक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि दस हजार वर्ष तक शासन में रहने के बाद भी व्यापारिक तथा सामन्ती तत्वों में सामजस्य उससे पूर्व के शासन काल से ही उत्तराधिकार में प्राप्त किया गया था। पूर्वकालीन सामन्ती नेताओं को शूरवीरता का सिद्धान्त संक्रमण काल के दौरान भी निरन्तर बना रहा। वर्ग सामंजस्य की भाषा में अगर कहा जाए तो उच्च वर्ग के समुराई से निम्नवर्ग के समुराई की ओर संचरण हुआ। आधुनिकीकरण के पश्चात् जो सरकार अस्तित्व में आयी वह प्राचीन जापान की कुल सरकार से उल्लेखनीय समानता रखती थी तथा उसकी दूसरी रचना जापान का प्रशासनतन्त्र था।

आर्थिक अर्थों में जापान के मेयजी रूपान्तरण ने उसे पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का पोषण करने वाले केन्द्र के रूप में विकसित किया। मेयजी जापन की अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ नीति हिदेयोशी की व्यापारिक नीति तथा फ्रेडिक लिस्ट के नेशलन सिस्टम डी पॉलिटिशेन

2–पांच सिद्धान्तों के चार्टर तथा पूर्ववर्ती प्रारूप फुजी जितारों तथा मोरिया विदेमुको की रचना मिचेसिस ऑफ दि हिस्ट्री आफ जापान दि मेयजी एरा टोक्यो, 1934 प्रष्ठ 213, 216 संकलित हैं। इसका सरकारी अनुवाद दि जापान इयर बुक 1946-49 पूर्वोद्धत पृष्ठ 70 में उपलब्ध में चार्टर की शपथ के लिए देखिये 15 वां अध्याय पृष्ठ 350।

3. मेयजी 1867-1012 के काल में शासक की पदवी रहा है। नार्मन की पूर्वोद्धृत पुस्तक जापान्स एमर्जेन्स एण्ड ए मार्डन स्टेट अंग्रेजी में पर्याप्त उपयोगी अध्ययन हैं। यह तोकूगावा काल से 1889 में मेयजी युग के सुदृढ़ीकरण को निहित करता है। नार्मन का विश्लेपण क्रमवार न हो कर 1905 पोर्टसमाउथ की संधि तक विषयावार है।

अर्थव्यवस्था का संयोजन थी। इस प्रकार एक जापानी अर्थशास्त्री, डा. नागी ने मेयजी काल को व्यापारिक काल का अन्तिम युग कहा है। ब्रुकिंग संस्था के डा० मॉल्टन यह मानते हैं कि सर्वप्रथम जापान में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को नियोजन के नियन्त्रण में कर दिया गया था।

जनसंख्या की दृष्टि से जापान में यह परिवर्तन अत्यधिक जन्मदर तथा मृत्युदर वाले जापान से स्थिर जनसंख्या वाले जापान की ओर मृत्युदर की कमी तथा जन्मदर में वृद्धि तथा शिशुओं के स्वस्थ रहने की ओर संक्रमण था। परिणामतः जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ी तथा रूपान्तरित अर्थ-व्यवस्था को बढ़ी हुई जनसंख्या का भार वहन करना पड़ा। इस बढ़ती हुई जनसंख्या के पिरामिड का कृषि-आधार अत्यधिक भूस्वामित्व के एकीकरण तथा कृषि के परम्परागत तरीकों की वजह से भार युक्त बना रहा। इन सबका परिणाम था। अतिरिक्त जनसंख्या, स्त्री-श्रमिकों की संख्या में वृद्धि, सीमित जापानी बाजार तथा जबर्दस्ती भर्ती किये गए कृषक रंगरूटों की सेना। राजनीतिक दृष्टि से इस कृषक प्रधानता ने जापान के सांस्कृतिक व्यक्तित्व को वह विशेषता प्रदान की जो प्रायः बाह्य के प्रेक्षकों को विचित्र लगती है, अर्थात् वह सांस्कृतिक एक साथ क्रान्तिकारी तथा प्रतिक्रिया-वादी है।

यहां यह जानना जरूरी है कि स्वयं जापानियों के लिए तोकूगावा तथा मेयजी काल के मध्य भेद इतना तीव्र नहीं है जितना पश्चिमी प्रेक्षकों को लगता है। यद्यपि जापान के इतिहासकार यह स्वीकार करते हैं कि मेयजी पुनरुत्थान काल की महान् सफलता राजनीतिक एवं आर्थिक एकीकरण था। तथापि वे अक्सर यह बताते हैं कि इस काल में जापानी सामन्तवाद में से अनियमित रूप से केन्द्रीय सत्ता का विकास हुआ। आधुनिक जापानी अपनी राष्ट्रीय चेतना को, जो प्रजातीय राज्य (मिंजोकू कोक्का) के विचार में अचेतन रूप से निहित है, प्राचीनतम काल से प्राप्त धरोहर के रूप में स्पष्ट करने का प्रयास करते हैं।

प्रजातिवाद मार्क्सवाद से अच्छा आधार नहीं बन सकता है। जापानी आधुनिकरण की विशिष्ट महत्ता यह है कि इसने जापान तथा पश्चिमी जगत पर उस समय आघात किया, जब वह अपने भूतकाल की तुलना में अच्छे ढंग से प्रभावित थे तथा तीव्र गति से सम्पन्नता करते हुए भविष्य के लिए पर्याप्त आशावान थे।

4. समुराई श्री विकास के लिए होंगों की पूर्वोद्धृत रचना किन्सेइ होकिन शकाई नो केन्या अध्याय 10 खंड 2 पृष्ठ 133-3 देखिये। संपूर्ण तथा चोनिन (साहित्य दृष्टि से कस्बे के लोग तथा व्यापारी वर्ग) के मध्य गठ बंधन के लिए होराई यासुजो की रचना एन आउटलाइन ऑफ दि राइज ऑफ मॉडर्न केपिटलिजम इन जापन क्योटो यूनिवर्सिटी इकोनामिक रिव्यू, खंड 11 संख्या 1 में प्रकाशित (जुलाई 1930 पृष्ठ 99-101 देखिये। इसी लेखक की अन्य रचना 'दि इकोनोमिक सिग्नीफिकेंस ऑफ दि मेयजी रिस्टोरेशन" पूर्वोद्धृत खंड बारह संख्या 2 दिसम्बर 1937) पृष्ठ 81 देखिये।

5. जापानी स्पष्टीकरण से सर्वाधिक भिन्न स्पष्टीकरण, मार्क्सवादी मत है जो मेयजी पुनरुत्थान को बुर्जुआ की तथा पूंजीपतियों की क्रान्ति मानता है। एक सोवियत लेखक स्टेल्सोव ने अपनी रचना में जिसका अनुवाद रूसी से जापानी फिर अंग्रेजी में किया गया तथा जिसका शीर्षक "दि ग्रोथ ऑफ जापानीज केपिटलिज्म" है लिखा है— "तोकुगावा कालीन जापान की तुलना सामंतवाद के अन्तिम चरण में पहुंचे राष्ट्र से की जा सकती है अर्थात् इसमें पूंजीवादी उत्पादन पद्धति आरम्भ हो चुकी थी, घरेलू उद्योग तथा

मूल निवासियों का संकट—

तोकूगावा व्यवस्था के पतन के साथ आधुनिकीकरण की व्यवस्था में गति आई, शोगुनेत के पतन का आरोप मात्र पश्चिमी शक्तियों पर ही नहीं लगाया जा सकता है। इस का दायित्व, यदि जापानी दृष्टिकोण से देखा जाए, तो तोकूगावा की असफल नीतियों पर भी उतना ही था। कृषक असन्तोष तथा प्राकृतिक प्रकोपों ने कमांडर पैरी के पहुँचने से पहले ही तोकूगावा जापान को चिंताजनक संकट की स्थिति तक पहुँचा दिया था। यह जापान के लिए अप्रत्यक्ष रूप से वरदान सिद्ध हुआ कि आन्तरिक संकट ने जापान के लिए उसी समय परिवर्तन आवश्यक बना दिया, जब बाह्य संकट ने जापान को विश्व में अपनी राष्ट्रीय स्थिति तथा परिस्थिति की पुनर्व्याख्या के लिए बाध्य किया।

विनाशकारी प्रभावों में से आर्थिक प्रभाव मूलभूत महत्व के थे।[6] समुराई वर्ग ने कृषकों पर बड़े अत्याचार करने शुरू किये, जिनका शोषण उदीयमान असंतुष्ट व्यापारी वर्ग कर रहा था। जब समुराई तथा उनके दैम्यो ने अपने ऋण के बोझ को, पहले से दबे हुए कृषकों पर स्थानान्तरित किया तो प्राचीन अर्थव्यवस्था टूट गई तथा उसके स्थान पर संपूर्ण जापान में व्यापार प्रधान अर्थव्यवस्था स्थापित हुई। किसी भी व्यापार-प्रधान अर्थव्यवस्था का मूल आधार धन होता है। तोकूगावा अर्थव्यवस्था का पतन प्राचीन अर्थव्यवस्था में धन सम्बन्धी मूल्यों के प्रवेश से प्रारम्भ हुआ। जिसका मूल कारण स्वयं तोकूगावा नेताओं के साथ परिवर्तनशील समाज में धन के महत्व को समझने की असफलता थी। केन्द्रीय शोगुनेत तथा स्थानीय दैम्यो दोनों को अर्थ संकट का सामना करना पड़ा राजस्व से व्यय अधिक बढ़ गया। बंधक रखने की व्यवस्था ने जिसका वर्णन पिछले

व्यापारिक पूँजीवाद का प्रारंभ हो चुका था। यह 1789 से पहले फ्रांस तथा 1861 से पहले से रूस के समान था यद्यपि यह यूरोपियन मॉडल से पूर्णतः भिन्न जापानी मॉडल था तथा इसे कई विशेषताओं के आधार पर पृथक देखना चाहिए। इस विश्लेषण का यह महत्त्व है कि यह जापान के अनूठेपन को स्वीकार करता है तथा यह तोकुगावा को ऐतिहासिक निर्धारणवाद के अन्तर्गत मानता है। जबकि दूसरी ओर यह मार्क्सवादी को मानता है कि यह वर्ग-संघर्ष के सिद्धान्त को लागू करने में असफल रहता है क्योंकि पूँजीवादी विनियोग सर्वप्रथम सामंती कुलों में प्रारंभ हुआ। लघु पूँजीवादी जिनसे सामंती गढ़ों पर आधिपत्य करने की अपेक्षा की गई पहले से ही इस क्रम में प्रवेश कर चुके थे यह परिवर्तन क्रान्तिकारी न नहीं, बोध-दमनप था, आयातित तथा तानाशाही द्वारा नियंत्रित था, शक्ति संतुलन को विचलित करने में जनसामान्य का योग बहुत कम था। इस मार्क्सवादी दृष्टिकोण के लिए स्वेटलोव की मूल रूसी रचना।

यदि जापानी परिवर्तनों को स्पष्ट करने में मार्क्सवादी असफल रहते हैं तो यह कहना भी उपयोगी नहीं है कि जापान फासिस्ट युग में पहुँच गया (फ्रीडा उटले, जापान्स फीट ऑफ क्ले न्यूयार्क, 1937 पृ. 221) में समुराई के प्रति क्रान्तिकारी कहना है इस समय क्रांति तथा प्रतिक्रांति जैसे पदो को छोड़ कर नार्मन के इस निर्णय को स्वीकार करना उचित होगा कि मेयजी पुनर्स्थापना का उद्देश्य गैर सामंती था। देखिये नार्मन: पूर्वोद्धृत पृष्ट 43।

6. यहां पूर्णतः स्पष्ट हो जाना चाहिये कि जिन दबावों ने तोकुगावा कालीन जापान का मेयजी जापान में रूपान्तरण संभव बनाया उन्हें समझने के लिए मार्क्सवादी दृष्टिकोण को अपनाया जाये। कई जापानी तथा पश्चिमी विचारक सहजता से सामंतवाद के आंतरिक संकट अथवा तोकुगावा अर्थव्यवस्था के परस्पर-विरोधाभास पदों का प्रयोग करते हैं। इस प्रकार के मुहावरे यद्यपि निर्धारक दबावों को निहित करते हैं किंतु सक्रिय कारकों की जटिलता को स्पष्ट करने में असमर्थ रहते हैं। इस विषय पर सैंसम ने विस्तृत चर्चा की है। दि वेस्टर्न-वर्ल्ड, पूर्वोद्धृत पृ. 223–233।

अध्याय में लिखा गया है, भद्र वर्ग की गरीबी को बढ़ा दिया तथा निरन्तर घाटे की व्यवस्था को अस्थिर मुद्रा तथा थोपे गए ऋणों से बनाये रखने का प्रयास किया गया। इस प्रकार जब देश दिवालिया हो रहा था तोकूगावा नेता नैतिक सिद्धान्तों पर शासन करने का प्रयास कर रहे थे।

आर्थिक परिवर्तनों के समानान्तर सामाजिक परिवर्तन भी हुए राजनीतिक असन्तोष बढ़ता गया। कृषकों को अपना व्यवसाय अनाकर्षक लगा तो वे निरुद्देश्य विद्रोह की ओर प्रेरित हुए या उन्होंने व्यवसाय छोड़ कर नगरों की ओर जाना प्रारम्भ कर दिया। कृषि-भूमि उत्तरोत्तर कम होती गई। इस कमी से उत्पादन में कमी आई। कृषि-प्रधान व्यवस्था की इन दुर्बलताओं के कारण जो आज भी स्पष्ट हैं, नैतिक व मनोवैज्ञानिक असन्तोष व्यक्त होने लगे। 19 वीं शताब्दी के जापानियों ने सेना के लक्षणों को स्वयं रोग समझ लिया तथा पुनः भूमि के वितरण तथा छोड़े गये खेतों में कृषि कार्य प्रारम्भ किया तथा इसके लिए नीति सम्बन्धी अथवा नैतिक नेतृत्व का सहारा भी लिया। इस विनाश काल के अन्तिम वर्षों में निनोमिया सोन्तोकू (1787-1856) नामक संत तत्कालीन कृषि अर्थव्यवस्था पर प्रशंसनीय किन्तु निरर्थक एवं नैतिक प्रचार करने के लिए पर्याप्त लोकप्रिय हुआ जिन कृषकों ने विद्रोह किया उनमें भी सामन्ती व्यवस्था को समाप्त करने का आग्रह नहीं था। वह विद्रोह एक सामान्य असन्तोष था। जो इस बात का द्योतक था कि प्राचीन व्यवस्था में अत्यधिक त्रुटियां थीं।[7]

इस समय व्यापारियों तथा पूर्व आधुनिक उद्योगपतियों को पर्याप्त लाभ हुआ। घरेलू व्यापार ने चावल व अन्य वस्तुओं के क्षेत्र में पर्याप्त वृद्धि की। अधिकांश वस्तुओं का उत्पादन निरंकुश किन्तु परिष्कृत पूँजीवादी क्षेत्र का प्रधान था। ग्रामीण उद्योग के विकास के परिणाम स्वरूप सम्पत्ति का स्थानान्तरण सामंती वर्गों से नवीन व्यापारी उद्यमकर्ता को हो गया। एकाधिपत्य के विस्तार से विशेष रूप से दक्षिण पश्चिम के बाह्य कुलों में आर्थिक तथा राजनीतिक गतिविधियों का विस्तार निम्न समुराई लोगों के हाथ में हो गया।

उच्च वर्ग की समुराई के हाथों से शक्ति का स्थानान्तरण व्यापारियों तथा निम्न समुराई वर्ग में होने के पश्चात् तोकूगावा कालीन सम्पूर्ण वर्ग व्यवस्था के लिए संकट उत्पन्न हो गया। सामाजिक परिवर्तन के एक जापानी विद्वान् डॉ. काठा तेमुरजी ने एक योद्धा की उभयपक्षी स्थिति का वर्णन किया है। उसने धन प्रधान नवीन अर्थव्यवस्था तथा चावल पर आधारित परम्परागत वस्तु प्रधान अर्थव्यवस्था के विरोधाभास को सुलझाने का प्रयास

7. तोकुगावा शासन में कृषक असंतोष निष्क्रिय तथा सक्रिय दोनों रूपों में अभिव्यक्त हुआ। शिशु हत्या तथा गर्भपात द्वारा बढ़ती जनसंख्या को नियंत्रित करने का प्रयास किया गया। असन्तोष की सक्रिय अभिव्यक्ति अधिक गंभीर थी : भूमि से विद्रोह कृषक विद्रोह, चावल के दंगे में कुछ उनके उदाहरण थे। तोकुगावा कालीन कृषक समस्याओं, जनसंख्या दबाव तथा दंगों ने व्यापक पैमाने पर अध्ययनों का विषय बने हैं। जापानी में होंजो की रचना "किनसेई होकेन शाकाई नो केन्क्यू" पूर्वोद्धृत अध्याय 7 पृ. 84 में जनसंख्या समस्या पर विचार किया गया है। अंग्रेजी में विस्तृत अध्ययन ह्यू बोर्टन की रचना पेजेंट अपराइजिंग इन जापान ऑफ दि तोकुगावा पीरियड" है। पृ. 70 पर लेखक एक टिप्पणी दो जापानी प्रोफेसरों के दृष्टिकोणों का सारांश प्रस्तुत करते हुए कहता है—कोकुशो का विश्वास था कि उन्होंने बाकूफू के पतन में सहायता अवश्य की किन्तु समाज को परिवर्तित करने का उनका कोई विचार नहीं था। प्रोफेसर बोर्टन का निष्कर्ष था,.........वे क्रांतिकारी आंदोलन का प्रतीक नहीं थे; कृषकों की उनके आर्थिक कष्टों के विरुद्ध किये गए विरोध मात्र थे"।

किया है। इस प्रकार नगर-प्रधान अर्थव्यवस्था का विकास सामंती व्यवस्था के आन्तरिक विनाश का मूल कारण था।

इस प्रकार के आर्थिक कुसमायोजना तथा सामाजिक असंतोष ने तोकूगावा शासन के विरुद्ध असंगठित राजनीतिक आन्दोलन को जन्म दिया। धीरे-धीरे केन्द्रीय सत्ता समाप्त होती गई तथा उसका विरोध किया जाने लगा तथा शोगुनल द्वारा वहिष्कार को समाप्त करने के प्रयासों का खंडन किया जाने लगा। तोकूगावा के विरोध के परिणाम स्वरूप अप्रभावित कुगे, तोज्या तथा व्यापारियों ने अपना संगठन बना लिया। तोकूगावा शासन का विरोध दूसरी ओर सैद्धान्तिक विचारधारा के आधार पर शुद्ध शितो के पुनरुदय ने चीनी वस्तुओं के विरोध तथा जापानी वस्तुओं के गौरव पर बल दिया जाने लगा। कई बौद्धिक संस्थानों ने यह प्रमाणित किया कि शोगुन एक कार्यकर्ता मात्र था तथा वैधानिक शासक मात्र सम्राट ही हो सकता था।

जापान के रूपान्तरण के इतिहास में जिस तथ्य की उपेक्षा की गई है, वह 1880 से पूर्व काल में सम्पन्न ग्रामीण वर्ग का इस प्रक्रिया पर वैचारिक प्रभाव है। शीघ्र ही साहूकार गिरवी रखने वाला व्यापारी तथा छोटे उद्योगपतियों में से स्थानीय अधिकारियों की नियुक्ति होने लगी। ये लोग शिक्षित थे जिनके विद्वानों से सम्बन्ध थे इन्होंने आर्थिक कुंठा का सामना बुद्धिमतापूर्ण ढंग से किया। उन्होंने राज्य के अधिकार को तथा जबर्दस्ती थोपे गए ऋणों का विरोध किया। उन्होंने इस प्रक्रिया में दो प्रकार से सहायता की, पहले स्वामित्वहीन वर्ग की सहायता करनी प्रारम्भ की तथा बाद में तोकूगावा शासन के विरुद्ध शस्त्र लेने में भी आर्थिक सहायता दी। यद्यपि ऐतिहासिक विवरणों में इस तथ्य की उपेक्षा की जाती है, तथापि ये ही लोग उत्तर मेयजी के वे पूर्वगामी थे, जिन्होंने प्रजातन्त्रीय अधिकारों का उल्लंघन किया था।[9]

अमेरिका के कमोडेर मैनेजर केलब्रेथ पैरी के आगमन के साथ ही संकट में तीव्रता आई।

पैरी के आगमन ने एक संतुष्ट एवम् प्रसन्न समाज में हलचल पैदा की थी, अपितु उसने दो भिन्न जापानी राजनीतिक आर्थिक दर्शन के मध्य विकासरत संकट को तीव्रता मात्र प्रदान की थी।

प्रथम प्रकार उन विचारकों का था जो पाश्चात्य विचारों से पूर्णतः अप्रभावित रह कर तोकूगावा की उभयपक्षी स्थिति का चीनी अथवा जपानी समाधान प्रस्तुत करते थे।[8]

8 कादा तेत्सुजी, मेयजी शोकी-शाकाई केजाई-शिशोशी (हिस्ट्री ऑफ सोश्यो-इकानोमिक थॉट इन दि अर्ली स्टेजेस ऑफ दि मेयजी एम.) टोक्यों, 1937 पृ, 23-28, भाग। अध्याय 3 सामंती व्यवस्था में विरोधाभास "पृ. 100। नवीन जापाजी साहित्य का सर्वेक्षण जांच व्हिटने हाल का लेख" दि तोकुगावा बाकूफू एंड दि मर्चेंट क्लास आर्गेनाइजेशनल पेपर्स ऑफ दि सेंटर फोर, जापानीज स्टडीज, संख्या 1 (1951), एन आर्बर, मिचीगन विश्वविद्यालय प्रेस पृ. 26-33।

9. सौम्राज्य वश डा० नोबुतका आइके (अक्टूबर पुस्तकालय स्टेनफोर्ड में है) ने नार्मन के अध्ययन मार्ग को ग्रहण किया तथा अपनी रचना "दि बिगनिंग्स ऑफ पॉलिटिकल डेमोक्रेसी इन जापान," बाल्टीमूर 1950 विशेषतया दूसरा अध्याय पृष्ठ 18-23 से इस शून्य को भर दिया।

दूसरे विचारक तोकुगावा द्वारा निर्मित सैद्धान्तिक अवरोधों के बावजूद प्रविष्ट पश्चिमी विचारों के प्रभाव के परिणाम थे। इन दोनों को नवीन अथवा गैर परम्परागत संप्रदाय पर एकाधिपत्य प्राप्त नहीं था। नवीन जापानी विचारकों ने ही यह संभव बनाया कि जापान का बौद्धिक वर्ग पश्चिमी सभ्यता से समझौता कर ले जो जापान के लिए पश्चिमी राज्यों के नमूने पर आधारित विश्व के साथ सामंजस्य को संभव बनाये तथा यह प्रक्रिया जापान के लिए किसी भी राष्ट्रीय राज्य के समान पर्याप्त मूल्यवान सिद्ध हुई।

तोकुगावा शासन में रूढ़िवादी तथा गैर रूढ़िवादी दर्शन—

तोकुगावा के संकीर्ण विश्व में जापानी दर्शन की कई विविधताएँ थीं। सरकारी तौर पर बाकूफू ने चूहसी द्वारा प्रतिपादित नवीन कन्फ्यूशियसवाद का समर्थन किया। राजनीति इस विचार पर आधारित थी कि किसी विश्वास का ज्ञान नैतिक नियम के अस्तित्व का प्रतीक था। परिणामत- बुद्धिमान लोगों से यह अपेक्षा की कि वे सामान्य जनता की मार्ग दर्शन करेंगे। जबकि अच्छी शासन प्रणाली शासक की बुद्धिमानी तथा प्रजा द्वारा निष्ठापूर्ण आज्ञापालन पर निर्भर करती थी। इस सिद्धांत ने निरंकुशतन्त्र का समर्थन कर केन्द्रीकृत सामंतवाद का उपयोगी समानांतर प्रस्तुत किया।

शोगुनत का एक प्रसिद्ध परामर्शदाता आराई हकुसेकी (1675-1720 ई.) था। वह संभवतया तोकुगावा काल का महानतम दार्शनिक, विद्वान, तथा राजनीतिज्ञ था। उसने परामर्श, विधि, शाही परिवार मुद्रा, सामाजिक विधि अंधविश्वास तथा विदेशी संबंधों के लिए निम्न परामर्श दिये—(1) स्वर्ण तथा रजत मुद्राओं के लिए सुदृढ़ कोष बनाना (2) मुद्रा के संदर्भ में सरकार को सर्वोच्च अधिकार हो (3) प्रजा के हितों का बलिदान नहीं किया जावे (4) वित्त नीति के लिए उचित रूप से प्रशिक्षित प्रशासकों की नियुक्ति की जावे (5) सरकार को लोकप्रिय समर्थन बनाये रखना चाहिए।

ओग्यू सोराई (1665-1728 ई.) तक कट्टर चीनी दार्शनिक तथा प्रतिष्ठित शुद्धतावादी था। उसने कन्फ्यूशियसवाद तथा मेकसियसवाद की वर्षों पुरानी पुनर्व्याख्या को अस्वीकार किया तथा आर्थिक अर्थों में उसने उदीयमान अर्थ-प्रधान अर्थव्यवस्था के प्रभावों को सशक्त विधि-निर्माण के द्वारा समाप्त करने का प्रयास किया। मिउरा बैन (1723-1787) तथा दाजाई शुंडाई (1680-1747) नामक नीति-शास्त्री तथा अर्थशास्त्री ने इस चुनौती का सामना नैतिक अर्थों में करने का प्रयास किया।[10]

चूहसी के चरम रूढ़िवाद के विपरीत वांग यांग मिंग नामक विचारक ने जापान में कन्फ्यूशियसवाद के पुनरुत्थान का भी प्रयास किया, जो जापान में ओयोमेई के नाम से लोकप्रिय है। वह अपने दृष्टिकोण में अधिक प्रयोगवादी व प्रयोजनवादी था। वांग यांग

10 नोमूरा कानेतारो, इचो चिदाई नो केइसेइका, (इचो, पीरियड स्टेटमेंट टोक्यो 1942, गणमान्य राजनीतिक अर्थशास्त्रियों पर विशेष लेखों का संकलन है। संयोगवश - इनसाइक्लोपीडिया सोश्यल साइंसेज, खण्ड दो पृष्ठ 49 में एकमात्र भूतपूर्व तथा वर्तमान राजनीतिक अर्थशास्त्री आराई हाकुसेकी पर लेख निहित है।

राजनीतिक अर्थशास्त्र के क्षेत्र में तोकूगावा शासन के कुछ आलोचक अपने रचनात्मक उद्देश्यों बुद्धिमत्ता के कारण उल्लेखनीय हैं। उनका स्थान तोकूगावा काल के प्रसिद्ध विचारकों में हो सकता है, किन्तु वे उनसे अपने विचारों में कई पीढ़ी आगे थे।

उस युग का सर्वाधिक योग्य प्रशासक कन्फ्यूशियस विद्वान कुमागवा वंजन (1619-(1691) था। ओक्यामा के दैम्यो के मुख्य सचिव के रूप में कुमागावा अपने स्वामी की एक अच्छे शासक की प्रतिष्ठा के लिए पर्याप्त सीमा तक उत्तरदायी था। कुमागावा के राजनीतिक विचार दैगफि काकूमोन (महानज्ञान के प्रकाश में कुछ सार्वजनिक प्रश्न) नामक रचना में निहित हैं। कुमाजावा ने समुराई वर्ग के विघटन, कृषक-असंतोष तथा बेकारी जैसी सभी सामाजिक समस्याओं का मूल कारण उस आर्थिक कुसमायोजन को माना जो विदेशी व्यापार के बहिष्कार, अत्यधिक अपव्यय तथा कृषि के पतन के कारण उत्पन्न हो गया था। उसने जिन उपायों का प्रतिपादन किया वे किसी भी आधुनिक राजनीतिक दल की सहायता कर सकते हैं। उसके कुछ मूल सुझाव इस प्रकार थे (1) विनिमय के साधन में सुधार (2) कृषि-उद्योग तथा वाणिज्य को प्रोत्साहन (3) जंगलों की सुरक्षा तथा खाद्य-वस्तुओं पर नियंत्रण (4) बेकारी से सुरक्षा (5) कर-व्यवस्था में सुधार तथा (6) परिवार व समाज संबन्धी रीति-रिवाज का सरलीकरण। उसके विचारों को इतना क्रान्तिकारी समझा गया कि उसके जीवन के अन्तिम पांच वर्षों में उसे उसके घर में बंदी बना कर रखा गया।

होंडा तोशिकाई ने अथवा होंडा रिमेई (1744-1821) ने कुमाजावा द्वारा स्थापित परंपरा को बनाये रखा। तोकूगावा विचारको में से सर्वाधिक प्रगतिशील विचारकों के रूप में उसने गणित, ज्योतिष, नौ शिक्षा, राजनीति तथा अर्थशास्त्र से सम्बन्धित सभी विषयों में रुचि ली। ईमानदारी से वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग करने पर उसने स्वयं को एशियाई चिंतन से विपरीत पाया। राष्ट्रवादी विचारकों के समान वह कन्फ्यूशियसवाद का भी विरोधी था। उसकी रचना के साईहिसाकू (राजनयिकता पर एक गुप्त रचना) मालथस के विश्लेषण का रोचक एशियाई प्रतिरूप प्रतीत होता है। होंडा ने व्यापारिक जहाजों पर व्यापार, उपनवेशीकरण तथा उद्योग पर सरकारी नियंत्रण की चर्चा की संक्षेप में उसने राज्य समाजवाद का समर्थन किया। ऐकाई मोनोगातारी (पश्चिमी देशों की कथा) में उसने काराफुतो (साखलिन) तथा कामचतक प्रदेशों के औपनिवेशीकरण का समर्थन किया। अन्तर्राष्ट्रीय अन्रभिरता में अपने विश्वास के कारण उसने बाकूफू द्वारा रूस के साथ व्यापार के प्रस्ताव को ठुकरा दिये जाने पर निंदा की।[13] 1792 में एक अन्य राष्ट्रभक्त विद्वान्, रिन शेहेई (अथवा हयाशी गिहई) ने केई कोकू हैदन (एक नाविक राज्य की सैनिक समस्याएं) प्रकाशित कीं।

एंडोशेकेई जापानी चिंतन की सामान्य चार-दिवारी ने 1700 के लगभग वर्तमान एकिता क्षेत्रों में जन्मा था। उसने सरकारी कुल के संरक्षण में यूरोपियन औषधि-विज्ञान का अध्ययन किया था इस प्रकार अध्ययन शोगुन योशिमुने द्वारा आंशिक रूप से पाश्चात्य ज्ञान पर नियंत्रण उठाने के पश्चात् संभव हुआ था। एंडो अध्ययन के लिए विदेश जाना पड़ता

13. कुमाजावा की रचन देवाकु वाकुमोन का अनुवाद गेलन एन फिशर ने टी. ए. एस जे. में अंक सोलह (मई 1938 पृ. 259–356 में किया है।

था, किंतु कठोर बहिष्कार के आदेशों के कारण उसे अपना विचार त्यागना पड़ा। उसकी प्रमुख रचना शिसेन शिनेदो क्योटो में 1753 में प्रकाशित हुई। एंडो की रचना शिजेन शिनदो का स्वरूप, जैसा कि इसका शीर्षक "प्रकृति व श्रम के तरीके" इंगित करता है, भू-अर्थशास्त्रियों का था।[14] अन्य सभ्यताओं के भू-अर्थशास्त्रियों के समान एंडो ने कृषकों को उत्पादक वर्ग के रूप में स्वीकार किया तथा समुराईयों को ऐसे बेकार लोग माना जो अनुत्पादक थे तथा राष्ट्र के लिए जूं के समान पराक्रमी थे।

एंडो उल्लेखनीय रूप से समतावादी भी था। वह जापान के राजनीतिक दर्शन में विशिष्ट है, क्योंकि उनसे स्थानीय विषय वस्तु से समतावाद का विकास किया। अपने विचारों के चरमोत्कर्ष में उसने लिखा कि "शासन करना भी स्वयं एक अन्याय हैं।"

व्यवहारिक अर्थों में उसने दैम्यो अधिकारियों के रूपान्तरण का समर्थन किया तथा यह कहा कि एक मात्र संप्रभुता के लिए एक मात्र संप्रभु हो। व्यापारियों तथा प्रशासकों को उत्पादक वर्ग में विलीन कर दिया जाए बेकारों को कृषि के लिए छोटे कृषियोग्य भूमि के टुकड़े आवंटित किये जाएं तथा अर्थ-प्रधान अर्थव्यवस्था के स्थान पर वस्तु-विनिमय-व्यवस्था स्थापित की जाए। एंडो जापान साहित्य की प्रगति के उच्च स्तर का प्रतीक है।

पश्चिमी समर्थक विचारक

महान् अराई हकुसेकी उन रूढ़िवादी जापानियों में से था जिसने तोकूगावा की बौद्धिक घेरेबंदी की भर्त्सना की, क्योंकि यह पूर्णत. शुद्ध विद्वान्-चिंतन के लिए बौद्धिक समग्रता तथा स्वतंत्रता का अपमान करती थी।[15] इस प्रतिबंध की कठोरता के बावजूद अधिकारियों का डच लोगों से संपर्क था। नागासाकी से जापानी बाह्य विश्व को देखने का प्रयास करते थे तथा अपने कार्य को चतुरतापूर्ण ढंग से करने के लिए वे बाह्य विश्व के बारे में जो कुछ सीखते थे उससे उन्हें रोका नहीं जा सकता था।

गेनरोकू काल से ही 1688-1703 निशि कावा जोकेन ने एक पुस्तक लिखी, जिसका शीर्षक आंग्लभाषा में इस प्रकार कहा जा सकता है, '-पॉली हिस्टोरिकल डिस्क्रिप्शन

14. "इ हवर्ट नार्मन" एंडो शोकेई एंड दि एनाटोमी ऑफ जापानीज फ्युडलिज्म" टी ए एस जे तृतीय शृंखला अंक 11 (दिसम्बर 1949) नामक रचना, एंडो की रचना शिजेन शिनेइदो दि वे ऑफ नेचर एंड लेबर) तथा टोडो शिदेन (ए ट्रू एकाउंट ऑफ सुप्रीम वे) का पूरक है। खंड एक के चौथे तथा पांचवे अध्याय तोकुगावा वर्ग पर एंडो की टिप्पणियों, एंडो की शैली पर टिप्पणी तथा सामंती समाज पर उसके प्रहारों का साराश है। जो पशुओं के परस्पर व्यंगात्मक बातचीत में प्रस्तुत किया गया है। अध्याय छ: मे एंडो की आशाओं सुधारों उसकी योजना तथा उसके आदर्श के बारे में है। नार्मन की रचना जापानी चिंतन के समर्पण तथा उन्मुक्ति के पश्चात सामग्री पर आधारित सर्वोत्तम पुस्तक है।

15. अराई हाकुसेकी को सरकारी तौर पर "रोम से आये व्यक्ति" से प्रश्न पूछने का कार्य सौंपा गया (जिसे वह पसंद भी करता था) यह व्यक्ति निश्चय ही मेरे सिद्धातो था। देखिये डब्लू बी राइट का लेख "दि केप्चर एंड केपटिविटी ऑफ पियरे गिओवानी बटिस्टा सिदोती इन जापान फ्रोम 1709 टू 1715" टी. ए. एस. जे अंक नौ खंड दो (अगस्त 1881) पृष्ठ 156–172।

ऑफ दि कामर्स ऑफ चायना एंड दि बार बेरियन कंट्रीज"। स्वयं अराई हेकूसेकी ने विदेश मामलों के बारे में दो पुस्तकें लिखीं।[16]

पाश्चात्य ज्ञान का अन्य स्रोत यूरोपियन साहित्य का चीनियों द्वारा किया गया अनुवाद था। 9 वीं शताब्दादी के मध्य तक जापान में ये पर्याप्त परिचित हो गये थे।

जापनी चिंतन पर डच लोगों का प्रभाव मुख्यतया दो विशिष्ट क्षेत्रों पर पड़ा। जिनमें जापानियों ने स्वयं को डच लोगों से पिछड़ा हुआ स्वीकार लिया था। ये दो क्षेत्र चिकित्सा-विज्ञान, विशेषतया शल्य-चिकित्सा तथा युद्ध में तोपखाना तथा किलेबंदी थे। 1720 में शोगुन योशिमे द्वारा प्रेपित पश्चिमी पुस्तकों के बारे में लाइसेंस के क्रियान्वित होने के पश्चात् तथा 1744 के बाद डच लोगों व नागासाकी में यूरोपियन विज्ञान का अध्ययन करने के इच्छुक जापानियों के मध्य वैयक्तिक संपर्क की स्थापना की छूट देने के बाद से तोकूगावा चिंतन में डच दर्शन (रंगाकुशा) एक प्रमुख संप्रदाय बन गया[17] रंगाकुशा में भी दो संप्रदाय थे जो इदो (वर्तमान टोक्यो) के दो जिलों के नाम पर बनाये गए थे। शितामाची संप्रदाय मात्र चिकित्सा-विज्ञान का अध्ययन करता था तथा बयमानतो संप्रदाय पाश्चात्य ज्ञान की अन्य शाखाओं का अध्ययन करता था।

इस पाश्चात्य ज्ञान का अध्ययन करने वाले संप्रदाय की विशेषता बाद के दो विचारकों, वातानाबे नोबारू तथा तकानो नागाहिदे, के जीवन काल से ज्ञात होती है।

वातानाबे 1794 में पैदा हुआ था। उसने चीनी अध्ययन की आलोचना की तथा पश्चिमी ज्ञान को बढ़ावा देने के लिए एक अवैधानिक क्लब बनाया। उस पर दंडस्वरूप 1839 में मुकदमा चलाया गया। उसका अपमान किया गया तथा उसने 1840 में आत्महत्या कर ली। 1870 में जापानी सरकार ने फिर उसे क्षमादान दे दिया। उससे दस वर्ष कनिष्ठ तकानो ने इदो में चिकित्सा विज्ञान का अध्ययन किया तथा पृथकता व गलत धाराओं के बावजूद उसने ब्रिटिश साम्राज्य को समझाने का प्रयास किया। उसकी यह धारणा थी कि ब्रिटेन विश्व का सर्वाधिक शक्तिशाली देश था। अपने विचारों का प्रचार करने के लिए उसने

16. कुछ ही शीर्षक सामान्य भूगोल तथा औषधि विज्ञान से राजनीति की प्रवृत्ति को स्पष्ट कर देंगे। आराई हाकूसेकी सेरन इगें। विदेशी भू पटल रचना तथा सैमो किवून (नोट्स ऑफ थिंग्स) उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में, कुकिची शोको जुसेत्सु (पश्चिमी विश्व को स्पष्ट करने वाले रेखा चित्र, 1789) योशियो सेन, अन्याकुरिया जिन कैईनोगी (ऑफ दि कलेक्टर ऑफ दि इंगिलिश 825) योनी रिन्सो के एक डच भूगोल का अनुवाद इतना व्यापक है कि वह ब्रिटिश संवद चीनी अध्यापकों तथा वेई यवान हाई कुओ तु चीफ सामुद्रिक राष्ट्रों का सोदाहरण आलेखन 1844 निहित करता है, उसे जापान में पुनः प्रकाशित किया गया तथा जापान में इसे व्यापक तौर पर पढ़ा गया। ये रचनाएं तथा असाई किनोगो की अन्य रचानाएँ मेयजी रिकेन शिसों नो वार्केस इवकोजी शिकाई केइदो नो एइक्यो (दि फ्लुएंस ऑफ ब्रिटिश पार्लियामिंट्री सिस्टम आन मेयजी कांस्टीट्यूशनल थॉट) टोक्यो, 1939 इके द्वारा उद्धृत पूर्वोद्धृत पृष्ठ 16-27)।

17. के मित्तसुकुरी का टी. ए. एस. जे में प्रकाशित लेख "दि अर्ली स्टडी ऑफ डच इन जापान" अंक पांच (फरवरी, 1877 पृष्ट 207-216 सी आर बाक्सर नोट्स आन अर्ली यूरोपियन इन्फ्लुएंस ऑफ जापान (1542-1853 पूर्वोद्धृत अंक आठ (दिसम्बर, 1951) पृष्ट 67-97 सेनसन दि वैस्टर्न वर्ल्ड उद्धृत में तागामिया शुहान (1789-1866 के जीवन काल का वर्णन विस्तार से किया गया है जिसने सैनिक विज्ञान के अध्ययन में अपना जीवन लगा दिया तथा सकुमा शोजान (1798-1866) का वर्णन है जो पश्चिम द्वारा बारूद तथा राजनीति में किये गये विकास से अत्याधिक प्रभावित हुआ। अध्याय 11. पृ. 249-253

एक पुस्तक 'दि ड्रीम' लिखी जिसके लिए 1839 में उसे गिरफ्तार कर लिया गया तथा उसे आजीवन कारावास का दंड दिया गया। बाद में वह जेल में आग लगने के समय बच कर भाग गया। कुछ वर्षों तक छुपता फिरा तथा अंत में जब पुलिस ने उसे पकड़ा तो उसने आत्महत्या कर ली।[18]

तोकूगावा शासन की दीर्घ गोधुलि

हॉलैंड के राजा विलियम द्वितीय मे 15 फरवरी 1844 को एक पत्र तोकूगावा शोगुन को लिखा, जिसमें उसने जापान पर से विदेशियों के लिए लगाए गए प्रतिबंधों को हटाने का परामर्श दिया। राजा विलियम के पत्र का मूल विचार निम्न प्रकार से था।

"सर्व शक्तिमान सम्राट् को हमारा यह मित्रतापूर्ण परामर्श है, कि इससे पहले कि सम्पन्न जापान युद्ध के कारण नष्ट हो जाए, विदेशियों के विरुद्ध कानून को उदार बना दें। हम सम्राट् को यह परामर्श पूर्ण ईमानदारी से दे रहे हैं तथा यह किसी भी राजनीतिक स्वहित से पूर्णतः मुक्त है"।[19]

जापान के विदेशों के प्रति उन्मुक्त होने की प्रक्रिया पर्याप्त जटिल है। सामान्यतया इतना कहना पर्याप्त होगा कि प्रारम्भ में पश्चिमी जहाजों ने जापानी समुद्री तट पर जापानी अधिकारियों से संपर्क स्थापित करने का प्रयास किया तथा यह अवसर 18 वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से वास्तविक रूप में उन्मुक्त किए जाने तक बढ़ते गए। 1853 में पैरीमिशन के जापान आने से चालीस वर्ष पूर्व से जापानियों को यह चेतावनी मिल रही थी कि देर-सवेर विदेशी शक्तियाँ तोकूगावा शासन के विरुद्ध अधिक कठोर नीति का अनुसरण कर सकती है तथा उनके प्रति आंखे मूंदने से जापान उनके अस्तित्व का निषेध नहीं कर सकता था। तोकूगावा शामन की यह दीर्घ तथा दुर्भाग्यपूर्ण गोधूलि वेला जापानी इतिहास में बाकूमारसू कहलाती है।[20]

18 पर्याप्त प्रचलित "दि युमे मोशोगातारी (स्वप्न)" इतना लोकप्रिय हुआ कि इस पुस्तक की अपरिष्कृति अनुकृतियों जैसे (लोकप्रिय स्वप्न) प्रकाशित की जाने लगी ओशार्दा वैंजोरो ने तकानो का जीवन वृतांत तैयार करवाया। इसके परिशिष्ट में तकानो की सर्वाधिक प्रसिद्ध रचनाओं को रखा गया है जिन्होंने आंशिक रूप से डी. मी ग्रीन ने अनुवादित भी किया है। वातानावे का एक मनोरंजक रेखाचित्र सुश्री वार्ल्ड द्वारा "दि लाइफ ऑफ वातानावे तोवारु" टी. ए. एस जे 32 वां अंक भाग 1 (मई 1905) में दिया गया है।

19 विलियम का पत्र ग्यारहवें शोगुन इमोशी को लिखा गया था किंतु इसका उत्तर बाकूफू ने दिया इस मैत्री पूर्ण परामर्श की उपेक्षा की गई क्योंकि बाकूफू अधिकारियों के अनुसार इस प्रकार का प्रयास पूर्वजों के कानून के विपरीत होता। डा.नितोनै इनाओ ने जापान व संयुक्त राज्य अमेरिका के मध्य इस पत्र व्यवहार की चर्चा अपनी पुस्तक इंटर कोर्स बिटवीन यूनाईटेड स्टेट्स एंड जापान, वालीपुर, 1891, पृ. 2 वातानावे शुजिरो, सेकाई नी ओ केस निहोनजी (दि जापानीज इन दि वर्ल्ड) टोक्यो 1897 पृष्ठ 20/जापानी रचना तथा व्याख्या निहित करता है, देखिये डी सी ग्रीन कोंस्टेसपोंडेस बिटवीन विलियम सकिंड ऑफ होलेंड एंड दि शोकुनेत ओंध जापान, 1844 टी. ए एस. जे चौबीसवां अंक (जुन 1907) पृष्ठ 99-132।

20. पश्चिम के साथ प्रारंभिक संपर्क का क्रम एक सुपरिचित कथा है। जिसका वर्णन कूटनीति के अनेक अधिकृत इतिहासों में मिलता है। जापानी दृष्टिकोण से इन घटनाओ के सर्वेक्षण तथा जापानी मत के प्रभाव के लिए देखिये कादा, मेयजी शोकी शाकाई केइनाई शिशो शो पूर्वोद्धृत पृष्ट 28 तथा भाग 1, अध्याय 1 काउंट सोईशिया जापानस फौरेन रिलेशन्स" ओकूमा द्वारा संपादित पुस्तक फिफ्टी इअर्स ऑफ न्यू जापान 'पूर्वोद्धृत संख्या 1, अध्याय 4। सैंसद की रचना दि वैस्र्टन वर्ल्ड पूर्वोद्धृत, अध्याय 12 पृष्ठ 278-81 में पैरी मेसन का मनोरंजक विवरण दिया गया है।

कमाडोर पैरी का भानुमती का पिटारा–

कमाडोर मैथ्यू केलब्रेथ पैरी की नियुक्ति मार्च 1852 में जापान के साथ संबंध स्थापित करने के लिए की गई थी। उसने एक ऐसी सेना का संचालन संभाला, जो उससे किसी अन्य अधिकारी के अन्तर्गत संगठित एवं तैयार हुई थी। इसके निर्देश शांत किन्तु दबाव पूर्ण थे। जब संयुक्त राज्य अमेरिका के बंदरगाह पर जहाज तैयार हो रहे थे तब नीदरलैंड ने जापान के बाकूफू को अमेरिका की योजनाओं के बारे में चेतावनी दे दी थी।

8 जुलाई 1853 को पैरी ने टोक्यो की खाड़ी में चार जहाजों के साथ डेरा डाला–ये जहाज जापानियों को विशालकाय, अस्वाभाविक रूप से काले तथा वाष्प शक्ति एवं तोपखाने में आंतकित करने वाली शक्ति के लगे। पैरी पर्याप्त कूटनीति पूर्ण ढंग से मात्र दस दिन रहा तथा अमेरिकी राष्ट्रपति का पत्र जापान के सम्राट के लिए छोड़ गया।

सम्राट को सम्बोधित करते हुए स्वयं अमेरिकी भी विश्वस्त नहीं थे कि वह पत्र सम्राट तक ही पहुँचेगा। अन्य पश्चिमी देशों के समान अमेरिका के लोगों को भी जपान की विचित्र राजनीतिक संस्थाओं के बारे में जानकारी प्राप्त हो चुकी थी। वे एक दुर्बल सम्राट जिसे शोगुन समझते थे के बारे में सुन चुके थे तथा उनके विचार में उसकी शक्ति एक ओर भी दुर्बल धार्मिक सम्राट अथवा अर्द्ध पोप से भी सीमित थी। 13 फरीवरी 1854 तक पैरी जापान से दूर रहा और जब वह वापिस आया तो उसके परिणाम अच्छे थे। जापानियों में न तो भौतिक शक्ति थी और न नैतिक शोगुनन सरकार तथा अमेरिका की सरकार के मध्य कनागावा की सन्धि हुई जिसने बंदूक की नली के नारे पर जापान को अमेरिकियों के लिए खोल दिया। अमेरिका को सुविधा देने के पश्चात् जपान को अन्य पश्चिमी शक्तियों को भी शीघ्रता से सुविधा देनी पड़ी। ब्रिटेन ने अक्टूबर में तथा अगले वर्ष रूस तथा हालेंड ने भी इस प्रकार की संधियां कीं।[21]

कमोडोर पैरी द्वारा खोला गया भानुमती का पिटारा फिर कभी बंद नहीं होगा। जहां तक जापान की घरेलू संस्थाओं तथा राजनीति का सबंध है जपान के उन्मुक्त होने का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। विश्व राजनीति में भी जापान के एक महान् शक्ति के रूप में प्रवेश ने प्रारम्भ से ही शक्तिपूर्ण स्वतन्त्र भूमिका अदा की है। यह दुर्भाग्य पूर्ण है कि आधुनिक जापानी सभ्यता के दो गंभीरतम संकट, कमाडोर पैरी द्वारा जापानी को उन्मुक्त करना तथा मिसौरी पर जनरल मैकार्थर के सामने जापान का आत्मसमर्पण, ये दोनों घटनाएँ संयुक्त राज्य अमेरिका के पोत पर घटित हुई।

जापान में पैरी के प्रवेश के पश्चात् की घटनाओं का विश्व राजनीति पर प्रभाव देखने के लिए कुछ समय जापान के राजनीतिक विकास को छोड़ कर हमें जापान में पैरी द्वारा लाई गई सेना के प्रभाव को देखना होगा। पैरी मैसन के द्वारा प्रारम्भ किये जाने के पश्चात् जिस ढंग से जापान हिंसात्मक रूप से सक्रिया हुआ उसका प्रभाव अमिजन की घाटी से एशियाई साईबेरिया के ध्रुव तक तथा पोलैंड के भूमिगत पूर्वप्रशिया से जावा में इंडोनेशिया के उदय तक प्रकट हुआ।

21. इस प्रारंभिक कूटनीतिक पत्र व्यवहार का नवीनतम विवरण जो अमेरिका रुचि को अधिक महत्त्व प्रदान करता है "एल इवान एलिस" ए "शार्ट हिस्ट्री ऑफ अमेरिकन डिप्लोमेसी न्यूयार्क 1911" विशेषतया अध्याय 15, दि फारईस्ट जापान आर्थर क्लेरेंस वालवर्थ की रचना "ब्लैक शिप्स ऑफ जापान, "दि स्टोरी ऑफ कोमोडोर पेरीज, एक्सपीडीशन न्यूयार्क, 1946।

तोकूगावा विरोध का पुनरुदय–

जापानी मामलों में आंतरिक रूप से इस बात की संभावना बढ़ गई कि तोकूगावा परिवार अथवा बाकूफू संस्था के विरोधी दवाव संगठित होकर जापनी जीवन में किसी प्रकार की अव्यवस्था उत्पन्न करेंगे।

पैरी की माँगों को स्वीकार करने के पश्चात् उत्पन्न हुई गड़बड़ी में तीन दल अभूतपूर्ण कूटनीतिक स्थिति को संभालने के लिए सक्रिय हो गये। इसी समय शोगुनल के उत्तराधिकारी के प्रश्न ने समस्या और जटिल बना दिया। सर्वप्रथम सक्रिय राजनीतिक दवाव बाहरी दैम्यो का संगठन था जिसे तोजायो दैम्यो कहा जाता है। जिन्हें किसी भी प्रकार के संकट की प्रतीक्षा थी ताकि वे अपने वंशानुगत विरोधियों के विरुद्ध कार्यवाही कर सकें। तोज्या संगठन में तथा उनके कुलों में भी शाही संतुलन धीरे धीरे युवा समुराई लोगों में निहित होता जा रहा था। ये लोग स्वयं कुत्तों से तथा उन अन्य अवसरवादी समूहों से मिले हुए थे जिन्होंने पूरे एक हजार वर्ष तक सत्ता की पुनर्स्थापना का प्रयास किया था। इस अस्थिर तथा शिथिल संगठन में तत्व उन संपन्न व्यापारियों का था, जो बाकूफू व्यवस्था की सीमाओं में फल फूल चुके थे तथा जो वर्तमान व्यवस्था से परे ऐसी व्यापक तथा नमनीय व्यवस्था चाहते थे जो उनकी दक्षताओं को पूर्णरूप से फलने-फूलने का मौका दे।[22]

पैरी मिशन के आगमन ने जापान की आंतरिक व्यवस्था में भयंकर संकट उत्पन्न कर दिया। पैरी की मात्रा ने जापानी जीवन में पर्याप्त हलचल पैदा कर दी तथा परिणाम स्वरूप जो संधियाँ हुई, वे पहले की बहिष्कार की नीतियों की तुलना में अत्यधिक असंतुलित थीं। अब तक जापानी जीवन के सामाजिक तथा आर्थिक कारकों में जो संवेदनापूर्ण संतुलन था वह नष्ट हो गया तथा ये कारक एक दूसरे के विरुद्ध उग्र कार्यवाही में जुट गये।

शोगुनल के उत्तराधिकार के प्रश्न यद्यपि जापान के राजनीतिक इतिहास के महत्त्वपूर्ण अंश हैं तथापि वे जापान के संविधानात्मक तथा सरकारी संरचना में अनिवार्य रूप से महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों को परिवर्तित नही करते है। दुर्बल शोगुनल इयेयोशी के दो प्रतिद्वंद्वी तोकूगावा कुल के उत्तराधिकारियो में जिस प्रकार संघर्ष था तथा जिस प्रकार 1853 के सर्वाधिक सकट के समय इयेयोशी मृत्यु हुई, उसने राजनीतिक दृष्य को अत्यधिक अस्पष्ट बना दिया तथा जिन मूल सामाजिक व संस्थागत प्रश्नों का जापानियों को बाद में समाधान करना था वे वैयक्तिक संघर्षो के पीछे छिप गये।[23]

पैरी की मांगों की तत्पर प्रतिक्रिया के रूप में भी बाकूफू शासन ने दो भयंकर राजनीतिक भूलें की। इसने सम्राट को परामर्श का आग्रह किया, इस प्रकार स्वयं अपने प्रतिद्वंद्वी सम्राट की शक्ति को स्वीकारा। जो स्वयं शोगुनल सरकार के औचित्य को चुनौती दे सकता था। बाकुफू ने दैम्यो का परामर्श भी मागा तथा इस प्रकार दैम्यो को उन प्रश्नों

22. इस आदोलन के विभिन्न चरणो का वर्णन डबल्यू मेक्लेर "ए पॉलिटिकल हिस्ट्री ऑफ जापान ड्यूरिंग, दि मेयजी एरा, 1867-1912 लदन तथा न्यूयार्क 1966 प्रथम अध्याय तथा मरडक पूर्वोद्धृत खंड तीन, अध्याय अठारह, "दि फाल आफ बाकूफू हैं।

23. तोकुगावा राजनीति के शासन के अन्तिम दिनो के विभिन्न चरणो के लिये देखिये हौंबो इजिरो की बाकुयातसु नो शिसेइसाकु (बाक्‍फू के अंत में नई राजनीति) टोक्यो 1935 तथा उसकी रचना सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास का अंग्रेजी अनुवाद, पूर्वोद्धृत, अध्याय ग्यारह "दि मेन आफ दि डे" पृष्ठ 317-319।

पर विचार व्यक्त करने के लिये उकसाया जो इदो सत्ता ने कई पीढ़ियों तक गुप्त तथा अविवादास्पद माने गये थे ।[24]

कुलों का परामर्श :

जो समूह व्यवस्था उत्पन्न कर सकते थे तथा संगठित व सक्रिय थे उनमें से सबसे अधिक तत्पर बाहरी कुल थे । दक्षिण के तोजामा अत्यधिक सतर्क थे तथा किसी भी आंतरिक संकट में बाह्य दबाव तथा नवीन पश्चिमी ज्ञान से उपलब्ध अवसर पर हस्तक्षेप करने को तैयार थे । विशेष रूप से ये कुल वे थे जो 1853 से पूर्व वाणिज्य व उद्योग की प्रगति से सर्वाधिक प्रभावित हुए थे तथा इनमें उग्र जापानी पूँजीवाद गहराई तक पैठ चुका था । इनके तात्कालिक उद्देश्य व्यावहारिक तथा उग्र थे । ये पर्याप्त मुद्रा संचय करना चाहते थे ताकि वे शस्त्रों का निर्माण प्रारम्भ कर सके तथा वे स्वयं को सामंती दैम्यो के आधारकी स्थिति से स्थानांतरित कर व्यापारी पूँजीवाद से कार्यकारी गठबंधन जोड़ना चाहते थे ।

तोजामा संगठन किस प्रकार व किन लोगों से प्रभावित हो सकता था, इस पर जापान में नवीन संवैधानिक इकाईयों का निर्माण निर्भर करता था । इस संगठन की सफलता चार उल्लेखनीय कुलों के जिसने सदस्यों के निजी चातुर्य तथा सामूहिक उत्साह का परिणाम थी, जापान के इतिहास के आगामी नये वर्षो में प्रमुख भूमिका अदा की । ये चार कुल सतसुमा, चोसू हिजेन तथा तोसा थे । सतसुमा में से संगो ताकानोरी नामक नेता तथा चोसू कुल से दूसरे किदो तेकायोशी ने ऊपरी व्यवस्था करने में सहायता की । स्वयं इन नेताओं का व्यक्तित्व यह स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त है कि किस प्रकार प्रत्येक कुल निम्न कुलिय नेतृत्व के अधीन आया तथा इसने तोकूगावा-विरोधी आंदोलन को बढ़ावा दिया । किदो की प्रेरणा का यह मूल स्रोत पर्याप्त पुरातत्ववादी लगता है कि वह सम्राट के लिए हार्दिक रूप से निष्ठा रखता था, जबकि सैंगो का संघर्ष सैनिक सत्ता प्राप्त करने के लिए प्रतीत होता है, ताकि वह अपने कुल के लिए महत्त्वपूर्ण स्थिति प्राप्त कर सके ।

प्रारम्भ से ही इन कुलों ने विरोध तथा औरस संतान के प्रश्न को जटिल रूप से मिश्रित कर दिया गया था । सतसुमा ने एक सामान्य कुल के समान प्रयास प्रारम्भ किये तथा 1861 तक इसने दैम्यो के दरबार तथा शोगुनेरा के मध्य समन्वय स्थापित कर तथा संपूर्ण बाकूफू व्यवस्था में सुधार कर समाधान ढ़ूढ़ने का प्रयास किया था । तथापि चोसू के नेतृत्व में उग्रवादियों ने विदेशियों के निष्कासन बाकूफू की भर्त्सना तथा दीर्घ काल से निष्क्रिय साम्राज्य की पुनर्स्थापना की मांग की ।

स्वयं चोसू कुल के लोग भी दो गुटों में विभाजित थे । जोकुरोंतो नामक गुट (उग्र दृष्टिकोण वाला दल) (ईवेयो दृष्टिकोण वाले दल) के समर्थकों से संघर्ष ईदे हो गए । विशिष्ट जापानी उग्रवादिता के साथ जोकुरोंतो जब तक शक्ति में रहे, जब तक उन्होंने

24. अमेरिकी जहाजों के आने के पश्चात् कई दैम्यो का यह विचार था कि शोगुनेत द्वारा निष्कासन की नीति को बनाये रखना सम्भव नहीं था । कुछ ने अमरिका के साथ सम्पूर्ण सम्बन्धों का समर्थन किया, कुछ ने सीमित व्यापार की बात की, कुछ ने युद्ध करने की सलाह दी, तथा कुछ ने सम्पूर्ण व्यापार समाप्त कर देने का परामर्श दिया । इन सब दृष्टिकोणों में सम्राट् का समर्थन किया गया तथा तोकूगावा विरोधी राजनीति के लिये अवसर उत्पन्न किये गए । देखिये होंगो हृजिरो की रचना "दि व्यूज ऑफ दी वेरियस सेन्स ऑन दि ओपनिंग ऑफ दि कंट्री" क्योटो यूनिवर्सिटी इकोनोमिक रिव्यू अंक ग्यारह संख्या 1 (जुलाई 1936) पृष्ठ 16-31

व्यावहारिक रूप से विदेशियो को खदेड़ने का प्रयास किया तथा अमेरिकी तथा यूरोपियन जहाजों पर बमबारी की। किन्तु जैसे ही इन अनुदारवादियों ने महसूस किया कि विदेशियों का पूर्ण निष्कासन संभव नहीं था क्योंकि ये लोग सुरक्षा पूर्वक ढंग से जापान में से दूर समुद्र अपने युद्धपोत रख सकने को तथा अवसर पड़ने पर धीरे धीरे संपूर्ण जापान को जला सकते थे। तो उन्होंने सत्ता उदारवादियों को सौप दी। चोसू के उदारवादियों में से एक युवक अधिकारी ने पहले के तीन सूत्रीय कार्यक्रम में थोड़ा संशोधन किया। उसे सम्राट की शक्ति की पुनर्स्थापना वाकूफू प्रशासन की भर्त्सना तथा विदेशियों के स्थान पर उनसे मैत्रीपूर्ण सवंधों की मांग की। इसी युवक ने बाद में राजकुमार इतो हिरोकूमी के नाम से जापान के इतिहास में बाकूफू को अपदस्थ करने की मुख्य भूमिका अदा की।

प्रतिक्रिया के माध्यम से—

तोकूगावा विरोधी विद्वानों तथा तीव्रता से पतनोन्मुख बाकूफू अधिकारियों के मध्य संघर्ष एक संयोग का परिणाम था विद्रोहियों ने कुछ युद्ध तथा षड़यन्त्र करने में बड़ी चतुरता तथा दक्षता का परिचय दिया था। चोसू तथा सतसुमा ने स्वयं षड़यन्त्र रचना प्रारम्भ किया तथा बाद में शोगुनल पुलिस ने उन्हें वहां से निष्कासित कर दिया गया। बाद में उन्होंने सम्राट से भी संपर्क स्थापित किया तथा उसे सिंहासन त्यागने की योजना के लिए स्वेच्छा से तैयार कर लिया। 1864-75 के आंदोलन के दौरान लॉर्ड रहित रोनिन लोगों से दक्षिणी कुलों की सेनाएँ भर गई तथा इन लोगों ने यह प्रदर्शित करने का प्रयास किया कि जापान में मात्र समुराई वर्ग ही लड़ने की शक्ति का एकाधिकार नहीं रखता था। ये सभी षड़यन्त्र तथा संकट अपने प्रभाव में पर्याप्त दूरगामी साबित हुए। इन्होंने सामंतवाद से पूंजीवाद की ओर परिवर्तन की गति तेज बनादी तथा उन्हें ऐसी अनुदारवादी निष्ठा का प्रतीक माना गया जो पर्याप्त प्रतिक्रियावादी रोमांटिक तथा पुरातत्ववादी था।

कुगे के कुलीन लोगों में जो लगातार सात शताब्दियों तथा स्थानच्युत रहे तथा अत्यधिक निर्धनता में दिन काट रहे थे, अपने वर्ग को वापिस सत्ता में लाने का अवसर देख रहे थे परंमपरागत रूप से निष्क्रिय तथा शक्तिहीन सम्राट के अधिकारियों के रूप में रहने के बाद उन्हें अब वास्तविक राजनीति का स्वरूप पर्याप्त प्रेरणापूर्ण लगा तथा वे भी षड़यन्त्र के कार्यक्रममें सम्मिलित हो गए।

यदि विद्रोही कुल के दैम्यो अपने लोगों को नियन्त्रित करने में सफल रहते तो यह संभव है कि जापान आधुनिक युग में तुच्यून कालीन चीन के गणराज्य के समान, विभिन्न क्षेत्रों के संघ के रूप में प्रवेश करता। किन्तु युवा समुराईयों का प्रभाव इतना अधिक बढ़ा कि बाकूफू के पतन के साथ दैम्यो का भी पतन हुआ तथा ये कुल एक नवीन तथा केन्द्रीकृत साम्राज्य को संगठित करने वाले सीमेंट के रूप में काम आये।

जापानियों ने इस संपूर्ण शताब्दियों के दौरान प्रणाली की औपचारिकताओं को अत्यधिक परिश्रम से इस प्रकार बनाये रखा कि सम्राट का सिंहासन तब भी सैद्धान्तिक रूप से जापानियों को स्वीकार था। यद्यपि इसने शासन के यंत्र के रूप में 1192 से (1333 1335 के दैंगो की पुनर्स्थापना के काल को छोड़ कर) कोई कार्य नहीं किया था। अंदरूनी दृष्टि से शाही परंपरा ने बाकूफू विरोधी आंदोलन को सफलता की गारंटी प्रदान की, विदेशी विरोधी अभियान 1863 के प्रदर्शनों तक साम्राज्य के लिए अच्छा रहा, किन्तु तत्पश्चात् सम्राट के पुनर्स्थापनावादी भी आश्वस्त हो गए कि विदेशियों का निष्कासन नैतिक रूप से

संभव नहीं था क्योंकि उनसे टक्कर ले सकने वाली सेनाओं का अभाव था। जब एक बार सम्राट पुनर्स्थापनावादी समूह विदेशियों के प्रति समझौते के दृष्टिकोण के प्रति उन्मुख हुआ तो यह स्पष्ट हो गया कि भविष्य में जापान में चाहे किसी भी समूह की विजय हो, समुद्री राज्यों की उपस्थिति को अब राष्ट्रीय सरकार स्वीकार लेगी तथा वृहत पैमाने पर वह पश्चिमी राज्यों से समझौता करने का प्रयास करेगी।

विद्रोही दैम्यो तथा दरबार के समानांतर तीसरे प्रमुख तत्व के रूप में व्यापारी वर्ग ने प्रमुख भूमिका अदा करना प्रारम्भ किया। विदेशी व्यापार 1858 तक गंभीर रूप से प्रारम्भ नहीं हुआ था। किन्तु जब वास्तव में यह प्रारम्भ हुआ तो जापान में सोने के अत्यन्त कम मूल्य थे जापानी अर्थव्यवस्था मे भीषण संकट उपस्थित कर दिया। विश्व में सब जगह सोने का मूल्य चांदी से पंद्रह अथवा सोलह गुना अधिक था किंतु जापान में यह मात्र पाँच गुना अधिक था। अब जापान के किसी भी बंदरगाह, पर यदि कोई व्यक्ति पर्याप्त मात्र में चांदी लेकर पहुँच जाता तो वह उसके बदले में सोना लेकर दो सौ प्रतिशत लाभ पर सौदा कर सकता था। परिणामतः इसको प्रभावस्वरूप कच्चे माल का निर्यात बढा, जापान में सभी वस्तुओ के दाम बढ़ गये, पश्चिमी देशों की फैक्ट्री से बना माल जापान में सस्ती दरों से बिकने से जापान के सभी घरेलू उद्योग नष्ट हो गये।[25]

जिन जापानी आर्थिक समूहों ने स्थिति का सामना सामान्य रूप से करना चाहा वे अनिश्चितताओं से घिर गए अथवा नष्ट हो गये किंतु जो व्यापारी साहसी अथवा चुनौती स्वीकार करने वाले तथा नई स्थिति के प्रति चौकते थे, उनके लिए नवीन स्थिति में अभूत पूर्व रूप से संपन्न बनने की संभावनाएँ विद्यमान थी। सरकारी समूह जिन्हें विशेष अधिकार तथा एकाधिकारवादी स्थिति बाकूफू प्रशासन के द्वारा दी गई थी उन्हे इस नवीन उत्साही आधुनिक समूह का सामना करना पड़ा। कभी कभी संपूर्ण कुलो ने प्रत्यक्ष रूप से व्यापार करना प्रारम्भ किया जैसे सतसुमा कुल ने चीनी के उत्पादन का एकाधिकार स्थापित किया। तोसाकुल ने कागज के उत्पादन पर नियंत्रण स्थापित किया। नवीन ग्रामीण व्यापारी तथा उद्योगपतियो के नवीन बाजार की स्थिति को नियंत्रित करने के तरीके निकाल कर विशाल संपदा का संग्रह करना प्रारम्भ किया।

आधुनिकीकरण का आंदोलन जो प्रारम्भ में स्पष्ट रूप से परंपरागत रूप से प्रारम्भ हुआ था धीरे धीरे दबावपूर्ण, पूँजीवादी तथा व्यवहारात्मक होता गया। क्योंकि बड़े व्यापारी तथा वित्तीय घरानों ने अपनी संपत्ति कर दबाव परिवर्तन के पक्ष में डाला। मितसुई ओनो शियाया तथा कोनो की जैसे घरानों ने बाकूफू विरोधी आंदोलन में भाग लेना प्रारम्भ किया।[26]

25. जापान को व्यापार के लिए उन्मुख किये जाने के प्रभाव जिनमे राजनीतिक परिणाम भी निहित है की चर्चा इके ने पूर्वोद्धृत रचना पृष्ठ 14-23, तथा नार्मन की "जापान्स इमरजेन्स" पूर्वोद्धृत पृष्ठ 61-70।

26. मितसुई गोमई कैशा, दि हाउस ऑफ मितसुई एमिनाडे ऑफ थ्री सेंचुरीज, टोक्यो, 1933, पृष्ठ 15, तथा होजो इजिरो, सोश्यल एंड इकोनोमिक्स हिस्ट्री उद्धृत अध्याय 12, दि इम्पोर्टेन्स ऑफ गोयोकिन आरफोर्सड लौंस इन दि मेयजी रिस्टोरेशन"।

बाकूफू की अंतिम नीतियाँ—

जब बाकूफू की शक्तियां समाप्त हो रही थीं तब भी इसने विदेशों से कूटनीतिक संबंध को बनाये रखने का प्रयास किया। 1855 में, इसने एक विदेशी भाषा संस्थान (योगाकुशो) की स्थापना की जो बाद में टोक्यो इम्पीरियल विश्वविद्यालय बन गया।

1860 या 1960 में तोकूगावा शासकों ने अमेरिका को एक मिशन में भेजा जो 1858 की संधि की पुष्टि कर सके। यह एक अभूतपूर्व कार्य था, क्योंकि तब तक जापान में विदेश यात्रा का विरोध था।

बुजेन का कामी शिम्मी मसाओकी इस मिशन का नेता था तथा इसमें फुकुजावा युकिची नामक एक युवा समुराई को भाषाविद के रूप में सम्मिलित किया गया था। यह कांग्रेस में भी गया। जहां इन लोगों ने सदस्यों की बातचीत के तरीकों को समझने की कोशिश की। किमोनो तथा तलवारों से लैस जापानी मिशन ने अमेरिका में रिपब्लिक पार्टी के कन्वेंशन को देखा जिसमें शिकागो के एक दुबले पतले वकील लिंकन को राष्ट्रपति पद के लिए मनोनित किया। उस समय के अमेरिकियों को जापानियों का ऐसा मिशन निम्न स्तरीय तथा अपरिष्कृत लगा होगा जिसने उनकी राष्ट्रीय विखंडन की महान् राष्ट्रीय दुर्घटना के मध्य व्यवधान उत्पन्न किया। 1861 में तोकूगावा शासकों ने अपने प्रतिनिधि यूरोप भेजे 1863 में अन्य समूह इंगलैंड तथा फ्रांस भेजे गए। 1865 में एक आर्थिक मंडल इंगलैंड तथा फ्रांस भेजा गया जो जापान में जहाजी डेरे तथा लोहे के कार्य के बारे में जानकारी प्राप्त कर सके।

जिस समय तोकूगावा युवा तथा उत्साही लोगों को विदेश भेज रहा था, उसी समय चोसू तथा सतसुमा कुल भी अपने लोगों की शोगुनल की स्वीकृति से बाहर भेज रहे थे। पश्चिमी दर्शकों को जापानी लोग लघु तथा विचित्र लगे होंगे किंतु जैसे ही वे जापान में आये उन्होंने अपने ज्ञान का व्यावहारिक प्रयोग प्रारम्भ कर दिया तथा। उन्होने सपूर्ण राजनीतिक तथा आर्थिक नेतृत्व पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया।

कुछ समय के लिए बाकूफू ने नेपोलियन तृतीय के फ्रांसीसी साम्राज्य के साथ संधि कर ली थी। लिओन रोशे इदो में फ्रांसीसी मंत्री था तथा उसके संबंध शोगुन अधिकारियों के साथ अत्यधिक निकट के थे। जबकि ब्रिटेन के लोगों के संबंध बाकूफू विरोधी तत्वों के साथ पर्याप्त अच्छे थे। जिस समय चीन में घिरा राजवंश ईसा के लघु भ्राता हुंग हुसी चुआन के नेतृत्व में प्रारम्भ किये गए जन आंदोलन से पीडित था, उस समय जापानी गुटों ने जापान के प्रति अपनी निष्ठा को बनाये रख कर फ्रांसीसी तथा ब्रिटिश सैनिकों का पर्याप्त प्रयोग किया। यदि किसी भी पक्ष ने ब्रिटिश अथवा फ्रांसीसी सैनिकों को प्रत्यक्ष रूप से घरेलू संघर्ष में आमंत्रित किया होता तो जापान की हालत भी बर्मा अथवा इंडोचीन जैसी हुई होती।[27]

27 फ्रांस ने बाकूफू तथा जापान की जो अमूल्य सेवा की उसे प्रायः भुला दिया जाता है। देशो ने मंत्रिमंडलीय पुनर्गठन करारोपण में सुधारो निगमों की स्थापना, सैनिक शक्ति को बढ़ाने के साधन की व्यापक योजना बनाई, फ्रांसीसीयों के हइ.ो तथा ओनका में लोह कार्यों तथा अग्रारित केन्द्रो का निर्माण किया तथा फ्रांस की मेल स्ट्रीपशिप कंपनी को बडे कण दिये। देखिये "लियोन सेशे एंड एडमिनिस्ट्रेटिव रिफोर्म इन दि क्लोजिंग इअर्स ऑफ दि तोकूगावा रिजीय" क्योटो यूनिवर्सिटी इकोनांमिक रिव्यु अंक 10, सख्या 1 (जुलाई 1935) पृष्ठ 36-54 जहां प्रोफेसर होंजो ने मनोरंजक कहानी कही है।

सुधारों के प्रयास ने बाकूफू विरोधी आंदोलन को अशांत बना दिया उन्हें यह भय होने लगा कि तोकूगावा कठोर तथा प्रगतिशील नीतियों से कहीं, वारिस प्रतिष्ठा एवं शक्ति प्राप्त करने का प्रयास नहीं करें। बाकूफू के वरिष्ठ मंत्री ईनाओ सुके को साम्राज्यवादियों की घृणा का पात्र बनना पड़ा, जब उसने शाही सम्मति की प्रतीक्षा किए बगैर 1858 की संधि पर हस्ताक्षर कर दिये। उनका क्रोध तब और भी बढ़ गया जब उसने स्वयं अपने चचेरे भाई को शोगुनल के उत्तराधिकारी के रूप में चुना। ऐसा करने में उसने मितो ओवारी तथा सतसुमा दैम्यो के प्रभावशाली समूह की अवहेलना की। उसने दो दैम्यो को ताले में बंद किया। ऐन्सी के इस तथाकथित शुद्धीकरण के परिणाम स्वरूप 1860 में ई की हत्या करदी गई, किंतु केकी नामक जिस शोगुनल की स्थापना का उसने प्रयास किया था वह इस शृंखला का पंद्रहवां तथा अंतिम शोगुन था।

शोगुनल उत्तराधिकारी में परिवर्तन के साथ शाही उत्तराधिकार में भी परिवर्तन हुआ तथा जापान के इतिहास में सर्वाधिक प्रसिद्ध सम्राट का पदार्पण हुआ।

पद्रहवर्षीय सम्राट मुतसुहिती जो बाद में मेयजी सम्राट के रूप में शासक बना 1867 की फरवरी में पदारूढ़ हुआ तथा उसने अपने पूर्ववर्ती शासक की विदेशी विरोधी नीति के विपरीत कार्य करना प्रारम्भ किया।

1867 का वर्ष जापान में निरंतर राजनीतिक हलचल का काल था। मुतुसुहितो फरवरी में पदारूढ़ हुआ। नववंर में केकी ने न केवल स्वट को व्यक्तिगत रूप से समर्पित किया, अपितु बाकूफू की संपूर्ण शक्ति को भी समर्पित किया। इस प्रकार कई शताब्दियों से चले आ रहे द्वैध शासन का अंत हो गया और अब जापानियों ने आश्चर्यपूर्ण ढंग से यह पाया कि जिस सम्राट का उन्होंने शताब्दियों तक सम्मान किया था तथा जिसे इतना परिपूर्ण बनाये रखने का प्रयास किया था ताकि वह दैनिक राजनीति की जटिलताओं के संपर्क में आकर दूषित न हों जाए वह अब स्वयं उन पर शासन करने वाला था। बाकूफू के समर्थकों ने अपने अस्तित्व के लिए अंतिम संघर्ष किया जब उन्होंने यह मत व्यक्त किया कि शाही सरकार वास्तविक सरकार के रूप में प्रारम्भ होने के बाद सभी कुलों के समर्थन व परामर्श पर कार्य करेगी।[28] अपने को प्रभावशाली बनाने के लिए उन्होंने पाश्चात्यीकरण का आश्रय लिया। 1867 की अक्टूबर तक गोटोशोजिरो ने ऐसा समझौता प्राप्त करने का प्रयास किया जो सभी पक्षों को मान्य हो। उन्होंने शोगुन के समक्ष निम्नलिखित तीन नीतियों वाला एक स्मरण पत्र प्रस्तुत किया —

1—शासन का संचालन शाही दरबार के द्वारा हो।

2 - नवीन सरकार के संगठन व नियमों का केन्द्रीकरण एक व्यवस्थापिका में हो (गीसेई हो) जिसका विभाजन उच्च तथा निम्न सदन में किया जाए।

3—सभी वर्गों को कुगे से लेकर सामान्य लोगों को भी, प्रतिनिधित्व दिया जाए।

जिस माह में बाकूफु का अंततः पतन हुआ एक व्यक्ति निशि आमेन ने प्रस्तावित संविधान के दो मसौदे सम्राट को प्रस्तुत किये, जिसमें विचित्र रूप से जापान के साम्राज्य कार्यकारी परिसंघ के रूप में प्रस्तुत किया गया था। इसमें शोगुन को एक अस्पष्ट उपाधि

28 इके पूर्वोद्धृत अध्याय तृतीय पृष्ठ 30-34 कान्त ही मोटत्कांक ओकाई शोमान (दोनों बुंक्यू युग 1861-1863) द्वारा प्रभावित नई योजनाएँ ओकुबो इचिकी एक तोकूगावा अधिकारी था (1862) तथा अकामात्सु को सात्सुरो ऑफ इदो (1861)।

टाइकून से संबंधित किया गया जो शोगुनेत तथा साम्राज्य के मिश्रित उच्च सदन का सभापति होने वाला था। ये योजनाएँ इस बात का प्रमाण हैं कि शाही परिवार के ही समान तोकूगावा कुल ने भी बदली परिस्थितियों के साथ समझौते कर अपनी शक्ति को बनाये रखने का प्रयास किया था। किंतु इस संपूर्ण प्रक्रिया का अंत हुआ।

1861 के पतझड़ में सभी बाहरी शक्तिशाली लॉर्डों ने एक संयुक्त पत्र शोगुन को प्रेषित किया, जिसमें उससे त्यागपत्र देने को कहा गया। इस समय तक सतसुमा तथा चोसू कुल अपने मतभेदों को समाप्त कर चुके थे तथा वे सैंगो तथा किदो के नेतृत्व में बाकूफू को अपदस्थ करने के लिए एक गुप्त समझौता कर चुके थे। इसका समर्थन ओवारी तथा एजिन के दैम्यो ने किया जिनके दैम्यो को लॉर्ड ई के षड़यंत्र के दौरान ताले में बंद किया गया था। मात्र तोसा के लॉर्ड यमानोची ने किसी प्रकार का समझौत करने का प्रयास नहीं किया किंतु शोगुन अब पर्याप्त थक चुका था। बाकूफू ने इस अल्टीमेटम का उत्तर सहमति में दिया। 3 नवंम्बर 1867 को लिखे गए पत्र में शोगुन ने व्यक्तिगत रूप से अपने त्यागपत्र तथा अपनी सरकार को विघटित करने की बात लिखी। 12 नवंम्बर को उसका त्यागपत्र स्वीकार कर लिया गया। इस प्रकार दो सौ पैंसठ वर्ष पुरानी तोकूगावा सरकार तथा लगभग आठ शताब्दी पुरानी शोगुनेत सरकार का अंत हुआ। 1868 से जापान ने दोहरा प्रयास प्रारम्भ किया। ऐसी सरकार को पुनः सक्रिय बनाया गया जो शताब्दियों तक मात्र प्रेक्षक बनी रही तथा जापान को अपने राष्ट्रीय अस्तित्व को, पर्याप्त पश्चिमी अर्थों में पुर्ननिर्मित करना पड़ा ताकि मशीनीकृत सैनिक तथा नाविक शक्ति वाले पश्चिमी देशों के विश्व में उसका अस्तित्व सुरक्षित रह सके।

□□□

29. डब्ल्यू डब्ल्यू मेलेस जापानीज गवर्नमेंट डाकूमेंट 1867-89 (टी ए एस जे अंक 52 भाग 1 1914 पृष्ठ 1-2)।

अध्याय 15 यूरोप का जापानी मॉडल

यूरोप के जापानी मॉडल का निर्माण, 19 वीं शताब्दी के सर्वाधिक उल्लेखनीय आश्चर्यों में से एक है। जिस समय यह प्रक्रिया घटित हो रही थी, इसने वाह्य विश्व के ध्यान को पर्याप्त सीमा तक आकर्षित किया तथा इसे विदेशी तथा विश्व राजनीति में एक महत्वपूर्ण कारक माना गया। उस समय के पश्चिमी लोग बड़ी सरलता से इस सामान्य विश्वास को स्वीकार कर लेते थे कि वे सभी सभ्यताओं में सर्वोत्कृष्ट थे, अतः जापान द्वारा पश्चिमी राज्य के मॉडल को अपनाने के प्रयास को पश्चिमी देशों ने अपनी सामान्य धारणा के अनुसार इस प्रकार स्पष्ट किया कि जापान सभ्य होने का प्रयास कर रहा था।

किन्तु बीसवीं शताब्दी के हम लोगों को जापान की यह अनुकूलन की प्रक्रिया अधिक जटिल लग सकती हैं। अब हमें अपनी सर्वोत्कृष्टता में उतना विश्वास नहीं रह गया है, जितना हमारे पूर्वजों को रहा होगा। अब हम इतिहास को एक पिछड़ेपन से प्रगति की ओर सीधी व लंबी रेखा के रूप में नहीं मानते हैं, न हीं हम इसे निरंतर प्रगतिशील उत्थान मान सकते हैं, जिसकी सर्वोत्कृष्ट रचना का हम मानव जाति में प्रतिनिधित्व करते हैं 20 वीं शताब्दी के मध्य रहने वाले हम लोगों के लिए पश्चिमी जगत के दृष्टिकोण से भी यह अधिक लाभदायक होगा कि हम जापान में शोगुनेत से आधुनिक साम्राज्य की ओर परिवर्तन का अवलोकन इस मान्यता से वाध्य हुए बिना करें कि शोगुन सरकार अपरिष्कृत तथा पिछड़ी हुई थी तथा सरकार का यूरोपियन प्रकार प्रगतिशील तथा आधुनिक था।

इसके अतिरिक्त आज के प्रेक्षक को यह जानने का लाभ भी है कि जापान ने जब तथाकथिक 'प्रगति' की तो क्या हुआ ? हम यह महसूस करते हैं कि इस 'प्रगति' के परिणाम स्वरूप जापान की सड़कों पर न केवल कारें दौड़ी, अपितु हवाई के आकाश पर टार पीडो युद्ध-विमान भी मंडराने लगे। हम अपने पूर्ववर्तियो से कही अधिक अच्छी तरह से जानते हैं कि किसी भी प्रकार के परिवर्तन का मूल्य राष्ट्रों को किस प्रकार चुकाना पड़ता है। हम कटु अनुभव के आधार पर यह भी समझ गए है कि यांत्रिक तथा तकनीकी विकास को यदि उसी गति से आध्यात्मिक अथवा सैद्धान्तिक विकास के साथ संतुलित नहीं किया जाता है तो उसके क्या परिणाम होते हैं। हम में से कई, राष्ट्र राज्य के साथ परमाणु अस्त्रों के अस्तित्व से अप्रसन्न हैं अथवा क्या हम नही जानते कि समझदार लोगों की आशा पूर्ण आकांक्षाओं से राष्ट्र-राज्यों को वाध्य न तो किया जा सकता है और न ही परमाणु आयुद्धों को इस विश्वास पर समाप्त किया जा सकता है कि विश्व उनके अभाव में अधिक अच्छा होगा। यह कहा जा सकता है कि हम इतने भावुक अथवा अपनी सभ्यता का इस सीमा तक शिकार बन चुके हैं कि भेदभाव करने की आदत पड़ गई है। इस भेदभाव के वावजूद हम जापानीयों

द्वारा यूरोपियन साम्राज्य की स्वीकृति को आलोचनात्मक संदर्भ में देख सकते हैं तथा तत्पश्चात् इस बौद्धिक विश्लेषण का प्रयास कर सकते हैं कि जापानियों को इस सदसे क्या मिला।

पुनरावृत्ति के रूप में जापानीकरण

बीसवीं शताब्दी के मध्य में रहने वाले पश्चिमी प्रेक्षक बड़ी आसानी से इस प्राथमिक तथापि सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य पर विचार कर सकते हैं कि 1860–1880 के मध्य जापान में जो कुछ घटित हुआ, वह जापान के पश्चिमीकरण की तुलना में यूरोप का जापानीकरण अधिक था क्योंकि वड़े व्यापक स्तर पर यह मान्यता स्वीकार की थी कि राष्ट्रीय अस्तित्व का निर्धारण करने में राजनीतिक संस्थाओं का स्वरूप इतना निर्णायक था कि जापान की राजनीतिक व्यवस्था में परिवर्तन करने से जापान की संस्कृति स्वमेव परिवर्तित हो सकती थी। जापान के सैनिकवाद के युग में पहुँचने पर पश्चिमी प्रेक्षकों को यह समझ में आने लगा कि जापान में अभी तक जो कुछ हुआ था, वह जापान के सामाजिक तथा सार्वजनिक उद्देश्यों तथा व्यवहार का रूपान्तरण नहीं था अपितु कुछ मुख्य राजनीतिक अभिकरणों का संकुचित अर्थों में जापानीकरण था।

इसी प्रकार मेयजी कालीन रूपांतरण का आंतरिक दृष्टि से मूल्यांकन भी, जापानी वस्तुओं के पश्चिमीकरण की तुलना से कहीं अधिक अच्छी प्रकार से समझा जा सकता है। जापान का अध्ययन करने वाले किसी भी व्यक्ति को मेयजीकाल में जापान की पराजय तथा अधिकृत होने में उल्लेखनीय विशेषता, जापान की मूलभूत राजनीतिक तथा सांस्कृतिक प्रक्रिया की पुनरावृत्ति की प्रक्रिया लग सकती है। गर्टिड स्टेन के समान जापान के लिए यह कहा जा सकता है कि वहाँ जो कुछ 645 में हुआ वही 1868 में हुआ तथा वही 1945 में हुआ - — ——घटनाएँ तथा विवाद बदल जाते हैं किन्तु सामाजिक प्रतिक्रियाएं तथा गहन सांस्कृतिक प्रतिमान वहीं रहते हैं।

मेयजी की पुनर्स्थापना की प्रक्रिया भूतकाल की दृष्टि से उल्लेखनीय है तथा 645 के तैका सुधारों की पुनरावृत्ति प्रतीत होती है, वर्तमान के संदर्भ में मेयजी की पुनस्थापना 1945 के पश्चात् जापान के पुनर्गठन के अग्रज के रूप में महत्वपूर्ण है। अवशिष्ट जगत् में जैवी अराजकता तथा अनिश्चितता व्याप्त हुई उसके विपरीत जापान में जो कुछ हुआ वह इसलिए उल्लेखनीय नहीं है कि जापान भी परिवर्तित हुआ, बल्कि इसलिए महत्वपूर्ण है कि परिवर्तन की इतनी तीव्रता के बावजूद जापान निरंतर अपने जापानी स्वरूप को बनाए रखने में सफल हुआ।

तत्कालीन व्याख्याएं

पुनर्स्थापना आंदोलन के नेताओं के भी इसके बारे में दो पूर्णतया भिन्न दृष्टिकोण थे। अनुदारवादियों के अनुसार यह प्राचीन शासन (आसई कुक्कों) का पुनर्जागरण था, उदारवादियों के अनुसार यह मेयजी का नवीनीकरण (मेयजी इशीन) था कभी कभी इन दोनों कारकों को पूर्णतः मिला दिया जाता था। उदाहरण के लिए तोकूगावा शोगुनेत प्राचीन पुनर्स्थापना तथा आधुनिकीकरण की दिशा में प्रगति दोनों ही था। कभी कभी इन दोनों कारक पूर्णतः पृथक हो गए थे तथा परस्पर प्रभाव प्राप्त करने के लिए संघर्ष कर रहे थे। दोनों प्रवृत्तियाँ विदेशी मामलों में स्पष्ट रूप से व्यक्त हुई। दोनों ही प्रवृतियाँ नवीन नेतृत्व के स्वरूप में तोकूसारा का भाग्य निर्धारण करने में, बाकूफू की अवशिष्ट सामंति

संस्थाओं को समाप्त करने में तथा नवीन सरकारी यंत्र का निर्माण करने में स्पष्टतया दृष्टिगोचर होती हैं।

अनुदारवादी भी 1192 से पीछे तक समय को ले जाने में सफल नहीं हुए। कट्टतम रूप में विदेशी संबंधों का विरोध करने वाले साम्राज्यवादी गुटों ने भी अब विदेशीयों का विरोध करना छोड़ दिया था क्योंकि अंततः कोइ सम्राट की मृत्यु हो गई थी तथा नवीन सम्राट मेयजी वन गया था तथा अब कट्टर से कट्टर सम्राट्-समर्थक भी यह प्रमाणीत करने में असमर्थ रहे कि वास्तविक जीवन में से विदेशियों को हटाया जा सकता था। इस प्रकार विदेशी-विरोध की जिस भाषा का प्रयोग सम्राट् के समर्थकों ने शोगुन को परेशान करने के लिए किया था, अब उसको त्याग दिया गया। नई सरकार को विरासत में वे संधियाँ मिली जो तोकूगावा ने अपने शासन के अंतिम दिनों में जापान की ओर से की थी और सावधानी पूर्वक फ्रांसिसी ब्रिटिश मंत्रियों के प्रतिनिधियों से परामर्श लिया तथा विदेशी विरोधी गतिविधियों को समाप्त कर दिया।

वहिष्कारवादियों ने जापान की दैवीय भूमि की परंपरा को पुनर्जागृत करने का प्रयास किया था। किन्तु जो लोग जापान द्वारा परस्पर समझौता करने के पक्ष में थे वे जापान का भविष्य संपूर्ण विश्व के संदर्भ में ही सुरक्षित मानते थे। जो लोग वाह्य विश्व की परिस्थितियों के बारे में सजग हो गए थे उन्होंने इस तर्क पर जोर दिया कि युद्ध को टालने के लिए जापान को वाह्य विश्व के लिए खोल दिया जाना चाहिए तथा अधिकांश वहिष्कारवादी भी युद्ध को टालना ही चाहते थे। इस प्रकार मेयजी शासकों में प्रारंभिक राष्ट्रीय चेतना वहिष्कारवादियों के अनुदारवाद से (हो शुरामे) जो देशोन्माद की सीमा तक (ताई गाई को किराने) पहुँच गया था तथा वहिष्कार वादियों की सांस्कृतिक (बुम्मी केका) प्रगति व उत्थान से प्रारंभ हुई थी। इन विशेषताओं के मिश्रण ने आधुनिक जापानी राष्ट्रवाद के स्वरूप को संपन्न बनाया। जापानी लेखक काश तेतसूनी के शब्दों में" इस विषय में जापान के सामाजिक विचार-दर्शन की अनूठी विशेपता निहित है।[1]

आत्म विघटनकारी सामंतवाद

यूरोप का जापानी मॉडल शताब्दियों तक तोकूगावा शासन के अंतर्गत स्थापित केन्द्रीकृत सामंतवाद को विघटित करने वाले तत्व रखता था। व्यावहारिक तथा पर्याप्त विरोधी शब्दों में इसका अर्थ यही था कि जिन कुलों ने शासन संभाला, वे स्वयं ही कुलों के विघटन के लिए उत्तरदायी बने। जापान में आंशिक रूप से सामंती तथा गैर सामंती युवा समुराई ने सामंतवाद के विघटन के लिए कार्य किया तथा राजनीतिक आर्थिक तथा सामाजिक शक्ति के शोषण के लिए ऐसी दृढ़ व मजबूत व्यवस्था की स्थापना का प्रयास किया जो उनके राष्ट्र के हित में स्वयं शक्तियों के हित में तथा उनके वर्ग के उन लोगों के हित में हो जो स्वयं को नवीन परिस्थियों के अनुसार अनुकूलित कर सकते थे। इस परिवर्तन का महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि कुछ सामंतों ने नवीन शक्ति की स्थापना का प्रयास किया जबकी इन्होंने स्वयं अपने सामती अधिकारों का गला घोटने में पहल की। यह उसी प्रकार था, मानो प्रारंभ में दो रियासते स्वयं फ्रांसिसी क्रांति का प्रारंभ करती तथा अपनी कल्पना शक्ति व बुद्धि के साथ क्रांति के पश्चात्त् बने गणराज्य पर अपना भौतिक तथा दलीय

1. काटा मेयची मॉकी शागाइ-शिसो शी पूर्वोद्धृ पृष्ठ 31।

नियंत्रण बनाये रखने में सफल होती अथवा मानों दक्षिण के गुलामों के मालिक आपस में मतभेद के विभाजित हो कर उनमें से कुछ दास-प्रथा के उन्मूलन का प्रयास करते उसके बदले में संपत्ति के बल पर मानव-शक्ति पर नियंत्रण के स्थान प्राकृतिक स्रोतों तथा पूंजी पर नियंत्रण स्थापित कर लेते।

नवीन शासन पर नियंत्रण यद्यपि कुलों का था, तथापि ये कुल काफी सीमा तक पुराने कुलों के सामाजिक समन्वय को पीछे छोड़ चुके थे। वस्तुतः अक्सर यह माना जाता है कि नवीन सरकार में सवसुया तथा चोयू कुलों का प्रभाव इतना अधिक था मानों उन्होंने एक नवीन शोगुनेत का निर्माण कर लिया था। मेयजी शासन की प्रथम शताब्दी में शीघ्र ही चोसू ने नवीन सेना पर आधिपत्य स्थापित कर लिया, जबकि सतसुका ने नौसेना कर अधिपत्य स्थापित किया। तत्पश्चात् मेयजी युग की अधिकाश राजनीति विदेशी ताकतों द्वारा सरकार को सत चो कुलों के संयुक्त प्रभाव से युक्त कराना थी।

ये बाह्य शक्तियां कौन थी ? ये अन्य लॉर्ड थे, वे जो अधिकांशतः कुगे भङ वर्ग में से लिए गए थे। इन्होंने बाहर के विशिष्ट कुलों के लिए नई सरकार को संगठित कराना संभव बनाया। चूंकि तोकूगावा शासन के पश्चात् कोई भी कुल उसके द्वारा रिक्त किए गए स्थान की पूर्ती करने के योग्य नहीं था अथवा अविच्छिन्न शाही शासन की परंपरा को तोड़ने के लायक नहीं था अतः एक बार फिर सत्ता सम्राट् के हाथ में आ गई। मेयजी सम्राट के व्यक्तिगत गुणों ने इस प्रक्रिया में और तीव्रता ला दी। समय के साथ साथ सरकार अधिकारियों का वर्ग व्यापक बनता गया, किन्तु फिर भी इस संदर्भ में कुलीन वर्ग की भूमिका अनुपात से अधिक ऊंची रही।

यह कुलीन वर्ग, जिसे कि अमेरिका पाठक के लिए प्रोफेसर रेशारे ने पर्याप्त अधिकृत रूप से स्पष्ट किया है मुख्यतया कुगे वर्ग में से, तथा कुछ सीमा तक पूर्व वाकूफू शासनों में से तथा सतसुमा चोशु, हिडेन तथा होसा कुलों के समुराई वर्ग में से थे। जापान का संपूर्ण उच्च वर्ग जापान की संपूर्ण जनसंख्या के सात प्रतिशत से अधिक नही है तथा प्रोफेसर रेशारे ने जिसे कुलीन वर्ग कहा है, वह इस उच्च वर्ग का एक अंश मात्र था[2] संस्थागत उत्तराधिकार की अपेक्षा व्यक्तिगत रूप से जापान में कुलीन वर्ग 1945 तक बना रहा।

सम्राट् की पुनर्स्थापना

जनवरी 1968 में युवा सम्राट् ने पुनर्स्थापना की घोषणा प्रेषित की। तोकूगावा शासन के सभी कार्यालयों को समाप्त कर दिया गया तथा कार्यकारी सरकारी तंत्र की स्थापना की गई। इस घोषणा के तुरन्त पश्चात् क्योटा के शाही दरबार में एक सम्मेलन यह निर्णय लेने के लिए आयोजित किया गया कि तोकूगावा परिवार को किस प्रकार समाप्त किया जाए।[3] उदारवादी। जिनका प्रतिनिधित्व तोसा के सामन्त यमानोची कर रहें थे, ने शोगुनेत के उन्मूलन को समाप्त किया तथावि यह अनुभव किया गया कि पूर्व शोगुन को व्यक्तिगत रूप सेकार्यकारी सरकार के सम्मेलन में भाग लेना चाहिये। किन्तु अब शक्ति का संतुलन सत–चो सेनाओं के पक्ष में झुक गया था, जिसकी प्रतिनिधित्व सम्मेलन में एक दरबारी सामंतइवाकुरा तोमी के द्वारा किया जा रहा था सम्मेलन ने यह निर्णय किया की पूर्व शोगुन

2. रेशोर जापान: गवर्नमेंट-पॉलिटिक्स पूर्वोद्धृ पृष्ठ 64।
3. इस सम्मेलन का नाटकीय वर्णन प्रथम अध्याय इके की क्रांति है पूर्वोद्धृत पृष्ठ 16

को त्यागपत्र देने के लिए बाध्य किया जावे तथा वह अपना क्षेत्र सम्राट् को सौंप दे। इस उग्र कठोर निर्णय ने एक प्रकार से अव्यवस्थित गृहयुद्ध की स्थिति उत्पन्न करदी जो लगभग 18 माह तक चलती रही। अंततः तोकूगावा सेनाओं को कार्यकारी सरकार की नई सेनाओं ने सतसुमा तथा योसू के नेतृत्व में पूर्णतः पराजित कर दिया।

घरेलू प्रशासन के संदर्भ में कार्यकारी सासन को तात्कालिक स्तर पर इस गंभीर समस्या का सामना करना पड़ा कि वह केन्द्रीकृत सामंतीवाद, होकेन व्यवस्था, राष्ट्रीय क्षेत्रों तथा काऊंकी गनकेन व्यवस्था में से किसका चयन किया जाए। संपूर्ण कुल क्षेत्रों का एक प्रकार का संघ बनाने का विचार मेयजी शासन के दूसरे वर्ष तक लगातार बनता रहा, किन्तु अधिकांश नए नेताओं ने पुरानी राजनीतिक संस्थाओं का उन्मूलन करने पर जोर दिया। उमका सर्वप्रथम प्रयास क्षेत्र व्यवस्था (हेन सेकी होकव) को समाप्त कर उसके स्थान पर कुल प्रशासन (हेइन–चीकेन) के लिए प्रीफेक्टों की व्यवस्था करना

इस प्रकार जिन दैम्यों का विकास एक हजार वर्षो में हुआ था, वे एक माह में समाप्त कर दिये गये।

क्षेत्रीय व्यवस्था को समाप्त करने के आंशिक कारण आर्थिक भी थे। नवीन सरकार को राजस्व की आवश्यकता थी, जिनका संग्रह क्षेत्रीय व्यवस्था के अन्तर्गत दैम्यों करते थे। इस उन्मूलन की प्रेरणा राजनीतिक कारणों से थी, इस मान्यता के कारण मिली, कि ये स्वतन्त्र दैम्यों विद्रोह के लिये राजनीतिक आधार प्रस्तुत कर सकते थे। एक रूपान्तरण की प्रारम्भिक कार्यवाही इवाकुरा तथा ओकूबो के द्वारा की गई जिन्होंने प्रथम सतसुमा के दैम्यों से इस कार्यवाही का आग्रह किया, फिर किदो ने चोसू के दैम्यों को आश्वस्त किया तथा तत्पश्चात् ओकूबा तथा किदो ने तोसा के दैम्यों से आग्रह किया तथा उन्होंने 1869 में सम्राट् से प्रार्थना की कि वह उनकी जागीर पर अधिकार कर ले। यह स्पष्ट है कि सत-चो-ही-तो सामन्तों ने इस आकांक्षा के साथ अपने अधिकारों का त्याग किया था कि नवीन सरकार में उन्हें पहले से अधिक प्रभावशाली स्थिति प्राप्त होगी। वस्तुतः उनकी बुद्धिमानी की प्रशंसा करनी चाहिये कि उन्होंने अवसर को समझा।

भूमि-व्यवस्था के रूपान्तरण की यह सम्पूर्ण योजना मुख्यतया स्वयं दैम्यों के द्वारा नहीं बनाई गई अपितु इसे उसके प्रति निष्ठा वाले समुराई ने उनके एजेन्ट के रूप में कार्यान्वित किया, जिसके बदले में अपनी चतुरता से परिवर्तन लाने का उन्हें पर्याप्त पुरस्कार भी मिला। तोसा के इतावाकी नै सुके, सतसुमा के सैगो ताकामोरी तथा हिजेन के ओकूमा शेगेनोबू को सरकार में उच्च पद प्राप्त हुए।

व्यावहारिक आर्थिक पूर्ति में इस नई सरकार के अन्तर्गत दैम्यों को अपनी आमदनी का दस प्रतिशत पेंशन के रूप में मिलने वाला था। अपने आश्रितों को सहायता देने की आवश्यकता से मुक्त होने के पश्चात् वे अपने ऋण नई सरकार को स्थानान्तरित कर सकते थे। इस व्यवस्था का अधिकांश दैम्यों ने फायदा उठा कर, अपने पुराने हिसाब किताब समाप्त कर, नये सिरे से सम्पत्ति अर्जित की।

आधुनिक कुलीन वर्ग

इसी समय कुगे तथा दैम्यों की पदवियां समाप्त कर दी गई। दरबारी कुलीन तथा सामन्तों को कजोकू (समान पिअर्स शाब्दिक अर्थ में फलने फूलने वाले परिवार) में रूपान्तरित कर दिया गया। समुराई कुलों को शिगोकू (यह वग) का पद दिया गया।

1871 ई. में इन उच्च वर्गों में तथा सामान्य जनता में (हेमिन) परस्पर विवाह की अनुमति दे दी गई थी। प्रारम्भ में यह रूपान्तरण सतही तथा पदवियों में परिवर्तन मात्र लगा, क्योंकि पूर्ववर्ती दैम्यों को ही नवीन क्षेत्रो का गवर्नर नियुक्त कर दिया गया तथा सामन्तों व प्रजा का व्यक्तिगत सामन्ती सम्वन्ध वना रहा। 1871 में सम्राट् ने अवशिष्ट 76 प्रदेशों के भूतपूर्व दैम्यों को आमन्त्रित कर नवीन प्रीफेक्टी पर राष्ट्रीय सरकार के प्रत्यक्ष नियन्त्रण की घोषणा की। इस सुधार ने सामन्ती कुलीन वर्ग का उन्मूलन नहीं किया इसके विपरीत इस व्यवस्था ने कुलीन वर्ग के महत्त्वाकांक्षी लोगों के लिए परम्परागत व्यवस्था की सम्वन्वित दैम्यों की भौगोलिक सीमाओं को ही समाप्त कर दिया। उनमें से अधिकांश शीघ्र ही उच्च सरकारी पदों पर नियुक्त हो गए। 1884 तक कजोकू वास्तविक समकक्षियों का समूह वन गया। 1889 के पश्चात् नवीन संवैधानिक हाउस ऑफ पिअर्स में इन्हें महत्त्वपूर्ण संवैधानिक शक्तियाँ प्रदान की गईं।

जापानी कुलीन वर्ग ने अपने अपदस्थ होने की प्रक्रिया में उपलब्ध नवीन अवसरों का अच्छा उपयोग किया। चूंकि पुरानी व्यवस्था दिवालिया हो चुकी थी, अतः उन्होंने नवीन व्यवस्था में प्रभावशाली शेयर खरीद लिए। अनेक व्यक्तियों ने उस सरकारी भूमि को खरीद लिया, जो अत्यधिक सस्ती दर पर वेची गई थी। कुछ व्यक्ति नवीन वित्त-प्रधान अर्थ-व्यवस्था में उद्योगपति तथा स्टॉक के स्वामी वन गए। उदाहरण के लिए नवीन राष्ट्रीय वैंको में 42 मिलियन येन में से 32 मिलियन पीयर तथा 45 वर्ग का था जो सम्पूर्ण धनराशि का 76 प्रतिशत था।[4]

समुराई की नियति

यद्यपि कुलीन वर्ग ने अच्छे ढंग से परिवर्तन को स्वीकार कर लिया, तथापि सामान्य समुराई की प्रतिक्रिया इतनी अच्छी नही थी। उनमें से आज कुछ लोग पूंजीवादी उद्योगों में अथवा सरकार के उच्च पदों पर आसीन हुए तथा कुछ ने नवीन जापान की रचना में उल्लेखनीय योगदान दिया। किन्तु अधिकांश समुराई अपनी आर्थिक स्थिति में विशेष सुधार नहीं कर सके। वे लोग स्तभित तथा असन्तुष्ट हो गए। उनको सर्वाधिक प्रभावित करने वाला कानून अनिवार्य भर्ती का था, जिसने सभी स्वस्थ लोगों को शस्त्र रखने का अधिकार दे दिया।[5]

4. डॉ० नाल्ड एच शिपले का एक अप्रकाशित लेख "दि रिहे विलिटेशन ऑफ दि जापानीज पिअरेज 1894" जो सुदूरपूर्व आयोग के सम्मुख 14 अप्रेल, 1950 को पडा गया; एन अर्वॉर माइक नार्मन, पूर्वोद्धृत पृष्ठ 100, 1890 की राष्ट्रीय वैंक में भागीदारो का, सामाजिक वर्गों के आधार पर वर्गीकरण देना है।

5. 8 मार्च, 1874 को एक धर्म प्रचारक शिक्षक ने अपने सहयोगी विलियम इलियट ग्रिसिस को फुकी का चित्रण करते हुए लिखा, "उत्तर केन्द्रीय जापान के व्यापारी तथा कृपक पर्याप्त प्रसन्न दृष्टि गोचर होते हैं, क्योंकि वे अव मुद्रा की वचत कर सकते हैं, जवकि समराई काफी नाराज हैं, सव के भिन्न विचार हैं। दो तिहाई लोग फुकी की पुरानी सामन्ती प्रथा को चाहते हैं जवकि 1/3 क्या चाहते हैं, वे खुद नहीं जानते। हर व्यक्ति तलवार रखता है यथा असभ्य लगता है। कुछ लोग दो तलवारें तक ले जातेहैं।" ई० एच० मडगेट द्वारा डब्ल्यू० ई० ग्रिफिस को 8 मार्च, -1874 को लिखा गया. ग्रिफिस के पत्रो मे से फाइल संख्या 32, रूटगर्स विश्वविद्यालय पुस्तकालय, न्यू ब्रुन्सविक, न्यू जर्सी। चितोशी यानागा, जापान सिन्स पैरी न्यूयार्क 1949, विशेपतया अध्याय 3 तथा 4 इन समस्याओं का गहन इतिहास प्रस्तुत करता है, न्यूयार्क 1949, पृ. 64 पर एक मानचित्र 1874 से 1886 के वीच विभिन्न उपद्रवों तथा विद्रोहों के स्थल इंगित करता है।

किसी भी समाज में एक विशिष्ट सामाजिक प्रस्थिति वाले लोगों के अतिरिक्त यदि उसने निम्न प्रस्थिति वाले लोगों को विशेषाधिकार दे दिए जावें तो उन लोगों में अत्यधिक असन्तोष व्याप्त हो जाता है। सापेक्षिक विशेषाधिकार के साथ सम्बन्धित प्रतिबन्ध अथवा वंचित होने की स्थिति में एक वर्ग को उस समय तक सन्तुष्ट रख पाती है जब तक उस समाज में सामाजिक एवं संवेगात्मक सुरक्षा प्रदान करने वाले परिचित प्रतिमान बने रहते हैं। समुराई के मामले में उनके वर्ग का आधार खत्म कर उनको अपदस्थ कर दिया गया था तथा इसके बदले में न तो उन्हें नई सेना में सामूहिक तरक्की दी गई थी तथा न ही उन्हें दूसरी विशिष्ट स्थिति प्रदान की गई थी।

समुराई वर्ग में असन्तोष के कारण 1774-77 का विद्रोह तथा 1881-86 की विभिन्न गड़बड़ियाँ हुईं। राजनीतिक स्तर पर जापान के विकास के तरीके पर मतभेद बढ़ता जा रहा था। 1871-72 में यह मतभेद कोरिया के विरुद्ध दण्ड-स्वरूप कार्यवाही के दौरान स्पष्ट हुआ। सरकार में उच्च पदों पर स्थित लोगों, जैसे किदो, इवाकुरा तथा ओकूबो, का दृष्टिकोण दूरदर्शी था। उनका विचार था कि जापान पश्चिमी तरीके से आन्तरिक पुनर्गठन तथा औद्योगीकरण करके शीघ्र प्रगति कर सकता था, अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में साहसिक कार्य करके ऐसा सम्भव नहीं था, किन्तु सरकार पर पड़ने वाले बाहरी दबाव जापान के शक्ति पूर्ण विस्तार के पक्ष में थे, जिसका विस्तार कोरिया से हो सकता था।

यद्यपि कोरिया के प्रश्न को सरकार नियन्त्रित करने में सफल रही, किन्तु 1874 में फारमोसा पर आक्रमण करने की मांग पर उसे झुकना पड़ा। इस सीमित सैनिक गतिविधि से समुराई वर्ग का बढ़ता हुआ असन्तोष कम नहीं हुआ। सरकार ने अगस्त 1876 में समुराई वर्ग की पेंशन की अनिवार्य रूप से समाप्ति की घोषणा कर उनके साथ विश्वासघात किया था। समुराई लोगों से उनकी विशिष्ट प्रस्थिति के साथ उनकी पेंशन भी छीन ली गई। इस प्रकार 1877 में सतसुमा विद्रोह के समर्थन को अभिव्यक्त करने वाला प्रतीक भी समाप्त हो गया। इसके पश्चात् समुराई एक वर्ग के रूप में अधिकांशतया विघटित हो गए (वर्ग को यहाँ मूल समाजशास्त्रीय सन्दर्भ में लिया गया है।) ग्रामीण क्षेत्रों में फिर भी समुराई अपनी प्रतिष्ठा को बनाये रखने में कुछ हद तक सफल हुए तथा वे सुखद वंशानुगत स्मृति वाले समूह बने रहे।

अपरिवर्तित कृषक वर्ग

सर्वाधिक कम परिवर्तन कृषक वर्ग में हुआ। जापान के वास्तविक मालिकों की भूमिका में चाहे परिवर्तन हो गया है, किन्तु कृषक वर्ग, जिसका बहुमत सम्पूर्ण जापान के 75 प्रतिशत से कम नहीं था, को उसी दमन का सामना करना पड़ा।[6]

तोकूगावा शासन के अन्तर्गत कृषि जापानी अर्थ व्यवस्था का मूल आधार रही थी। मेयजी शासन के अन्तर्गत औद्योगीकरण के बावजूद मेयजी शासन में कृषि जापान का मूल व्यवसाय रही थी। आज भी जापान में मुख्य व्यवसाय कृषि ही है। जापान में जो

6. इशी र्योइची, पोपुलेशन प्रेशर एण्ड इकोनामिक लाइफ इन जापान लंदन, 1937, पृ. 77-81। सम्पूर्ण जनसंख्या में कृषकों के अनुपात का अनुमान प्रस्तुत करता है। सरकार के विरुद्ध दक्षिण पंथी तथा वामपंथी विरोध सोवियत लेखकों, ओतानिन तथा ई० योटान की की रचना, मिलिट्रीजाम एण्ड फासिज्म इन जापान, 1934 अध्याय 1 पृ. 25-36 है।

रूपान्तरण हुए, वे जापान द्वारा वाह्य संस्थाओं का अनुकूल था, जिसमें सम्पूर्ण कृपक जनता सम्मिलित नहीं थी।

कानूनी उन्मुक्तता के दो महत्वपूर्ण परिणाम हुए। आर्थिक दृष्टि से गतिशीलता के अधिकार ने कृपकों की व्यवस्था परिवर्तन को सम्भव बनाया। उनमें से कुछ कारखानों में मजदूर बन गए। राजनीतिक दृष्टि से शस्त्र रखने के अधिकार ने कृपक युवकों को अनिवार्य सैनिक बनना सम्भव बनाया। इस प्रकार यद्यपि कुछ कृपकों ने नवीन समाज में तरक्की की किन्तु सम्पूर्ण कृपक वर्ग की राजनीतिक व आर्थिक स्थिति में विशेप परिवर्तन नहीं हुआ।

इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए समाजशास्त्रीय परिवर्तन की बात कहनी चाहिए। कृपक-वर्ग ने सम्पूर्ण जापान के साथ विकास की प्रक्रिया में भाग लिया। उसने रेल मार्गों के बनने के साथ यातायात व संचार के नवीन साधनों के विकास में, नवीन मुद्रा तथा डाक सुविधा के प्रयोग में तथा शिक्षा के आधुनिकीकरण में भाग लिया, जिसके परिणामस्वरूप जिस स्तर पर उन लोगों में साक्षरता का प्रसार हुआ, उसकी समानता एशियाई देश का कोई अन्य वर्ग नहीं कर सकता है।

इस परिवर्तन तथा आश्वासन से प्रेरित होकर तथा अपेक्षाकृत इन सबसे न्यूनतम आर्थिक लाभ की प्राप्ति के कारण कृपक असन्तोप ने दो परस्पर विरोधी सैद्धान्तिक दबावों को जन्म दिया। कुछ कृपक नेता क्रान्तिकारी तथा सामन्त विरोधी बन गए तथा प्राचीन विशेपाधिकार के उन्मूलन के समर्थक बन गए। जबकि दूसरे प्रकार के नेता पूर्णतः प्रतिक्रियावादी थे जिन्होंने किसी भी प्रकार के नवीन प्रयास का विरोध किया तथा अपनी सुपरिचित दरिद्रता में प्राप्त सुरक्षा को ही पसन्द किया।

चार्टर की शपथ के अन्तर्गत सरकार

1868 के पांच अनुच्छेदों (गो काजो नो गो सेइयों) का शपथ-पत्र एक संक्षिप्त उपदेशात्मक प्रलेख था, जो शोतोकू तैनशी के प्रारम्भिक घोषणा पत्र का अवशेष था। इसके प्रावधान अत्यधिक सामान्य स्वरूप तथा नैतिक थे जो सरकार के विशिष्ट अंगों का वर्णन नहीं करते थे।

अन्तरिम व्यवस्था के रूप में प्रशासन को शताब्दियों पुरानी राजधानी इदो से और भी अधिक प्राचीन राजधानी क्योटो में रूपान्तरित कर दिया गया तथा 'तीन कार्यालयों वाला कार्यकारी प्रशासन' स्थापित किया गया।

जनवरी 1869 में स्थापित यह कार्यकारी सरकार अपने संगठन से अधिक अपने अधिकारियों की दृष्टि से महत्वपूर्ण थी। संशोकू में एक सर्वोच्च अध्यक्ष था, जो शाही परिवार का राजकुमार होता था तथा परामर्शदाताओं के दो समूह होते थे (गिजो तथा सैन्यो) जिनका मुखिया कुगे होता था। तीनों कार्यालयों में परामर्शदाता-पद समान स्तर पर कुगे, दैम्यों तथा समुराई में विभाजित किये गये थे तथा तोकूगावा को बाहर रखा गया था। सैद्धान्तिक रूप से सरकार पर शाही परिवार तथा दरबारी कुलीन वर्ग का आधिपत्य था। वास्तविकता में वास्तविक नेता नेपथ्य में कार्य करने में ही सन्तुष्ट थे। बाह्य कुलों के लोग चोशू के प्रतिनिधियों को छोड़ कर जिनका कोई भी सम्राट् के विरुद्ध 1864 में षडयंत्र करने पर अपमान किया गया, बाकी अभी भी वास्तविक नेतृत्व में थे।

1868 की फरवरी में तोकूगावा तथा नवीन सरकार के मध्य युद्ध क्षेत्र में संघर्ष बना हुआ था, प्रशासनिक पुनर्गठन के प्रयास प्रारम्भ किये गये। मिजो शाखा का पुनर्गठन किया गया। कार्यकारी सरकार यूरोपियन मॉडल की ओर बढ़ती गई, साथ ही इसने साम्राज्य के तांग मॉडल के आधार पर सात विभागों की स्थापना की। इसके साथ एक परामर्शदाता बोर्ड की स्थापना भी की गई। सिद्धान्ततः इस प्रकार नवीन सरकार के तीन विभाग कार्यपालिका (सोसाई), प्रशासनिक व्यवस्था (गिजो) तथा परामर्शदाता संस्था (सेन्यो) हो गए।[7]

चार्ट 13—13 जनवरी, 1868 से किये गये सुधारों को तथा 1885 के पंजीयन के मॉडल को प्रस्तुत करता है।

साम्राज्य को पुनः सक्रिय बनाने के साथ नये नेताओं ने एक विचार-विमर्श विधान-सभा के प्रयोग पर विचार प्रारम्भ किया। आंशिक रूप से इस प्रकार की विधान-सभा का विचार इसलिए भी रुचिकर था, क्योंकि यह विदेशी तथा आधुनिक था। आन्तरिक रूप से इसे तोसा कुल का समर्थन प्राप्त था, जो सत-चो शक्तियों का समर्थन प्राप्त करना चाहते थे, जबकि वास्तविक सरकार अवशिष्ट तोकूगावा लोगों के साथ समझौता कर व्यापक समर्थन प्राप्त करने का प्रयास कर रही थी।

चार्टर की शपथ नवीन सरकार के प्रयोजनों की प्रथम घोषणा थी। इसमें मात्र पाँच धाराएँ थीं तथा इनकी घोषणा युवा सम्राट् द्वारा मार्च 1868 को अत्यन्त संजीदगी के साथ की गई। प्रथम, उसने विचार-विमर्शकारी विधान-सभा की रचना की शपथ ली, द्वितीय, अर्थ व्यवस्था के पुनर्निर्माण में राज्य के मतैक्य की घोषणा की तृतीयतः व्यवसायात्मक चयन की स्वतन्त्रता, चौथे, अवांछनीय रीति-रिवाजों का उन्मूलन तथा अन्ततः सम्पूर्ण विश्व से ज्ञान प्राप्ति का प्रयास, ताकि शाही शासन की जड़ें मजबूत बन सकें (इस शपथ के विभिन्न अनुवाद 584 पृष्ठ पर [मूल पुस्तक] की नौवीं अनुक्रमणिका में दिये गये हैं।)[8]

चूंकि शपथ घोषणा पत्र की त्रुटियों का अनुभव इसकी घोषणा के समय ही कर लिया गया था, अतः एक अधिकारी की नियुक्ति नवीन सरकार में प्रतिनिधित्व की व्यवस्था के तरीकों का अध्ययन करने के लिए की गई, ताकि नई सरकार जनमत की वास्तविक प्रतिनिधि बन सके। उस अधिकारी ने चीन की राजनीतिक व्यवस्था, जापान की प्राचीन शाही सरकार तथा पश्चिमी राज्यों के विभिन्न व्यवसायों का अध्ययन किया। उसने संयुक्त

7. जैसे कि जापान के प्रस्तावित प्रथम आधुनिक संविधान की प्रस्तावना में कहा गया 'ये प्रबन्ध जो नागरिक अशान्ति के समय किये गये जल्दबाज़ी में पूर्ण तथा अपर्याप्त थे' (ज़े जी टी पूर्वाद्ध पृष्ठ 7) भूतपूर्व सामन्ती प्रदेश को प्रशासित करने वाले आदेश देखिये पृष्ठ 10 पर, तीन पदों की संरचना के लिये पृष्ठ 4-6।

8. बाद में सम्राट के आरोहण का औपचारिक समारोह केन्द्रीय महल में बनाया गया। सितम्बर में वर्ष का नाम केइयो से परिवर्तित कर दिया गया। इस प्रकार 1868 प्रथम मेयजी वर्ष सम्पन्नता का काल कहलाया। इन घटनाओं की महत्ता बाद में सम्राट हिरोहितो द्वारा 1946 की शाही घोषणा में व्यक्त की गई जिसमें चार्टर की शपथ को नवीन तथा शान्तिपूर्ण जापान का आधार बनाने का निश्चय दोहराया। चार्टर की शपथ का जापानी मूल तैयार किये गये मसौदों के साथ फुकी तथा मोरियां की योगो निहोन शी-लाईकेई मेयजी जिदाई शी पूर्वाद्ध पृ. 213-216 में है।

जनवरी
सर्वोच्च अध्यक्ष
20 परामर्शदाता
(सैंव्यो)
परामर्शदाता
दस प्रशासक
(गिजो)
अध्यक्षात्मक बोर्ड
विभाग
शितो
वित्त
न्याय
कानून
गृह
विदेश
सेना-जलसेना
सैन्सर
स्थानीय सरकार
1868 का संविधान
राज्य परिषद (दागोकान)
विचार विमर्शकारी सभा
अ उच्च सदन
(परामर्शदाता)
ब निम्न सदन
प्रतिनिधि
1869-70
विभाग
शितो
न्याय
वित्त
युद्ध
विदेश विभाग
(नगरीय मामले 1869-70)
कार्यपालिका विभाग
2 लार्ड अध्यक्ष
पुर्नगठन 1871
राज्य परिषद (दागोकान)
परामर्शदाता
वाम बोर्ड
मध्य बोर्ड
दक्षिण बोर्ड
विभाग अध्यक्ष
थल सेना 1872
जल सेना 1872
गृह विभाग 1873
पुर्नगठन 1875
सम्राट
सेनेट
राष्ट्रीय सभा
प्रीफेक्ट गवर्नरों
की सभा
प्रीवी परिषद
परिषद
विभाग
न्याय विभाग
सर्वोच्च न्यायालय

चार्ट 13
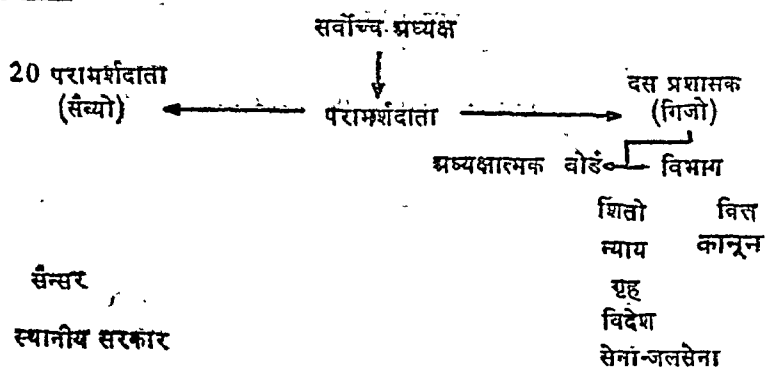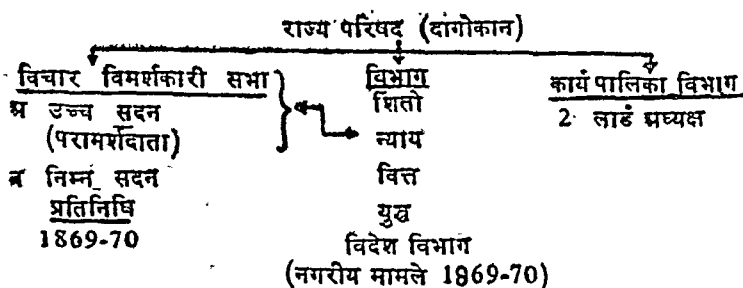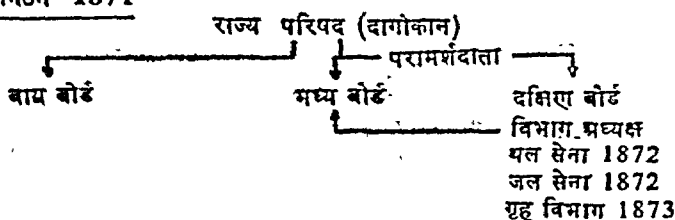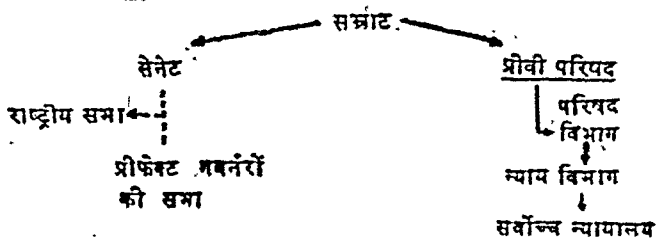
राज्य अमेरिका के संविधान तथा पश्चिमी राजनीतिक संस्थाओं पर एक लोकप्रिय पुस्तक का अध्ययन भी किया। इसका परिणाम 17 जून, 1868 को शाही घोषणा द्वारा निर्मित सेई ताइशो था, जिसे प्रायः जापान का आधुनिक संविधान कहा जाता है।[9]

सेई ताइशो के अन्तर्गत तीन पदों को समाप्त कर दिया गया। उनके स्थान पर एक राज्य-परिषद् की स्थापना की गई (दानोकान में इस पद का प्रयोग तैका तारहो संरचना में किया गया है।) दानोकान में विधायनी कार्यपालिका तथा न्यायपालिका शक्तियाँ निहित की गई थीं। इस व्यवस्था में द्विसदनीय व्यवस्थापिका का आयोजन था। निम्न सदन की शक्तियों पर इस व्यवस्था के द्वारा नियंत्रण लगा दिया गया था कि यह विधि-निर्माण नहीं कर सकता था, यह मात्र उन विषयों पर चर्चा कर सकता था जिसकी आज्ञा उसे उच्च सदन प्रदान करता हो। उच्च सदन गिजो तथा सेन्यो परामर्शदाताओं से संगठित था तथा सुरक्षापूर्वक पुनर्गठित कुलीन तंत्रों के हाथों में केन्द्रित था। निम्न सदन वस्तुतः कभी अस्तित्व में आया ही नहीं।[10] कार्यकारी आधार पर विभिन्न कुलों के प्रतिनिधि (कोशी) 1868 की ग्रीष्म में मिले पर बाद में उनका सम्मेलन प्रारम्भ में कुल समय के लिए किन्तु वास्तविकता में हमेशा के लिए उसी वर्ष के पतझड़ में समाप्त कर दिया गया। कोशी की

9. तोसा का फुकुओका था जिसने प्रथम लेख का प्रयोग प्रतिनिध्यात्मक संस्थाओं के अध्ययन के आधार के रूप में किया। उसने फुकुजावा द्वारा लिखित सेइयो जिजो (पश्चिमी परिस्थितियों अमेरिका का संविधान पढ़ा जिसका प्रयोग अमेरिकी धर्म प्रचारक शिक्षक गाइडो व वोर्क ने शिक्षण की अंग्रेजी पुस्तक के रूप में किया था।) सम्भवतः फुकुजावा (1835-1901) इस युग का सर्वाधिक प्रभावशाली बुद्धजीवी था। विशेषतया पश्चिमी विचारों का प्रचलित करने के सन्दर्भ में समूराई कुल में जन्म लेने के बाद उसने डच भाषा का अध्ययन किया प्रथम जापानी मिशन में 1860 में अमेरिका गया तथा वापिस आने पर आधुनिक केयो विश्वविद्यालय में प्रसिद्ध के ओ गिजुक की स्थापना की। उसका सर्वाधिक प्रसिद्ध लेख सेयो जिजो (18(6) था। यहां यह महत्त्वपूर्ण रूप से उल्लेखनीय है कि फुकुजावा की रचनाएँ जो जापान के विचार-नियंत्रण के काल में आलोचना का विषय बनी थीं, उन्हीं का द्वितीय महायुद्ध के बाद के काल में पुनरुदय हुआ। कर्बोक की जीवन-कथा, लेखक डब्ल्यू इ गिमिस, ने न्यू टेस्टामेंट तथा अमेरिकी संविधान नामक सर्वाधिक प्रचलित रचनाओं को लिखा। सोमेजिया तातिओमी तथा ओकूमा शिगेनोबू दोनों उसके शिष्य थे। कर्बोक ऑफ जापान, ए सिटीजन ऑफ नोकन्ट्री, न्यूयार्क, 1900, पृ 124 125। गोकालो नो जो सेइयो तथा सेतेशो की उत्पत्ति पर फुकुओका का अधिकृत लेख कोका ग काई, सोरित्नु मनमुनाजूनेन किनेन मेयजी केनसेई केईजाई शिरोन (राजनीति तथा सामाजिक विज्ञान परिषद् की तीसवीं वर्ष गांठ के उपलक्ष में प्रकाशित मेयजी काल का संवैधानिक तथा आर्थिक इतिहास) टोक्यो 1919। सेईतिगो घोषणा, देखिये जे. जी डी पृ. 7-15।

10. अन्तर्संम्बन्धित निदेशालय का उदाहरण नवीन सरकार के अधिकारियों के बारे में प्रस्तुत सारांश से स्पष्ट होता है। (जून 11, 1168, 15 अगस्त, 1869) गिजो में कुल 21 व्यक्ति नियुक्त किए गए—9 दरबारी (जिनमें इवाकुए तो मोमी संजो साने योशी तथा 12 प्रादेशिक दरबारी (सतमुमा, चोशु, तोसा हिजेन, एकीजेन, एकी, आवा, ओवारी, बिजेन, कुमामोतो, इनाका उवाजिमा, कुलो के प्रतिनिधि लार्ड) 22 सेन्यो—3 न्यायालय लॉर्ड को कुमायोतो क्षेत्र के उत्तराधिकारी थे, रीजेन तथा एंडी के दैम्यो, 16 निम्न वर्गीय समुराई (5 सतमुया, 2 चोशु, 9 तोसा, 3 हीजेन, 1 कुमामातो तथा एक एचीजेन) थे। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के प्रोफेसर रावर्ट ए विल्सन लास एंजल्स में इस निर्णय पर पहुँचे। इस प्रकार सेतेशो में व्यक्त सिद्धान्त के विपरीत, विचार-विमर्श वाली समिति तथा कार्यपालिका-विभाग वस्तुतः, सरकार का नीति-निर्माण तथा क्रियान्वित करने वाला एक ही अंग था। 'दि सेयतैशो ए कांस्टीट्यूशनल एक्सपेरीमेंट' फारईस्टर्न क्वारटंली अंक ग्यारह, संख्या 3 (मई 1352) पृ. 30।

एक नई समिति ने नवीन विचार विमर्शकारी सभा के लिए एक नवीन प्रस्ताव पारित किया गया जो कोशिगो कहलाई।

कोशिगो एक सर्वाधिक उल्लेखनीय व्यवस्थापिका थी। यह 1869-70 में सीमित समय के लिए मिली तथा इसने अपना नाम दूसरे अधिवेशन में बदल कर राष्ट्रीय विधान-सभा (शुजी इन) रख लिया। चूंकि जापान में संसदीय व्यवस्था से कोई भी परिचित नहीं था और कोशिगो के सदस्यों को प्रारम्भ से संसदीय व्यवस्था का निर्माण करना पड़ा, उन्हें व्यवस्थापिका को एक वास्तविक समिति बनाने में सफलता प्राप्त हुई तथा उसके साथ ही उन्होंने 46 प्रक्रिया सम्बन्धी नियम भी बनाये। कोशिगो की सर्वाधिक अवांछनीयता इसकी सदस्यता में निहित थी। इसके सदस्य 276 सामन्ती कुलों के प्रतिनिधि थे।

अगस्त 1869 में सेईतैशो व्यवस्था के स्थान पर दो मुख्य पदों की संक्रमणकालीन व्यवस्था स्वीकार की गई (दाजोकान अथवा राज्य परिषद तथा जिनगिकान अथवा शितो पूजा का कार्यालय) इसके साथ 6 अन्य कार्यकारी विभाग थे। यह 701 ई. के न्यादर्श की अनुकृति थी।[11]

प्रत्यक्ष शाही सरकार

अपरिपक्व प्रतिनिधि व्यवस्था के निरन्तर प्रयोगों के परिणाम स्वरूप अन्ततः सामन्ती व्यवस्था का उन्मूलन हुआ। 1871 के पश्चात् सरकार पर निरन्तर उन सामन्तों का नियंत्रण रहा जिन्होंने सम्राट् की पुनर्स्थापना में सहयोग दिया था। परामर्शदाताओं के (सांजी) रूप में उन्होंने पूर्णतः उच्च सदन तथा प्रशासनिक विभाग पर नियंत्रण रखा था पुरातन चीनी भाषा में सरकार को बोर्ड के नाम से जाना जाता था उच्च सदन केन्द्रीय बोर्ड था (सेई-इन) प्रशासनिक विभाग सामूहिक रूप में 'दक्षिण बोर्ड' (यू-इन) तथा निम्न सदन 'वाम बोर्ड' (साइज शुगी इन का उत्तराधिकारी) था। निम्न सदन विभिन्न कुलों तक का प्रतिनिधित्व नहीं करता था तथा यह विधान-सभा कम व संविधान पर शोध करने वाली समिति अधिक थी।

आधुनिक मन्त्रालय

1872 में सेना तथा जल सेना के दो पृथक् विभाग इस आशा से निर्मित किये गये कि 1873 में सर्वदेशीय अनिवार्य सैनिक भर्ती अध्यादेश प्रेषित किया जाएगा। मुख्य नगरों में सैनिक टुकड़ियों की स्थापना की जा चुकी थी। यमागाता आरितोमो तथा सैंगो ताकामोरी इन दो प्रसिद्ध नेताओं को यूरोप के सैनिक संगठन का अध्ययन करने के लिए भेजा गया।

1873 में गृह मामलों का नवीन विभाग बनाया गया। ओकूबो तोशीमीची के निर्देशन में आन्तरिक प्रशासन तथा सार्वजनिक वित्त में पर्याप्त सुधार हुए तथा उसने राष्ट्रीय आय को बढ़ाने के लिए आदर्श उद्यमों तथा अन्य सुविधाओं की व्यवस्था की। अर्थ व्यवस्था की दृष्टि से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व्यवस्था कुछ समय के लिए स्थापित (1870-85) कोबूशों अथवा उद्योगों का विभाग था। औद्योगीकरण की व्यवस्था में

11. राजकुमार सैंजों ऐनेमोशी ने बाद में स्वीकार किया कि 1869 में किया गया पुनर्गठन 70 की तेहो संहिता का निष्ठापूर्वक अनुकरण था। (मूल संरचना के लिये देखिये पृ. 283) जे० जी० टी० पृ. 91।

केन्द्रीय रूप से सामंजस्य स्थापित करने वाली संस्था के रूप में कोवूशों तकनीकी शिक्षा, खनिज उद्योगों का निरीक्षण, रेलमार्गों का निर्माण तथा सुरक्षा, टेलीग्राफ लाइन तथा दीपघरों की व्यवस्था करता था, नौ सैनिक तथा व्यापारी जहाजों का निर्माण तथा उनकी मरम्मत, हल्की धातु तथा मशीन की वस्तुओं का निर्माण तथा भूमि व समुद्री सर्वेक्षण आदि कार्य करता था।[12]

जैसे-जैसे आधुनिक शिक्षा प्राप्त अधिकारी वर्ग प्राप्त होता गया तथा जापानियों को आधुनिक तरीके से कार्य करना आने लगा, जैसे-जैसे'' आने लगा, 1879 तथा''''व्यवस्था की ओर बढ़ता गया। 1870 तथा 1880 की दो दशाब्दियों में सरकारी विभाग तीव्रता से अपनी पुरातन चीनी पद व्यवस्था से यूरोपियन प्रकार की प्रशासनिक व्यवस्था की ओर बढता गया।

सेनेट तथा न्यायालय

1875 में जापानी नेताओं का एक सम्मेलन सरकार की स्थिति पर पुनर्विचार करने के लिए पुनर्स्थापना करने के लिए तथा पुनर्स्थापना करने वाले विभिन्न गुटो के मध्य एकता स्थापित करने के लिए बुलाया गया, जिसकी 14 अप्रेल, 1875 को शाही उद्घोषणा हुई।[13] दाजोकान को को बनाए रखा गया किन्तु उसके साथ गेनरो इन नामक सेनेट जैसी सस्था बनाई गई, जिसकी सम्पूर्ण सदस्यता नियुक्त सदस्यों की थी। इस संस्था को मात्र उन विषयों पर विचार करने का अधिकार था, जो राज्य परिषद इसके सम्मुख प्रस्तुत करती। इसकी सदस्यता (1) दरबारी, (2) उस समय अथवा पहले के प्रथम तथा द्वितीय श्रेणी के प्रशासनिक अधिकारी, (3) वे लोग जिन्होंने राज्य की विशेष सेवा की थी, तथा (4) राजनीतिक व कानूनी ज्ञान रखने वाले लोगों तक सीमित थी। कुछ परिवर्तनो के साथ यही माप दण्ड बाद में हाउस ऑफ पिअर्स की सदस्यता का आधार बन गया।

एक अन्य नवीनीकरण एक सर्वोच्च न्यायालय (अथवा दैशिन इन) था जिसने कानूनी व्यवस्था का तीव्र रूपान्तरण करने में सफलता प्राप्त की।

ये दोनों परस्पर मेयजी संविधान की घोषणा तक बने रहे।

बौद्धिक आन्दोलन तथा राजनीतिक समूह

एक बार मेयजी के अनुभव के पश्चात् जापान के शिक्षित तथा प्रबुद्ध वर्ग में देश की मूलभूत सामान्य नीतियों के निर्धारण के बारे में बहुत कम असहमति थी। सभी समूह इस बात से सहमत थे कि जापान का अन्तिम उद्देश्य सम्पन्न तथा पगू सुदृढ़ रूप से सुरक्षित (फुकोकू क्योहेई) राज्य होना चाहिये। विभिन्न सम्प्रदाय आधुनिकीकरण, सुधारों की मात्रा

12. नार्मन पूर्वोक्त पृ. 129।

13. यह सम्मेलन जनवरी 1875 में ओसाका में हुआ। घोषणा का प्रारम्भ था "हमारी इच्छा स्वयं को मात्र पांच सिद्धान्तों तक बनाए रखने की नही है, उसके अलावा हमारी प्रतिज्ञा है कि हम घरेलू सुधारो का दायरा, उसे कहीं विस्तृत बनाएंगे। इन दृष्टिकोण के साथ हम चेनरो इन की स्थापना करते हैं, जो शाही विधियो का निर्माण करेगी तथा देशीन-इन न्यायालयो की सत्ता को मजबूत बनाएगी" जे० जी० डी० पृष्ठ 41-42।

तथा अवसर की उपयुक्तता के बारे में ही भिन्नता रखते थे।[14] एक समूह जॉन स्टुअर्ट मिल की रचना ऑन लिबर्टी (187) में अनुवादित से प्रभावित होकर ब्रिटिश उपयोगितावाद को स्वीकारने के पक्ष में था। अन्य समूह अमेरिकी प्रोटेस्टेन्ट तथा पूंजीवादी दृष्टिकोण को पसन्द करता था। एक तृतीय समूह लोकप्रिय सम्प्रभुता के फ्रांसीसी विचार, विशेषतया रूसों के सोश्यल कांट्रेक (1827 में अनुवादित) का समर्थक बन गया। अन्य जापानियों ने समाजवाद का प्रसार किया, रेवरंड ड्वाइट विटने लगेज एक अमेरिकी धर्म-प्रचारक था तथा सम्भवतया वह प्रथम व्यक्ति था जिसने जापान में समाजवाद पर भाषण दिया।[15]

इतनी उग्रवादी विचारधाराओं का सामना करने के लिए सेनेट (गेनरो इन) यहां तक तत्पर हो गई कि उसने रूसों के उग्र विचारों के प्रभाव का सामना करने के लिए एडमंड बर्ग के विचारों की रचनाओं का अनुवाद करवाया। इस संवैधानिक प्रक्रिया के तीव्र विकास का एक व्यावहारिक प्रेरक अनेकों असमान सन्धियों का प्रभाव भी था। ये सन्धियां मूलतः तोकूगावा शासन द्वारा पश्चिमी देशों के साथ की गई थीं। इन्हीं शक्तियों द्वारा चीन के साथ की गई असमान सन्धियों के समान, जापान में सभी पश्चिमी नागरिकों को जापानी क्षेत्राधिकार से स्वतन्त्र कर दिया गया, जापानी प्रदेश पर पश्चिमी न्यायालयों को कार्य करने की स्वीकृति प्राप्त हुई तथा जापानी बंदरगाहों पर पश्चिमी देशों की विशिष्ट नगर-पालिकाओं का नियंत्रण विदेशी सरकारों को सौंप दिया गया। जापान की सम्पूर्ण प्रगति की जांच तब होती, जब जापान ऐसी सरकार का विकास करता जो बाह्य शक्तियों द्वारा अपेक्षित स्तर को पूरा कर पाती, ताकि जापान असमान सन्धियों को समाप्त करने की माग औचित्य स्थापित कर पाता।

जबकि सैगो ताकामोरी पूर्ण विद्रोह की ओर बढ़ रहा था, इतागाकी तैसुके ने राजनीतिक का खेल अत्यधिक दक्षतापूर्ण ढंग से खेल कर जापान को संवैधानिक राजनीति की दीक्षा दी। उसने टोक्यों में पेट्रिओटिक पब्लिक पार्टी की स्थापना की तथा सरकार के दमन के परिणामस्वरूप 1874 में उसे विघटित कर दिया। उसी वर्ष उसने सरकार को

14. सभी विचार सम्प्रदायों में कई बातें समान थीं जिनके अतिरिक्त फुकोकी क्योहेई पर भी सहमति थी। सब ही तीव्र संस्कृति न सही, पर तकनीकी रूपान्तरण पर सहमत थे। प्रत्येक अपने से सम्बन्धित विदेशी विचारों पर निर्भर करते थे। वस्तुतः मेयजी के प्रथम युग को अनुवाद का युग कहा गया है। यहाँ सभी अनुवादित कार्यों की सूची बनाना सम्भव नहीं है। गेयजी बुका जेंशु (मेयजी का सास्कृतिक संकलन) सम्पादक योशिनो साकुनो, टोक्यो० 1928-30 24 खण्ड प्रारम्भिक मेयजी. संस्कृति के सभी पहलुओं की सामग्री का मूल स्रोत है। आठवी खण्ड में मिल, हॉब्स रूसो तथा अन्य पश्चिमी विचारको की रचनाओं का अनुवाद है। संक्षिप्त विश्लेषण के लिए कादा की रचना मेयजी शोकी शाकाई केईकाई शिशों भी पूर्वोक्त खण्ड सात (मुख्य साहित्य) पृष्ठ 875, प्रोफेसर होंजो ने केईजाई सेन्सो। इकोनोमिक रिव्यू में अंक 40 संख्या पांच (मई 1940) के पुनर्स्थापना के पहले व बाद के यूरोपियन कृत चिंतन पर एक लेख लिखा। अंग्रेजी में आइको पूर्वोक्त अध्याय दस "इटे लेक्युअल करेंट्स" पृष्ठ 111-123 मे भी इसी पर चर्चा की गई है।

15. जब एक जापानी छात्र किमुरा, जो बाद में डॉ० लर्नेड बना, ने, जब "जापानी समाजवाद का गुप्त कल्याणकर्त्ता" नामक ग्रन्थ लिखा तो अत्यधिक विवादास्पद बन गया, शाकाई मोडाई कोजा (सामाजिक समस्याओं का अध्ययन) खण्ड तीन पृष्ठ 127-131। द्वितीय महायुद्ध के बाद के साहित्य के लिए देखिए पुराने यो.। की आत्मकथा, देखिए—एबी इसू जिजोदन शोकाईशुगीशा तो नारून मेड (एबी इसू की समाजवादी बनने से पहले तक की आत्मकथा) टोक्यो, 1943।

में लिया गया उसने फिर दल को भंग कर दिया। जिन नामों से दलों की पुनर्स्थापना की गई, वे ऐतिहासिक विवरणों में इन नामों से दिये गये हैं—एइकोकू कोटो, रिशिशा, एकोकूशा। इतागाकी के प्रयासों से राजनीतिक जागृति आई तथा 1879 तक उसके समूह ने सम्राट् से राष्ट्रीय सभा आमन्त्रित करने की याचना की।[17] द्वितीय विश्वयुद्ध तक राजनीतिक दलों का आनुवंशिक चार्ट पृष्ठ 357 (मूल पुस्तक के) पर दिया गया है।

सरकार द्वारा प्रतिनिधि सरकार के लिए दी गई सुविधाएँ भी पर्याप्त उचित थीं। 1875 में क्षेत्रीय सरकारों का सम्मेलन (चिहो काकारगी) स्थानीय मामलों पर सलाह देने के लिए बुलाया गया। 1878 में संकुचित मात्रा में सम्पत्ति पर आधारित योग्यता के अनुसार कुछ लोगों को क्षेत्रीय विधान-सभाओं में मत देने का अधिकार दिया गया। 1880 में विधान-सभाओं को निर्वाचित करने का अधिकार नगरों, कस्बों तथा ग्रामों तक व्यापक बना दिया गया। इसी समय मेयजी प्रशासन तंत्र ने पुलिस व्यवस्था का केन्द्रीकरण किया तथा प्रेस के प्रयोग, सम्मेलन बुलाने तथा भाषणों का सेंसर करने सम्बन्धी नियमों का निर्माण किया।

दलों का प्रारम्भ

1881 का वर्ष जापान में अर्थ व्यवस्था तथा राजनीतिक दलों के उदय का वर्ष था। होकाइदा के उपनिवेशीकरण कार्यालय में एक धोखेबाजी के मामले में प्रशासन वर्ग की पोल खुल गई। इस जालसाजी के मामले की ओकूमा ने कटु आलोचना की तथा वह अन्य परामर्शदाताओं के लिए अवांछनीय व्यक्ति बन गया। परिणामतः इतागाकी के समान वह भी राजनीतिक दलों के निर्माण की ओर अग्रसर हुआ।[18] इतागाकी ने जापान के प्रथम आधुनिक राजनीतिक दल उदार दल (जियुतो) की स्थापना 18 अक्तूबर, 1881 को टोक्यो में एक संगठनात्मक मीटिंग में की। उसी के नमूने पर ओकूमा ने संवैधानिक प्रगतिवादी राजनीतिक दल (रिकेन कैशिंटो अथवा अधिक सामान्यतया कैशिंतो) की 14 मार्च, 1882 में स्थापना की उसी वर्ष अपनी आरम्भिक अवस्था में एक समाजवादी दल का निर्माण भी किया गया। सरकारी अधिकारियों ने जब सब ओर दलों का निर्माण होते देखा तो स्वयं उन्होंने भी संवैधानिक शाही दल (रिकेन तेईसेइतो) की 1882 में स्थापना की।[19]

17. 1879 से पहले 1877 में रिशीशा घोषणा की गई, देखिए जे॰ जी॰ डी॰ 457-480। उदारवादी आन्दोलन के विकास तथा परिवर्तन के लिए देखिए नाक्याया यासुमासा सम्पादक, शिम्कु हुसेई मेयजी हेनेन शी (ए क्रानोलॉजीकल मेयजी हिस्ट्री कम्पाइल्ड फ्राम दि न्यूज पेपर्स), 1935 अंक छः आइके द्वारा उद्धृत पूर्वोक्त जिसने अध्याय छः तथा सात में सारांश दिया है।

18. अन्ततः सरकार द्वारा बाध्य किए जाने पर ओकुमा ने होक्इटो की सम्पत्ति के विक्रय को स्थगित कर दिया तथा सरकार से यह आश्वासन लिया कि 1980 तक एक सभा बुलाई जाएगी, 12 अक्टूबर, 1881 को डाइट की स्थापना की शाही घोषणा की गई। इसके साथ ही एक कठोर चेतावनी दी गई, "हमने देखा है कि हमारी जनता की प्रवृत्ति बहुत शीघ्रता से आगे बढ़ने की हो रही है, जिसमें उस चिंतन का अभाव है जिससे यह प्रगति स्थायी बन सकती है।" हम अपनी उच्च तथा निम्न स्तरीय जनता को हमारी इच्छा का ध्यान रखने के लिए सतर्क हैं तथा जो लोग आकस्मिक तथा हिंसक परिवर्तन का समर्थन करेंगे, उनसे हम रुष्ट हो जाएँगे। जे॰ जी॰ डी॰ पृष्ठ 86-87।

19, इन दलों के प्रारम्भिक इतिहास के लिए ओसाताका ताकेकी की रचना सेइतो नो हत्सुत्सु (राजनीतिक दलों का विकास), टोक्यो, 1935, देखिए। संक्षिप्त होते हुए भी अमूल्य है। स्वयं ओकूमा ने दि हिस्ट्री ऑफ पोलिटिकल पार्टीज इन जापान फिफ्टीइयर्स खण्ड प्रथम पृष्ठ 150 पर देखिए। अंग्रेजी में सर्वोत्तम वर्णन आइके पूर्वोक्त अध्याय आठ तथा नौ में देखिए।

1880 की दशाब्दी में राजनीतिक गतिविधि सक्रिय, प्रेरणास्पद, अस्पष्ट तथा निराशाजनक रूप से असमर्थ थी। 1885 में दल जो इतने आशापूर्ण ढंग से प्रारम्भ हुए थे, अपवाद रहित रूप में सबके सब दमन तथा विनाश के शिकार बने। सरकार प्रशियन प्रारूप की ओर अग्रसर हुई तथा उनके विघटन के आदेश दे दिए गए।

यूरोपियन प्रकार का मन्त्रि मण्डल

जब जापान का प्रबुद्ध वर्ग राजनीतिक सिद्धान्तों के बारे में बात कर रहा था तथा जब व्यावहारिक राजनीति जापान की सड़कों पर हलचल पैदा कर रही थी उस समय प्रशासनिक वर्ग को जापान से बाहर से रिपोर्ट मिल रही थी, जिसके आधार पर वे यह फैसला करने का प्रयास कर रहे थे कि जापान में किस प्रकार की सरकार उचित रहेगी ? जापानी जितना अधिक बाह्य विश्व को देखते थे, प्रशिया का मॉडल उन्हें उतना ही उचित लगता था। जापान की प्रथम आधुनिक केबिनेट 1885 में बनाई गई, जो बर्लिन के नमूने से पर्याप्त साम्य रखती थी। इस केबिनेट में एक अध्यक्ष मन्त्री था, जिसकी स्थिति जर्मन चांसलर से पर्याप्त मिलती थी तथा गृह मन्त्रालय, विदेश विभाग, वित्त, सेना, नौसेना न्याय, शिक्षा, कृषि तथा वाणिज्य तथा संचार सोध साधनों के मन्त्री थे। गोपनीयता की दृष्टि से संविधान का कार्य शाही परिवार की एक पृथक् समिति द्वारा किया जाता था। इतो हिरोबूमी प्रधान मन्त्री तथा शाही परिवार का मन्त्री दोनों ही था। इस प्रकार उसका नियंत्रण वर्तमान सरकार पर तथा भविष्य की सरकार दोनों पर था। शाही दरबार के अन्तर्गत प्रीवी सील के संरक्षक लॉर्ड क्रीपर का पद रखा गया। अन्य प्रशासनिक व्यवस्था आधुनिकीकरण किया गया तथा उसकी घोषणा की गई।

1887 में सम्राट् को सैनिक नीति पर परामर्श देने के लिए एक युद्ध परिषद् की स्थापना की गई। इसी के साथ एक शान्ति-संरक्षक-अध्यादेश स्थापित किया गया जो टोक्यो में मार्शल कानून के समान प्रभावशाली था। 1888 में प्रीवी काउन्सिल की स्थापना की गई तथा इतो उसका प्रथम अध्यक्ष था।[20]

यूरोपियन मॉडल के जापानीकरण की सम्पूर्ण प्रक्रिया में सर्वोत्कृष्ट समय तब आया, जब 11 फरवरी, 1889 को मेयजी सम्राट् ने एक नवीन तथा अन्तिम संविधान को लागू करने की घोषणा की। पूर्णतः जापानी व्यवहार के अनुसार सर्वप्रथम उसने संविधान देवताओं को समर्पित किया तथा तब जनता को समर्पित किया। जो दिन इस कार्य के लिए चुना गया था, वह जापान की पौराणिक कथा में जापान की स्थापना करने वाले सम्राट् जिम्मू तैनो के पदारोहण की 2549वीं वर्ष गांठ का दिन था।

यह संविधान मूलतः, हिरोबूमी रचना था, जो 1870 में अमेरिका गया था तथा वहां उसने पर्याप्त औपचारिक ढंग से गृह-सचिव हैमिल्टन फिश से अमेरिकी संविधान की एक प्रतिलिपि मांग कर उसका अध्ययन किया था। 1882 में इतो के नेतृत्व में विदेशों में संविधानों का अध्ययन करने के लिए एक और आयोग बनाया गया। उसने अपना अधिकांश समय जर्मनी में बिताया तथा बिस्मार्क से साक्षात्कार किया। इतो की सहायता तीन

20 विद स्टेट्स मेन ऑफ ट्राइट बेबीवर नेम एन इट्स मेम्बर्स जापान इयर बुक, 1946-48 पूर्वोक्त पृष्ठ 73 (इन सभी संस्थाओं की स्थापना, के सर्वे के साथ) अतिरिक्त विस्तार के लिए देखिए जे० जी० डी० पृष्ठ 32, 89, 90, 97, 102-104, 127 तथा मकनॉरेन, पॉलिटिकल हिस्ट्री, पूर्वोक्त अध्याय आठ।

जापानी विद्वानों तथा एक जर्मन प्रोफेसर ने की जो जापान व टोक्यों के शाही विश्वविद्यालय में था। उसका नाम प्रोफेसर हरेमन ऐसलर था। 1888 में मई से लेकर दिसम्बर तक जापान की नवनिर्मित प्रीवीकौंसिल ने गोपनीय ढंग से संविधान के प्रारूप पर विचार-विमर्श किया, जिसमें स्वयं मेयजी सम्राट् ने भी भाग लिया।[21]

नवीन संविधान ने जापान के राजनीतिक इतिहास में एक नये युग का श्री गणेश किया, जिस पर आगे के अध्यायों में विचार किया गया है। तथापि गत अनुभवों के आधार पर मेयजी रूपान्तरण को, यह आवश्यकता से अधिक श्रेय देना है कि उसने जापान का मूलतः पश्चिमीकरण कर दिया होगा। एक बार में एक ही चमत्कार पर्याप्त होता है। यह उल्लेखनीय है कि जापान के सामन्ती नेता अपनी तकनीक तथा प्रशासन का आधुनिकीकरण करने में पर्याप्त सफल हुए जिसने उनके देश को एशिया की एकमात्र महान् शक्ति बना दिया। प्रकट रूप में ये आकार पश्चिमी थे किन्तु यथार्थ में अच्छाई व बुराई दोनों में वे जापानी थे।

□□□

21. जब अन्ततः संविधान लागू किया गया तो यह घोषणा भी सम्राट् के नाम से की गई थी। शाही घोषणा अंशतः इस प्रकार थी—"हमारे पूर्वजो के प्रताप से, अनादि काल से चले आ रहे वंश के उत्तराधिकारी के रूप—राज्य की सम्प्रभुता हमने अपने पूर्वजों से प्राप्त की है। तथा हम इसे अपने उत्तराधिकारियो को संविधान की व्यवस्था के अनुसार प्रदान करेंगे। न तो हम, न ही हमारे वंशज सविधान की व्यवस्था के अनुसार इनका प्रयोग करने में असफल रहेंगे।" प्रोफेसर हेराल्ड एस क्विगले प्रारूप निर्माण का मनोरंजक व अधिकृत वर्णन प्रस्तुत करता है, जो इतो के निकट सहयोगी वाइकाउट कोनेको केन्टरों से साक्षात्कार पर आधारित है। पूर्वोक्त अध्याय तीन। इतो म्योजी, ने इतो हिरो भूमि कत कमेंट्रीज ऑन दि कांस्टीट्यूशन ऑफ दी इम्पायर ऑफ जापान, जिसका सन्दर्भ नीचे दिया जाएगा, का अंग्रेजी में अधिकृत विश्लेषण प्रस्तुत किया। मार्च 1884 को संविधान प्रारूप समिति के सलाहकार के रूप में डॉ॰ हरमेन रोसलर की नियुक्ति की गई। देखिए सुजेकी यासुजो केम्पो नो रेकीशितेकी कॅंयु (हिस्टोरिकल स्टडीन ऑन दि कांस्टीट्यूशन) टोक्यो 1935 निहोन केम्पो सेतई नी तैसुरू हेरूमन रे सुरू नो किया (दि कंट्रीब्यूशन ऑफ हरमन रोसेलर टू दी एस्टेब्लिशमेंट ऑफ दि जपानीज कांस्टीट्यूशन) मेयजी कुक्या केन्क्यू (स्टडीज इन मेयजी कल्चर) संख्या पाँच मई 1935। जापानी राजनीति के चिंतन शील अध्येता यह सोच सकते हैं कि मेयजी जापान का अन्तिम संविधान प्रतिमान बिदेशी मॉडल के सन्दर्भ में तथा विरोधी दलों की चेतावनी के बिना भी क्या वैसा ही नही बनता। इस प्रकार के अध्येताओं में जार्ज सॅंसव को निहित किया जा सकता है जिसने इस विषय की दि वैस्टर्न वर्ल्ड में चर्चा की है। पूर्वोक्त अध्याय 13, पृष्ठ 358 तथा डॉ॰ आइके का अप्रकाशित लेख जो 20 दिसम्बर 1950 को अमेरिकी इतिहास परिषद के सम्मुख पढ़ा गया 'डिमोक्रेसी वर्सेज एब्सोल्यूटिक इन मेमजी जापान'।

अध्याय 16

मेयाजी संविधान

यूरोप को मॉडल के रूप में स्वीकारने के पश्चात् जापान ने एक महान् शक्ति के रूप में अपने लिए अत्यधिक सभ्य तथा प्रगतिशील राष्ट्र की भूमिका का चयन किया। पुनर्स्थापना करने वाले नेताओं ने जापानी समाज के सम्मुख एक आधुनिक रूप वाला प्रकटतः पश्चिमीकृत सरकार का स्वीकार करने योग्य ढांचा खड़ा कर दिया, तथापि जापानी समाज का अधिकांश भाग संस्कृति परंपरा तथा भाषा की दृष्टि से जापानी रहा तथा प्रशासनिक आदतें. विधि संबंधी चिंतन की स्थितियाँ, वे दैनिक विचार जिन सब का सामना व्यवहार में किसी भी सरकार को विशिष्ट कार्यों को करते समय करना पड़ता है वे सब जापानी ही रहे।

जापान तथा पश्चिमी राष्ट्रत्व :

जापान में यूरोपियन सरकार के जिस मॉडल की स्थापना राष्ट्र बनने से पूर्व हुई वह पूर्णतः छल नहीं था। यह उतना ही वास्तविक था, जितना किसी दूसरे युग में नांग शासन का उदाहरण रहा था।

संवैधानिक दृष्टि से आधुनिक जापान की असाधारण विशेषता, जापान द्वारा राजनीतिक अस्तित्व के लिए राष्ट्रीय राज्य मॉडल को स्वीकार करना था। जापान कभी भी राष्ट्रों के कन्फ्यूशियवादी परिवार-मंडल का स्वरूप नहीं बना था, न ही जापान उस मुख्य चीनी साम्राज्य का अंग रहा था। जापान सर्वदा से ही एक पृथक राष्ट्र रहा था। यूरोप में जब शताब्दियों के कटु अनुभव के पश्चात् राष्ट्रीय राज्य का आकार गढ़ा गया था तथा अंततः जब यूरोप के लोग स्वयं को राष्ट्रीय राज्य के महान् निर्माता समझ रहे थे, जापान स्वाभाविक रूप से ही राष्ट्र-राज्य के समान था यद्यपि स्वयं जापानी इस तथ्य से अभिज्ञ नहीं थे। पूर्व ऐशिया के अन्य देशों को आधुनिक विश्व में राष्ट्र बनने से पूर्व अपनी एशियाई राजनीतिक चेतना का त्याग करना पड़ा चीनियों को स्वयं के बारे में सर्वव्यापी साम्राज्य होने का अहसास छोड़ना पड़ा तथा इसके बदले में कोरिया तथा अन्याय को स्वयं के लिए सदा सर्वदा के लिए चीन के सर्वव्यापी राज्य के आश्रित होने की धारणा को छोड़ना पड़ा। किन्तु जापानी, जिन्होंने कभी भी स्वयं के लिए विश्व-साम्राज्य की कल्पना नहीं की थी जिन्होंने चीनी विश्व-साम्राज्य में एक अधीन राज्य के सम्मानीय स्तर को भी अस्वीकार किया था (आशिकागा शोगुन योशिमित्सु इसका अपवाद है), के लिए ऐसी राजनीतिक व्यवस्था को अपनाना सहज था जो ऐसे अनेक राज्यों के अस्तित्व में विश्वास करती, जिनमें से प्रत्येक अनूठा स्वतन्त्र तथा अपने कार्यों के लिए स्वयं उत्तरदायी होता।

व्यावहारिक दृष्टि से जापान को आधुनिक राष्ट्र बनने की आवश्यकता नहीं थी। जापान अचेतन रूप से उस समय से ही एक राष्ट्रीय राज्य के समान था उस जब यूरोप में

आधुनिकता अथवा राष्ट्रत्व में ये तत्व ही स्वीकृत कारक ही नहीं बने थे। जैसे ही सुदूरपूर्व में "राष्ट्रीय राज्य" की जटिल प्रघटना प्रकट हुई जापानियों को लगा कि इसमें स्पष्ट रूप से वही राजनीतिक अभिव्यक्ति निहित थी जिसे वे उत्तरोत्तर स्पष्ट रूप से प्राप्त करते जा रहे थे। इस प्रकार यूरोप के राजनीतिक मॉडल को अपनाने में जापान को किसी प्रकार के तनाव का समाना नहीं करना पड़ा, जैसे 12 शताब्दी पूर्व चीन के सर्वव्यापी साम्राज्य के मॉडल को जापान की संकुचित सीमाओं में स्वीकार करने के प्रयासों में करना पड़ा था, क्योंकि यूरोप का मॉडल जापान के निजी प्रयोग के लिए उपयोगी था।

इस प्रकार वास्तविक मेयजी संविधान आकर्षक एवंम प्रशासनीय राजनीतिक कृति है। यह एक गैर पश्चिमी संस्कृति के द्वारा पश्चिमी राजनीतिक संस्थाओं को स्वीकार करने के अत्यन्त सुखद अनुभव को प्रस्तुत करता है यदि इस संविधान को पूर्णतः पश्चिमी अर्थों में देखा जाता है, जैसे यदि इसे जापान के संवैधानिक जीवन में विभिन्न मूल दबावों पुनर्गठित करने वाला अथवा सार्वजनिक तथा निजी चरित्रों में परिवर्तन करने वाला माना जाय तो यह अर्थ हीन हो जाता है। किन्तु यदि इसे जापानियों द्वारा पश्चिमी राजनीतिक प्रघटका को प्रभावशाली तथा कलात्मक रूप से अनुकूलन के सुखदतम रूप में देखा जाए, तो लगता है कि जापान द्वारा आंशिक रूप से इसे अपनी आन्तरिक सुविधा की दृष्टि से तथा आँशिक रूप से उन लोगों द्वारा नाटकीय ढंग से अपनाया गया जो पश्चिमी लोगों से उन्हीं की साँस्कृतिक पृष्ठभूमि में मिलना चाहते थे। यह अत्यधिक अच्छा संविधान है, यह अपने पूर्व संविधानों से बहुत अच्छा है, क्योंकि इससे पूर्व वास्तविक संविधान बने ही नहीं थे। तथा यह अपने उत्तराधिकारी संविधानों से भी अच्छा है क्योंकि इसका एक मात्र उत्तराधिकारी संविधान अमेरिका के आधिपत्य में बनाया गया जो मैकार्थर संविधान के 20 वें अध्यायमें वर्णित है। अपने सर्वोत्कृष्ट रूप में मेयजी संविधान न्यायिक छल तथा सामाजिक यथार्थता का सौदर्यपूर्ण सम्मिश्रण है, अपने निकृष्टतम रूप में यह दैनिक जीवन के तथ्यों से उसी प्रकार पृथक नहीं है जैसे 1936 का सोवियत रूस का संविधान है।

संवैधानिकता के बने रहने की पूर्व शर्तें :

एक लिखित संविधान का निर्माण, प्रारंभ तथा स्वीकृति 19 वीं शताब्दी में ही हुई, क्योंकि इस स्वीकृति का अर्थ अपेक्षित अवयवों की संलग्नता था तथा इस अतिरिक्त सामाजिक कारक को उन सामाजिक दबावों में स्थान प्राप्त करना था, जो जापानियों की प्रेरक शक्ति व समय का मूल आधार थे। इस सबके लिए पश्चिमी राज्यों की आर्थिक पुस्तिकाओं में आकर्षक रचना होने से अधिक जापान की वास्तविकता से तादात्म्य स्थापित करना अधिक आवश्यक था। यह स्थिति चीन के अनुभव (देखिये अध्याय 6) से तीव्र विरोध रखती थी, जहां एक के बाद एक संविधान अत्यधिक सुन्दर तथा अपने पहले से कहीं अधिक अयथार्थ बनाये गये, जबकि अंततः स्थायी साम्यवादी संकट ने मध्यम वर्ग द्वारा संविधान निर्माण के कार्य को समाप्त कर दिया, इसके विपरीत समाज ने ऐसा

1. राष्ट्रों का कन्फ्यूशियस परिवार मंडल, इस विचार को सर्वोत्तम रूप में स्वर्गीय एम कैंड्रिक नेल्सन द्वारा अपनी चिंतन पूर्ण रचना "कोरिया एण्ड दि ओल्ड आर्डर्स इन ईस्टर्न एशिया" बैटन रोज 1945 में प्रस्तुत किया गया है जबकि सामान्य साम्राज्य तथा सत्तापी विचार को इदाहो विश्वविद्यालय के प्रोफेसर राबर्ट होसेक द्वारा अपनी अप्रकाशित रचना में स्पष्ट किया है।

जापान की निष्ठाएं तथा राजनीतिक ढांचा :

अतः मेयजी संविधान महत्वपूर्ण है। इसके मूल तत्व के समान इसका विकास भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह उस मूल अध्यात्मिकता, नैतिकता तथा राजनीतिक विश्वासों का प्रतिनिधित्व करता है, जिसे वर्ग अथवा उपवर्ग से परे 20 वीं शताब्दी के प्रारम्भ में प्रत्येक जापानी ने स्वीकार किया था। विशेषतया वे ये स्वीकारते थे कि सम्राट् को संप्रभुता अपने दैवीय पूर्वजों से प्राप्त हुई थी तथा वह जापान के राष्ट्रीय परिवार पर पिता स्वरूप शासन करता था तथा चूंकि अब पूर्वी विश्व में भी आधुनिकता का प्रसार हो गया था, अतः वह अपनी संप्रभुता का प्रयोग संविधानवाद के सर्वाधिक प्रगतिशील सिद्धान्तों के आधार पर करेगा।[2] जापानी सरकार का मूल सिद्धान्त बैरन होजुयी वोवुशिगे के द्वारा विचित्र किन्तु पूर्णतोउचित रूप से धर्मतन्त्री पितृ-प्रधान संविधानवाद कहा गया है। यह पद पश्चिमी विचारकों को विचित्र लग सकता है किन्तु जापानी सन्दर्भ में निश्चित है।

मेयजी सरकार के बारे में वस्तुतः विश्वास प्राप्त तथा ईमानदार से स्वीकृति पश्चिमी विचारों के प्रभाव के बारे में क्या कहा जा सकता है।

यह एक गम्भीर प्रश्न है। इसका उत्तर शायद नृतत्वशास्त्री तथा समाज मनोवैज्ञानिक ही दे सकते हैं। राजनीतिक विज्ञान के पास ऐसे मापदंड बहुत कम है जिससे यह अंतर स्थापित किया जा सके कि लोग अपने विचारों के बारे में क्या कहते हैं तथा एक निष्पक्ष पर्यवेक्षक के अनुसार उनके वास्तविक विचार क्या है जापान में आधुनिक विचार दर्शन पर लिखे आधुनिक इतिहासों तथा जापानी शब्दार्थों की ओर गहरी जांच करने को स्थगित करके अब हम एक आम आदमी के समान यह कह सकते हैं कि यद्यपि मेयजी संविधान को अपनाते समय तथा उसके बाद की दशाब्दियों में जापानियों को लगातार पश्चिमी राजनीतिक दर्शन का पर्याप्त संदर्भ दिया था, तथापि इस बात के बहुत कम प्रमाण है कि जापानियों ने उनमें निहित विषयवस्तु को भी स्वीकार किया था जब कभी यूरोपियन सिद्धान्त जापानी कार्यालय का संदर्भ बना, तो उसे प्रक्रिया में जापनीकृत कर लिया गया। चाहे यह तथ्य किसी पश्चिमी प्रेक्षक को दिखे या नहीं दिखे, मेयजी संविधान की पृष्ठिभूमि में स्वयं जापान की दीर्घकालीन मान्यताएँ विद्यमान थीं।

2. यहां गंभीरता पूर्वक यह तर्क दिया जा सकता है कि जापान 1950 अथवा 60 की शताब्दि में साम्यवाद के भय से आतंकित नहीं है। अब साम्यवाद इतनी प्रचलित प्रघटना बन चुका है कि जापान उसे राजनीति की भाषा में अंतिम नहीं मानेंगे। जब रूस में साम्यवादी क्रांति हुई तो जापान के युवा बौद्धिक में पर्याप्त संवेगात्मक, बौद्धिक तथा कलात्मक प्रतिक्रिया हुई। उन्होंने बोल्शेविक विजय का स्वागत इसके विश्वास तथा व्यवहार के लिए नहीं अपितु इसकी नवीनता के लिए किया। 1930 में जर्मन फासीवाद का आकर्षण भी इसी प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है। तब हिटलर भविष्य का प्रतीक सा लगा अमेरिकियों को भी प्रारम्भ में ऐसा ही लगा था। जापानियों, जिन्होंने सर्वदा अर्थशास्त्र व राजनीति में पाश्चात्य तरीके प्राप्त करने की कोशिश की है, को राष्ट्रीय समाजवाद का नमूना पर्याप्त आकर्षक लगा। 1950 की दशाब्दी में जापानियों की स्थिरता पर्याप्त सुरक्षित लगती है, क्योंकि सरकार के संघर्ष में कहीं भी कोई नवीन आदर्श विद्यमान नहीं है। सभी सैद्धान्तिक प्रतिद्वन्द्वी पुराने पड़ चुके हैं तथा यह संभव नहीं है कि जापान अब पोलैंड अर्जेनटाइना अथवा दक्षिण अफ्रीका के संघ की ओर आश्चर्य चकित होकर प्रेरणा प्राप्त करने की दृष्टि से देखेगा तथा सोचेगा। निस्संदेह वहां आधुनिक सरकार का नवीन तथा प्रभावशाली प्रतिमान विद्यमान है।"

सम्राट की सांधरिक विधिः

जैसाकि फुज्जी शुनिची ने कहा है "विधि वह नियम है जो यह दर्शाता है कि लोगों अथवा जनता की इच्छा के बारे में क्या करना चाहिये।" इस प्रकार फुजी के अनुसार कानून तभी प्रभावशाली हो सकता है जब वह समाज के समान उद्देश्य के साथ सामंजस्य रखता है तथा मनुष्यों का एक समूह तब समाज बनता है जब वह एक सामान्य सत्ता के प्रति निष्ठा की भावना तथा एक सामान्य उद्देश्य की लगन प्राप्त करता है। अन्य जापानी टिप्पणीकारों के समान उसके अनुसार भी संवैधानिक विधि राजनीतिक व्यवहार के मूल भूत सिद्धान्तों का प्रत्यावान होती है। अतः एक राष्ट्र-राज्य का संविधान उचित रूप से संप्रभुता की स्थिति बनाता है तथा सत्ता के प्रयोग का निर्देश देता है। कुछ अन्य पश्चिमी देशों में संविधानवाद का अर्थ स्वतन्त्रता तथा अधिकारी की गारंटी से लगाया गया है। कोई संविधान किसी सरकार की रूपरेखा तब बनता है जैसे शक्ति पृथकीकरण के सिद्धान्त पर आधारित सविधान। प्रत्येक संदर्भ में किसी संविधान को एक देश के विकास की ऐतिहासिक रचना के रूप में मानना चाहिये।[3]

जापान में मेयजी संवैधानिक संरचना 2000 वर्षों की परम्परा का परिणाम थी, जिसका सारांश श्री शियसू तैनो द्वारा "शासन तथा राज्य" इस पद से दिया जा सकता है। साम्राज्य की सावरिक विधि तैनो द्वारा प्रेषित थी अतः उसी के द्वारा उसमें संशोधन प्रारंभ किया जा सकता था। शाही परिवार के लिए पूर्ण स्वायत्ता आवश्यक थी अतः पृथक शाही परिवार विधि बनाई गई जो, नागरिकों पर लागू होती थी किन्तु जिस पर वे विचार नहीं कर सकते थे। कुछ सीमा तक शक्ति पृथकीकरण की स्थापना भी की गई थी, किन्तु यह कठोरतम रूप से शाही केन्द्रीयवाद के अन्तर्गत ही था, जो पश्चिमी देशों से पर्याप्त भिन्न था। इन सिद्धान्तों को स्पष्ट रूप से संविधान, शाही परिवार की विधि तथा बाद में बनाये गये अध्यादेशों व अधिनियमों में स्पष्ट कर दिया गया था। कोई अन्तर्राष्ट्रीय समझौता इस संवैधानिक संरचना पर महत्ता प्राप्त नहीं कर सकता था।

यद्यपि शाही संविधान (तैकोक्कू कैम्पों) इस संरचना का मूल आधार था, तथापि वह उन अनेक विधियों, घोषणाओं, रीतिरिवाजों तथा परम्पराओं का अंश मात्र था जो जापान राज्य का संविधान बनाते थे। जापान के संविधान का विकास तैनो के चारों ओर हुआ था तथा यह ब्रिटेन के अलिखित संविधान से समानता के रखता था, जो संसद के विकसित हुआ

3. विधि की इस भूमिका का सारांश फुशी शुनीची की प्रतिनिधि अविकृत रचना, दि एसेशियल्स ऑफ जापानीज कॉन्सटिट्यूशन लॉ टोक्यो, 1940 पृष्ठ 63 से लिया गया है। जापानी तथा अंग्रेजी सभी टिप्पणियों का अंतत. मूल स्रोत इतो हिरोमूमी, तैकोकू कैम्पो कोगिस्सु तेम्पान गीग, पूर्वोद्धृत राजकुमार इतो द्वारा संविधान के प्रत्येक अनुच्छेद का विश्लेषण, इस संविधान के अनुभागों का अनुवाद इतो म्योजी द्वारा किया गया। पूर्वोक्त। संवैधानिक कानून पर अनेकों पुस्तकें विद्यमान है क्योंकि जापानी राजनीति-विशेषज्ञों में यह विषय पर्याप्त लोकप्रिय रहा है। होजुकी नतनुका, कैम्पो तैवो (संविधान विधि की पुस्तिका) टोक्यो सातवां संस्करण 1940 जापान अर्द्ध रहस्य वादी सम्प्रदाय का प्रतिनिधि है, 'विनोते तात्सुकिची कैम्पो कोना' जापान के सर्वाधिक लोकप्रिय आधुनिक संवैधानिक उन विधि वेत्ता की रचना है। जो अधिकरण के कुछ समय पश्चात् वह मर गया। पुराने तथा नवीन काल की उपयोगी तुलना के लिए देखिए "शैराल्ड इन विल्ले जापायन्स कान्स्टीट्यूशनन्स 1090 एण्ड 1947" अमेरिकन पोलिटिकल साइन्स रिव्यू" अंक 41 1947 पृष्ठ 865।

था। मेयजी संविधान में सात अध्याय, छहत्तर अनुच्छेद तथा मात्र तीन मूल धाराएँ थीः प्रस्तावना (प्रथम अनुच्छेद), युद्ध तथा राष्ट्रीय संकट से संबंधित अनुच्छेत (31 वां) तथा जापानी बजट से संबंधित अनुच्छेद (इकसठवां)। अवशिष्ट में नो विदेशी स्रोतों से नकल किये गये थे तथा अठारह अनुच्छेद किसी न किसी प्रकार जर्मन उत्पत्ति के थे। कई जापानियों की दृष्टि में आज भी ये सब व्यवस्थाएँ उदारवाद ने सही, कम से कम संविधानवाद के प्रवेश द्वारा का निर्माण अवश्य करती है तथापि जर्मनी के राजतन्त्रीय संविधानों को छोड़ कर मेयजी संविधान सर्वाधिक निरंकुशतंत्री संविधान है। चूंकि 1946 तक इसका कभी कानून दृष्टि से पुनरवलोकन नहीं किया गया, अतः यह संसदीय साम्राज्य की भव्य संहिता बन गया।

पवित्र तथा तैंगों की अविछन्न वंशानुगतता पर मेयजी संविधान में दिया गया अत्यधिक महत्व (अनुच्छेद I तथा तीन) कानूनी दृष्टि से अनूठा है। केन्द्रीयवाद की विशेषता को मात्र दो पहलुओं में सीमित किया गया। संविधान को प्रारम्भ करने वाली शाही शपथ में कुछ उद्देश्यों को स्पष्ट किया गया था, जैसे शासन का उद्देश्य जनकल्याण की परम्परा के आधार पर जनता की भलाई के लिए शासन करना था तथा यद्यपि सम्राट "प्रस्तुत संविधान की व्यवस्थाओं के अनुसार ही शक्ति का प्रयोग कर सकता था (अनुच्छेद Iv), वह साम्राज्य का प्रमुख था तथा इस प्रकार सम्पूर्ण सम्प्रभुता को स्वयं में निहित करता था, तथापि अनुपयुक्त सरकार का दोष तीनों पर नहीं सौंपा जा सकता था। प्रस्तावना उत्तरदायित्व की व्यवस्था करती थी, हमारे मन्त्री हमारी ओर से प्रस्तुत संविधान को लागू करने के लिये उत्तरदायी माने जाएँगे"........

ऊपरी तौर से कठोर साम्राज्यिक केन्द्रीयवादी व्यवस्था प्रस्तुत होने के बाद भी सम्राट के अन्तर्गत शक्तियों का यदि पृथकीकरण नहीं तो वितरण अवश्य था जैसे विधियाँ साम्राज्यिक डाइट (अनु. पांच) की सहमति से बनाई जाती थी। कानून तथा अध्यादेश राज्य के मन्त्रियों के परामर्श तथा सह हस्ताक्षरों से प्रेषित एवम् क्रियान्वित किये जाते थे। (अनु VI, IV) न्याय व्यवस्था का संचालन सम्राट के नाम पर न्यायालयों द्वारा किया जाता था (अनु. LVII) निरंकुशतन्त्री होने के नाते संविधान कार्यपालिका को अधिक शक्तियाँ देता था, तथापि एक वास्तविक नियन्त्रण एवम् संतुलन पद्धति के अभाव के बावजूद डाइट उत्तरोत्तर लोकप्रिय नियंत्रण प्राप्त करने का साधन बनती गई। चूंकि न्यायिक पुनरावलोकन की कोई व्यवस्था नहीं थी, अतः न्यायालय पूर्णतः आच्छादित हो गये।

प्रकटतः संविधान की व्याख्या पूर्णतः साम्राज्यिक सत्ता का विशेषाधिकार मानी गई, किन्तु वास्तव में विधि की व्याख्या प्रत्येक सम्बन्धित अंग के द्वारा की जाती थी। जब कभी संघर्षों का समाधान असम्भव हो जाता था तब संविधान के 'सतर्क रक्षकों" प्रीवी काउंसिल के सदस्यों के सम्राट द्वारा राज्य के महत्वपूर्ण विषयों पर परामर्श ली जाती थी" तथा वे उस विषय पर विचार विमर्श करते थे (अनु. LVI), इतिहास में मात्र एक बार ऐसा अवसर उपस्थित हुआ जब इतने ऊँचे स्तर पर संविधान पर विचार करने की आवश्यकता पड़ी। 1892 में दोनों सदनों में बजट सम्बन्धी शक्तियों का मामला सम्राट के सम्मुख लाया गया जिस पर सम्राट ने प्रीवी काउंसिल का परामर्श मांगा। जब सम्राट

ने उनके परामर्श को स्वीकार कर लिया तो संविधान की व्याख्या के बारे में एक पूर्वोदाहरण की स्थापना हो गई।

संवैधानिक व्यवस्था में संविधान को सर्वदा महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है, यद्यपि यह परिवर्तन करने का सर्वदा मूल तरीका नहीं बनता है। (अमेरिका का अनुभव इसका अच्छा उदाहरण है) मेयजी संविधान में (अध्याय VII अनु. LXIII) मात्र साम्राज्यिक (अर्थात् मन्त्रियों के आदेशों पर दोनों सदनों द्वारा दो तिहाई बहुमत की (दो तिहाई गणपूर्ति के साथ) स्वीकृति से ही संशोधन किया जा सकता था। संवैधानिक विधि-वेत्ताओं द्वारा इस विषय पर पर्याप्त विचार किया गया था। विधि विशेषज्ञों में यह सर्व सम्मति थी कि संशोधन प्रारम्भ करने की सम्पूर्ण शक्ति सम्राट में निहित थी। इस प्रश्न पर कि किसी संशोधन प्रस्ताव को परिवर्धित करने का अधिकार डाइट को कहाँ तक प्राप्त था, दो मुख्य सम्प्रदाय दृष्टिगोचर हुए। रूढिवादी विचारक डाइट की इस प्रकार की शक्ति का पूर्ण खंडन करते थे। प्रोफेसर मिनोबे ततसुकिची तथा उनके छात्र, जिन्होंने इस मत को हानिकारक बताया कि सम्प्रभुता सम्राट तथा डाइट में निहित रहती थी, उन्होंने पुनरावलोकन को विधान-सभा का कार्य माना जब कि संशोधन को सुधारने के कार्य की स्वीकृति का अंश माना। तथापि अमेरिका ने अधिकृत होने से पहले तक जापान के संविधान में संशोधन का कोई प्रस्ताव नहीं रखा गया।[4]

संशोधन में कठिनाई के कारण संविधान अपनी महत्ता गँवा बैठा, कानूनी व्यवस्था के स्थान पर समानान्तर विधियों तथा अध्यादेशों ने स्थान ग्रहण कर लिया। कुछ अन्य उदार परिवर्तनों ने जापान के संविधान को और नमनीय बना दिया। उदाहरण के लिये गेनरोबीर वरिष्ठ राजवेत्ताओं की अतिसंवैधानिक परामर्शदात्री संस्था थी, जो मात्र परम्परा तथा रूढ़ियों पर ही आधारित थी (जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका में राष्ट्रपति की मंत्रिपरिषद होती है) इसी प्रकार सम्राट के प्रति निष्ठा रखते हुए नागरिक तथा सैनिक प्रशासन में पृथकीकरण भी संविधान में नहीं लिखा गया था। पर इसे संविधान की घोषणा से पहले तथा बाद में भी स्वीकार लिया गया था। एक धार्मिक तथा पवित्र संविधान रूपी प्रलेख के कठोर प्रावधानों की तुलना में जिसमें सत्ता के द्वैध स्वरूप का कोई वर्णन नहीं था, यह पृथकीकरण एक महत्वपूर्ण भूमिका निबाहने वाला था।

मेयजी संविधान आंशिक रूप से एकाधिक प्रतिनिधि-शासन-व्यवस्था की माँग के परिणामस्वरूप घोषित किया गया था तथा जैसा कि प्रोफेसर कुजी ने इंगित किया है कि अनेक आधुनिक संविधान, उद्देश्य के रूप में न सही किन्तु सन्दर्भ के रूप में अवश्य मौलिक अधिकारों की सुरक्षा की व्यवस्था करते हैं। अतः इस दृष्टिकोण से तथा विशेषतया डाइट

4. 1946 में शीन केन्पों (नवीन संविधान) को स्वीकृति के साथ ही संशोधन का सम्पूर्ण प्रश्न मात्र बौद्धिक प्रश्न बन गया। कानूनी निरन्तरता को बनाये रखने की समस्या जो मूलभूत राजनीति में परिवर्तन तथा डाइट द्वारा किये जाने वाले संशोधन निहित करती थी, का विस्तृत अध्ययन, अल्फ्रेड ओप्लर, न्यायालय तथा कानून के मुख्य अधिकारी द्वारा अपने उच्च अधिकारी को 25 अगस्त, 1940 को भेजे गये एक स्मरण पत्र (सरकारी अनुभाग) में किया गया। "पॉलिटिकल रीओरिएंटेशन ऑफ जापान सितम्बर 1945 टू सेप्टेम्बर 1948", सरकारी अनुभाग की रिपोर्ट मित्र राज्यों के सर्वोच्च कमांडर को वाशिंगटन, 7949 पृष्ठ 662–666 भेजी गई। वर्तमान पुस्तक का पृष्ठ 473 भी देखिये।

के कार्यों तथा नागरिक अधिकारों पर राजकुमार दूतों की अविकार पूर्ण व्याख्या की दृष्टि से 1889 के संविधान की जांच पर्याप्त उद्घाटनीय है।

संविधान के अन्तर्गत डाइट को संप्रभु शक्ति में वास्तविक भाग नहीं दिया गया था (अध्याय 3) यह विधियों पर विचार कर सकती थी किन्तु उनका निर्धारण नहीं कर सकती थी। फिर भी राजकुमार दूतों का विचार था कि संविधान ने डाइट को नियन्त्रित नहीं किया था। इसका मूल कार्य "देश के जनमत का प्रतिनिधित्व करना था।" निम्न सदन (अनुच्छेद 25) मात्र सुविधा के लिये विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों से निर्वाचित होता था वस्तुतः प्रत्येक सदस्य को संपूर्ण राज्य के लिये बोलना था। दूतों के अनुसार उच्च सदन या हाउस ऑफ पीअर्स को बनाने का उद्देश्य प्रतिनिधि सदन के कार्यों के अनुदारवादी प्रभाव के द्वारा बाधा डालना मात्र नहीं था। इसका उद्देश्य राज्य के लिये सांघरिक स्वरूप प्राप्त करना था जो किसी भी प्रतिनिधि व्यवस्था के लिये अपरिहार्य है। उच्च सदन का कार्य राजनीतिक दबावों के मध्य सतुलन रखना, राजनीतिक दलों को नियन्त्रित करना तथा उत्तरदायित्वहीन चर्चाओं को रोकना था। इसके अतिरिक्त डाइट को निश्चित कार्य सौंपे गए थे। अतः इस प्रकार के दूतों ने स्पष्ट किया कि व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका के मध्य शक्तियों का उचित सन्तुलन प्राप्त किया गया, पृथकीकरण नहीं।

जनता के अधिकार तथा कर्तव्यों के सारांश की दृष्टि से (अध्याय दो मेयजी संविधान विश्व के आधुनिकतम संविधानों सा प्रतीत होता है। इसमें सभी परिचित नागरिक अधिकारों को मौलिक समर्थन प्रदान किया गया है। किन्तु दूतों का मत है कि "स्वतन्त्रता मात्र उन समाजों में प्राप्त हो सकती है जहां व्यवस्था है।" कोई आश्चर्य नहीं यदि अधिकारों से अधिक कर्तव्यों पर जोर दिया गया" तथा कानूनी मामलों को छोड़कर प्रत्येक अधिकार प्रदान किया गया है। दूतों द्वारा दी गई टिप्पणियों के कुछ उदाहरण इसको स्पष्ट कर देंगे।

कर राज्य की व्यवस्था के लिए दिये जाते हैं, उनकी सेवाओं के बदले में नहीं। (अनु. इक्कीस)। (राज्य को कर लगाने का अधिकार है तथा प्रजा का कर्तव्य है कि वह उन करों को चुकाए)।

जापान की प्रजा इच्छा से सेना तथा जल सेना में प्रवेश लेती है। (अनु. बीस)। ("सम्मान के समान निष्ठा की भावना हम लोगों ने अपने पूर्वजों से प्राप्त की है।.....)"

न्याय के स्वतन्त्र न्यायालय (अनु. चौबीस) ("न्याय के नियन्त्रण के जनक हैं)।

घरों तथा यन्त्रों की सुरक्षा के अधिकार (अनु. पच्चीस, छब्बीस), अन्तकरण की स्वतन्त्रता (अनु. अट्ठाईस), भाषण लेखन, प्रकाशन तथा सम्मेलनों की स्वतन्त्रताएँ (उन्नीसवां अनुच्छेद) राजनीतिक विकास के लिए आवश्यक है। एक मात्र नियन्त्रण यही था कि प्रजा स्वयं को सम्राट की विधि के क्षेत्र से बाहर रखे।

प्रार्थना का अधिकार (तीसवां अनुच्छेद) (सम्राट ने अपनी महानता तथा उदार विचारों के अनुरूप प्रजा को प्रदान किया है.......) प्रजा को उसके प्रति उचित सम्मान दर्शाना चाहिये।

संकट काल विशेषतया युद्ध काल में, सम्राट का सर्वोच्च अधिकार सर्वोपरि होता है (अनु. इक्कीसवां। (यह स्मरण रखना चाहिये कि राज्य का अन्तिम उद्देश्य अपने अस्तित्व को बनाए रखना है।[5]

5. इतो म्योजी, अनुवाद इतो एन्व, व्याख्या पूर्वोक्त पृष्ठ 38–68।

1889 के संवैधानिक कानून ने यह स्पष्ट कर दिया कि यह मूल सांघरिक कानून के स्थान पर अनेक विधियों में से एक था। पहले की विधियाँ, नियम तथा अध्यादेश तब तक क्रियान्वित रहे जब तक वे मेयजी संविधान का उल्लंघन नहीं करते थे (अनु पैंसठ)। इसके अतिरिक्त संविधान में राजसिंहासन के उत्तराधिकार (अनु. दो) तथा रीजेन्सी अनु सत्रह) की भी व्यवस्था थी। दोनों का निर्णय साम्राज्यिक विधि (कोशित्सु तेंपान) के द्वारा किया गया था। इसको भी 1889 की साम्राज्यिक घोषणा द्वारा प्रेषित किया गया था। इसमें बारह अध्याय तथा बासठ अनुच्छेद थे। यह एक आंतरिक संविधान था, जो मात्र सम्राट के परिवार तक ही सीमित था। सामाजिक कानून उत्तराधिकार, सिंहासनारोहण, राज्याभिषेक, रीजेन्सी तथा सामाजिक परिवार से सम्बन्धित अन्य मामलों की व्यवस्था करता था। इस विधि को सम्पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त थी, क्योंकि (चौसठवाँ-अनुच्छेद) इसमें किये गए सुधारों के लिये डाइट की स्वीकृतति की आवश्यकता नहीं थी। दूसरी तरफ साम्राज्यिक परिवार के किसी भी कानून से मेयजी संविधान में परिवर्तन नहीं किया जा सकता था। इस कानून में परिवर्तन शाही परिवार की सलाह पर प्रीवी काउंसिल तथा साम्राज्यिक परिवार मन्त्री की सलाह से किये जाते थे।

संविधान तथा साम्राज्यिक परिवार विधि के साथ-साथ साम्राज्यिक अध्यादेश (मेरी) हुआ करते थे जिससे कार्यपालिका को व्यवस्थापन सम्बन्धी शक्तियाँ प्राप्त हो जाती थी। संविधान में प्रेषित यह शक्ति (आठ तथा नौ अनु.) उस समय में किसि भी संविधान द्वारा नियन्त्रित सरकार से कहीं अधिक थी। अध्यादेश तीन प्रकार के हुआ करते थे।

(1) विशेषाधिकार अध्यादेश वे जो साम्प्रदामिक विधि, हऊस आफ पिअर्स तथा प्रीवी कौंसिल के कार्यों को नियन्त्रित करते थे। वे डाइट के क्षेत्राधिकार से परे थे।

(2) प्रशासनिक अध्यादेश : ये कार्यपालिका द्वारा सामान्य कल्याण के लिए पारित किये जाते थे। डाइट को इन पर भी कोई नियन्त्रण प्राप्त नहीं था।

(3) संकटकालीन अध्यादेश के लिए प्रीवी कौंसिल की स्वीकृति आवश्यक थी। प्रभावशाली बने रहने पर इन्हें डाइट की मीटिंग में स्वीकृति के लिये प्रस्तुत किया जाना था, तथापि डाइट की अस्वीकृति से इसे समाप्त नहीं किया जा सकता था।

तथापि सभी अध्यादेशों पर राज्य मन्त्री के प्रति हस्ताक्षर आवश्यक थे, क्योंकि सम्राट उसके परामर्श के बिना कार्य नही कर सकता था।

संविधान के सहायक अधिनियम (होरित्सु), पारिवारिक विधि तथा विशेषाधिकार अध्यादेश दोनों सदनों द्वारा पारित किये जाते थे। वे सम्राट द्वारा निरपेक्ष विशेषाधिकार से नियन्त्रित रहते थे। संधियाँ तथा अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों की पुष्टि सम्राट प्रीवी कौंसिल की सहमति से करता था। इस प्रकार संविधान तथा सामाजिक परिवार विधि अध्यादेशों सहित संधियों से श्रेष्ठ था जबकि स्वयं संधियाँ अधिनियमों तथा अध्यादेशों से श्रेष्ठ थी।

शितो धर्म, सम्राट तथा साम्राज्यिक परामर्शदाता :

अनेक गम्भीर जापानी लेखकों ने यह विश्वास व्यक्त किया है कि किसी समाज का आदर्श रूप-विकास, परिवार के समूह, समूह से प्रजाति, नगर राज्य तथा अन्ततः राष्ट्र-राज्य के रूप में होता है। सम्पूर्ण विकास-चक्र रक्त सम्बन्धों के माध्यम से होता है, तथापि वे यह अनुभव करते हैं कि जापानी एक सजातीय समाज नहीं है तथा उनमें रूस, कोरियावासी तथा चीनी लोग भी सम्मिलित है किन्तु इन सब लोगों का आत्म-संस्कार हो

चुका है तथा यह आत्म-संस्कार विना किसी दबाव के हुआ है तथा इससे जापानियों का सम्राट के प्रति पैतृक स्नेह और सुदृढ़ वना है।

साम्राज्यिक परिवार की जापानियों के लिये वही महत्ता है जो पेड़ के तने की उसकी शाखाओं तथा पत्तियों के लिए होती है।[6]

साम्राज्यिक केन्द्रीयवाद जिसे पश्चिम में अनुभव नहीं किया जा सकता है, राष्ट्रीय नीति (को कूताई) से स्निग्ध वना। यह एक प्रकार की पूर्वजों की पूजा पर इस प्रकार आश्रित था मानो जापान एक पवित्र स्वजातीय पारिवारिक राज्य हो। इस प्रकार शितों धर्म शासन सम्राट तथा सभी सम्राटों का धर्म वन गया। यह पवित्र साम्राज्यिक शासन की अवधारणा थी।

यहाँ पर सम्राट के वारे में रूढ़िगत जापानी तथा प्रतिष्ठित चीनी सिद्धान्त के मध्य मूल भूत अन्तर पर ध्यान देना चाहिये। चीनियों का विश्वास था कि उन पर स्वर्ग का शासन था तथा सम्राट उसका एजेंट था। जापानियों का विचार एक सजीव सम्राट का विचार था। इस विचार ने उसे वंशानुगत उत्तराधिकार की ओर आकर्षित किया, तथापि व्यक्ति के सम्प्रभु सम्राट तथा उसकी प्रजा के मध्य सध्य सम्वन्ध पूर्णतः पितृ-प्रधान थे। इस प्रकार कई जापानी यह मानते थे कि उनकी व्यवस्था समाजशास्त्रीय दृष्टि से परिपूर्ण थी। किन्तु इसमें भी कुछ कठिनाइयाँ थी।

एक कठिनाई मेयजी पुनर्स्थापना की ऐतिहासिकता के कारण उत्पन्न हुई थी। इस प्रक्रिया का द्वैध स्वरूप था। सम्राट की नाममात्र तथा वास्तविक दोनों प्रकार की पुनर्स्थापना का अर्थ प्राचीन परम्परा की पुनरावृत्ति था। हम पहले ही देख चुके हैं कि किस प्रकार ताइहो संहिता की पूर्ण अनुकृति 1868–69 काल में की गई। एक बार फिर शितो धर्म के पूजा विभाग चिंगीकान को उच्चतम राज्य परिषद् राजोकान से ऊँची स्थिति प्रदान की गई। कुछ समय के लिए शितों धर्म की पुनर्स्थापना का अर्थ वुद्ध-धर्म का पतन भी था। वुद्ध-धर्म का पतन हुआ तथा 1868–70 में बौद्ध धर्म विरोधी गड़बड़ी का सामना यह वड़ी कठिनाई से कर सका।

1880 से प्रतिक्रिया काल प्रारम्भ हो गया था, क्योंकि पुनर्स्थापना का अर्थ आधुनिकीकरण भी था। 1882 में उन शितों उपासना गृहों, जिन्हे राज्य का समर्थन प्राप्त था, तथा सामान्य शितों धर्म के मन्दिरों में अन्तर स्थापित किया गया। 1889 में विदेशियों का ख्याल करते हुए संविधान ने धर्म की स्वतन्त्रता प्रादान कर दी। तत्पश्चात् गृह-मन्त्रालय ने राज्य द्वारा नियन्त्रित शितों उपासनागृहों की व्याख्या करनी प्रारम्भ की। जापान के गैर शितों धर्मावलम्वियों को भी वहाँ जाना पड़ता था। उन शितों धर्म के व्याख्या करनी भी प्रारम्भ की सभी जहाँ शितो धर्मावलम्वी जाते थे। राजनीतिक दृष्टि से यह अन्तर विशेष महत्व का नहीं था। प्रजा उपासना-गृहों में उपस्थित को धार्मिक पूजा की अनिवार्यता मानती रही। शितो धर्म ने जापान में उस राष्ट्रवाद को मजवूत वनाया जा जापान के सैनिक नेताओं को सम्मानित करता था। शासनारूढ़ सम्राट के दायित्वों में से उसका नियमित रूप से सूर्य देवी के आइस स्थित उपासनागृह जना प्रमुख था तथा वाद के सम्राटों के लिये टोक्यो स्थित मेयजी उपासनागृह जाना भी प्रमुख दायित्वों

6. एस कुजी पूर्वार्द्ध पृष्ठ 95।

में सम्मिलित था। संक्षेप में शितो धर्म ने जापान में राज्य की सर्वोच्चता के सिद्धान्त को मजबूत बनाया।

किन्तु मेयजी संविधान के अन्तर्गत भी राज्य के आवश्यक रूप से सर्वोच्च होने की कोई अनिवार्यता नहीं थी। यह सर्वोच्चता वस्तुतः अविछिन्न वंशानुक्रमण, पूर्वजों की पूजा के शक्तिशाली दवाव तथा जापान की कठोर पारिवारिक व्यवस्था तथा विशेषतया शाही परिवार की पूजा के परिणाम स्वरूप उत्पन्न हुई थी। यह सर्वोच्चतावाद उन राष्ट्रभक्तों द्वारा और प्रेरित किया गया जो सम्राट को पौराणिक गाथाओं तथा अर्द्ध वैज्ञानिक बातों से युक्त बनाते थे। राजनीतिक सिद्धान्त को परम्परागत सम्प्रदाय ने जानबूझकर पुनर्स्थापित किया। उनके अनुसार तैनो को अनियन्त्रित शक्तियाँ प्राप्त थी, उसने अपनी स्वतन्त्र इच्छा से संविधान का प्रतिपादन किया था तथा वह लोकप्रिय जन इच्छा के परिणामस्वरूप प्रेषित नहीं किया गया था। इस सम्प्रदाय के प्रमुख समर्थक हूतों तथा उसके शिष्य थे जो संवैधानिक कानून के रूढ़िवादी अध्ययन कर्त्ता थे। वे अपने दृष्टिकोण को हूतों की व्याख्या से प्रारम्भ करते थे तथा अपने तर्कों का समर्थन मेयजी संविधान के प्रथम तीन अनुच्छेदों के आधार पर करते थे।

यह सत्य है कि जापान के सम्राट का चित्र जापानी डाक टिकटों पर नहीं छप सकता था। तथा सब लोग यह सावधानी बरतते थे कि किसी ऊँचे स्थान से उसे नहीं देखा जाए। उसके समान कोई नाम नहीं होता था। उसकी उपस्थिति मात्र लोगों को शान्त करने के लिये पर्याप्त थी। किन्तु इसके बाद भी कुछ शंकाएँ थीं। इन शंकाओं से कुछ प्रगतिपूर्ण दृष्टिकोण भी उभरा। कुछ उच्च शिक्षा प्राप्त लोग, जिसमें टोक्यो तैइदाई (साम्राज्यिक विश्वविद्यालय) के कुछ छात्र भी सम्मिलित थे, सम्राट के दैवीय वंशानुक्रमण की पौराणिक गाथा से सहमत नहीं थे।

ऐतिहासिक दृष्टि से इन प्रगतिवादियों का दावा था कि सर्वोच्च शासन का अन्त 1192 में ही कामा कुरा शोगुनत द्वारा कर दिया गया था तथा वस्तुतः इस बात पर किसी को विवाद नहीं था कि बाद में वास्तविक शक्ति तोकूगावा शोगुन में निहित करती थी तथा बाद में यही शक्ति पुनर्स्थापना के समय प्रत्यक्षतः सम्राट को प्राप्त नहीं हुई, अपितु सामन्तों, निम्न समुराई तथा प्रशासनिक वर्ग को प्राप्त हो गई। अन्ततः संविधान ने तैनो को राष्ट्र के सर्वोच्च प्रतिनिधि के रूप में स्थापित किया तथापि उसकी शक्तियाँ संवैधानिक अर्थों में सीमित थी।

प्रगतिवादियों का तर्क था कि सम्पूर्ण संविधान की जाँच करना अधिक वैज्ञानिक तरीका था। उदाहरण के लिये संविधान का प्रथम अध्याय सावधानी पूर्वक सम्राट की शक्तियों का वर्णन करता था। यदि सम्राट की शक्तियाँ सीमित नहीं थी तो ऐसा क्यों किया गया ? विधि निर्माण का कार्य डाइट को सौंपा गया था तथा सम्राट द्वारा विशेषाधिकार का प्रयोग करने की अस्वीकृति सर्वोच्चवाद का खण्डन करती है। मन्त्रियों के कर्त्तव्यों, परामर्श तथा उत्तरदायित्व से सम्बन्धित अनुच्छेद पचास, निश्चय ही उन्हें व्यापक अधिकार प्रदान करता है। इस अस्पष्ट अनुच्छेद को लेकर विशेषज्ञों में गहरा मत-भेद था तथा नौकरशाही के समर्थक अप्रजातन्त्रीय शासन को बनाये रखने के लिये सर्वोच्चतावाद का समर्थन करते थे।

अन्ततः सम्प्रभुता की स्थिति को लेकर यह विवाद गंभीर बन गया। अनुदारवादी तथा प्रगतिवादी नेताओं से उसेगी-मिनोवे नामक गोष्ठी में 1912 के प्रारम्भ में मिले। उसेगी शिकीची (अनुदारवादी प्रोफेसर होजूमी यतशुका का शिष्य) तथा मिनोवे तातसुकिची (अपने समर्थकों सासकी तथा इचीपुरा के साथ) दोनों ही टोक्यो तैइ दाई (साम्राज्यिक विश्वविद्यालय) में विधि विभाग के छात्र थे। उसेगी के अनुसार जापान की राजनीतिक व्यवस्था तीन मूल मान्यताओं पर आधारित थी (1) सम्राट दैवीय तथा सर्वोच्च सम्प्रभु है (2) सरकार सम्राट का सार्वजनिक कार्य है तथा (3) सम्राट को सम्पूर्ण राज्य में समान मानना चाहिए। मिनोवे के सिद्धान्त के अनुसार सम्राट, डाइट मन्त्रिमण्डल अथवा प्रीवी कौंसिल के समान राज्य का एक अंग था। यद्यपि नागरिकों को विद्रोह करने का अधिकार नहीं था, तो भी सम्राट अपनी ओर से संविधान का उल्लघन नहीं करेगा, यह विश्वास था। मिनोवे ने स्पष्ट करते हुए कहा :

"सम्प्रभुता का अधिकार मात्र सम्राट में निहित नहीं था, अपितु यह एक ऐसा अधिकार था जो सम्पूर्ण राज्य के कल्याण तथा हित के लिए विद्यमान था।"

यह विषय तब और भी अधिक स्पष्ट हो गया, जब जापान के राजदूतों ने अन्य देशों के राजदूतों के समान कैलांगे समझौते पर हस्ताक्षर (पेरिस 1928) अपने देश की जनता के नाम से किये थे (अनुच्छेद 7) इससे जापान में प्रीवीकाउंसिल में उत्तेजना उत्पन्न हुई, वि ोधी दल ने सदन में सरकार की भर्त्सना की तथा 1929 की जनवरी में डाइट की सभा वाद-विवाद का अखाड़ा बन गई। जापान के सर्वाधिक उदार नेता (जो द्वितीय महायुद्ध के बाद अमेरिका भी हो आए थे) ओजा की यूकि ओ ने पुराने काउंट दूतो म्योनी, जो प्रीवी काउंसिल के सदस्य थे का उक्त धारा की भर्त्सना करने में समर्थन किया। उन्होंने कहा कि ऐसे मन्त्रिमण्डल को बोरे में बन्द कर देना चाहिए तथा तैनो को उसे दंड देना चाहिए, जिसके नाम से उपर्युक्त संधि की जानी चाहिए थी।" अन्ततः प्रीवी कौंसिल ने इस सन्धि की पुष्टि करने की सलाह इस शर्त के साथ दी कि जापान के साम्राज्यिक संविधान को दृष्टि में रखते हुए जापान के संदर्भ में उपर्युक्त अनुच्छेद अनुपयुक्त था।"[7]

कम से कम संवैधानिक अर्थों में संसदात्मक साम्राज्य में तैनों की भूमिका से सम्बन्धित प्रश्न का समाधान अन्ततः 1935 के प्रख्यात राष्ट्रीय राजनीति व्यवस्था के विवाद में हुआ। 1930 के पश्चात् की दशाब्दी के मध्य जापान में तथाकथित उदारवादियों की आलोचना चर्मोत्कर्ष पर पहुंच गई। यद्यपि राज्य को डा. मिनोवे की देन को तब तक

7. प्रोफेसर विवडले, पूर्वोद्ध पृष्ठ 70–71 ने इस समझौते से सम्बन्धित विवाद तथा ओजाकी की भूमिका का विवरण दिया है भिन्न प्रकार के विश्लेपण के लिये देखिये हा के ची तत्सुजी, वार एंड डिप्लोमेसी इन दि जापानीज एम्पायर, न्यूयार्क 1935, पृष्ठ 262–274। सम्प्रभुता के बारे में विपरीत दृष्टिकोण उसेगी शिकिची, कोकुताई केन्यो ओमोवी के सेई (राष्ट्रीय राजनीति दि कास्टीट्यूशन एण्ड कांस्टीट्यूशनल गवर्नमेंट टोक्यों 1916, मिनोवे की रचनाएं पहले दी गई है। सौनिक केम्यो रोम (रीसेंट कांस्टीट्यूशनल थ्योरी टोक्यो 1927, पृष्ठ 60-61 तथा इसका सारांश केनक कोलग्रोव द्वारा लिखित दि जापानीज एम्परर अमेरिकन पॉलिटिकल साइन्सरिव्यू 36 वीं अंक, संख्या चार, पाँच 1 अस्त तथा अक्टूबर 1932 अ पृष्ठ 642-659, 828-845 है। प्रगतिवादी विचारों का सर्वश्रेष्ठ सारांश इवास्की यूइचो कृत दि वार्किंग फोर्सेज इन जापानीज पालिटिक्स न्यूयार्क, 1921 अध्याय 2 पृष्ठ 24-31।

स्वीकार कर उसे हाउस आफ पीअर्स में स्थान प्रदान कर दिया गया था, तथापि उसके भाषणों तथा ग्रंथों की निरन्तर आलोचना होती रही। अन्ततः डाइट के एक सदस्य ने एक औपचारिक मुकदमा दायर कर दिया। राजनीतिक दलों ने मन्त्रिपरिषद पर दबाव डालने के लिए सेना का सहयोग प्राप्त किया, ताकि प्रधान मन्त्री हमेशा के लिये इस विवाद को समाप्त कर दे। अंततः मन्त्रिपरिषद को एक घोषणा करनी पड़ी, "सम्प्रभुता का निवास सम्राट में था" राज्य में सम्प्रभुता के निवास का सम्पूर्ण विचार अधिक दिनों तक उपेक्षित नहीं रह सकता था। डा० मिनोबे ने हाउस आफ पिअर्स से त्याग-पत्र दे दिया। इस प्रकार राज्य के संवैधानिक सिद्धान्त पर विवाद समाप्त हो गया (विकान सेत्सु) यह परम्परागत सिद्धान्त कि, सम्राट राज्य का अंग नहीं था, अपितु स्वयं राज्य था, इस प्रश्न का मात्र अस्पष्ट सामान्यीकरण था कि जापान के सांघरिक विधि के अन्तर्गत संप्रभुता का प्रयोग वस्तुतः कौन करता था। यदि जापान में चार्ल्स पंचम अथवा फ्रेडरिक महन् अथवा स्वयं मेयजी तैनो जैसे सम्राट हुए होते तो भी यह सर्वोच्चतावादी सिद्धान्त कोई अर्थ रखता।

वस्तुतः सैद्धान्तिक रूप से इन शक्तियों को सम्राट में निहित करने से संकट उत्पन्न हो सकता है, यदि हम यह स्मरण न रखें कि वह शक्तियाँ अंततः सम्राट रूपी व्यक्ति में निहित होती हैं। यह व्यक्ति जो जीवित ईश्वर की भूमिका में रह कर सैद्धान्तिक रूप से राज्य की सम्प्रभुता को निहित रखता है महत्वपूर्ण हो सकता था तथा वस्तुतः कई अवसरों पर यह महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ। किन्तु जटिल संस्थागत अवतरण के पीछे इस व्यक्ति की रूपरेखा का दर्शन कर पाना कठिन है।

उदाहरण के लिये मुत्सोहितो की व्यक्ति के रूप में (1852-1912 सम्राट 1867-1912) रूपरेखा बड़ी धूमिल है। यद्यपि हम इतना जानते हैं कि वह पन्द्रह वर्ष की उम्र में राजसिंहासन पर बैठा तथा अन्य जापानी सम्राटों के समान वह प्रभावशाली था। उसने विदेशियों के विरुद्ध अपने पिता से प्राप्त धारणाओं को उदार बनाया। उसने 1889 का संविधान बनाने में पर्याप्त रुचि ली। यह बताया जाता है कि उसने अपने शासन-काल में परिवर्तनों को प्रभावित करने में पर्याप्त भाग लिया। कई अवसरों पर उसके सुदृढ़ व्यक्तित्व ने मन्त्रिमण्डल को प्रभावित किया। इन तथ्यों के अतिरिक्त बाकी मात्र संस्थागत अवशेष हैं।

'बेल्ट लाइन' क्षेत्र में योयागी स्टेशन के दक्षिण पश्चिम में मेयजी जिंगू उपासना-गृह है जो सम्राट तथा उसके सहयोगियों की स्मृति में बनाया गया है। वह जापान के पवित्र स्थानों में से एक स्थान है तथा प्रति वर्ष लाखों लोग वहां जाते हैं। मुख्य भवन पूर्णतः शिनो शैली में था (1945 के हवाई हमले में वह जल गया) तथा उल्लेखनीय रूप से साफ था। प्रवेश-द्वार 1700 वर्ष पुरानी दिनों की लकड़ी का बना था इसकी ऊंचाई 39'7 इंच थी। होमारमुडेन (कोष भवन में) ऐसी बहुत सी वस्तुएँ दिखाई गई हैं जिनका तैनो ने प्रयोग किया था। जैसे एक छः घोड़ों वाली बग्घी, जिसका प्रयोग सम्राट ने संविधान की घोषणा करते समय किया था। 5 नवम्बर को सम्राट के जन्म दिन के अवसर पर स्टेडियम में खेल-कूदों का आयोजन किया जाता है। प्रत्येक सम्राट का शासन-काल एक नवीन युग का प्रारम्भ करता है. जिसका नाम सम्राट के नाम पर उसकी मृत्यु के पश्चात् रखा जाता है। अब मेयजी एक युग तथा एक उपासना-गृह का नाम है, व्यक्ति का नाम नहीं।

योशिहितो (1979–1926, सम्राट 1912–1926) के लिये जितना कम कहा जाय उतना ही उचित होगा। मेयजी। सम्राट का एकमात्र पुत्र होने के कारण साम्राज्यिका शासन की निरन्तरता बनी रही, तथापि तैशो काल के ए० तुग की संज्ञा देना पर्याप्त उदारता होगी।

हमारे लिये वर्तमान सम्राट सर्वाधिक रुचि का विषय है। युवराज सिरोहितो ने 1921 में अपने अपाहिज पिता का शासन भार सम्भाला। इस प्रकार साम्राज्यिक परिवार के कानून के अन्तर्गत सर्वप्रथम रीजेंसी की स्थापना की गई। 1921 में पुरोहितों ने शावा काल (गौरवपूर्ण शांति-काल) का उद्‌घाटन किया। "गौरवशाली शांति की पुनर्स्थापना" बाद में हुई, कुछ वर्ष पश्चात् अमेरिकी किस प्रकार उसके शासन के लिए गौरव तथा बाद में शांति लाये तथा जापान के आत्मसमर्पण व अधिकृत होने में सम्राट की क्या भूमिका रही, इस पर विचार-विमर्श बाद में किया जाएगा। 1946 तक अपने पद को छोड़ कर सामान्य व्यक्ति के समान दृष्टि गोचर होने के संदर्भ में हिरोहितो तीव्रता से अपने काल में विलीन होता गया है। अक्सर यह भुला दिया जाता है कि 1927 में उसके पदारोहण को जापानी शासकों में सर्वाधिक आधुनिक शासन के पदारोहण के रूप में स्वागत किया गया था।

युवा सम्राट की राजनीति, आधुनिक भाषाओं तथा विज्ञान में रुचि थी। व्यक्तिगत रूप से उसने सर्वदा इस बात का संकेत दिया कि वह आधुनिक विश्व से परिचित था। हिरोहितो की युवराज के रूप में अक्सर प्रिंस आफ वेल्स से अपरम्परागतता तथ जनसाधारण में मिश्रित होने की इच्छा के संदर्भ में समानता की जाती है। वस्तुतः यह विले गया तथा यात्रा के दौरान एडवर्ड ने उसका साथ दिया जो फिर बाद में स्वयं जापान गया। एडवर्ड के समान उसने भी तब परम्परा का उल्लंघन किया जब उसने अपनी पत्नी का चयन कुने परिवार के बाहर से किया। किन्तु एडवर्ड के समान उसने सिंहासन त्याग नहीं किया। वह शासन में तब आता जब व्यापक मताधिकार ने प्रतिनिधि सरकार का आश्वासन दिया। यह चर्चा पर्याप्त जोरों पर थी कि प्रजातन्त्र की बात से सम्राट रुष्ट नहीं था, तथापि प्रजातन्त्र शीघ्रता से स्थापित नहीं हो सका। शायद यह तथ्य व्यक्ति के रूप में उसकी प्रभाव हीनता का द्योतक है।[8]

वस्तुतः जापान का सम्राट इस प्रश्न का समाधान नहीं कर सकता है कि जापान में सम्प्रभुता का प्रयोग कौन करता है। यह परम्परागत सिद्धान्त कि सम्राट राज्य है, इस सिद्धान्त से कम महत्वपूर्ण है कि सम्राट बिना परामर्श के कोई कार्य नहीं करता है। इसका अर्थ यही है कि सर्वोच्चवाद के साथ सम्राट के प्रति निष्ठा की दीर्घ परम्परा ने सम्राट को विद्रोह से परे बना दिया। तैनो एक उत्तेजित जनता के विरुद्ध सुदृढ़ ढाल था तथा जनता मात्र उसके परामर्शदाताओं को बदलने की मांग कर सकती थी। तब पहले से भी अधिक कुंठित करने वाला यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि सम्राट के परामर्श दाता कौन थे?

इस अन्तिम प्रश्न का महत्व उन शक्तियों की विवेचना से स्पष्ट हो जाता है जो सम्राट को प्रदान की गई थी। परम्परागत दृष्टिकोण के मतानुसार सम्राट अपनी शक्तियों

8. युवा सम्राट का एक मनोरंजन रेखाचित्र जो आई ग्रामन द्वारा जापानी न्यू एम्पायर कांटेम्परेरी रिव्यू अंक 131, संख्या 26 (मार्च 1927 पृष्ठ 344 है)।

का प्रयोग डाइट के माध्यम से करता है। प्रगतिवादियों का तर्क था कि विधायनी शक्तियाँ वस्तुतः सम्राट तथा डाइट के मध्य विभाजित थी। संविधान के अनुसार ये शक्तियाँ मात्र तीन थी (1) डाइट को आमन्त्रित करना, स्थगित करना तथा भंग करना, (2) अविनियमों का प्रारम्भ तथा पारित करना, तथा (3) साम्राज्यिक अध्यादेश जारी करना। प्रगतिवादियों के अनुसार अन्तिम शक्ति मात्र डाइट की अनुमति प्राप्त करने की थी। "भयानक विचार" नामक 1720 के नियम इस प्रविधि को स्पष्ट करते हैं। एक समय में निम्न सदन में यह दावा किया गया था कि डाइट, संवैधानिक विशेषज्ञ, समाचार-पत्र तथा प्रीवी कौंसिल तक संकट काल की उस सीमा के बारे में मतभेद रखते थे जिसके लिए निरंकुश शासन की आवश्यकता पड़ सकती थी, तथापि अध्यादेशों के बिना भी अविनियमों को प्रारम्भ करने की शक्ति सम्राट (अथवा उसके परामर्शदाताओं) को पर्याप्त प्रभाव प्रदान करती थी।

कार्यपालिका क्षेत्र में शक्तियों का केन्द्रीकरण अधिक था। सम्राट की सत्ता इन शक्तियों को निहित करती थी, (1) नियुक्तियाँ तथा प्रशासन पर सामान्य नियन्त्रण (2) क्षमादान तथा न्यायिक प्रशासन (3) संगठन-मिशन तथा जल सेना व नौ सेना के संचालन पर नियन्त्रण (4) युद्ध की घोषणा (5) शांति की घोषणा तथा संधि की शक्ति तथा (6) मार्शल लॉ घोषित करने की शक्ति। नियुक्ति का अधिकार असीमित था तथा किसी को भी पुष्टि करने का अधिकार नहीं दिया गया था। इस प्रकार जापानी प्रशासनिक सेवाओं पर साम्राज्यिक अध्यादेश का नियन्त्रण था, संसदीय आदेश का नहीं। प्रोफेसर मिनोवे ने सामूहिक प्रशासनिन उत्तरदायित्व का सिद्धान्त प्रतिपादित किया था, किन्तु उनका उद्देश्य अल्पमत में था। अनुदारवादी विचारक प्रत्येक मंत्री को निजी रूप से सम्राट के प्रति उत्तरदायी बनाना चाहते थे। वस्तुतः यह सिद्धान्त अव्यावहारिक था। युद्ध व शांति की शक्ति को पूर्णतः डाइट के नियन्त्रण से बाहर कर दिया गया। संधि करने के अधिकार पर भी मात्र इतना नियन्त्रण था कि समझौतों को परामर्श के लिए प्रीवी कौंसिल के सुपुर्द किया जाता था। सेना तथा जल सेना पर नियन्त्रण अवश्य था, क्योंकि अनिवार्य मन्त्री कानून, प्रत्येक योग्य व स्वस्थ व्यक्ति के लिए सैनिक प्रशिक्षण जरूरी बनाता था अध्यादेशों के द्वारा विशिष्ट प्रशासनिक नियमों का विकास किया गया था (इनका विवेचन बाद में किया गया है), तथापि सैनिक मामलों में सम्राट की विशिष्ट भूमिका पर विशेष ध्यान देना अनिवार्य है।

वस्तुतः सेवाओं के संदर्भ में सम्राट की दोहरी भूमिका ने राजनीति में सामन्ती द्वैधवाद की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित किया क्योंकि सम्राट के सैनिक व्यक्तित्व को लेकर ही कार्यों में पृथकीकरण था। मुख्य सेनापति के रूप में उसकी शक्तियाँ वैसी ही नहीं थी, जैसी सैनिक संगठन पर उसके राज्य के प्रमुख के रूप में नियन्त्रण सम्बन्धी शक्तियाँ थी। इस प्रकार सम्राट निजी रूप से राष्ट्रीय सुरक्षा-व्यवस्था तथा सेना व नौ सेना के निर्देशन के लिये उत्तरदायी था। दूतों के शब्दों में, सम्राट तैनो युद्ध-क्षेत्र में विभिन्न आवरणों के मध्य सक्रिय था..........सेवाओं का संगठन.......जिनका निर्धारण आर्थिक राजनीतिक तथा कूटनीतिक कारकों के आधार पर किया जाता था मन्त्रिमण्डल के मध्य तैनों का कार्य था। वास्तव में जैसा कि हम देखते हैं, सम्राट के दोहरे रूप के मध्य सम्पर्क-युद्ध तथा जल-सेना के लिये सक्रिय मन्त्रियों की नियुक्ति कर दी जाती थी।

डॉ० मिनोवे ने सम्राट की स्थिति की विवेचना असाही के अंकों कि केबिनेट एण्ड द न कैम्प' में उस समय की थी जब 1930 में लंदन नौ सैनिक संधि पर हस्ताक्षर किये गए थे। स्पष्टतया संविधान के अनुच्छेद तेरह में संधि करने की शक्ति सम्राट को (मन्त्रिमण्डल) दी गई थी, तथा नौ सेना के आकार व संगठन सम्बन्धी शक्तियाँ भी उसी को दी गई थी वे युद्ध क्षेत्र में उसकी शक्तियों को गम्भीर रूप से प्रभावित करती थी। मंत्रिमण्डल द्वारा की गई एक संधि जिसकी पुष्टि सम्राट द्वारा कर दी गई। हो (प्रीवी कौंसिल के परामर्श पर) सेनाओं पर लागू होती थी। यही कारण था कि भूतपूर्व प्रधान मन्त्री वैखवाकासुकी ने लन्दन में मुख्य प्रतिनिधि के रूप में कार्य किया तथा उसकी सहायता नौ सेना मन्त्री के द्वारा की गई। किन्तु जापान को मन्त्रिमण्डल की यह विजय मंहगी पड़ी, इस सन्धि ने 'युद्ध क्षेत्र में सम्राट' के रूप को 'मन्त्रिमण्डल में सम्राट के ऊपर पुनर्स्थापित करने की प्रक्रिया का प्रारम्भ किया।[9]

अब हम सम्राट के नाम पर संचालित होने वाली कार्यपालिका तथा व्यवस्थापिका शक्तियों के बाद सरकार के अत्यधिक अस्पष्ट तथा जटिल सरकारी संगठन की ओर उन्मुख होते हैं, जिसके द्वारा सम्राट की शक्तियों का संचालन होता था। सर्वोच्चवादी राज्यों का वर्णन करने में प्राय: पिरामिड का उदाहरण लिया जा रहा है, जिसके सम्पूर्ण शक्ति शिखर पर केन्द्रित होती है। किन्तु इस विवरण के लिये व्यापक आधार वाले ऐसे संगठन की आवश्यकता है, जिसमें स्पष्ट माध्यमों से शक्ति शिखर की ओर आती हो। वस्तुत. जापानी सरकार कानून-व्याख्या के अनुसार अत्यधिक कुशकाय रचना थी। यह सरकारी प्रक्रिया तथा व्यापक संगठन की क्षमता के बारे में कोई संकेत नहीं देती थी। शक्तियों का स्पष्ट वितरण तथा उत्तरदायित्व का विभाजन नहीं था। केन्द्रीकृत कार्यपालिका पर भी भ्रमित करने वाला है। एक ओर एक राष्ट्रीय प्रशासन विधियों को क्रियान्वित तथा प्रशासन के भी पहलुओं को नियन्त्रित करता था, दूसरी ओर पर्याप्त मात्रा में राष्ट्रीय सरकार तथा अपेक्षाकृत कम मात्रा में सरकार के निम्न स्तर वस्तुत: सरकार सम्बन्धी कोई भी कार्य नहीं करते थे। संविधान जो इनके कार्यों की व्याख्या करता था यह दिखावा मात्र था। अनेक महत्वपूर्ण संस्थाएँ अधिक संवैधानिक थीं। सरकार के सभी कार्यों गुटों तथा प्रतिद्वन्दी गुटों के द्वारा किये जाते थे ये कार्य प्राय: अर्द्ध निजी अथवा पूर्णतः निजी संस्थाओं द्वारा किये जाते थे, जिन्हें सरकार पूर्ण सहायता देती थी तथा अक्सर सरकारी अधिकारी इन संस्थाओं के अधिकारी होते थे। राष्ट्रीय परिषद् इस शासन-व्यवस्था को संसदात्मक व्यवस्था का स्वरूप प्रदान करने का दिखावा मात्र थी।

संवैधानिक तथा राजनीतिक वास्तविकता-

अत: यदि मेयजी संविधान की तुलना अमेरिकी राज्यों के उन विस्तृत संविधानों से की जाए जो सरकार के प्रत्येक कार्य की तथा राजनीति के प्रत्येक पक्ष की विस्तृत व्याख्या करते थे, तो यह अपर्याप्त संविधान प्रतीत होगा। यह जापान के सम्पूर्ण राजनीतिक ·

9. एक विवादास्पद विषय को और जटिल बनाना अच्छा नही लगता तो भी यह उल्लेखनीय है कि सेनाओ में भी सम्राट की निहित शक्तियो के बारे में मतभेद है। उदाहरण के लिये नौ सेना में मन्त्री के स्थान पर एक गैर सैनिक व्यक्तित्व को काम करने दिया गया जबकि थल सेना ने कभी भी इसे सिद्धान्ततः नहीं माना। देखिये अनात (पिनोबे तात सुकिची) दि केबिनेट एंड कैम्प दि जापान वीकली क्रानीकल, मई 15, 1930 पृष्ठ 503-505।

व्यवहार का आलेख नहीं था। संविधान जापानी सरकार की आधुनिक पोशाक था, जिससे जापान की साम्राज्यिक सरकार विश्व को अधिक आकर्षक लगे तथा यह आधुनिक राष्ट्रीय राज्य के रूप में जापानियों की भूमिका तथा जापानियों के वास्तविक सामाजिक अभ्यासों तथा प्रचलित विश्वासों के मध्य समझौता था।

यह असंभव नहीं है कि भविष्य में कभी मेयजी संविधान पर पुनर्विचार किया जाएगा तथा इसकी व्यापक व उदार सीमाओं में प्रजातन्त्रीय जापानी सरकार भविष्य की ओर प्रगति करेगी। मेकआर्थर संविधान के औचित्य पर विचार बाद में किया गया है। वहाँ मेयजी संविधान की क्षमता पर विचार करना उचित होगा। यह कहा जा सकता है कि 1889 के जापानियों को संविधान की आवश्यकता नहीं थी। ब्रिटिश लोगों से कहीं अधिक सामंजस्यकर्ता तथा परम्परागत होने के कारण उनके लिए लिखित संविधान सत्ता का आदेश हो सकता था तथा समझौतावादी प्रवृत्तियों वाला नई सत्ता की रचना करने वाला प्रलेख नहीं हो सकता था। एक जापानी जापानी होने का समझौता उसी प्रकार नहीं कर सकता जैसे मनुष्य होने के लिये उसका समझौता करना असम्भव है जबकि सभी अमेरिकावासी स्पष्ट अथवा अस्पष्ट रूप से जॉन लॉक के इस महान् सिद्धान्त के उत्तराधिकारी हैं कि स्वतन्त्र राज्यों के नागरिक उन मूल भूत समझौतों के कर्ता अथवा उत्तराधिकारी हैं जिन पर सरकार की सम्पूर्ण सत्ता आश्रित है।

□□□

अध्याय 17

मेयजी संविधान के अन्तर्गत सरकार

विशिष्ट जापानी शैली में चार्ट पन्द्रह, चित्रित रूप में, 1945 से पूर्व की जापान की राजनीतिक संरचना का वर्णन करता है। मेयजी काल में संसदीय सरकार को निरन्तर आन्तरिक चक्रों के रूप दिखाना पूर्णतः उचित है, क्योंकि वह उस प्रकार के कठोर कोष्ठकों
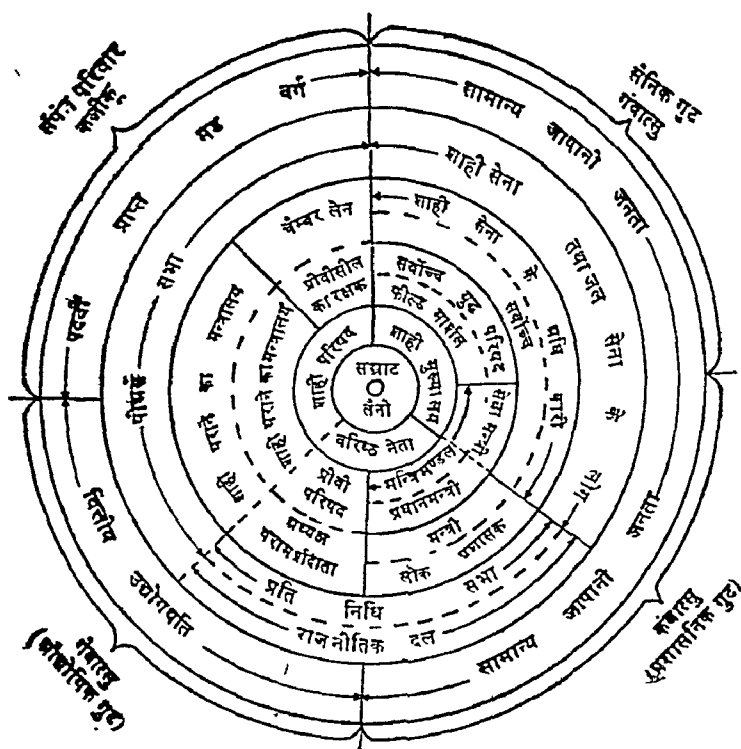
चार्ट 15 प्रभाव का क्षेत्र संसदीय साम्राज्य (1890-1937)

में विभाजित नहीं थी, जिनका प्रकाशन संयुक्त राज्य अमेरिका में बजट ब्यूरो तथा सरकारी प्रकाशन कार्यालय द्वारा, सरकारी प्रयोग के लिये किया जाता है। सरकारी तथा गैर सरकारी, कानूनी तथा परम्परागत, दबाव तथा सत्ता के मध्य जापान में कभी भी विभाजन

उतना तीव्र नहीं रहा जितना अमेरिका तथा अन्य पश्चिमी देशों में रहा है। सामाजिक उत्पत्ति तथा प्रमुख गुटों के राजनीतिक अर्द्ध केन्द्र जनता से लेकर सत्ता के केन्द्र तक सीधी रेखाओं के समान पहुँचे हुए लगते हैं।

प्रमुख गुट (बात्सु)—चीन में जिसे कहा जाता है, तथा जापानी भाषा में जिसे बात्सु कहा जाता है, का अर्थ, गुट, ग्रामीण कुल, समूह अथवा वड़ा है। वस्तुतः जापान में ये चार प्रकार के थे। सर्वप्रथम कुलीन वर्ग था जो 20 वीं शताब्दी के प्रारम्भ में समाप्त हो गया तथा सैनिक वर्ग 1945 में नष्ट हो गया, तथापि पूंजीपति तथा प्रशासक, ये दो वर्ग बने रहे इनके साथ सम्भवतः एक नवीन वर्ग व्यावसायिक श्रमिक संगठनों तथा श्रम-राजनीति में भाग लेने वालों का हो सकता है, तथापि श्रमिकों को अभी भी जापान में एक प्रमुख बात्सु के रूप में मान्यता प्राप्त करना बाकी है।

पश्चिमी समाचार जगत तथा पुस्तकों में जापानी पद इतने सामान्य हो चुके हैं, कि वे उल्लेखनीय हो गये हैं। कुलीन वर्ग का गुट मोमबात्सु तथा धनिकों का गुट जैबात्सु कहलाता था। सेना अधिकारियों तथा नौ सैनिक अधिकारियों का गुट गुम बात्सु था। तथा प्रशासनिक वर्ग का गुट कामबात्सु था। यह ध्यान देना होगा कि स्वयं गुट इतने एकाधिकारवादी नहीं थे जितना कि इन पदों से संकेत मिलता है। समाज में पारिवारिक व्यवस्था, सम्पूर्ण अनुकूलन तथा जटिल परस्पर सम्बन्ध तथा इन सबके परे जापानी राजनीति का प्रसारण व दिशा-भ्रम तथा वित्तीय विश्व का यह अर्थ था कि व्यक्ति आसानी से एक गुट से दूसरे गुट में गतिशील हो सकते थे तथा कोई भी नीति अनेकों गुटों तथा उप गुटों के प्रयासों का परिणाम हो सकती थी।

इन महान गुटों का वर्णन जापान में संसदीय सरकार का वर्णन करने के लिये उचित प्रस्तावना प्रस्तुत करता है। 1889 से 1945 तक पूर्व संसदीय संस्थाओं के प्रभाव में मध्य सन्तुलन तथा जनमत, व विधायी क्रियाओं में निरन्तर अस्थिरता ने अन्ततः संसद के निर्माण को सम्भव बनाया। इन वर्षों में अधिकांशतः सन्तुलन उन लोगों के विपरीत रहा था, जो मात्र संसदीय व्यवस्था अथवा संसदीय सिद्धान्तों में विश्वास करते थे। जापान की व्यावहारिक राजनीति का अर्थ विभिन्न गुटों के मध्य निरन्तर वार्ताओं का होना था। अधिकांश समय जापान की सामाजिक डाइट जो कार्य करती थी, वह पद के पीछे किये गये समझौतों की चर्चा मात्र होती थी अथवा उन निर्णयों की पुष्टि मात्र होती थी जिन्हें विधायकों की कल्पना से भी परे विभिन्न समूहों द्वारा किया जाता था।

सामान्यतया गमबात्सु का संचालन साम्राज्यिक सेना के मुख्यालय तथा सर्वोच्च सभापति के द्वारा होता था। मोमबात्सु का संचालन शाही दरबार के सदस्य पारिवारिक परिषद् अथवा वरिष्ठ राजसत्ताओं के माध्यम से करते थे। जैबात्सु तथा काम्बात्सु दोनों सरकार के दो वरिष्ठतम अवयवों, प्रीवी कौंसिल तथा हाउस ऑफ पीयर्स, को परस्पर प्रमाणित करने में संघर्षरत रहते थे। विभाजन के संकेत अस्थिर तथा अस्पष्ट थे। कभी-कभी ही नाम मात्र की साम्राज्यिक इच्छा का प्रयोग करने के लिए खुला तथा उग्र संघर्ष हुआ करता था। इस जटिल प्रक्रिया को तथा जापानी सरकार पर संकुचित अर्थों में इसके प्रभाव को जानने के लिये प्रतिवर्ष माह अथवा सप्ताह की प्रक्रिया समझने की आवश्यकता नहीं है। जापानी शासन व्यवस्था में संवैधानिक अर्द्ध सरकारी तथा अति-संवैधानिक सभी सम्प्रदाय परस्पर आच्छादित हैं।

इस प्रकार यह माना जा सकता है कि जापानी राष्ट्रीय जीवन के मध्य स्थित नीति निर्माण कीं प्रक्रिया संसदीय व्यवस्था के मध्य में आधी अन्दर तथा आधी नीति निर्माण प्रक्रिया के बाहर स्थित थी। चाय-घरों में होने वाले सौदे, क्लबों में किये गये निर्णय तथा अन्य सरकारी एजेन्सी द्वारा दिये जाने वाले तर्क तथा सरकारी संस्थाओं में औपचारिक ढंग से प्राप्त निर्णय, जो डाइट की पहुँच से परे होते थे, ये सब जापान में प्रत्यक्षतः दिखने वाली संसदीय व्यवस्था पर सर्वदा ऊपर से थोपे जाते थे।

अतः मेयजी संविधान के अन्तर्गत सरकार का परीक्षण विधान सभा तथा दलीय राजनीतिक मामलों को बाहर रख कर करना चाहिये, ताकि हम उन तत्वों का पता लगा सकें जो किसी भी जापानी राजनीतिक स्थिति का निर्धारण करने में निश्चित सन्दर्भ थे तथा जो किन्हीं विशिष्ट अवसरों पर मात्र विशिष्ट विषयों को ही उत्सुक सार्वजनिक विवाद अथवा चर्चा तथा विधान सभा के विचार-विमर्श के द्वारा सुलझाने के लिये छोड़ते थे।

किसी भी सरकार में कृत्रिम रेखाएँ खींच कर शक्ति-पृथकीकरण को क्रियान्वित कर सकते हैं। जापान में इसी प्रकार एक ओर सरकार के प्रकारों को देखते हैं—प्रतिद्वन्द्वी गुटों के द्वारा प्रस्तुत पृष्ठभूमि में शताब्दियों से केन्द्रीय सरकार की प्रशासनिक व्यवस्था निरन्तर रही है—दूसरी ओर संसदीय संस्थाएँ इस प्रक्रिया में कृत्रिम रूप से राजनीतिक शक्ति को प्राप्त करने की कोशिश कर रही है तथा उसमें कभी-कभी सफलता भी प्राप्त करती हैं।

साम्राज्यिक सम्मेलन (गोजेन के इगी)—आधुनिकीकृत केन्द्रीय सरकार की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण संस्था साम्राज्यिक सम्मेलन है। इस सम्मेलन को आमन्त्रित करना पूर्णतः सम्राट् का विशेषाधिकार था। यह तथ्य जापान में नीति-निर्धारण की अनिवार्य जापानी विशेषता को प्रस्तुत करता है कि सम्पूर्ण नीति सम्बन्धी मुख्य निर्णय सम्राट् की उपस्थिति में लिए जाते थे। ये निर्णय सम्राट् की उपस्थिति में किसी प्रकार का विवाद उत्पन्न नहीं करते थे। अधिकांशतया इन निर्णयों पर सहमति इस सम्मेलन से पूर्व ही प्राप्त कर ली जाती थी तथा ये सम्मेलन उन निर्णयों को स्वीकृति प्रदान करने वाली औपचारिकता मात्र थे। किन्तु हमेशा ऐसा नहीं होता था। कुछ ऐतिहासिक मामलों में परस्पर मतभेद स्वयं सम्राट् के सम्मुख तक हो गया तथा असहमत पक्षों ने सम्राट् से अन्तिम निर्णय के लिये प्रत्यक्ष हस्तक्षेप तथा सत्ता के प्रयोग की अपील की। जब कभी सम्राट् आज्ञा देता था तो वह प्रमुख शासक गुटों के समूह तथा किसी विशिष्ट अवसर के लिये नीति-निर्धारण पर उसकी सम्पूर्ण सत्ता का संकेत होती थीं।

इस प्रकार के सम्मेलनों में विशिष्ट उपस्थिति तथा हित प्रतिनिधित्व सम्मेलनों में साम्राज्यिक राजकुमार, उच्च पदीय सैनिक अधिकारी, वरिष्ठ राजनयिक, लार्ड कीपर ऑफ प्रीवी सील तथा राज्य के विभिन्न मन्त्री उपस्थित होते थे।

सैद्धान्तिक दृष्टि से न तो संविधान और न ही साम्राज्य-विधि इस प्रकार के सम्मेलनों की व्यवस्था करती थी तथा इस प्रकार साम्राज्यिक सम्मेलन में लिये गये निर्णय अस्तित्व में आने से पूर्व ही पश्चिमी कानून की दृष्टि से अवैधानिक थे, किन्तु यह सम्मेलन जापान के दृष्टिकोण से नीति-निर्धारक इसलिए हो गया, क्योंकि इसमें सम्राट् स्वयं उपस्थित थे, और उन्होंने इसके निर्णयों में सक्रिय योग दिया। यह तथ्य कुल मिला कर साम्राज्यिक

सम्मेलन को, निर्णय करने वाली सरकार की किसी भी अन्य एजेंसी की तुलना में अधिक महत्त्वपूर्ण बना देता था। यह उल्लेखनीय है कि द्वितीय महायुद्ध में जापान पर द्वितीय अणु विस्फोट किये जाने के बाद जापान द्वारा आत्मसमर्पण का निर्णय एक निर्बल दुखी साम्राज्यिक सम्मेलन में लिया गया, तथापि यह निर्णय साम्राज्यिक सम्मेलन ने ही लिया, यह तथ्य महत्त्वपूर्ण है।

साम्राज्यिक परिषद्—पश्चिमी राजतन्त्रों के विकास में मूल राजदरबार से सरकारी अंगों का विकास धीरे-धीरे हुआ। ब्रिटेन तथा एशिया के राजा अपने विशिष्ट तथा विभिन्न तरीकों से धीरे-धीरे व्यक्तिगत रूप से सरकार की केन्द्रीय व्यवस्था से पृथक् होते गए तथा साम्राज्यिक सरकार का स्वरूप अन्ततः राष्ट्रीय सरकार का हो गया। यूरोप में इस प्रक्रिया में अनेक शताब्दियाँ लगीं। जापान में यह प्रक्रिया दो पीढियों में ही समाप्त हो गई।

इस प्रकार मेयजी संविधान के अन्तर्गत सरकार का कार्य न केवल राष्ट्र-राज्य के लिये आधुनिक सरकार का निर्णय करना था, अपितु इसे साम्राज्यिक दरबार से राष्ट्रीय सरकार के विभिन्न अंगों का विकास करना था, जो सैद्धान्तिक रूप से उसी का एक भाग थे। इसमें कुछ जापानियों की अपनी मूल समस्याएँ भी थीं, जैसे, जापान में दरबार लगभग एक हजार वर्षों से निष्क्रिय रहा था तथा जापानी शासन-प्रणाली का अनुकरण ऐसी सभ्यता से कर रहे थे, जो उनकी सभ्यता से बहुत भिन्न थी।

समाजशास्त्रीय अर्थों में यह सीमित संस्थाओं से व्यापक संस्थाओं का विकास करना था—अर्थात् सम्राट् तथा उसके दरबार की सैद्धान्तिक संप्रभुता से एक महान् शक्ति का शासन करने योग्य विशाल शासन-प्रणाली का विकास करना था तथा उच्चतम शिखर पर स्थित अपेक्षाकृत कम महत्त्वपूर्ण अंश अब भी जापान के राष्ट्रीय जीवन में पर्याप्त महत्त्व रखता था। इस प्रकार सरकार के मध्य सरकार का निर्माण करते हुए इसने स्वयं साम्राज्यिक परिवार के मामलों का दायित्व भी ग्रहण कर लिया।

1889 की घटना से साम्राज्यिक परिवार के मामलों में तथा राष्ट्र के मामलों में अन्तर स्थापित किया गया तथा मेयजी संविधान के साथ-साथ साम्राज्यिक परिवार की विधि की घोषणा भी की गयी। साम्राज्यिक पारिवारिक विधि साम्राज्यिक परिवार परिषद् की स्थापना करती थी।

इस परिषद् में शाही परिवार के सभी पुरुष सदस्य तथा ग्यारह राजकुमारों के परिवार के पुरुष प्रतिनिधि होते थे। लार्ड कीपर ऑफ प्रीवी सील, प्रीवी कौंसिल का सभापति तथा साम्राज्यिक परिवार का मन्त्री न्याय मन्त्री तथा मुख्य न्यायधीश इसके पदेन सदस्य होते थे। वे इसके विचार-विमर्श में भाग लेते थे तथा राय देते थे।

जब इस परिषद् में साम्राज्यिक परिवार सम्बन्धी विषय पर विचार होता था तो उस पर साम्राज्यिक परिवार के मन्त्री के प्रति-हस्ताक्षर ही पर्याप्त थे किन्तु यदि यह विचार विमर्श राष्ट्रीय विधि को प्रभावित करता था तो उस अध्यादेश पर प्रधानमन्त्री के प्रति-हस्ताक्षर भी आवश्यक थे। इस परिषद् की सहायता साम्राज्यिक आर्थिक परिषद्, विचार विमर्श करने वाला बोर्ड (ब्यूरो ऑफ पिअरेज तथा कोर्ट ऑफ ऑनर्स, विचारविमर्शकर्ता बोर्ड (राजवंशीय परिवारों वाला) तथा साम्राज्यिक गवर्नर आदि करते थे।

इस जटिल पदसोपान की आवश्यकता वास्तविक रूप में थी। साम्राज्यिक परिवार न केवल राजनीति में एक कारक तथा सरकार का अंग था, अपितु यह राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था का आधार भी था। साम्राज्यिक परिवार के सदस्य कुलीन वर्ग के हितों के उच्चस्थ चक्र का निर्माण करते थे तथा उनकी सम्पदा जापान की सम्पूर्ण सक्रिय सम्पत्ति का मुख्य भाग थी। (13 अक्तूबर, 1947 को) इक्यावन राजकुमार युद्ध के पश्चात नवीन परिवार विधि के अन्तर्गत अन्तिम बार मिले। सम्राट् के निजी भाइयों को छोड़ कर बाकी सभी राजकुमारों ने अपनी साम्राज्यिक प्रतिष्ठा का परित्याग कर स्वयं को सामान्य जनता के रूप में घोषित किया।[1]

स्वयं शाही परिवार अपने अन्य राजकुमारों के परिवारों से पृथक् एक महत्त्वपूर्ण आर्थिक दबाव था। राष्ट्रीय सूची में सम्राट् की दर्ज की गई आय के अलावा उसकी सम्पत्ति एक बिलियन येन थी, उस समय, जबकि जापानी मुद्रा येन, डॉलर के समान ही स्थिर थी तथा दो येन के बदले में एक डॉलर प्राप्त किया जा सकता था। सम्राट् की निजी सम्पत्ति व सार्वजनिक सम्पत्ति के मध्य अन्तर स्थापित करना बड़ा कठिन था, तथापि यह कहा जा सकता है कि 1930 में निजी राजस्व व आर्थिक स्रोतों के सन्दर्भ में सम्भवतः जापान का सम्राट् विश्व का सर्वाधिक सम्पत्तिशाली व्यक्ति था।

जापान के दीर्घकालीन इतिहास की दृष्टि से यह उल्लेनीय है कि साम्राज्यिक परिवार सम्मेलन तथा उससे सम्बन्धित संस्थाएं सार्वजनिक आरोपों की सीमा से परे बने रह सके। आधुनिक राष्ट्रीय अस्तित्व के प्रथम 85 वर्षों में जापान के प्रथम तीन सम्राटों से सम्बन्धित कोई षड़यन्त्र या दुर्घटना नहीं घटी। मेयजी सम्राट् का उत्तराधिकारी तैशो सम्राट् यद्यपि मानसिक बीमारी से ग्रस्त था, तथापि उसने राष्ट्रीय अपमान का कोई कार्य नहीं किया। जापान में कभी भी विंडसर का ड्यूक अथवा आगा खां नहीं हुआ। शायद यही कारण था कि आत्म-समर्पण के समय जब शाही प्रतिष्ठा की सर्वाधिक आवश्यकता थी, वह पूर्णतः अप्रभावित क्षमता के रूप में जापानियों को प्राप्त हुई।

गैनरो तथा जुशीन— जापानी शासन-व्यवस्था में सर्वाधिक रोचक तथापि अस्पष्ट अंग वरिष्ठ राज नेताओं का समूह था, जो गैनरो कहलाता था। गैनरो जापानी राजनीति के दिशा भ्रम तथा उत्तरदायित्व के प्रसारण का प्रतीक है। अक्सर वरिष्ठ राजनेता प्रधानमन्त्री होते थे तथा प्रीवी कौंसिल, सेना तथा नौसेना पर उनका प्रभुत्व होता था। सम्पूर्ण महत्त्वपूर्ण घरेलू विधियों पर तथा सन्धियो पर सम्राट् की सहमति इसी संस्था द्वारा अभिव्यक्त की जाती थी।[2]

फिर भी गैनरों औपचारिक रूप में एक सरकारी संस्था नहीं थी। विशिष्ट रूप में एक सरकारी संस्था नहीं थी। विशिष्ट रूप से राजनेता पद का प्रयोग उन लोगों के

1. यमाशिया परिवार को कोई अलाउंस नहीं दिया जाता था, क्योंकि राजकुमार सैनिक पदाधिकारी था तथा उसके परिवार नहीं। जापान इयर बुक 1946-48 पूर्वोक्त पृष्ठ 6।

2. गैनरो का मात्र साहित्यक अर्थ में वरिष्ठ अथवा बड़ा माना जाता है। 1875 में इस पद का प्रयोग सेनेट (गैनरो इन) के लिए किया गया। मेयजी काल के अंत तक तैशो तथा शोवा काल के बाद इस को वशिष्ट अर्थों वाला बना दिया गया। इवासाकी पूर्वोक्त पृष्ठ 38 में कहा गया है कि इस पद का प्रयोग सर्वप्रथम राजनीति अर्थों 1900 में किया गया। जापानी परिभाषा के लिए देखिए। दाई हमाक्का जितने (एनसाइक्लोपिडिक डिक्शनरी) टोक्यो, 1932 अंक आठ पृष्ठ 573-574।

लिये था, जो पहले से राजनीतिज्ञ रह चुके थे। ये समुराई तथा कुगे वर्ग की दूसरी पीढ़ी के थे। प्रतिस्थापना काल में अपने पूर्वजों के समान वे भी राजगद्दी के पीछे वास्तविक शक्ति बन बैठे। उनके मूल समूह में इतो हिरोबूमी (1909 में वध किया गया), यमागाता आरिहोमों (1922 में मृत्यु हुई), इनोयू कोग्रोरू (1915 मृत्यु हुई) ओयामा इवाओ (1916 में मृत्यु हुई) तथा मासायोशी (1924 में मृत्यु हुई) थे। बाद में इनमें कात्सुरा तारो (1913 में मृत्यु हुई) तथा सैओंजी (एकमात्र दरबारी) भी सम्मिलित हो गये थे।

गेनरो का अन्तिम सदस्य सैओंजी यह चाहता था कि उनके साथ ही यह संस्था समाप्त हो जाए। उदाहरण के लिये 192 . में प्रधानमन्त्री-पद का चयन करने से पहले प्रीवीकौंसिल के सभापति, शाही घराने के मन्त्री, लार्ड कीपर ऑफ प्रीवी सील तथा अवशिष्ट गेनरो से साक्षात्कार किया गया। सैओंजी की मृत्यु 1940 में हुई थी किन्तु जब तक वरिष्ठ राजवंशों की उतनी ही अस्पष्ट तथा अतिसंवैधानिक संस्था वरिष्ठ राजवेत्ताओं का संगठन (जुशीन) का उदय हो चुका था। इस समूह में भूतपूर्व प्रधान मन्त्री, लार्ड कीपर ऑफ दि प्रीवीसील शाही घराने का मन्त्री तथा प्रीवी कौंसिल के सभापति होते थे। कुछ आन्तरिक मन्त्रिमण्डल के अधिकारियों के साथ यह समूह आन्तरिक परामर्शदाता-चक्र बन गया।

साम्राज्यिक मुख्यालय (संजी दे होनेइ)—युद्ध तथा संकट के समय साम्राज्यिक मुख्यालयों में उच्च अधिकारियों का संकेन्द्रण हो जाता था। अनेक पश्चिमी चलचित्रों में इस संस्था का प्रतीक अपने श्वेत घोड़े पर सवार स्वयं सम्राट् हिरोहितो था। वस्तुतः स्वयं सम्राट् ही सर्वोच्च सेना की मीटिंग बुलाता था, उसी प्रकार जैसे वह साम्राज्यिक सम्मेलन आमन्त्रित करता था। मुख्यालय में स्टाफ के प्रधान, युद्ध तथा नौ सेना के मन्त्री, सैनिक पदों पर नियुक्त साम्राज्यिक राजकुमार तथा विशिष्ट रूप से चयन किये अधिकारी होते थे। इसके अतिरिक्त एक सैनिक क्षेत्र मुख्य सलाहकार जो एक प्रकार से स्टाफ का मुख्य अधिकारी (जैसे राष्ट्रपति रूजवेल्ट के साथ एडमिरल लीह परामर्शदाता के रूप में था) भी होता था। अपनी युद्ध सम्बन्धी शक्तियों का प्रयोग करते समय सम्राट् फील्ड मार्शलों तथा फ्लीट एडमिरल के (गेनसुइफू) से भी परामर्श लेता था। इस बोर्ड सदस्य (सैनिक क्षेत्र में) गेनरो (राज्य सम्बन्धी) के समान थे, तथापि इस प्रकार का बोर्ड मात्र युद्ध काल में ही बनाया जाता था तथा शान्ति काल में मात्र शाही राजकुमार ही बोर्ड की सदस्यता का पद प्राप्त कर सकते। वस्तुतः युद्ध-नीति का निर्माण एक सर्वोच्च युद्ध-परिषद् के द्वारा होता था, जिसका वर्णन बाद में किया जाएगा।

कार्यपालिका—प्रशासनिक पद—सिद्धान्ततः, जैसा कि पहले भी बता दिया गया है, सम्पूर्ण शक्तियाँ सम्राट् में निहित थीं तथा उससे ही लोगों को प्राप्त होती थीं। व्यवहार में इन शक्तियों का प्रयोग परामर्शदाताओं द्वारा किया था। इस प्रकार व्यापक अर्थों में सम्राट् के सम्पूर्ण परामर्शदाताओं को सामूहिक रूप से जापान की कार्यपालिका मान लेना चाहिये। संकुचित अर्थों में कार्यपालिका में नागरिक तथा सैनिक परामर्शदाता तथा प्रशासक शम्मिलित थे, जो उस आन्तरिक चक्र में नहीं थे, जिनकी पहुँच सम्राट् तक थी। यहाँ भी मुख्य पदों पर परम्परागत रूप से चार समूहों के प्रतिनिधियों. कुलीन वर्ग. सैनिक वर्ग. प्रशासक तथा पूंजी के स्वामी उद्योगपति का आधिपत्य था। अत्यधिक अर्थ में कार्यपालिका में सरकार के विशिष्ट अभिकरण निहित थे. जैसे साम्राज्यिक घराने के

मामलों में प्रीवी सील का अधिकारी तथा साम्राज्यिक घराने का मंत्री, संवैधानिक तथा विदेशिक मामलों में प्रीवी कौंसिल, प्रशासनिक मामलों में मंत्रिमंडल तथा सैनिक मामलों में सेना के सर्वोच्च अधिकारी आदि।

जापान की कार्यपालिका का निश्चत स्वरूप भ्रम में डालने वाला है, तो भी कार्यपालिक के अंगों की प्रकृति तथा शक्तियों का वर्णन किया जा सकता है। यद्यपि कार्यपालिका अपनी नीतियों के निर्माण के लिए सम्राट के प्रति उत्तरदायी थी, तथापि वह उसके कार्यों के लिए उत्तरदायी नहीं थी। परिणामत: जापान की राजनीति को व्यक्तियों अथवा समूह के मध्य उत्तरदायित्व के क्रम के रूप में न देखा जाकर उसके बंटे हुए रूप में देखा जाना चाहिए। परिणामस्वरूप समझौते पर आधारित ऐसा अस्थिर सम-संतुलन था, जिससे शक्तिशाली समूह लाभ प्राप्त करते थे। चूंकि नियुक्तियों पर डाइट को कोई नियंत्रण नहीं दिया गया था तथा संविधान व्यवस्थापिका के स्थान पर कार्यपालिका से पक्षपात करता था तथा ऐतिहासिक विकास गलत दिशा में हुआ, कार्यपालिक को डाइड के प्रति उत्तरदायी बनाने की प्रक्रिया 1930 तक अवरुद्ध रही।

कार्यपालिका की वास्तविक शक्तियों तथा कार्यों की जहां परिभाषा की गई थी, वे संविधान में तथा उससे पूर्व की विधियों तथा क्रियान्वित अध्यादेशों में निहित थे। इनके अनेकों प्रत्यक्षत: सम्राट के विशेषाधिकारों से संबंधित थे तथा इनका विश्लेषण कर लिया गया है सांराश में हम उनकी विवेचना इस प्रकार कर सकते हैं, वे साम्राज्यिक परिवार के मामलों का प्रबंध, युद्ध की घोषणा, युद्ध, शांति तथा संधियों की बातचीत, प्रशासनिक संरचना का निर्धारण सैनिक तथा नागरिक अधिकारियों की नियुक्त, डाइट को स्थगित व भग करने की शक्ति तथा अंतत: संपूर्ण विधियों को स्वीकृति प्रदान करने वाली थी।

जिन शक्तियों का प्रयोग मात्र कार्यपालिका कर सकती थी, उनके अतिरिक्त अन्य शक्तियों का स्वरूप विधायनी था। डाइट द्वारा बनाये गये विधेयकों से सरकारी विधेयक अधिक प्रभावशाली थे कार्यपालिका को विशेषाधिकार तथा अध्यादेश प्रेषित करने का अधिकार था। कोष पर भी कार्यपालिका का कठोर नियंत्रण था। यदि डाइट प्रस्ताविक बजट को स्वीकार कर दे, तो भी कार्यपालिका को उसे क्रियान्वित करने का अधिकार था। इसके अतिरिक्त उसे संकटकालीन आर्थिक शक्तियां भी प्राप्त थीं तथा डाइट को निर्धारित व्यय को कम करने का अधिकार प्राप्त नहीं था। इस प्रकार एक विशिष्ट स्थिति तथा इन शक्तियों के कारण निम्न अंशों में वर्णित शासक-अंग विश्व की सर्वाधिक शक्तिशाली कार्यपालिक का निर्माण करते थे।[3]

साम्राज्यिक परिवार के कार्य सम्राट के विशेषाधिकार तथा उसकी परिषद् के कार्य वस्तुत: लार्ड कीपर ऑफ प्रीवी सील के द्वारा (नई दैजिन) साम्राज्यिक परिवार मंत्री

3. दि जापानी एक्जीक्यूटिव : स्ट्रक्चर एण्ड फन्क्शन्स, 18 अक्टूबर, 1945 नियंत्रित (अविभाजित), संयुक्त सर्वोच्च कमान पॉलिटिकल रिआरिनटेशन, पूर्वोक्त अंक 1 पृ 120-123 आत्मसमर्पण से पूर्व काल का संगठन प्रस्तुत करता है। जापान का सरकारी गजट तथा सम्पूर्ण सरकारी गतिविधियों के लिए नाईकाकू इन्सानसुक्योकू (मंत्रिमंडल प्रकाशन कार्यालय), कैम्पो (सरकारी गजट) टोक्यो, 1883, सभी विधियों अध्यादेश तथा प्रशासनिक आदेश कैम्पो की क्रियान्विति के बाद ही प्रभावकारी हुए।

(कुनाई दैजिन) द्वारा किये जाते थे। लार्ड कीपर के पद का निर्माण 1884 में किया गया था तथा साम्राज्यिक परिवार मंत्रालय की रचना 1884 में मंत्रिमण्डल के साथ की गई थी। वह परिवार तथा सरकारी मामलों पर सरकारी स्तर पर परामर्श देता था, जनता द्वारा याचनपत्रों पर उचित कार्यवाही करता था व सभी अध्यादेशों तथा विधियों पर साम्राज्यिक मोहर लगाने का अधिकारी था। वस्तुतः लार्ड कीपर सम्राट का सर्वोच्च निजी परामर्शदाता बन गया। वह राज्य मंत्री नहीं था क्योंकि वह मंत्रीमण्डल का सदस्य नहीं था वह पारिवारिक मामलों पर परामर्श देने का अधिकारी था, वह पदवियां तथा उपाधियां प्रदान करता था तथा पारिवारिक मंत्रालय के मामलों का सर्वेक्षण करता था (कुनाइशों) में दोनों अधिकारी परंपरागत रूप से सम्राट द्वारा आजीवन नियुक्त किये जाते थे यद्यपि यह आवश्यक नहीं था। दोनों प्रधानमंत्री की नियुक्त के लिए सलाह देते थे। दोनों सम्राट की इच्छा को प्रमाणित करते थे क्योंकि जनता याचना की सुनवाई की व्यवस्था से ही करते थे।[4] चूंकि इस मंत्रालय तथा लार्ड कीपर पर मंत्रिमण्डल का नियंत्रण नहीं था अतः इसके अधिकारी अर्द्ध गेनरो तथा बाद में पूर्ण जुसीन बन गए।

प्रीवी परिषद्– (सुमित्सु इन)—

प्रीव परिषद् की रचना एक संविधान सभा के रूप में की गई थी जो सम्राट को जापान -संघटित विधि के बारे में परामर्श दे। परिषद की रचना व उसकी व्यवस्था करने वाला अध्यादेश सुमित्सु -इन-कानसेंइ (प्रीव परिषद् अध्यादेश (888) था जो स्वयं मेयजी संविधान का पूर्व रूप था संविधान का 46 वां अनुच्छेद जिसकी पुष्टि प्रीव परिषद् ने की थी, के अनुसार प्रीव परिषद के सदस्य, के संगठन के प्रावधान के अनुसार महत्त्वपूर्ण विषयों पर जब भी सम्राट उनसे परामर्श मांगे, विचार विमर्श करने वाले थे।[5]

इस परिषद में एक सभापति (गीशो), जो सम्राट द्वारा आजीवन नियुक्त किया जाता था, एक उपसभापति (फूकूजीशो) तथा पच्चीस सदस्य होते थे। सभापति परिषद् पर नियंत्रण करता था, विचार विमर्श के विषयों को प्रस्तुत करता था, समान मतों पर निर्णायक मत देता था, निर्णयों की घोषणा करता था, समितियों की नियुक्ति करता था तथा संपूर्ण परिषद प्रलेखों पर हस्ताक्षर करता था। परिषद के कार्य में सहायता करने हेतु एक महासचिव (शोकी कांचो) होता था। तथा कार्य समितियों द्वारा किया जाता था।

4. 1929 में प्रधानमंत्री तनाका की आलोचना मंत्रिमंडलीय प्रस्ताव सम्राट के सम्मुख शाही घराने के मंत्री की अनुपस्थिति में करने के लिए की गई। प्रभाव क्षेत्र धीरे धीरे मंत्री अथवा ग्रांड चैम्बरलेन अथवा लार्ड कीपर के मध्य अस्थिर रहने लगा। साधारणतया मंत्री पद से लार्डकीपर बनना पदोन्नति मानी जानी लगी। उदाहरण के लिए लिए काउंट यकिनों शिक्षा, विदेश विभाग, कृषि व वाणिज्य तथा शाही घराने का मंत्री बनने के बाद लार्ड कीपर बना। जब राजकुमार कन्सुरा लार्ड कीपर बना तो उसे शोगुन के नवीन रूप में देखा गया। देखिए क्यूगले, जापानीज गवर्नमेंट पूर्वोक्त पृष्ठ 73।

5. अध्यादेश द्वारा परिषद् को 6 विशिष्ट शक्तियां दे दी गई—(1) शाही घराने की विधि के प्राविधान के अन्तर्गत आने वाले विषय (2) संविधान के पूरक के रूप में विधियों तथा अध्यादेशों के प्रारूप जिनमें संदेहपूर्ण प्रश्न उठाए गए थे। (3) अनुच्छेद चौदह. सात तथा 60 (अध्यादेश) के अन्तर्गत घोषणाएं। (4) अंतर्राष्ट्रीय संधियों तथा समझौते। (5) प्रीवी कौंसिल के संगठन तथा तथा नियमों में संशोधन तथा (6) विशिष्ट परामर्श के लिए प्रस्तुत विषय।

सुमित्सु इन कान्सेई अनवाद जे० डी० डी० में पृष्ठ 127-132 पर दिया गया है, इसे इसके अतिरिक्त पॉलिटिकल रिआरिएटेशन, पूर्वोक्त खंड दो पृष्ठ 595-596।

1930 में एक पार्षद की औसत आयु तिहेत्तर वर्ष थी। इसके सदस्यों में से मात्र सात मंत्री -मंडल के सदस्य रह चुके थे तथा चार सेना तथा नौ सेना में से लिये गए थे। इनमें तीन विश्वविद्यालय के प्राध्यापक इमेरिती तथा भूतपूर्व विश्वविद्यालय के सभापति थे।

यद्यपि ऐसा कहने में विचित्र लगता है, तथापि इतो हिरोबूमी ने यदि वापिस लौट कर प्रीव परिषद की क्रिया प्रणाली का निरिक्षण किया होता तो यह वस्तुतः निराश होता क्योंकि उसने इसे पूर्णतः परामर्श दात्री संस्था के रूप में चाहा था अर्थात् वह कार्यपालिका के कार्य में हस्तक्षेप नहीं करेगी। इतो यह कदापि नहीं चाहाता था कि यह संस्था मंत्रालयों पर नियंत्रण करे। इस प्रकार इसे केबिनेट डाइट के स्तर पर ही संगठित किया गया था। सैद्धान्तिक रूप से इस प्रीवी परिषद् तथा मंत्रीमंडल के मध्य यही अन्तर था कि प्रीवीपरिषद मात्र आग्रह पर ही कार्य करती थी। यद्यपि संविधान अस्पष्ट रूप से इस प्रकार की शर्त रखता था, तथापि पूर्व शाही घोषणा के अनुसार इस परिषद के क्षेत्राधिकार के सभी विषय इसे सौंपने चाहिये थे। इसकी स्थिति और अधिक प्रभावशाली बताने वाले अधिकार संरचना में संशोधन करने के प्रयासों का निषेध करना तथा स्वयं परिषद् पर नियंत्रण करना आदि प्रमुख थे। धीरे धीरे इसने नीति निर्माण के कार्यों को भी ग्रहण करना प्रारंभ कर दिया, विशेष रूप से वैदेशिक मामलों में इसका प्रभाव बढ़ा। इस प्रकार यह एक दूसरी संस्था थी जो कार्यपालिका व व्यवस्थापिका संबंधी दोनों प्रकार के कार्य करती थी। अर्द्ध परामर्शदात्री तथा अर्द्ध प्रशासनिक अंग के रूप में संभवतया यह सर्वाधिक शक्तिशाली संस्था थी। इसकी सहायता के बिना कोई औपचारिक कार्य, चाहें वह विधि, अध्यादेश घोषणा तथा नियुक्ति का क्यों न हों, नहीं किया जा सकता था। यह अनुदारवादी राजनेताओं की एक स्थिर संस्था तथा निरकुंशतंत्र का वाहक बन गई।

क्या परिषद् इसको सोपे गये प्रारूपों में परिर्वतन कर सकती थी? यही लोकप्रिय तर्क सम्राट की संवैधानिक स्थिति के बारे में भी उठाया गया था। मिनोबे का तर्क था कि प्रारप या संधि में ऐसी निश्चित विषयवस्तु होती थी कि उसे परिवर्तन नहीं किया जा सकता था। इसके अतिरिक्त परिषद को संयुक्त राज्य अमेरिका के सर्वोच्च न्यायलय के समान सवैधानिक विवाद सुलझाने का स्थान नहीं माना गया था। होजुमी तर्क था कि यह परियोजना में परिर्वतन कर सकती थी। संवैधानिक तर्क मिनोबे के पक्ष में था, जबकि व्यवहार होजुमी के पक्ष में था। वस्तुतः परिषद के मात्र एक बार औपचारिक व्याख्या की, अन्यथा इसने असंवैधानिक कार्यो को रोकने के अन्य चतुर तरीके प्रयुक्त किये।

विधायनी मामलो में परिषद ने एक विशिष्ट जांच समिति नियुक्त की, जिसके सम्मुख मंत्रालय में अधिकारियों से पूछताछ की जाती थी। अक्सर परिषद को तृतीय सदन के नाम से पुकारा जाता था।

कार्यपालिका क्षेत्र में परिषद् की सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका प्रधानमंत्री के चयन में परामर्श देने के रूप में विकसित हुई। परंपरानुसार वरिष्ठ राजनेता के रूप में सभापति परामर्स देने का कार्य करता था। दूसरा महत्व पूर्ण कार्य वैदेशिक मामलों की देखभाल करता था। संसदीय साम्राज्य के प्रारंभिक वर्षो में परिषद् तथा मंत्रीमंडल दोनों एक दूसरे का समर्थन करते थे। क्योंकि मन्त्री लोग ही परिषद् के भी सदस्य थे। शाही अध्यादेश परिषद् को सम्राट की सर्वोच्च परामर्शदात्री संख्या के रूप में संबोधित करते थे तथा

संवैधानिक व्यवस्था मंत्रिमन्डल द्वारा परिषद का उल्लंघन कर सम्राट से सम्पर्क स्थापति करने का निषेध करती थी। इस प्रकार की व्यवस्था सम्राट् को दोनों संस्थाओं में से एक का चयन करने को बाध्य कर देती।

1920 के बाद के वर्षों में प्रीवी परिषद् पर अप्रत्यक्ष रूप से दलीय मन्त्री-मंडलों ने आघात करने प्रारम्भ किये, ताकि संरक्षण से मिलने वाले लाभ उन तक पहुंच सकें, तथापि मन्त्रिमन्डल की नीति के विरुद्ध प्रीवी परिषद् द्वारा दिया गया परामर्श सर्वदा साम्राज्यिक निषेध माना जाता था।[6]

मन्त्रिमंडल [नाइकाकू]—

मन्त्रिमन्डल कुलीन लोगों, सैन्य समर्थकों, पूंजीपति—उद्योगपतियों तथा प्रशासक वर्ग का संघर्ष था। उपर्युक्त वर्णित सभी अंगो में यद्यपि सभी समूहों को प्रवेश प्राप्त था तो भी मन्त्रिमन्डल शीघ्र ही राज्य में सर्वाधिक शक्तिशाली संस्था बन गया, जिसमें प्रधानमन्त्री सर्वाधिक शक्तिशाली बन गया। इसके कई कारण थे।

सर्वप्रथम मन्त्रिमन्डल राज्य की सर्वोच्च प्रशासनिक संस्था थी, अतः किसी भी समूह या परामर्शदाताओं के गुट को अपनी नीतियों को क्रियान्वित करवाना चाहाता था, के लिये मंत्रीमंडल पर नियंत्रण स्थापति करना अनिवार्य था।

द्वितीयतः प्रधानमंत्री [सोरी दैजिन] सम्राट के समीप आंतरिक सम्पर्कों तथा वैधानिक सरकारो जोड़ने वाली मुख्य कड़ी था। वह तथा उसके मंत्रीगण [जैजिन] प्रीवीपरिषद के पदेन सदस्य होते थे। मंत्रीमंडल प्राथमिक रूप में सम्राट के प्रति उत्तरदायी था, [जिसका अर्थ सम्राट का परामर्शदाता मंडल था] मात्र द्वितीय स्तर पर ही यह डाइट के प्रति उत्तरदायी था [जिसका अर्थ बहुमत दल तथा जनता थी]। सर्वप्रथम यह माना गया कि प्रत्येक मंत्री व्यक्तिगत रूप से सम्राट के प्रति उत्तरदायी था। बाद में मंत्रीमंडल ने प्रधानमंत्री के नेतृत्व में एक ईकाई के रूप में कार्य करना प्रारंभ कर दिया, किन्तु बाद में भी प्रशासनिक मंत्री प्रधानमन्त्री के प्रति उत्तरदायी नहीं होते थे। इसका मुख्य अपवाद जिसकी बाद में चर्चा की गई है, युद्ध तथा नौसेना के मंत्रीयो की विशिष्ट स्थिति थी। न्यायालय जो प्रत्यक्षतः मंत्रिमंडल के आधीन थे, राज्य शक्ति के यन्त्रो से अधिक नहीं थे। दूसरे शब्दों में

6. परिषद् द्वारा किए गए अवरोधों के कुछ उदाहरण इस प्रकार है, 1927 में वकानुकी सरकार का पतन हो गया, जब परिषद् ने तैवान बैंक को सहायता देने के अध्यादेश को अस्वीकार कर दिया। त्सीनान फु द्वारा 1929 में हस्तक्षेप करने के बाद मंत्रिमंडल ने चीनी जापानी व्यवस्था को कार्यपालिका के समझौते रूप प्रस्तुत किया ताकि परिषद् की जाच से बचा जा सके। परिषद् प्रसिद्ध कैलोग पैक्ट के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त कर चुकी थी, फिर लन्दन नौ सेना समझौते पर भी परिषद् ने सरकार का विरोध किया। इस समय प्रीवी परिषद् के सुधार के बारे में सुझाव दिये जाने लगे। उदाहरण के लिये, टोकियो में असाही शिम्बुन में अक्टूबर, 13–16 1930 में प्रकाशित परिचर्चा में निम्न सुझाव दिये गये (1) परिषद् की सदस्यता में सुधार किया जाए (2) प्रणाली में सुधार (3) अध्यादेश शक्ति पर नियन्त्रण (4) सुदृढ़ मंत्रिमंडल का निर्माण (5) यहाँ तक कि परिषद् का उन्मूलन। केनेथ सी कोले ग्रोव, 'दि जापानीज प्रीवी कौंसिल अमेरिकन पॉलिटिकल साइंस रिव्यू," अंक पन्द्रह संख्या तीन तथा चार (अगस्त तथा नवम्बर 1931) एच. एस. विवल्से "दि प्रीवी कौंसिल वर्सेज कैबिनेट इन जापान" फौरेन अफेयर्स अंक नौ (अप्रैल 1931)। 1930 के बाद प्रीवी परिषद् कम सक्रिय तथा राजनीतिक दृष्टि से कम महत्वपूर्ण हो गयी तथा शक्ति का केन्द्रीय बिन्दु स्थानान्तरित हो गया है।

प्रधानमंत्री तथा उसका मंत्रिमंडल प्रत्यक्ष कार्यपालिका ऐजेन्सी तथा साम्राज्यिक आवरण के पीछे अप्रत्यक्ष अंगों को संयुक्त करने वाली प्रमुख कड़ी था।

अन्ततः डाइट-विशेषतया उसका निम्न सदन-मन्त्रिमण्डल से कनिष्ठ था। प्रधान-मन्त्री को प्रतिनिधि सभा पर पर्याप्त अधिकार प्राप्त था। तथा वह डाइट व मंत्रिमंडल के मध्य मुख्य संपर्क अधिकारी था।

वस्तुतः अमेरिकी मंत्रिपरिषद के समान जापानी मंत्रि परिषद् अंशतः संवैधानिक विधि का परिणाम थी तथा अंशतः व्यवहार के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई थी, क्योंकि औपचारिक रूप से मंत्रिमंडल का वर्णन मेयजी सविधान में नहीं किया गया था। 45 वां अनुच्छेद मात्र यह व्यवस्था करता था कि राज्य के प्रतिनिधि मंत्री सम्राट को परामर्श देंगे तथा उसके लिये उत्तरदायी होंगे तथापि राज्य के मंत्रिगण शब्द का प्रयोग निश्चय ही मंत्रि-मंडल के लिये किया गया था तथा ऐसे प्रावधान जो संविधान के विपरीत नहीं थे, सविधान के प्रतिपादन के पश्चात् भी बने रहे थे।[7]

व्यवहार के साथ साथ मंत्रिमंडल का संगठन भी जटिल होता गया सौभाग्यवश अब मंत्रिमंडल के अनेक अध्ययनकर्ता उपलब्ध हैं, इनमें से एक शासन प्रणाली के प्रोफेसर जोन एम याकी अब वाशिंगटन विश्वविद्यालय के एस० सी० ए० पी० हैं। प्रोफेसर याकी ने लिखा—

जापान में मंत्रिमंडल पद के दो स्पष्ट अर्थ हैं। प्रथमतया यह सभी मंत्रियों तथा प्रधानमंत्री के लिये सामूहिक पद है। इस अर्थ में मंत्रिमंडल तथा मंत्रिमंडल परिषद समानार्थक थे। दूसरे अर्थ के अनुसार यह प्रधानमंत्री की कार्यपालिका शक्तियां है जिनमें वे कार्य-पालिका अधिकारी हैं तो प्रत्यक्षतः प्रधानमंत्री के प्रति मंत्रालयों तथा मंत्रिमंडलीय परिषद के अतिरिक्त उत्तरदायी हैं।

मंत्रिमंडलीय परिषद (काकुगी) में सभी मंत्रालयों के प्रमुख, बिना विभाग के मंत्री, विधि निर्माण व्यूरो का प्रमुख तथा मंत्रिमंडल का मुख्य सचिव, सम्मिलित थे। मंत्रिमंड-लीय परिषद् के निम्नांकित कार्य थे- विधि का प्रारूप व बजट पारित करना, विदेशों के तथा अंतर्राष्ट्रीय समझौते व संधियों को स्वीकार करना, साम्राज्यिक अध्यादेश, जो प्रशा-सनिक नियमों तथा व्यवस्थाओं के बारे में हो, उन्हें पारित करना, विभिन्न विभागों के मध्य विवादों का निपटारा करना, डाइट अथवा सम्राट् द्वारा प्रेषित याचना पत्रों पर विचार करना, बजट से बाहर के आर्थिक वितरण पर विचार करना, नियुक्तियां करना, सम्मान-नीय उपाधियां प्रदान करना तथा प्रथम श्रेणी के अधिकारियों की व्यवस्था करना।

अधिक स्पष्ट भाषा में मंत्रिमंडल को एक प्रकार से संपूर्ण सरकार की सामान्य प्रशासन का संचालन व व्यवस्था करने वाली इकाई माना जा सकता है। अन्य अर्थों में इसे सम्राट् को परामर्श देने वाली सर्वोच्च संस्था माना जा सकता है। व्यवस्था करने

7—मंत्रिमंडल के कार्यों से सम्बन्धित शाही घोषणा जे. पी. डी. के पृष्ठ 232–233 मे तथा मेयजी संविधान के परिच्छेद ? में प्रकाशित की गई। पृष्ठ 596।

वाली के रूप में यह एक सामान्य सरकार है, जिसे किसी भी मंत्रिमंडल के समान माना जा सकता है तथा परामर्शदात्री संस्था के रूप में इसे मंत्रिमंडल परिषद् कहा जा सकता है।[8]

कार्यपालिका के उत्तरदायित्व के प्रसारण तथा मंत्रिमंडल में केन्द्रित अनेकों परस्पर विरोधी राजनीतिक प्रवाहों के कारण जापानी प्रधानमंत्री का चयन सर्वदा शक्तिपरीक्षण का मनोरंजक उदाहरण हुआ करता था। प्रधानमंत्री के चयन के लिये जापानी तथा पश्चिमी देशों के प्रेस जब उत्कंठापूर्वक कई अफवाहों के साथ निर्णय की प्रतीक्षा करते हैं तब पर्दे के पीछे कई प्रकार के दबाव प्रधानमंत्री के चयन में सक्रिय होते हैं। सम्राट वरिष्ठ राजवेताओं के परामर्श पर (बाद में कुलीन के, किसी प्रमुख राजनीतिक व्यक्ति को मंत्रीमंडल का निर्माण करने के लिये आमंत्रित करता है। (यह उल्लेखनीय है कि गेनरो अथवा कुलीन ने कभी भी प्रधानमंत्री का चयन नहीं किया।)

आधुनिक जापानी सरकार के उदय तथा विकाश के लिये उत्तरदायी होने के कारण इन वरिष्ठ राजनेताओं ने मात्र अत्यधिक महत्वपूर्ण राजनीतिक परामर्श ही दिये। वस्तुतः प्रारम्भिक दिनों में गेनरो ने अपने नियंत्रण की पुष्टि के लिए स्वयं में से किसी व्यक्ति को अथवा अपने समर्थक को इस पद के लिए मनोनीत अवश्य किया था। तथापि 1890 में डाइट की प्रथम मीटिंग के पश्चात जून 1898 तक प्रधानमंत्री पद कुलीन लोगों जो राजनीतिज्ञ बन चुके थे तथा बाद में वरिष्ठ राजनेता बन के मध्य स्थानांतरित होता रहा।[9]

बाद में तथाकथित "सामान्य सरकार के काल में" कैन्सी नो जोदो, -प्रथम महायुद्ध की समाप्ति से 1931 में मंचूरिया कांड तक-प्रधानमंत्री के चयन में गेनरो की राय महत्वपूर्ण निर्णायक नहीं रही थी। सैनजी के परामर्श के अनुसार निम्न सदन के बहुमतदल का नेता या उससे कुछ कम, इस पद को ग्रहण करता था। (इस प्रकार के दलीय शासन की चर्चा बाद में दलों के विकास के साथ की गई है) मंत्रिमण्डल का पतन कई प्रकार से हो

8—मित्र राज्यों की सर्वोच्च कमान, पॉलिटिक्स रिओरिएंटेशन खण्ड दो "स्टडी ऑफ कबिनेट जॉन ऐम माकी पृष्ठ 684–694। परिषद् सचिवालय जो (नाईकाकू कैम्बो) मन्त्री मण्डल तथा प्रधान मन्त्री दोनों के प्रति उत्तरदायी था, वह प्रमुख प्रशासनिक इकाई था। इसमें सामान्य मामलों अधिकारी, अकाउन्ट तथा विधियों से सम्बन्धित पृथक्-पृथक् अनुभाग थे। मुख्य सचिव (शोकी कांचो) की स्थिति पश्चिमी सरकारों के उपमन्त्री के समान होती थी तथा वह उनके समान ही कार्य करता था। प्रशासन में दो संस्थाएं जो कार्यपालिका अथवा मंत्रिमंडल का भाग नहीं थीं प्रमुख थीं—बोर्ड ऑफ ऑडिट (काईकई केन्सा इन) सरकार के अकाउन्टस की पुष्टि के लिए उत्तरदायी थी तथा उसके बारे में डाइट को रिपोर्ट करती थी। संविधान का 62 वां अनुच्छेद–प्रशासनिक मुकदमों का न्यायालय प्रशासनिक विधि के मामले सुनता था। इसके निर्णयों की अपील नहीं की जा सकती थी। न्यायालय अपने मामलों का रिकॉर्ड रखता था, ग्योसेई सैइबांशो हांकेत्सुरोकू (प्रशासनिक मुकदमों के न्यायालय के निर्णयों का संकलन) टोकियो, मासिक।

9—दूसरे शब्दों में 1890 से 1898 तक इतो (चोशु) यामागाता (चोशू) मातसुकाता (सतसुमा) तथा यमागता (चोशू) 1898 से 1918 तक अर्द्धदलीय सरकार गेनरो के कारण व्यवस्थित रही—साकुमा जैसे व्यक्ति (हीजेन) इतो, सैन्योनी (किंगे) कतसुरा, चोशु तथा यमागातो (सतसुमा) ने निम्न सदन में बहुमत की स्थिति को अधिक सुविधाजनक पाया। प्रोफेसर रैशोर, जापान गवर्नमेंट पॉलिटिक्स पूर्वोक्त इस काल का उत्कृष्ट सर्वेक्षण प्रस्तुत करता है खण्ड दो, अध्याय पांच "दि एल्डर स्टेट्समेन (गेनरो) इन पावर (1889-1918)"

सकता था। कोई भी सेना-मन्त्री त्यागपत्र दे सकता था तथा उसके स्थान पर नये मन्त्री कि नियुक्ति न होने पर मन्त्रिमंडल का पतन हो सकता था। एक उत्तेजित उच्च सदन अथवा रूएट प्रीवी परिषद् मंत्रिमण्डल द्वारा किये गये सभी कार्यों को रद्ध कर सकती थी दलीय संगठनों के विकास के साथ साथ प्रतिनिधि सदन मन्त्रीमण्डल पर महाभियोग लगा सकता था अथवा अविश्वास का प्रस्ताव पारित कर सकता था। यद्धपि कानूनी रूप से प्रधानमंत्री के लिये सदन के *बहुमत का विश्वास रखना आवश्यक नहीं था, तथापि मन्त्रि-*मण्डल त्याग पत्र दे सकता था। वस्तुतः इससे पहले कि सदन सरकार को चुनौती देता प्रधानमंत्री सम्राट द्वारा सदन को भग करवा देता था।

कार्यपालिका—सैनिक पद—

मेयजी संविधान के अंतर्गत सेनाओं को जो विशिष्ट स्थान दिया गया था वह सर्वोच्च सेना अधिकारी को *विशिष्ट कार्यपालिका एजेंसी मानने के* औचित्य का समाधान करता है। सैनिक मामलों के पूर्णतः प्रथक तथा प्रशासन के नियंत्रण से प्रथक होने का एक कारण द्वैध वाद की सामन्ती परम्परा थी जिसको संवैधानिक विधि तथा परंपरा से मान्यता प्राप्त हो गई थी। यह द्वैधवाद तैनो के दोहरे स्वरूप मंत्रिमंडल स्थिति तथा युद्ध क्षेत्र स्थिति में स्पष्ट था।

सैनिक मामलों की स्वतंत्रता का दूसरा कारण अध्यादेशों का एक समूह था, जिसका मूल प्रारूप राजकुमार *यमागाता ने बताया था तथ* जो 1894 से 1904 के मध्य प्रेषित किये गये थे। इनके अनुसार युद्ध तथा नौसेना काद सेना अधिकारियों जनरल अथवा लेफ्टिनेंट जनरल, एडमिरल तथा वाइस एडमिरल के द्वारा ही ग्रहण किया जा सकता था। दोनों सेना मंत्री मात्र व्यक्तिगत रुप से उत्तरदायी होते थे यद्यपि मंत्रिमंडल से गैरसैनिक अश में सामूहिक उत्तरदायित्व का विकास हो चुका था। इस विकास का तीसरा कारण यह था कि दोनों मंत्री तथा दोनों मुख्य सेनापति सर्वोच्च सेना के कार्यो के बारे में *प्रत्यक्षतः सम्राट को रिपोर्ट कर सकते थे।*[10] *इस प्रकार सेना-मंत्रियों का दोहरा स्वर* था। सामान्यतया वे मंत्रिमंडल के सदस्य थे तथा साधारण मामलों में प्रधानमंत्री के माध्यम से ही रिपोर्ट करते थे, किन्तु साथ ही वे सुप्रिम कमांड के सदस्य भी होते थे तथा इस प्रकार वे अपने सहयोगियों से स्वतन्त्र रह कर भी प्रत्यक्षतः सम्राट् से संपर्क स्थापित कर सकते थे। स्पष्ट है कि राजगद्दी से इस प्रकार प्रत्यक्ष संबध होने के कारण कोई भी मन्त्रिमण्डल उनके अभाव में नहीं बनाया जा सकता था।

अतंतः स्वयं सेनाओं के व्यवहारिक कार्यक्षेत्र में भी द्वैधवाद द्रष्टिगोचर होता है। जहां मन्त्रिगण सेनाओं के संगठन तथा प्रशासन के बारे में परामर्श देते थे, वहां प्रमुख स्टाफ अधिकारी नियंत्रण कार्य में भागीदार होते थे। इतो ने लिखा है- सर्वोच्च स्टाफ कार्यालय की स्थापना महामहिम सम्राट द्वारा सेना तथा जल सेना सामान्य तथा निजी निर्देशन के

10 परिषद के कार्यों पर शाही घोषणा को गदांश सात के अनुसार "अत्याधिक महत्व के सैनिक तथा नौ सेना अत्यधिक गम्भीर मामलो के अतिरिक्त जिन्हे सेनाध्यक्ष सीधे संप्रभु प्रेषित करेंगे तथा जिन्हे सम्राट मन्त्रिमण्डल के विचार के लिये प्रस्तुत करेगा अन्य मामलों में युद्ध तथा नौ सेना मन्त्री को रिपोर्ट देंगे। एस. सी ए. पॉलिटिकल रि आरियनटेशन पूर्वोक्त दो, पृष्ठ 596।

लिये की गई है इससे कुछ लोग इस निर्णय पर पहुंचते थे कि सर्वोच्च कमांड के कार्य मंत्रियो कर माध्यम से न होकर मुख्य स्टाफ अधिकारियों के द्वारा होते थे।[11]

चूंकि साम्राज्यिक मुख्यालय मात्र संकटकाल में ही सक्रिय होता था तथा गेनसूईफू युद्ध काल में ही सक्रिय होता था, अतः शांतिकाल में सैनिक योद्धाओं का संचालन सर्वोच्च युद्ध-परिषद् के द्वारा होता था (गुंजीसेंगोंइन)। इस संस्था की स्थापना 1903 के साम्राज्यिक अध्यादेश के द्वारा हुई थी तथा यह अर्द्ध परामर्शदात्री अर्ध कार्यपालिका ऐजेंसी का दूसरा उदाहरण थी। यह सैनिक मामलों में नागरिक मामलों की प्रीवी परिषद् के समान थी। इसमें फील्ड मार्शल तथा फील्ड एडमिरल के अतिरिक्त प्रमुख स्टाफ अधिकारी सेना मैत्री तथा उच्च पद वाले सेना तथा नौ सेना अधिकारी भी सम्मिलित होते थे। उपस्थित वरिष्ठतम अधिकारी अध्यक्षता करता था। विचार विमर्श के लिये विषय विविध होते थे। सम्पूर्ण सैन्य नीति, प्रशासनिक समस्याएं, विविध-संगठनों पर विचार से लेकर बहुत से गैर सैनिक मामलों पर भी इसमें विचार किया जाता था। परिणामस्वरूप इस परिषद को एक उच्चस्तरीय सैनिक बोर्ड से भी अधिक महत्ता प्राप्त हो गई थी। सेना तथा नौ सेना के अधिकारी अवसर अपनी सेनाओं से संबंधित बातचीत के लिये प्रथक से भी मिलते थे।

सेना तथा नौ सेना के उच्च अधिकारी

सेना में तीन बडे[12] मुख्य स्टाफ अधिकारी (सैम्बौसोचो) मुख्य मंत्री (रिकुण्डन-दैजिन) तथा सैनिक शिक्षा का इंसपेक्टर जनरल क्योरिड सोकान होते थे। जल सेना के दो बडे. मुख्य जलसेना-अधिकारी (कोईगुन गुनरेबु सोचो) तथा जल सेना मंत्री (कई गिन दैजिन) होते थे। इंसपेक्टर जनरल के अतिरिक्त सबको सम्राट् से प्रत्यक्ष संपर्क स्थापित करने का अधिकार था।

चूंकि सेना का यह भ्रम था कि युद्ध मंत्री जो मंत्रिमंडल में मात्र प्रशासन अधिकारियों तथा राजनीतिज्ञों के साथ कार्य करता था, का दृष्टिकोण भी मात्र प्रशासनिक हो सकता था, अतः सेना का व्यापक क्षेत्र मंत्री के नियंत्रण से हटा लिया गया तथा एक विशिष्ट सैनिक शिक्षा के इंसपेक्टर जनरल को सौंपा गया। इस इंसपेक्टर की नियुक्ति प्रत्यक्षतः सम्राट द्वारा सर्वोच्च युद्ध परिषद के सदस्यों के परामर्श पर की जाती थी। वह सम्पूर्ण सैनिक स्कूलों के (मात्र युद्ध कालीन वायुसेना स्कूल तथा कुछ अन्य विशिष्ट स्कूलों के सिवाय, जो मंत्रालय के नियंत्रण में होते थे) प्रशिक्षण, सभी पदाधिकारियों तथा लोगों की की शिक्षा एवं सैनिक शिक्षा के समन्वय के लिये नियुक्त था।

11—उदाहरण के लिए देखिये, नाकाना तो मिर्वो "दि आर्डिनेन्स पावर ऑफ दि जापानीज एम्परर" वाल्टीमूर 1923, पृष्ठ 154–156। मेयजी सेना पर सर्वाधिक चिन्तन पूर्ण ग्रन्थ तोकेनूची पूर्वोक्त विशेषतया अध्याय 2–5 पृष्ठ 14–48 है। तोकेउची की रचना में विदेश नीति के नियन्त्रण पर जोर दिया गया है, विशेषतया प्रणाली के सन्दर्भ में। अमेरिका के अनेक भाषा-अधिकारियों ने द्वितीय महायुद्ध के पश्चात दो अर्द्ध लोकप्रिय सर्वेक्षणों हिराना शिसाकु, रिफुगन तोकुहो (आर्मी रीडर) टोक्यो 1932, इसी लेखक ने कैगन तोकुहों (नैवी रीडर) माध्यम से जापान का प्रारम्भिक सैनिक इतिहास, संगठन तथा शताब्दी का ज्ञान प्राप्त किया। संगठन, बजट तथा सैनिक मामलों के संगठन से सम्बन्धित अन्य अधिकृत सन्दर्भों के लिए देखिये, कोकुसाई गुंजी के कॅशकाई, गुजी नेनकान (इन्टरनेशनल मिलिट्री रिसर्च इन्स्टीट्यूट मिलिट्री अफेयर्स इयर बुक तोक्यो वार्षिक।

12—'सेन चो कान' तथा 'सैचोकान काएजी' ये पद प्रायः समाचार पत्रों तथा रेडियो प्रसारण में सुनाई पड़ते थे अधिक औपचारिक नाम, चुओ तो काटसु किन्कान (केन्द्रीय नियन्त्रण बोर्ड) थे।

सभी जापानी, पिता रूपी सम्राट् की संतान माने जाते थे तथापि सैनिक सम्राट् को अधिक प्रिय संतान थे, क्योंकि वे सम्राट् के मुख्य सेनापति होने के नाते उससे सैनिक तथा नौसैनिक के रूप में और अधिक निकट संबंध रखते थे। जापान की सेना की विशिष्ट स्थिति आंशिक रूप से 1872 के प्रथम आधुनिक अनिवार्य भर्ती-कानून के कारण हुई जो 1873 में लागू हुआ तथा संविधान के लागू होने से बहुत पहले उसको 1883 में दोहराया गया।[13] इस प्रकार सेनाएं खासतौर पर उच्च सैनिक पदाधिकारी स्वयं को जापानी प्रजा से अधिक श्रेष्ठ समझते थे।

कानूनी तौर पर भी सेनाओं को सामान्य जनता से पृथक् रखा गया था, उन्हें पत्र देने का अधिकार नहीं था तथा 1882 के साम्राज्यिक आदेशों में सैनिकों को यह चेतावनी दी गई थी कि वे राजनीति में भाग तथा रुचि नहीं लें तथापि सैनिक गुट (गमबात्सु) साम्राज्यिक परामर्शदाताओं के आंतरिक चक्र में तथा प्रशासनिक संरचना की राजनीति में पर्याप्त संलग्न था। उनकी गतिविधियों का वर्णन, विशेषतया सैनिक शिक्षा के क्षेत्र में, बाद किया जाएगा। यहां इतना ही कहना पर्याप्त है कि उन्होंने भी सैद्धान्तिक नियंत्रण के निजी तथा अर्द्ध निजी साधनों का विकास अपनी नीतियों का समर्थन प्राप्त करने के लिए कर लिया था। ये सैनिक संगठन वे गुप्त समाज थे जिन्होने नवीन समराई वर्ग को सम्मानित किया, युद्ध को बौद्धिक संगति प्रदान की, सम्राट् के प्रति निष्ठा का नारा दिया तथा एक फासिस्ट आर्थिक स्वरूप का विकास किया।

नौकरशाही (कंबात्सु)-

मेयजी शासन के अन्तर्गत संपूर्ण प्रबुद्ध वर्ग में से नौकरशाही (कैनरयो) संभवतया सर्वाधिक व्यापक तथा सुदृढ थी। कम्बात्सु (साहित्यक अर्थ में पदाधिकारियों का गुट) सरकार का एक औपचारिक संगठन-जो संपूर्ण मंत्रालयों व प्रशासक सेवाओं में भरा था तथा एक अर्द्ध स्वतन्त्र दबाव, जो जापानी लोगों से परे विशाल शक्तियों से दूषित था—दोनों ही था।

सरकारी पद सोपान क्रम का अंश होने के कारण नौकरशाही मात्र उन लोगों के प्रति उत्तरदायी थी जो तैनो के प्रति उत्तरदायी थे। इसके हित कुलीन वर्ग के आंतरिक चक्र में समानान्तर थे - वस्तुतः इसके सदस्य प्रायः कुलीन वर्ग में से लिए जाते थे। सिद्धान्तः इस पर मन्त्रिमण्डल का नियंत्रण था।

यदि सैनिक प्रशासक को नागरिक प्रशासन से पृथक नहीं लिया गया होता तो यह गंबात्सु से संघर्ष में आ सकता था। कभी कभी यह संकट भी उत्पन्न हो जाता था कि बढ़ते हुए आर्थिक नियंत्रण के कारण नौकरशाही का संघर्ष जैबात्सु से हो जाए। क्योंकि जैबात्सु को प्रायः सरकारी ठेके तथा लाभ, सार्वजनिक भूमि तथा विशिष्ट लाभ प्राप्त होते थे तथा 1950 में उनकी बढ़ती हुई राजनीतिक क्षमता के विरुद्ध नौकरीशाही को अपनी विशिष्ट स्थिति को आघातों से बचाये रखने के लिए बाध्य होना पड़ा। यह कबांत्सु के लिए सबसे बड़ी प्रशंसा की बात है कि द्वितीय महायुद्ध से पूर्व के सम्पूर्ण समूह एवं गुटों - कुलीन वर्ग,

1 —1873 के अधिनियम से संलग्न शाही घोषणा अंशतः इस प्रकार थी 'पश्चिम की सैनिक व्यवस्था पूर्ण तथा विस्तृत है, क्योंकि यह शताब्दियों के परीक्षण व अध्ययनों का परिणाम है, किन्तु सरकार एवं भौगोलिक परिस्थितियों की भिन्नता हमें पश्चिमी व्यवस्था का अन्धानुकरण करने से रोकती है" देखिये, त गोरोओ गावा, दि कान्सक्रिप्सन सिस्टम इन जापान, न्यूयार्क 19-1 पृष्ठ 4।

सैनिक गुट, पूंजीपति, उद्योगपति गुट तथा नौकरशाही गुट में से वह (नौकरशाही गुट) ही अंतिम था जिसने अपने व्यवसाय में शायद ही कभी कोई परिवर्तन किया हो।

जापान में प्रशासनिकतंत्र के उच्च नैतिक आदर्श, दीर्घ परंपरा तथा सुरक्षा के लिए स्वयं प्रशासन एक अस्त्र के रूप में था। इसकी नीतिशास्त्र तथा वैधानिकता की जड़े बहुत गहरी थी, जो जापानियों द्वारा अनुकरण किये गए तांग प्रशासन के गौरवपूर्ण मॉडल में चीन व जापान के विद्वान राजनेताओं की परंपराओं से लेकर शिक्षत प्रवुद्ध वर्ग की आधुनिक अधिनायकता तक फैली हुई थीं। वस्तुतः कैनरयो स्वयं को राष्ट्रीय राजनीति के सरक्षक मानते थे। दैवीय सम्राट द्वारा वे साम्राज्यिक परिवार मंत्रालय तथा दरबार में नियुक्त किये जाते थे इसके अतिरिक्त वे उच्च सदन तथा प्रीव परिषद के सदस्य भी होते थे। सम्राट के परामर्श दाताओं के आंतरिक चक्र तथा कार्यपालिका के एकदम नीचे स्थिति केनरयो के व्यापक संगठन विभिन्न मंत्रालयों के खंडो, व्यूरों तथा उप खण्डों के अध्यक्षों को निहित करते थे। डाईट में व सरकार के प्रतिनिधियों के रूप में मान लेते थे क्योंकि मंत्रियों तथा उनके प्रतिनिधियों को यह विशेषाधिकार प्राप्त था कि वे किसी भी सदन में स्थान ग्रहण कर सकते थे तथा बोल सकते थे। कैनरयो न केवल जनता के प्रतिनिधियों को निम्न दृष्टि से देखते थे, अपितु उन्हें स्थान पर बनाये रखने की कला भी जानते थे। कैनरयो को राज -नीतिक दलों में भी प्रभाव प्राप्त होता था वे राजनीतिक दलों के नेताओं तथा निम्न सदन के नेताओं को सतुष्ट कर उनके हस्तक्षेप से सुरक्षित होने की कला भी जानते थे। प्रशास -निक वर्ग की स्थिति बड़ी प्रभावशाली थी, क्योंकि यह वर्ग किसी भी लोकप्रिय आंदोलन को, राजनीतिक व्यवस्था तत्र के प्रत्यक्ष एजेन्ट-पुलिस, कानून, घोषणा, अध्यादेश, नियम तथा प्रशासनिक आदेशों को क्रियान्वित कराता था।

प्रशासनिक वैधानिकता वाद वैचारिक शिक्षा विश्वविद्यालय से प्रारंभ होजाती थी क्योंकि प्रशासनिक पद के सभी महत्त्वाकांक्षी युवक टोक्यो साम्राज्यिक विश्वविद्यालय की विधि संस्थान में प्रवेश के लिए प्रतियोगिता में भाग लेते थे। टोक्यो तेंड़ढाई को सुदूरपूर्व में सर्वो -च्च प्रतिष्ठा प्राप्त थी, अतः यह जापान के सर्वाधिक महत्त्वाकांक्षी युवकों को आकर्षित करती थी यह तीन चौथाई से भी अधिक संख्या में प्रशासनिक व्यवस्था में भर्ती होने वाले युवकों की पूर्ति करती थी।[14]

14—विधि संकाय में पाठ्यक्रम, एक अमेरिकी छात्र के शब्दों में, तीन वर्ष का था तथा इसमें कानूनी पक्ष पर बहुत ज्यादा जोर दिया जाता था। अनिवार्य पाठ्यक्रम में से 14 विधि के बारे में, तथा 10 चयन किये जाने वालों में से भी 5 विधि के बारे में है। मात्र एक पाठ्यक्रम प्रशासन का विज्ञान (तीसरे वर्ष का चयन विषय) प्रशासनिक विज्ञान प्रशासन की समस्याओं का व्यावहारिक अध्ययन करता था। इस संस्था का अन्य प्रभावशाली मन्त्र प्रशासनिक सेवाओं की परीक्षाएं थी जो सरकार में उच्च पदों की प्राप्ति का माध्यम था।

द्वितीय युद्ध से पूर्व के जापान में वस्तुतः सार्वजनिक प्रशासन का कोई विज्ञान नहीं था। कोक्का गाक्की-जाशी नामक मासिक पत्र टोक्यो से प्रकाशित होता था तथा प्रशासन पर लेख प्रकाशित करता था। प्रोफेसर रोमाया मासामिची ने अमेरिका तथा इंगलैण्ड में अध्ययन किया था तथा इस क्षेत्र में उसका पर्याप्त योगदान था। यद्यपि उसने 1938 में अवकाश प्राप्त कर लिया था किंतु उसने युद्धोत्तर कालीन राजनीति विज्ञान में नवीन आयाम प्रारम्भ किया। इसके विपरीत प्रशासनिक कानून संवैधानिक कानून के समान लोकप्रिय था। प्रोफेसर ओदा योरोजु (क्योटो तेईदाई) जो बाद में अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय का न्यायाधीश बना, इस क्षेत्र में गणमान्य था। उसकी पुस्तक (जापानी प्रशासनिक विधि के सिद्धान्त टोक्यो में 1934 में प्रकाशित हुई।

एक बार स्थायी प्रशासनिक सेवा में आने बाद एक केनरयो उपविभाग प्रमुख से ब्यूरो प्रमुख तथा ब्यूरो प्रमुख से खण्ड प्रमुख बन जाता था। अंततः वह प्रधानमंत्री का सहायक भी बन सकता था। इसके साथ ही सम्पन्न बनने की संभावनाएं भी पर्याप्त होती थी। एक अर्द्ध सरकारी एजेंसी अथवा सरकारी बैंक का अधिकारी होने पर यह संभव था। उनका वास्तविक स्वप्न अंततः उच्च सदन, हाउस आँफ पीअर्स. की सदस्यता प्राप्त कर उच्चस्तरीय राजनीति में संलग्न होना होता था। उनमें से कुछ भाग्यवाग मंततः प्रीव परि-वार के सदस्य बन जाते थे, जहां शाही घोषणाएं, अध्यादेश तथा विधेयकों पर विचार होता था।

एक स्थायी प्रशासनिक अधिकारी की इस महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति के लिये चौदह स्तर तथा चार पदों को पार करना होता था। एक केनरयो अपने कार्यकाल का प्रारंभ—

1 हनीन अथवा वर्गीकृत सेवाओं से कर्मचारी से करता था जिसकी नियुक्ति वरिष्ठ अधिकारी करता था। कनिष्ठ अधिकारी चौथे से प्रथम ग्रेड तक पहुंचता था।

जब एक प्रशासक किसी ब्यूरो अथवा उपविभाग का अध्यक्ष बन जाता था। तब वह उच्च अधिकारी कहलाना था (कोतोकान) तथा उसके नियुक्ति-पत्र पर प्रीव सील हुआ करती थी। उच्च पदाधिकारी इस प्रकार वर्गीकृत थे।

2 सोनिन'वह अधिकारी, जो सम्राट की स्वीकृत से मन्त्री द्वारा नियुक्त किया जाता था। ग्रेड 9 — 8 तथा

3 चोकुविन (साधारण) वह अधिकारी, जो प्रधानमन्त्री की सलाह पर सम्राट द्वारा नियुक्त किया जाता था।

साधारण चोकुविन में उप पंजिगण, प्रोक्यूरेटर, जज ब्यूरो के निदेशक तथा प्रीफेक्ट के गवंनर होते थे। वस्तुतः चोकुविन पद का अर्थ उच्चस्थ पद भी था।

4 शिनिन वह अधिकारी, जो प्रत्यक्षतः सम्राट द्वारा नियुक्त किया जाता था।

ये उच्च अधिकारी राजदरबार में उपस्थित होते थे तथा सम्राट के हस्ताक्षर-युक्त पत्र प्राप्त करते थे। इनमें प्रधानमन्त्री, मन्त्री, प्रीवी परिषद्, गर्वनर जनरल तथा राजदूत सम्मिलित होते थे। 1927 में तीन निम्न पदों में 150,000 सदस्य थे तथा 280,000 अवर्गीकृत कर्मचारी थे। 430,000 कर्मचारी साम्राज्यिक परिवार मन्त्रालय में थे।

इस प्रशासनिक सेना तथा जन-सामान्य में क्या संबंध था? यह स्मरण रखना चाहिये कि प्रशासन के क्षेत्र में जापानी नये नहीं थे। वस्तुतःउनमें प्रशासन की परंपरा शता-ब्दियों पुरानी थी। अमेरिका में 1890 की संघीय सरकार के समान अथवा आजकल की हमारे राज्यों की पिछड़ी सरकारों जो न्यूनतम प्रशासनिक कार्य करती हैं — के विपरीत जापानी राज्य द्वारा राजनीतिक, आर्थिक तथा बौद्धिक जीवन के नियमितिकरण के आदी हो गये थे, किन्तु जापानी संस्कृति, प्रशासन के सन्दर्भ में पूर्णतः भिन्न आदेशो का प्रतिपादन करती थी। राज्य एक राजनीतिक परिवार के समान था, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को पृथक स्तर प्राप्त थे। मूल विचार रिति-रिवाजों को बनाये रख कर परम्परा के विपरीत उत्पन्न होने वाली प्रत्येक ऐसी चुनौती को समाप्त करना था, जो उनके समाज को को शासित करने वाले मूल्यों के विरुद्ध हो। कैनरयो इस संदर्भ में चतुर कलाकार थे और आज भी है।

दूसरी ओर आधुनिक प्रशासन विज्ञान के सन्दर्भ में, जापानी सरकार, दर्शन तथा प्रणाली की दृष्टि से पर्याप्त पिछड़ी हुई थी। प्राच्य पदावली में प्रशासन कैनरयो को इतनी

जटिल व्यवस्थाओं से युक्त बना देता था कि मात्र विधि का प्रकांड पंडित ही उसे समझ सकता था। उनकी भाषा तथा उसकी विशिष्ट पदावली चीन के समान ही जापान में भी कैनरयो की को सामान्य जनता, सेना, कुलीन वर्ग तथा विभिन्न गुट से पृथक कर देती थी पश्चिमी पदावली में प्रशिया का मॉडल आदर्श बन गया था। वैधानिकवाद का अर्थ था कि प्रत्येक, कार्य करने से पहले उसको वैधानिक समर्थन प्राप्त होना चाहिये, जिसका परिणाम विधियों का ऐसा सगठन था जो प्रत्येक प्रकार की प्रशासनिक स्थिति के लिये उपयुक्त है। व्यावहारिक आवश्यकता तथा सामाजिक मांग की परवाह किये बिना, केनरयो इतने सतर्क रहते थे कि विधि की अनुपस्थिति को किसी भी स्थिति में निष्क्रियता का कारण बना देते थे। सामान्य ज्ञान की परवाह किये बगैर वे विधि का शत प्रतिशत पालन करते थे।

इस विधि संबंधी कठोरता का एक परिणाम यह हुआ कि जापान अनिश्चित व असशोधित प्रणालियों का जगल बन गया। नियम बहुत कम लिखे जाते थे किसी भी एजेंसी की कार्यप्रणाली के लिये लिखित नियम नहीं होते थे। नियम सामान्यतया निम्न स्तर के अधिकारियों के मस्तिष्क मे रहते थे, जिन्हे सरकारी स्तर की योजना का विचार बहुत कम होता था। उच्चस्तरीय अधिकारी जो कानून रूप से प्रशिक्षित होते थे अपने पद में स्थायी बहुत कम होते थे कि वे कार्यप्रणाली को प्रभावित कर सकें।

कानूनी दर्शन तथा क्रियान्विति की समस्या ने प्रशासनिक संगठन को प्रभावित किया। सूत्र तथा स्टाफ के मध्य जो अन्तर आधुनिक सरकारों में किया जाता है वह जापान में पूर्णतः विद्यमान नहीं था। सूत्र अधिकारी दीर्घ काल तक जापान में उन कार्यों को बिना किसी सहायता के करते रहे, जिन्हें अन्य देशों में उच्चस्तरीय स्टाफ विशेषज्ञो, द्वारा किये जाने लगे थे। अधिकारियों संबंधी नीति के सभी मामलों का निर्धारण विधिनिर्माण प्रक्रिया के ब्यूरो (होसई क्योकू) द्वारा किया जाता था। इसे सरकार में महत्त्वपूर्ण स्थिति प्राप्त थी तथा इसमें जापान के गण्यमान्य प्रशासक को होते थे। यह संयोग मात्र नहीं था कि उच्च प्रशासनिक सेवा परीक्षा की व्यवस्था इसी ब्यूरो को सौंपी गई थी। प्रायः विभिन्न मन्त्रालयों का प्रशासन मन्त्रिमण्डल सचिवालय के नमूने पर होता था। इसके विभिन्न विभाग दैनिक कार्यक्रम वाले जैसे कर्मचारी विभागा एकाउंट तथा रिकार्ड नियत्रण के होते थे। बजट ब्यूरो (शुकेई क्योकू) ब्रिटेन के समान वित्त विभाग के अन्तर्गत आता था। तथा यह व्यय करने की प्रणाली निर्धारित नही करता था। एक बार डाइट द्वारा बजट स्वीकार कर लेने के पश्चात ब्यूरो का कार्य समाप्त हो जाता था। दूसरे शब्दों में मन्त्रीमण्डल तथा स्वयं मन्त्रीगण बजट को क्रियान्वित करते थे। केन्द्रीय स्तर पर खरीददारी करने वाली कोइ संस्था नही थी। सगठन तथा प्रणाली की दृष्टि से कोई भी स्थिति परिपूर्ण नहीं थी। [15]

15—जब अधिकरण प्रारम्भ हुआ, तब सर्वोच्च संयुक्त कमान के सिर्फ एक व्यक्ति को जापानी प्रशासन का अध्ययन सौंपा गया। लेफ्टीनेन्ट मिल्टन जो, आमकेन प्रिंसिटन विश्वविद्यालय का पी. एच डी. तथा अमेरिका के नागरिक प्रशासन कमीशन का विश्लेषक था ने तब से जापानी प्रशासन की तकनीक से सम्बन्धित अपने अनुभवों को व्यक्त किया। उपर्युक्त वर्णन पर्याप्त सीमा तक उनकी रचना जापानीज एडमिनिस्ट्रेशन–ए कम्पेरेटिव पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन रिव्यू-जक सात, संख्या 2 (बसन्त 1947) पृष्ठ 1L0–112 (बसते 947)

संगठन की दृष्टि से भी प्रत्येक मंत्रालय मंत्रिमण्डल के गठन का अनुकरण करता था। मन्त्री के (देंजिन) अधीन एक उपमन्त्री (निपूजिकान) एक संसदीय उपमन्त्री (सेयूजिकान) तथा एक संसदीय सलाहाकार (सन्योकान) होता था अंतिम दो पदों की स्थापना 1924 तक नहीं हुई थी तथा यह तब तक की गई, जब तक दल में निराश लोगों को स्थान प्रदान करने का प्रश्न उठा। दोनों पदों के डाइट से संम्पर्क तथा निकटता प्राप्त होती थी। मन्त्री का सचिवालय (देंजिन कैम्बो) वरिष्ठ मन्त्रीमंडल सचिवालय के समान विभाग ने कर्मचारीयों के रिकार्ड, वेतन तथा अन्य प्रशासनिक मामलों के लिये उत्तरदायी होता था। व्यावहारिक संगठन बोर्डों (शोंकू) खंड (2) ब्यूरो (क्योकू) तथा उपविभाग (-का) में उपविभाजित होता था. तथापि सामान्यतया ब्यूरो सर्वोच्च प्रशासनिक इकाई होता था। मन्त्रालयों में लगभग 6 ब्यूरो होते थे। निर्विभाग मन्त्री मन्त्रालयों में (कोकूम-देंजिन) मन्त्रीमण्डल के समान सम्मिलित किये जाते थे या हटाये जाते थे, बोर्ड तथा समितियां किसी परामर्शदाता की भूमिका को निवाहने के लिये बनाई जाती थी तथा उनका स्तर अर्द्ध स्वायत्तशासी रहता था।

मन्त्रालय—

प्रारंभ में मन्त्रिमण्डल में नो मन्त्रालय तथा एक सभापति मन्त्री होता था बाद में इसकी संख्या बढ़ा कर 1929 में तेरह कर दी गई। मूल विभागों में वैदेशिक मामले, युद्ध-नो सेना, वित्त, शिक्षा, कृषि व वाणिज्य, न्याय तथा गृह मामले थे। 1918 में रेलवे मन्त्रालय बनाया गया। अप्रेल 1925 में कृषि तथा वाणिज्य का विभाजन कर कृषि तथा जगंलात तथा वाणिज्य व उद्योग बनाये गए। दो वर्ष तक 19 वीं शताब्दी के अंत में मन्त्रि-मण्डल सचिवालय में एक उपनिवेशीकरण ब्यूरो भी रहा था तथा समुद्र पार मामलों व विभाग के नाम से 1929 में इसे पुर्नस्थापित किया गया।

निस्सन्देह गैरसैनिक मामलों में सर्वाधिक प्रतिष्ठा वाला विभाग वैदेशिक मामलों का विभाग (गौसुशो) था। उच्च प्रशासनिक सेवा, परीक्षा आयोग, में वैदेशिक मामलों के उपमन्त्री के निर्देशन में विशिष्ट कूटनीतिक विभाग होता था। उम्मीदवारों को अनिवार्य (विधि अर्थशास्त्र तथा भाषा) तथा ऐच्छिक [दर्शन, राजनीति विज्ञान, इतिहास कानून तथा अर्थशास्त्र में) विषयों में कठोर परीक्षा देनी होनी थी। परिणामतः गौमशो में केन-रयो का सर्वश्रेष्ठ तत्त्व चला जाता था। अपने युद्ध कालीन विस्तार से पहले भी यह मन्त्रालय विशिष्ट क्षेत्रीय नीति-निर्माण ब्यूरो भो रखता था – जैसे पूर्वी एशियाई, यूरो-पियन तथा अमेरिका ब्यूरो तथा कार्यकारी ब्यूरो जैसे – वाणिज्य, सन्धि तथा गुप्तचर ब्यूरो भी रखता था युद्ध के दौरान यह जापान के नौ दूतावासो, अठारह स्थायी मण्डलो रतष्ट्रसंघ में स्थायी प्रतिनिधि मण्डल तथा एक सौ के करीब सलाहाकार मण्डलो का निर्देशन करता था।[16]

16—जापानियों ने प्रथम महायुद्ध तथा उसके बाद विदेशी मामलो में परामर्शदाता परिषद् (गाइको चो सकाई) का प्रयोग किया। यह अफवाह थी कि सितम्बर 1922 मे इसे प्रीवी परिषद् के दवाव पर समाप्त कर दिया गया। बात में तनाका प्रधान मन्त्री ने (1927–1929) इसी प्रकार की संस्था बनाने का प्रयास किया। तोउची, पूर्वोक्त, पृष्ठ 43–48 द्वितीय महायुद्ध के दौरान अदन्रुनी मंति-मंडल के प्रतिमान का अनुसरण किया गया।

समुद्र पार मामलों का मन्त्रालय (ताकूमुशो) सरकार में जापान की बढ़ती हुई औपनिवेशक रुचि का प्रतीक था। मन्त्रालय में संरक्षण, उद्योग तथा औपनिशिक मामलों के व्यूरो थे। यह आवासियों तथा विदेशों में बसने वालों की व्यवस्था करता था तथा औपनिवेशिक प्रशासन करता था। विभागीय नियन्त्र में चोजेन (कोरिया), काराफुतो (सारवा–लिन) तथा क्वांगतुगं में पट टे पर जमीन तथा कुछ संरक्षित प्रदेश थे।

सेना की स्वायत्त स्थितिके कारण युद्ध मन्त्रालय (रिकुगुनशो) तथा नौ सेना मन्त्रालय (के गुंशो) को विशिष्ट स्तर प्राप्त था। थल–सेना तथा जल–सेना के प्रशासनिक अंग तथा सेना का मन्त्रालय डाइट से संपर्क स्थापित करने वाले अंगो के रुप में भी कार्य करते थे। उदाहरण तथा युद्ध मन्त्रालय के मुख्य अंग – कर्मचारी विभाग, युद्ध योजनाएं, सैनिक मामले, योजनाओं की सक्रियता, शास्त्र निर्माण–योजनाएं, बनाना, चिकत्सा सुविधा तथा न्यायिक व्यवस्था आदि थे। सामान्य स्टाफ वोर्ड (सैम्बोहोम्ब) तथा नौ सेना स्टाफ वोर्ड (कैगुक गुनटेपू) को स्वतन्त्र स्तर प्राप्त था। सेना के जनरल स्टाफ का संगठन जो तालिका में बनाया गया है इसका प्रतीक मान जा सकता है।[17]

वित्त मन्त्रालय (ओकुराशो) सरकार के वित्तय मामलों का नियन्त्रण करता था। सैनिक वित्त तथा साम्राज्यिक परिवार से संबंगित कार्य इसके क्षेत्र से बाहर थे। आय व्यय लेखा, कर, वित्त तथा बैंकिग में चार व्यूरो बजट बनाने में सहयोग करते थे। जिस पर अगस्त के अन्त तक बातचीत कर ली जाती थी तथा आगामी वितिय वर्ष के लिये (1 अप्रेल से 31 मार्च तक) इसे दोहरा लिया जाता था। डाइट के सम्मुख यह चार भागों में रखा जाता था—

तालिका

सेना का संगठन

पद	जापानी पदवियां	नियुक्ति	कार्य
सेना जनरल स्टाफ	सैम्बो हावूस		1. युद्ध की योजनाएं बनाना 2. व्यापक स्तरीय मिशन का संचालन 3. सेना का संचालन 4. क्षेत्रीय सेनाओं के नियमों का संकलन करना 5. मानचित्र व सैनिक इतिहास तैयार करना। 6 युद्ध कालेज का संरक्षण (रिकुगन दे गाको)
जनरल स्टाफ का प्रमुख	सैम्बो सोचा	(जनरल अथवा लेफ्टिनेंट जनरल द्वारा प्रेषित) सम्राट् द्वारा	सर्वोच्च कमांड के सन्दर्भ में सम्राट् का प्रतिनिधित्व करना

17—हेइगो, जापानी सेना का संगठन अनुभाग 3 दि जनरल स्टाफ वाशिंगटन, पृष्ठ 6-9।

जनरल स्टाफ का उप प्रमुख	सैम्बू निको	(जनरल अथवा ले. जनरल द्वारा प्रेषित) स्टाफ प्रमुख द्वारा नियुक्त	स्टाफ प्रमुख की सहायता करना
सामान्य मामलों का प्रयोग	सोम्बू		स्टाफ का प्रशासन
प्रथम प्रभाग	दाई इची बू साक्सेन		गतिविधियां प्रायोजित करना
द्वितीय प्रभाग	दाई निपूजो हों		गुप्तचर विभाग
तृतीय प्रभाग	दाई सैम्बू अनमुकोरसु		यातायात
चतुर्थ प्रभाग	दाई मोम्बुमेंशी है योचिशी		युद्ध इतिहास-सैनिक भूगोल
भूमि सर्वेक्षण ब्यूरो	रिकुची सोकुंमोनू		सैनिक सर्वेक्षण
सेना युद्ध कॉलिज	रिकुगन दे गाको		स्टाफ प्रशिक्षण

1- सामान्य- आम व्यय ब्यूरो-मुख्य राजस्व की आय तथा व्यय बनाता था।

2- विशिष्ठ आय व्ययलेखा- समुद्र पार परियोजनाओं सरकारी रेल मार्गों तथा एकाधिपत्य वाले विषयों पर विधि सम्मत आय तथा व्यय को प्रस्तुत करता था।

3- पूरक व्यय- विधि तथा समझौतों को क्रियान्वित करने पर उत्पन्न होने वाली कमियों को पूरा करता था।

4- निरंतर रहने वाले व्यय- सार्वजनिक निर्माण कार्यों के थे जिनमें अनेकों वर्षों के लिये पूंजी का नियोजन होता था।

राष्ट्रीय कोषागार प्रभाग (को वकोका) वास्तविक आय तथा व्यय का संचालन करता था तथा मिंट (जोईस्क्योकू) के समान अधिकार प्रदान करने वाली सत्ता से स्वतंत्र था। एकाधिकार वाले ब्युरो (सेंवाई -क्योकू) का नियंत्रण तंबाकू -नमक तथा कपूर पर था। यह भी वित्त मंत्रालय के अंतर्गत आता था।

जापान के लोगों पर प्रत्यक्ष प्रभाव डालने के संदर्भ में जापान में गृह मंत्रालय के बाद अन्य महत्वपूर्ण मन्त्रालय शिक्षा (मोमकुशो) था। इस मन्त्रालय में संपूर्ण शिक्षा-व्यवस्था का केन्द्रीयकरण होने के कारण यह जापानी युवा तथा वयस्क दोनों वर्गों को वैचारिक प्रशिक्षण प्रदान करने वाले सर्वाधिक स्कूलों संस्थाओं विशिष्ट स्कूलों, तकनीकी इंस्टीट्यूट तथा अधिकांश वैज्ञानिक शोध पर नियंत्रण रखता था। इस मंत्रालय का शिक्षा संबंधी दर्शन प्रत्यक्षतः शपथ घोषणा पत्र, मेयजी संविधान तथा विशेषतया शिक्षा संबंधी शाहीघोषणा (1896) से उत्पन्न होता था जिससे पाश्चत्य प्रभाव के विपरीत जापानी महिमा का वर्णन किया गया था।

साम्राज्य की मूल विशेषता, गुण-निष्ठा, संतान वत भक्ति तथा उदारता पूर्ण संगठन है।

ज्ञान की खोज तथा बोद्धिक प्रवृतीयों व संपूर्ण नैतिक शक्तियों का विकास करना तथा कलाओं को संपन्न बनाना है।

संविधान के प्रति सम्मान दिखा कर तथा विधियों को पालन कर सार्वजनिक कल्याण तथा सामान्य हित को बढावा देना है।

राज्य की आवश्यकताओं के लिये हमारी सामाजिक सिंहासन की संपन्नता जो धरती पर स्वर्ग तुल्य है की रक्षा के लिए जनता स्वयं को साहसपूर्वक प्रस्तुत करे।[18]

अन्य दो मंत्रालयो के कार्य उनके नाम से ही स्पष्ट है। सभी मंत्रालयों में से कृषि तथा जंगलात मंत्रालय (नो रिनशों) जिसमें विभिन्न ब्यूरो कृषि-कार्य, पशु-धन, जंगलात मत्स्य पालन का सर्वेक्षण करते थे, ऐसे है जिनमें आजतक बहुत कम परिवर्तन हुआ है। इसके विपरित वाणिज्य तथा उद्योग मंत्रालय में युद्ध व उथल-पुथल के दौरान कई बार पुर्नगठन हुआ। संचार मंत्रालय (तेईशिनशो) डाक, तार तथा टेलीफोन ब्यूरो द्वारा सरकार द्वारा संचालित संचार साधनों पर नियंत्रण रखना है। रेलवे मंत्रालय (नेतसु दोशों) सरकारी आधिपत्य के रेल मार्गोके निर्माण तथा संचालक की व्यवस्था करता था जो 1929 में जापान के दो तिहाई रेल मार्गो के लिये उत्तरदायी था। यह अप्रत्यक्षत: निजी रेलवे का निर्देशन भी करता था न्याय तथा गृह विभाग मंत्रालय विशेष ध्यान देने योग्य विषय हैं।

सभी न्यायालय, प्रोक्यूरेटेर तथा बंदीगृह न्याय मंत्रालय शिहोशो के अधीन थे। इस प्रकार न्यायालय कार्यपालिका के प्रशासनिक मंत्री मात्र थे। यह मत्रालय तीन ब्यूरो में विभाजित था (1) प्रशासनिक मामले जिनमे न्यायालयों की व्यवस्था वकील दिवालिया पक्ष, पंचनिर्णय तथा प्रशासनिक न्यायालय सम्मिलित थे। (2) फौजदारी मामले, जिनमें मुकदमें तथा अपराधी को दड देना सम्मिलित था। (3) पेनल प्रशासन, जिसमें कारागृहों की व्यवस्था सैनिक सुरक्षा पर छोड़े गये अपराधि तथा किशोर अपरावी सम्मिलित थे। तथापि मंत्रालय की न्यूनतम संरचना इसके नियन्त्रण पर प्रकाश नहीं डालती है। इसका व्यापक प्रभाव जापानी विधि व्यवस्था के विकास तथा न्याय व्यवस्था के संदर्भ में ही समझा जा सकता है।

कानून तथा न्यायालय

जापानी विधि अनेक परम्पराओं से विकसित हुई थी, तथा इनमें से सर्वाधिक गहरी समझौते की प्रवृत्ति थी। विवादों को बातचीत द्वारा सुलझाने की जो प्रवृत्ति चीनियों में पाई जाती है वह जापान में भी कन्फ्यूशियस वादी दर्शन को परिणामस्वरूप थी। जापान में जजों की कम संख्या तथा आधुनिक जापान में भी अपेक्षाकृत रूप से विवादो की कमी का कारण यही प्रतीत होता है। एक अपरिष्कृत राष्ट्रीय न्याय-व्यवस्था स्थानीय रीतिरिवाजोके आधार पर सर्वप्रथम तो कूगावा काल में स्पष्ट हुई, तब सर्वोच्च न्यायालय ह्योजोशी के रूप में स्थापित हुआ।[19] फिर भी विधि एकाधिक स्थानीय ही रही जिसमें प्राय: अधिकारियों पर

18—एम. सी एस. पी. "पॉलिटिकल रिआरिएनटेशन" पूर्वोक्त खण्ड पृष्ठ 584, शिक्षा पर शाही घोषणा का वर्णन करता है।

19—देखिये पृष्ठ 322, पूर्वोक्त अंक 1 पृष्ठ 188-192 में आत्मसमर्पण से पूर्व की कानूनी व न्याय व्यवस्था का वर्णन प्रस्तुत करता है. जो जॉन एच. विगमोर की रचना ए पैनोरमा ऑफ दि वर्ल्ड्स लीगल सिस्टम, वाशिंगटन 1928। अध्याय 8 जापानी विधि के किसी पक्ष के लिए अथवा आधुनिक जापानी सरकार के किसी पक्ष के लिए—रावर्ट इवार्ड की रचना गाइड जापानीज रेफरेन्स एण्ड रिसर्च मेटीरियल्स इन दि फील्ड ऑफ पॉलिटिकल साइंस एन अर्बर 1950। प्रोफेसर वार्ड ने जापानीज भाषा कानूनी रचनाओं ने सन्दर्भ विधियों के सग्रह 6 संहिताओं की व्याख्या न्यायिक निर्णय तथा व्याख्याएं भी हैं। अध्याय 13, पृष्ठ 64–70।

नियन्त्रण व पाबंदियां थी, जिन्हें सार्वजनिक रूप से बहुत कम प्रकट किया जाता था। अंतः पुर्नस्थापना काल के बाद जापानियों ने पूंजीवादी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए तथ उन पश्चिमी शक्तियों को आश्वस्त करने के लिए, जो जापानी अपरिचित विधियों के प्रभाव तक अपने प्रति क्षेत्रीय दावों को समाप्त नही करना चाहते थे एक वास्तविक राष्ट्रीय स्तर की विधि व्यवस्था के विकास की आवश्यकता का अनुभव किया। अतः आधुनिक जापानी विधि मेयजी संविधान के समानान्तर है तथा इसकी मू० आधार-नागरिक, वाणिज्य, फौजदारी तथा प्रक्रिया संबंधी संहिताएं, व्यापक स्तर पर यूरोपियन सिद्धांतों पर आधारित है।

तथापि यह कहना कि आधुनिक जापानी विधि पूर्णतः अनुकरण का परिणाम है समस्या का अत्यधिक सरलीकरण होगा। सर्वप्रथम, विश्वव्यापी विधि व्यवस्था में विदेशी विधि व्यवस्था को अपनाने की घटनाएं दृष्टिगोचर होती हैं। द्वितीयतः यद्यपि जापानी विधि को यूरोपियन सिद्धान्त के आधार पर बनाया गया था, तथापि किसी भी ऐसे विदेशी प्रभाव को स्वीकार करने से सतर्कता बरती गई थी जो जापान की परम्पराओं के तथा विशेषतय सर्वशक्तिशाली परिवार व्यवस्था के विपरीत होता है। अन्ततः न्याय की व्यवस्था में परंपरागत दृष्टिकोण के बने रहने से आयतित विधि को क्रियान्वित करने में विचित्र परिणामों का सामना करना पड़ा। मेयजी कालीन आधुनिकीकरण के पश्चात् भी जापान में ऊपर से थोपी गई विधि-व्यवस्था से उत्पन्न होनेवाली कठिनाईयों का सामना करना पड़ा है, क्योंकि वहां वे वहीं राजनीतिक व सामाजिक क्रांति हुई है जो उस व्यवस्था में थी, जहां से विधि व्यवस्था ग्रहण की गई है।

19 वीं शताब्दी की अंतिम दो दशाब्दियों में जापान के वैधानिक क्षेत्रो में सार्वजनिक तथा नागरिक विधि में पर्याप्त रुचि ली जाने लगी। अंततः यूरोपियन व्यवस्था, विशेषकर जर्मन मॉडल को ग्रहण करने का निर्णय किया गया। यह भी सम्भवतया काउंट इतो द्वारा जर्मनी में किये गए अध्ययनो तथा पुर्नस्थापना काल में जापान में जर्मन न्यायविदों की उपस्थिति के परिणाम स्वरुप था। शनै. शनैः विधि तथा उपविधियो का विशाल अंश संहिताबद्ध कर दिया गया। ये संहिताएं-संविधानिक विधि, नागरिक विधि, फौजदारी विधि वाणिज्य विधि, नागरिक प्रणाली की विधि तथा फौजदारी प्रणाली की विधि में छः थी कहलाई ये सामूहिक रूप से 6 संहिताएं (रोप्पो)[20] कहलाई।

जापान में महाद्वीपीय व्यवस्था का अनुसरण करते हुए सामान्य न्यायालयों प्रशासनिक न्यायालय तथा प्रशासनिक मुकदमें के न्यायालय को पृथक 2 किया गया। (ग्गोसेई-सेईशो 1928 में जापान में 340 न्याय लयं 281 स्थानीय तथा 51 जिलास्तरीय, 7 अपील न्यायालय तथा एक सर्वोच्च न्यायालय था। इनका संगठन निम्न प्रकार से था—

20—तीन दशाब्दियों के बाद 1998 में जिस संहिता को स्वीकार किया गया वह पुरानी व नवीन संहिता का मिश्रण था, उसकी प्रथम तीन पुस्तकें कानूनी अधिकार व संपत्ति तथा दायित्वों के बारे में (जो जर्मन तथा फांसिसी संहिताओं का अनुकूलन है) अन्तिम दो पारिवारिक सम्बन्धों, विधि तथा उत्तराधिकार (जापानी आदिम रीति रिवाजों का संहितीकरण) व्यावसायिक संहिता जर्मन, फांसिसी, सामान्य कानून तथा जापानी व्यवहार को निहित करती है। फौजदारी कानून (1882) मूलतः यूरोपियन उद्भव का था इसकी पृथक् विशेषता विशिष्ट दण्ड की व्यवस्था मात्र थी। अन्य संहिताएं न्यायालय संगठन व प्रणाली का विस्तृत वर्णन करती थी। न्यायालयों के संगठनों की मूल विधि (1890) जे. जी. डी. में दी गयी है पूर्वोक्त पृष्ठ 625-655।
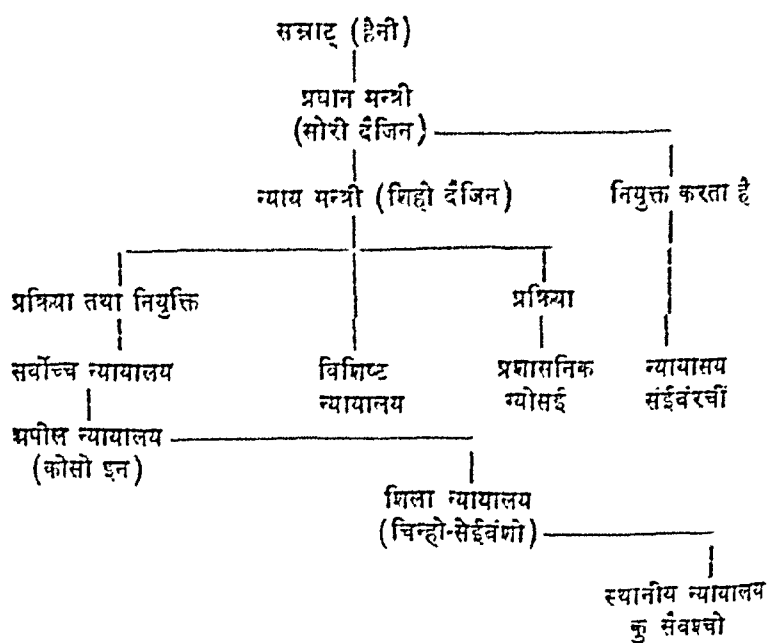
चार्ट 16 मेयजी सविधान के अन्तर्गत न्यायालय व्यवस्था

सम्राट

प्रीवी परिषद

प्रधानमन्त्री

नियुक्त करता है

न्याय मन्त्री

नियुक्त करता है

(प्रणाली)

सर्वोच्च न्यायालय

विशेष न्यायालय

प्रशासनिक न्यायालय

अपील न्यायालय

जिला न्यायालय

स्थानीय न्यायालय
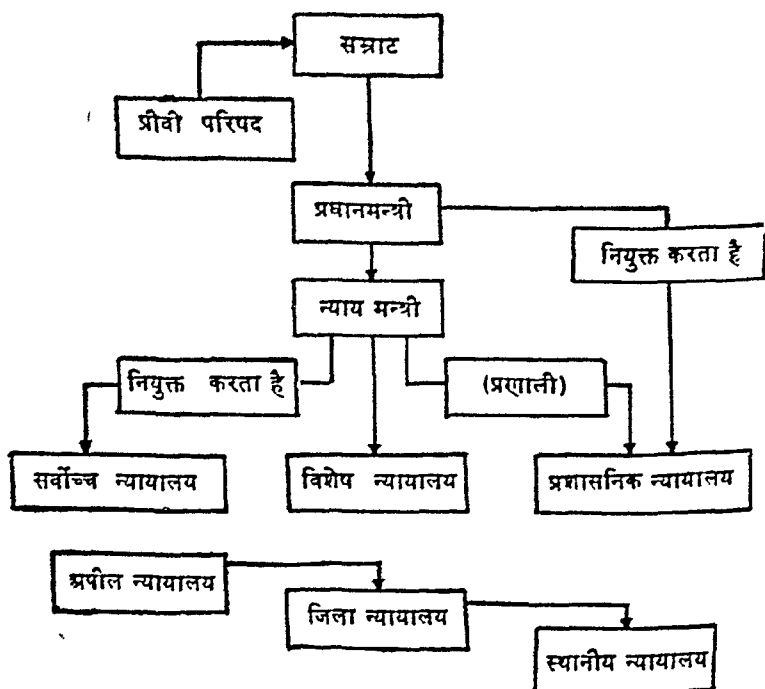
न्याय-मन्त्रालय के अन्तर्गत यह न्यायिक संगठन संवैधानिक दृष्टि से संविधान के चौथे अनुच्छेद के अनुसार साम्राज्यिक विशेषाधिकार के अन्तर्गत माना जाता था। इतो ने लिखा है न्याय व्यवस्था सम्राट् की सर्वोच्च कार्यपालिका शक्ति में निहित है। संविधान द्वारा यह भी व्यवस्था की गई कि न्यायालयों का संगठन विधि के अनुसार होगा। चूंकि सत्ताधारी मन्त्रीमण्डल को डाइट से कोई भी प्रस्ताव पारित कराने में किसी प्रकार की परेशानी का सामना नहीं करना पड़ता था अतः डाइट तथा न्यायालयों में प्रारम्भ करने व स्वतन्त्रता पूर्वक कार्य करने की क्षमता का अभाव था। सुरक्षा तथा सतर्कता आयोग, जो प्रत्यक्षतः न्याय मन्त्रालय के नियन्त्रण में कार्य करते थे वे शान्तिसुरक्षा विधियों के अन्तर्गत अपराधी लोगों के सन्दर्भ में अधिक प्रभावशाली सिद्ध होते थे। इस प्रकार नागरिक स्वतन्त्रता का निकृष्ट स्वरूप किसी विधि का परिणाम नहीं होता था। इसके विपरीत यह कानूनी कमजोरियों. कल्पनाओं तथा न्याय के प्रशासन के परिणाम स्वरूप उत्पन्न होता था।

इसके अतिरिक्त जटिल व्यवस्था के परिणाम स्वरूप जापानी जजों को कभी भी फ्रांसिसी तथा जर्मन जजों की स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं हो सकी, जिनकी भूमिका का निर्वाह करना चाहिये था। अधिकांश जापानी वकील वकालत करने के स्तर पर एकदम न्यायिक प्रशासनिक पदों पर नियुक्त हो जाते थे। वे शायद प्रशासन तन्त्र का सबसे कम लोकप्रिय अंश थे। उनकी शिक्षा तथा सामाजिक पृष्ठभूमि के कारण वे एक कानूनी विशेषज्ञ होते थे जो विधि का संकुचितम अर्थों में ही लागू कर सकते थे।

संसदीय सरकार में अन्य विभाग, जिस पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है वह गृह विभाग (नै मुशो) है। गृह विभान प्रशासनिक व्यवस्था के केन्द्र का प्रतिनिधित्व तथा नियन्त्रण करता था, जो प्रादेशिक, प्रीफेक्चर, नगर, कस्बों, ग्रामीण सरकारों तथा पड़ोस द्वारा जापान के प्रत्येक स्त्री पुरुष व बच्चों को प्रभावित तथा नियन्त्रित करता था। इसके अतिरिक्त न्याय मंत्रालय में गृह मन्त्रालय का संगठनात्मक ढांचा इसके सम्पूर्ण नियन्त्रण करने की व्यवस्था को स्पष्ट नहीं करता है। इसका जो अंग स्थानीय सरकार से सम्बन्वित था वह स्थानीय मामलों का ब्यूरो (चिन्हों क्योंकू) कहलाता था तथा वह सामान्य मामलों के प्रशासन तथा वित्तीय प्रशासन से सम्बन्धित था। पुलिस ब्यूरो टोक्यो के केन्द्रीय पुलिस बोर्ड पर नियन्त्रण करता था तथा गर्वनरों के माध्यम से प्रादेशिक तथा स्थानीय पुलिस पर नियन्त्रण करता था। इस प्रकार जापान में प्रत्येक पुलिस स्थान से गृह मन्त्रालय तक स्वतन्त्र संचार व्यवस्था बनी हुई थी। राष्ट्रीय भूमि-ब्यूरो, सार्वजनिक निर्माण-कार्य, सड़कें, जलमार्ग, खाद्य नियन्त्रण, नगर-परियोजना तथा पुर्नवास समस्या के लिये उत्तरदायी था। उपासनगृहों का ब्यूरो राज्य के शितो गृहों की व्यवस्था करता था उसका सरकार से निकटतम सम्पर्क था। 1920 के उत्तरार्द्ध में जापान में 1000,000 उपासनगृह थे जिनमें 15000 से अधिक पुजारी थे तथा वे सब प्रशासनिक सेवाओं के सदस्य थे। मुख्य पूजारी का सोनिन का पद (गृह मन्त्रालय के परामर्श पर प्रधानमन्त्री द्वारा नियुक्त) होता था। कर्मचारियों को हेनिन पद (प्रादेशिक गर्वनरों द्वारा नियुक्त) प्राप्त होता था।

स्थानीय सरकार

मेयजी पुर्नस्थापना से पूर्व, जापान 86 कुनी (प्रांतों) में विभाजित था जिनमें नौ प्रशासनिक क्षेत्र अथवा सर्किट (दो) थे। यद्यपि पुर्नस्थापना के पश्चात् कुनी को राज-

नीतिक मान्यता प्रदान नहीं की गई, तथापि प्रायः इनका प्रयोग स्थिति बताने के लिये किया जाता था, जैसे आज भी भौगोलिक स्थिति (चिरी चिहो) बताने के लिये किया जाता है।[21] पुनर्स्थापना के पश्चात् स्थानीय सरकार की रूपरेखा चार्ट 17 में बताई गई है—

फू (नगरीय प्रीफेक्चर क्षेत्र)	शी नगर	कू वार्ड	चो खण्ड
केन ग्रामीण प्रीफेक्चर क्षेत्र	गन (काउंटी)	माची (कस्बा) मुरा गांव	ओ ओगा कोना आजा (भूमि इकाईयां)

चार्ट 17–पुनर्स्थापना के पश्चात स्थानीय सरकार

(अ) तीन फू प्रीफेक्चर टोक्यो, ओसाका तथा क्योटो के थे जो टोक्यो शी, ओसाकाशी तथा क्योटो शी निहित करते थे (टोक्यो 1943 में राजधानी प्रीफेक्चर बना)

(ब) शीघ्र ही गन की महत्ता समाप्त हो गयी, मगर यह डाक के पते के रूप में बना रहा।

(स) 43 केन प्रीफेक्चर थे।

इस प्रकार संपूर्ण जापान नगरीय अथवा ग्रामीण प्रीफेक्चर में बंटा हुआ था तथा जापान में प्रत्येक स्थान किसी नगर कस्बे अथवा क्षेत्र का अंग था। रिकुक्यू (नानसेई-शोटो) एक केन का भाग था, बोनिन्स (ओगासवरा) टोक्यो फू का भाग था। इनके अतिरिक्त होक्काइदो तथा कराफुतो क्षेत्रीय प्रशासनिक इकाईयों (चो) थी। कुरील को होक्काइदों का भाग बताया गया था।

स्थानीय प्रशासन की कुछ सामान्य विशेषताओं पर तत्काल ध्यान दिया जा सकता है। प्रीफेक्चर अधिकारी राष्ट्रीय प्रशासनिक सेवाओं के सदस्य होते थे, तथापि ये लोग शासन कर रही सरकार के समर्थक होते थे तथा उसके पतन के साथ ही इनका भी पतन हो जाता था। इस प्रकार उनकी नियुक्ति का स्वरूप अर्द्ध राजनीतिक प्रीफेक्चरों होते हुए भी इन्हें प्रशासनिक अनुभव (यदि प्रशिक्षण नहीं तो) प्राप्त होता था। प्रीफेक्चरों में विपरीत नगर-पालिकाएं थी निश्चित सीमा तक राष्ट्रीय तथा प्रीफेक्टों के नियंत्रणों के भी उन्हें स्वायत्तता प्राप्त थी किन्तु समय के साथ साथ यह स्वायत्तता कम होती गई। मेयर के

21—नौ पुराने सर्किटों (गोकिनाई, तोकाइदो, तोसन्दो, होकुरिकुदो, सैन्योदो, नानकाइदो सैकाइदो, होक्काइदो) को भौगोलिक क्षेत्रों से निर्दिष्ट कान्तो, कांसो, चूबु, किन्की, चुगोकु शिकोकु, क्यूशू, होक्काइदो तथा करफुतो) से, दोनों को बाद में युद्धकालीन प्रशासनिक क्षेत्रों से तथा बाद को पुलिस डिस्ट्रिक्ट ब्यूरो (दोशान फू 1945 में स्थापित) से पृथक् समझना चाहिये। स्थानों के जापानी नाम द्वितीय विश्व युद्ध में जापानियों के मुख्य हथियार थे, यह भाषा अधिकारियों ने बाद में अनुभव किया। देखिये (1) दैनी का गजेटियर (2) दैनिहन चोसेई केनरान (सरकारी रिसर्च ब्यूरो), टेईकोकु चोसेई कुकाकु बेनरान (जापान प्रशासनिक जिलों की पुस्तिका, टोक्यो, 1901 (3) किसी केन्द्रीय जापानी से बात करने पर दोनों भिन्न-भिन्न सरकारी तथ्य प्रस्तुत करेंगे। स्थानीय सरकार का चार्ट अमेरिका के प्रशान्त महासागर क्षेत्र के जापानीज प्लेस नेम्स एण्ड वार्ड गैजेटियर, अगस्त 7, 1945, डिवीजन (अप्रकाशित)।

अलावा अन्य नगरपालिका अधिकारी प्रशासनिक सेवाओं के सदस्य नहीं होते थे।[22] स्थानीय सरकार के सभी स्तरों पर लोकप्रिय ढंग से निर्वाचित प्रतिनिधि बोर्डों की व्यवस्था की गई थी इस प्रकार की संस्थाओं के निर्णय स्थानीय कार्यपालिका द्वारा नियंत्रित किये जा सकते थे तथा गृह मंत्रालय द्वारा उन्हे भंग किया जा सकता था।
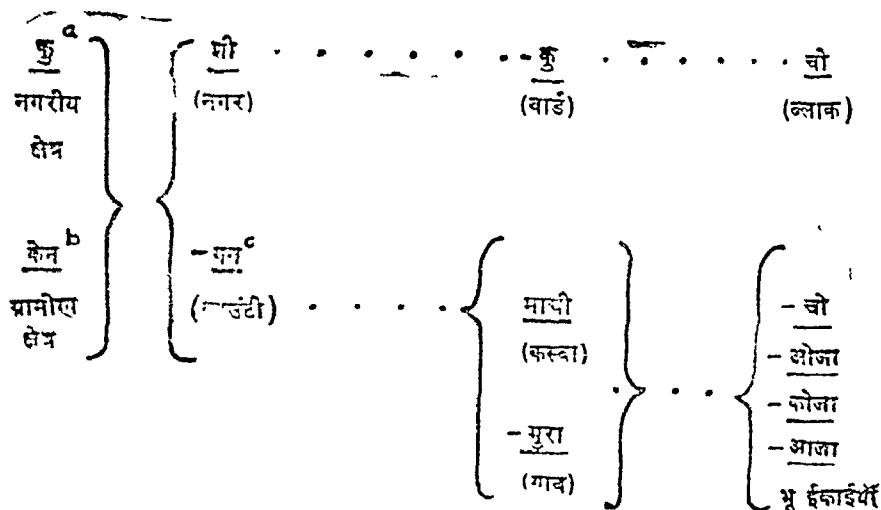
स्थानीय स्तर पर उत्तरदायित्व तथा सभा का मूल दायित्व गवंनर परनिर्भर करता था (फू अथवा केन चीजी) चो कभी कभी चीहो जो कान भी कहलाता था। गवंनर को चौकु-निन पद प्राप्त होता था जो उसे पर्याप्त मात्रा में राजनीतिक व सामाजिक प्रतिष्ठा प्रदान करता था तथा इसे 4650 मेन से 5350 मेन का वार्षिक वेतन भी मिलता था। यह-राष्ट्रीय सरकार के उपमन्त्री के समकक्ष था। प्रीफेक्ट का कार्यालय संगठन की दृष्टि से पर्याप्त सरल था तथा इसमे मात्र तीन विभाग थे: आंतरिक मामलों का विभाग (नेमू-2 पुलिस (कसवसु-2) तथा आर्थिक विभाग (किगरी-2) अनेक बडे प्रीफेक्चरों में सार्वजनिक निर्माण विभाग (कोमू-2) तथा होकाई दो-चो में एक उपनिवेश विभाग भी था। प्रीफेक्चर का एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य कठोर संरक्षण के अन्तंगत पुलिस व्यवस्था पर नियन्त्र करना था जिसके द्वारा सभी विधियों तथा अध्यादेशों को क्रियान्वित किया जाता था। इनके अतिरिक्त प्रीफेक्चर सार्वजनिक निर्माण कार्य भी करते थे, जैसे स्कूलो तथा अन्य संस्थाओं की स्थापना करना तथा नगरपालिकाओं को

22—राष्ट्रीय स्तर पर नगर के रूप में स्वीकृत होने के लिये एक नगरपालिका को 30,000 की जनसंख्या वाला होना आवश्यक होता था। (1945 में इसे 50,000 कर दिया गया तथा 1947 में वापिस 30,000 कर दिया गया) नगरपालिका राष्ट्रीय तथा प्रीफेक्ट नियमों के अनुसार नियम बना सकती थी, किन्तु इसकी विधायनी शक्तियां अत्यधिक नियन्त्रित करदी गई, क्योंकि इसके पास पुलिस शक्ति नहीं थी। अतः यह अपने नियमों को क्रियान्वित नही करा पाती थी। नगर सभा (शिकाई), जिसका चुनाव पुरुष मतदाताओं द्वारा किया जाता था, परिषद् (शी-सानजीकाई) मेयर तथा नगर के अध्यक्ष का चुनाव करते थे। इस प्रकार यद्यपि मेयर प्रीफेक्ट के समर्थन से सभा पर नियंत्रण कर सकता था तो भी वह अपने पुनर्निर्वाचन के लिए सभा पर निर्भर करता था।

नियंत्रित करना व निर्देश देना। अंशतः राजस्व कर्त्तव्य-निर्वाह, वेतन पुलिस न्यायालय के खर्च के लिए राष्ट्रीय अनुदानों के रूप में प्राप्त होता था। तथा अंशतः करो के रूप में जो राष्ट्रीय कर पर सरचाज के रूप में तथा स्वतन्त्र कानून के परिणाम स्वरूप प्राप्त होता था। कुछ प्रीफेक्चरो से ब्रांच प्रशासन (शिचो) छोटे द्वीपो तथा दूर के प्रदेशो में प्रीफेक्चर कार्यालय के कार्यो को पूरा करते थे।

प्रीफेक्चरो की प्रतिनिधि सभाओं के कार्य महत्वपूर्ण (फू अथवा केन काई) नहीं थे। इनमें 20 से चालीस सदस्य होते थे जिन्हें वेतन नहीं मिलता था तथा वे योग्यता प्राप्त पुरुष मतदाताओ द्वारा चुने जाते थे, वे वर्ष में एकबार साधारणतया नवंबर में मिला करते थे। प्रीफेक्ट की परिषद में वर्ष में सात से दस सदस्यों का चयनकिया जाता था। ये गर्वनर के सभापतित्व में कार्य करते थे तथा सभा की अनुपस्थिति में गर्वनर के सभापतित्व में मिलते थे।

टोक्योशी आर्थिक तथा राजनीतिक रूप से प्रमुख होने के बावजूद 1943 तक प्रीफेक्ट के अधिकारियों (टोक्यो-फू) के क्षेत्रधिकार में था। यद्यपि इसके क्षेत्र में 26 प्रतिशत प्रीफेक्ट प्रदेश था यह फू वाई के 113 सदस्यों में से 103 सदस्यो को चुनता था तथा प्रीफेक्ट की सम्पूर्ण जनसंख्या का 92 प्रतिशत इसके क्षेत्र में तथा वह सम्पूर्ण कर का 97 प्रतिशत देता था। यह इदो के प्राचीन नगर के लिए उल्लेखनीय विकास था, जो शोगुन के पतन के पश्चात् निरंतर ह्रास की ओर अग्रसर हो रहा था। तोकू गावा के अन्तर्गत अपने पुराने दिनों में भी इदो की जनसंख्या 10 लाख से अधिक थी बाद में हैनो ने इसे अपनी पूर्वी राजधानी (टोक्यो) बना लिया। 1932 तक इस नगर में मात्र 85 वर्ग मील क्षेत्र था तथा बीस लाख के करीब जनसंख्या थी, तथापि 1932 व 1936 के अधिनियमो ने इसके क्षेत्र व जनसंख्या में अपार वृद्धी की। 1940 के प्रारंभ में इसमें 577 वर्गमील क्षेत्र तथा तथा 68 लाख के करीब जनसंख्या थी। इस प्रकार क्षेत्र की दृष्टि से यह विश्व के प्रथम पाच नगरों में तथा जनसंख्या की दृष्टि से विश्व के प्रथम तीन नगरों मे से था। सितम्बर 1923 में भूकंप के पश्चात लगी आग में आधे से अधिक नगर का नाश हो गया था तथा 1923 से 1930 के मध्य कठोर परिश्रम के पश्चात इस नगर का पुनर्निर्माण किया गया।[23]

निम्नतमस्तर पर वार्ड (कू) टोक्यो के प्रशासनिक उपखण्ड तथा पांच प्रमुख नगर थे। टोक्यो में प्रत्येक वार्ड में एक प्रमुख होता था, जिसकी नियुक्ति मेयर करता था। एक

23—1944-45 में हवगोलों के विस्फोट से यह फिर विनष्ट हो गई। यह विनाश और भी ज्यादा था। युद्ध के पश्चात् संयुक्त राज्य अमेरिका के विस्फोट सर्वे ने यह अनुमान लगाया कि स्वयं टोक्यो पर 14000 टन टुकड़े पड़े थे। 7,578,000 जनसंख्या 1944 में, 2,77700 हो गई, 93000 लोग मारे गये, 73,000 हताहत हुए, 2,900,000 बेघरबार हो गये, 57 वर्गमील क्षेत्र नष्ट हो गया तथा 728,000 भवन नष्ट हो गए। नगरीय क्षेत्र द इफेक्ट्स ऑफ एयर अटैक ऑन जापानीज अर्बन, इकोनॉमी समरी रिपोर्ट वाशिंगटन मार्च 1941 तालिका 30, पृष्ठ 42। युद्ध से पहले टोक्यो स्थानीय शासन शोध का केन्द्र था। नगरपालिका सर्वेक्षण का टोक्यो इंस्टीट्ट 1922 में वाइकाउंट गोटो शिम्पेई द्वारा स्थापित किया गया जिसकी सहायता चार्ल्स ए बियर्ड करता था। इसका अपना प्रकाशन तोशी मोंदाई (तोक्यों की समस्याएं) था, टोक्यो मई 1925 मासिक। देखिये दि टोक्यों इन्स्टीट्यूट फॉर म्युनिसपल रिसर्च एण्ड इट्स वर्क, हिबियापार्क टोक्यो 1948।

निर्वाचित सभा (फु-काई) तथा कुछ सवेतन अधिकार होते थे। सर्वाधिक छोटी इकाई बुराकू (गाव) होती थी, जो ग्रामीण जापान के मूल सामाजिक आर्थिक इकाईयों के प्राकृतिक विकास के परिणाम स्वरूप विकसिक हुई थी। कुछ कस्बे वाला ग्रामीण क्षेत्रों में स्थित थे। स्थानीय प्रशासक की सर्वाधिक रोचक विशेषता विशेष रूप से युद्धकालीन विकास के सन्दर्भ में बुराई-काई (गाँवों का संगठन) तथा चोनाई-काई (बलॉक संगठन) थी। जापानी इतिहास में पड़ोस के संगठनों का अपने प्राचीन स्वरुप में प्रयोग में 1868 में राजनीतिक तौर पर छोड़ दिया गया। इस प्रकार के समूह मेयजी शासन काल के अंत में पुनः दृष्टिगोचर होने लगे तथा शोवा के पंद्रहवें वर्ष में (1940) इनकी कानूनी रुप से पुर्नस्थापना कर दी गई।[24]

□□□

24—एस. सी. ए. पी. पालिटिक्स रिऑरियन्टेशन पूर्वोक्त अंक एक पृष्ठ 266-278 स्थानीय शासन की संरचनात्मक विधि का उपयोगी सारांश प्रस्तुत करती है (1) नगरीय तथा ग्रामीण प्रीफेक्टों की संगठन सम्बन्धी विधि (147 अनुच्छेद, 4 धाराएं) संख्या 35, मई 17, 1890 (2) नगरों के संगठन से सम्बन्धित विविध (181 अनुच्छेद, 6 धाराएं (संख्या 1 25 अप्रेल 1888 (3) ग्रामों तथा कस्बों से सम्बन्धित विधियां (161 अनुच्छेद) 4 अप्रेल 1911 (4) होक्कारदो से सम्बन्धित नियम संख्या 2 मार्च 28 1911 (5) अन्य अध्यादेश स्थानीय स्वशासन का यह सारांश युद्ध के अन्त में रणनीति कार्यालय शोध तथा विश्लेषण प्रभाग लोकल गवर्नमेंट इन जापान वाशिंगटन, जुलाई 31, 1945, गोपनीय (21 जनवरी, 1947 से प्राप्त हुआ।

अध्याय 18 संसदीय जापान

जापान के सुदृढ़ प्रशासन ने, जो सम्राट से लेकर छोटे गाँव तक पहुँचा हुआ था जापान के दो आधुनिक रूपों को 1889 से 1945 तक साथ साथ बना रहना संभव बनाया जापान का एक रूप संसदीय था, जिसमें राष्ट्रीय विधानसभा, एक उत्तरदायी मंत्रीमंडल तथा अनेक राजनीतिक दल थे। प्रायः जापानियों तथा विदेशियों द्वारा इस संसदीय व्यवस्था को जापान की वास्तविक सरकार मान लिया जाता था, जबकि वास्तविकता में यह कहा जा सकता है कि जापान में संसदीय व्यवस्था को सम्राट के राजनीतिक नियंत्रण पर सुदृढ़ नियंत्रण प्राप्त था।

संसदीय व्यवस्था के साथ सैनिक जापान भी विद्यमान था। जापानी व्यवस्था में सेना की मूल आन्तरिक स्थित, स्वयं साम्राज्यिक सरकार में सैनिक संस्थाओं का अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होना है। सैन्यवाद जापान, संसदीय जापान के समान कठोर सरकारी सीमाओं से बाहर तक फैला हुआ था, क्योंकि इसके निजी तथा अर्द्ध निजी संगठन ये आर्थिक समर्थक थे तथा देश की आंतरिक विजय तथा विश्व व्यापी भूमिका के लिए उसकी पृथक् निष्ठा थी।

इस प्रकार जापन के तीन रूप-प्रशासनिक, सैन्यवादी तथा ससदीय एक ही थे। उन्हें न तो पूर्णतः मिलाया जा सकता था, न उन्हें पृथक् किया जा सकता था। अतः जापान की द्वितीय महायुद्ध की ओर प्रगति को संसदीय जापान पर सैन्यवादी जापान की विजय कहना अतिश्योक्ति होगी। जापान में संसदीय प्रजातन्त्र प्रशासनिक तथा सैनिक दलों की सहायता व समर्थन के बिना कभी भी नहीं बना रह पाता। यह जापानी राजनीतिक व्यवस्था की मूल विशेषता है।

संसदीय जापान की संसद—

संसदीय जापान का मूल केन्द्र साम्राज्यिक डाइट थी। सैद्धान्तिक रूप में एक वास्तविक संसदयी साम्राज्यिक एक केन्द्रीय व्यवस्थापिका के चारों ओर संगठित होना चाहिये। इस प्रकार की केन्द्रीय व्यवस्थापिका में ये विशेषताएँ होनी चाहिये—

1. सर्वमताधिकार
2. निर्वाचकों के प्रति उत्तरदायित्व
3. कार्यपालिका की प्रभुता से स्वतंत्रता
4. पूर्णतः व्यवस्थापिका सत्ता, जिसमें सार्वजनिक वित्त पर भी उसको पूर्ण अधिकार हो।

1889 से 1945 के मध्य जापानी संसद को इनमें से एक भी विशेषता पूर्णतः प्राप्त नहीं थी, फिर भी सब की आंशिक छाया उन पर विद्यमान थी।

संवैधानिक तथा विधायनी शक्तियों की दृष्टि से कमजोर होने के कारण तथा उत्तरोत्तर प्रभावहीन होते होते अंततः डाइट प्रशासनिक मंत्रियों के पूर्णतः अधीन हो गयी। संविधान ने वास्तविक व्यवस्थापिका निर्माण करने के स्थान पर एक सामान्य गिकाई (मात्र बातचीत करने का स्थान तथा सरकारी स्भर पर प्रशियन मॉडल पर डाइट) का निर्माण किया। इसकी सर्वप्रथम मीटिंग में ही इसके सम्मुख कई समस्याएँ आई, जिनका विवरण एक जापानी प्रोफेसर ने इस प्रकार किया है—

"29 नवंबर को मेयजी शासन के 23 वें वर्ष में (1890) स्वयं तैनो की उपस्थिति में प्रथम डाइट का उद्घाटन समारोह सम्पन्न हुआ। 7 दिसंबर को मंत्रिमंडल के प्रधान यमागाता आरितोयो ने प्रतिनिधि सदन के सम्मुख अपना भाषण दिया। प्रधानमंत्री यमागाता ने यह बताया कि किस प्रकार 300 वर्ष के तोकूगावा प्रशासन के कारण हमारी देश विश्व की प्रगति की तुलना में पिछड़ा रह गया है तथा किस प्रकार पुनर्स्थापन के बाद उसे पूरा करने का प्रयास किया गया है। तत्पश्चात उस वर्ष के बजट को प्रस्तुत करते हुए उसने बताया कि थल सेना व जल सेना के लिये वार्षिक व्यय का विशाल भाग रखा गया गया था। राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिये सप्रभुता व्यवस्था (शुकेन सेन) सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण थी तथा साथ ही हितों की सुरक्षा (रेकी सेन) भी आवश्यक थी। प्रथम का क्षेत्र देश क सीमाओं तक था, जबकि बाद का क्षेत्र हमारी संभुता की नियति से निकट रूप से संबंधित था। इसी कारणवश बजट में थल सेना व नभ सेना को महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया था"।[1]

व्यवहार में स्वयं दोनों की व्यवस्था के लिए किसी अस्थाइ कोष की व्यवस्था नहीं की गई थी। एक बार बजट प्रस्तुत करने के पश्चात् डाइट कीं समितियों के पास उस पर विचार करने के लिए 21 दिन होते थे जिसके बाद उन्हें रिपोर्ट देनी होती थी सदनों के अस्तित्व को भूला दिया जाता था।

वस्तुतः जापान में मेयजी संविधान के अंतर्गत शासन प्रणाली का वर्णन करते समय डाइट को भुला देना सरल है। इंग्लैण्ड तथा संयुक्तराज्य अमेरिका में जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा जिन प्रचिलित शक्तियों का प्रयोग किया जाता है, वह जापानी डाइज को नहीं दे कर सम्राट को दी गई थी (जिसका प्रयोग यदि प्रशासनिक तंत्र द्वारा नियुक्त अधिकारियों द्वारा किया जाना था) जो न्यून शक्तियां डाइट के सदस्यों को प्रदान की गई थीं, कैनरियों की तुलना में वे उनका प्रयोग नहीं कर पाते थे, क्योंकि संपूर्ण महत्त्वपूर्ण विषयों पर उनका नियंत्रण था।

1—प्रोफेसर ओका वाई, हाई इंची गिकाई नोकानामुरू जक्कान नो कोसातु (ऑन दि फर्स्ट सेशन ऑफ दि इम्पीरियल डाइट) कोका गाक्काई जाशी, पूर्वोक्त पचास अंक संख्या 2 (फरवरी 1946) पृष्ठ 1–16। 1890-1928 तक दोनों सदनों के अधिवेशन का मौखिक रिकार्ड दाई निहोन तैकोकू गिकाईशी कानाकोकाई (शाही डाइट के रिकार्ड प्रकाशित करने वाली संस्था), दाई निहोन तेईकोकू गिकाईशी (शाही जापानी डाइट के रिकार्ड) टोक्यो, 1926-30, 18 अंक, सरकारी गजट के अंग्रेजी अनुवाद से अधिक सुविधापूर्ण ढंग से प्राप्त स्रोत।

एक पुस्तकालय, प्रारुप बनाने की व्यवस्था तथा आवश्यक सहायता, आदेश जारी करने के अधिकार तथा जांच करने की शक्ति के अभाव में डाइट की समितियां बुद्धिमत्तापूर्ण ढ़ंग से विधि निर्माण नहीं कर सकती थीं। सदस्यों को सरकार में उनकी स्थिति के अनुसार सम्मान दिया जाता था। यद्यपि उन्हें सोनिन का पद दिया गया था, किन्तु उन्हें निम्न स्तरीय कैनरियो के विशेषाधिकार तथा उन्मुक्तियां भी प्राप्त नहीं थी। उनका वेतन एक उपमंत्री के वेतन का लगभग आधा था। (3 हजार येन से 5800 येन)। 1930 तक डाइट का जापान भवन तक नहीं था। वे सदन के प्रमुख क्लर्क से भी निम्न थे, जो एक प्रशानिक चोकोनिन पद का होता था तथा जिसे सरकार निवास स्थान, सवारी तथा आजीवन नियुक्ति प्रदान की जाती थी।

चार्टर घोषणा को भुला दिया गया था जिसमें व्यापक विस्तार वाली विधानसभा को आमंत्रित करने की व्यवस्था की गई थी। कोगिशो जो एक अधिक लोकप्रिय सदन के समान होता था तथा 1881 की एक साम्राज्यिक घोषणा करके जिसने एक वास्तविक संसद का आश्वासन दिया था, को भी विस्तृत कर दिया गया था। यह निश्चित करने के लिए कि एक लोकप्रिय ढ़ंग से निर्वाचित निम्न सदन कभी भी कार्यपालिका की शक्ति को नियंत्रित नहीं कर पाएगा इतो तथा संस्थापक नेताओं ने दोनों सदनों से संबंधित विधि बनाई, इसमें उच्च सदन से संबंधित अध्यादेश, निम्न सदन की निर्वाचन संबंधी विधि तथा द्वितीय विधि थी। विधि के अनुसार प्रथम अधिनियम में दोनों सदनों की स्वीकृति से ही परिवर्तत किया जा सकता था, किन्तु हाउस ऑफ पीयर्स से संबंधित अध्यादेश में संशोधन करने के लिए मात्र इस सदन की स्वीकृति ही आवश्यक थी।[2]

इन विषयों में इतो ने पश्चिमी प्रतिनिधित्व सरकार प्रणाली के प्रति अपनी घृणा को व्यक्त किया। अपनी रचनाओं में उसने स्पष्ट किया कि व्यवस्थापिका शक्ति के संप्रभु तथा जनता में विभाजन का विचार एकीकृत संप्रभुता के गलत विचार से उत्पन्न हुआ।

डाइट का उपयोग राज्य के अध्यक्ष की कार्य करने में सहायता करना है तथा राज्य को एक अच्छे प्रकार से अनुशासित, सुदृढ़ तथा स्वस्थ स्थिति में बनाये रखना है। विधायनी शक्ति अंततः सम्राट् तथा डाइट की पृथक् स्थिति में अंतर सुदृढ़तापूर्वक बनाये रखना अत्याधिक आवश्यक है।

सम्राट् के आदेश पर डाइट को आमंत्रित स्थगित व समाप्त किया जाता था तथा प्रतिनिधि सदन को भंग किया जाता था। संविधान ने वार्षिक अधिवेशन की अवधि मात्र तीन माह रखी थी।, ताकि इतो के अनुसार अंतहीन विचार विमर्श की प्रक्रिया को रोका जा सके। दोनों सदनों द्वारा पारित विधेयक सम्राटः की सहमति प्राप्त न होने तक विधि

2—यह भी जानना चाहिये कि इतो व उसके सहयोगियों ने जनमत के दबाव में आकर किसी प्रकार के संवैधानिक संशोधनों से भी सतर्कता बरती थी। 63 वें अनुच्छेद के अनुसार डाइट को प्रस्तुत किये गये संशोधनों के लिये दो सदनों के दो तिहाई कोरम का दो तिहाई बहुमत का समर्थन आवश्यक था। प्रस्तावना में यह भी स्पष्ट था कि मात्र सम्राट् को ही 'संशोधन' आरम्भ करने का अधिकार था। उच्च सदन तथा निम्न सदन से सम्बन्धित नियमों के बारे में शाही आदेश मेयजी संविधान के परिशिष्ट में दिये गए हैं। एस. सी. ए. पी. 'पॉलिटिकल रि ऑरियन्टेशन' पूर्वोक्त खण्ड 11 परिशिष्ट एक पृष्ठ 592-602। देखिये इतो की कमेंट्रीज पूर्वोक्त पृष्ठ 9-10।

बनता था। यद्यपि दोनों सदनों को विधि को प्रारंभ करने का अधिकार दिया गया था दूवे का उनको परामर्श था कि विधि बनाने के कार्य को सरकार के अनुभवी तथा चतुर कमिश्नरों को सौंपे।

संघटित विधि डाइट के मात्र 6 कार्य प्रतिपादित करती थी।

1 प्रत्येक विधि को सहमति देना।

2. विधियों को प्रारम्भ करना तथा अधिकांशतया सरकारी विधियों पर मतदाता करना।

3. कार्यपालिका के सम्मुख अपनी मांगे रखना।

4. सम्राट् को संबोधित करना।

5. जनता से प्रार्थना-पत्र स्वीकार करता तथा

6. दोनों सदनों की व्यवस्था के लिए नियम बनाना। संक्षेप में डाइट को बातचीत करने का अधिकार दिया गया गया था।

इसके अतिरिक्त सदनों से सम्बन्वित विधि से डाइट की शक्तियों कों पर्याप्त सीमा तक नियन्त्रित कर दिया था, जैसे-सरकारी मांग पर डाइट में होने वाले विचार-विमर्शो की समाप्ति, समितियों में जनता की अनुपस्थिति, जाँच करने अथवा आदेश देने के अधिकार का निषेध, आंतरिक समितियों की अस्वीकृति अथवा मात्र सरकारी सहमति से उनकी नियुक्ति। वही स्थिति स्थायी समितियों की थी, साम्राज्यिक परिवार के ससम्मानपूर्ण अथवा सरकार तथा डाइट के लिए अपमानजनक कथन कथन नहीं कहे जा सकते थे। अंततः सदन के वियमों द्वारा यह बात निश्चित कर दी गई थी कि सरकार के पूर्णत. अधीन रहेगा। डाइट का उद्घाटन सम्राट उच्चसदन में करता था। दोनों सदनों के व्यय का निर्धारण वित्त मन्त्रालय द्वारा स्वेच्छापूर्वक किया जाता था। डाइट के विधेयक एक राज्यमन्त्री द्वारा सम्राट् को प्रस्तुत किए जाते थे। डाइट की समितियों तथा संयुक्त समितियों का कार्यक्रम उन मन्त्रियों की सुविधा के अनुसार किया जाता था जिनका संबंध उस विभाग से था।

इन सीमाओं के बावजूद डाइट महत्त्वपूर्ण बन सकती थी, यदि इसे सार्वजनिक वित्त पर थोड़ा वहुत नियन्त्रण भी दिया गया होता, किन्तु संविधान तथा वित्त अधिनियम ने सार्वजनिक वित्त को लोकप्रिय नियन्त्रण से पृथक् कर दिया था। वजट का अधिकाश भाग "निश्चित व्यय" रखता था, जिसको न तो अस्वीकार किया जा सकता था, न ही उसमें कमी की जा सकती थी। सुरक्षित सरकार के पास 'एक निरन्तर व्यय का कोष' होता था, जिसमे सुरक्षित कोष सभी कमियों की पूर्त्ति करता था। जब डाइट का अधिवेशन नही होता था, तब सरकार साम्राज्यिक अध्यादेशों के माध्यम से सभी प्रकार के वित्तीय कदम उठा सकती थी तथा यदि किसी कारणवश डाइट वजट पारित करने में असमर्थ रहती थी तो सरकार पूर्व वर्ष वजट के अनुसार कार्य करती थी।

इतो को निम्न सदन की स्थापना का कोई कारण प्रतीत नही होता था, जबकि वह उच्च सदन की उदारता के बारे में निश्चिन था कि हाउस ऑफ पीयर्स '(किनोकू-इन)' जनता की दक्षता, अनुभव तथा सुरक्षा का प्रतिपादन उन लोगों को सम्मिलित करके

करेगा, जिन्होंने देश की उल्लेखनीय सेवा की हो जो, विद्वान् अथवा विशाल संपदा वाले हैं"। इस प्रकार किज़ोकू-इन का संगठन उस गेनरो-इनके समान था, जो डाइट से पहले सेनेट थी। यह क्षेत्रों के स्थान पर हितों का प्रतिनिधित्व करता था तथा यह सामंतवादी प्रवृत्ति की निरन्तरता का द्योतक था। 1925 में उच्च सदन में सुधार किया गया, किन्तु परिणाम स्वरूप धनिकतन्त्र की वृद्धि हुई। कुलीन सदस्यों की तुलना में साम्राज्यिक आदेशों से नियुक्त लोगों की संख्या अधिक नहीं हो सकती थी।

हाउस ऑफ पीअर्स की सदस्यता, जो प्रारम्भ में 292 ही थी, बाद में लगभग सौ सदस्यों से बढ़ गई तथा 400 के करीब हो गई। पीअर्स के 6 वर्ग हुआ करते थे।[3] रक्त सम्बन्धी राजकुमार (जो अपने अधिकार का प्रयोग नहीं करते थे) तथा मार्क्वस जो वंशानुगत अधिकार से बैठते थे। विद्वता तथा गुणों के लिये सम्राट् की ओर से आजीवन नियुक्त लोग। काउंट, वाई काउंट बैरन करदाता तथा अकादमी के सदस्य सात वर्षों के लिये सदस्य बनते थे। सदस्य अध्यक्ष द्वारा (किज़ोकू-इन-गिचो) बिठाये जाते थे, जिनकी पर्याप्त जटिल व्यवस्था थी। संपूर्ण कार्य पांच समितियों द्वारा किया जाता था, जो प्रत्येक सत्र के प्रारम्भ में बनायी जाती थीं'। ये थीं बजट अनुशासन याचनाओं के बारे में, लेखा तथा योग्यता निर्धारण से सम्बन्धित होती थी। कार्य प्रारम्भ करने से पहले प्रत्येक सदस्य सम्राट् के कक्ष की ओर झुक कर अभिवादन करता था। यह कक्ष थोड़ा हट कर उठा हुआ होता था, जिसमें पर्दे लगे हुए होते थे। वहां से सम्राट डाइट के प्रत्येक सत्र का उद्घाटन करता था।

प्रतिनिधि सदन (शूगी-इन) पूर्णतः जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों के द्वारा बनता था। प्रथम अधिनियम के अन्तर्गत प्रतिनिधियों की कुल संख्या 300 थी। 1900 के अधिनियम के अन्तर्गत इसे 381 तथा 1919 के अधिनियम के अन्तर्गत इसकी सदस्यता 466 हो गई। सदस्य चार वर्षों के लिए चुने जाते थे। यद्यपि जापान मूलतः कृषि-प्रधान देश था, किन्तु कृषकों 1928 के चुनाव में मात्र 9·5 प्रतिशत स्थान प्राप्त हुए, जबकि सर्वाधिक अर्थात् 22·2 प्रतिशत स्थान व्यापारी-वर्ग को मिले। संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रतिनिधि सदन की सदस्यता के विपरीत जापानी प्रतिनिधियों का मात्र 15 6 प्रतिशत वकील था।"[4] सदन के सदस्य तीन भागों में बैठते थे, मुख्य दल को मध्य स्थान प्राप्त होता था, विरोधी-दल वाम पक्ष में बैठता था तथा छोटे दल एवं स्वतन्त्र सदस्य दक्षिण पक्ष में बैठते थे। अध्यक्ष (अथवा स्पीकर शुगीइन गिचो) का चयन बहुमत से ही होता था। स्वयं सदन स्थायी समितियों के माध्यम से कार्य करता था, जिनके शीर्षक उच्च सदन की समितियों के समान ही होते थे। मात्र यह अन्तर था कि निम्न सदन में योग्यता से सम्बन्धित सदस्यता कोई नहीं होती थी।

3—पीअर्स सदन के 58 वां अधिवेशन का संगठन (1) राजवंशीय राजकुमार 16 (2) राजकुमार तथा माक्वीज 42, (3) काउंट वाइकाउंट तथा बैरन 148 (4) शाही नियुक्तियां (अ) राज्य की सेवाओं व अनुभव के आधार पर नियुक्त 121 (ब) अधिक मात्रा में करदाता 64 (स) शाही अकादमी के प्रतिनिधि—4।

4—ये आंकड़े एम. एस. वदूले के जापानीज गवर्नमेंट, पूर्वोदधृत अध्याय 'दि डाइट आर्गेनाइजेशन एण्ड प्रासीजर' पृष्ठ 160-181। के. सी. को ग्रोव पॉवर्स एण्ड फंक्शन्स ऑफ दि जापानीज डाइट अमेरिकन पॉलिटिकल साइंस रिव्यू खन्ड 27 तथा 28 (दिसम्बर 1933, तथा फरवरी, 1934।

सम्पूर्ण सदन पर कठोर नियन्त्रण के बावजूद प्रतिनिधि सदन उन राजनीतिज्ञों का गढ़ बन गया जिनकी पदावधि निर्वाचक गणों पर निर्भर करती थी। वहाँ से वे निम्नस्तरीय पदों पर लूट व्यवस्था के माध्यम से कब्जा करने का प्रयास करते थे, यद्यपि यदा-कदा लोकप्रिय आंदोलन होते रहते थे (उदाहरण के लिये 1874–84 के आंदोलन), तथापि 1925 में सर्वमताधिकार की प्राप्ति से पहले सार्वजनिक स्तर पर राजनीतिक दल प्रचार करने में असमर्थ रहे थे।

निर्वाचन–1928 के आम चुनावों में प्रथम बार 1925 के निर्वाचन अधिनियम के प्रयोग के परिणामस्वरूप प्रतिनिधि सदन के मतदाताओं का निर्धारण हुआ, क्योंकि 1889 तथा 1900 के अधिनियमों ने करों के द्वारा न्यूनाधिक रूप में मताधिकार को सीमित किया था। बाद में आर्थिक योग्यताओं को घटा दिये जाने के कारण राष्ट्रीय मतदाता संख्या 1890 में पांच लाख, 1900 में दस लाख, 1619 में 30 लाख तथा 1925 में 120 लाख तक पहुँच गई, तथापि 'जापानियों द्वारा सर्वमताधिकार' के शब्द का प्रयोग गलत था क्योंकि जापान में स्त्रियों को मताधिकार 1945 के निर्वाचन अधिनियम में संशोधन के पश्चात् ही प्राप्त हुआ।[5]

जापान में प्रारम्भिक मनोनयन सम्मेलन नहीं होते थे, परिणामतः दलीय संगठन कर्त्ताओं द्वारा निर्धारित अविकृत उम्मीदवारों का सामना प्रभावहीन स्वतन्त्र उम्मीदवारों द्वारा होता था। जापानी लोग संसदीय व्यवस्था के अन्तर्गत कभी भी सन्तोपजनक जिला-प्रणाली तक नहीं पहुँच पाये। 1925 की विधि अनेक सदस्यों वाली जिला-प्रणाली की व्यवस्था करती थी, जिसमें प्रत्येक जिले में तीन से पाँच सदस्य होते थे। एक जापानी लेखक के अनुसार जापान में चुनावों में उम्मीदवार की सम्भावनाएँ वैसी ही अनिश्चित होती थीं जैसे लाटरी आने की होती है। अवैधानिक तथा भ्रष्ट तरीकों का प्रयोग, सरकार द्वारा उन्मुक रूप से प्रीफेक्ट सरकार व गवर्नरों का प्रयोग तथा स्पष्ट दवाव व हिंसा का प्रयोग, ये सब खुले आम होता था।

दलीय सरकार का उदय—जापान में प्रथम राजनीतिक दलों जिमेवो (उदाल दल) तथा कैशितो (प्रगतिवादी दल) ने 1880 के प्रारम्भ में इतनी हलचल पैदा कर दी थी कि कुलों के प्रमुखों को एक संवैधानिक सरकार का ढांचा स्वीकारने के अस्पष्ट आश्वासन को पूरा करने के लिये वाध्य कर दिया। फिर 1884 में सरकार के कठोर दमन के परिणामस्वरूप दोनों दलों को भंग कर दिया गया; तथापि दलीय परम्परा को पूर्णतः नष्ट नहीं किया जा सका; इसका प्रमाण संविधान के अन्तर्गत प्रथम चुनावों के परिणाम से तथा प्रथम डाइट के संगठन से प्राप्त होता है। 1 जुलाई 1890 के चुनावों के परिणामस्वरूप कैशिनो के 46 सदस्य तथा जिमुलो के 17 सदस्य निर्वाचित हुए। चूंकि

5—आंकड़े, जो एस सी. ए. पी. को मंत्रिमंडल द्वारा अप्रेल 1928 में दिये गए मताधिकार के प्रसार के लिये निरन्तर बढ़ते हुए संघर्ष को स्पष्ट करते है। देखिये एम.एस. क्यूग्ले का दि न्यू जापानीज इलेक्टोरेल लॉ अमेरिकन पॉलिटिकल साइंस रिव्यू 20 वां अंक (1926) पृष्ठ 392–395। चूंकि सरकारी निर्वाचत आंकड़े जापान से बाहर मिलने असम्भव थे, अतः राजनीतिक वैज्ञानिकों को आसाही शिम्बुंशा (आसाही न्यूज कंपनी) नाईमुशो सांख्की पर आधारित, फुसेन सोसेक्यो तैको (जनरल सर्वे ऑफ दि यूनीवर्सल सफारेज जनरल इलेक्शन टोक्यो 1928 को स्वीकारना पड़ा।

किसी भी दल को कार्यकारी बहुमत प्राप्त नहीं हुआ अतः कई प्रकार के विलय हुए तथा सदन में सदस्य इस प्रकार संगठन में कार्य करते थे।

जियुतो	130
कैंशितो	41
तै सेई काई (महान सफलता वाला दल)	79
राष्ट्रीय उदारवादी तटस्थ आदि	52
	302

इस प्रकार 302 में विरोधी दल की सदस्यता 171 थी। यद्यपि इताकी तथा ओकिया दोनों समय-समय पर सरकारी पदों पर नियुक्त होने पर, पद त्याग देते थे, तथापि वे ही दलों के वास्तविक नेता थे। सर्वप्रथम सरकार विरोधी संघर्ष-रत लोगों ने जानबूझ कर संविधान को तोड़ने का तथा उसकी संस्थाओं को नष्ट करने का प्रयास आरम्भ किया।

मूल दलीय पंक्तियों से आश्चर्यजनक सीमावर्ती संगठन भी उत्पन्न हुए तथा बाद में वे मूल समूहों में विलीन हो गए। दोनों ही समूहों में संविधान वाद जो सर्वदा अल्पमत वाले दल का नारा होता था, का नियमित रूप से, दलों ने बहुमत प्राप्त होने उल्लंघन किया। विशेष रूप से यह डाइट के इतिहास के आरम्भिक वर्षों के 1890 से 1898 तक सत्य है जब प्रधानमन्त्री तथा मंत्रिमंडल पर गेनरो का नियन्त्रण था। यह 1898 से 1917 के काल के लिए भी सत्य कहा जा सकता है, जो अर्द्ध-दलीय मंत्रिमंडलों का काल था। 1917 के बाद भी सदन अनौपचारिक तथा ऐसे अस्थिर गुटों में संगठित था, जो सिद्धान्तों तथा कार्यक्रमों के आधार पर संगठित होने के स्थान पर वैयक्तिक नेतृत्व पर आधारित थे। दल अपने नामों के सन्दर्भ के बिना, सरकारी तथा गैर सरकारी दो भागों में विभाजित होते थे। फिर भी आगामी वर्षों तथा अमेरिका-अधिकृत दलों में भी दोनों दलों के पृथक् अस्तित्व को बनाये रखने का प्रयास सफल रहा। अन्ततः त्रियुतो सेयुकाई बन गया, जबकि कैंशिटो की एक शाखा मिनसेटो बन गयी। यहाँ मात्र इतना स्थान है कि इन दो प्रमुख बुर्जुआ दलों के वंश पर आधारित विकास की चर्चा की जा सके।[6]

इस तथ्य के बावजूद भी सरकार विरोधी दबाव, सरकार समर्थकों से अधिक था। यमा गाता का मंत्रिमंडल (दिसम्बर 1889–मई 1791) अपने प्रस्तावों को पारित करवाने में सफल रहा तथा डाइट को विघटित नहीं करना पड़ा, तथापि सरकार के बजट

6—जापानी राजनीति-विज्ञान वेत्ता प्रायः दलों के दो वर्गों—बुर्जुआ तथा सर्वहारा–में अन्तर स्थापित करते हैं। युद्ध से पूर्व के राजनीतिक दल प्रायः महन्त प्रकार के थे। दक्षिणपन्थी व वामपन्थी दोनों दलो को इस वर्ग का समझा जाता था। दोनों दलों के वंशानुगत चार्ट पृष्ठ 357 तथा 415 पर दिये गए है। प्रोफेसर वार्ड की रचना जापानीज मेटीरियल्स पूर्वोक्त दलों पर सामन्ती अनुभाग 20 तथा 21 में पृष्ठ 86–91 है। उसने स्वयं इस काल का अधिकृत अध्ययन-प्रस्तुत किया है। रोबर्ट इवार्य, इलेक्टोरल रिकार्ड ऑफ जापानीज पॉलिटिकल पार्टीज 1928–1933 बर्कये कैली कोनिया (पी. ए. डी. थीसिस) 1948। युताका मातसुमारा, सम्पादक 'पॉलिटिकल हैंडबुक ऑफ जापान टोक्यो', 1948 पृष्ठ 4-19। अधिकरण तक दलीय इतिहास का संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत करता है।

की चतुरतापूर्ण पराजय तथा 'उदारवादी' विधि-निर्माण ने, कुलीनतन्त्र को नवीन प्रतिनिधि सदन की दुखदायी वास्तविकता से परिचित करा दिया। प्रथम अधिवेशन के बाद ही यमागाता ने त्यागपत्र दे दिया तथा सरकार के प्रतिनिधि सदन से अपनी पृथक्ता पर जोर देते हुए, निम्न सदन के दबाव का विरोध करने का प्रथम तरीका अपनाया। प्रधानमन्त्री मदासुक्ता ने (मई 1891 से अगस्त 1892) सदन भंग कर दिया तथा 15 फरवरी 1892 को सदन का विशिष्ट अधिवेशन आमन्त्रित किया। गृह-मन्त्रालय ने स्थानीय गवर्नरों पर अनुचित दबाव डालने, नागरिक अधिकारों को समाप्त करने तथा पुलिस हिंसा को प्रोत्साहित करने के तरीके अपनाये। मतदान के दौरान झगड़ों में 25 व्यक्ति मर गये तथा 388 व्यक्ति घायल हुए। फिर भी कुलों का स्वतन्त्र राज्य नष्ट हो गया। फिर से सरकार विरोधी तत्त्वों को 163 स्थान मिले, जबकि सरकारी समर्थकों को 137 ही मत मिले। तीसरी डाइट के सत्र में विरोधी-पक्ष ने सरकार के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित करने का साहस भी किया, किन्तु सरकार ने त्याग-पत्र देने से इनकार कर दिया। जब बहुमत दलों ने अपना संगठित मोर्चा बना लिया, तो पहले चार सत्रों में संघर्ष की सारी तैयारियाँ हो गईं।

पाँचवें सत्र से (1893-94) दलीय संगठन में फूट दृष्टिगोचर होने लगी। पहला कारण यह था कि राजकुमार इतो जो जापान का सर्वाधिक प्रभावशाली राजनेता था, फिर प्रधानमन्त्री बना (अगस्त 1892 से सितम्बर 1896)। फिर जियतो दल को सरकार ने अपनी ओर आकर्षित कर लिया, क्योंकि इतो ने इतागाकी के साथ कोई समझौता कर लिया था तथा इतागाकी को 1896 में इतो के प्रधानमन्त्रित्व में गृहमन्त्री बनाया गया। डाइट के सातवें, आठवें व नौवें सत्र तक दलीय राजनीति का निषेध माना जाने लगा (क्योंकि चीन जापान युद्ध चल रहा था) अथवा नरम नीति अपनायी (क्योंकि इतो को शांति कालीन बहुमत प्राप्त था)। इस प्रकार जापान की प्रतिनिधि डाइट अपने प्रारम्भिक 6 वर्षों में ही पुराने कुलों (इतो के चोशु) तथा नवीन दलीय राजनीति (इतागाकी की जिम्मेदारी) का मिश्रण बन गयी।

ओकुमा ने चोशु–जियुतो के सम्मिश्रण के विरुद्ध विरोधियों का संगठन बना लिया। उसका नवीन शिम्पोतो दल (प्रगतिवादी दल) 1896 की मार्च में बना। इसके सिद्धान्त पुराने प्रगतिवादियों के थे, साथ ही इसका उद्देश्य कुलीन मन्त्रिमण्डल के साथ दलीय राजनीति के मिश्रण का विरोध करना था। इस प्रकार उदारवादी प्रकटतः परस्पर विरोधी हो गये। किन्तु यह विरोध सिद्धान्तों के आधार पर नहीं था क्योंकि सितम्बर 1896 में जब सतसुमा गेनरो, मतासुक्ता इतो के स्थान पर प्रधानमन्त्री बना तो ओकुमा ने स्वयं विदेशमन्त्री का पदभार संभाल लिया।

समय-समय पर उदारवादियों तथा प्रगतिवादियों को यह महसूस होता रहता था कि कुलीन लोग तथा प्रशासनिक लोग उनके वास्तविक दुश्मन थे। दोनों दलों को पहले सरकार ने अंगीकृत किया तथा 21 जून 1898 को छोड़ दिया, इससे रुष्ट होकर दूसरे दूसरे दिन ही वे टोक्यो के शितोमी थियेटर में मिले, जहाँ उन्होंने अपने पृथक् अस्तित्व को समाप्त कर एक नवीन दल का निर्माण किया, जो केनसेईकाई (अथवा केनसेइटो क दल) कहलाया। उनकी सम्मति के दो मूल विषय प्रशासनिक तन्त्र का विरोध

तथा सरकार का निम्न सदन के प्रति उत्तरदायित्व थे। वास्तविक दलीय सहयोग से क्या स्थिति हो सकती थी, इसका प्रमाण वरिष्ठ राजनेताओं तथा प्रशासकों द्वारा व्यक्त की गई चिन्ता से प्रकट होता है। उन्होंने सम्राट् की उपस्थिति में सम्मिलित होकर बदले की कार्यवाही पर विचार किया। यमागाता ने दृढ़तापूर्वक दलों के गठबन्धन का विरोध करते हुए संविधान को भंग करने की राय दी थी। इतो ने कुछ समय के लिए प्रधानमंत्री पद स्वीकार किया (जनवरी–जून 1898) और फिर त्यागपत्र दे दिया तथा अपनी सम्पूर्ण उपाधियाँ लौटाने का प्रस्ताव किया। किसी भी कुलीन नेता का साहस उस शुगी-इन का सामना करने का नहीं था क्योंकि उसकी सम्पूर्ण सदस्यता के 5/6 अंश पर दलीय संगठन का अधिकार था। अचानक (जून 30, 1898) ओकूमा तथा इतागाकी ने स्वयं को दलीय मन्त्रिमण्डल का मुखिया पाया। ओकूमा प्रधानमन्त्री बना तथा उसने विदेश-विभाग भी लिया, जबकि इतागाकी गृहमन्त्री बना तथा युद्ध व नौ सेना मन्त्रालय को छोड़ कर बाकी सभी मन्त्री-पद दलीय लोगों द्वारा भर गये। किन्तु इस उत्तरदायित्व का धक्का बड़ा भारी सिद्ध हुआ। दल पर नियन्त्रण का नया अनुभव पूर्णतया असफल रहा तथा मन्त्रिमण्डल ने 31 अक्टूबर 1898 को बिना डाइट का सामना किये, त्याग-पत्र दे दिया।

केनसेईकाई अपने ही विघटनकारी तत्त्वों के कारण केन्द्रीय नियन्त्रण-तत्त्वों से पृथक् हो गयी। पदों की नियुक्ति को लेकर आंतरिक संघर्ष हो गये तथा दल के गुटों में इस प्रकार संघर्ष होने लगा, मानों वे स्पष्टतः विभाजित हो गये हों अक्टूबर में उदारवादियों ने दल छोड़ दिया तथा केनसेईकाई पद स्वयं ले लिया तथा प्रतिवादियों ने केनसेईहोतो (वास्तविक संविधान वादी) नाम धारण कर लिया। कुलीन तथा प्रशासनिक वर्ग का शासन फिर से स्थापित हुआ तथा जनरल यमागाता को उदारवादियों का समर्थन प्राप्त हुआ। इसके बदले में उन्हें मन्त्रिमण्डल में एक स्थान प्राप्त हुआ, अन्ततः सरकार से उनका सम्बन्ध विच्छिन्न हो गया।

1900 के सितम्बर में परम्परागत राजनीतिक तरीकों तथा नवीन तरीकों के संयोग को सार्वजनिक मान्यता प्रदान कर दी गयी। उदारवादी राजकुमार इतो की ओर उन्मुख हुए तथा उसके चौशु सहयोगी तथा गेनरो के काउंट इनोकेरो ने रिक्केन सेयुकाई (साहित्यक अर्थो में इसका अर्थ संवैधानिक सरकार के राजनीतिक मित्रों का समान था, संक्षेप में यह सेयुकाई कहलाया) की स्थापना की। इस प्रकार द्वितीय महायुद्ध से पूर्व के जापान में प्रथम प्रमुख राजनीतिक दल का उदय हुआ। इतो का स्पष्ट उद्देश्य अनुदारवादी विशेषता वाली संवैधानिक सरकार था। यह दलीय मंच उतना ही अस्पष्ट था, जितना इसके उदारवादी पूर्ववर्तियों का था, जैसे (1) संविधान का पालन (2) सम्पन्नता (3) विदेशों से सुदृढ़ सम्बन्ध तथा स्थानीय शासन की स्थापना। इसमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटना ओजा की युकिओवा का (जो डाइट के जन्म से उसका सदस्य था तथा दलीय संघर्ष के दौरान उदारवादियों को प्रमुख रहा था) सेयुकाई को लेकर प्रगतिवादी दल से पृथक् होना था।

अपने प्रतिष्ठित तथा 1940 के निरन्तर इतिहास के बावजूद सेयुकाई का सरकार में प्रथम अनुभव आंशिक रहा। इतो मन्त्रिमण्डल पर दक्षिण पक्ष से उच्च सदन का तथा दल के वामपक्ष से दबाव इतना प्रभावशाली था कि इतो का मन्त्रिमण्डल अक्टूबर, 1900

हारा की मृत्यु के पश्चात् सेयुकाई का नेतृत्व हाकाशाही कोरेकियो (नवम्बर 1921 से जून 1922 तक प्रधानमन्त्री) के हाथों चला गया। हाकाशाही चूंकि उदार सिद्धान्तों वाला था, अतः उसे अपने दल पर नियन्त्रण बनाये रखने में कठिनाई हुई तथा वह मात्र सात माह पश्चात् अपने पद से मुक्त हो गया। पुराने अति आनुभाविक मंत्रिमंडल (इस बार पिअर्स की) को दोहराया गया। यह दो वर्ष तक प्रभावशाली रहा। फरवरी 1624 को डाइट को भंग कर दिया गया, किमोरा (नौकरशाही) मंत्रिमंडल ने कुछ समय के लिए तानाशाही के नेतृत्व में सेमुकाई तथा काटो के नेतृत्व में निसिकाई को तथा इनुकाई तथा ओजादी के नेतृत्व में सुधारवादी दल को संगठित किया। 24 मई को सरकारी विरोधी तत्त्वों ने अन्ततः जापान में कुलीन शासन पर अन्तिम वार कर दिया। वाईकाउंट कावो के नेतृत्व में नवीन संविद सरकार ने (24 जून से 25 अगस्त) दीर्घ संघर्ष के पश्चात् सर्वव्यापी पुरुष मताधिकार प्रदान किया। शीघ्र ही यह संविद सरकार भी समाप्त हो गई। सेमुकाई ने अपनी अध्यक्षता बैरन जनरल तनाका गिची को प्रस्तावित की (तनाका स्मृति ख्याति वाला) जिसने इसे स्वीकार करने के लिये सैनिक जीवन छोड़ दिया तथा दृढ़ उदारवादी नेता को भी दल में सम्मिलित कर लिया। इस प्रकार एक महीने के अन्दर सर्वाधिक अविश्वसनीय गठबन्धन (पश्चिमी दृष्टिकोण से) एक कठोर सैन्यवादी प्रतिक्रियावादी तथा संघर्षरत उदारवादियों के मध्य हुआ और वे एक ही रहस्यवादी दल के अंग बन गये। 1927 की अप्रेल में तमाका प्रधानमन्त्री बन गया।

इसके बदले में प्रगतिवादी दल ने सेईमुकाई से पृथक् होने वाले 90 सदस्यों को आकर्षित किया, जिसे उन्होंने केनसेईकाई से मिलाया तथा मिनेऐइटो (लोकप्रिय सरकार का दल) का संगठन किया। यह जापान का, द्वितीय महायुद्ध से पहले का, दूसरा दल था। यह नवीन समूह हमागुची (अथवा हमागुची युको जिसे प्रवसर 'शरे' भी कहा जाता था) के नेतृत्व में संगठित हुआ, जो एक प्रशासनिक अधिकारी था तथा अत्यधिक दृढ़ इच्छा-शक्ति वाला था। 1927 तक मिनसेइटो के सदन में 227 सदस्य हो चुके थे, यह सदस्य-संख्या बहुमत के लगभग थी। इसकी विचारधारा संक्षिप्त तथा अस्पष्ट थी, जैसे डाइड के जनमत का अधिक स्पष्ट प्रतिनिधित्व, आय के वितरण का साम्यीकरण, जातीय एकता आदि विचारधाराएँ। तनाका की विदेशनीति का प्रयोग करते हुए विशेष रूप से चीन के साथ सम्बन्धों तथा पेरिस पैक्ट को विवाद का विषय बनाया गया। परिणामतः मिनसेइतो से अन्ततः तनाका का पतन हुआ तथा बाद में 1929 में सेमुकाई का पतन हुआ तथा 'शरे' ने जनरल का स्थान ले लिया।

1930-31 में राजनीतिक सहमति का क्षणिक काल भी आया। हमागुची तथा उसका विदेश मन्त्री शिहदेरा किजुरो (जो दौरान प्रधानमत्री बना) हनाका के समान ही देश भक्त थे। हनाका की चीन के प्रति 'सकारात्मक नीति' के प्रति लोकप्रिय प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप शिदेहरा की समझौतावादी नीति को स्वाभाविक रूप से समर्थन प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त मित्सुबिशी के हितों की प्रमुखता, जिसने मितसुई बैंकों के साम्राज्यवादी तथा स्वयं पूरित हितों का स्थान ग्रहण किया था, विश्व पूंजीवाद की यूरोपियन अवधारणा के अधिक निकट थी। यद्यपि अधिकांश जनता उदारवादी थी तथा अनेक व्यावसायिक लोग इस मंत्रिमंडल का समर्थन करते थे, तथापि इससे घृणा करने वालों की संख्या भी पर्याप्त थी। लन्दन नसिक समझौता, जिसका नवीन युवा सैनिक वर्ग

तथा पिअर्स सभा विरोध करते थे, पर हस्ताक्षर से इसका पतन प्रारम्भ हुआ। दलीय सरकार को दूसरा विनाशकारी धक्का नवम्बर 1930 में लगा, जब किसी सनकी ने हेमागूची को गोली मार दी। अप्रेल 1931 में शेर मर गया। सितम्बर की मुकदन घटना ने सैनिक गुट को स्वर्ण अवसर प्रदान किया। उसके पश्चात् से दलीय सरकारों ने मात्र सैनिक शक्ति को संवैधानिक आवरण देने का प्रयास किया। 1631 के दिसम्बर में सेईमुकाई के अध्यक्ष इनुकाई त्सुमोशी को दलीय नेतृत्व ग्रहण करने का अवसर दिया गया। 15 मई 1932 को प्रधानमंत्री इनुकाई का वध युवा अधिकारियों द्वारा कर दिया गया। दलीय नेतृत्व व्यावहारिक तथा सैद्धान्तिक स्तर पर समाप्त हो गया था। यह एक युग की समाप्ति थी।[8]

सर्वहारा दल

जिस काल में दलों की शक्ति एकाएक बढ़ी तथा समाप्त हुई, जापान के राजनीतिक विकास में एक पर्याप्त महत्वपूर्ण अन्य प्रवृत्ति उदय हुई। यद्यपि तथाकथित सर्वहारा दलों का जीवनकाल अपेक्षाकृत और भी अधिक संक्षिप्त था, तो भी जापान की राजनीति के विरोधी वातावरण में उनका अस्तित्व मात्र महत्वपूर्ण था। विशेषतया बाद में जिस प्रकार उनका प्रयोग किया गया (इस प्रकार के दलों की उत्पत्ति, चार्ट 18 में बताई गई है)।

1882 ही जिम्तो का वामपक्ष बौद्धिक दृष्टि से समाजवाद की ओर आकर्षित हो गया था। 1901 तक समाजवादी प्रजातन्त्र दल (शिकाई मिनउतो) का जन्म हुआ, किन्तु उसी दिन सरकार द्वारा उसे समाप्त कर दिया गया। इसके नेताओं में कोतोकू शुशी (जिसे 1911 में मृत्यु दण्ड दिया गया), कात्यामा सेन (जिसकी बाद में मास्को में मृत्यु हुई) तथा ऐबा इसू (एकमात्र जीवित) थे। सामाजिक प्रजातन्त्रवादी दल की विचारधारा कम्यूनिस्ट मेनीफेस्टो पर आधारित थी। अपने दल के दमन के पश्चात् समाजवादियों ने अपने विचारों का सक्रिय प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया तथा उन्हें बहुत से उन सामाजिक सुधारकों का समर्थन प्राप्त हुआ, जो सरकार के दमन के कारण समाजवादी दल में आ गए थे।

1905 में पोर्ट्समाउथ की सन्धि ने समाजवादियों की इस घोषणा की, कि युद्ध कभी भी जन सामान्य के लिये भला नहीं होता है पुष्टि की। किन्तु इस घटना में समाजवादियों में विवाद उत्पन्न कर दिया। यद्यपि सी ओनजी ने निहोन शैकेसो जापानी (समाजवादी दल के) के 1905 में पुनर्गठन की आज्ञा दे दी थी किन्तु इस दल के सदस्य दो गुटों सिद्धान्तवादी तथा 'प्रत्यक्ष कार्य करने वाले' में विभाजित हो गए। यह समस्या तब अधिक हो गई जब 1907 की फरवरी में 60 सदस्यों ने टोक्यो में जापानी समाजवादी दल का द्वितीय अधिवेशन बुलाया। तब तक सरकार ने समाजवादी दल को 1907 में

8—जापान के प्रारम्भिक तथा द्वितीय स्रोतों पर आधारित इस अध्ययन में रॉबर्टस स्केल पिनो ने मेयजी काल से 1940 तक प्रजातन्त्रीय गठन के समाजशास्त्र की विवेचना की है। जापान पर आधुनिक औद्योगिक 'पूंजीवाद के प्रभावों की चर्चा करते हुए कहा है कि युद्धपूर्व जापान में प्रजातन्त्र की असफलता में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक उसका समय था। देखिये "डेमोक्रेसी एण्ड दि पार्टी मूवमेंट, इन प्रिवी वार जापान, दी फेल्योर ऑफ दि फर्स्ट एटैम्प्ट," बर्कले, 1953।

विघटित कर सम्पूर्ण समस्या को समाप्त कर दिया।[9] इसके बाद समाजवादी लोग को पुनर्जीवित करने के दो अन्य प्रयास (1920) में श्रमिकों की सहायता से तथा 1925 में कृषक-मजदूर-पार्टी के रूप में संगठित करने के हुए किन्तु दोनों ही बार सरकार ने शीघ्र ही उन्हें विघटित कर दिया।

शाकाई मिनशुतो (1901)

उसी दिन विघटित किया गया

समाजवादी लीग (1920)

को शीघ्र ही विघटित किया गया

नोमिन रोदोतो (1925)

शीघ्र विघटित किया गया

रोदोतो-नोमितो (1926)

रोदो नोमितो (1926-28)

शाकाई मिनशुतो (1926)

रोनोतो (1926)

नोमितो (1926)

रोनो तैईशोतो (1928)

तैईशुतो (1928)

शिनरोनोतोतो (1929)

जैनकोकुमिनशुतो (1930)

जैनकोकु तैइशुतो (1930)

जैनकोकु-रोनोताईशुतो (1931)

कोकुमिन-निहोंतो (1931)

शाकाई [illegible]शुतो (1931)

1940 में विघटित

9—हाइमन कुबलिन 'दि जापानीज सोश्यलिस्ट मूवमेंट इन दि मेयजी एरा' (1869-1912)। अमेरिकी इतिहास परिषद् के सम्मुख पढ़ा गया अप्रकाशित लेख, शिकागो, 29 दिसम्बर, 1950 इस युग पर देखिये, दि जापानीज सोश्यलिस्ट्स एण्ड दि रूसो जापानीज वार" दि जनरल ऑफ मॉडर्न हिस्ट्री, 22 अंक संख्या 4 (दिसम्बर 1950) पृष्ठ 323-339।

जापान के श्रमिक दल

1925 में पुरुष सर्वमताधिकार के पारित होने से पहले सर्वहारा वर्ग दलों के अवसर बहुत कम थे, यद्यपि श्रमिकों को सामान्य संगठन मूलतः मुश्राई काई, बाद में रोडो सो डो पेई) श्रमिकों के हितों को बढ़ाने में सफल हुआ। 1925 में एक साथ चार दलों का उदय हुआ। 1925 में एक साथ चार दलों का उदय हुआ—

1. रोडो नोमितो (श्रमिक कृपक दल) ओसका 5 मार्च ओयामा इकोपू के नतृत्व में (जो 1932 में अमेरिका भाग गया तथा दिसम्बर 1947 में जापान लौट आया)
2. निहोन नो मितो (जापानी कृपक दल) टोक्यो तथा ओसाका अक्टूबर 17, सुग्यिाया यो तोजिये के नेतृत्व में।
3. शाकाई मिनशुतो (समाजवादी प्रजातन्त्रीय दल) टोक्यो, दिसम्बर, एवे इसू के नेतृत्व में।
4. निहोन-रोनोतो (जापानी-श्रमिक-कृपक दल) टोक्यो 9 दिसम्बर, एसो हिसाही को नेतृत्व में।

1828 में सर्वमताधिकार के अन्तर्गत किये प्रथम आम निर्वाचन में ये दल डाइट आठ सदस्यो को (चार एवे के नेतृत्व में समाजवादी) भेजने में सफल हुए, किन्तु 1932 से उनके मत 492,221 से गिरकर 299,979 हो गये, जब उनको पाँच स्थान डाइट में मिले।

5 जुलाई 1631 को जेनकोकू रोनो तैशुतो (राष्ट्रीय श्रमिक कृपक-जनता-दल) समाजवादी प्रजातन्त्रवादी, कृपक-श्रमिक दल तथा अन्य वामपक्षी दलों के विलय के परिणामस्वरूप बन गया। 24 जुलाई, 1931 में इस दल ने प्रजातन्त्रीय समाजवादी दल से मिल कर नवीन शाकाई ने शुतो (समाजवादी जनता दल) का संगठन किया, इसकी केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति का सभापति एवे इसू बना तथा ऐसा मुख्य सचिव बना।

अन्ततः वामपक्षी आंदोलन भटकने वाले राजनीतिक दबाव हो गए। धीरे-धीरे इनके सदस्य उन सैन्यवादियों के आधिपत्य में चले गए; जिन्होंने कार्य तथा सुधार के लिये अधिक दृढ़ अपील की। द्वितीय महायुद्ध में सर्वहारा आंदोलन पूर्णतः समाप्त हो गया।

अध्याय 19

आधुनिक सैन्यवादी जापान

20 वीं शताब्दी की सीमाओं में ही किसी भी प्रमुख राष्ट्र-राज्य के बीच में सैन्यवादी की प्रघटना को स्पष्ट करना संभव नहीं है। हम अपरिचित जो हाल ही में महायुद्ध के संकट से उबरे हैं, युद्ध द्वारा हमारी राष्ट्रीय सत्ता से संबंधित योगदान को समझने में कठिनाई अनुभव कर सकते हैं। यह स्पष्ट है कि 20 वीं शताब्दी के मध्य तक हमारी अर्थव्यवस्था प्रमुख रूप से सुरक्षा प्रधान अर्थव्यवस्था हो गई है तथा आधुनिक विश्व के किसी भी बड़े राष्ट्र के समान हम लोग भी अपनी संपन्नता व सुरक्षा को हमारी दीर्घकालीन सुरक्षा व्यवस्थाओं से जुड़ा हुआ महसूस करते हैं। अमेरिकी सैन्यवाद की कहानी अभी प्रारम्भ ही हुई है तथा अभी इस संदर्भ में अपने विचार व्यक्त करना मूर्खता होगी कि इस व्यापक तथा व्यय-साध्य अस्त्र-शस्त्रों का हमारी अर्थ व्यवस्था पर दीर्घकालीन प्रभाव क्या होगा, हमारी सामाजिक आदतों में सर्वव्यापी सैनिक प्रशिक्षण का विकास, हमारे मनोविज्ञान पर निरन्तर अन्तर्राष्ट्रीय संकटों का दबाव तथा इन सब कारणों का हमारे साहित्य तथा विचार करने के तरीकों पर सामूहिक प्रभाव क्या होगा।

1950 में कोरिया-युद्ध जापान तथा अमेरिका के मध्य बदलती हुई अन्तर्राष्ट्रीय भूमिका का निर्धारण करने वाली घटना है। उन अमेरिकी लोगों ने जो द्वितीय महायुद्ध में सुदूरपूर्व में जापान के सैन्यवाद को पूर्णतः समाप्त कर देने की दृढ़ता से बड़े थे, कोरिया संकट में स्वयं को संकटपूर्ण स्थिति में पाया। इस स्थिति से उबरने के लिये अमेरिका को इतने व्यापक स्तर पर अमेरिकी शस्त्रास्त्रों तथा सेना का प्रयोग करना पड़ा, जितना इससे पहले कभी नहीं किया था। 1945 से 50 के वर्ष जापान की शक्ति व राजनीतिक स्थिति शांतिपूर्ण काल था। पाच वर्ष तक जापान की सुरक्षा पर कोई ध्यान नहीं दिया गया था जब तक कि कोरिया साम्यवादी युद्ध प्रारम्भ नहीं हुआ था। किन्तु जैसे ही उत्तरी कोरिया की सेना आगे बढ़ी, एक बार फिर जापान की सुरक्षा अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की आवश्यकता बन गई तथा इस बार जापान की रक्षा जापानियों को नहीं अमेरिकियों को करनी थी। हम अमेरिकियों ने जापान में सैन्यवादियों को सफाया इतनी पूर्णता से किया था कि जापानियों को सैन्यवादियों की आवश्यकता पड़ी तो हमें उस भूमिका को निभाना पड़ा।

सुरक्षा तथा सैन्यवाद

संपूर्ण तर्क इस प्रकार से दिया जा सकता है कि मात्र शस्त्रों का होना सैन्यवाद का निर्माण नहीं करता है, जैसे स्वीडन तथा स्विटजरलैंड ऐसे शस्त्रास्त्रों वाले देश कहे जा सकते

हैं जो सैन्यवादी नहीं हैं–कि एक सशस्त्र प्रजातन्त्र, सैन्यवाद के संस्थागत अथवा सांस्कृतिक के बिना भी सैन्य शक्ति का प्रयोग कर सकता है।

यदि हमें आधुनिक जापान सैनिक स्थापना को समझना है तो हमें इस विरोध को स्वीकार करना होगा। यह तर्क स्पष्ट हो जाता है, यदि हम सैन्यवाद की परिभाषा इस प्रकार दें—

"ऐसे राष्ट्र को सैन्यवादी कहा जा सकता है, जिसके राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक तथा धार्मिक जीवन में सैनिक कारक, अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा तथा संपूर्ण राष्ट्रीय संस्कृति में गत्यात्मक कारकों की आवश्यकता से कहीं अधिक महत्वपूर्ण बन जाएँ।"

इस अर्थ में 1920 के अमेरिका को सैन्यवादी राज्य किसी भी अर्थ में नहीं कहा सकता है, चाहे उसे अत्यधिक उदार ढंग का उग्रवाद ही क्यों न कहा जाए। अमेरिका की सेना 20,000 से कम थी। नौ सेना पर संपूर्ण राष्ट्रीय आय का बहुत कम अंश व्यय किया जाता था। इसके विपरीत यदि 1950 में सोवियत यूनियन रूपी संकट पूर्णतः समाप्त हो जाए तो सभी प्रकार के वाह्य खतरों की समाप्ति के परिणाम स्वरूप अमेरिका की संपन्न सुरक्षा प्रधान अर्थव्यवस्था पर उसका विनाशकारी प्रभाव पड़े। 1950 से अमेरिका में राष्ट्रीय आय का महत्वपूर्ण अंश सुरक्षा व्यवस्था में व्यय किया जाता है। राष्ट्रीय बजट का अधिकांश भाग या तो भूतकालीन युद्धों के लिए या भविष्य में होने वाले युद्धों की तैयारी के लिये व्यय किया जाता है। इस प्रकार अमेरिकी जनता की यह स्थिति है कि उन्हें युद्ध, जो भयानक तथा दुखदायी होता है, से प्रेरणा मिलती है, क्योंकि वही उन्हें जीवन में अच्छी वस्तुओं का आश्वासन दे सकता है। इस बात का समाधान करना पूर्णतः समस्या प्रधान है कि 1950 अथवा 60 वर्षों में यदि संपूर्ण विश्व के राष्ट्र शांति से प्रभावित हो गए, तो अमेरिकी किस प्रकार विसैन्यीकृत अर्थव्यवस्था को लौट पायेंगे।

सैन्यवाद का उद्देश्यपूर्ण अथवा राष्ट्रीय जीवन के लिये स्पष्टतः योगदान देने वाला होना आवश्यक नहीं है। यदि स्विटजरलैंड के लोग निःशस्त्र हो जाए तो उनकी राजनीतिक व्यवस्था प्रभावित नहीं होगी तथा उनकी आर्थिक व्यवस्था भी उसी प्रकार बनी रहेगी। इनके विपरीत यह आधुनिक युग के जापान तथा आज के अमेरिका की दुखांतिका है कि राष्ट्रीय संस्कृति में से सैनिक दबावों के समाप्त होते ही विकेन्द्रीकरण, आंशिक विनाश तथा संकट की स्थिति उत्पन्न हो जाएगी।

यह बड़ी भारी विडम्बना है कि जर्मनी इटली तथा जापान के राष्ट्रीय जीवन में सैन्यवाद के प्रति अमेरिकियों की अरुचि के पश्चात् अमेरिकी नेताओं ने अपने राष्ट्रीय जीवन में सैन्यवाद को शक्तिशाली दबाव के रूप में उभरने में सहायता दी।

सैन्यवाद का निश्चित सिद्धान्त दैनिक आवश्यकताओं की ऐतिहासिकता के आधार पर वह नहीं बता सकता है कि कौन से कारक राज्यों को अपनी संस्कृति के सैनिक प । पर अधिक निर्भर कैसे बना देते है। जापानी सैन्यवाद का खंडन बाह्य रूप से ही करके उसे नहीं समझा जा सकता है। जिस सैन्यवाद का अंत द्वितीय महायुद्ध के बाद दुखदायी परिस्थितियों में हुआ, उसकी प्रारम्भिक परिस्थियां उन परिस्थितियों से अधिक भिन्न नहीं थी जो 1900 के पश्चात् दिन प्रतिदिन की राजनीति के कारण अमेरिका पर थोपी गई

है। आधुनिक जापानी अपनी चारित्रिक गुण के कारण सैन्यवादी नहीं बने अपितु उसकी घरेलू आवश्यकताओं तथा अन्तर्राष्ट्रीय अवसरों ने उसे सैन्यवादी बना दिया।

आधुनिक जापान के युद्ध के प्रतिमान

जब 1853 में टोक्यो की खाड़ी में कोमोडोरमेथ्यू केल्ब्रेथ पेरी की छोटी सी सैन्य टुकड़ी उतरी, तब जापानियों ने आधुनिक पश्चिमी संस्कृति की शक्ति के प्रमाणों का सर्वप्रथम अनुभव किया। जापान के दो सौ वर्षों से भी अधिक पृथक्कीकरण के काल में विश्व में बहुत कुछ हो चुका था वह क्या था।

सैनिक राज्य के साथ साथ औद्योगिक राज्य का उदय हो चुका था तथा राष्ट्रीय सरकार अनिवार्य रूप से भर्ती की गई सेना तथा भाप से चलने वाली जल-सेना दोनों का समर्थन करती थी।

अनिवार्य रूप से भर्ती की गई सेना तथा विशाल नौ सेना ने स्थान तथा समय के परस्पर संबंध को संपूर्ण विश्व में परिवर्तित कर दिया था। तोकूगावा जापान जब निद्रामग्न हुआ, तब पर्याप्त सुदृढ़ था किन्तु जब जागा तो उसने स्वयं को अत्यधिक दुर्बल पाया। निकटवर्ती चीन के अनुभव ने जापान को यह स्पष्ट कर दिया कि परम्परागत अस्त्रों से सशस्त्र पश्चिमी आधुनिक सेनाओं का सामना करने पर क्या दुर्गति होती है।[1]

आधुनिक जापान के युद्ध के प्रतिमान को इस समीकरण में सम्मिलित नहीं किया जा सकता है कि प्रतिक्रिया सैन्यवाद के समान तथा सैन्यवाद प्रतिक्रिया के समान है। 1871–73 में भी कुलीन सरकार के विरुद्ध उदारवादी सरकार ने ही कोरिया के विरुद्ध सैनिक कार्यवाही का आह्वान किया था।

इसी प्रकार 1890 जापान की सशस्त्र विस्तार की नीति का समर्थन उदारवादियों ने भी उतना ही किया था, जितना सैनिक कमांडरों ने किया था। जापान के सैनिकों ने युद्ध की सम्भावना घोषित की थी, किन्तु उसे उकसाने के लिये कुछ नहीं किया था। वह उल्लेखनीय है। कि 1894–95 में चीन जापान युद्ध के परिणामस्वरूप पेयजी संविधान का उद्घाटन हुआ। प्रथम आधुनिक युद्ध जापान के आधुनिकीकरण की सर्वोत्कृष्ट अभिव्यक्ति थी यह तीस वर्ष के निरन्तर कठोर परिश्रम पर उन कारकों के दबाव का परिणाम था, जिसने राष्ट्रराज्य को उल्लेखनीय रूप से आधुनिक बना दिया।

चीन जापान युद्ध की घटना ने विश्व को आश्चर्यचकित कर दिया। चीनी तथा जापानी दोनों ने आधुनिक थल सेनाओं का प्रयोग किया था, दोनों ने नौ सेना युद्ध के लिये कुछ वाष्पवाही जहाज भी खरीदे थे तथा दोनों ही देशों में सैनिक तथा नौ सेना शक्ति को आधुनिकीकृत करने के तरीकों की चर्चा उठी थी किन्तु जब परीक्षण का समय आया तो जापान का आधुनिकीकरण पूर्ण तथा प्रभावशाली सिद्ध हुआ जबकि चीन का विकास भ्रम अथवा कल्पना सिद्ध हुआ। चीनी वाष्पवाही जहाजों की पराजय निश्चित

1—यहाँ आधुनिक जापान की कूटनीति तथा युद्ध का इतिहास लिखना आवश्यक नहीं है, क्योंकि इस विषय पर काफी लिखा गया है। आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में सुदूरपूर्व पर सर्वोत्तम सर्वेक्षण हैरोल्ड एम विनाके की रचनाएँ हिस्ट्री ऑफ दि फारईस्टन इन माडर्न टाइम्स न्यूयार्क, 1950 (पाँचवा संस्करण विशेष रूप से जापान का अध्याय। इस अध्याय में युद्ध को जापानी राजनीति पर प्रभाव को ज्यादा महत्व दिया जाएगा।

थी, क्योंकि उनके पास न तो सैनिक कर्मचारी थे और न पदाधिकारी थे, जो आधुनिक सुरक्षा एवं अस्त्रों का संचालन कर पाते। चिंग राजवंशी चीन उन्हें खरीद सकता था। किन्तु उनका संचालन नहीं कर सकता था।

1895 के अप्रैल में चीनियों ने शांति की प्रार्थना की तथा उसके पश्चात् कूटनीतिक मुद्दों में वह हेराफेरी हुई, जिसे अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में सर्वाधिक चतुरता से की गई डकैती कहा जा सकता है। क्योंकि मंचू चीन पर विजय प्राप्त कर जापान ने जिन मंचूरिया के अड्डों पर अधिकार किया था जर्मनी फ्रांस तथा रूस ने उन्हें जापान को नहीं लेने दिया तथा उन्हें वापस चीन को देने के लिये दबाव डाला। उसके बाद जापान मजबूर हो कर यह देखता रह गया कि जिन अड्डो को उसे छोड़ना पड़ा था, उन्हें रूस ने चीन से किस प्रकार ले लिया।

चीनी जापानी युद्ध के व्यापक राजनीतिक व संस्थागत परिणाम हुए थे। वाह्य रूप से इसने चीन को भयंकर धक्का पहुँचाया तथा संपूर्ण एशिया को स्तब्ध कर दिया। एक एशियाई देश इतना आधुनिक हो गया था कि वह पश्चिमी अस्त्र-शस्त्रों से लड़ सकता था। आन्तरिक रूप से जापानी लोगों ने उस मान्यता को नम्रतापूर्वक स्वीकार किया, जो सैनिक शक्ति का प्रदर्शन करने के परिणाम स्वरूप उनको दर्शायी गयी। विदेशी शक्तियों ने जापान में अपने विशिष्ट अधिकारों का परित्याग करने का विचार प्रारम्भ किया तथा जापानियों को यह आशा होने लगी कि वह उन विदेशियों के भार से मुक्त हो जावेंगे जो जापानी भूमि पर विशिष्ट विदेशी क्षेत्राधिकार में रहते थे। चीनियों द्वारा 23 करोड़ तायक्त की क्षतिपूर्ति (1150 लाख डालर) ने जापान को स्वर्ण-मुद्रा का आधार प्रदान किया। जापान पश्चिमी राज्यों के मंडल का पूर्ण सदस्य बन गया। 1900 में बक्सर की घटना में जापान की सेनाएं एशिया में एकमात्र ऐसी सेनाएं थी जिन्हें सभ्य राष्ट्रों की सेना में सम्मिलित होने के लिये कहा गया। जापान द्वारा फारमोसा पर अधिकार ने अंततः जापान की विस्तारवादी औपनिवेशिक नीति की दिशा निर्धारित की। अंततः 1902 में आंग्ल-जापानी संधि से जापानियों को यह अनुभव हुआ की न केवल महान् राष्ट्रों के परिवार में उनका सम्मान किया जाता है अपितु एक महान् शक्ति की उनकी आवश्यकता भी है।

रूसी साम्यवाद तथा जापानी साम्यवाद—

1900 वर्ष के प्रारम्भ में मंचूरिया पर जापान व रूस के मध्य की प्रतियोगिता उसी प्रकार थी, जैसी लगभग आधी शताब्दी के बाद संपूर्ण विश्व के लिये रूस तथा अमेरिका के मध्य विचित्र ढंग की प्रारम्भ हुई है। रूस ने उन हितों की पूर्ति के लिये जिन्हें वह उचित समझता था, जार के नेतृत्व में उसी अपरिष्कृत, दोहरे तथा विश्वास-घाती व्यवहार का प्रदर्शन किया, जो 50 वर्ष बाद उसने अमेरिका के प्रति दोहराया। उदाहरण के लिये रूस की सशस्त्र सेनाएं मंचूरिया में चीन द्वारा अपवित्र युद्ध की समाप्त करने के लिए तथा अन्य राष्ट्रों की सेनाओं के साथ चीन का दमन करने के लिये वहां गई, किन्तु एक बार वहां जाने के पश्चात् उन्होंने वापिस आने से इन्कार कर दिया।

चीन-जापानी युद्ध के समान रूसी जापानी युद्ध (1904–05) भी जापान की आंतरिक राजनीति का परिणाम था। सैन्यवादी कमी भी तीन शक्तियों के हस्तक्षेप को

नहीं भूल पाए थे तथा उन्हें विश्वास हो गया था कि पूर्वी क्षेत्र में उनकी स्थिति शक्ति के आधार पर ही सुरक्षित रह सकती थी। वह युद्ध भी प्रथम दृष्टि में वाकिसन के समान ही प्रतीत होता है। हल्का फुल्का जापान पर्याप्त चुस्त था, जबकि भारी भरकम रूस उदार था। शिमोनोसेकी की संधि के तुरन्त पश्चात् जापान ने अपनी जलसेना पर ध्यान केन्द्रित किया तथा उसने पहले युद्ध से अवशिष्ट धनराशि को दूसरे युद्ध के लिए प्रयुक्त किया। थल-सेना की भी उपेक्षा नहीं की गयी तथा सात डिवीजनों को बढ़ा कर तेरह कर दिया गया।

युद्ध का अंतिम चरण वस्तुतः पोर्टसमाउथ में कूटनीति वक्ताओं के स्तर पर लड़ा गया, जहां अमेरिका के राष्ट्रपति थियोडर रुजवेल्ट ने 'मध्यस्थता' की। पोर्ट्समाउथ संधि[2] के संदर्भ में जापानी निराशा के बावजूद रूसी-जापान युद्ध के, पूर्वी एशिया में जापान के एकाधिपत्य को बढ़ाया। अंततः इस महाद्वीप पर उसकी महत्ता स्थापित हो गयी थी तथा एक बार फिर 1905 में शक्तिशाली ब्रिटेन ने 'कोरिया' में जापान के सर्वोत्कृष्ट राजनीतिक सैनिक तथा आर्थिक हितों को स्वीकार किया तथा अगले वर्ष की गयी परस्पर सहायता संधि आगामी युद्ध में महत्वपूर्ण सिद्ध हुई।

1910 की संयुक्त करने वाली संधि के साथ कोरिया जापानी साम्राज्य में मिलने वाला अद्वितीय हीरा था। इस प्रकार अंततः विदेयोशी का स्वप्न साकार हुआ। सामान्य भाषा में अगर कहा जाए तो जापान द्वारा कोरिया के अधिग्रहण ने 1945 तक कोरिया के अन्तर्राष्ट्रीय जीवन को समाप्त कर दिया तथा जापान के दृष्टिकोण से इसने उस प्रदेश में संकटपूर्ण बाह्य हस्तक्षेप की संभावना को समाप्त कर दिया तथा निश्चय ही इसने प्रशासक वर्ग के 11 अधिक पदों की रचना की।[3] 1920 की बाद की दशाब्दी के अंत तक कोरिया का 90 प्रतिशत व्यापार जापान के साथ होने लगा था।

मंचूरिया जापान के लिए विशेषरूप से सैन्यवादियों के लिये अत्यधिक महत्वपूर्ण हो गया। तकनीकी भाषा में जापान ने चीनी स्वीकृति से रूस से क्वांगतुग प्रान्त में कुछ प्रदेश पट्टेदारी (सोएकुची) पर प्राप्त किये थे। पट्टे पर प्राप्त यह भूमि 1,300 वर्गमील थी तथा इसकी जनसंख्या 80,000 थी तथापि क्वांगतुग पुलिस का क्षेत्राधिकार संपूर्ण दक्षिणी मंचूरिया रेलवे पर था, जो इसमें 100 वर्गमील आता का प्रदेश तथा 3,00,000 लोगों को सम्मिलित करता था। जिनमें से ३/४ चीनी थे। जापानी गर्वनर का जो समुद्र पार मामलों के मंत्री के प्रति उत्तरदायी होता था, क्वांगतुगकी सेना के कमांडर (कांतोगन)

2—जापान का दृष्टिकोण रांय एच अकागी की रचना जापान्स फोरेनरिलेशन्स 1942–1936, टोक्यो 1936 तथा अधिक विद्वतापूर्ण कार्य के लिए कानीची असाकावा की रचना 'दि रूसो जापानीज पॉलिटिक्स कन्फिलक्ट, इट्स कॉलेज एण्ड इश्यून, वोस्टन, 1904।

3—1929 में समुद्र पार क्षेत्रों का मन्त्रालय का निर्माण कर जापानी सरकार ने हैवान तथा चोजन का विशिष्ट स्तर स्वीकार किया। प्रशासन की दृष्टि से वे ब्रिटेन के उपनिवेशों से मिलते थे। राजनीतिक विकास की दृष्टि से वे जापान के प्रीफेक्चरल व्यवस्था से मिलते थे। चोजन की सरकार का अध्यक्ष गर्वनर होता था (शिनिन पद का जिस पर प्रायः सेवारत अथवा अवकाश प्राप्त जनरल की नियुक्ति होती थी) प्रारम्भिक प्रशासन के बारे में जापानी दृष्टिकोण के लिए देखिये वाईकाउंट यसातक निरोधी रिफार्म एंड प्रोग्रेस इन कोरिया एनुस हैमिल्स तथा दृष्टि एच आरिटन, कोरिया इट्स हिस्ट्री, इट्स पीपल, एंड इट्स कॉमर्स, बोस्टन, 1910, अध्याय सत्रह से छब्बीस।

पर कोई नियन्त्रण नहीं होता था, क्योंकि वह प्रत्यक्षतः जापान की सेना के तीन उच्च-पदाधिकारियों में से एक होता था। क्वांगतुग में जापानी प्रशासन के समानान्तर दक्षिणी मंचूरिया की रेलवे कम्पनी (एस. एम. आर मिनामी मांशु तेत्सुदो के) थी, यह जापान द्वारा विदेशों को निर्यात की गई विशिष्ट अर्द्ध निजी, अर्द्ध सरकारी जेवात्सु तकनीक थी। एक अर्थों में एस. एम. आर. जापानी सरकार की ऐजेंसी थी। आधे स्टॉक शेयरों पर सरकार का नियन्त्रण था, जिसका मूल्य 4,400 लाख येन था तथा उसका नियन्त्रण निदेशकों द्वारा नियन्त्रित स्टॉक के विभिन्न भागों पर था। ये निदेशक सरकार द्वारा नियुक्त किये जाते थे। दूसरी ओर एस. एम. आर. (द. म. रेल्वे) विश्व का महानतम संगठन बन गया। इसका नियन्त्रण 700 मील लम्बे रेलवे मार्ग पर था, इसके द्वारा स्कूल बनाये व चलाये जाते थे, शोध कार्य किये जाते थे तथा इसकी व्यापक खनिज सम्पदा (फुशन तथा तेनताई) थी, इसने एक बन्दरगाह (डेरन में) में सुधार किया तथा यह विद्युत-चालित शक्ति-योजनाओं का संचालन करती थी। ये देरन, मुकदन चांगचुन तथा अंतुग में थी। अंततः इन सब गतिविधियों ने मंचुरिया की सम्पन्नता को बढ़ाया तथा परिणाम स्वरूप जापान के लिए इसके मूल्य में वृद्धि हुई। इस कम्पनी की नितियाँ तथा लाभ जापानी सरकार की नितियाँ व लाभ थे।[4]

प्रथम दो युद्धों द्वारा जापान की शक्ति व प्रभाव के व्यापक परिणामों के अतिरिक्त इन के सर्वाधिक दीर्घकालीन तथा महत्वपूर्ण प्रभाव जापान में आन्तरिक रूप से अनुभव किये गये। 1896 में चीनी जापानी युद्ध के पश्चात् राष्ट्रीय बजट में दुगनी वृद्धि हुई तथा यह संपूर्ण वृद्धि सैनिक व्यय में हुई। 1897 में संपूर्ण व्यय का आधा भाग सैनिक व्यय था,। बजट के उपर इतने व्यापक प्रभाव के कारण थल-सेना तथा नौ सेना ने निरन्तर आत्मनिर्भरता प्राप्त करने का प्रयास किया तथा उन्होंने अर्थव्यवस्था तथा उद्योग में कूटनीति में भी अपने प्रभाव का विस्तार किया।

प्रथम महायुद्ध का प्रभाव—

अगस्त 1914 में जब प्रथम महायुद्ध छिड़ गया तब जापान ने मृदुता पूर्ण आग्रह तथा आंग्ल-जापानी संधि के कारण मित्र राज्यो का साथ दिया।[5] 23 अगस्त 1914 को जापान ने जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी।

युद्ध में प्रवेश करने में जापान मात्र नम्रतापूर्ण आग्रह से उतना प्रेरित नहीं था, जितना अन्य स्वार्थी तत्वों से। यद्यपि इस युद्ध ने किसी भी रूप में पूर्व एशिया में जापान के विशिष्ट हितों को प्रभावित नहीं किया था, तो भी उसने इस संघर्ष का उपयोग एशिया महाद्वीप पर अपना आधिपत्य स्थापित करने के लिये स्वर्ण अवसर के रूप में किया।

4—सरकारी शोध का अधिकांश, मंचूको में कठपुतली सरकार की स्थापना के बाद प्रारंभ किया गया। तत्पश्चात् दक्षिण मंचूरिया रेलवे कम्पनी तथा जापान द्वारा प्रतिपादित विकसित कंपनियों ने सहयोग स्थापित हो गया। उदाहरण के लिये देखिए मेयो हाकुराकाई किनेन (मचूरियन मंगोलियन एक्जीबीशन) मंशु नो तैकान (जनरल सर्वे ऑफ मंचूरिया), टोक्यो 1930 मंचूरिया टू डे, हसिनकिंग मचूको कोरेन ऑफिस, 1940 (10 क्रम में) मानतेतसु (दक्षिण कोरिया रेन कंपनी) मातेतसु सैंतेत्सु सेंजूनिन शी (मंचूरिया रेल कंपनी के दस वर्ष) मंशु देकासगिशा इजि कमिन नो सुतेकी कोसात्सु) मंचूरिया में चीनी प्रवासियों का साख्यिकी सर्वेक्षण) देरेन 10 मई, 1931।

5—जापान इयर बुक, 1946-48 में यह पृष्ठ 76 पर है।

शांतुग में जर्मनी को प्राप्त सुविधाओं को छीन लिया तथा बाद में चीन की मुख्य भूमि पर हस्तक्षेप करने का अवसर प्राप्त किया इस विस्तारवादी नीति की मुख्य प्रेरणा गुप्त ब्लेक ड्रेगन सोसाइटी (कोकू-यूकाई) थी, जिसने जापान को आंशिक रूप से चीन के सम्मुख 21 मांगों भी रखने के लिये प्रेरित किया। 1914 सितम्बर में जापान ने पार्शल द्वीपों पर आधिपत्य स्थापित कर लिया तथा अक्टूबर में मेरिआन्स तथा केरालिन्स पर आधिपत्य स्थापित हो गया (वे सब) नांपो शोटा कहलाते थे) धीरे धीरे वे छोटे द्वीप मेंडेये के रूप में परिवर्तित हो गए, जो अप्रत्यक्ष रूप से नौ सैनिक तैयारियों के अड्डे थे। मात्र 1941 के पश्चात् ही वे पुनः चर्चा के विषय बने।

प्रथम महायुद्ध के तुरन्त पश्चात्, जापान ने साईबेरिया में मित्र राज्यो के हस्तक्षेप को विस्तारवादी गतिविधियों का अवसर बनाया। मुख्य जापान ने शांतुग्य जो तुशीया का मुख्य द्वीप है व कोरिया के यू प्रदेश के समीप है पर अधिकार कर लिया तथा दक्षिणी मंचूरिया में प्राप्त सुविधाओं के पश्चात् जापान ने मंचूरिया से लगे हुए समुद्र पर पूरा जाल बिछा दिया। इस प्रकार युद्ध के पश्चात् जापान सुदूरपूर्व में सर्वाधिक शक्तिशाली देश के रूप में उभरा। कुछ समय के लिये वाशिंगटन में नौ देशों द्वारा की गई संधि ने नौ सैनिक निःशस्त्रीकरण के साथ पूर्व में जापानी प्रभाव को काफी घटा दिया था तथापि तब भी जापानी मंचूरिया के प्रश्न को समाप्त नहीं मानते थे तथा चीन और जापान के परस्पर सम्बन्धों का मुख्य आधार मंचूरिया का भविष्य था। यह कहा जाता है कि 1927 में बैंसतनाका में न केवल मंचूरिया विजय की योजना तैयार की थी अपितु वह संपूर्ण विश्व को विजित करने के बारे में भी थी।[6]

स्वयं जापान में प्रथम महायुद्ध का प्रभाव आन्तरिक रूप से वही पड़ा जो बाकी संघर्षो का पड़ा था। तात्कालिक प्रभाव के रूप में जापान में सैन्यवादी का प्रभाव तथा आकार बहुत बढ़ गया। यद्यपि 1922–25 के निःशस्त्रीकरण प्रयासों ने तथा अलोकप्रिय साईबेरिया के अनुभव ने सैन्यशक्ति में कमी की, किन्तु सेना ने इस सब के बाद एक दीर्घ विश्वास के साथ प्रथम महायुद्ध की चालों का गहन अध्ययन किया तथा फिर अगले अवसर की प्रतीक्षा करने लगी। इसी के साथ सेना के सामाजिक स्वरूप में भी परिवर्तन हुआ था।

प्रथम महायुद्ध के सर्वाधिक दीर्घकालीन प्रभाव आर्थिक थे जापान ने औद्योगिक स्तर पर विश्व शक्ति का स्थान प्राप्त किया, सरकार के स्वामित्व से पूंजी का उत्पादन बढ़ गया तथा वित्तीय नियन्त्रण कुछ ही लोगों के हाथों में केन्द्रित हो गया। युद्ध कालीन बारूदी विस्फोट ने जापान के धनिकतंत्र को सीमित कर दिया। 1923 में टोक्यों के भूकम्प ने छोटे पूंजीपतियों को अस्थिर कर दिया तथा 1927 के वित्तीय संकट ने उनका पूरा शोषण ही कर लिया। जापान की मुख्य फर्मो (मितसुई, सुमितोमो तथा मितसुबिशी) के पास निजी पूंजी का एक चौथाई अंश केन्द्रित हो गया। आठ बड़ी फर्मे (पहली तीन तथा यसादा, आसानो, क्वास्की, तनाका, तथा फुरुकावा) संपूर्ण बैंक में जमा राशि के एक तिहाई, भाग

6—तनाका संस्मरण की प्रथम बार सार्वजनिक रूप से घोषणा 1929 के अन्त में कमोरो से प्रशस्त महासागर सम्बन्धों के इंस्टीट्यूट के उद्घाटन के अवसर पर हुई। यह मूल पत्र 1931 में शंघाई से प्रकाशित होने वाले अंग्रेजी जर्नल चाइना क्रिटीक में प्रकाशित हुआ। मंचूरिया पर जापानी दृष्टिकोण, देखिये तोआ के जाई चोसा क्योकु, मंशू तो कुहों (ईस्ट एशिया इकॉनामिक रिसर्च ब्यूरो, मंचूरियन इयर बुकी, टोक्यो, 1937 पृष्ठ 312।

दिवालिया सम्पत्ति का चार बटा पांच भाग तथा जापान की बीमा कम्पनियों के दायित्वों की एक चौथाई अंश की स्वामिनी थी। जेबात्सु जापान के राजनीतिक जीवन में सर्वाधिक प्रभावशाली कारक बन गया।

इनके अतिरिक्त सेयुकाई तथा मिनसेइतो जैसे राजनीतिक दल पूंजीपतियों के राजनीतिक अभिकरण बन गए। तीसरा कारक प्रशासनिकतन्त्र था जो पृष्ठभूमि में सक्रिय तथा राजनीतिक दलों से गठबन्धित था। राजनीति कभी उनके विरुद्ध भी होती थी, तथापि इसने सर्वदा राजनीतिक मशीन के विभिन्न अंगों, सैन्यवादी, पूंजीवादी तथा दलीय व्यवस्था की सहज-क्रिया के लिये चिकनाई का काम किया।[7]

प्रथम महायुद्ध के गहन तथा व्यवधान उत्पन्न करने वाले प्रभाव कम से कम जापानी अर्थव्यवस्था के तीन व्यापक क्षेत्रों में महसूस किये गए। छोटे व्यापारी तथा खुदरा व्यापारी दोनों ही पूंजी के बढ़े हुए केन्द्रीकरण तथा युद्ध के बाद की आर्थिक मंदी में पिस गए। औद्योगिक श्रमिक वर्ग पर भी बुरा प्रभाव पड़ा। स्वयं श्रमिक समूहों में, विवाद, व्यापक स्तर पर सस्ते श्रमिकों की उपलब्धि, एक पितृप्रधान परम्परा तथा श्रमिक संगठनों में यूनियन की गतिविधियों को 'भयंकर मनोवृत्ति' बताने वाला दृष्टिकोण उनमें व्याप्त था। उनमें व्याप्त था। उनमें व्याप्त असंतोष की गहराई, श्रमिकों के द्वारा की गई हड़तालों की संख्या तथा हिंसा की मात्रा में हुई वृद्धि से मानी जा सकती है। सर्वाधिक तनावपूर्ण अशांति हमेशा की तरह ग्रामीण वर्गों में दृष्टिगोचर हुई।[8]

कृषक असंतोष—

औद्योगीकरण के तीव्र प्रयासों के बावजूद 1920 व 30 की दशाब्दियों में जापान मुख्यतया कृषि-प्रधान देश ही रहा था। वास्तविक अर्थों में जापानी कृषक ने पूंजीवादी होने का मूल्य चुकाया जैसे उसने जापान के आधुनिक राज्य बनने का मूल्य पहले चुकाया था। अनेक वर्षों के पश्चात् भी कृषक की ऋण तथा आसामी काश्तकारी व्यवस्था में कोई सुधार नहीं हुआ। प्रत्येक युद्ध-विस्फोट तथा आर्थिक मंदी ने अधिकाधिक किसानों को काश्तकारों में परिणत किया। 1920 तक जापान की संपूर्ण कृषक जनसंख्या का लगभग 70 प्रतिशत पूर्ण या आंशिकरूप से काश्तकार था।

यह कृषक-वर्ग पूर्णतः सर्वहारा भी नहीं था, किन्तु वह पूर्ण उद्यमकर्त्ता भी नहीं था, क्योंकि उसे बड़े पैमाने पर किराया देना पड़ता था। इस प्रकार जापानी कृषक एक साथ अत्यधिक अनुदारवादी तथा हिंसात्मक रूप से उग्र दोनों ही था। परम्परागत भावना से सम्राट के प्रति निष्ठावान होने के कारण वह संपूर्ण क्रांति की इच्छा भी नहीं रखता था,

7—दि हाई हयाक्का जितेन, पूर्वोद्धृत अंक 10 पृष्ठ 340 ने गेवात्सु की परिभाषा में कहा "एक परिवार अथवा अन्य रक्त सम्बन्धी अन्यथा एक ही वंश के ऐसे लोग जो विशाल आर्थिक स्रोतों के मालिक हो तथा बैंकों व अन्य कम्पनियों पर अपने प्रभाव के द्वारा नियन्त्रण रखते हों। वे वित्तीय तथा औद्योगिक क्षेत्र पर पूर्ण प्रभाव रखते हैं। नौकरशाही की भूमिका या देखिये जॉन एम माकी, जापानीज मिलिट्रीज इट्स कॉज एण्ड क्योर, न्यूयार्क, 1945 पृष्ठ 14–15। अन्तर्सम्बन्ध के लिए देखिये सी जे एलन 'दि कन्सनट्रेशन ऑफ इकॉनॉमिक कंट्रोल इन जापान' इकॉनॉमिक जर्नल, जून 1937।

8—शिदाची तेत्सुनिरो, दि डिप्रेशन ऑफ 1930 एज इट एफक्टेड जापान टोक्यो, 1931 जो अन्य विशाल ग्रंथों के साथ जेरम बी कोहन के ग्रन्थ जापान साइकोनॉमी इन वार एंड रिकंन्ट्रक्शन, मिनिआपोलिस 1949 अध्याय। 'तैय्यारी का एक युग'।

किन्तु धीरे-धीरे उसने जमींदार को, भीमकाया, जैबात्सु को—जो उसी के कंधों पर बुलायी गयी थी तथा पुष्ट दलों को अपने शत्रु के रूप में देखना प्रारम्भ कर दिया। कृषकों की कुंठा तथा असंतोष 1933 में जापानी कृषक यूनियन की इस घोषणा से स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है—

1. भू-स्वामी तैनो को भूमि लौटावें।
2. पूंजीवादी तथा बुर्जुआ राजनीतिक दलों को समाप्त कर दिया जाए।
3. अत्याचारी भू-स्वामी को दण्ड दिया जाए।
4. विद्रोही साम्यवादियों को समाप्त किया जाए।
5. मंचुको से प्राप्त राजस्व का राष्ट्रीकरण किया जाए।[9]

तथापि इस गहरे असंतोष को सामाजिक संकट के रूप में संगठित करने का कार्य परम्परागत दवाव अर्थात् सेना, ने ही किया। यह भूमिका थल-सेना ने अधिक तथा नौ-सेना ने कम मात्रा में निभाई थी, किन्तु स्वयं सेना पर प्रथम महायुद्ध के पश्चात् सामाजिक परिवर्तन का महान् प्रभाव पड़ा था। टोपनती की भाषा में यह 'पुरानी बोतल में नयी शराव' थी, जिसका परिणाम अत्यधिक शक्तिशाली विचारधारा तथा अंततः उग्र मदोन्मत्तता थी।

नवीन सैनिक स्वरूप—

प्रथम महायुद्ध के बाद जापान में अनिवार्य-भर्ती-कानून के बढ़ते हुए सामाजिक प्रभाव भी इतने ही महत्त्वपूर्ण तथा सामाजिक असन्तोष से सम्बन्वित थे। फ्रांस जैसी प्रजातन्त्रीय तथा क्रान्तिकारी वंशानुगत धरोहर वाली अनिवार्य भर्ती के विपरीत जापान में यह व्यवस्था निरंकुशतंत्री थी तथा इसके प्रभाव प्रतिक्रियावादी थे। सेना में युवा रंगरूट यद्यपि व्यापक सामाजिक स्तर से लिए जाते थे तथापि विशेष रूप से वे कृषक वर्ग में से आते थे। सेना की मानव-शक्ति का अधिकांश भाग भी निम्न आय वाले वर्ग से आता था।[10] अनिवार्य भर्ती ने, शीघ्र ही सैनिक शिक्षा के इंसपेक्टर जनरल के स्वायत्तशासी संस्थान के रूप में, विशालकाय वैचारिक-प्रशिक्षण-परियोजना का रूप धारण कर लिया।

जापान में सेना विशेषाधिकार विहीन लोगों के लिये समानता का सजीव उदाहरण बन गई। इस अर्थ में सेना में 1922 में कुलीन शासन असंगत था, क्योंकि अनिवार्य भर्ती कानून ने सेना को निम्न वर्ग के लिये सामाजिक समानता का प्रतीक बना दिया। इसके साथ ही वह समुराई आचार संहिता को वास्तविक उत्तराधिकारी भी बन बैठा। यह उल्लेखनीय है कि राज्य के समान जापानी सेना भी पैतृक व्यवस्था प्रधान थी। राज्य,

9—जैसा कि वी० ए आस्वोनवोनफ की पुस्तक लाइफ ऑन जापान न्यूयार्क, 1936 पृष्ठ 142-143 में उल्लेखित है। वाकुकावा सेइमेई दि जापानीज फार्म टेनेन्सीसिस्टम हुगाल्ड जी हेरिंग, संपादक जापान्स प्रास्पेक्ट, कैम्ब्रिज, मास, 1964, अध्याय पांच कृषि ऋण तथा कृषि-मजदूर पर प्रकाश डालता है। जापानी दृष्टिकोण के लिये देखिए नावेदा यिनेईची 'अवर स्ट्रिकन एग्रीकल्चर' कंटम्परी जापान, प्रथम प्रथम। सितम्बर 1932) पृष्ठ 271।

10—सर्वाधिक जटिल अध्ययन ताकता द्वारा किया गया, जिसका अनुवाद ओगावा गोनारो द्वारा किया गया 'दि कन्सक्रिप्शन सिस्टम इन जापान उल्लेखित। कर-भुगतान के आधार पर रंगरूटों के वितरण की चर्चा पृष्ठ 216-229 पर की गई है। संक्षिप्त किन्तु अधिक चिन्तनपूर्ण नार्मन की रचना सोल्जर एन्ड पैजेन्ट है पूर्वोक्त।

रंगरूट के लिये, कठोर पिता के समान हो सकता था। किसी भी युवा सैनिक को भर्ती करने से पहले उसके निकटतम सम्बन्धी को एक पत्र भेजा जाता था, जिसमें रंगरूट का कमांडिग अधिकारी रंगरूट के लिये एक स्नेही पिता तथा कठोर वरिष्ठ भ्राता होने का आश्वासन देता था। लड़के के निकटतम सम्बन्धित परिवार से पूछताछ की जाती थी। जैसे जैसे ये अधिकारी उत्तरोत्तर निम्न वर्ग में से आने लगे, यह रुचि बढ़ती गई।[11]

विशेषतया 1925 में पुरानी चोशु कुल वाले गुट से धीरे-धीरे सेवा पर नियन्त्रण, नवीन अधिकारियों के हाथ में हस्तान्तरित होता गया। ये लोग अक्सर युवा अधिकारी (अथवा साम्राज्यक युवा अधिकारी को कोकू, सैनिक, दो मई) कहलाते थे। ये नवीन समूह पूर्णतया विभिन्न सामाजिक स्तर से आया था। ये नवीन अधिकारी विशेषरूप से जापान की राष्ट्रीय सुरक्षा के प्रति जागरूक थे तथा राष्ट्र के जीवन को सुदृढ़ बनाना चाहते थे। ये जैबात्सु को व्यापक लाभ दिलाने के लिये कृषक वर्ग के अत्यधिक शोषण के विरुद्ध थे। इस नवीन सैनिक वर्ग की विचारधारा पूंजीवादियों के प्रति कटु घृणा रखती थी तथा ये व्यापक तथा कठोर आर्थिक सुधार कार्यक्रम का समर्थन करते थे, ताकि जापान की सशस्त्र सेनाओं का विस्तार हो सके।

इसके बदले में कृषक वर्ग ने भी सेना को अपना संरक्षक मानना प्रारम्भ कर दिया। राजनीतिक दलों में पुष्ट वातावरण तथा कृषक श्रमिक आंदोलनों की दुर्बलता के कारण सामान्य साधनों से आर्थिक मुक्ति मिलने की आशा बहुत कम हो गई। यद्यपि कृषक श्रमिक तथा सेना में कभी कोई औपचारिक गठबन्धन नहीं हुआ था, किन्तु उनमें अपने परस्पर हितों के लिये गहन प्रशंसा की भावना अवश्य थी। यथास्थिति की आलोचना द्वारा अपने असन्तोष को व्यक्त करते हुए युवा अधिकारियों ने अपना सम्पूर्ण दबाव संसदीय व्यवस्था पर डाला।

इन सबसे परे ये युवाधिकारी कोदो के प्रति निष्ठा रखते थे, जो साम्राज्यिक मार्ग कहलाता था। वे अक्सर कोदो-हा अथवा साम्राज्यिक मार्ग के अनुसरण कर्त्ता कहे जाते थे। कोदो, जो 1930 में लोकप्रिय हुआ, उस परम्परागत नैतिकता का समर्थन करता था, जो आदिकाल से सम्राटों की अविच्छिन्न शृंखला से शासित हो रही थी। कोदो के अन्तर्गत जापानियो का उद्देश्य साम्राज्यिक मार्ग को सम्पूर्ण विश्व में प्रसारित करना था। किन्तु सम्भवतया अधिकांश जापानियों को कोदो का अर्थ स्पष्ट नहीं था। वे कोदो को उसी प्रकार स्वीकारते थे जैसे अंग्रेज 'श्वेत जाति के शासन' को स्वीकारते थे।

युवाधिकारियों का देवता तथा कोदो का सर्वोच्च अधिकारी जनरल अराकाई सादाओ था। 1877 में एक गरीब परिवार में जन्म लेने के पश्चात् उसने युवाकाल में श्रमिक के रूप में कार्य किया था तथा बाद में सेना के माध्यम से वह साम्राज्यिक सैनिक अकादमी का अध्यक्ष बन गया। अन्ततः 1931 में वह युद्ध बन्दी बना। उसके प्रेरक पूर्णतः शुद्ध थे उसकी निजी आदतें एक सन्त के समान थीं तथा इन सबके अतिरिक्त वह सही अर्थों में समुराई परम्परा वाला जापानी सैनिक था। वस्तुतः वह स्वयं बुशिदो, जैन-बौद्ध-धर्म तथा कृषक महत्वाकाक्षाओं का आधुनिक साकार व्यक्तित्व था। आराकी

11—हिलिसकारी जापान्स मिलिट्री मास्टर्स-दि आर्मी इन जापानीज लाइफ, न्यूयार्क, 1943 में सैन्यवाद के इस पहलू का विवेचन बहुत सूक्ष्म रूप से किया गया है। देखिये पृष्ठ 17-18, 24-27।

तथा कोदा का मेयजी काल के निम्न वर्गीय समुराई के समान यह मानते थे कि उनका उद्देश्य सत्ता को पुनः सम्राट् का सौंपना था, ताकि वह उसे फिर से ऐसे नेताओं को सौंपे जो भ्रष्ट न हों। इस प्रकार वे विद्रोह को (क्रान्ति को नहीं) शोवा पुनर्स्थापना की प्राप्ति के लिये आवश्यक मानते थे। इस प्रकार वे जापानी राजनीति की परम्परा के साथ पूर्ण सामजस्य रखते थे, क्योंकि वे पुनर्स्थापना के माध्यम से परिवर्तन चाहते थे, क्रांति के माध्यम से नहीं।[12]

गुप्त संगठन

गंवास्तु से निकट रूप से सम्बन्धित कई नवीन, देशभक्त, किन्तु गुप्त संगठन थे। उन्होंने राजनीतिक दलों तथा अर्द्ध सार्वजनिक माध्यमों से सार्वजनिक दवाव के वे अर्द्ध निजी-माध्यम प्रदान किये, जिनकी सैन्यवादियों को आवश्यकता थी।

सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण संगठन सेना से सम्बन्धित जैंगो जिनकाई (अवकाश प्राप्त सैनिकों का संगठन) था। जिसकी सदस्यता 30 लाख थी। इसके अतिरिक्त जिन्होंने सेनेनदान (जापानी युवक संगठन) था जिसकी 16000 शाखाएं थीं तथा एक स्त्रियों की सहायक शाखा भी थी, इसकी संस्था 15 लाख थी। कुछ संगठन सैनिक व गैर सैनिक दोनों प्रकार के लोगों के लिये थे, उदाहरण के लिये गुप्त गेनमोशा (काला समुद्र) को कुर्मुकाई (काला राक्षस) तथा यूजोन्शा (आलोचना करने वाला संगठन)। 1920 की शताब्दी में जापान में अधिनायकवादी आंदोलन का केन्द्र, राज्य की स्थापना के निर्माण के समाज (कोकू होंशा) में स्थापित हो गया। इसके निदेशक वैरन हिरानुमा किचिरो (बाद में प्रधान मन्त्री बना) जनरल अराकी तथा वित्त मन्त्री इकदो सेहिन थे।

1930 में ग्रामीण स्व-शासन तथा मातृ-भूमि के प्रति स्नेह को गुप्त सुदृढ़ बनाने के लिए भी स्कूल थे। अन्य समूह अधिक आकर्षक तथा गुप्त नामों के अन्तर्गत कार्य करते थे, जैसे हाउस ऑफ दि क्राई ऑफ दि ब्रिकेन, दि गोल्डन फेजेंट इन्स्टीट्यूशन, दि हैवनली एक्शन क्लब तथा दि जापानीज नॉट। विरोध करने वालों का विरोध करने वाले समाज भी थे।[13]

गृह तथा विदेशो स्तर पर सीधी कार्यवाही

ग्रामीण जापान में बढ़ते हुए असन्तोष के साथ, संविधान द्वारा किसी प्रकार के नागरिक हस्तक्षेप से प्राप्त सुरक्षा, एक नवीन दृढ़ निर्णय वाला नेतृवर्ग तथा सम्बन्धित

12—उदाहरण के लिये देखिये, तोकुतोमी इचिरो, को दो निहोन नो सेकाईना (शाही तरीके से परिवर्तित जापानी विश्व) टोक्यो 1938 जनरल अराकी शिनसेनटाई जिमेई जितेन पूर्वोक्त, अंक सात, पृष्ठ 22। शोवा पद का प्रयोग (1976) मेयजी पुनरुदय का प्रतीक है।

13—सैनिक मुख्यालय अथवा मित्र राज्यों के सर्वोच्च कमांडर को युद्ध के पश्चात समूहों व समाजों को नियंत्रित करने में पर्याप्त कठिनाई का सामना करना पड़ा होगा। प्रथम निर्देश में निर्देश संख्या 548 4 जनवरी 1946) ने 27 समाजों की सूची बनाई, परिशिष्ट प्रथम 4 जनवरी 1947 का अध्यादेश) अंक तीन (उग्र राष्ट्रवादी, आतंकवादी तथा गोपनीय राष्ट्रयुक्त समाज) प्रीफेक्टो के आधार पर संगठित 145 समाज। यह सूची ढाई पेज में है तथा सर्वोच्च संयुक्त कमान के प्रकाशन में पांच जॉलम, पॉलिटिकल रिओरिएनटेशन पूर्वोक्त, संख्या दो परिशिष्ट की और पांच पृष्ठ 511–513। एक गोपनीय समाज पर देखिए, ह्यूमन वोटंन, जापान सिन्स 1931, इट्स पॉलिटिकल एण्ड शोश्यल डेवलपमेंट, न्यूयार्क, 1940 पृष्ठ 3(–:5, तथा तमिन तथा मोहान पूर्वोक्त पृष्ठ 33, 41, 63, 90।

देशभक्त आतंकवादी संगठनों के समर्थन के साथ 1930 की दशाब्दी में जापान की राजनीति में सेना का प्रभुत्व रहा, जो करीब सैनिक फासीवाद के समान हो गया था।

यहाँ यह तथ्य अधिक महत्व का नहीं है कि जापान ने अपने अन्तिम युद्ध में प्रवेश 1931 में मंचूरिया पर विजय से किया अथवा 1937 में उत्तरी चीन पर आक्रमण से किया अथवा 1941 में पर्ल हार्बर आक्रमण से किया। यह कहना पर्याप्त है कि प्रथम दो कार्यों से तीसरे कार्य की पृष्टभूमि प्रस्तुत की। राजनीतिक दृष्टि से मंचूरिया पर आक्रमण का सामना किसी भी संगठित विरोध ने नहीं किया यह सब कुछ बड़ी सरलता से हो गया।

मंचूरिया कांड के बहुत पहले से सेना ने अपनी शक्ति, अर्थव्यवस्था तथा विचारों को नियोजित करना प्रारम्भ कर दिया था। सेना में शक्ति प्राप्त करने की होड़ में कुछ लोगों का नीति-निर्माण में अधिकार हो गया। सम्राट् तक प्रत्यक्ष पहुँच, जैसे बताया गया है, प्राथमिक थी। मंत्रिमंडल में जनरल अराकी अत्यधिक चालाक था। वह सेना अथवा अन्य किसी विषय पर नहीं बोलता था तथा जब प्रधानमंत्री इनुकाई से किसी ने पूछा कि उनका विदेश मन्त्री कौन था, तो उन्होंने चुपचाप अराकी की ओर संकेत किया। आर्थिक क्षेत्र में सेना के शस्त्र-विनिमय पर नियन्त्रण के लिये आवश्यकता पड़ने पर साम्राज्यिक आदेश भी लाया जा सकता था तथा स्वयं औद्योगिक क्षेत्रों में विशेष रूप से अस्त्र-शस्त्रों के क्षेत्र में औद्योगिक संगठन स्थापित करना था।[14]

जिन घटनाओं के माध्यम से सेना ने अवसर प्राप्त किये, वे इतनी परिचित हैं कि उनको यहाँ दोहराना बेकार है। 18 सितम्बर 1931, जो हिदयोशी की पुण्य-तिथि भी थी, को जापान द्वारा मंचूरिया पर आक्रमण करना पर्याप्त उचित था। यह सत्य है कि पूर्व में मंचूरिया राष्ट्रीय राज्यों द्वारा सामूहिक सुरक्षा प्राप्त करने के प्रयासों की असफलता का प्रतीक था। यहाँ यह देखना अधिक उचित है कि मंचूरिया ने जापान को दोहरी कूटनीति अपनाने के लिये बाध्य किया तथा इस महाद्वीप मे सशस्त्र हस्तक्षेप के अधिक अवसरों को प्रतिपादित किया। 23 सितम्बर को न्यूयार्क टाइम्स ने यह स्वीकार किया कि उसे कम सूचनाएं प्राप्त थीं तथा अकसर जापान का युद्ध तथा विदेश विभाग स्पष्टतया परस्पर संघर्ष की स्थिति में रहते थे। ट्रान्स पेसिफिक सम्पादकीय में यह लिखा गया कि कोई सन्देह नहीं कि 'जापान में सैनिक प्रभाव पूर्णतः विदेश विभाग को जकड़े हुए हैं।'

इस घटना का चरमोत्कर्ष मंचूकों की रचना थी, जो वस्तुतः जापानी सेना के हाथों में एक शस्त्र था। जापानियों ने, स्वतन्त्रता का जो छलपूर्ण भाव उत्पन्न किया था, उसका परित्याग कर दिया। बाद में दक्षिण मंचूरिया रेलवे पर एक शोध-निबन्ध में यह स्वीकार किया गया कि 1932 में जापान ने न केवल 'धीरे-धीरे' एक राष्ट्र की स्थापना प्रारम्भ की थी, अपितु मंचूको को मान्यता प्रदान की तथा उसे अन्तर्राष्ट्रीय

14—1930 दशाब्दी के मध्य में एक सैनिक प्रकाशन ने लिखा, विज्ञान तथा तकनीक की उल्लेखनीय प्रगति के साथ अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों की बढ़ती हुई जटिलता ने अनिवार्यतः युद्ध के क्षेत्र को व्यापक बना दिया है, जिसमें युद्ध, कूटनीति, आर्थिक प्रश्नों के चिंतन के साथ लड़ा जाता है। "कोकुतो नो होगी (फंडामेंटल प्रिंसीपल्स ऑफ नेशनल डीफेन्स, टोक्यो, वार मिनस्ट्री, प्रेस सेक्शन, 1934, पृष्ठ 2। इनुकाई का कथन सोकुकू में से उद्धृत किया गया (फादर लैंड) जापान क्रोनिकल्स, फरवरी 11, 1932 पृष्ठ 188, 189।

स्तर पर प्रधानमन्त्री का स्वरूप देने की कोशिश की। युद्ध काल में मंचूको ने जापानी सेना के संकेतों पर विभिन्न भूमिकाओं का निर्वाह किया। बाद में जापानी सेना के लौह-व्यक्तित्व वाले सेनापति, जनरल मिनामी जिरो, ने उस प्रदेश की सम्पत्ति का शोषण करने के लिये वहां के रेलवे संगठन पर नियन्त्रण कर लिया। 1932 में सम्पूर्ण बैंक सम्पत्ति को मंचूको की केन्द्रीय बैंक में संकेद्रित कर दिया गया। 1937 में दूसरी चीनी घटना के पश्चात् मंचूरिया ने दूसरी भूमिका महान पूर्वी एशिया के सह-सम्पन्नता क्षेत्र के विकास में कनिष्ठ कार्यकर्त्ता के रूप में निभाई। बाद में पश्चिम के साथ युद्ध में, मंचुको जापान की सुरक्षा व्यवस्था के आन्तरिक क्षेत्र में था।[15]

इस बीच में गृह-स्तर पर सीधी कार्यवाही की नीति के गम्भीर परिणाम हुए। उग्र सैन्यवादियों ने 1931 के उत्तरार्द्ध में दो क्रांतियां कीं, किन्तु इन प्रारम्भिक असफलताओं के बावजूद रक्त-प्रधान-भ्रातृ-संगठन (केत्सुवेदान) ने 1932 में फरवरी से लेकर मई तक संसदीय व्यवस्था पर घातक आक्रमण प्रारम्भ किये। इनके शिकार प्रधानमन्त्री इनकाई, एक भूतपूर्व वित्तमन्त्री तथा मितसुई का अध्यक्ष बने। प्रीवीसील, लार्ड कीपर मित्सुविशी बैंक तथा मेट्रोपोलियन पुलिस के कार्यालयों पर बम डाले गए। यद्यपि सरकार सैनिक शासन की व्यापक योजना को असफल करने में सफल हो गई किंतु अन्ततः स्वयं दलीय शासन का ही पतन हो गया।

15 मई के विशिष्ट उग्र प्रतिक्रियावादी दबाव वाले पर्चे उस आतंक के वातावरण में प्रकाशित किये गये जो सैनिक पदाधिकारियों तथा नागरिक अभियोगों के कारण उत्पन्न हो गया था। 26 सितम्बर 1933 को ताचिबाना कोनावुरो नामक मुख्य नेता के साथ 20 नागरिक षड्यन्त्रकारियों पर टोक्यो में अभियोग चलाया गया। ताचीयाना ने पूंजीपतियों उनके चापलूसों तथा राजनीतिक दलों के लोभ के प्रति ध्यान आकर्षित किया। उसका मत था कि साम्राज्यिक मार्ग वाले (कोदो) जापान में सब लोगों को वापिस मातृभूमि को जाना चाहिये। उसने अपना भाषण साम्यवाद की कटु आलोचना के साथ समाप्त किया। इन मुकदमों के दौरान इन अपराधियों के लिये सम्पूर्ण जापान में सहानुभूति का वातावरण बन गया। स्कूल के बच्चों ने कोर्ट को रक्त में लिखे पत्र भेजे, युवकों ने आत्महत्या की तथा लड़कियो ने अपने बाल कटवा दिये। यहां तक कि वेश्यागृहों ने मालिकों के संगठन ने भी इन लोगों के प्रति उदारतापूर्ण व्यवहार करने की याचना की क्योंकि वे राष्ट्रीय राजनीति व्यवस्था की सुरक्षा का समर्थन करते थे।[16]

15—तोआकेईनेई चोसाक्योकू मंशू तोकुहों, पूर्वोक्त, पृष्ठ 302 प्रश्न संख्या 155, यूनाइटेड स्टेट्स स्ट्रेटजिक बॉम्बिंग सर्वे (पेसीफिक वार) टोक्यो, अक्टूबर, 28, 1945।

16—वाई (अज्ञात) 15 मई को पूर्वोक्त "कन्टेपररी जापान" दूसरा अंक (सितम्बर 1933) पृष्ठ 195–196। 1930 की तथा 1936 की क्रांति पर वृहत् मात्रा में साहित्य है। ट्रांस पेसिफिक सितम्बर 14, 21, 5 अक्टूबर, 1933 में अभियोग पर व्यापक अध्ययन किया गया। जापानी में देखिये वादा हिदेकिची नी नी रोकू इगो (26 फरवरी की घटना के बाद) टोक्यो 1937, हुग व्यास, गवर्नमेंट बाई एसेसिनेशन, न्यूयॉर्क, 1942 में अंग्रेजी में लोकप्रिय वर्णन दिया गया है। जनरल अराकी की रचना 1935–36 का संकट तथा सैनिक पत्र (अंग्रेजी में कैनथ भी कालग्रोव, मिलिट्रिज्म इन जापान, न्यूयार्क, 1936 जपानी स्रोतों पर आधारित।

1932 की घटनाओं के दमन के बावजूद अराकी समर्थकों, सैन्यवादियों, कृषकों तथा राजनीतिज्ञों का शिथिल संगठन सरकार को परेशान करता रहा। भयंकर संकट की स्थिति का सामना करने के लिये दृढ़-संकल्प जनरल अराकी, जो अभी तक युद्ध-मन्त्री भी था, राष्ट्रीय सुरक्षा की आवश्यकता को लेकर राष्ट्रभक्ति-पूर्ण पत्र प्रकाशित किये। उदाहरण के लिये कोकुबो-नो-होंगी (राष्ट्रीय सुरक्षा के सिद्धान्त अक्टूबर 1934) ने विशाल वायुयान दस्तों की ओर संकेत किया जो रूस तथा अमेरिका के द्वारा बनाये जा रहे थे तथा उसने कोदो के माध्यम से सम्पूर्ण एशिया के लिये एक नवीन व्यवस्था का तर्क दिया।

गृह तथा विदेश स्तर पर दो अन्य घटनाएं सीधी कार्यवाही का ही परिणाम थी। 26 फरवरी 1936 को युवा अधिकारियों ने सरकार को गिराने का प्रयास किया, तथापि हत्या, आतंक तथा टोक्यो के विशाल क्षेत्र पर सैनिक आधिपत्य के बावजूद वह षड़यन्त्र विफल हो गया। इस बार सरकार की दृढ़ता 1932 में षड़यन्त्रकारियों के प्रति दिखाई गई उदारता से कहीं अधिक थी। फिर भी कोदो हा का प्रभाव निर्णायक था।

7 जुलाई 1937 लुगोचिआओ पर पेकिंग के निकट मार्कोपोलो मूल पर सक्रिय जापानी सैनिकों का आक्रमण किया गया। दूसरी चीनी घटना का प्रारम्भ हो चुका था। युद्ध मन्त्रालय ने घोषणा की कि 13 जुलाई तक पुनर्स्थापना का प्रयास किया जाएगा। पांच लाख भूतपूर्व सैनिकों ने सरकार से सीधी कार्यवाही करने का आग्रह किया। प्रत्येक बार जापानी सेना की मांगों को सन्तुष्ट कर दिया गया। इस दशाब्दी में दूसरी बार सेना ने जापान के विदेशी सम्बन्धों को युद्ध से प्रभावित किया था। इस प्रकार जापान ने घटना, महायुद्ध विजय तथा अन्ततः पराजय के मार्ग में प्रवेश किया।

एकाधिकारवादी राज्य की रूपरेखा

1937 के पश्चात् जापान निरन्तर आठ वर्षों तक संघर्ष की स्थिति में रहा। युद्धरत जापान के दो पक्ष महत्त्वपूर्ण थे। 1937 से 1945 के युद्ध का अधिकांश भाग इस तथ्य को उल्लेखनीय रूप से प्रमाणित करता था कि यह द्वीपीय शक्ति पूर्व तथा पश्चिमी संस्कृति का विभाजन करने वाली रेखा से परे थी। क्योंकि जापान ने व्यापक युद्ध में चीन और अमेरिका, दोनों से युद्ध किया। चीन के विरुद्ध उसने पश्चिम की नवीन शक्तियों का प्रयोग किया तथा अमेरिका के विरुद्ध इसने पूर्व की प्राचीन शक्तियों का प्रयोग किया। इस प्रकार एक राष्ट्र के रूप में वह इन दो क्षेत्रों की प्रतिनिधि-संस्कृतियों के परस्पर परिवर्तन से बच गया।

तथापि सांस्कृतिक दृष्टि से पृथक् होने के बावजूद स्वयं जापान में गहराई में अन्तर्सांस्कृतिक प्रभाव विद्यमान थे। युद्ध ने सामंजस्य की प्रक्रिया को रोकने के बजाय इसे तीव्र बना दिया। इस सामंजस्य की आवश्यकता के कारण ही युद्धरत जापान, जो प्रकटतः सैन्यवादी लगता था, वस्तुतः वह राष्ट्र था जो आंतरिक संघर्षों का समाधान करने के लिए समझौते के प्रयास में लगा था। जापान यह समझौता कर सकने में असफल रहा तथा परिणामस्वरूप जापान का युद्ध-प्रयास दुर्बल साबित हुआ।

इस निहित अस्थिरता पर आधारित समाज ने नियन्त्रण के लिए संघर्ष की स्थिति को देखा। यद्यपि यदा-कदा समाज के कुछ तत्त्व पूर्णतः अस्तित्व-विहीन से दृष्टिगोचर होते

थे, परिणामतः जापान कभी भी राजनीतिक दृष्टि से एक नहीं हो पाया। इसने नेतृत्व वर्ग के लिए वास्तविक समस्या उत्पन्न कर दी। विभिन्न संविद प्रयास विभिन्न दृष्टिकोणों को केन्द्रित करने के लिए कार्य करते थे। वे एकता के वास्तविक प्रयास नहीं थे। जो लोग सत्ता के क्षेत्र से बाहर थे, उन्होंने कोई प्रयास नहीं किया, यद्यपि उनकी क्षमता तथा योग्यता की साम्राज्य को अत्यधिक आवश्यकता थी। अनेक अवसरों पर जापान का आंतरिक संघर्ष, वाह्य संघर्ष से अधिक महत्त्वपूर्ण दृष्टि-गोचर होता था।

जापान के पास युद्ध-रत एकाधिपत्यवादी राज्य का प्रारूप तैयार था। वस्तुतः ऐसे कई प्रारूप थे, जिनमें परस्पर सामंजस्य स्थापित करना अधिक आवश्यक था। नेतृत्व की समस्या तथा एकता के अभाव ने अर्थव्यवस्था को नियन्त्रित करने में तथा युद्ध की आवश्यकताओं के अनुसार राजनीतिक अनुकूलन की प्रक्रिया को तथा जापान द्वारा वृहत्तर पूर्वी एशियाई परस्पर सम्पन्नता सहयोग को, व्यापक बनाने के कार्य को कठिन कर दिया। वस्तुतः शक्ति इतने उल्लेखनीय रूप से प्रसारित थी, कि युद्ध कालीन जापान के लिए भी पश्चिमी अर्थों में फासीवादी पद को प्रयुक्त करना सन्देह पूर्ण है।[17]

युद्धकालीन जापान की अर्थव्यवस्था भी राजनीति के समान ही थी। आंशिक रूप से इसका यह भी कारण है कि किसी भी राष्ट्र के जीवन में युद्ध-काल में आर्थिक व राजनीतिक पक्षों को पृथक्-पृथक् नहीं किया जा सकता है। सुदृढ़ राजनीतिक नियन्त्रण के अभाव में आर्थिक प्रयास दुर्बल हो गये। जब जापान ने युद्ध में प्रवेश किया, तो अपने शत्रु की तुलना में उसकी औद्योगिक संरचना काफी पिछड़ी हुई थी। वस्तुतः, यह युद्ध नहीं कहा जाना चाहिये था, क्योंकि आर्थिक दृष्टि से न तो एक पक्ष जीत सकता था न दूसरा हार सकता था।[18] यह सम्भवतया आर्थिक निर्धारणवाद के आधार पर—राजनीतिक व्यवहार की व्याख्या करने के मार्ग में विद्यमान संकटों का सर्वाधिक उल्लेखनीय उदाहरण है। यह राजनीतिक निर्णयों की समस्या को, जिनमें युद्ध करने के निर्णय भी सम्मिलित हैं, वापिस उन सामाजिक मनोवैज्ञानिकों को सौंप देती है जिनका यह विषय है।

हो सकता है कि कभी भविष्य में राजनीति विज्ञानवेत्ता तथा अर्थशास्त्री हमें कोई सिद्धान्त बताएं जिसके अनुसार सम्पूर्ण युद्ध में पराजय का कारण, पूर्ण गतिशीलता के

17—प्रोफेसर चार्ल्स बी फास ने अपनी रचना "गवर्नमेंट इन जापान रीसेंट ट्रेंड्स इन इट्स स्कोप एण्ड आपरेशन," न्यूयार्क, 1940, जापान के युद्ध में संलग्न होने से कुछ समय पहले ही जापान में आर्थिक व राजनीतिक नियन्त्रणों का सर्वेक्षण किया था। उनका विचार था कि जापान की राज्य शक्ति के विकास में वही उद्देश्य निहित था जो अमेरिका के न्यू डील की नीति में तथा सोवियत रूस की पंचवर्षीय योजना में तथा ब्रिटेन द्वारा सामाजिक सुरक्षा के प्रयासों तथा फ्रांस के प्रयोग में था। इससे पहले के पूर्णतः विपरीत दृष्टिकोण के लिये देखिए साकुओ योशिनो की रचना "फासिज्म इन जापान" कंटेम्परेरी जापान सितम्बर 1932 पृष्ठ 185–197। जैसा कि बाद की घटना ने स्पष्ट किया दोनों दृष्टिकोण गलत थे। जापान की नियोजित अर्थव्यवस्था युद्ध-प्रधान हो गयी। फिर भी जापान ने सर्वदा अपनी अधिनायक नीति को बनाये रखा।

18—प्रोफेसर जेरोम बी कोहन ने 1941 में जापान की अर्थव्यवस्था का चित्रन बड़ी सफाई से किया है पूर्वोक्त विशेषतया दूसरा अध्याय "वार इयर्स ऑवरव्यू" जापानी अनुभव की तुलना इसी प्रकार प्रकार जर्मनी की असफलता के सन्दर्भ में देखिये 'दि इफेक्ट्स ऑफ स्ट्रेटजिक बॉम्ब्स' ऑन दी जर्मन वार इकोनॉमी, वाशिंगटन, 31 अक्टूबर, 1945।

विरोध के परिणाम स्वरूप माना जाए। द्वितीय महायुद्ध की प्रजातन्त्र तथा तानाशाही दोनों ही शक्तियां एक ही प्रकार के रोग से ग्रस्त थीं। यह सत्य है कि 1931–40 के मध्य जापानी नेताओं ने कच्चे माल के अभाव को महसूस किया था। जापान ने अपनी आवश्यकताओं को संकुचित कर पर्याप्त औद्योगिक शस्त्रों का प्रयोग करने का प्रयास किया था, किन्तु पर्याप्त सामग्री प्रशिक्षित श्रमिक-वर्ग तथा नागरिक सुविधाओं का अभाव था। अतः लचीली अर्थव्यवस्था के अभाव में तथा प्रारम्भ में काफी कष्ट साध्य सफलताओं के कारण, जापान 1941–42 में उस सुदृढ़ कदम को उठाने में असमर्थ रहा, जो उसकी शिथिल प्रशासनिक व्यवस्था में भी सम्भव था। जब जापान की विजय के स्वप्न पराजय की भयंकर आशंका में परिणत होने लगे, तब जापान ने तात्कालिक रूप से औद्योगीकरण को गतिशील तथा आर्थिक प्रशासन को सक्रिय करने के प्रयास किये, किन्तु तब तक बहुत देर हो चुकी थी।

यह अत्यधिक विलंब वाली गतिशीलता, जो जटिल युद्ध-कालीन अर्थव्यवस्था का परिणाम थी. जापान में समझौते के मार्ग में उल्लेखनीय समस्या थी। एक बार फिर वहां गुटों के संघर्ष पर विजय प्राप्त करनी थी। गुट-स्तर पर एक ओर विशाल परिवार-रूपी जैबात्सु था तथा दूसरी ओर समझौते की विरोधी सार्वजनिक सम्पत्ति की समर्थक सेना थी। यहां सेना की कृषक तथा श्रमिक प्रधान पृष्ठभूमि को ध्यान में रखना आवश्यक है, जिसने दोनों समूहों के मध्य स्थित खाई को और व्यापक बना दिया।

जैबात्सु अपनी विस्तृत सम्पदा पर किसी प्रकार के आघात सहने को तैयार नहीं था। राष्ट्रीय पराजय को समीप देखकर भी वह दोनों के स्थान पर कोइसो को स्थान ग्रहण करते हुए देख प्रसन्न हुआ। सरकारी सत्ता का पुनः वितरण, पुनर्गठन, तथा तत्पश्चात् सरकारी नियन्त्रण या विकेन्द्रीकरण हुआ। प्रथम महा संघर्ष में पराजय के पश्चात् भी शांति तथा आधिपत्य काल में उनका संघर्ष चलता रहा।

संक्षेप में यही वे सब कारण हैं जिनकी वजह से जापान ने एकाधिपत्यवादी राज्य के लिये एक प्रारूप मात्र तैयार किया। एक नवीन संरचना का प्रारम्भ किया गया था किन्तु उसका अन्त कभी नहीं हुआ। इन सब प्रयासों में भी शासित करने के तरीके उल्लेखनीय रूप से जापानी थे। कुछ मामलों में पुरानी संरचना को पर्याप्त सीमा तक पुनर्स्थापित कर दिया गया था।

1937 के पश्चात् सरकारी सरचना में परिवर्तन आंशिक गतिशीलता का परिणाम थी। 'अर्द्ध-युद्ध-कालीन अर्थव्यवस्था' यह मुहावरा जुनसेन्जी के नाई हिरोता मत्रिमडल के काल में भी सुना गया था। (1935–37) वस्तुतः जापान की नियंत्रण-व्यवस्था का प्रथम परीक्षण समुद्र पार सम्पदाओं जैसे विशाल पूर्वी विकास, कम्पनी जैसी संस्था (कोरिया) मंचूरिया औद्योगिक विकास कम्पनी तथा विभिन्न चीनी विकास कम्पनी आदि संगठनों में हुआ था। अन्ततः जापान की डाइट ने एक राष्ट्रीय सामान्य लामबन्दी अधिनियम पारित किया। (कोक्का सोदोईनहो)[19] जापान में अत्यधिक रोचक चक्र का

19—कोक्का सोदोइन हो में पचास अनुच्छेद थे। सम्पूर्ण रचना दस पृष्ठों में थी तथा बाद के विधेयक पूरा ग्रन्थ बना सकते हैं। तोसेई होरेई केनकुकायी हेन (कंट्रोल लॉज एण्ड आर्डिनेन्सेज) ब्यूरो, 1942। ह्यू न बोर्टन, जापान सिन्स 1931, पूर्वोक्त परिशिष्ट दो मार्च 1939 के प्रस्तावित अनुच्छेदों की सूची देता है।

प्रारम्भ हो गया था, जैसे लामबन्दी ने सर्वदा उत्पादन की नवीन प्रतिभाओं को आमन्त्रित किया, युवा उद्योगपतियों ने सेना की विस्तारवादी नीतियों को तत्काल सहायता दी, युवा उद्योगपतियों तथा सेना ने सम्मिलित रूप से मंचूरिया में नियंत्रित अर्थव्यवस्था की स्थापना की। इसने जापान में लामबन्दी को और अधिक सक्रिय बना दिया।

1940 तक जापान नियन्त्रण, स्वायत्तशासी व्यवस्थाओं, स्वतन्त्र मंत्रियों के आदेशों ऊँचे मूल्यों, अभावों तथा विलम्ब के विचित्र चक्र में फंस गया था। सेना में निरन्तर असन्तोष के परिणाम स्वरूप जुलाई 1940 को युद्ध मन्त्री ने त्यागपत्र दे दिया, जिसने अन्ततः यानाई मंत्रिमंडल के त्यागपत्र (जनवरी–जुलाई, 1940) की परिस्थितियां उत्पन्न की। दूसरे मंत्रिमंडल कोन्यो में (जुलाई 1940–1941) दोनों को युद्ध-मन्त्री के रूप में, तथा होशिनो नाओकी को निर्विभाग मंत्री के रूप (जो साथ ही नियोजन वार्ड का अध्यक्ष भी होता था) नियुक्त किया। इस प्रकार परिषद ने पूर्णतया सुरक्षा-प्रधान राज्य के आदर्श के प्रति समर्पित क्वांगतुंग दल के आगमन को सम्भव बनाया, होनो क्वांगतुंग सेना कमांड से आया था, मतासूको दक्षिण मंचूरिया रेलवे की अध्यक्षता से तथा होशिनो मंचूको के सामान्य मामलों के ब्यूरो की अध्यक्षता से आया था।[20] इस मंत्रिमंडल ने राजकुमार कोन्यो के द्वारा एक सन्तुलित अधिनायकवादी राज्य की स्थापना का प्रयास किया।

राजकुमार कोनोयो फुमिमारो जो 'द्वितीय बार प्रधानमन्त्री बना एक नवीन राष्ट्रीय सरकार बनाने के लिये सार्वाधिक उचित आदमी था। सैंतालीस वर्ष की आयु में जब उसने पहली बार मंत्रिमंडल बनाया था तो उसे पर्याप्त अनुभव प्राप्त हो चुका था तथा उसने सरकार में व्यापक सम्पर्क स्थापित किया था। जापान की सर्वाधिक प्राचीन तथा कुलीन परिवार के इस सदस्य ने उदार सैओंजी के नेतृत्व में तीव्रता से विकास किया। 15 मई 1932 की घटना के समय वह उच्च सदन का उप सभापति था तथा 1933 में राजकुमार तोकूगावा के पश्चात् वह सभापति बना। 26 जनवरी 1936 की घटना के पश्चात् उसे सभी राजनीतिक दलों से ऊपर सरकार बनाने के लिए कहा गया। 1939 में जब उसने त्यागपत्र दिया तो एक नवीन दल का संगठन आमचर्चा का विषय बन गया। 1940 में जब वह वापिस लौटा तो सेना, राजनीतिक दलों, प्रशासकों बैंकारस् तथा कुलीन वर्ग इन सभी गुटों के स्वीकृत कुछ लोगों में से, वह एक था। विदेशी प्रेस उसे अक्सर सम्भावित तानाशाह के रूप में, तथा दाई निहोन के मुसोलिनी के रूप में सम्बोधित करती थी, तथापि राजकुमार कोनोयो से सभी विशेषताओं का समन्वय था, वह परम्परा से कुलीन, शिक्षा की दृष्टि से उदार तथा अनुभव की दृष्टि से पैतृक अधिनायकवादी था। संक्षेप में कोनोयो एक जापानी था।

यद्यपि कोनोयो ने 1939 में जब त्यागपत्र दिया तो उसने बैरन हिरानुमा (प्रधानमन्त्री जनवरी अगस्त 1939) से स्थानमात्र बदला था। कोनोयो प्रीवी परिषद्

20—होशिनो तथा विदेश विभाग का उपमन्त्री ओहाशी दोनों मंचूकुओ के राज्य द्वारा नियंत्रित औद्योगिक संरचना के नियोजक तथा क्वांगतुंग के मुख्य सेनाध्यक्ष तोजो तथा मुख्य स्टाफ अधिकारी जनरल उमेजू योशिजिरो के अन्तरंग मित्र थे। दिसम्बर; 1940 में इस क्वांगतुंग गुट में बैरन हिरनुमा गृह-मन्त्री के रूप में सम्मिलित हो गया। बाद में तोजो प्रधानमन्त्री बना, होशिनो मंत्रिमंडल का मुख्य सचिव तथा राज्यमंत्री बना तथा उमेजू प्रमुख स्टाफ अधिकारी बना। ओहाशी के अतिरिक्त बाकी सभी बाद में अन्तर्राष्ट्रीय सैनिक न्यायाधिकरण के सम्मुख प्रस्तुत हुए।

चार्ट 19 नवीन संरचना
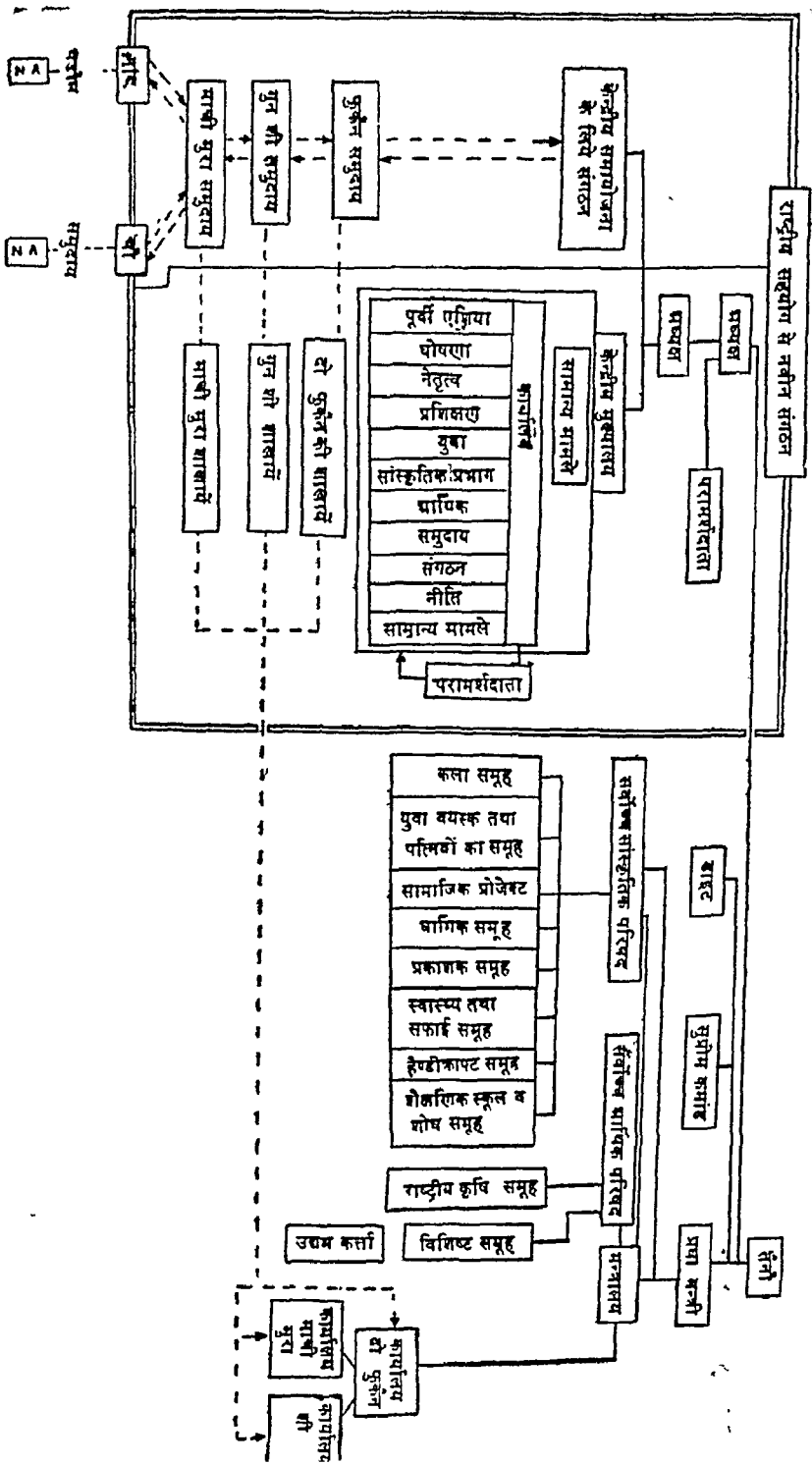
का अध्यक्ष बन गया जो निर्विभाग मन्त्री के समवर्ती था। वह परिषद् तथा सरकार दोनों को जनरल (अगस्त 1939 से जनवरी 1940) तथा एडमिरल मोनाई (जनवरी–जुलाई 1940) की अन्तरिम परिषदों को नियंत्रित करने में सफल हुआ। जब वह परिषद् का अध्यक्ष था, तभी उसने एक एकीकृत राष्ट्रीय प्रशासन का अध्ययन करना प्रारम्भ कर दिया था। जून के अन्त में अपने द्वितीय प्रधानमन्त्रीकाल मे एक माह पूर्व उसने प्रीवी परिषद् से त्यागपत्र दे दिया तथा अपना सम्पूर्ण समय एक नवीन संस्थान के निर्माण में लगाया।[21] 432 का चार्ट जो, एक जापानी स्रोत से लिया गया है, शिनतैईसई के आकार को बताता है।

होशिनो, जो बाद में तोयो का मुख्य सचिव बना, ने आत्म-समर्पण के पश्चात् एक अमेरिकी प्रश्नकर्ता को बताया कि वास्तविक युद्ध-अर्थव्यवस्था गुंगल नहर के पतन के पश्चात ही प्रारम्भ हुई। नियंत्रण-संगठनों साथ विशिष्ट युद्ध कालीन निगमों की स्थापना की गई, जो एईदान कहलाये। अन्ततः 1943 के प्रथम अर्द्धांश में प्रधान मन्त्री तोजो ने विधि निर्माण के माध्यम से प्रशासनिक शक्तियों को प्रधानमन्त्री के हाथ में केन्द्रित करना प्रारम्भ कर दिया। फिर भी उसने प्रधानमन्त्री पर तानाशाह के आरोपों से बचने के लिये परिषद् तथा परामर्शदाता बोर्ड में व्यावसायिक नेताओं की नियुक्ति की। सरकार अभी भी विद्यमान संस्थान को अधिकाधिक दक्ष बताने का प्रयास कर रही थी।

1 मई 1943 की अत्यन्त गम्भीर हलचल के बाद तीन नवीन मन्त्री दृष्टि गोचर हुए। सैन्यशस्त्रास्त्र (गुंनोशो) मन्त्रालय ने लामबन्दी तथा उत्पादन, कच्चे माल के वितरण, मूल्यों तथा वेतन पर नियंत्रण स्थापित कर लिया। इसकी रचना में मंत्रिमंडलीय नियोजन बोर्ड की समाप्ति कर दी गयी। होनो प्रधानमन्त्री के साथ-साथ युद्ध मन्त्री तथा सेना का प्रमुख भी था। उपभोग वस्तुओं तथा वाणिज्य, ये दोनों कृषि तथा वाणिज्य मंत्रालय के नियन्त्रण में चले गये तथा संचार व रेलवे एक नवीन यातायात के अधीन हो गये। इन परिवर्तनों ने युद्ध कालीन अर्थव्यवस्था के नियन्त्रण को प्रस्तुत किया। सैद्धान्तिक दृष्टि से एकीकरण प्राप्त कर लिया गया था। किन्तु व्यवहार में पर्याप्त विलम्ब हो चुका था। 1944–45 तक मित्र राज्य जापानी अर्थव्यवस्था को गहरा आघात पहुँचा चुके थे तथा अयोग्य नियोजन में मात्र विनाश की रफ्तार को तीव्रता ही प्रदान की।

नवीन रजनीतिक संरचना (चार्ट 19) कुछ अधिक सफल रही। शिन तैसेई के निर्माताओं को दो समस्याओं का सामना करना पड़ा। प्रथम, संविधान द्वारा प्रतिपादित डाइट का निर्माण किस प्रकार किया जाए तथा द्वितीय विभिन्न दलों में किस प्रकार समायोजन किया जाए। दूसरा कार्य फिर भी आसान था, क्योंकि दलों की चर्चा अति-पवित्र संविधान में नहीं की गई थी। वस्तुतः उन्होंने संरचना में सामंजस्य स्थापित करने में अधिक तत्परता दिखाई। 1940 की अगस्त में अन्तिम दल का अस्तित्व भी समाप्त हो गया तथा सितम्बर में शिन तेईसेई की स्थापना की तैयारियाँ पूरी हो गई। 12 अक्टूबर

21—शिन तैयसी पर विचार-विमर्श ने एक तीव्र विवाद खड़ा कर दिया, इनमें विशिष्ट असाही शिम्बुन शा (आसाही समाचार-पत्र कम्पनी) शिन तैसेई कोकुमिन केईजाई हेन (नवीन संरचना जनता के व्याख्यान आर्थिक खंड ओसाका) 1941, आतोनी तोकेयो शिन ताईसेई निहोन का सेयजी केईबाई बुंका (जापानीज पॉलिटिक्स एण्ड इकानॉमी अण्डर दि न्यू स्ट्रक्चर) टोक्यो 1940।

को साम्राज्यिक शासन सहायता संगठन (तैईसेई योकुमान काई) ने अपना कार्य प्रारम्भ किया।

डाइट का कार्यक्रम इससे कम स्पष्ट रहा। सरकार ने सर्वप्रथम इस पर अप्रत्यक्ष रूप से आघात पहुँचाया, जब कि निर्वाचन कानूनों में परिवर्तन किया गया। वस्तुतः डाइट ने जैवात्सु के उग्र दृष्टिकोण के बावजूद पर्याप्त धूमधाम से अपनी पचासवीं वर्षगाँठ मनाई। जब मार्च 1941 में डाइट को स्थगित किया गया, तब कहीं आकर सरकार ने चैन की साँस ली।

अक्टूबर 1941 में दोनों मंत्रिमंडल के बनने के पश्चात् एक के बाद एक अस्पष्ट राजनीतिक संगठन बनने का क्रम प्रारम्भ हुआ। पहले साम्राज्यिक शासन सहायक बोर्ड का निर्माण किया गया, फिर साम्राज्यिक शासन सहायक परिषद् बनाई गई तथा अन्ततः जापानी राजनीति दल (निहोन सेईजी काई) बनाया गया।

युद्ध-कालीन प्रशासनिक ढाँचे में अनेक परिवर्तनों ने स्थानीय सरकार को प्रभावित किया। जुलाई 1943 में जापान की मुख्य भूमिका को नौ प्रशासनिक क्षेत्रों (चिहो ग्योसेई) में बाँटा गया था जिसका उद्देश्य नीति-निर्माण तथा आर्थिक नियंत्रण का केन्द्रीकरण तथा प्रशासन का विकेन्द्रीकरण था। एक क्षेत्रीय प्रशासनिक परिषद् (चिहो ग्योसाइ क्योगिकाई) में सभी प्रीफेक्टों के गवर्नर सम्मिलित होते थे, जिनमें से एक को सभापति बना दिया गया था। वह प्रत्यक्षतः प्रधानमन्त्री के प्रति उत्तरदायी होता था तथा गवर्नर के चाकुनिन पद से उसे मंत्रिमंडल के शिजिन पद तक उन्नत कर दिया गया था। इन प्रदेशों में शस्त्रास्त्रों तथा खाद्यानों के उत्पादन, यातायात के समायोजन तथा नागरिक सुरक्षा के संगठन को विशेष महत्त्व दिया जाता था, तथापि इस योजना में भी बाद में परिवर्तन किये गये थे। क्षेत्रीय परामर्शदाता, परिषदों के कार्यपालिका अधिकारी गृहमंत्री के प्रति उत्तरदायी रहे।

जून 1945 में अनुक्रमण का सामना करने के लिए सम्पूर्ण क्षेत्रीय संरचना का पुनर्गठन किया गया। क्षेत्र सामान्य अधिक्षेत्र (सोकानफू) सभापतियों, अधिक्षेत्रीय जनसंख्या (सोकान) तथा परिषदों, परामर्शदात्री परिषदों (सैन्यो काई) में विभाजित कर दिये गए। विस्तृत शक्तियाँ, जो मूलतः प्रीफेक्टों में रहती थी, सोकान फू को इस विचार के साथ दी गयी कि आक्रमण के समय शायद इन क्षेत्रों को स्वतन्त्र रूप से कार्य करना पड़े।[22] चार्ट 20 युद्ध के अन्त में स्थानीय सरकार के स्रोतों को दर्शाता है।

22—इस पृष्ठ पर प्रस्तुत चार्ट जो युद्ध के अन्त में स्थानीय सरकार के क्रम को प्रस्तुत करता है, रणनीत विभाग से लिया गया है। शोध तथा विश्लेषण 2760 लोकल गवर्नमेंट इन जापान, पूर्वोक्त 21 जुलाई 1945 मूल प्रदेश में थे (1) होक्काई होकूइदो कराकुतो (2) तोहोकु (आमोरी, इवोन मियागी, अकिता, यमागाता कुकुशिया (4) नोकाई (गिफू शिजुका, एइची, माई) (5) होकुरिका (निमिता, तोयामा, इसिकावा, फुकुई, नागावो) (6) किन्की शिगा, क्योतो-फु ओसाका फु ह्योगो, नारा वकायामा) (8) शिकोकू (तोकोशिया, कागावा, इहिये कोची (9) क्यूशु (फुकुओका साजा, नागासागी, कुमामोतो, अइता विभाजकी, कोगोशिया, ओकिनावा), जापान इयर बुक, 1943-44 पृष्ठ 135।
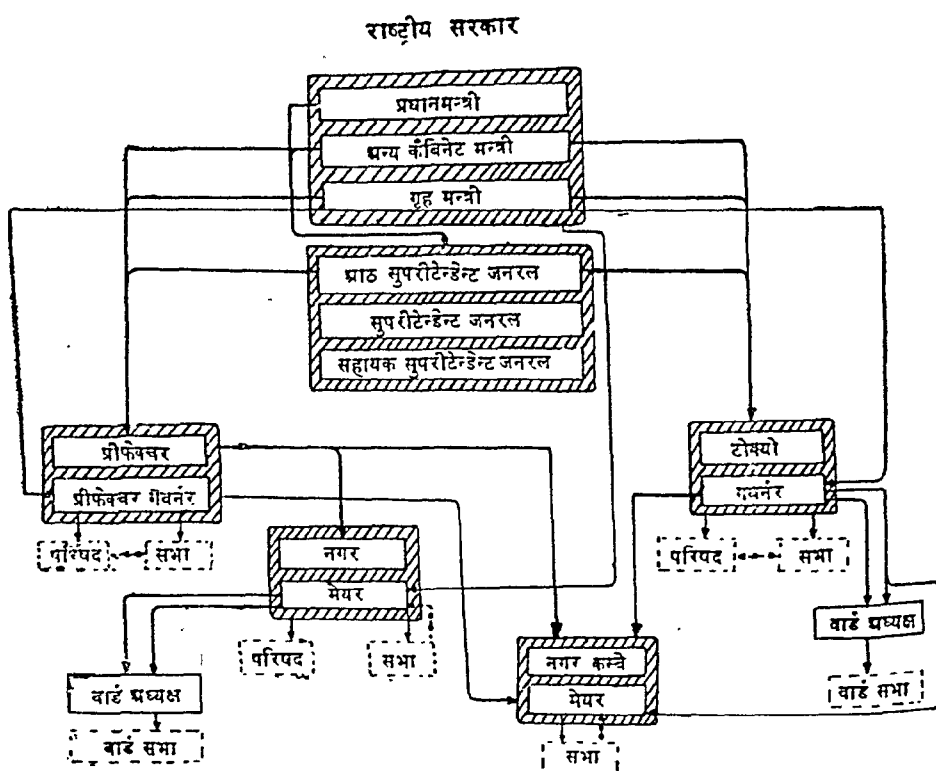
चार्ट 20–जापान की स्थानीय सरकार की सत्ता के (स्रोत 1945)

वृहत्तर पूर्वी एशियाई परस्पर सम्पन्नता क्षेत्र (जीई ए सी पी एस)

युद्ध-कालीन जापान का एक अन्य पक्ष भी उल्लेखनीय है। यह स्पष्ट रूप से उन आंतरिक एव व ह्य संघर्षों को दर्शाता है जिसने जापान की वास्तविक एकता को छीन लिया तथा जापान द्वारा एशियाई नेतृत्व प्राप्त करने के प्रयासों को समाप्त कर दिया। वस्तुत: यह सम्पूर्ण क्षेत्र की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व उल्लेखनीय प्रघटना है।

जब सर्वप्रथम वृहत्तर पूर्वी एशियाई परस्पर सम्पन्नता-क्षेत्र की घोषणा (जापानी में दाई तोश्रा क्योई केन) 1940 में सरकारी स्तर पर की गई, तो यह विचार नया नहीं माना गया था। जापान, पूर्व में पश्चिमी ढंग की शक्ति बन गया था। 'एशिया एशिया-वासियों के लिए है" यह कथन स्पष्ट करता है कि किस प्रकार इस राष्ट्र ने एशिया को पश्चिमी देशों के प्रभुत्व से स्वतन्त्र करने का प्रयास किया। इन दो कारकों के मिश्रण का परिणाम जापान द्वारा एशिया में नेतृत्व करना था, कम से कम जापानी इसका यही अर्थ लेते थे। उनकी इस भावना का अधिकांश कारण वे गठबन्धन थे जो उन्हें पूर्वी संस्कृति से सम्बन्धित करते थे। राज्यों के परिवार मंडल के कन्फ्यूशियवादी सिद्धान्त भी व्यक्ति से अधिक समूहों पर जोर देने की विशेषता तथा विषयों से अधिक मूल्यों को दिया जाने वाला महत्त्व, ये सब उस आदर्शवाद के अंश थे, जिसने इस उद्देश्य को

प्रोत्साहित किया। राजकुमार कोनोयो का हो को इचियू; वेंडेल विल्की के 'एक विश्व' के विचार का समानार्थक था तथा यही 'एक ही दल के तले विश्व के आठ कोणों की चीनी अवधारणा थी।

एक जापानी लेखक के मतानुसार 'जापान को सक्रिय बौद्धिकता के साथ वह महत्त्वपूर्ण कार्य करना था, जो जापान का ही रचनात्मक कर्त्तव्य था। निरपेक्ष एवं व्यक्तिगत के स्थान पर समग्र विश्व के लिए सहकारिता पर आधारित विश्व-व्यवस्था होनी चाहिए। यह नवीन व्यवस्था साम्यवाद की अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था तथा पूंजीवाद तथा वैंक व्यवस्था के प्रभुत्व दोनों के विपरीत थी।[23]

अपने सर्वोत्कृष्ट रूप में जापान वृहत्तर पूर्वी एशियाई परस्पर सम्पन्नता क्षेत्र में अपने सभी मुख्य द्वीप, चीन, मंचूको, वर्मा, थाईलैंड, हिंदचीन, मलाया, सुमात्रा, जावा, वोर्नियो, न्यू गिनी तथा फिलीपिन्स सवको सम्मिलित करता था। इस उद्देश्य के लिये नवम्बर 1942 में इन दूरवर्ती प्रदेशों का नियन्त्रण करने के लिये वृहत्तर पूर्वी एशिया मंत्रालय (दाई तो आशो) बनाया गया। उनसे उसे कच्चे माल की प्राप्ति तथा राजनीतिक व सैनिक समर्थन की अपेक्षा थी।

जापान अपने इस उद्देश्य में पूर्णतया असफल रहा। इस असफलता के कारण जापान ने एक राष्ट्र के सम्पूर्ण जीवन को खो दिया। इस दुर्घटना के कारणों को ज्ञात करना कठिन नहीं है।

जव जापान ने अपनी एशियाई विजय को प्रारम्भ किया तो उसने पराधीन लोगों में उत्तेजना फैलादी। उनमें से अनेक सहायता देने तथा लेने को तत्पर थे, यदि उससे स्वतन्त्रता प्राप्त हो सकती थी। एशिया में लाखों लोगों में स्वतन्त्र होने की लालसा जापान के लिये मूल्यवान सहायक तत्त्व थी। वुद्धिमत्तापूर्ण ढग से इसे प्रयुक्त करने पर इसके परिणामस्वरूप इस क्षेत्र से पश्चिम का निष्कासन हो जाता। उसका पुनर्प्रवेश असम्भव हो जाता तथा जापान को इस क्षेत्र के लोगों का स्थायी आधार प्राप्त हो जाता, किंतु इसके विपरीत जापान ने पश्चिमी प्रभुत्व का अनुकरण करने का प्रयास किया तथा उसका शोषण करने का प्रयास किया तथा यही उसकी असफलता का मूल कारण था।

1943 में वृहत्तर पूर्वी एशियाई की प्रथम सभा टोक्यो में हुई। इस सम्मेलन में उपस्थित लोगों की संख्या इस वात का प्रमाण है कि किस प्रकार जापान इस क्षेत्र में सुदृढ़ नेताओं का समर्थन प्राप्त करने में असफल रहा। चीन का वांगचिंग वेई, थाइलैंड के नैथयाकों. मंचूको का चांग चिंग गुई, फिलीपिन्स का जोसे लारेन तथा भारत के सुभाषचन्द्र बोस वे अवसरवादी नेता थे, जिन्हें जापान ने नवीन कूटनीतिक व्यवस्था सेमीसेन के नाम पर आमन्त्रित कर लिया था। च्यांग काईशेक, माओत्सेतुंग, गांधी, नेहरू, ओस्मेना, क्यूजमे—ये तथा अन्य नेता जो स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये वास्तविक नेता थे, उन्हें जापान के इरादों में षडयन्त्र दृष्टिगोचर हुआ।

जापान वृहत्तर पूर्वी एशिया का शोषण करने में भी सफल नहीं हुआ। सेना, विदेश विभाग, वृहत्तर पूर्वी एशिया मंत्रालय तथा जैवात्सु के आंतरिक संघर्षों ने सम्मिलित

23—सुगिहारा मासानोमी, तोका क्योदोताई नो गेनरी (प्रिंसीपल्स ऑफ एन आइडियल एशियाटिक कोओपरेटिव, आर्डर) टोक्यो 1939।

चार्ट 21—सरकार का प्रशासनिक संगठन (1944)
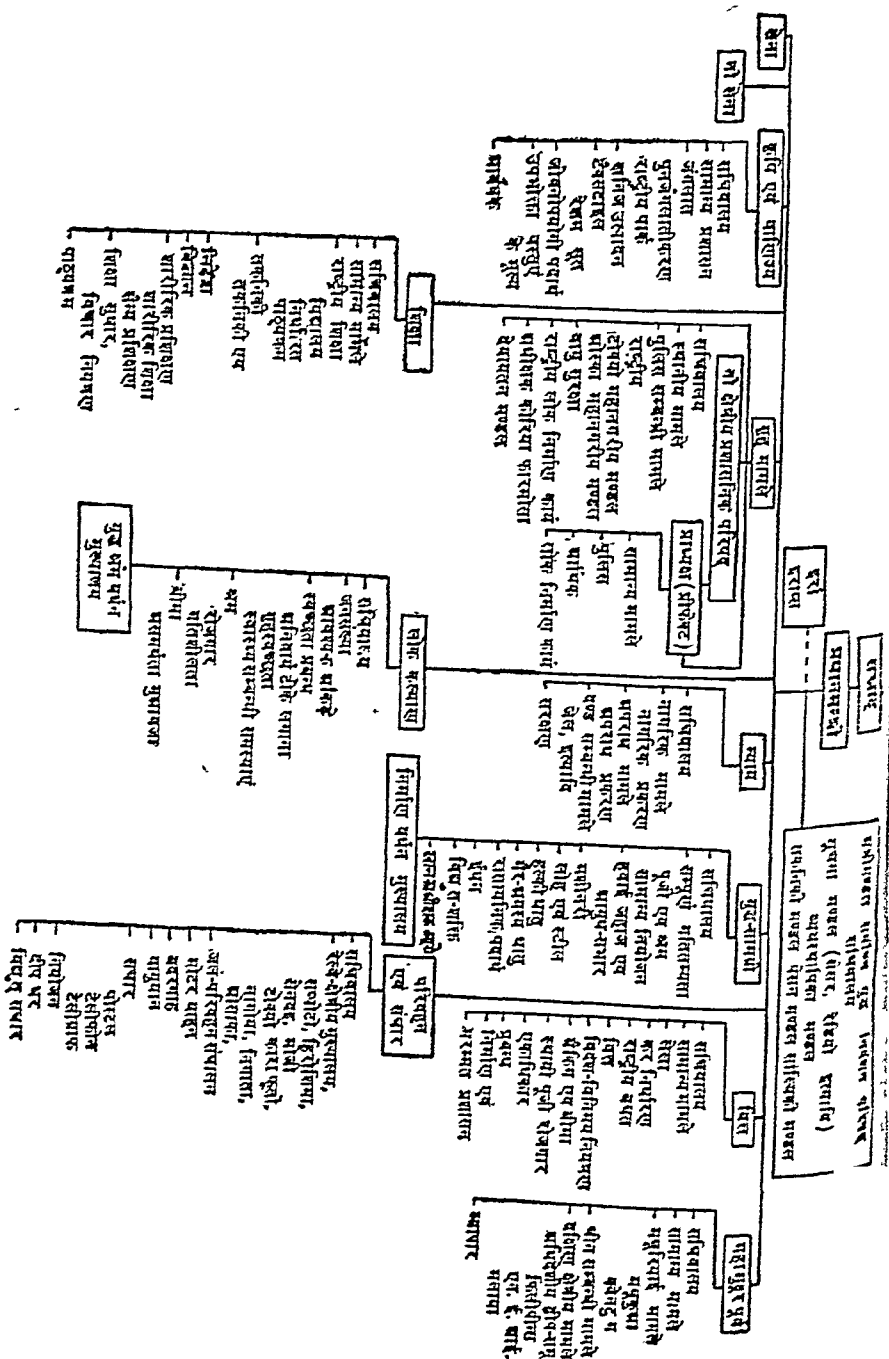
प्रयत्नों को नष्ट कर दिया। चार्ट 21 जापानी सरकार की जटिलताओं को दर्शाता है। नेतृत्व व एकता के अभाव ने तथा विशिष्ट हितों को पूरा करने के प्रयासों ने जिन्होंने आन्तरिक प्रयासों को दुर्बल बना दिया था। अन्ततः प्रभावों को भी प्रभावहीन कर दिया। जो विस्तृत आग जापान के एशिया में फैलाई थी अन्ततः वह स्वयं उसी के विरुद्ध हो गई। 1944 तक मित्र राज्यों को इन्हीं से पूर्ण सहायता मिलनी प्रारम्भ हो गई थी।[24]

अन्तिम महायुद्ध—

एक युद्ध तब हारा जाता है जब उसकी विजय की तैयारियां अपर्याप्त होती हैं। एक राष्ट्र तभी पराज्य की ओर बढ़ता है, जब वह पर्याप्त निश्चितता से अपनी क्षमता की तुलना अपने शत्रु की क्षमता से करने में असमर्थ रहता है। जापानियों ने 1895 से युद्ध के लिये ऐतिहासिक औचित्य का निर्माण कर दिया था। उनका विश्वास था कि उन्होंने अपनी राजनीतिक संस्था तथा अर्थव्यवस्था को आधुनिक संघर्ष के अनुकूल बना लिया था। वे युद्ध से उतने ही परिचित हो चुके थे जितने बन्दर वृक्षों से होते हैं, तथापि स्वयं जापानियों की यह लोकोक्ति है कि 'बन्दर भी पेड़ से गिरते है।'[25]

अनेक निष्पक्ष प्रेक्षक अब इस दृष्टिकोण से सहमत हैं कि जापान का साम्राज्य अमेरिका के बी 29 के बारूदी आक्रमण से समाप्त नही हुआ था, न ही इसका कारण हिरोशिया, नागासाकी पर परमाणु विस्फोट था और न ही सोवियत रूस का प्रशांत महासागर में आगमन था ये सब घटनाए नही हुई होती तो भी युद्ध कुछ ही महीनों में समाप्त हो गया होता। इन नाटकीय घटनाओ ने आत्मसमर्पण की भूमिका अवश्य प्रस्तुत की, किंतु ये जापान की पराजय के कारण नही थे। जापानी नगरो पर बारूदी आक्रमणो की रफ्तार 1941 के अन्त में पश्चिम से युद्ध प्रारम्भ होने के पहले से ही तीव्र हो गई थी।

वस्तुतः जापान की युद्ध में हार के कारणों रूपी जगल को काटने के लिए ऐसे शूरवीर की आवश्यकता है जो एक नवीन कुल्हाड़ी का प्रयोग कर सके। अनेक लोगो ने इस शस्त्र का प्रयोग कर इस अत्यधिक जटिल विषय पर पर्याप्त सामग्री प्रकाशित कर दी है। इसमें अनेक विशिष्ट हित निहित हैं। निरपेक्ष भाव से अध्ययन करने की दृष्टि से यह घटना अब भी समायोचित है। इन कारणो से हम यहा पर जापान की हार के कारणों को एक स्पष्ट व्यवस्था के रूप में प्रस्तुत करने का कोई प्रयास नहीं करेंगे। किन्तु विभिन्न बाधाओं के बावजूद हमें इस जगल को भू-सर्वेक्षण का प्रयास करना चाहिये। यहाँ हम मात्र उन कारकों की विस्तृत चर्चा करेंगे, जिनका जापानी सरकार तथा राजनीति पर

24—इस चक्र का नवीनतम परिष्कृत वर्णन डेविड एच. जेम्स की रचना दिराइज एण्ड फाल ऑफ दी जापानीज सम्पायर, न्यूयार्क 1951 कैप्टन जेन्सन मलाया प्रसार तथा सिंगापुर पतन का वर्णन अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर करता है। टोक्यो में बन्दी के रूप मे उसने बृहत्तर पूर्वी एशिया परस्पर सहयोग क्षेत्र के विकास तथा पतन का अनुभव किया था। व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर जापान की समस्याओ का वर्णन चिंतन-प्रधान है तथा सुदूरपूर्वी भाषाओं, जनता तथा संस्कृति की अंतरंग जानकारी पर आधारित है।

25—सास यो की कारा ओचिरू

प्रभाव रहा है। संभवतया यह लाभदायक रहेगा। जापान की पराजय के रायनीतिक पत्र की पर्याप्त उपेक्षा की गई है।[26]

इस अर्थ में जापान की पराजय को समझा जा सकता है यदि विभिन्न कारणों को जिनकी चर्चा पहले की जा चुकी है, उन्हें वरीयता के क्रम से न देखा जा कर सामूहिक दृष्टि से देखा जाए। इस प्रकार का पहला समूह, समय की दृष्टि से वह था, जिसमें जापान अपने शत्रु की तथा स्वयं की क्षमता को मापने में असमर्थ रहा। दीर्घकालीन दृष्टि से यह कारण एक कठोर (सैद्धान्तिक दृष्टि से) तथा उसी के साथ एक व्यापक (व्यावहारिक दृष्टि से नीति निर्माण करने वाली प्रक्रिया के परिणाम थे। 1941 के अन्त में कई नेता युद्ध-नियोजन विचार-विमर्श में सम्मिलित हुए तथा अनेक विनाशकारी निर्णय लिए गए। प्रारम्भ से ही जापानी संयुक्त राज्य अमेरिका की औद्योगिक क्षमता को समझाने में असमर्थ रहे। फिर इस युद्ध का प्रारम्भ भी एक सीमित उद्देश्यों वाले युद्ध के संदर्भ में किया गया था और इस दृष्टि से जापानी नेताओं ने भयंकर गलती की थी।[27]

पराजय के कारणो का दूसरा समूह मात्र प्रारम्भिक त्रुटिपूर्ण अनुमानों को इंगित करता है। मध्यवर्ती कारण भी पृथक् नहीं थे। प्रत्येक व्यक्तिगत असफलता भी सम्मिलित होते-होते अत्यधिक जटिल व्यक्तिगत असफलता बन गई। इन सब असफलताओं की महत्ता के आधार पर सूची बनाना विशेष अर्थ नहीं रखता। उदाहरण के लिए युद्ध-कर्ता आधुनिक युद्ध में शस्त्रों की महत्ता को समझने में असमर्थ रहे। जैसे बाद में कुछ जापानियों ने कहना

26. मूल्यांकन अनुमान तथा निष्कर्षों का मूल स्रोत बड़े पैमाने पर पत्र जांच पड़ताल तथा अमेरिकी रणनीति बमविस्फोट सर्वे (प्रशांत महासागर) है। प्रतिनिधि पत्र नीचे प्रस्तुत किये गए हैं। व्यक्तिगत अनुभव पर लेखक के शीघ्र ही यह महसूस किया कि जापानी मंत्रिमंडल के समान सर्वे भी संघर्ष स्थल बन गया। भविष्य को ध्यान करते हुए, अमेरिकी सेवा की प्रत्येक शाखा, जो संघर्ष के समय आश्चर्यजनक रूप से सहयोगी रही थी, बाद में इस निर्णय पर पहुंची कि अंतिम प्रसार उनका ही था। इस प्रकार के तर्कों का निर्णय अंततः सैनिक इतिहासकारों को करना चाहिए। प्रमाणों का सर्वाधिक प्रयोग जेरोम बी कोहन की पुस्तिका में किया गया है। जो आर्थिक विनाश की व्यापक चर्चा करता है। उसका यह निष्कर्ष है कि अमेरिका द्वारा आपूर्ति के सभी साधनों को बंद करने के पश्चात की गयी घेराबंदी ने जापानी उत्पादन को हवाई हमले के घातक प्रहार से पहले पूर्णतः समाप्त कर दिया था। (लेखक की भूमिका पृष्ठ 11) इस बारे में कोई विवाद संभव नहीं है। वस्तुतः जैसा कि प्रोफेसर कारेन ने लिखा है जापान की दीर्घ कालीन युद्ध को करने की मूलभूत दुर्बलता के कारण इसे इस युद्ध में सम्मिलित ही नहीं होना चाहिए था। हमारी दृष्टि से यह जापान द्वारा निरन्तर युद्ध करते रहने, सरकार द्वारा अपने लक्ष्य बनाए रखने आत्म-समर्पण का निर्णय करने की राजनीति, तथा अधिग्रहण द्वारा प्रतिपादित राजनीतिक संरचना इन सबके लिए अस्पष्ट मनोवैज्ञानिक कारक प्रस्तुत करता है। यहां हम संपूर्ण अप्रत्यक्ष दबाव व हिंसा से सम्बन्धित हैं, जिसने राजनीतिक निर्णय को प्रभावित किया। यह एक ऐसा युद्ध था जो पूर्ण विनाश से कुछ ही कम था, जापान का आत्म-समर्पण का निर्णय किस प्रकार किया, तथा उसके आत्म-समर्पण युद्धोत्तर राजनीतिक संरचना पर क्या प्रभाव पड़ा।

27. आत्म समर्पण के पश्चात एडमिरल नोमुरो ने कहा कि प्रीवी कौंसिल का यह विचार प्रतीत होता था कि यदि जापानी लगातार लड़ते रहे तो धीरे-धीरे अमेरिकी लोग युद्ध से तंग आ जायेंगे। सेना तुम्हारी प्रतिक्रिया की गति को समझने में असफल रही यथा यह कि हाईकमान का विचार था कि जर्मनी जीतेगा।" यू. एस. बी. एम. (नौसेना विश्लेषण विभाग) इन्टेरोगेशन्स ऑफ जापानीज आफीशियल्स वाशिंगटन, 1946 अंक दो पृष्ठ 384, 385, 387।

प्रारम्भ किया कि युद्ध "बांस के भालों से नहीं लडा जःता है। आधुनिक वायुसेना की बढती हुई शक्ति ने सैनिक सीमाओं का उपहास करना प्रारम्भ कर दिया। जून 1942 के अन्त में गुडाल नहर पर वायुसेना का नियन्त्रण खत्म हो गया तो यह हमेशा के लिये समाप्त हो गया : प्रत्येक सैनिक पराजय तथा समस्या इस तथ्य से प्रभावित हुई थी। आर्थिक गतिशीलता का अभाव स्वयं सेनाओं में परस्पर अभाव के कारण और अधिक गम्भीर बन गया। जापान की साम्राज्यक सेनाओं की पक्तियों में अत्यधिक साहसी अमेरिकी पनडुब्बियां ने बाधा डालनी प्रारम्भ की तथा यह कार्य अगस्त 1~45 के हवाई आक्रमण से पूरा हुआ। जापान की सम्पूर्ण नौ-शक्ति का नौ बटा दस भाग निष्क्रय हो गया। इस विनाश का आकार इतना विशाल था कि इससे ऊार ही सकना बड़ा कठिन था। जापानी यह नहीं कर सके। इसका सामना कर सकना जापानियों की क्षमता से बाहर था। किन्तु फिर भी आश्चर्यजनक रूप से वे सामना करते रहे।

पराजय के गौण कारणों में एक अन्य कारण भी था, जिसका अनुमान लगाने मे जापानी असमर्थ रहे। अगर पूर्ववर्त्ती दृष्टि से देखा जाये तो प्रशान्त महासागर के पार उस द्वीप द्वारा मित्र राज्यों की सेनाओं का सामना करना स्वय मे उल्लेखनीय सफलता था, किन्तु इस आक्रमण की तीव्रता से जापानी लड़खड़ा गए तथा उसने उनकी नौ सेना तथा वायुसेनाओं को नष्ट कर दिया। इस पराजय के कारणों को सामूहिक घेराबदी के सन्दर्भ में देखना चाहिए। बम डालने के लिए किये गये सर्वे की रिपोर्ट के शब्दों में—'इसने ऐसी कैंची का काम किया जिसने जापान की संपूर्ण सैनिक क्षमता को काट कर उसे प्रभावहीन अवशेषों के रूप में परिणत कर दिया। बसन्त में इवोजिया की विजय के साथ ही जापान की पराजय आसान बन गई।

फिर भी जापानियों ने प्रतिशोध किया। 1945 में ओकिनावा में जापानियों ने सिद्ध कर दिया कि जापान मित्र-राज्यों की आक्रमण द्वारा प्राप्त की गई विजय को अधिक मूल्यवान बना सकता था।

इसके साथ ही पराजय के कारणों का तीसरा समूह दृष्टिगोचर होता है। यद्यपि उन्होंने मात्र अन्तिम पराजय का अवसर प्रस्तुत किया, तथापि राजनीतिक दृष्टि से आत्म-समर्पण की अवस्थाओं, समय तथा उसके दीर्घ-कालीन परिणामों को प्रभावित करने की दृष्टि से राजनीतिक रूप से ये महत्त्वपूर्ण थे।

इस सम्बन्ध में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटना जापान के मुख्य द्वीप पर विश्व के लड़ाकू जहाजों द्वारा अत्यधिक विस्फोट बमों का प्रयोग था। जापानी आर्थिक व्यवस्था पहले से ही लड़खड़ा रही थी तथा जैसा कि एक नौसैनिक अधिकारी ने बताया बी 29 जहाजों ने जापान के उद्योगों का दोहरा विनाश प्रारम्भ कर दिया। मनोवैज्ञानिक युद्ध की दृष्टि से भी वास्तविक प्रचार का स्वरूप अत्यधिक दुखपूर्ण था। शरणार्थी समस्या अत्यधिक गभीर बन गई विशेष रूप से जनरल कर्टिस द्वारा व्यापक रूप से पृथकीकृत क्षेत्रों पर आक्रमण करने की प्रविधि से यह समस्या गम्भीर बनी। बी सेन अथवा (श्रीमान बी 29) के आंतक से जापानी इतने भयभीत हो गए थे कि लिखित परचों में नगरों के आसन विनाश की चेतावनी देने पर ही सम्पूर्ण नगर खाली कर दिये गये। 1944 का नैतिक स्तर दर्शाने वाली सूचियां बताती हैं कि जापान के मात्र दस प्रतिशत लोग ही विजय को असम्भव

मानते थे जबकि 1945 के अगस्त में अड़सठ प्रतिशत जापानी पराजय को निश्चित मानने लगे। इनके आधे लोग यह मानते थे कि अमेरिका के हवाई आक्रमण ने पराजय को टालने के प्रयासों को समाप्त कर दिया था।

दो अन्य कारकों ने जिन्होंने जापान की पराजय को अवश्यंभावी बना दिया समान्तर रूप से घटित हुई। 5 अगस्त को नदी के किनारे बसे हिरोशिमा नगर पर आक्रमण किया गया। इस महान् विस्फोट का जापानियों ने किस प्रकार अवमूल्यन किया, यह जापानियों द्वारा प्रेषित रेडियो संदेश से स्पष्ट है—

"कल 6 अगस्त को हिरोशिवा नगर ने अमेरिका के कुछ वी 29 विमानों के आक्रमण से पर्याप्त हानि उठाई। ऐसा लगता है कि इस आक्रमण में शत्रु ने किस प्रकार के बम का प्रयोग किया इसके प्रभाव व शक्ति का अध्ययन अभी किया जा रहा है, तथापि हम इसके बारे में चिन्ता-विहीन नहीं है।"

हिरोशिमा तथा नागासाकी पर परमाणु विस्फोट के प्रभावों को आश्चर्यजनक रूप से स्थानीकृत कर दिया गया। सम्भवतया इस भय ने जापानी जनता से कही अधिक उसके नेताओं को प्रभावित किया क्योंकि इस विस्फोट पर से रहस्य का आवरण बहुत दिनों बाद उठाया गया।

साधारण जापानी नागरिक प्रशान्त महासागर के युद्ध में रूस के प्रवेश से अत्यधिक प्रभावित हुआ, क्योंकि उसकी जानकारी उन्हें अधिक थी। इस प्रकार रूस की ओर से सुरक्षा की जो अन्तिम आशा थी, वह भी समाप्त हो गई। किन्तु दोनों ही मामलों में, जापान के आत्म समर्पण के निर्णय में रूस का आक्रमण तथा परमाणु बम का प्रयोग दोनों कारक मूल प्रेरकों के स्थान पर इस प्रक्रिया की रफ्तार को मात्र बढ़ाने वाले ही थे।[23]

अधिकांश युद्धों तथा आत्मसमर्पणों के समान जापान की पराजय में भी अन्ततः राजनीतिक निर्णय निहित था। मनोवैज्ञानिक युद्ध की दृष्टि से स्वयं मित्र राज्यों ने बाधायें उत्पन्न कर रखी थीं। दिसम्बर 1942 में राष्ट्रपति फ्रेंकलिन रूजवेल्ट द्वारा केसाब्लाका सम्मेलन में निःशर्त आत्म-समर्पण का प्रस्ताव अव्यवहारिक था जिसकी बाद में पुनः परिभाषा की गई। अनिश्चितता के कारण अनेक प्रभावशाली जापानियों ने यह अनुभव किया कि बिना शर्त आत्म-समर्पण कठोर सैनिको व जनता को और अधिक बलिदान देने के लिए प्रोत्साहित करता था।

तथापि पोटास्टडम घोषणा जिसने समर्पण की शर्तों की रूप रेखा प्रस्तुत की ने अन्ततः निर्णय लेने में अन्तिम बाधा को भी समाप्त कर दिया। अमेरिका की नौसेना के कैप्टन इलिस एवं जकारिया द्वारा सर्वाधिक प्रभावशाली रेडियो संदेश वस्तुत जापानी नेताओं को सम्बोधित किया गया था। चौथे सन्देश ने सैनिक गुट को पृथक् कर दिया तथा

28. देखिए यू० एस० एस० बी० एस० (सभापति का कार्यालय), दि इफेक्टस आफ एटोमिक बाम्बस ऑन हिरोशिमा एण्ड नागासाकी वाशिंगटन 20 जून, 1946। पूर्वोक्त, टिप्पणी में वर्णित राजनीतिक प्रभावों को परमाणु बम के वास्तविक प्रभावों से ध्यान आकर्षित करने के लिए प्रयुक्त नहीं करना चाहिए। अमेरिका की वर्तमान नागरिक सुरक्षा व्यवस्था उपर्युक्त सामग्री का प्रयोग आवश्यक मूल ग्रन्थ को समझने के लिए कर सकती है।

राष्ट्रपति ट्रूमेने के बारहवें संदेश ने सम्मननीय सशर्त आत्म समर्पण को स्पष्ट कर दिया।[29] जापान की पराजय में केप्टिन जकरिया की वैयक्तिक भूमिका की अतिशयोक्ति की जा सकती है यथापि आत्मसमर्पण की शर्तों को जिस प्रकार जापानियों को समझाया गया, उन्होंने जापान द्वारा आत्म-समर्पण के निर्णय में निर्णायक भूमिका अदा की।

आत्म-समर्पण के लिए आन्तरिक संघर्ष—

जापान ने सम्पूर्ण आक्रमणों के बिना ही पराजय स्वीकार कर ली, क्योंकि अब भी उसके पास 25 लाख सेना तथा नौ हजार कामीकेन वायुयान थे। यह एक स्तब्ध कर देने वाला निर्णय था, जिसने मित्र राज्यों तथा जापानियों दोनों को ही चौंका दिया। मात्र उलझी हुई तथा विनाशकारी सैनिक मोर्चाबन्दी से अधिक जटिल तथा परस्पर संबंधित राजनीतिक उद्देश्य से, परिवर्तन भाग्यशाली रहा। यह कैसे निर्णय लिया गया कि अब और सुरक्षा सम्भव नहीं थी ?

इसका उत्तर जुलाई 1944 में तोजो सरकार के पतन में तथा अगस्त 15, 1945 में साम्राज्यिक घोषणा में पाया जा सकता है। अनेक अमेरिकियों के लिए सम्पूर्ण नाटक के मात्र सम्राट ही एक अभिनेता था। वास्तविकता में भी आत्म-समर्पण में उसकी भूमिका सर्वोपरि थी किन्तु चूंकि यह जापान का राजनीतिक निर्णय था अतः इसमें अन्य लोगों का होना आवश्यक था। तैनो के साथ ही जुशीन थे। वरिष्ठ नेता जैसे मार्क्विस किदो, लार्ड कीपर तथा गोपनीय परामर्शदाता, राजकुमार कोनाये थे, जिन्होंने कुछ समय के लिए भाग एडमिरल ओकादा नोयूरा तथा यो कोई जैसे नौ-सैनिक व्यक्ति थे जो प्रारम्भ में तैनों का विरोध करते थे। कुछ निम्न स्तरीय अधिकारियों ने भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। जैसे सेका मिजू, हिसात्सुन मन्त्रिमण्डल तथा अपने श्वसुर ओकादा के मध्य की कड़ी था, कर्नल मातसुतानी, सुजेकी का सैनिक सचिव, कातो मात्सु, दो पेई का पूर्ववर्ती अमेरिकी संवाद-दाता, विदेश विभाग का अधिकारी तथा विश्वविद्यालय के प्राध्यापक, कार्तो ने बाद में लिखा कि माल्य सम्मेलन से बहुत पहले जापान को युद्ध के लिए तैयार करने के लिए सभायें हो रही थी। समस्या यह थी कि स्थिति का वास्तविक विवरण जो अल्पमत के अनुसार था को अवकाश प्राप्त सभी नेताओं द्वारा स्वीकारा जा सके।[30]

29. पोटामडम घोषणा का सम्पूर्ण अंग्रेजी मूल 14 परिशिष्ट में किया गया है तथा अपने अध्याय मे इसकी चर्चा की गई है। जापानी रेडियो ने कई बार घोषणा की "हम डाक्टर जकारिया द्वारा प्रस्तुत आत्मसमर्पण के आधार पर युद्ध समाप्त कर रहे हैं।" कैप्टन जकारिया के कैरियर का वर्णन उसकी जीवनी सीक्रेटमिशिन्स न्यूयार्क 1946 में है।

30. यू. एम एस. बी. एस. में निम्नलिखित वर्णन जापान्स स्ट्रगल टू एण्ड दि वार वाशिंगटन 1 जुलाई, 1946 एक सारांश के लिये देखिये "सर्वे ऑफ जापॉन्स डिफीट" फार ईस्टर्न सर्वे 14 अगस्त 1946। उत्तर आत्म समर्पण के बारे से प्रारम्भिक दृष्टिकोण के लिए देखिए मामाओ कोतो, दिलाम्ट वार एं जापानीज रिपोर्टर इन साइड स्टोरी, न्यूयार्क 1946। तोशीकानू केस जनी टू दि मिसौरी न्यू हेवन 1950. पर्याप्त विस्तृत याचनायुक्त ऐसा वर्णन है जो एक विदेशी अधिकारी के द्वारा प्रस्तुत किया गया। प्राप्त अमेरिकी तथा जापानी विषय सामग्री को नीहित करने वाला रावर्ट जे० सी० बटोड की रचना जापान्स डि सीशन टू सरेन्डर ए स्टडी इन पॉलिटिकल इवोल्यूशन प्रोसिटन (शोध रचना) स्टेनफोर्ड विश्व विद्यालय द्वारा प्रकाशन के लिए प्रस्तावित।

27 जून 1949 को एडमिरल ओकादा ने जुशिन का नेतृत्व करते हुए तोजो से त्यागपत्र देने को कहा। जुलाई के मध्य तक नौसेना तथा साम्राज्यिक परिवार के सदस्यों ने यह निश्चित कर लिया लिया कि तोजो त्यागपत्र दे दे। 14 जुलाई को तोजो सम्राट से भेंट करने गया उसकी अपेक्षा थी कि सम्राट झगड़े में मध्यस्थता करेंगे, मगर सम्राट ने उसका समर्थन करने से मना कर दिया। सैपन के पतन के साथ ही तोजा ने त्यागपत्र दे दिया।

22 जुलाई 1944 को जनरल कोइसो को सरकार बनाने की तथा युद्ध पर 'मूलभूत रूप से पुर्नविचार' प्रारम्भ करने की स्वीकृति मिली। तथापि उसका एकमात्र योगदान एक सर्वोच्च युद्ध निदेशक समिति बनाना था। (गुनरेबू सैंको सेंसो शियेकाईगी) एक संस्था जो बाद में आत्मसमर्पण का साधन बनी। इसने सेवा के प्रमुखों को साथ-साथ विचार-विमर्श करने तथा प्रधानमन्त्री को निर्णय करने के लिए प्रभावित किया।

लिगेट काण्ड के पश्चात्, इवो जिया की रक्तपूर्ण पराजय तथा ओकिनावा के पतन के पश्चात् सम्राट ने स्वयं विभिन्न जुशीन के साथ साक्षात्कार करने में पहल की। राजकुमार कोनोयो स्वयं सोवियत यूनियन के विश्व राजनीति में बढ़ते हुए प्रभाव से चिन्तित हो गया था तथा उसे रूस द्वारा जापान के अन्दरूनी मामलों में हस्तक्षेप से अत्यधिक भय उत्पन्न हो गया था।[31]

उसने शान्ति के लिए समझौता-वार्ता करने का परामर्श किया। 15 मार्च 1945 को कोइसो सरकार ने चीनी सरकार से पेंपिंग में अपनी कठपुतली सरकार के माध्यम से सम्पर्क स्थापित करने का प्रयास किया किन्तु जापानी सेना ने किसी भी गम्भीरतापूर्ण समझौते के मार्ग में बाधाएं डाली।

सुजेकी परिषद 8 अप्रेल, 1945 को बनी थी तथा इसे जापान के आधुनिक इतिहास में साम्राज्यिक इच्छा की पहली प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति कहा जा सकता है। वह पूर्णतः सम्राट के प्रति उत्तरदायी थी। जैसे कि युद्ध के पश्चात् उसने एक प्रश्नकर्त्ता को उत्तर देते हुए स्पष्ट किया यह सम्राट की इच्छा थी कि युद्ध को जितनी शीघ्रता से हो, समाप्त किया जाए तथा यही मेरा उद्देश्य था।

मई में जर्मनी के पतन के बाद सेना विकल्पों पर विचार करने के लिए तैयार थी। 8 जून को सर्वोच्च युद्ध परिषद् ने सम्राट के साथ जापान की क्षमताओं पर एक निराशाजनक रिपोर्ट पर विचार-विमर्श किया। यह रिपोर्ट साकोपिज़ु के द्वारा लिखी गई थी।[32]

31. कोनयो के सम्राट् को दिये गए स्मरण पत्र में लिखा मेरे ध्यान से अब पराजय में कोई सदेह नहीं रह गया है। निश्चय ही पराजय हमारे इतिहास पर गहरा धब्बा होगा तथापि जब तक हम अपनी तैनो व्यवस्था को बनाये रख सकते हैं हमें इसे स्वीकार कर लेना चाहिये। अतः हमें इस पराजय से इतना नहीं भयभित होना चाहिऐ जितना साम्यवादी क्रांति से जो पराजय की स्थिति में संभव हो सकती है। यू एस एस बी. एस जापान्स स्ट्रगल पूर्वोक्त परिशिष्ट ए. 5 पृष्ठ 21।

32. साकोमिज़ु ने हमें, इन दिनों का पर्याप्त निराशा जनक हास्यपूर्ण चित्र प्रस्तुत किया है। उसका अपना मकान जल गया था तथा उसने दफ्तर के नीचे के हिस्से में रहने का स्थान बना लिया था। प्रत्येक सुबह उठ कर निष्कर्ष से विस्तृत होकर वह सर पर टोप धर कर उन बिल्डिंग के ऊपरी हिस्से में जाता था तथा फिर हैट उतार के काम में लग जाता था। यह ऑफिस जाने की प्रक्रिया थी। रात को यह कार्यक्रम विपरीत हो जाता था यह कार्यालय से घर जाने की प्रक्रिया थी।

जुलाई में यह निर्णय किया गया कि राजकुमार कोनोगे मास्को जाकर आत्म-समर्पण की शर्तों पर बातचीत करेगा, तथापि मध्यस्थता की प्रथम प्रार्थना के उत्तर में बिना शर्त आत्म-समर्पण के लिए कहा गया। दूसरी प्रार्थना के बाद पता चला कि स्टालिन तथा मोलोतोव पोटासडाम के लिए रवाना हो गए थे। जापानी अधिकारी इस सम्मेलन के निर्णयों की प्रतीक्षा बड़ी व्यग्रता से कर रहे थे। विशेष रूप से जापान के नौसैनिक अधिकारी कैप्टन जकारिया के प्रसारणों के प्रत्येक शब्द को बहुत ध्यान से सुन रहे थे। तत्पश्चात् पारासडम घोषणा की शर्तें सम्मुख आईं। मूल उद्देश्य स्पष्ट हो चुका था, "जापान को इस युद्ध को समाप्त करने का अवसर प्रदान किया जायेगा।

26 जुलाई को किए गए विचार-विमर्श में प्रधानमन्त्री सुजेकी तथा विदेश मन्त्री तोगो तथा नौसेना मन्त्री मोनाई ने पोटासडम की शर्तों पर आत्मसमर्पण करने को कहा किन्तु जनरल अनामी तथा स्टाफ परिषद् ने इसका विरोध किया। उनकी निम्नतम शर्तें ये थीं —

1. जापान कीं मुख्यभूमि में कोई सेना नहीं रखी जाएगी।
2. जापान सुदूर समुद्र पार क्षेत्रों से अपनी सेना स्वेच्छा से हटायेगा।
3. जापान अपने युद्ध-अपराधियों पर स्वयं मुकदमा चलायेगा।

29 जुलाई को जापान ने पोटासडम शर्तों को अस्वीकार कर दिया. तथापि जापान की प्रतिशोध करने की इच्छा में दुर्बलता दृष्टिगोचर होने लगी थी।

1945 में 5 से 9 अगस्त के मध्य दो परमाणु बम डाले गए तथा रूस ने युद्ध में सम्मिलित होने की घोषणा की तथा मंचूको पर आक्रमण कर दिया। सेना बिना किसी जवाबी योजना के अभाव में अस्त-व्यस्त हो गई तथा एक एक घण्टे की घटनाओं पर दृष्टि रखी जाने लगी।

9 अगस्त को प्रातः 7 बजे प्रधानमन्त्री सुकेजी ने सम्राट से कहा कि उसने पोटासडम अल्टीमेटम को स्वीकार करने का निर्णय किया है। प्रातः 10 बजे सर्वोच्च युद्ध-परिषद् की बैठक हुई, किन्तु उग्र वाद-विवाद के पश्चात् यह बिना कोई निर्णय लिए स्थगित हो गयीं। संपूर्ण मंत्रिमण्डल में नो मन्त्रियों ने बिना शर्त आत्म समर्पण पर बल दिया। तीन सशर्त आत्म समर्पण पर तथा तीन अनिश्चित थे। 11 बजे सम्राट युद्ध परिषद् के 6 सदस्यों, उनके सचिवों तथा प्रीवी परिषद् के बैरन हिरानुमा से भेंट की। साम्राज्यिक परिषद् में गतिरोध उत्पन्न हो गया, तब आन्तरिक परिषद् की मीटिंग हुई। 2-30 बजे सम्राट ने पोटासडम सम्मेलन की शर्तों को मानना स्वीकार किया बशर्ते सम्राट् के विशेषाधिकार को बनाये रखने का आश्वासन दिया जाए।

किन्तु यह नाटक दुबारा करना पड़ा. क्योंकि अगस्त 12 को संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा दिया गया उत्तर स्पष्ट नहीं लग रहा था। इस बार फिर मन्त्रिमण्डल में मतभेद था। किन्तु इस बार स्वीकृति के पक्ष में 13·2 के अनुपात में बहुमत था। 13 अगस्त को प्रातः युद्धमन्त्री, सुरक्षामन्त्री तथा मुख्य सेनापति सर्वोच्च युद्ध निर्देशन परिषद् में विरोध में बने रहें। उसके दूसरे दिन सम्राट् हिरोहितो ने स्वयं 10 बजे प्रातः परिषद् की मीटिंग बुलाई जिसमें प्रत्येक पक्ष ने अपने विचार दिए। सम्राट ने अपने परामर्शदाताओं को धन्यवाद देते हुये यह कहा—

"किसी भी पक्ष से विचार करने पर भी युद्ध को लगातार करने का, निर्णय उसमें सफलता प्राप्त करने का आश्वासन नहीं देता है। अतः बिना किसी का सुझाव मांगे मैंने यह निर्णय कर लिया है कि युद्ध बन्द कर दिया जाए। क्योंकि मैं यह विचार सहन नहीं कर सकता हूँ कि मेरीप्रजा सैंकड़ों सहस्त्रों व लाखों की तादाद में मारी जाए तथा मैं विश्व-शांति को भंग करने वाला कहलाया जाऊँ अतः जो असहनीय है मैंने उसे सहने का निर्णय कर लिया है तथा पोटासडम सम्मेलन की शर्तों को मानने का निर्णय कर लिया है।"[33]

युद्ध-मन्त्री जनरल अनामी, इस निर्णय से अत्यधिक प्रभावित हुआ। उसने अवकाश प्राप्त कर लिया तथा बाद में आत्म-हत्या कर ली। उदारवादियों का कहना था कि सम्राट् सेना पर आधिपत्य करके, उसके माध्यम से जनता के निकट आ गया था। 15 अगस्त को सम्राट् की आवाज को रेडियो-प्रसारण के लिए पहली बार रिकार्ड किया गया, जिसमें पोटासडम की शर्तों को मानने की साम्राज्यिक घोषणा थी। यहां यह उल्लेख उचित होगा कि इस घोषणा में आत्म-समर्पण शब्द का प्रयोग कहीं भी नहीं किया गया था।

आत्म-समर्पण के निर्णय के दो पक्ष राजनीतिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण थे। जनमत की दृष्टि से यह स्पष्ट है कि सामना करने की इच्छा शक्ति का पतन पहले राजनीतिक नेताओं में हुआ तथा तब संपूर्ण जनता का पतन हुआ। इसका एक उपनिर्णय यह भी है कि लोगों ने स्वयं युद्ध के लिए अथवा अपनी पराजय के लिए स्वयं को उत्तरदायी नहीं माना। उनमें पूर्व सैन्यवादी नेताओं के प्रति रोष रोष था अब भी है। कुछ लोगों ने यहाँ तक कह है कि युद्ध में अन्तिम प्रहार आधुनिक कामीकेज (दैवीय तूफान) था, जिसने जापान को तथा उसकी तैनो व्यवस्था को सुरक्षित कर दिया।

एक बार फिर जापान के इतिहास में संकट में सम्राट् ने महत्त्वपूर्ण निर्णय लिया। यह स्पष्ट था कि तैनो व्यक्ति तथा संस्था ने रूप में बना रहेगा। यह स्पष्ट नहीं था कि वह मूल्यवान उपलब्धि सिद्ध होगा या भार बनेगा। तत्कालीन दृष्टि से जापान महायुद्ध की की विभीषिका से बच गया था किन्तु क्या वह बाह्य तथा आन्तरिक द्वन्द्व के शिकंजे से भी बच पाएगा यह मित्र राज्यों पर निर्भर करता था।

□□□

33. यू. एन० एम० बी० एन०, इंटेरोगेशन्स, पूर्वोक्त अंक दो। 13 14 नवंबर 1645) पृष्ठ 233। चार महीनो के बाद दिसंबर में इस चित्र का वर्णन जापानी लोगों के लिये मौरान (जनमत) नामक मैगजीन में दिया गयां, देखिये निप्पोन टाइम्स 14 दिसंबर 1945 पृष्ठ 1।

अध्याय 20 | लोकतांत्रिक ढांचे का निर्माण

(आधिपत्य कारिणी सरकार तथा राजनीति, प्रथम भाग)

अमेरिका की सैनिक तथा नागरिक सत्ता द्वारा जापानी साम्राज्य पर अधिकार किये जाने की घटना, जिसे यद्यपि ऊपरी तौर पर अन्तर्राष्ट्रीय भागीदारी का स्वरूप प्रदान किया गया था, की सर्वाधिक विचित्र विशेषता यह थी कि सम्पूर्ण अमेरिकी जनता तथा उनकी सरकार ने कभी इस तथ्य को महसूस नहीं किया कि वे कितना क्रांतिकारी कार्य करने जा रहे थे। जापान के अधिकार को एक उत्तरदायित्व के रूप में स्वीकार कर तथा उसे अपनी विजय का परिणाम समझ कर प्रसन्नता का अनुभव करने वाले अमेरिकियों ने स्पष्टतः इस नवीन किन्तु चिन्ताजनक मान्यता को स्वीकार किया कि प्रजातन्त्रीय सत्ता की स्थापना करके एक पूर्णतः विदेशी संस्कृति को संक्षिप्त प्रक्रिया द्वारा संशोधित किया जा सकता था।

हमारी बाद की पीढ़ियां इस के बारे में ऐतिहासिक तरीके से विचार व्यक्त करेंगी। भविष्य की पीढ़ी होने के नाते वे इस साहसिक कार्य एवं इसके परिणामों पर विचार व्यक्त करने में सफल होंगी तथा हमारे विपरीत वे प्राचीन विश्व के साम्राज्य पर नवीन विश्व के गणतन्त्र द्वारा आधिपत्य के इस विचित्र तथा कठिन साहसिक राजनीतिक कार्य के बारे में निर्णय देने में सफल होंगी।

एक अर्थ में इस आधिपत्य स्थापित करने की घटना को, 1778 में क्यूबेक के विरुद्ध बेनडिक्ट अर्नोल्ड द्वारा किये गये दुर्भाग्यपूर्ण प्रचार के समान प्रथम दबावपूर्ण निर्यात कहा जा सकता है। अमेरिकी जनता के विभिन्न समूहों व वर्गों को जापान पर प्रजातन्त्र थोपे जाने के प्रयास में कुछ भी विचित्र नहीं लगा। पीढ़ियों तक अमेरिकावासी पुराने विश्व से स्वयं की श्रेष्टता की भावना पालते रहे हैं, तथा मानते हैं कि अमेरिकी पद्धति का प्रजातन्त्र एक नवीन भूमि, नवीन जनता तथा नवीन विश्व की विशिष्ट तथा पूर्णतः विचित्र देन है। प्रजातन्त्रीकरण की जिस प्रक्रिया को अमेरिका ने जापान पर अधिकार से पहले ही प्रारम्भ कर दिया था, वह जापान में सुरक्षा तथा नाविक आवश्यकता के कारण उत्पन्न हुई थी तथा वह शक्ति राजनीति के संयोगो का परिणाम थी। स्वयं विलसन आरमेनिया के लिए परमदेश को स्वीकार नहीं करता। यदि इस प्रकार का प्रस्ताव पेरिस शान्ति सम्मेलन में रखा गया होता कि मित्र राज्य तथा अमेरिका सम्मिलित होकर जर्मन समाज के पुनर्निर्माण का प्रयास करे तथा जर्मन भावना को एक नवीन दिशा प्रदान करें तो मेन से लेकर केलीफोर्निया तक तथा उत्तरी डकोटा से टेक्सास तक इस भावना का विरोध किया गया होता। किन्तु 25 वर्ष बाद अमेरिकी अधिकारियों तथा

तथा कर्मचारियों ने मानव समाज के बारे में अपनी मूल मान्यताओं को परिवर्तित कर लिया था।

अमेरिकियों ने, जानबूझ कर या अज्ञानतावश ही सही, रूस की बोल्शेविक क्रांति तथा जर्मनी की राष्ट्रीय समाजवादी क्रान्ति की मूल शिक्षाओं के कम से कम एक अर्थ को स्वीकार कर लिया था। अमेरिकी लोग अब सैद्धान्तिक राजनीति में विश्वास करने लग गये थे।

यद्यपि 1945 के अमेरिकियों ने इस तथ्य को स्पष्टतः नहीं कहा, तो भी उनकी सरकार द्वारा जापान पर आधिपत्य की घटना की कुछ स्पष्ट मान्यताएं प्रस्तुत की जा सकती हैं। जैसे जापान में शक्ति का नवाब प्रयोग दंड देने की दृष्टि से तथा कुछ सिखाने की दृष्टि से उचित था, जिसके बाद उस कार्य को सरकारी तरीकों मे कम दवाब के साथ किया जा सकता था तथा अन्ततः मानवीय आत्मा की स्वतन्त्रता वाह्य तरीकों से प्रजातन्त्रीकरण के माध्यम से प्रोत्साहित की जा सकती थी। किसी भी अमेरिकी ने अपने पिता के समान यह नहीं कहा कि "हमने उन पर प्रहार किया, अब उन्हें अकेला छोड़ देना चाहिए तथा हमें अपने काम में ध्यान देना चाहिए।

हिरोशिमा तथा नागासाकी पर परमाणु विस्फोट के समान बहुत सी घटनाएं इतना मानसिक आघात पहुँचाने तथा गहन अशांति प्रदान करने वाली सावित हुई हैं अमेरिकी जनता जो स्वयं अपने आर्थिक मामलों के सम्बन्ध में दूरगामी नीति के अभाव के कारण अव्यवस्थित थी, तथा एक दशाब्दी के वायुयुद्ध से और भी परेशान हो गई थी, अमेरिकी सरकार द्वारा पर्याप्त तत्परता तथा चतुरता पूर्ण ढंग से प्राप्त किये गये इस भयानक आणविक शस्त्र के प्रयोग पर अपराध, विजय तथा आतंक की भावना से उत्तेजित हो गई। जब जापान ने आत्मसमर्पण किया उस समय अमेरिकी मनोवैज्ञानिक क्रांति में से गुजर रहे थे; एक बहुत शान्त क्रान्ति किन्तु जो आवश्यक रूप में क्रान्ति ही थी, क्योंकि 1945 में अमेरिकी लोग ऐसी अनेक वस्तुओं के बारे में पुर्नविचार तथा पुर्नमूल्यांकन करने के लिए वाध्य हुए, जिन्हें वे आज तक मूलभूत समझते आये थे।

आत्म-समर्पण—

आज अमेरिकी मानव सभ्यता द्वारा संगठित विशालतम नौ सेना को किस नाम से पुकारेंगे ? वस्तुतः वह हमारा समुद्री आरमेडा था जिसने 28 अगस्त 1945 को होंशु के किनारे पर डेरा डाला। 30 अगस्त को अतसुगी हवाई अड्डे पर प्रति चार मिनट के अन्तर पर विशाल सी—54 हवाई जहाज उतरते थे। योकोसुका में 10 हजार नाविकों व नौ सैनिकों को उतारा गया तथा उन्हें किसी भी प्रकार की छलप्रवंचना के विरुद्ध संरक्षण प्रदान करने का कार्य लड़ाकू विमानों तथा वमवाज यानों का दस्ता कर रहा था। दोपहर से पहले ही सेना के अध्यक्ष डूगाल्स मैकार्थर ने प्रशान्त महासागर के उत्तरी क्षेत्र की यात्रा पूरी की। उसकी यात्रा अगस्त 1942 में आस्ट्रेलिया से प्रारम्भ हुई थी।

योकोहामा फैक्ट्री की छत पर अज्ञात जापानी ने जापानी औपचारिकता को प्रस्तुत करने वाला चिह्न लगाया था। जिसका अर्थ था "अमेरिकी जल तथा थल सेना का

स्वागत है।" सम्पूर्ण जापानी साम्राज्य मात्र कुछ यात्री बसों को उस स्थान पर एकत्रित कर सका, जहाँ से मार्ग अतसुगी हवाई अड्डे को जाता था। अतसुगी हवाई अड्डे का चयन करने का कारण यह था कि वह कुछ ऐसे बचे हुए हवाई अड्डों में से था जो कार्य करने की स्थिति में थे। योकाया के मेयर ने इस नष्ट एवं जले हुए नगर में राष्ट्रपति के लिए स्वागत-भाषण दिया। दो दिन तक अमेरिकी व जापानी लेफ्टिनेंट, जनरल रोबर्ट एवं इशलबर्गर तथा उसकी आठवीं सेना के आगमन की तैयारियाँ करते रहे। उस समय स्वयं अमेरिकियों को ज्ञात नहीं था कि भविष्य में इस सेना को कोरिया में भी हस्तक्षेप करना पड़ेगा। इस समय इनकी सारी तैयारियाँ अमेरिकी मिसौरी पर जापान द्वारा आत्मसमर्पण से सम्बन्धित थी।

2 सितम्बर को प्रातः से विभिन्न अधिकारियों ने इस लड़ाकू जहाज पर एकत्र होना प्रारम्भ कर दिया। यह जहाज अब टोकियो की खाड़ी में खड़ा कर दिया गया था। जापानी प्रतिनिधि मण्डल 8-15 प्रातः पहुँचा, जो मुख्यस्थल पर सावधान की मुद्रा में खड़ा रहा। निश्चित रूप से चार मिनट तक उसने प्रतीक्षा की।

जनरल मैकार्थर ने आने के पश्चात् समारोह प्रारम्भ किया। उन्होंने प्रारम्भ में एक संक्षिप्त मानवतापूर्ण एवं सदय भाषण दिया, जो गर्वोक्तियों से युक्त भी था। तब जापानियों ने हस्ताक्षर किये। तत्पश्चात् जनरल मैकार्थर, अमेरिकी प्रतिनिधियों ने, चीनी, ब्रिटि , रूसी, आस्ट्रेलिया, केनाडा, फ्रान्स तथा न्यूजीलैण्ड के प्रतिनिधियों ने शीघ्रतापूर्वक एक के बाद एक हस्ताक्षर किये। जनरल मैकार्थर ने एक अन्य संक्षिप्त भाषण दिया तथा समारोह समाप्त हो गया।

जापान में एक नवीन युग का प्रारम्भ हो गया।

आत्मसमर्पण के प्रलेख में आठ मूल प्राविधान थे। जापानियों ने निम्नांकित शर्तों को स्वीकार किया:—

1—पोटासडम घोषणा की सभी शर्तें।

2—सभी सेनाओं का बिना शर्त आत्मसमर्पण।

3—विरोधी गतिविधियों को समाप्त करना तथा सैनिक शस्त्रो को सुरक्षित रखना।

4—शाही सैनिक मुख्यालय को दिया गया आदेश कि वह सभी क्षेत्रीय सेनाओं को बेशर्त आत्मसमर्पण करने की आज्ञा देगा।

5—यह देखना कि सभी नागरिक तथा सैनिक अधिकारी सर्वोच्च सेना-अधिकारी की आज्ञाओं का पालन करे।

6—सद्भावनापूर्ण ढंग से पोटासडम उद्घोषणा को क्रियान्वित करना ताकि जापान में स्वतन्त्र संस्थाओं की स्थापना कर संप्रभुता की पुनः स्थापना की जा सके।

7—सभी बन्दियों को रिहा करना तथा यह देखना कि वे सुरक्षित ढंग से अपने स्थानों पर पहुँच जाएं।

8—यह मानना कि सम्राट् तथा जापानी सरकार की सत्ता सर्वोच्च सेना के कमाण्डर के अधीन थी।

उसी दिन अर्थात् 2 सितम्बर को शोवा सम्राट् हिरोहितो ने एक शाही विज्ञप्ति प्रेषित कर आत्मसमर्पण की घोषणा की तथा जापान की केन्द्रीय सरकार ने जापानी सामान्य आदेश संख्या एक प्रेषित किया। यह जापानी सरकार द्वारा आत्मसमर्पण की शर्तों को क्रियान्वित करने वाले आदेशों में सर्वप्रथम था।[1]

आत्मसमर्पण समारोह 3 सितम्बर को समाप्त हुआ जबकि अमेरिका का अपना वही ध्वज जापान में फहराया गया जो 7 दिसम्बर 1941 को वाशिंगटन में केपीटल कर फहरा रहा था। उसके बाद वही ध्वज कैसाब्लांका, रोम तथा बर्लिन पर फहराया गया। जापानी ध्वज कहीं फहराया जाना था। सूर्योदय ध्वज निषिद्ध कर दिया गया, तथा आत्मसमर्पण पूरा हो गया।

आधिपत्य का स्वरूप :

यद्यपि जापान पर अमेरिकी आधिपत्य के सैद्धान्तिक स्वरूप को व्यापक रूप से स्वीकार नहीं किया गया था तब भी यह आधिपत्य अपने प्रशासनिक एवं न्यायिक स्वरूप में अन्य धुरी राष्ट्रों के आधिपत्य से तीव्र भिन्नता रखता था।

जापान को जर्मनी के समान क्षेत्रों में विभाजित नहीं किया गया। जापान को इटली के समान प्रत्यक्ष विदेशी सैनिक सरकार के अधीन नहीं रखा गया।

अधिकांश यूरोप के समान राजनीतिक अज्ञातवास तथा अराजकता का शिकार नहीं बना।

अन्ततः जापान ने अपने आत्मसमर्पण के अन्तिम दौर में ऐसी गम्भीर राजनीतिक सफलताएं प्राप्त कीं; जिन्हें अमेरिका के अन्य शत्रु प्राप्त करने में सफल नहीं हुए थे। इण्डोनेशिया, हिन्दचीन तथा कोरिया में स्वतन्त्रता-संघर्ष का समर्थन कर जापानियों ने जो राजनीतिक सफलता प्राप्त की थी वह सम्पूर्ण धुरी राज्यों में, एक मात्र स्पेन के अवशिष्ट जनरल फ्रैंको के अतिरिक्त पूर्णतः सबसे भिन्न थी। जापानियों ने सम्राट् पद

1—काहिरा-घोषणा की मूल रचना के लिए (27 नवम्बर 1943) बिना शर्त आत्मसमर्पण की घोषणा की गई (सुर्जोकेन कोटुकु)। आत्मसमर्पण से पहले विचारों का आदान-प्रदान, जापान के प्रथम प्रस्ताव की स्वीकृति पर ट्रूमन की टिप्पणी (11 अगस्त 1945) जापान की स्वीकृति पर ट्रूमेन की टिप्पणी (2 सितम्बर 1945, निर्देश संख्या प्रथम, 2 सितम्बर, 1945 की आदेश संख्या एक और दो), ये सब जापानी में योकोना किसाबुरो सम्पादक निहोन कानरी होरेई कोन्क्यू (जापानी प्रशासनिक निर्देश शोध) टोक्यो, टोक्यो, दाइगाकु होगाकुबुनाई, निहोन कानरी होरेई केन्क्यू कार्य (टोक्यो विश्वविद्यालय विधि विभाग जापानी प्रशासनिक निर्देशों पर शोध करने वाला समाज) अंक प्रथम संख्या एक (1 अप्रैल 1946) पृष्ठ 126। अंग्रेजी में विदेश-विभाग का ऑक्यूपेशन ऑफ जापान; पॉलिसी एण्ड प्रोग्रेस (प्रकाशन 2671, सुदूरपूर्व शृंखला 17) वाशिंगटन 1946, परिशिष्ट 4-10 पृष्ठ 56-67 (इसके बाद इसे एस. के. एव के. नाम से तथा बाद वाले को डिपार्टमेंट ऑक्यूपेशन के नाम से सम्बोधित किया जाएगा।) राष्ट्रपति ट्रूमेन का भाषण (14 अगस्त, 1945) अमेरिकी सेनापति जनरल मैकार्थर की संयुक्त कमान के सेनापति के रूप में नियुक्ति की एकमात्र सरकारी घोषणा थी (एस सी. ए पी. जापानी में रेंगुगामु सक्काला, रेंगोकोकु सायको-सिरेकान)। परिशिष्ट 15 में जापानी लोगों के सम्मुख आत्मसमर्पण की शाही घोषणा का अनुवाद दिया गया है।

को बने रहने देने के आदेश का सर्वाधिक स्वागत किया।[2] जापानियों का आत्मसमर्पण पूर्णतः ऊपरी तौर पर ही बिना शर्त था, क्योंकि वे कुछ सीमा तक सौदेबाजी करने में सफल हुए थे।

इसके अतिरिक्त जापानियों की सामाजिक तथा व्यक्तिगत संघर्ष की परम्परा ने उन्हें सुदृढ़ता प्रदान की कि वे आधिपत्य की प्रक्रिया का सामना कर सके। यह जापानियों की परम्परा है कि वे भयंकर विनाश के सम्मुख पूर्णतः नियन्त्रित ढंग से बने रह सकते हैं। एक बार आत्मसमर्पण करने के पश्चात् कई जापानी अत्यधिक दुखी तथा निराश हो गये किन्तु उनमें में अनेक ने आत्मसमर्पण को अन्तिम घटना न मान कर उसे एक और कठिन चुनौती के रूप में स्वीकार किया। यह कहा जा सकता है कि विश्व में शायद ही कभी किसी देश ने अधिकरण की प्रक्रिया को इतनी उत्सुकता तथा तत्परता से स्वीकारा हो जिसका प्रदर्शन जापानियों ने किया।

अमेरिकी पक्ष की ओर से अधिकार स्थापित करने की सम्पूर्ण प्रक्रिया का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य विजयी राष्ट्रों में संयुक्त राज्य अमेरिका की प्रमुख स्थिति थी। दूसरा एकमात्र देश जिसने जापान के पतन में निरन्तर सहायता की थी वह चीन था। किंतु चीन जापान के सन्दर्भ में कुछ भी करने की स्थिति में नहीं था। इसके विपरीत चीनी राष्ट्रवादियों को चीन में सम्यवादियों के विरुद्ध रेलवे लाइन की पहरेदारी करने के लिए जापानी सैनिकों की अत्यधिक आवश्यकता थी। युद्ध के अन्तिम दिनों तथा घंटों में आक्रमण करके यद्यपि रूस ने युद्ध में पर्याप्त मनोवैज्ञानिक योगदान दिया था तथापि रूसी, अमेरिकियों से याल्टा-सम्मेलन में जो कुछ क्षेत्रीय तथा भौगोलिक सुविधाएं प्राप्त कर चुके थे उससे अधिक लेने की परिस्थिति में वे नही थे। यद्यपि ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल ने महान् पूर्वी एशिया के इस सम्पन्नता-क्षेत्र की बाहरी परिधि में युद्ध में सक्रिय सहयोग दिया था किन्तु जापान पर अन्तिम आक्रमण में उनका सहयोग इतना नगण्य था कि अमेरिका का उनके प्रति कोई भी दायित्व नहीं बचा था।

एक दृष्टिकोण के अनुसार इस आधिपत्य की प्रक्रिया को अमेरिका तथा मित्र राज्यों में परस्पर समझौते की एक शृंखला के रूप में देखा जा सकता है। ये मित्र राज्य प्रारम्भ से अन्त तक जापान पर अधिकार की माँग करते रहे किन्तु वास्तव में वे यह अधिकार प्राप्त करने में असमर्थ रहे। अन्य मित्र राज्यों के योगदान की उपेक्षा का अन्तिम चरण मई 1952 में आया, जब जापानी सरकार ने शांति-सन्धि की पुष्टि करने के पश्चात् सोवियत सेना को यह सूचना दी कि वे रूस से प्रत्यक्ष वार्तालाप करने को तैयार नहीं हैं तथा भविष्य में रूसियों को यदि कोई बात कहनी हो तो उन्हें स्टॉकहोम के माध्यम से ऐसा करना चाहिए।

2—जापानी सुविधा से लाभ उठाने में वे बड़े तत्पर थे। राजकुमार दिगाशी, जिसने आत्मसमर्पण के लिए मंत्रीमंडल बनाया था (17 अगस्त—9 अक्टूबर 1945), ने आत्मसमर्पण के कुछ दिनों बाद डाइट के 88 वें अधिवेशन को सम्बोधित किया, युद्ध की समाप्ति पूर्णतः हमारे सम्राट् ने अपने पूर्वजों से क्षमा मांगते हुए, अपनी लाखों प्रजा को कष्ट से बचाने के लिए यह निर्णय लेकर आने वाली पीढ़ियों के लिये महान् शांति का मार्ग प्रशस्त किया। हम इससे पहले कभी भी इतने अधिक उदारतापूर्ण कार्य से प्रभावित नहीं हुए थे।" निप्पोन टाइम्स, 6 सितम्बर, 1945 पृष्ठ 1 कालम।

दूसरे दृष्टिकोण के अनुसार आधिपत्य के अन्तर्गत जापान के पुनरोदय के प्रोत्साहन का तरीका स्वयं आत्मसमर्पण से प्रभावित हुआ था। जर्मनी ने स्वयं को एक कानूनी इकाई बनाये रखने के कठिनतम प्रयास किये थे, जिसका विवरण प्लेन्सवर्ग के हास्य प्रधान दुखांतिका वाले अश्व ओपेरा में दिया गया है जिसमें यूनीफार्म वाले नाजी एक छोटे से कस्बे में उस समय तक चालीस मर्सिडीज कारों में चक्कर लगाते तथा आखिरी दम तक लड़ते हैं जब तक कि या तो उन्हें गिरफ्तार कर लिया जाता है या वे आत्महत्या कर लेते हैं। इसके विपरीत जापान की सरकार बनी रही। यह टोक्यो से स्थानांतरित नहीं हुई। इस निरन्तरता का चिह्न स्वयं सम्राट् था। जापान पर अधिकार पर भी जापानी छाप थी। 1945 से 1652 तक की अवधि में भी जापान पर जापानी सरकार द्वारा ही शासन किया गया।

मित्र राज्यों की सर्वोच्च सैनिक कमांड एक समाचार के रूप में

जापानी सरकार की निरन्तरता तथा अधिकरण में अमेरिका की प्रमुख स्थिति के ये दो कारक हैं जिन्होंने युद्धोत्तर जापान की राजनीति को प्रभावित किया।

इसके सन्दर्भ में अनेक विवाद तथा दृष्टिकोण पाये जाते हैं। एक सम्वाददाता के लिये, जिसे प्रतिदिन नवीन समाचार देने होते हैं, अमेरिकी आधिपत्य ने नवीन रूप धारण कर लिया। जापान से आने वाले समाचारों में कठिनता से ही कोई समाचार सर्वोच्च महत्त्व वाला होता था। प्रथम चरण में अमेरिका ने मित्र राज्यों की सैनिक कमांड का मुखिया होने के नाते विसैन्यीकरण को पूरा करने में प्रारम्भिक कदम उठाया। इस स्तर पर आधिपत्य पूर्णरूपेण सफल था। इसके बाद समय समय पर अनेक बड़ी कहानियों—शुद्धीकरण, चुनाव, नवीन संविधान, कोरिया-संघर्ष तथा स्वयं मैकार्थर की विमुक्ति आदि घटनाएं प्रकाशित होती रहीं। इन समाचारों के मध्य से सम्वाददाताओं ने व्यक्तित्वों पर प्रकाश डालना भी प्रारम्भ किया।

मित्र राज्यों की सर्वोच्च सैनिक कमांड के अधिकारी वस्तुतः उल्लेखनीय थे। वे उन परिस्थितियों की उपज थे, जिनमें उन्हें उन्हें द्वितीय वरीयता प्राप्त थी। जनरल मैकार्थर, जो अमेरिकी सेनापतियों में सर्वाधिक युवा (1930–1935) सेनापति रह चुका था, अमेरिका के मुख्य सेनापति से कनिष्ठ था। पृथक् सुसंगठित तथा आत्मनिर्भर मित्र राज्यों की सर्वोच्च सैनिक कमान जापान के तोकूगावा बाकूफू के समान थी; एक ऐसी सैनिक संस्था जो बहुत कम हस्तक्षेप करती थी। मैकार्थर-सेना की कहानियाँ उन सैनिकों के विवरणों से जिन्होंने या तो उस सेना के अन्तर्गत युद्ध किया था, या नौसेना तथा समुद्री सेना के सैनिकों ने जिन्होंने अन्तिम आक्रमण की तैयारी में सहयोग दिया था तथा मित्र राज्यों के आधिपत्य के समय संलग्न अधिकारियों की चर्चाओं से काफी प्रचलित हो गई थीं। इन अर्थों में ये कहानियां स्वयं जनरल मैकार्थर की जो सर्वोच्च सेनापति था, जनरल रिचर्ड सुन्दरलैंड जो मैकार्थर का मुख्य सहायक था, चार्ल्स ए विलोबो जो जनरल मैकार्थर का नम्बर दो सहायक था, कोर्टनी व्हिटने जो सरकारी शाखा का मुख्य अधिकारी सहायक तथा प्रवक्ता था, इन सबकी मानवीय कहानी थी। इसके अतिरिक्त इनमें, जिंदादिल जार्ज अचेसन जो सर्वोच्च कप्तान का राजनीतिक परामर्शदाता था तथा 17 अगस्त 1947 में जिसकी विमान दुर्घटना में मृत्यु हो गई थी, टोक्यों स्थिति सोवियत

रूस के प्रतिनिधि जनरल कुभा देवियो का, चीन के शांत प्रतिनिधि चूशी पिंग तथा ब्रिटेन के आलोचनाप्रिय प्रवक्ता डब्ल्यू मैकमोहन वाल की कथाएँ भी थी। तथापि इन सबमें सर्वाधिक प्रभावशाली व्यक्ति मैकार्थर था।

तकनीकी तौर पर प्रशिक्षित सैनिक सरकार के विशेषज्ञों की दृष्टि में जापान के आधिपत्य की प्रक्रिया आरम्भ से ही विवादास्पद रही थी। जब जनरल मैकार्थर के स्टाफ को (जो तब फिलिपाइन्स में था) आत्मसमर्पण के संकट का सामना करना पड़ा तो जनरल सदरलैंड ने एक महत्त्वपूर्ण निर्णय लिया तथा उसे स्पष्ट रूप से व्यक्त कर दिया गया। ब्रिगेडियर जनरल डब्ल्यू क्रिस्ट द्वारा बनाई गई परम्परागत सरकारी योजना तथा सैनिक सरकार के मुखिया के रूप में सैनिक अधिकारियों के संगठन का विलय कर दिया गया।[3] जर्मनी तथा इटली के अनुभवो पर आधारित व्यापक सैनिक सरकार का विकास जापान में नहीं किया गया।

सर्वोच्च सैनिक कमान का सगठन—

यह संगठन पर्याप्त सरल था। इसमें जनरल मैकार्थर का अपना मुख्यालय था, जो जापानी सरकार पर निगरानी रखने वाला था। यह सरकार अपने शासन में सुधार के लिये स्वयं उत्तरदायी थी। इससे व्यक्तियों तथा साधनों में पर्याप्त बचत हुई। इसके अतिरिक्त सैनिक सरकार के विशेषज्ञों ने शासन की दक्षता (सैनिक) तथा राजनीतिक विश्वसनीयता (जापानी सरकार) की ओर ध्यान आकर्षित किया। जब मैकार्थर ने सार्वजनिक रूप से सेना को 6 मास में 200,000 तक घटा देने की घोषणा की तो कुछ प्रेक्षकों ने यह निर्णय निकाला कि शासन का संचालन युद्धसंगत ढंग से किया जाएगा। जबकि कुछ अन्य लोगों ने यह चेतावनी दी कि पोटासडम घोषणा द्वारा प्रस्तुत उद्देश्य खतरे में थे। तत्कालीन विदेश सचिव डीन अचेतन ने एक संवाददाता सम्मेलन में बोलते हुए कहा था 'अधिकारिणी सेनाएं नीति-क्रियान्विति का साधन हैं नीति-निर्धारक नही है' उसका यह कथन भविष्यवाणी सिद्ध हुआ।[4]

तथापि अस्थायी रूप से सर्वोच्च सेना जापान की एकमात्र सर्वोच्च कार्यपालिका थी, तथा मैकार्थर सर्वोच्च सेनापति था। यह समझने के लिये कि वह किस प्रकार नीति क्रियान्वित करने का साधन नहीं बन कर नीति निर्धारण का कारक बना, जापान पर आधिपत्य स्थापित करने की सम्पूर्ण कथा तथा मित्र राज्यो की सेनाओं द्वारा नियन्त्रण की व्यवस्था को समझना होगा।

3—जनरल किन्ट, मरकारी प्रभाग का प्रथम अध्यक्ष 2 अक्टूबर से 13 दिसम्बर 1945 के मध्य रहा, उसके बाद वह सयुक्त राज्य अमेरिका लौट गया। उसका स्थान जनरल व्हिटने ने ले लिया।

4—विदेश विभाग का बुलेटिन, 23 सितम्बर, 1945 पृष्ठ 427। 30 मई, 1946 एस. सी. ए. पी. ने साख्यिकी को बताया कि अधिग्रहण मे छोटे पैमाने पर सेना के दस्तो को सक्रिय किया गया—190,000 व्यक्ति, 75 लाख लोग, एक प्रतिशत का एक चौथाई। किसी भी अन्य अधिनिहित क्षेत्र की तुलना मे (आस्ट्रिया, सोवियत जोन विशालतम था 68 प्रतिशत)। प्रारम्भिक आलोचनात्मक विवेचन के लिए देखिये 'सेले केनमोड "मिलिट्री गवर्नमेंट एण्ड दि आक्यूपेशन ऑफ जापान" जापान्स प्रास्पेक्ट, डूगाल्स जी हेरिंग, सम्पादक कैंब्रिज, 1946 पृष्ठ 276-304 (यह ग्रन्थ, जो अधिग्रहण के प्रारम्भ मे प्रकाशित हुआ था, इसलिए भी महत्त्व का है, क्योंकि यह हावर्ड विश्वविद्यालय से स्कूल ऑफ ओवरसीज एडमिनिस्ट्रेशन द्वारा प्रकाशित लेखो की शृंखला मे है।

प्रचलित लोकोक्ति के अनुसार उसने कई हैट धारण किये। मित्र राज्यों की सेना की सर्वोच्च कमांड का सेनापति होने के नाते (जापानी में रेंगोकोकू सैको शिररेकिन) उसे मित्र राज्यों की संप्रभुता प्राप्त थी। इस परिस्थिति में सर्वप्रथम नीति-निर्धारण सम्बन्धी निर्णय अमेरिका के युद्धगृह व जलसेना-विभाग द्वारा तैय्यार किये गये आलेखों में लिये गये जिन्हें 6 सितम्बर 1945 को अमेरिका के राष्ट्रपति द्वारा स्वीकृत किया गया तथा जिसे सम्मिलित सेनाओं के अध्यक्ष द्वारा मैकार्थर को प्रेषित किया गया।

प्रशासन की सुविधा की दृष्टि से तथा जापान को बाहरी प्रदेश से पृथक् करने हेतु जापानी अधिकार क्षेत्र में चार मुख्यद्वीपों को (हाक्कदिदो, होंशु, क्यूशू, शिकोकू) तथा उसके उमके निकटवर्ती एक हजार द्वीपों को माना गया जिसमें तुशिया द्वीप समूह तथा 30 अक्षांश के उत्तर में रियुक्यू (नान्सेई) को माना गया। अगस्त 15, 1948 तक संयुक्त राज्य अमेरिका 38 अक्षांश के उत्तर में कोरिया पर सैनिक सरकार के लिये भी उत्तरदायी था। मित्र राज्यों की संयुक्त कमान का उपाध्यक्ष टोक्यो तथा सिओल की सैनिक सरकारों के मध्य सम्पर्क अधिकारी का कार्य करता था। तथापि 1947 की जुलाई के निर्देशों के पश्चात् दक्षिण कोरिया के नागरिक प्रशासन से सम्बन्वित निर्देश सम्मिलित कमान के जनरल होज तथा कोरिया के डीन द्वारा भेजे जाते थे। जुलाई 1946 के पश्चात् अवशिष्ट द्वीप रउक्यू (ओकिनावा समेत) आदि अमेरिकी जलसेना से अमेरिकी सैनिक प्रशासन के अधिकार-क्षेत्र में हस्तान्तरित हो गए किन्तु वे जापान से पृथक् रहे। क्योंकि वहाँ सैनिक प्रशासन आत्मसमर्पण से पहले ही स्थापित कर दिया गया था।[5]

जनरल मैकार्थर सुदूर पूर्व के लिये मुख्य सेनापति था जो युद्धकालीन सुदूरपूर्व के क्षेत्र में अमेरिकी जल, स्थल तथा वायु सेना का अध्यक्ष था। (देखिये चार्ट 21) 18 जुलाई, 1950 के पश्चात्, कोरिया में सम्मिलित सेनाओं के अध्यक्ष के रूप में वह प्रथम सेनापति था जो संयुक्त राष्ट्र संघ का नीला व श्वेत ध्वज उड़ाने का अधिकारी बना।[6] यद्यपि उसकी अन्तर्राष्ट्रीय सेना राष्ट्रीय सेना से पृथक् थी, किन्तु व्यवहार में

5—जनरल मैकार्थर को सर्वोच्च सेनापति के रूप में नियुक्त करने वाले सन्देश के लिए देखिए (एन. डब्ल्यू. ए.. सी. सी. 2116 (जे सी. एस. 1467) विभाग ऑक्युपेशन, परिशिष्ट 16 पृष्ठ 89- तथा जापानी में एन. के - एच. के खण्ड, प्रथम संख्या तीन (15 जज 2946) पृष्ठ 1–2, अधिकृत जापान की चर्चा जे सी एस में 1380/15। आत्मसमर्पण के पश्चात् जापान के सैनिक शासन के लिए मूल निर्देश 3 नवम्बर, 1945 एस सी. ए. पी. पोलिटिकल रिआरियनटेशन अंक दो परिशिष्ट ए 13 पृष्ठ 429-439, जनरल मैकार्थर का निर्देश (एस. सी. पी. 677) गवर्नमेंट एण्ड एडमिनिस्ट्रेटिव सेपरेशन ऑफ सरटेन आउट लाइंग एरियाज फ्राम जापान, 29 जनवरी 1945 (अंग्रेजी व जापानी दोनों में, एन के. एच. के अंक प्रथम संख्या आठ (1 दिसम्बर 1946 पृष्ठ 21 व 24 कोरिया तथा दक्षिणी र्‍युक्यू के लिए स्टाफ का स्मरण पत्र संख्या 22 (एस. सी. ए पी.) तथा इ. इ. सी. "मिलिट्री गवर्नमेंट इन कोरिया एण्ड दि र्‍युक्यू आइलैण्ड" 15 फरवरी 1946 एन. सी. ए. पी. पूर्वोक्त दूसरा अंक परिशिष्ट जी 8 अ (4) पृष्ठ 79)।

6—मैकार्थर के अधीन एस. सी. ए. पी. अथवा सी. आई. एन. सी. एफ. इ. नहीं था। उनके आदेशों के क्रम में सर्वदा मुख्य स्टाफ अधिकारी होता था। जापान में आठवीं सेना में एक क्षेत्रीय अधिकार था जनरल इचेलबर्गर, तथा 4 अगस्त 1946 के पश्चात लेफ्टीनेन्ट जनरल वाल्टन एच. वाकर तथा उनकी मृत्यु के बाद लेफ्टीनेन्ट जनरल जेम्स एच. वान फ्लीट बना। सम्पूर्ण विश्व जानता है कि 11 अप्रैल 1945 को ट्रूमैन द्वारा जनरल मैकार्थर को हटाये जाने पर जनरल रिजवे ने वह पद 11 अप्रैल 1951 को ग्रहण किया। तब तक मैकार्थर-संगठन में द्वितीय स्तर पर कोई अधिकारी नहीं था।

सुदूर-पूर्व आयोग वाशिंगटन
सर्वोच्च सेनापति डगलस मैक आर्थर
ऐड्स डी कैम्प कर्नल एस. एल. हुफ् कर्नल एल. इ. बंकर
जापान के लिए मित्र देशों की परिषद् माननीय डब्लू. जे. सेबाल्ड, अमेरिका, चेयरमैन लेफ्टीनेन्ट जनरल चू सी मिंग, चीन लेफ्टीनेन्ट जनरल के. एन. देरेव्यानको यू एस एस आर माननीय पैट्रिक शॉ
स्टाफ अध्यक्ष मेजर जनरल इ. एफ. एलमोण्ड
सचिवालय लेफ्टीनेन्ट कर्नल जे. एच. सिलिस सचिव सामान्य स्टाफ
जन-सूचना अनुभाग कर्नल एम. पी. इकोल्स
कूटनीतिक अनुभाग माननीय डब्लू. जे. सेबाल्ड
उप स्टाफ अध्यक्ष मेजर जनरल ए. पी. फौक्स
प्रशासनिक कार्यों के लिए कार्यपालिका. ब्रिगेडियर जनरल जी. बी. केग्सेर
आर्थिक एवं औद्योगिक मामलों के लिए कार्यपालिका
नियंत्रक का कार्यालय ब्रिगेडियर जनरल एल. एल. विलियम्स
स्टाफ
सहायक स्टाफ अध्यक्ष जी-1 मेजर जनरल डब्लू. ए. बेडरलिन्टेन
सहायक स्टाफ अध्यक्ष जी-2 मेजर जनरल सी. ए. विलोबी
सहायक स्टाफ अध्यक्ष जी-3 ब्रि. जन. इ. के. राइट
सहायक स्टाफ अध्यक्ष जी-4 मे. जन. जी. एस. एवरसे
जन स्वास्थ्य एवं कल्याण अनुभाग ब्रि. जन. सी-एफ सेम्स
नागरिक सम्पत्ति की निगरानी का कार्यालय ब्रि. जन. जे. एफ. कोंकलिन
सरकारी अनुभाग ब्रि. जन. सी. व्हाइटने
आर्थिक एवं वैज्ञानिक अनुभाग मे. जन. डब्लू. एफ मारक्वेस
प्राकृतिक स्रोत अनुभाग ले. कर्नल एच. जी. शेन्क
नागरिक संवहन अनुभाग कर्नल एच. टी. मिलर
सांख्यिकी एवं रिपोर्ट अनुभाग कर्नल डब्लू. एल. माइकेल
एडजुटेन्ट जनरल का अनुभाग ब्रिगेडियर जनरल के. बी. बुश
नागरिक सूचना एवं शिक्षा अनुभाग ले. कर्नल डी. आर. नूजेन्ट
नागरिक खुफिया अनुभाग मे. जन. सी. ए. विलोबी
विधि अनुभाग सी. ए. कारपेन्टर
नागरिक संचार अनुभाग ब्रि. जन. जी. आर. बैक
सामान्य वसूली एजेन्ट का कार्यालय. कर्नल डी. टी नेल्सन
क्षतिपूर्ति सलाहकार समिति
मरम्मत सलाहकार तकनीकी समिति

जनरल हैड क्वार्टर तथा सम्मिलित सेनाओं के हैड क्वार्टर सम्मिलित हो गए थे जिसमें अनेक सैनिक अधिकारी सम्मिलित थे जिन्होंने बातान तथा ब्रिसेबन से जापान का फासला तय किया।

गैर सैनिक गतिविधियों पर जनरल मैकार्थर को राय देने के लिये 2 अक्टूबर 1945 से आठ विशिष्ट स्टाफ-विभाग बनाये गये जो मुख्य सैनिक कार्यालय के जनरल स्टाफ सेक्शन से संलग्न कर दिये गये। (जी–1, जी–2, जी–3, जी–4) अगस्त, 1647 तक इनकी संख्या बढ़ा कर चौदह कर दी गई, नवम्बर 1949 तक ये विभाग कार्यरत थे—

सरकारी विभाग (ब्रिगेडियर व्हिटने)—

सार्वजनिक स्वास्थ्य तथा कल्याण प्रभाग (बिगे जनरल सी० एफ० सैम्स), सार्वजनिक सम्पत्ति संरक्षक कार्यालय (ब्रि० जनरल जे० एफ० कोंक्लीन), आर्थिक तथा वैज्ञानिक प्रयोग (मेजर जनरल डब्ल्यू० एफ० मार्क्वेट), प्राकृतिक स्त्रोत-प्रभाग (लेफ्टिनेन्ट कर्नल एस० जी०, शॅंक), नगरिक यातायात प्रभाग (कर्नल एस. टी. मिलर), सांख्यिकीय तथा रिपोर्ट-प्रभाग (कर्नल डब्ल्यू. एल. मिशैल), सहायक सामान्य विभाग (ब्रिगे जनरल के बी. बुश), नागरिक सूचना तथा शिक्षा-प्रभाग (लेफ्टीनेन्ट कर्नल डी. आर. न्यूजेंट), नागरिक गुप्तचर-प्रभाग (मेजर जनरल जी. आई. वैंक), जनरल प्रोक्योरमेंट एजेंट (कर्नल डी. सी, ए. नेल्सन)।

इन सेक्शनों के अलावा मुख्य अधिकारी के स्तर का एक कूटनीतिक कार्यों का सेक्शन (डब्ल्यू जी. जी. वाल्ड जो बाद में राजदूत अकेसन के पद पर नियुक्त हुआ) तथा सार्वजनिक सूचना सेक्शन (कर्नल एम. पी. इकोल्स) भी नियुक्त था। चार्ट 23 यह संगठन दर्शाता है। मई 1949 तक प्रशासन का सैनिक स्वरूप संयुक्त कमान के निम्न पदाधिकारियों तक व्यापक कर दिया गया। वर्ष के अन्त तक टोक्यो स्थित अधिकारियों का अनुमान था कि अधिकारी देश के स्टॉफ के नागरिक अधिकारियों के पदों को कम से कम चालीस प्रतिशत तक वे सैनिक अधिकारी ग्रहण करेंगे, जिन्हें अन्य पदों से मुक्त कर दिया गया है।[7]

सरकारी सेक्शन

अधिकृत जापान के शासन व राजनीति में सर्वाधिक मनोरंजक तथ्य सरकारी सेक्शन है (जिसे जापानी मिनसेई क्योकू के रूप में जानते थे जिसका शाब्दिक अर्थ

7—अमेरिकी क्षेत्र में जर्मनी की सेना से विदेश-विभाग में हस्तान्तरित होने के परिणामस्वरूप। देखिये—अरडेय डब्ल्यू बर्क्स ऑक्यूपाइड जापान अमेरिका ईयर-बुक 1949 न्यूयार्क 1950 पृष्ठ 87। 8 मई 1947 को एक क्षतिपूर्ति-प्रभाग की स्थापना की गई, किन्तु बाद में 1949 उसे क्षतिपूर्ति तकनीकी परामर्शदाता तथा पुनर्स्थापित परामर्शदाता-समिति में स्थानान्तरित कर दिया गया (नागरिक सम्पत्ति-सुरक्षा के अन्तर्गत)। अन्तर्राष्ट्रीय अभियोग प्रभाग को मुख्य स्टाफ अधिकारी के साथ संलग्न कर दिया गया, जो सुदूरपूर्व में अन्तर्राष्ट्रीय सैनिक न्यायाधिकरण का कार्य समाप्त होने तक रहा। मूल विशिष्ट आठ प्रभाग बनाने की घोषणा सर्वप्रथम 13 अक्टूबर 1945 को निप्पोन टाइम्स की की गई। 1947 में सर्वोच्च संयुक्त कमान के संगठन के लिए देखिये, मित्र राज्यों की शक्ति के लिये सुप्रीम कमांडर (संयुक्त सर्वोच्च कमान) "सेक्शन ऑफ नान मिलिट्री एक्टीविटीज इन जापान," 23 संख्या (अगस्त 1947) परिशिष्ट प्रभाग 1, पृष्ठ 313।

चार्ट–23 जनरल हैड क्वार्टर मित्र राज्यों की सेनाओं का सर्वोच्च अध्यक्ष, टोक्यो, जापान
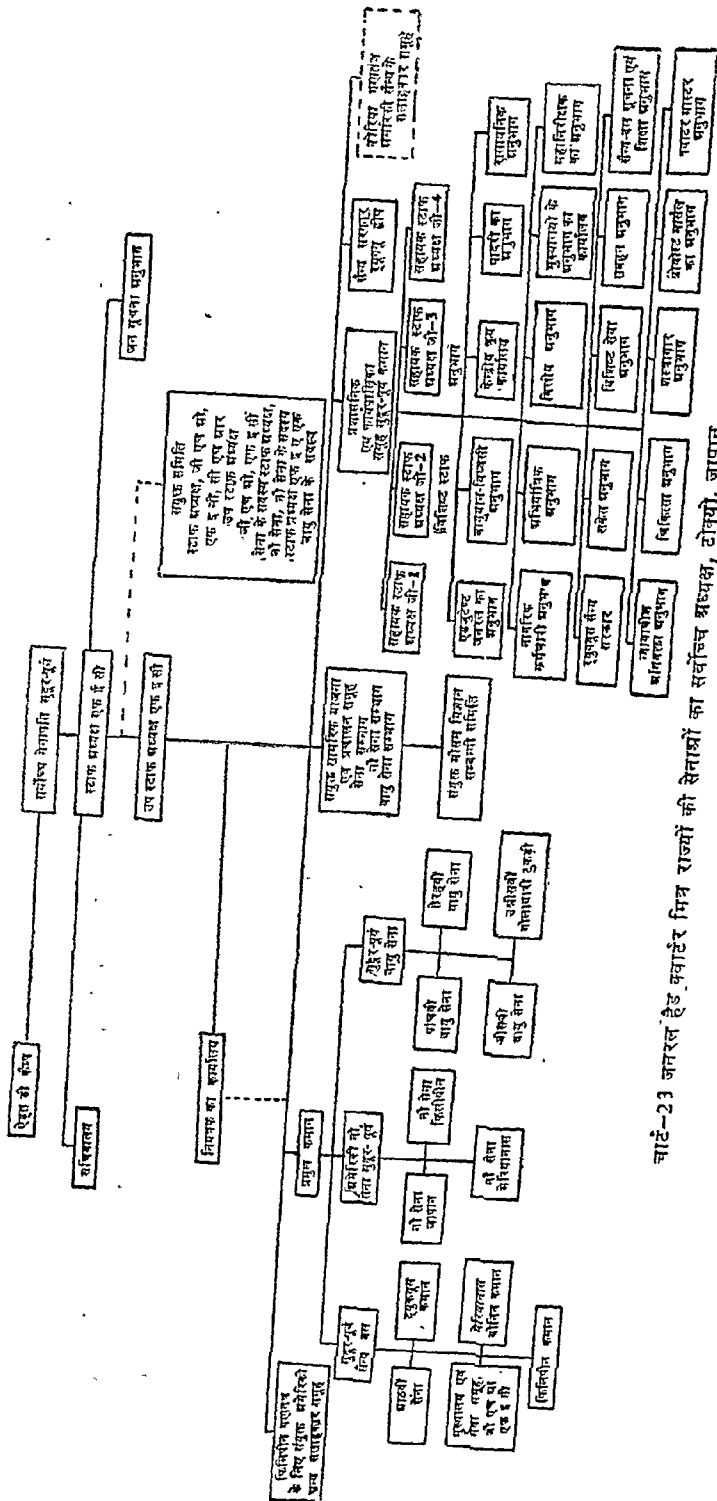
प्रजातंत्रीय सेक्शन था) जापान के राजनीतिक पुनरभिमुखीकरण के सन्दर्भ में इसकी भूमिका इसके प्राथमिक उद्देश्यों से स्पष्ट हो जाती है, जिनके अनुसार—

'सुप्रीम कमांडर को उसकी परिस्थिति तथा सम्बन्वित नीतियों के बारे में परामर्श देना – जापान में नागरिक सरकार की आंतरिक संरचना। विशेष रूप से इस विभाग का यह अर्थ था कि वह जापानी सरकार के विसैन्यीकरण के बारे में सलाह दे, सरकार के विकेन्द्रीयकरण तथा स्थानीय उत्तरदायित्व को प्रोत्साहित करे। अतः यह आवश्यक था कि उन सामन्ती तथा अविनायकवादी प्रवृत्तियों का उन्मूलन किया जाए, जो प्रजातन्त्रीय सरकार की स्थापना में बाधा उत्पन्न करती हैं तथा सरकार व व्यापारिक समूह के मध्य उन सम्बन्धों को समाप्त करें जो जापान की युद्ध की क्षमता को बनाये रखकर जापान पर अधिकार करने के उद्देश्यों की पूर्ति में बाधा बनती हैं।

जनरल व्हिटने, जो 15 दिसम्बर को सरकारी प्रभाग का मुखिया बना, को यह विश्वास हो गया कि समर्पण के पश्चात् जापान में जो अत्यधिक शोचनीय स्थिति थी, वह गम्भीर राजनीतिक तथा सरकारी समस्याओं के तत्पर समाधान से ही नियन्त्रित की जा सकती थी। परिणामस्वरूप उसने पूर्व स्थापित योजना-आयोग को विघटित कर दिया, क्योंकि उसका विश्वास था कि वह दैनिक समस्याओं से बहुत दूर था। सरकारी विभाग मामलों का निबटारा सैनिक गति से करते थे।

किन्तु मात्र इस प्रकार की विशेषता का वर्णन करना अनुचित होगा। यद्यपि सरकार में व्यापक स्तर पर सैनिक पदाधिकारियों को भर दिया था तथापि सरकार के नगरीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई तथा टोक्यो में सरकार तथा राजनीति के चतुर विशेषज्ञों का जमाव होने लगा। प्रोफेसर एच. एस. क्विग्ले (मिनीसोटा विश्वविद्यालय आदि विशिष्ट परामर्शदाता लम्बे अर्से तक जापान में रहे। तथा जॉन एम. माकी के समान विशेषज्ञों को समय-समय पर परामर्श के लिये बुलाया जाता था। इस विभाग की आश्चर्यचकित करने वाली विशेषता थी इसका संगठन। जनवरी 1946 में जब यह पर्याप्त सक्रिय संगठन था तथा इसके कुल अधिकारियों की संख्या 170 थी जिनमें से मात्र 68 गैर सैनिक थे, 1946 के मध्य तक इस से पचास प्रतिशत की कटौती कर दी गई। इन कुछ लोगों के हाथ में 5–7 करोड़ जापानी नागरिकों की राजनीतिक व्यवस्था का उत्तरदायित्व था।

सरकार द्वारा संचालित दो विशेष परियोजनाएं इस व्यवस्था की नमनीयता स्पष्ट कर देंगी। 1946 के प्रारम्भ में ही जब यह स्पष्ट हो गया कि जापानी सरकार को सहायता तथा निर्देशन की आवश्यकता थी, ताकि वह एक प्रजान्त्रीय संविधान का निर्माण कर सके तो सरकारी खण्ड ने इस कार्य का प्रारम्भिक उत्तरदायित्व स्वीकार किया। सम्पूर्ण सरकार एक समिति बन गई तथा वह विभिन्न कार्यपालिका, व्यवस्थापिका न्यायपालिका, वित्तीय मामले, प्रस्तावना तथा मौलिक अधिकारों से सम्बन्धित उपसमितियों में बट गई। अभी तक टोक्यों में अमेरिका के समान किसी जेम्स मेडिसन का अभ्युदय नहीं हुआ था, जो जापान के संस्थापक महान् व्यक्तियों की कार्य-प्रणाली का अन्तरावलोकन

करता। जापान में 1949–47 के प्रथम प्रजातंत्रीय चुनावों में सम्पूर्ण सरकार ने अपने दैनिक कार्यों के बावजूद एक टीम की मतदान-प्रक्रिया का निरीक्षण किया।[8]

सैनिक सरकार

जनरल हैडक्वार्टर तथा संयुक्त सेनाओं के सर्वोच्च कमान दोनों के प्रभावशाली लोगों तथा जापानी सरकार द्वारा अधिकृत नीति के निर्धारण ने स्थानीय स्तर की गतिविधियों को आच्छादित कर दिया। तथापि प्रीफेक्ट स्तर पर सैनिक सरकार की स्थिति का प्रभाव अधिकरण की स्थिति के दौरान रहा। यद्यपि अधिकृत स्थिति के विवरणों में इस चरण की उपेक्षा की है, तथापि मात्र संयुक्त सर्वोच्च कमान के विवरणों पर आधारित उनका विश्लेषण स्पष्टतया अपर्याप्त है। यदि जापान के अपेक्षाकृत आन्तरिक प्रदेश का अवलोकन स्वतन्त्र रूप से किया जाए तो अधिकृत स्थिति का दूरगामी प्रभाव निस्सन्देह स्पष्ट हो जाएगा।

जापान पर अधिकार स्थापित करने वाली मुख्य शक्ति सर्वोच्च संयुक्त कमान के समान अमेरिकी थी। अधिकारिणी सेनाओं को तीन समूहों में विभाजित किया जा सकता था, सक्रिय सैनिक समूह जिनका जापानी अधिकारियों से कोई सरकारी सम्पर्क नहीं था, गुप्तचर विभाग तथा सैनिक सरकार के अधिकारी। प्रथम समूह में दक्षिण जापान में छठी सेना थी, जिसने अधिकार-स्थापना के पश्चात् से क्षेत्र खाली करना प्रारम्भ किया। मध्य व उत्तरी जापान में आठवीं सेना थी। जब आठवीं सेना ने नियन्त्रण स्थापित किया तो यह शिकोकू, चुगोकू तथा टोक्यो—मोखाय क्षेत्रों के लिए प्रत्यक्षतः उत्तरदायी रही। टोक्यो में इसकी एक टुकड़ी को दक्षिण जापान में 20 प्रीफेक्टों पर नियन्त्रण प्राप्त था। 1948 तक दक्षिणी होंशू तथा शिकोकू में पांच हजार ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल की सेनाएं भी जापान में विद्यमान थीं। किंतु 1948 तक वे एक रेजीमेंट तथा थोड़ी सी वायुसेना के रूप में घटा दी गई। चूंकि और किसी भी देश ने कुछ भी सैनिक सहायता प्रदान नहीं की थी अतः सम्पूर्ण अधिकार स्थापित करने की प्रक्रिया अमेरिकी परियोजना बन गई।[9]

चूंकि वास्तविक अधिकार स्थापित करने की शक्ति आठवीं सेना को सौंप दी गई, अतः सर्वोच्च संयुक्त मित्र सैनिक कमान में सैनिक सरकार का पूर्णतः अभाव था। आठवीं सेना तथा प्रत्येक टुकड़ी की सैनिक सरकार का पृथक् विभाग था। इस प्रकार

8—संयुक्त सर्वोच्च कमान, पॉलिटिकल रिआरिएनटेशन ऑफ जापान 1,300 पृष्ठ के दो वृहत् ग्रन्थ थे, जिन्हें अनेक बार उद्धृत किया गया, जो सरकारी प्रभाग की सरकारी डायरी है। विशेपतया देखिये परिशिष्ट जी "हिस्ट्री ऑफ दि गवर्नमेंट सैक्शन, जनरल हैड क्वार्टर, संयुक्त सर्वोच्च कमान तथा संलग्न प्रलेख विशेपतया संख्या आठ, 2 अक्टूबर, 1945, सामान्य आदेश संख्या 1, 13 फरवरी 1947 तथा सामान्य आदेश संख्या 10, 13 जून, 1947 का मिशन प्रलेख, जी-आठ-बी (1)। प्रारम्भिक इतिहास का संगठन चार्ट प्रलेख जी, आठ, बी, अधिकारियों की डाइरेक्टरी, 2 अक्टूबर, 1945, 2 सितम्बर, 1948। यह उल्लेखनीय है कि संयुक्त सर्वोच्च कमान का कोई सरकारी इतिहास युद्ध कालीन कमांड का वर्णन करने के लिए लिखी गई सामग्री संयुक्त सर्वोच्च कमान से स्वतन्त्र है।

9—लेफिटनेन्ट जनरल नोयंकट के अन्तर्गत बी.सी.ओफ. की योजना को निप्पोन टाइम्स में घोषित किया गया, 2 फरवरी, 1946। अमेरिका व आस्ट्रेलिया के मध्य समझौते का सारांश जापानी में एन. के. एच. के अंक प्रथम संख्या आठ (दिसम्बर, 1946) पृष्ठ 25-30 तथा (अंग्रेजी में) डिपार्टमेंट ऑफ आक्यूपेशन परिशिष्ट 17, पृष्ठ 89-94 पर है।

सैनिक सरकार वास्तविक तौर पर एक स्टॉफ की गतिविधि मात्र थी। सेना तथा प्रीफेक्ट की टीम के मध्य सैनिक सरकार के क्षेत्र थे, जो किसी व्यवस्थित कमांड के जरिये सूत्रबद्ध नहीं थे। वस्तुतः आठ क्षेत्र परम्परित जापानी सुपरिटेन्डेन्सियों के मॉडल पर ही आधारित थे। विभिन्न प्रीफेक्टों को लघु, मध्य तथा विशाल इन तीन वर्गों में बाँटा गया था तथा प्रत्येक की अपनी पृथक् सैनिक सरकार की टीम थी। ओसाका फू को विशिष्ट श्रेणी में रखा गया तथा यही स्थिति टोक्यो–कानागावा सरकारी सैनिक जिलों की थी। 1 जुलाई 1947 के संशोधन, जिसने क्षेत्रीय इकाईयों को नागरिक अधिकारी आवंटित किये, के पश्चात् सैनिक सरकार की टीम में 398 पदाधिकारी, 1436 सूचीबद्ध लोग तथा 605 नागरिक थे। (कुल योग 2439)[10]

इस अधिकरण की प्रक्रिया को ध्यान में रखने के पश्चात् हम पदसोपान क्रम के अनुसार नियंत्रण की व्यवस्था को समझ सकते हैं। विशिष्ट स्टॉप-विभाग में शोध के पश्चात जनरल हैडक्वार्टर ने जापानी सरकार को एक सर्वोच्च संयुक्त मित्र सैनिक कमान का निर्देश प्रेषित किया (जिसे सामान्यतया जापान के सम्राट् की सरकार को भेजा गया स्मरण-पत्र कहते हैं)। इस निर्देश पत्र की चार प्रतिलिपियाँ सैनिक सरकार के स्रोतों द्वारा चार निम्न स्तरों पर भेजी गईं। अक्सर ये निर्देश पहले निम्न जापानी प्रशासनिक अधिकारियों को पहुँचते थे जिनमे विभिन्न टीमों को प्रारम्भिक सूचना प्राप्त होती थी।) आठवीं सेना उसके साथ अतिरिक्त या सहायक निर्देश जोड़ देती थी। इसके प्रशासनिक निर्णय व्यापक थे, किंतु यह वास्तविक होने के स्थान पर प्रक्रियात्मक अधिक थे। सेनाएँ तथा क्षेत्रीय मुख्यालय निर्देशों को पहुँचने में विलम्ब करते थे। जापानी दृष्टिकोण के अनुसार इस प्रकार के निर्देशों को भेजने[11] का तरीका चार्ट 24 मे बताया गया।

अमेरिकी सैनिक सरकार के स्तर पर प्रशासनिक कार्य स्वैच्छिक किंतु सीमित थे। सैनिक सरकार के अधिकारी निगरानी रख सकते थे। तकनीकी दृष्टि से वे कुछ भी नहीं कर सकते थे, यहाँ तक कि वे गलती को सुधार भी नहीं सकते थे। किसी आदेश की क्रियान्विति न होने पर उसकी रिपोर्ट कर सकते थे तथा जब तक रिपोर्ट अमेरिकी सैनिक संगठन को पार कर जर्जर जापानी प्रशासन को धीरे-धीरे प्रेषित होती थी, उसमें अत्यधिक विलम्ब हो जाता था। जैसा कि प्रोफेसर ब्रेवाती का कथन है स्थानीय सैनिक अधिकारी अधिकाधिक व्यक्तिगत क्षमता से कार्य करने लगे थे। परिणामस्वरूप अनेक उपनिर्देश भी

10—स्थानीय सैनिक सरकार का एक आलोचनात्मक किन्तु अन्वेषक वर्णन राल्फ जे. डी. ब्रैबांती द्वारा "एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ़ मिलिट्री गवर्नमेंट इन जापान एट दि प्रीफेक्चर लेवल," अमेरिकन पोलिटिकल साइंस रिव्यू ऑफ 53 संख्या 2 अप्रेल 1949) पृष्ठ 250–274। प्रोफेसर ब्रेल बंती के अनुसार मूलनीति संयुक्त सर्वोच्च कमान की शक्ति का प्रयोग जापानी सरकार के माध्यम से करना था। तकनीकी दृष्टि से उसने इस प्रक्रिया को प्रशासनिक सर्वेक्षण का नाम दिया अथवा स्थानीय स्तर पर जांच पड़ताल कहा। अत्यधिक मनोरंक किन्तु आलोचनात्मक वर्णन के लिए मार्क गेयन की जापान-डायरी न्यूयोर्क 1948 देखिये। गेयन, जो अनेक प्रकाशनों का अनुभवी संवाददाता था, को संयुक्त कमान द्वारा उसके द्वारा दाई ईची बिल्डिग के पिछवाड़े अनुसन्धान-कार्य करने के अत्यधिक आकर्षण के कारण अवांछनीय व्यक्ति घोषित कर दिया गया।

11—युहीकाकू होराई नेपो पूर्वोक्त, परिशिष्ट एक। सैनिक शासन ब्यूरो का स्थान केन्द्रीय शासन ब्यूरो ने ग्रहण कर लिया।
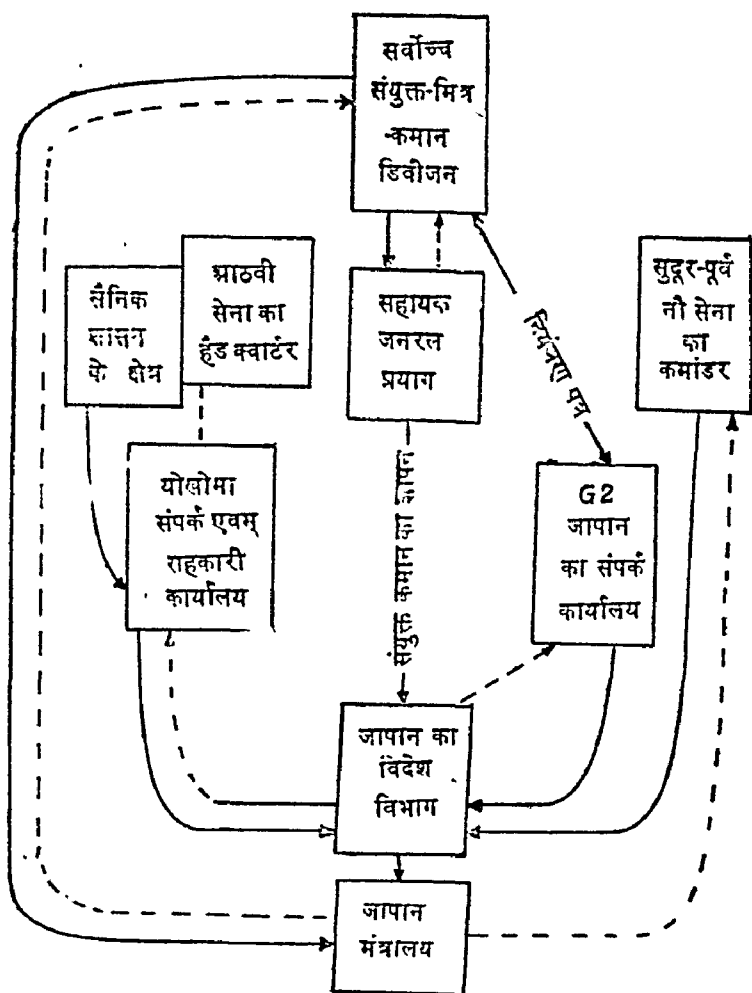
चार्ट 24–जनरल हैडक्वार्टर तथा सर्वोच्च संयुक्त मित्र राज्यों की सैनिक कमान से निर्देशों का संचालन।

वन जाते थे, तथापि स्थानीय आदेशों का पालन तत्परता से होता था। निर्देशों का पालन न होने की घटनाओं की रिपोर्ट चूंकि नियमित रूप से नहीं हो पाती थी, अतः सर्वोच्च संयुक्त सैनिक द्वारा अधिकरण के विवरण पर्याप्त पूर्वग्रहयुक्त रूप में टोक्यो में प्रस्तुत किये जाते थे। स्थानीय स्तर पर क्रियान्विति के तरीके पर्याप्त भिन्न थे। स्थानीय जापानी प्रशासकों को प्रशिक्षित करने के स्थान पर उन्हें उत्तरोत्तर पराजित वनाया गया। वे पर निर्भर रहने लगे तथा इस तरह के प्रमाण भी प्राप्त हुए हैं कि कभी वे स्थानीय सरकारी सेनाओं का प्रयोग भी करते थे। स्थानीय टीमें निर्देशों की व्याख्या कर सकती थी तथा उनकी क्रियान्विति में सहायता कर सकती थीं किन्तु प्रमुख कार्य स्पष्ट रूप से सर्वोच्च संयुक्त कमान ने अपने लिये रखा था। अन्ततः सैनिक सरकार जापानी नागरिकों द्वारा अधिकारिणी सभाओं के विरुद्ध किये गये अपराधों पर ही कार्यवाही कर सकती थी।

अपने क्षेत्राधिकार में सीमित तथा दृढ़ इच्छाशक्ति वाला होने के कारण जनरल मैकार्थर ने स्थानीय स्तर पर सैनिक सरकार को 28 जुलाई, 1949 में पूर्णतः समाप्त कर दिया। एक आदेश के द्वारा आठवीं सेना के सैनिक विभाग तथा नौवीं टुकड़ियों तथा प्रीफेक्ट टीमों को समाप्त कर दिया गया।[12]

यह स्पष्ट है कि यह अविकरण यदि स्वयं जापान के निजी दृष्टिकोण से देखा जाए तो भी आसानी से परिभाषित नहीं किया जा सकता है। अमेरिका के प्रभुत्व तथा जापानी सरकार की निरन्तरता के बावजूद, दो अन्य पहलुओं का उल्लेख करने के बाद भी शंका रह जाती है। 6 सितम्बर, 1945 को संयुक्त सेना के सर्वोच्च अध्यक्षों के निर्देश में जनरल मैकार्थर की सर्वोच्च सेनापति के रूप में स्थिति तथा उसकी तुलना में मित्र राज्यों की स्थिति को स्पष्ट कर दिया गया था।

जापान के साथ हमारे सम्बन्ध किसी समझौते पर नहीं अपितु बिना शर्त आत्म-समर्पण पर निर्भर करते हैं।[13]

तथापि उसी निर्देश ने जनरल मैकार्थर को जापानी सरकार द्वारा नियन्त्रण स्थापित करने की सलाह उस सीमा तक दी, जहाँ तक वह सन्तोषजनक हल प्रस्तुत कर सके। इस प्रकार एक अर्थ में सर्वोच्च सेना मुख्यालय तथा सर्वोच्च संयुक्त मित्र राज्यों की कमान स्वयं सैनिक सरकार थे तथा मात्र सैनिक अधिकार स्थापित करने वाली ऐजेन्सी नहीं थे, जिसका कार्य नागरिक प्रशासन करना था। वस्तुतः यह सैनिक सरकार तथा स्थानीय व राष्ट्रीय स्तर की सरकारों के मध्य समायोजन था।

इस प्रशासनिक समायोजन के परिणामस्वरूप अविकरण के दर्शन पर भी प्रभाव पड़ा था। जनरल व्हिटने ने एक स्पष्टीकरण दिया जो बाद में उतना ही कौतूहलपूर्ण लगा, जितना कार्यवाही-अधिकारी विदेश सचिव अचेसन का था। इसके अनुसार सर्वोच्च संयुक्त मित्र राज्यों की जापान में कार्यवाही मैकार्थर की सरकार के नागरिक प्रशासन की एकाग्रता बनाये रखने की लगन का परिणाम था। प्रारम्भ में संयुक्त सर्वोच्च कमान ने औपचारिक निर्देश प्रेषित किये, जिनका उद्देश्य राजनीतिक सुधारों की व्यापक रूपरेखा प्रस्तुत करना था। उसके पश्चात् संयुक्त सर्वोच्च कमान ने निर्देशन से नेतृत्व को अधिक महत्त्व देना प्रारम्भ किया। संयुक्त सर्वोच्च कमान के अधिकारियों ने इस प्रक्रिया को प्रेरित क्रान्ति कहना प्रारम्भ किया। लोक प्रशासन के विशेषज्ञों ने इसे अधिक निश्चित बताते हुए प्रशासनिक संरक्षण का नाम दिया।[14]

12—कातयामा तेत्सु, जो नवीन संविधान के अन्तर्गत प्रथम प्रधानमन्त्री तथा बाद में सोश्यल डेमोक्रेटिक पार्टी का अध्यक्ष बना, ने उस समय संयुक्त राज्य अमेरिका का भ्रमण किया। उसने इस खण्ड के लेखक को बताया कि व्यवस्था से उसका तात्पर्य यह था कि जापान का राजनीतिक पुनरभिमुखीकरण पूर्ण हो चुका था। अरडाध डब्ल्यू बर्क्स (आक्यूपाइड जापान) अमेरिकन ईयर बुक 1949 पूर्वोक्त पृष्ठ 87।

13—जापानी में वारे-वारे टू निहोन टू नो कानकाई वा केयाकुटेकेई किसो नी योतोजुकोजुशिले, युजोकेन कोकोकू नी मीतोजुकू।

14—निर्देशों के लिए देखिए जे. सी. एस. 1967 डिपार्टमेंट ऑक्यूपेशन परिशिष्ट जापानी मूल रचना एन. कै. एच. के अंक प्रथम संख्या तीन जून 1946 पृष्ठ 1-2, जनरल व्हिटने के संयुक्त सर्वोच्च कमान के पोलिटिकल रिआरिमनटेशन पूर्वोक्त, अंक प्रथम पृष्ठ 17-22 की प्रस्तावना में "दि

अधिकार के अवशिष्ट प्रश्नों का जवाब देने के लिये हमें जापान के बाहर आना होगा। मैकार्थर किसके प्रति उत्तरदायी था? संयुक्त सर्वोच्च कमान के लिये निर्देश, अमेरिकी सरकार द्वारा प्रेषित होते थे। इन निर्देशों का आधार सुदूरपूर्वी मामलों की समिति, राज्य की नौसेना युद्ध-समिति (जो 1947 के बाद राज्य जल-थल-नभ सेना समायोजित समिति कहलाई) की सिफारिशें होती थीं, जिनके आधार पर नीति-निर्धारण किया जाता था और फिर उसे राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिये भेजा जाता था। सेना के सर्वोच्च अध्यक्ष सैनिक मामलों पर अपने दृष्टिकोण प्रस्तुत करथे। इस स्वीकृति नीति के आधार पर निर्देश बनाये जाते थे, जो संयुक्त सर्वोच्च अध्यक्षों के द्वारा सेना की कार्यवाहक कार्यपालिका-विभाग के माध्यम से जनरल मैकार्थर को प्रेषित किये जाते थे। अन्ततः उनकी अंतिम क्रियान्विति टोक्यो स्थित सर्वोच्च सैनिक कमान के हाथों में थी। इस प्रकार सम्पूर्ण प्रक्रिया में मूल भूमिका संयुक्त राज्य अमेरिका की थी।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जापान में अमेरिका के प्रमुख रूप से नियंत्रण-कर्त्ता की स्थिति संकटपूर्ण थी तथा इसीलिए अन्य मामलों के साथ यह विश्व राजनीति में सौदेबाजी की घटना हो गई। बाद में मित्र राज्यों के आग्रह के दबाव को कम करने की दृष्टि से तथा प्रारम्भिक प्रयास करने का श्रेय लेने के लिये 21 अगस्त 1945 को संयुक्त राज्य अमेरिका ने जापान पर नियन्त्रण स्थापित करने के लिये सरकारी तौर पर मित्र राज्यों के सहयोग का आग्रह किया।[15]

अन्तर्राष्ट्रीय नियन्त्रण-संगठन

जापान के आत्मसमर्पण के तुरन्त बाद ही यह स्पष्ट हो गया था कि जापान पर नियन्त्रण का प्रश्न मात्र अमेरिकी मामला नहीं रह सकेगा। रूस ने जापान में एक नियंत्रण-आयोग की मांग की और उधर आस्ट्रेलिया ने जापान में अमेरिका की उदार अधिकरण की नीति की आलोचना करनी प्रारम्भ की। ब्रिटेन ने अपने उपनिवेशों के दबाव में आकर मित्र राज्यों के संयुक्त आयोग की स्थापना की योजना प्रस्तुत की। तत्पश्चात् लन्दन में मित्र राज्यों के विदेश मन्त्रियों के अनपेक्षित सम्मेलन के पश्चात् विदेश मन्त्री जेम्स बाइरन्स ने एक संयुक्त विज्ञप्ति में रूसी आग्रह की अपेक्षा करते हुए यह घोषणा की कि ब्रिटेन ने अमेरिका के प्रस्तावित सुदूरपूर्व आयोग की योजना को स्वीकृति दे दी है।

परिणामस्वरूप 30 अक्टूबर 1945 को रूस, ब्रिटेन, चीन, फ्रान्स, आस्ट्रेलिया, कनाडा, न्यूजीलैण्ड, नीदरलैण्ड, फिलीपिन्स तथा भारत को वाशिंगटन सम्मेलन में आमंत्रित

फिलासफी ऑफ दि ऑक्यूपेशन" प्रस्तुत की। जापानियों को जनरल मैकार्थर के निर्देशों की मूलभूत रूप में प्रस्तुत किया गया, 20 दिसम्बर 1945, बेसिक एम्स ऑफ दि जापानीज आक्यूपेशन एन. के. एच. के अंक प्रथम संख्या आठ (21 दिसम्बर 1946 पृष्ठ 1–4।

15—कथाकथित एस. डब्ल्यू. एन. सी. सी. निर्देश अधिकृत क्षेत्रों के सन्दर्भ में संयुक्त राज्य अमेरिका की नीति के विकास की संगठन-प्रणाली, आठ अप्रेल 1946, तथा सुदूरपूर्वी परामर्शदाता-आयोग स्थापित करने के लिए संयुक्त अमेरिका का प्रस्ताव, 21 अगस्त 1945 (10 अक्टूबर 1945 को प्रेषित) डिपार्टमेंट ऑक्यूपेशन का 149 व ग्यारहवां परिशिष्ट पृष्ठ 82–84, 67–68, मित्र राज्यों के दबाव के लिए देखिए, वर्नर लेवी जापान का अन्तर्राष्ट्रीय नियन्त्रण 'फारईस्टर्न सर्वे, सितम्बर 25 1946 पृष्ठ 299–300।

किया गया। तत्पश्चात् सुदूरपूर्व परामर्शदाता-आयोग अगले दो मास तक नियमित रूप से मिलता रहा। किंतु रूस ने इसके परामर्शदाता-स्वरूप का विरोध करते हुए इसका बहिष्कार किया। अन्ततः रूसी भागीदारी की समस्या का समाधान दिसम्बर, 1945 में मास्को में विदेशमंत्रियों के सम्मेलन में हुआ। तत्पश्चात् चीन की सहमति से विदेशमंत्रियों के सुदूरपूर्व आयोग तथा मित्र राज्यों की एक परिषद् की स्थापना की गई।

इस ग्यारह सदस्यीय सुदूरपूर्व आयोग में उन देशों के प्रतिनिधि थे जिन्होंने वाशिंगटन सम्मेलन में भाग लिया था। 11 नवम्बर 1949 में इसमें बर्मा तथा पाकिस्तान के प्रतिनिधियों को भी सम्मिलित कर लिया गया। इस आयोग का मूल उद्देश्य इसकी निर्धारित व्यवस्थाओं के अनुसार 'नीतियों, सिद्धान्तों तथा उन मानदंडों का निर्धारण करना था जिनके आधार पर जापान आत्मसमर्पण की शर्तों के अनुसार अपने दायित्वों को पूरा कर सके। सुदूरपूर्व आयोग के अतिरिक्त, जो कानूनी रूप से जापान पर नियंत्रण के लिये नीति-निर्धारक था, मित्र राज्य-परिषद् की नियुक्ति सर्वोच्च कमाण्डर को परामर्श देने के लिये की गई थी। इसमें अमेरिका, ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल, चीन तथा रूस के प्रतिनिधि सम्मिलित थे। *उस समय यह संस्था टोक्यो में तात्कालिक परामर्शदात्री समिति थी।* सुदूरपूर्वी आयोग, मैसायूट्स एवेन्यू, वाशिंगटन स्थित (भूतपूर्व व वर्तमान) जापानी दूतावास में मिला। संक्षेप में मास्को के निर्णय के परिणामस्वरूप नीति में निम्नांकित परिवर्तन हुए—

1. वाशिंगटन में सुदूरपूर्व आयोग निर्देशों का निर्माण अथवा पुनरवलोकन कर उन्हें इन संस्थाओं के माध्यम से प्रेषित करता था।
2. अमेरिकी सरकार व सेनाओं के संयुक्त अध्यक्ष क्रियान्विति के लिये माध्यम के रूप में कार्य करते थे।
3. मित्र राष्ट्रों की कमान जो निम्नांकित लोगों से परामर्श प्राप्त करती थी—
4. मित्र राज्यों की परामर्शदात्री संस्था—
5. जापानी सरकार—[16]

टोक्यो में जापानियों ने नवीन नियन्त्रणकारी संस्था को आश्चर्य तथा निराशा से देखा तथा उन्होंने यह लक्ष्य किया कि परामर्शदात्री संस्था के चार में से दो सदस्यों ने स्पष्ट रूप से जापान की तैंवो व्यवस्था की समाप्ति का समर्थन किया। जापान के संवाददाता ने लिखा "जापानी जनरल मैकार्थर पर विश्वास करते हैं तथा उसे पसन्द

16—अन्तर्राष्ट्रीय संगठन के छात्रों को यह स्मरण कराने की आवश्यकता नहीं है कि अन्य भूतपूर्व गैर शत्रु देशों के समान जापान को संयुक्त राष्ट्रसंघ के क्षेत्राधिकार से बाहर रखा गया गया था। (संयुक्त राष्ट्रसंघ का चार्टर, 107 अनुच्छेद यद्यपि यह युद्ध कालीन संयुक्त राष्ट्र संघ के कुछ देशों द्वारा शासित हुआ था, पृष्ठ 462–463 पर प्रस्तुत चार्ट 'सुदूरपूर्व आयोग तथा संयुक्त सर्वोच्च कमान' के मध्य सम्बन्धों को तथा सुदूरपूर्व आयोग के आन्तरिक संगठनों का दर्शाता है। ये सरकारी प्रकाशनों में से लिये गए हैं। महासचिव द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट एक्टीविटीज ऑफ फार ईस्टर्न कमीशन, फरवरी 26 1946 जुलाई 20, 1947 (विदेश-विभाग-प्रकाशन 3420 सुदूरपूर्व प्रकाशन 29) तथा महासचिव द्वारा तीसरी रिपोर्ट दि फारईस्टर्न कमीशन, 24 दिसम्बर 1948–30 जून 1950 विदेश-विभाग, प्रकाशन 3945 सुदूरपूर्व प्रकाशन 35) सभी वाशिंगटन से 1947, 1249, 1950 सुदूरपूर्व आयोग के लिये देखिये परिशिष्ट 2 पृष्ठ 36–39 प्रथम रिपोर्ट।

करते हैं। किन्तु अब उन्हें ऐसा लगता है कि उसकी कुछ नीतियों को रूसी व चीनी बदल डालेंगे। जापानी दीर्घकाल से इन दोनों को भय तथा अविश्वास की दृष्टि से देखते हैं।"

जनरल मैकार्थर ने स्वयं अपने विचारों को स्पष्ट कर दिया। 30 दिसम्बर, 1945 को उसके सार्वजनिक सम्पर्क अधिकारी ने निम्नलिखित सन्देश प्रेषित किया:—

यह तर्क एक सुदूरपूर्व आयोग के अधिकारी के सम्मुख दिया गया था जिसमें यह कहा गया कि यह कहना गलत है कि "मास्को में स्वीकृति प्राप्त करने से पहले मैं नवीन जापान नियन्त्रण संस्था के विरुद्ध नहीं था।" 31 अक्टूबर को सेना के सर्वोच्च अध्यक्ष तथा विदेश सचिव को प्रेषित सन्देश में मेरी अन्तिम असहमति निहित थी। जिसमें मैंने

चार्ट 25 ए--सुदूरपूर्व आयोग का संगठन
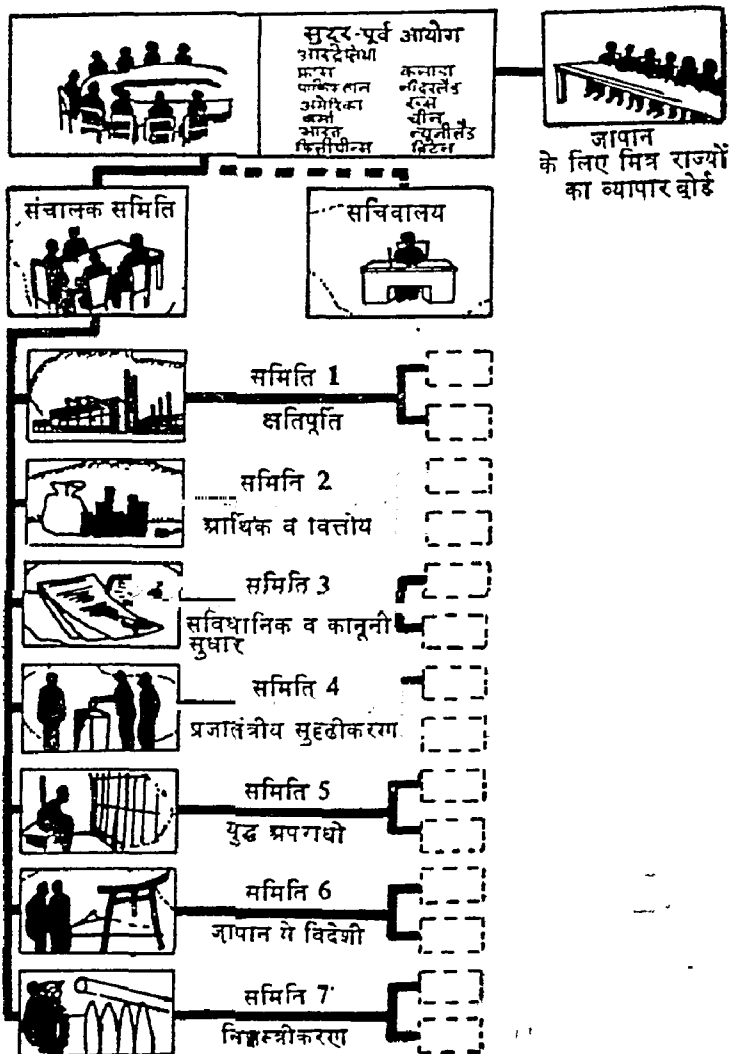
कहा था कि ये शर्तें "मेरे मत में स्वीकारणीय नहीं थी।" तब से मेरे विचार जानने का प्रयास नहीं किया गया—मैं यह और कहना चाहूँगा कि इस योजना में जो भी गुण अथवा अवगुण हैं, उसके बावजूद मुझे प्राप्त शक्ति के अन्तर्गत मेरी दृढ़ इच्छा है कि मैं इसे क्रियान्वित करने का पूरा प्रयास करूँगा।"

10 जनवरी 1946 को संयुक्त मित्र राज्यों की सेना के सर्वोच्च कमान के एक प्रवक्ता ने कहा कि जनरल ने मित्र राज्यों की परिषद् की सदस्यता के लिये कोई शर्त नहीं रखी थी। उसने इस बात से इंकार किया कि मैकार्थर सैनिक अधिकारियों की नियुक्ति करना चाहता था।[17]

तथापि मित्र राज्यों की परिषद् का इतिहास प्रारम्भ से ही तूफानी रहा। मित्र राज्यों की सर्वोच्च कमान के जनरल व्हिटने अप्रैल 1946 की पहली मीटिंग में ही इस आयोग का दिशानिर्धारण किया। उसने स्पष्ट किया कि किसी भी जांच के बारे में जरा सी आलोचना की व्यापक खोजबीन की जानी थी तथा उसके बारे में विस्तृत रिपोर्ट देनी थी। प्रकटत: वादविवाद के द्वारा अधिकरण का बचाव करना था। अमेरिकी राजदूत अचेसन की अध्यक्षता में यह परिषद् साम्यवाद के प्रति अमेरिकी विरोध का सुदृढ़ स्थल बन गई। दूसरी ओर रूसी प्रतिनिधि जनरल देरे काको ने इस परिषद् का प्रयोग संयुक्त सर्वोच्च कमान द्वारा जापानी सरकार का प्रयोग किये जाने की आलोचना करने में भी किया। इसके बदले में रूस ने अपने प्रतिनिधि का प्रयोग जापान में साम्यवादी गतिविधियों को सक्रिय काल में प्रारम्भ किया। परिषद् में होने वाली वार्ता इतनी कटु हो गई कि जुलाई 1946 में ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के सदस्य डब्ल्यू मैकमोहन बॉल ने अध्यक्ष को यह याद दिलाया कि परिषद् में वार्ता का प्रत्येक विवाद अनिवार्यत: साम्यवादी प्रचार नहीं था। नवम्बर 1946 तक परिषद् की उपयोगिता के बारे में स्पष्टत: बातचीत होने लगी थी।[18]

मास्को समझौते की सर्वाधिक महत्ता इस व्यवस्था में थी कि सैद्धान्तिक रूप से नीति का अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारण सुदूरपूर्व आयोग के माध्यम से किया जाना था, फिर भी वास्तविक शक्ति का व्यापक क्षेत्र अभी स्पष्ट होना अवशिष्ट था। सुदूरपूर्व आयोग सर्वोच्च सेनापति द्वारा प्रेषित किसी निर्देश का पुनरवलोकन कर सकता था। किन्तु सैनिक गतिविधियों तथा क्षेत्रीय व्यवस्थाओं के बारे में उसे कोई अधिकार नहीं थे। इसमें निषेधाधिकार की व्यवस्था भी थी, क्योंकि किसी भी विषय पर निर्णय इसके सदस्यों के बहुमत तथा अमेरिका, ब्रिटेन, रूस तथा चीन की सहमति के बिना सम्भव नहीं था।

17—देखिये निप्पोन टाइम्स 30 दिसम्बर 1945 1 जनवरी से 1946।

18—1947 के अगस्त में अपने त्यागपत्र के बाद प्रोफेसर बॉल ने आस्ट्रेलियन तथा कॉमनवेल्थ जर्नल में कुछ आलोचनात्मक विवरण दिये। देखिये जापान एनीमी आर एलाई, न्यूयार्क 1949, विशेषतया 2 अध्याय, जहां वह सन्दर्भ तथा जापान के लिए मित्र राज्यों की समिति (एलाई काउन्सिल फॉर जापान) का वर्णन किया गया है। इस समिति को सहयोगी तथा संरचनात्मक संस्था न बना सकने के बॉल के अनुसार तीन कारण थे (1) रूस तथा अमेरिका के मध्य विरोध (2) सभी मीटिंग्स में समाचार-सम्वाददाताओं की उपस्थिति (3) तथा जनरल हैड क्वार्टर तथा संयुक्त सर्वोच्च कमान द्वारा दर्शायी गई अत्यधिक सतर्कता।
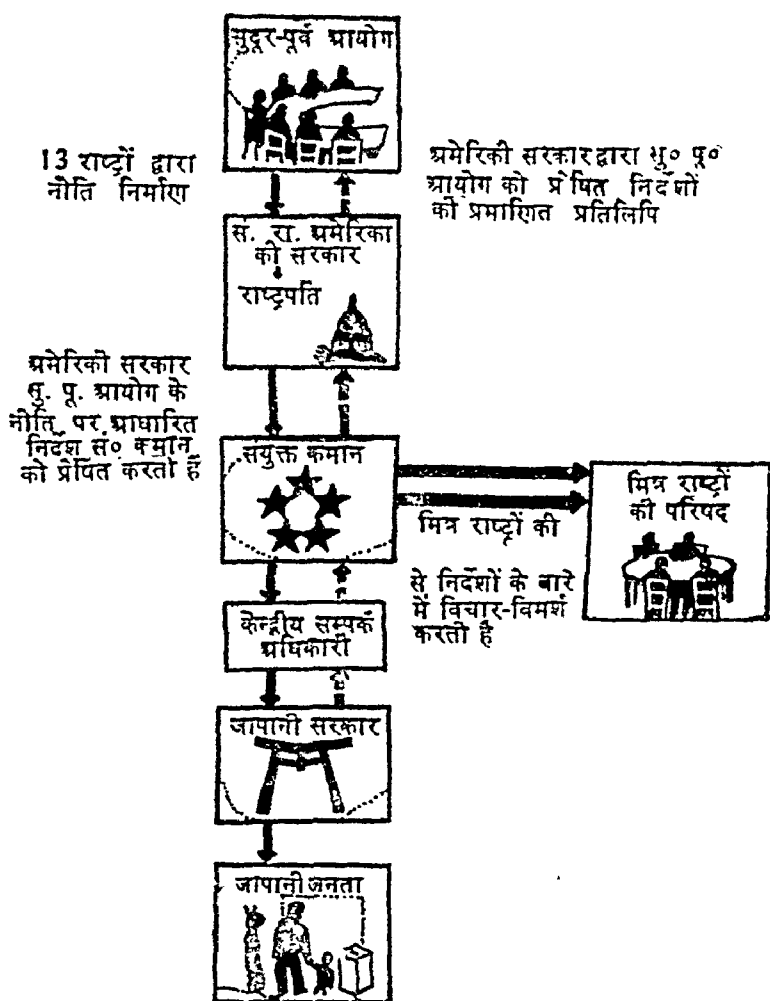
स्रोत—सुदूर-पूर्व आयोग की तीसरी रिपोर्ट महासचिव
द्वारा प्रेषित 24 दिसम्बर 1948 जून 30 1950

चार्ट 25 बी—सुदूरपूर्व आयोग तथा मित्र राज्यों की संयुक्त
सर्वोच्च कमान के मध्य सम्बन्ध।

अन्ततः इसे विद्यमान नियन्त्रण-संगठन का तथा अमेरिका तथा सर्वोच्च सेनापति के माध्यम से संचालित नियन्त्रण-व्यवस्था का सम्मान करना होता था।

सुदूरपूर्व आयोग का इतिहास पर्याप्त व्यस्त तथापि गौण रहा। यह मित्र राज्यों की परिषद् से कम लोकप्रिय तथा मित्र राज्यों की संयुक्त सर्वोच्च कमान की तुलना में मुख्य क्षेत्र से परे था, तथापि इसे एक प्रकार की गरिमा प्राप्त थी तथा इसके प्रति कटुता कम पायी जाती थी। संरचनात्मक दृष्टि से सुदूरपूर्व आयोग का गठन, स्थायी अन्तर्राष्ट्रीय

सम्मेलन के स्थान पर विशिष्ट काल वाले सम्मेलन के रूप में किया गया था। इस प्रकार इस आयोग की एक संचलक समिति का गठन भी किया गया। यह समिति असहमति वाले विषयों को सामान्य वादविवाद में लाने से पहले उन पर सहमति प्राप्त करने का प्रयास करती थी। इसके अतिरिक्त क्षतिपूर्ति, वित्तीय, संवैधानिक तथा निशस्त्रीकरण के विषयों के लिए सात पृथक् समितियाँ थीं। नेल्सन टी. जान्सन, जो पहले चीन में अमेरिका का राजदूत था, को मुख्यालय अमेरिकियों के सचिवालयों का महासचिव नियुक्त किया गया। अनेक गण्यमान प्रतिनिधियों के बावजूद वाशिंगटन स्थित कार्यालयों के प्रमुख, इस आयोग में भी कार्य करते थे। यह आयोग जापान पर अधिकार के दीर्घकालीन संदर्भ में ही प्रभाव डाल सका। नीति-निर्धारण के उद्देश्यों से बनाया गया यह संगठन मात्र परामर्शदात्री संस्था बन कर ही रह गया।[19]

जापान के बारे में मित्र राज्यों की राजनीति

मित्र राज्यों ने विजय की खुशी में अपनी एकता को बनाये रखने की इच्छा व्यक्त कर जापान के पूर्ण निःशस्त्रीकरण तथा विसैन्यीकरण पर जोर दिया। वे जापान की युद्ध कालीन अर्थव्यवस्था में गम्भीर कटौती करना चाहते थे। वे युद्ध अपराधियों को दण्ड देने के लिये कृतसंकल्प थे। ये निषेधात्मक तथा सुरक्षात्मक मांगे थी। उनमें से कुछ कारक तथा कुछ उनके अतिरिक्त भी ऐसे थे जो सकारात्मक किंतु विवादास्पद प्रकृति के थे।

मित्र राज्यों के संघर्ष के उद्देश्य यद्यपि पर्याप्त विलम्ब से स्पष्ट किये गए किंतु जैसा कि हमने देखा पोटासडम सम्मेलन में उन्हें प्रभावकारी ढंग से प्रस्तुत किया गया। पोटासडम ने अंततः जापानियों को आत्मसमर्पण का मार्ग स्पष्ट दर्शाया। इसने आत्म-समर्पण के मूलभूत उद्देश्यों को भी स्पष्ट किया। युद्ध घोसणा में मित्र राज्यों ने दे शर्त आत्मसमर्पण की मांग की थी तथा मित्र राज्यों की उद्देश्यपूर्ति होने तक सैनिक अधिकरण बने रहना था और क्षतिपूर्ति तथा लूट के माल का विभाजन अनिवार्य था। जापान को शांतिकालीन अर्थव्यवस्था विकसित करने का अवसर दिया जाना था ताकि वह अंततः विश्व व्यापार में भाग ले सके। जब मित्रराज्य अपने उद्देश्यों की पूर्ति कर लेंगे जब जापानी लोगों की स्वतन्त्र इच्छा के परिणामस्वरूप उत्तरदायी शासन-प्रणाली की स्थापना हो जाएगी, तब मित्र राज्यों की अधिकारिणी सेनाएं वापिस चली जाएंगी। एक वाक्य विचित्र संरचना वाला था—

जापानी सरकार जापानी लोगों में प्रजातन्त्रीय प्रवृत्तियों को मजबूत बनाने के लिए तथा पुनर्स्थापित करने के मार्ग में आने वाली बाधाओं को समाप्त करेगी।[20]

19—उदाहरण के लिए जनरल व्हिटने इसे इस प्रकार प्रस्तुत करता है "सुदूरपूर्व आयोग देर में प्रारम्भ होने अन्तर्राष्ट्रीय गठन, तथा उन निर्देशों के कारण जो संयुक्त सर्वोच्च कमान द्वारा मित्र राज्यों के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये प्रेषित किये गए थे, प्रायः वे निर्णय लेना था जो पोटासडम समझौते की आवश्यकता के अन्तर्गत लिये गये निर्णयों की पुष्टि करते थे। संयुक्त सर्वोच्च कमान पॉलिटिकल रिओरि-यन्टेशन, पूर्वोक्त, अंक प्रथम पृष्ठ 199-200।

20—जापानी में निहोनकोकू सेफू वा निहोनकोकू कोकूमिन नो एइदा नी ओकेरु मिन्शु शुगी तेकी केइको नो फुक्कात्सु क्योका नी ताइसुरु इसाई नो शोगाइ वो जोक्यो सुबेशि।

यहां यह मान्यता है कि जापान में प्रजातन्त्रीय प्रवृत्तियां थीं तथा उनको प्रोत्साहित करने के स्थान पर उनके मार्ग की बाधाओं को समाप्त करने का निष्क्रिय दृष्टिकोण दोनों उल्लेखनीय हैं।

यह घोषणा अपनी त्रुटियों के लिए उतनी ही उल्लेखनीय है, जितनी अधिकार सम्बन्धी घोषित निष्ठाओं के लिए। शायद पर्याप्त बुद्धिमानी से मित्रराष्ट्रों ने जापान को प्रजातंत्रीय बनाने की अपनी योग्यता में विश्वास प्रकट नहीं किया था। सम्राट् की परिस्थिति का कोई उल्लेख नहीं किया गया अंततः उत्तरदायी सरकार का स्वरूप जापानी लोगों की इच्छा पर छोड़ दिया गया था। अधिकरण में अमेरिका की प्रमुख भूमिका की सरकारी पूर्व घोषणा भी नहीं की गयी थी।

अमेरिका ने नियंत्रय-आयोग के संगठन पर नियंत्रण स्थापित करने से पहले अपनी नीति की दीर्घकालीन घोषणा तैयार कर ली थी। इसका कारण यह था कि अमेरिका ने अधिकार स्थापित करने में प्रमुख भूमिक निभाई थी तथा आंतरिक रूप से मित्र राज्यों की सर्वोच्च कमान ने नीति-निर्माण तथा क्रियान्विति का कार्य प्रारम्भ कर दिया था। 29 अगस्त 1945 को एक रेडियो सन्देश में तथा 6 सितम्बर को एक सन्देश में जापान के आत्मसमर्पण के पश्चात अमेरिका द्वारा अपनाई गई नीति, अधिकरण के सभी विशिष्ट निर्देशों का आधार बन गई। तथा यह अत्यधिक महत्त्व का विषय था।[21]

सामान्य अर्थों में अमेरिकी नीति की घोषणा में पोटासडम शर्तों की अमेरिकी व्याख्या प्रस्तुत की गई थी। प्रथमतः यह स्वीकार किया गया था कि अमेरिका की सैनिक नीति तथा विदेश नीति एक रूप हैं। इसने अमेरिकी एजेन्सियों का सन्तुलन प्राप्त करने के की कोशिश की, जो स्वयं में कोई सामान्य कार्य नहीं था। वस्तुतः इससे मुख्य मित्र राज्यों सन्तुष्ट न हो सकें तो अमेरिका का दृष्टिकोण प्रभावी होने वाला था। द्वितीयतः इसमें सर्वोच्च सेना अध्यक्ष की शक्तियों का व्यापाक वर्णन था तथा जापान की सरकार मे उसके संबन्धों की व्याख्या की गई थी। यह नीति जापान की विद्यमान सरकार का समर्थन करने के बजाय उसका प्रयोग करने की थी तथापि समर्थन तथा प्रयोग करने के मध्य की विभाजन-रेखा को स्पष्टतः नही दिया उभारा था। तृतीयतः इसके जापान में व्यक्तिगत स्वतन्त्रता, प्रजातन्त्रीय संस्थएं तथा ऐसी शांति कालीन अर्थ व्यवस्था को प्रोत्साहित करना था जो जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सर सके।

अधिकरण में अमेरिका की प्रमुख स्थिति के लाभ व हानि दोनों ही थे। इस कारण कार्यकुशलता संभव थी तथा नीति की व्यवस्था में एक रूपता प्रधान हो सकती थी। इसमें आलोचना करने की सम्भावनाएं भी पर्याप्त हो सकती थीं। तथापि यहां पूर्वभूमि में रहने

21—पोटासडम घोषणा का सम्पूर्ण अंग्रेजी का मूल परिशिष्ट 14 में दिया गया है। यह 26 जुलाई 1945 को प्रेषित किया गयी जिसे अमेरिका ब्रिटेन तथा चीन की सरकारों ने स्वीकार किया तथा रूस ने पेसिफिक युद्ध में सम्मिलित होते समय इसे स्वीकार किया। जापान द्वारा आत्मसमर्पण के निर्णय में इस घोषणा की भूमिका के लिए देखिये. 19 अध्याय पृष्ठ 441। जैसा कि 14 जनवरी, 1946 में राष्ट्रपति ट्रूमेन ने कांग्रेस को अपना सन्देश भेजते हुये कहा—"नियन्त्रण के इस व्यवस्था के अनुसार संयुक्त राज्य अमेरिका ने अपने भागीदारों की सहमति से अपनी प्रारंभिक सत्ता व उत्तरदायित्व को बनाये रखा था, विदेश विभाग का बुलेटिन 3 फरवरी 1946।

वाली कई शक्तियों की आलोचना की संभावना भी पर्याप्त थी, जो किसी वैकल्पिक नीति को प्रस्तुत करने के उत्तरदायित्व से प्रवृत्त होकर अमेरिकी नीति की आलोचना कर सकते थे।

वस्तुतः टोक्यो में मित्रराज्यों की संयुक्त कमान की गलतियों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर दिखाया जाता था। उदाहरण के लिए सुदूरपूर्व आयोग की सत्ता का मामला सर्वप्रथम जनरल मेकार्थर के सम्मुख आया। 17 जनवरी 1946 को मित्रराज्यों की संयुक्त सर्वोच्च कमान ने जापान के पुराने प्रतिनिधि सदन का निर्वाचन निर्देश प्रेषित किया। 21 मार्च को इस आयोग ने एक संदेश में जनरल मेकार्थर के सम्मुख इतने शीघ्र निर्वाचन करवाये जाने के बारे में शंका व्यक्त की। इस संदेश में यह कहा गया कि इस जापान में मात्र पूर्व स्थापित प्रतिक्रियावादी दल ही संगठित हो पायेंगे तथा जापान में भविष्य के बारे में निश्चित लोकप्रिय इच्छा की समुचित अभिव्यक्ति में बाधक बनेंगे। सुदूरपूर्व आयोग ने स्पष्ट उत्तर चाहे थे। उसे 29 मार्च 1946 को निश्चित जवाब दे दिया गया। तथा पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार निर्वाचन 10 अप्रेल 1946 को कराये गए।[22]

अंततः 19 जून 1947 अथवा अमेरिकी नीति की घोषणा के दो वर्ष पश्चात सुदूर पूर्व आयोग ने आत्मसमर्पण के पश्चात जापान के सन्दर्भ में मूलभूत नीति की घोषणा प्रेषित की। किन्तु कुछ अर्थों में मूलरूप से तथा कहीं कहीं निश्चित भाषा तक में यह अमेरिका की जापान के आत्मसमर्पण के पश्चात प्रेषित घोषणा की ही पुनरावृत्ति थी।[23]

वस्तुतः सुदूरपूर्व आयोग तथा मित्रराज्यों की परिषद का विकास महाशक्तियों के हितों में सामंजस्य स्थापित करने की दृष्टि से हुआ था। यह अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग का वास्तविक उदाहरण नहीं था, क्योंकि नीति-निर्धारण में अमेरिका ने अपनी प्रमुख स्थिति बनाए रखी थी। इसके अतिरिक्त यह संदेह भी बढता जा रहा था कि अमेरिका द्वारा निरन्तर प्रोत्साहित किये जाने के पश्चात् जापानी सरकार पूर्णतः निष्क्रिय नहीं रहेगी। प्रायः

22—मैकार्थर द्वारा दिये गए जवाब, अधिकरण की प्रगति के बारे में उसके अगाध विश्वास तथा किसी प्रकार के हस्तक्षेप के विरुद्ध अधैर्य का द्योतक है। निम्नलिखित दीर्घ सन्देश उल्लेखनीय है—

प्रश्न—क्या सर्वोच्च कमांडर को उपर्युक्त शंकाएं हैं ?

उत्तर—नहीं।

प्रश्न—क्या आप जापानी चुनावों को और स्थगित करवाना चाहेंगे तथा यदि चाहेंगे तो कितने समय के लिये ?

उत्तर—नहीं।

प्रश्न—यदि सर्वोच्च कमांडर इतनी देर के बाद चुनावों को स्थगित करना वांच्छनीय नहीं समझते हैं तो क्या वे सार्वजनिक रूप से यह घोषणा करना पसंद करेंगे कि इन चुनावों को जापान द्वारा एक पूर्णतः प्रजातन्त्रीय सरकार चुनने की योग्यता का प्रमाण माना जायेगा तथा अन्य चुनाव बाद में करवाये जायेंगे ?

उत्तर—इस प्रकार का सुझावपूर्ण कथन पूर्णतया अनावश्यक लगता है। इसमें निहित शर्तें स्थिति में पूर्णतः निहित हैं तथा स्पष्ट हैं। क्योंकि मैं कभी भी डाइट को भंग करवाकर नये चुनाव आमन्त्रित करवा सकता हूं (देखिये महासचिव की रिपोर्ट सुदूरपूर्व आयोग (1947) परिशिष्ट 158–63)।

23—देखिये परिशिष्ट 6 पृष्ठ 49–59, महासचिव की रिपोर्ट, पूर्वोक्त 1947, जापानी में मूल रचना एन. के. एच. के "निहोन नी तैसुरु कोफूकुगो नो किहोन सेसाकु (बेसिक पोस्ट सेंटर पॉलिसी फोर जापान) संख्या 19, (25 अप्रेल 1948) है।

जापानी, नीति संबन्धों निर्णयों के पूर्व ज्ञान द्वारा, अधिकारी सेनाओं की सत्ता की उपेक्षा करते थे। जापान पर अधिकार के कठोर आलोचक नीति-निर्धारण के आदेशों को इस क्रम में मानते थे कि वे मित्र राज्यों की संयुक्त कमान से अमेरिकी सरकार को प्रेषित होते थे तथा फिर सुदूरपूर्व आयोग के प्रस्ताव के रूप में पुनः टोक्यो को प्रस्तुत होते थे। इस प्रकार ईससे उस कार्य करने का निर्देश होता था जिसे पूरा किया जा चुका होता था। तथापि यह कथन सम्पूर्ण व्यवस्था के बारे में अतिशयोक्ति है, क्योंकि जापानी विशिष्ट पूर्वी तरीके से कार्यों में विलम्ब तथा भ्रम उत्पन्न करते थे तथा कई मामलों में उन्हें अनेक बार सोचना पड़ता था। तथापि पुनर्व्यवस्थापन की संपूर्ण प्रक्रिया मित्र राज्यों के संयुक्त कमान के ब्रिगेडियर जनरल केन आर डाइक के अनुसार उसी प्रकार थी मानो कमरे में घूमने फिरते रोगी पर अपेंडिक्साइट्स का आपरेशन किया जा रहा हो। कई पहलुओं से यह आपरेशन आश्चर्यजनक सफल था। रोगी बचा रहेगा। किन्तु यह देखना बाकी है कि कहीं शल्य चिकित्सक ने कुछ छोटे औजार पेट में ही तो नहीं छोड़ दिये हैं।

आज भी जबकि जापान ने स्वतन्त्रता प्राप्त करली है, अधिकृत स्थिति में किये गये प्रयोगों के बारे में दो पृथक् दृष्टिकोण है। मित्र राज्यों की सर्वोच्च संयुक्त कमान के साथ अधिकार स्थापित करने के समर्थक मानते हैं कि इस दौरान प्रति माह जापान ने राजनीतिक अभिमुक्तीकरण की ही दिशा में प्रगति की, तथापि मित्र राज्यों की संयुक्त कमान के आलोचक के लिए यहां यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि मात्र कामिनफार्म के आलेख ही कटु आलोचना नही करते हैं—यह दावा करते हैं कि जापान की राजनीतिक परम्परा में अप्रत्यक्ष रूप से परिवर्तन हुए थे। इनमें से कोई भी दृष्टिकोण पूर्णतः उचित नहीं है। इन दो दृष्टिकोणों के मध्य कहीं पर जापान की निरन्तर रहने वाली राजनीतिक परंपरा का सार विद्यमान है, जिसने इतने संकटों का सामना किया है। जापानियों की अपनी, असुरक्षा से छुटकारा प्राप्त करने के प्रयासों तथा उनकी विशिष्ट बने रहने की आवश्यकता के प्रति ऐसी सहानुभूति की जरुरत है जो जापान के सभी अध्ययनकर्त्ताओं को जापान समर्थक बना दे तथा युद्ध के पश्चात् जापान के परिवर्तनों को निरपेक्ष दृष्टि से देख सके[24]। सरकार को प्रभावित करने वाले दो परिवर्तन मुख्य थे—प्रथमतः जापानी राजनीति से उग्रतत्वों को समाप्त करने का प्रयास किया गया। और द्वितीयतः संवैधानिक सुधारों का प्रयास किया

24 अगस्त 1948 में प्रारम्भिक सरकारी स्रोत मित्र सेनाओं का सर्वोच्च कमाडर था। सनेशन ऑफ नॉन मिलिट्री एक्टीविटीज इन जापान, जनरल हैडक्वार्टर, संयुक्त सर्वोच्च कमान टोक्यो (मासिक तथा क्रमवार अंकित)। प्रस्तुत अधिग्रहण पर प्राप्त सामग्री तथा विभिन्न दृष्टिकोणो का प्रतिनिधित्व करती है। जापानी संस्कृति तथा उस पर अमेरिकी प्रभाव के संदर्भ में देखिये, एडविन ओ रैशोर, दि यूनाईटेड स्टेट्स एण्ड जापान, कैम्ब्रिज 1950 अमेरिकी विदेश-विभाग के अधिकारी द्वारा प्रस्तुत प्रशात्मक विवरण के लिए देखिए, एडविन एम. मार्टिन दि एलाइड ऑक्यूपेशन ऑफ जापान, न्यूयार्क 1948 तथा इसके साथ ग्रंथ जो अधिकरण का आलोचक है टी. ए. विस्सोना प्रासपेक्टस फोर डेमोक्रेसी इन जापान न्यूयोर्कक, 1949 अमेरिकन इस्टीट्यूट ऑफ पैसीफिक रिलेशन्स के तत्त्वाधान से प्रकाशित हुआ। इतना ही आलोचनात्मक दृष्टिकोण हेलन पिअर्स की रचना मिरर ऑर अमेरिकन्स, बोस्टन 1948 पर्याप्त सतर्क तथा आशावादी दृष्टिकोण के लिए फिअरे का दि ऑक्यूपेशन ऑफ जापान, सेकंड 1948-50 न्यूयार्क, 1951, रिपोर्ट की दृष्टि मे श्रेष्ठ रसेल ब्राइन्स का मैकार्थर्स जापान, फिलाडेल्फिया 1948, तथा पर्याप्त चतुरतापूर्ण विवरण रूमी ब्रोकेट की रचना पोपकोर्न ऑन दि गिंजा, एन इनफॉरमल पोर्टेट ऑफ पोस्टवार जापान, न्यूयार्क, 1949।

गया। जापान के प्रशासनिक ढांचे में परिवर्तन किया गया तथा जापानी स्वरूप में पश्चिमी प्रजातन्त्र को स्थापित करने का प्रयास किस प्रकार किया गया उसका वर्णन अगले अध्याय में किया गया है। सीमित अवधि की दृष्टि से इन परिवर्तनों को जापान की राजनीति में परम्परागत तथा नवीन क्रियाशील दबावों के सन्दर्भ में देखा जा सकता है। तो भी इसके दीर्घकालीन प्रभाव विदेशी तो क्या स्वयं जापानी भी नहीं समझ सकते हैं।

प्रथम चरण—

शुद्धीकरण का दौर उन कुछ प्रश्नों में से था, जिन पर प्रायः सभी मित्र राज्यों में सहमति थी, जैसे जापानी युद्धअपराधियों पर मुकदमा चलाने की आवश्यकता आदि। यद्यपि तकनीकी दृष्टि से इसे जापान की शुद्धीकरण-प्रक्रिया का मूल भाग नहीं माना गया था तथापि टोक्यो-अभियोग इस तथ्य की पुष्टि करते थे कि मित्र राष्ट्र मुख्य सैनिक नेताओं तथा उग्र राष्ट्रवादियों का उन्मूलन करने के लिए कृतसंकल्प थे। पोटासडम घोषणा तथा न्यूरेम्बर्ग अभिभागों के पूर्वोदाहरण के आधार पर 19 जनवरी 1946 को सुदूरपूर्व के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सैनिक न्यायधिकरण की स्थापना की गई (क्योकुतो कोकुसाई गुनी सैबांशो) तथा टोक्यो स्थिति इस न्यायालय के मुख्यालय के लिए एक चार्ट भी बनाया गया।

दो वर्ष तीन माह के पश्चात् अथवा 419 सुनवाई 452 साक्षियों के बयान तथा बाद में 3915 प्रलेखों के बाद इस न्यायाविकरण का मध्यातंर हो गया। कुछ महत्त्वपूर्ण साक्षियों को प्राप्त करने में यह असमर्थ रहा था। 15 दिसबंर 1945 को राजकुमार कोनोये जहर की शीशी के साथ मृत पाया गया। भोमिनुरी होच ने सम्राट् को प्रभावित करने वाले गंभीर विकासों की चर्चा की। आसाही की टिप्पणी थी कि कोनोये का नाम सर्वदा संदेहपूर्ण रहेगा। निप्पोन टाइम्स ने अपने संपादकीय में टिप्पणी करते हुए लिखा "अभियोग का सामना करते हुए तथा न्यायालय को वह सब सूचना प्रदान कर, जिसे वह इतनी अच्छी तरह जानता था, जापान की राजनीति के इतिहास के हाल के वर्षों पर घिरे हुए आवरण को हटा सकता था। सम्राट् के बारे में प्रकट की गई शंकाए काल्पनिक नहीं थी, यह अक्तूबर 1947 में लार्ड कीपर पार्क्विस किदो की गवाही से स्पष्ट हो गया जिसने राजपद को दुर्बल बनाने की धमकी दी। 1948 की मई में जापान के समाचार पत्रों ने पहली बार हिरोहितो द्वारा राजपद त्यागने की संभावना की चर्चा करना प्रारम्भ की।

अंततः 4 नवंबर 1948 को आस्ट्रेलिया के मुख्य न्यायाधीश सर विलियम नेव ने 25 अभियुक्तों में से 10 सैनिक अधिकारियों को अपराधी घोषित करते हुए उन पर आरोप लगाया कि उन्होंने आक्रामक युद्ध का षड्यंत्र किया था तथा युद्ध आरंभ किया था तथा वे मित्र राज्यों के बंदियों पर किये गये अत्याचार के लिए उत्तरदायी थे। 24 नवंबर को जब जनरल मैकार्थर ने इस दंड की पुष्टि की तो उनमें से दो दंडित अपराधियों ने हैबियस कोर्पस परमादेश के अंतर्गत अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय से मृत्युदंड को स्थगित करने की अपील की। 20 दिसबंर को 6 न्यायाधीशों ने यह निर्णय दिया कि क्योंकि यह न्यायाधिकरण अंतर्राष्ट्रीय था, अतः अमेरिका का सर्वोच्च न्यायालय इस संदर्भ में कुछ भी नहीं कर सकता

था। 22 दिसबंर को मैकार्थर के सार्वजनिक संपर्क अधिकारी ने सात युद्धापराधियों को सुगायो जेल में फांसी देने की घोषणा की।[25]

अंतर्राष्ट्रीय सैनिक न्यायाधिकरण ने जहां धीरे-धीरे सेना के उच्चपदाधिकारियों को समाप्त करना प्रारम्भ किया वहां सर्वोच्च सेनापति ने सेना के प्रारम्भिक विकास को ही रोकना प्रारंभ कर दिया। सर्वप्रथम किये गए प्रयास प्राथमिक मात्र थे, जैसे सेना द्वारा अधिकरण को चुनौती दे सकने की क्षमता को नष्ट करना आदि। इस प्रकार सितंबर 1945 में सम्राट् के सैनिक मुख्यालय भंग कर दिया गया जापानी मंत्री मंडल ने अनिवार्य भर्ती समाप्त कर दी। सेना के विघटीकरण की प्रारम्भिक प्रक्रिया युद्ध तथा नो सेना मंत्रालयों द्वारा की गई। किन्तु जून 1946 तक नागरिक सेना के विघटीकरण ब्यूरो ने यह कार्य करना प्रारंभ कर दिया था। अक्टूबर 1947 तक सभी शक्तिशाली सेना-मंत्रालयों को पूर्णत: समाप्त कर दिया गया था तथा सेना के विघटीकरण संबंधी सभी कार्य लोक कल्याणकारी मंत्रालय को सौंप दिये गए थे।[26]

यह युद्धीकरण की प्रक्रिया मात्र सेना तक ही सीमित नहीं रही। स्वयं जापानियों ने भी सर्वोच्च सेनापति के आगमन से भी पहले कुछ सीमा तक अपनी समझ के अनुसार प्रजातंत्रीय दिशा प्रयास किये थे। 22 अगस्त 1945 को ताईसेई योकूसान कार्ड (शाही प्रशासन सहायक संगठन) तथा ताईसेई योकूसान सेयजी कार्ड (शाही प्रशासन सहायक राजनीति संगठन) दोनों को सार्वजनिक रूप से विघटित कर दिया गया था। विशेपताओं के आगमन के पश्चात् एक समाचार पत्र संपादकीय ने संपूर्ण घटना की समानता तोकूगावा शोगुनेत के पतन से की थी। क्योंकि तब भी सामंती तत्वों के विघन की प्रक्रिया से पहले ही सैनिक संघर्प समाप्त कर दिया गया था तो भी शोगुन के समर्थकों दि कुछ उग्रवादियों को छोड़ कर बाकी लोगों को अंतत: आग्रह तथा मतपरिवर्तन के द्वारा नवीन शासन का समर्थक बनाया गया था।"तथापि इस दृष्टिकोण के प्रति मैकार्थर की प्रतिक्रिया जापानियों के लिए एक असभ्य धक्का तथा आगामी घटनाओं की पूर्वसूचना सिद्ध हुई। सितंबर में उसने जापानी सरकार द्वारा भूतपूर्व वित्त मन्त्री इकेदा सेहिन, जो एक समय में मितसुई हितों का संरक्षक भी रहा था, को संपर्क अधिकारी पद पर नियुक्ति को अस्वीकार कर दिया।[27]

किन्तु प्रारम्भिक परिवर्तन उन प्रयासों की तुलना में नगण्य था, जो बाद में जापानी सरकार को मित्र राज्यों की सर्वोच्च कमान के दबाव में करने पड़े। 1946 के

25. अनुभाग दो, अनुच्छेद पांच, अंतर्राष्ट्रीय न्यायाधिकरण ने अपराधों की निम्नलिखित सूची बताई (अ) शांति केरुध अपराध (ब) परम्परागत युद्ध अपराध (स) मानवना के विरुध अपराध देखिये एन. के. एच. के. अंक प्रथम संख्या 7 15 अक्टूबर 1946) पृष्ठ 67-68 न्यायाधीशों की सूची के लिए अभियोग के विवरण के लिए संख्या प्रथम विदेश विभाग, ट्रायल्स ऑफ जापानीज वार क्रिमिनल्स, (प्रकाशन 2-13, सुदूरपूर्व प्रकाशन 12) वाशिंगटन 1846। न्याय धिकरण के कार्य के सारांश के लिए देखिए सोलिस हौविला "दि टोक्यो ट्रायल इंटरनेशनल केन्सीलिएशन, संख्या 465 (नवम्बर 1950)।

26. विसैन्याकरण के लिए दिये गये आदेशो मादेशों के लिए देखिये एन. के. एच. के. संख्या 12 (1 अगस्त 1947) पृष्ठ 48-49 संख्या 20 (जून 1, 1948) पृष्ठ 9-14 तथा संख्या 22 (1 अगस्त 1948 पृष्ठ 7-8।

27. देखिये निप्पोन टाइम्स, 10 सितम्बर से 26, 1945।

प्रारम्भ उग्र राष्ट्रवादियों के उन्मूलन का दौरा प्रारम्भ हुआ जो गर्मियों तक समाप्त हो गया जिसके परिणामस्वरूप महत्त्वपूर्ण पदों के लगभग एक हजार अधिकारियों तथा उम्मीदवारों के बारे में प्रारम्भिक खोजबीन की गई। तत्पश्चात् चुनावों के बाद अंतिम रूप सफल उम्मीदवार की जाँच पड़ताल की गई, जिसके बाद जून में डाइट ने अपना कार्य प्रारम्भ किया दूसरे दौर में अवांछनीय नेताओं वा स्थानीय संस्थाओं के स्तर पर उन्मूलन किया गया, संयोगवश यह प्रक्रिया अप्रेल 1947 में तब प्रारम्भ हुई जब जापानी अपने स्थानीय प्रतिनिधियों तथा कार्यपालिका अधिकारियों (सर्वप्रथम) तथा संसद का निर्वाचन करने वाले थे। इस काल में मुख्यतः स्थानीय संस्थाओं में लगभग सात हजार सदस्यों को या तो हटाया गया या निर्वाचित होने से रोका गया। तृतीय तथा अन्तिम चरण में 1947 के अन्तिम दौर में निजी वित्तीय तथा औद्योगिक प्रतिष्ठानों तथा जनसंचार के साधनों में हस्तक्षेप किया गया (इस काल में लगभग आठ सौ लोगों को हटाया गया।)

इस शुद्धीकरण का क्षेत्र तथा कार्यक्रम इतना व्यापक था कि इसमें बर्ती की गई सतर्कता तथा गोपनीयता के बारे में, जो सरकार के द्वारा निर्देशों, व्याख्याओं तथा अध्यादेशों के बारे में रखी गई तथा कुछ संयुक्त मित्र राज्यों की सैनिक अधिकारियों द्वारा कभी कभी उसका विरोध भी किया गया, इस संपूर्ण प्रक्रिया का जो प्रभाव पड़ा उस पर एक पूरा ग्रंथ लिखा जा सकता है।[28]

इस अस्पष्टता को जापानियों ने विलंब करने का बहाना बनाया। शाब्दिक मुहावरों के द्वारा शुद्धीकरण की प्रक्रिया को प्रशानिक से न्यायिक प्रक्रिया में परिवर्तित किया गया। सरकार ने शंकास्पद लोगों को एकदम निकालने के बदले व्यक्तिगत जांचपड़ताल करने का प्रस्ताव किया। प्रधान मंत्री शिदेहरा ने मित्र राज्यों की संयुक्त कमान में जवाब देते हुए इस प्रकार की सौदेबाज के प्रति किसी प्रकार का धैर्य प्रदर्शित नहीं किया। "निर्देशों का पालन शब्दों के साथ साथ भाषा में पूर्णरूप से किया जाना चाहिये। तथापि बहुत अधिक कल्पनाप्रधान होने पर इस सरकारी दृष्टिकोण से सहमत हुआ जा सकता है कि प्रजातंत्रीय सुधारों को स्थापित करने में जनरल मैकार्थर ने निरंतर जापानी सरकार द्वारा स्वयं कार्य करने की नीति को प्रोत्साहित किया'

जब एक बार सरकार को यह स्पष्ट रूपरेखा प्रदान कर दी गई कि उसे कहां पर प्रयास करने थे तो उसने निर्देशों को क्रियान्वित करने के प्रयास प्रारम्भ कर दिये। प्रत्येक

28. जनरल मैकार्थर द्वारा इस कार्यक्रम का सेना के संयुक्त अध्यक्षों को दिये गये निर्देश में 1 नवम्बर, 1945 को दिया गया, पूर्वोक्त जे. सी. एसी. 1380।15 परिशिष्ट अ 13, एस सी, एपी. पालिटिकल रिआरियनटेशन अंक दो पृष्ठ 428-439। 4 जनवरी 1946 के निर्देश के लिये सार्वजनिक पदों पर अवांछनीय अधिकारियों की नियुक्ति तथा निष्काशन "(एस. सी. ए. पी आइ. एन. 550)" कतिपय राजनीतिक दलों, संगठनों तथा समूहों का उन्मूलन (एस. सी. ए. पी. इन.) 548) पूर्वोक्त परिशिष्ट बी 5 बी तथा 5 अ पृष्ठ 479–488 (जापान में) एक के. एच. प्रथम अंक संख्या 7 (15 अक्टूबर, 1946) पृष्ठ 17–36, 37–42, प्रारम्भिक संस्कर के लिए (सर्वोच्चसत्ता कमान के निर्देश 93), पुलिस प्रशासन में अधिकारियों की नियुक्ति, 4 अक्टूबर, 1945, पूर्वोक्त परिशिष्ठ पृष्ठ 463–465 तथा जापानी में एच. के. एच. के अंक प्रथम संख्या 3 (11 जून 1946) पृष्ठ 29–38, संXप्त किंतु अधिकृत विवरण है जो प्राथमिक प्रेक्षण पर आधारित है। हैराल्ड एस. क्यूजिले की रचना "दि ग्रेट पर्ज इन जापान" पेसिफिक अफेयर्स' 20 अंक संख्या तीन सितम्बर (1947) पृष्ठ 299–308।

वर्ग पर ध्यान देते हुए पद विमुक्तियों के क्षेत्र का निर्धारण मंत्रीमंडलीय व्याख्याओं तथा साम्राज्यिक अध्यादेशों के द्वारा किया गया।

निर्देशों की जापानी विधि में सर्वप्रथम अनुवाद से भी पहले जापानी राजनीति का सर्वोच्च स्तर प्रभावित होने लगा था। निप्पोन टाइम्स ने जापानी समाचारपत्रों की टिप्पणियों का सारांश प्रस्तुत करते हुए कहा

सेना के मुख्य सेनापति जनरल मैकार्थर ने जापानी सरकार के सर्वोच्च पद को विघटित कर दिया, डाइट तथा राजनीतिक दलों को बुरी तरह से विदग्ध कर दिया तथा शिदेहरा मंत्रीमंडल पर भी आज से शुद्धीकरण के दो निर्देशों के रूप घातक प्रहार किये है।

प्रथम शुद्धीकरण के प्रयास में साम्राज्यिक घराने के मंत्री, प्रीवी परिषद के अध्यक्ष तथा महाचैम्बलेन को पद विमुक्त कर दिया गया। इस प्रकार सम्राट् की सहायता के लिए मात्र प्रधानमंत्री बना। यद्यपि शिदेहरा के पांच मन्त्रियों ने तत्काल त्यागपत्र दे दिया, किन्तु उसने आत्मसमर्पण के पश्चात् मत्रीमंडल को पुर्नगठित कर (अक्टूबर 1945 से 22 मई 1946) संकट का सामना करने का प्रयास किया। 22 जनवरी 1946 को योमिउरी होची ने कहा कि यह भाग्य का विचित्र सयोग ही था कि संपूर्ण पीयर व्यवस्था को समाप्त करने का निर्णय ऐसी सरकार को लेना पड़ा, जिसका प्रधान शिदेहरा स्वयं एक वैरन था।

मई 1946 में प्रथम चुनावों के पश्चात् यह स्पष्ट हो गया कि कुछ ही लोग स्पष्टतया बच सकते थे। राजनीतिक क्षेत्र में उस समय हलचल मच गई। जब नवीन उदार दल के नेता हतोमाया इचिरो, जो प्रधानमंत्री पद के लिए प्रमुख नेता था, को पद ग्रहण करने से रोक दिया गया। नवंबर 1945 में संपादक को लिखे गये पत्रों में ही इस विडबना की चर्चा प्रारम्भ हो चुकी थी कि हतोमाया, जिसने 1930 में शिक्षामन्त्री के रूप में विश्वविद्यालय पर दवाव डाला था, वह युद्धोपरांत उदारवादी दल का संगठन कर रहा था। दिसवंर में हतोमाया ने अपने विरुद्ध लगाए गए आरोपों का जवाब देते हुए कहा कि जब युद्ध चल रहा था तब उसने उसमें कोई भाग नहीं लिया था। 10 अप्रैल 1946 को आशी शिम्बन ने इस आरोप की चर्चा की। (मूलतः यह आरोप अमेरिकी समाचार पत्र स्टार्स एंड स्ट्राइप्स द्वारा लगाया गया था)। होतोमाया ने अपनी योग्यताओं सम्बन्धी प्रश्नावली को भरते अपनी बुरी राज्यों की सर्वप्रथम पुस्तक केस ऑफ दि अर्थ (सेकाई नो काओं) का उल्लेख नहीं किया था। 3 मई 1946 को मित्र राज्यों की संयुक्त सर्वोच्च मकान के मूल निर्देशों के 'जी' वर्ग के अन्तर्गत मात्र एक व्यक्ति के विरुद्ध निर्देश प्रेषित करते हुए प्रधानमन्त्री शिदेहारा को हातोयामा इचरो को सार्वजनिक पद से हटाने का आदेश दिया गया।[29]

29. संयुक्त सर्वोच्च कमान द्वारा दिये गये निर्देश 919, 3 मई, 1646 अभियोग में दिये गये आरोप हातोयामा (अ) जनरल तनाका के मंत्रीमण्डल का मुख्य सचिव के रूप कुख्यात शांति बनाये रखने वाली विधि के उत्तरदायी था (ब) शिक्षा मन्त्री (1931–34) के रूप में बड़े पैमाने पर नियुक्तियों के लिये उत्तरदायी था। (स) बलपूर्वक ढंग से श्रमिक मजदूरों के दलों को भंग किया (द) राजकुमार कोनोशियो के दूत के रूप जापानी आक्रमण के प्रारम्भ करने का कार्य किया। (5) यद्यपि 1942 के चुनावों उसने सैन्यविरोधी के रूप में प्रचार किया था, किंतु उसने अपने निर्वाचन-क्षेत्र के विस्तार का समर्थन किया। देखिये एस सी. ए. पी. पालिटिकल रिआरियनटेशन, पूर्वोक्त अंक दो, परिशिष्ठ, बी पांच, एक पृष्ठ 494 495 तथा जापानी, में एन. के. एच. के अंक प्रथम संख्या 12 (अगस्त 1947) पृष्ठ 178–181।

शुद्धीकरण के दूसरे दौर में जो चुनावों से पहले, 1947 में प्रारम्भ हुआ सरकार सरकार को स्थानीय स्तर पर लोगों को अपदस्थ करने के लिए योजना बनानी पड़ी। जनरल मैकार्थर के जी 2 (नागरिक गुप्तचर विभाग) ने पहले ही यह चेतावनी दे दी थी कि युद्धपूर्व के राष्ट्रीय महत्व के लोग, जिन्हें अपदस्थ कर दिया गया था, स्थानीय पदों की ओर बढ रहे थे। तथापि प्रधानमन्त्री योशिदा ने यह तर्क दिया कि युद्धकालीन सैन्यीकरण उच्चतर स्तरों पर हुआ था। इस बार स्वयं जनरल मैकार्थर ने जापानी सरकार से उस कार्य को पूरा करने के लिए कहा। 4 जनवरी 1947 के चार साम्राज्यिक अध्यादेशों तथा एक मन्त्रिमण्डल आदेश के द्वारा पदच्युक्ति कार्यक्रम राष्ट्रीय तथा डाइट पदों से प्रीफेक्ट पदों, मेयर, विधान सभाओं की सदस्यता, स्थानीय नेतृत्व दलीय निर्देशन, औद्योगिक वाणिज्य तथा वित्तीय संस्थाओं तक बढ़ाया गया। स्थानपूरक उम्मीदवारों तथा कठपुतली उम्मीदवारों की सम्भावनाओं को समाप्त करने के लिये रक्त-विवाह व अन्य प्रकार से संबंधित लोगों के उम्मीदवारों की संख्या लगभग दस लाख थी। दूसरे व तीसरे दौर के पश्चात् यह संतुलन दूसरी दिशा की ओर हो गया।

इस शुद्धिकरण के प्रयासो की गहराई की आलोचना स्वाभाविक थी। स्वयं मित्र राज्यों की संयुक्त कमान में भी यह चर्चा सुनी गई कि शुद्धीकरण-कार्यक्रम के पश्चात उद्योगों को संचालन करने के लिये योग्य मैनेजरों तक का अभाव था। योशिदा सरकार ने प्रथम तो शुद्धिकरण-प्रक्रिया को प्रारम्भ करने में देरी की, किन्तु बाद में विपक्षी दल का दमन करने के लिए इसका प्रयोग किया। अधिक गम्भीर युवा सैनिक अधिकारी, जिनका प्रशिक्षण मात्र हिंसा के लिए ही हुआ था, उन्होंने अपनी प्रतिभा का उपयोग अन्य स्तरों पर करना प्रारम्भ किया। उदाहरण के लिए नवीन मजदूर संगठनो में उनका प्रभाव विनाशकारी था। अगस्त 1949 तक जापानी अधिकारियों ने लगभग 70 हजार हटाये गये अधिकारियों को पुनः नियुक्त करने की योजना पर विचार करना प्रारम्भ किया। संयुक्त सर्वोच्च कमान की पहली प्रतिक्रिया यह थी कि शुद्धिकरण से सम्बन्धित कोई भी परिवर्तन आंशिक रूप से नहीं किया जा सकता था तथा न ही व्यक्तिगत प्रार्थना-पत्रों पर विचार किया जा सकता था। जनवरी 1950 तक जापानी सरकार आश्वस्त हो गई कि शुद्धिकरण व्यवस्था पर पुनः विचार सम्पूर्ण आधार पर ही किया जा सकता था तथा उसने अपनी आशायें आने वाली शान्ति सन्धि पर केन्द्रित कर दी।[30]

पृष्ठ भूमि के लिए देखिये निप्पोन टाइम्स, 7 नवम्बर, 1945, 11 दिसम्बर, 1645, आसाही, शिम्बुन 18 अप्रेल 1846। साम्यवादियों ने अपने शत्रु को अधिकृत कर, संयुक्त सर्वोच्च कमान के निर्देश का प्रयोग न केवल हातोयामा का अपराध प्रमाणित करने के लिए किया, अपितु उदार दल व शिमेहरा सरकार की आलोचना करते हुए नये चुनावों की आवश्यकता पर बल दिया देखिये मैंनिची शिकुन 5 मई, 1946।

30, जनरल मैकार्थर को स्थान पर जनरल मैंथ्यू वी. रिजवे ने स्थान ग्रहण करते ही एक आदेश दे कर शुद्धीकरण के आदेशों व अध्यादेशों के पुनरावलोकन की आज्ञा दी। 19 जून, 1957 को सरकार ने शुद्धिकरण को निरन्तर करते हुए लगभग 3000 लोगों को राष्ट्रीय स्तर पर तथा 6700 को प्रीफेक्चर स्तर पर पुनर्नियुक्त किया गया। मात्र उन लोगों को वापिस नहीं लिया गया जिनने व्यक्तिगत आरोपों पर विमुक्त किया गया था।

दि न्यूयार्क टाइम्स, जून, 1951।

द्वितीय चरण

संवैधानिक सुधार-संयुक्त सर्वोच्च कमान द्वारा किये गये सभी प्रयासों में से सर्वाधिक महत्वपूर्ण उनके द्वारा जापानी सरकार पर थोपा गया नवीन संविधान था। इस घटना को कई पहलुओं से देखा जा सकता है। सविधान की निर्माण-प्रक्रिया का सक्षिप्त वर्णन भी यह समर्पण का ही एक भाग था तथा मैकार्थर की जापान नामक राजनीतिक संस्था के निर्माण के लिए अपरिहार्य थी। अतः समर्पण के परिणाम के रूप में अपनी भूमिका के अतिरिक्त नवीन संविधान को जापान के आन्तरिक प्रजातन्त्रीकरण की पूर्वयोजना के रूप में माना जाना चाहिये जो आधुनिक विश्व में जापान के आत्मसातीकरण का अपरिहार्य परिणाम था। इस दूरगामी सन्दर्भ में यह प्रलेख कुछ चिन्ताजनक शंकाएं उत्पन्न करता है। अतः यह नवीन संविधान जापान की पूर्णतः नवनिर्मित विधि-संहिता का मूल आधार था। मित्र राज्यों की नीति सम्बन्धी घोषणायें जापान के संवैधानिक के बारे में मूलभूत उभयपक्षी स्थिति को प्रस्तुत करती हैं। पोटासडम सम्मेलन में मित्र राज्यों ने यह प्रस्ताव किया था कि जापान में शांति की अपेक्षा करने वाली उत्तरदायी सरकार की स्थापना की जाये। फिर भी अमेरिका ने मित्रराज्यों तथा स्वयं अपनी तरफ से सरकारी तौर पर यह कहा था अन्ततः सरकार के स्वरूप का निर्धारण एवं स्थापना जापानी लोगों द्वारा स्वतन्त्र रूप से अभिव्यक्त की गई इच्छा के आधार पर किया जाएगा। इस से सम्बन्धित एक अन्य प्रश्न था। यदि मित्रराज्यों प्रजातन्त्र पद के बारे में सहमत हो भी जाते तो भी जापानी वातावरण में, जिसमें परम्परागत रूप से राजनीतिक प्रजातन्त्र का अभाव थ, प्रजातन्त्र की स्थापना कैसे की जा सकती थी?

क्या मित्र राज्यों को जापान के आर्थिक सगठन का पुनर्गठन करने के बाद उसके सामाजिक जीवन को नवीन रूप प्रदान करने तथा जापान को आधुनिक प्रजातंत्रीय राज्यों की श्रेणी में रखने के बाद उसे अपनी संवैधानिक विकास स्वयं जापानी शैली में करने का अवसर देना चाहिये था ताकि जापानी जनता प्रजातंत्र में भाग लेकर उसे सीखती? अथवा मित्र राज्यों को प्रजातंत्र का औपचारिक ढांचा स्थापित कर देना चाहिये था तथा फिर यह अपेक्षा करनी चाहिये थी कि जापानियों के राजनीतिक व्यवहार इस ढाचे के अंतर्गत विकसित होंगे तथा सामाजिक आर्थिक तथा संबंधित आचरण के रूप में अंततः राजनीतिक व्यवहार का अनुसरण करेंगे।[31]

मित्र राज्यों का दिशा-निर्धारण हो गया। उन्होंने दूसरे विकल्प को चयन किया। इतना स्पष्ट है कि अमेरिकी मनोवैज्ञानिक तौर पर संवैधानिक व कानूनी सुधारों की व्यावहारिक

31. संयुक्त सर्वोच्च कमान के अधिकारी मूल विभाग के प्रति सतर्क थे। जिसे एस. सी. ए. पी. पोलिटिकल रिआरियनटेशन अंक प्रथम "दि न्यू कॉन्सीटीट्यूशन ऑफ जापान" विशेषतया पृष्ठ 90 में यह स्पष्ट किया गया है। यह उल्लेखनीय है कि संवैधानिक सुधारों को उस सैनिक दबाव के स्थान पर अधिक उदार तरीके से किया गया था, जो अन्तर्राष्ट्रीय विधि की दृष्टि से अत्यधिक अवांछनीय थे। देखिए पृष्ठ 8( )। यह भी याद करना आवश्यक है कि मित्र राज्य सुदूरपूर्व आयोग के माध्यम से संवैधानिक सुधारों में काफी प्रभाव रखते थे, फिर भी अन्तिम प्रभाव जापानियों का होता था। देखिये पृष्ठ 479 तथा सैक्रेट्री जनरल की रिपोर्ट (26 फरवरी, 1946 10 जुलाई 1947) पूर्वोक्त 12 अवशिष्ट पृष्ठ 67 देखिए नेल्सन रोब 'दि न्यू जापानीज कास्टीट्यूशन "फार ईस्टर्न सर्वे, जरवरी 29, 1947 तथा 12 फरवरी, 1947

समस्याओं को समझने के लिये तैयार थे किन्तु न तो अमेरिकी तथा न ही अन्य गैर साम्यवादी प्रजातंत्रीय राज्य यह बताने के लिये तैयार थे कि सामाजिक व्यवस्था क्या होती है तथा न ही वे यह बता सकते थे कि कोई सामाजिक व्यवस्था कैसी होनी चाहिये। गैर साम्यवादी देशों के पास स्वयं सामाजिक व आर्थिक प्रजातंत्रों के ऐसे स्पष्ट मॉडल नही थे जिनके आधार पर वे यह निश्चित कर पाते कि जापान में राजनीतिक व्यवस्था के अलावा जापानी जीवन का स्वरूप किस प्रकार का होना चाहिये। साम्यवादियों ने अपने ढंग से जापान का प्रजातंत्रीय करण किया होता। प्रत्येक सामाजिक प्रशन का जैसे अस्पताल में प्रविष्ट करने तथा वृद्धावस्था - सहायता प्रदान करने से लेकर ट्रेड यूनियन संगठनों का निर्माण तथा सार्वजनिक संपति के स्वामित्व पूजापाठ तथा अन्य उत्सवों के लिये उनके पास परंपरागत मार्क्सवादी उत्तर तैयार होता। किंतु अन्य मित्र राज्यों के लिये यह संभव नहीं था। अमेरिकी स्वयं किसी समाज की भी कल्पना नहीं कर सकते थे क्योंकि अधिकांश अमेरिकी राजनीतिक पदो से परे सोच ही नहीं सकते थे।

एक अर्थ में अमेरिकियों ने वही किया जो वे अधिकांश रुप से कर सकते थे। उन्होंने जापानियों को वे राजनीतिक तथा संवैधानिक सुरक्षाएं प्रदान करने का प्रयास किया जो उनके अनुसार गलत अथवा सही ढंग से अमेरिकी जीवन की उपलब्धि थीं। जापानियों को एक विशाल नवीन द्वीप व्यापक प्राकृतिक स्त्रोत एक भिन्न प्रजातीय संगठन तथा एक नविन ऐतिहासिक स्मृति दे सकना संभव नहीं था। किंतु राजनीतिक कारक परिवर्तित किये जा सकते थे तथा अमेरिकीयों ने इन्हीं को संशोधित किया।

एक सामान्य व्यक्ति के दृष्टिकोण से यह चयन उस विचित्र शैली से साम्य रखता था जिस तरीके से जापानी एक नवीन तथा विशाल सरकारी इमारत का निर्माण करते हैं। प्राप्य सामग्री में से अत्यधिक बांस के प्रयोग से पहले मचान का निर्माण किया जाता है। तथा सहायक निर्देशकों को इस मचान से परे इमारत की वास्तविक नीव तथा आकार जो नहीं देखने दिया जाता है। मचान को हटाने के बाद यह अपेक्षा रखी जाती है कि वास्तविक ढंचा बना रहेगा।

शुद्धीकरण के द्वारा प्रथम आघात व्यक्तियों पर किया गया। दूसरा प्रहार उन संस्थाओं पर था जिन्हें अमेरिकी बुरा समझते थे। 4 अक्तूबर 1945 को संयुक्त कमान के कार्यालय ने निर्देश संख्या 93 प्रेषित किया जिसके द्वारा एक मौलिक अधिकारों का प्रपत्र स्थापित किया गया है। राजनीतिक कैदियों को मुक्त किया गया हैं राजनीतिक तथा धार्मिक स्वतंत्रत पर निमन्त्रणों की निषेध कर दिया गया है। नष्टप्रायः गृहमन्त्रालय की संपूर्ण शक्तियां छिन ली गई थी तथा जापान की पुलिस व्यवस्था में गंभीर परिवंतन किये गए थे।[32]

32. लुई जे० वेलनटाइन, न्यूयार्क के पुलिस विभाग के अध्यक्ष को जनरल मैकार्थर ने पुलिस के पुनर्गठन के लिए बुलाया। संयुक्त कमान ने मुख्यालय द्वारा दिये गये निर्देश 93 "रिमूवल आफ रिस्ट्रिक्शन्स आन पालिटिकल, सिविल एन्ड रिलीजियन लिबर्टीज अंग्रेजी में एस. सी, एस. पी पलिटिकल रिआरियनटेशन, अंक दो परिशिष्ट बी. 2 पृष्ठ 463-465 तथा जापानी में एन० के० एच० के० अंक प्रथम संख्या तीन (15 जून 1946) पृष्ठ 29-38। निर्देशों द्वारा समाप्त की गई कुछ विधियों के नमूने इस प्रकार थे, निम प्रिजरवेशन ला (चिआँन इजी हो) 1941; रिलीजियस बाडीज ला (शुक्यो दोताई हो, 1939।

आधिपत्य स्थापित करने के पहले चार महिनों में जनरल मैकार्थर ने कई बार जापानी सरकार को याद दिलाया कि सन्वैधानिक पुनरवलोकन अत्यधिक महत्वपूर्ण था। जापानियों ने इन सदेशों को अपने ही ढंग से स्वीकारा। दो मेई के अनुसार अक्तूबर 1945 में जापान के महामहिम सम्राट ने साम्राज्यिक संविधान के पुनरवलोकन का प्रस्ताव किया था। शाही घराने के परामर्शदाता राजकुमार कनोये (जिसने शीघ्र ही बाद में आत्महत्या कर ली क्योंकि उसने यह महसूस किया कि उसकी राजनीतिक भूमिका उसके सम्मान के अंतिम छोर पर पहुंच गई थी) ने सुधारों के व्यापक पक्ष पर विचार करना प्रारम्भ किया। कोनोये ने सर्वोच्च सेनापति से कई साक्षात्कार किये तथा अमेरिका के राजनीतिक प्रतिनिधि जर्ज अचेसन से भी संपर्क स्थापित किया। कुछ समय के लिये बेचारे कोनोये को यह भ्रम हो गया कि वह जापान के संविधान निर्माण की उस प्रसिद्ध भूमिका को पूरा करने वाला था जिसे साठ वर्ष पूर्व राजकुमार इतो ने भारी सफलता के साथ किया था।[33] अक्तूबर के मध्य में शिदेहरा मंत्रिमंडल ने डा0 मातुसुमोतो जोजी जो एक निगम का वकील था से संवैधानिक समस्याओं की जांच समिति की सहायता से संविधान का विस्तृत प्रारुप बनाने की मांग की। यद्यपि तथाकथित मातसुमातो समिति गुप्त रुप से कार्य कर रही थी तो भी संवैधानिक सुधारों का समाचार पत्रों ने पर्याप्त प्रचार किया तथा निजी समूहों ने भी अपने विचार सार्वजनिक रुप से प्रकट किये।

इस समिति, जापानी जनता तथा संयुक्त सर्वोच्च कमान के सम्मुख तीव्र मुख्य समस्याएं थी—

1. कोकुताई के अन्तर्गत हैनो की व्यवस्था
2. कानूनी निरतंरता को बनाये रखने का प्रयास
3. पुनरवलोकन करने वाला यंत्र[34]

33. इस प्रक्रिया में कोन्यो की भूमिका के बारे में विवाद जापान के मित्र राज्यों के एक संवाददाता जिसका नाम रसेल ब्राइन्स था को उसके द्वारा दी गई साक्षात्कार भेंट के कारण उठा जिसने उसने ऐसा विचार अभिव्यक्त किया कि कोन्यो संविधान के संशोधन की सम्भावनाओं को देखने के स्थान पर स्वयं संशोधन करता था। कोनयो ने बाद में इस विचार को स्पष्ट किया तथा संयुक्त सर्वोच्च कमान के अधिकारियों ने बाद में यह स्पष्ट किया किया कि मात्र कोनयो को यह कार्य नही सौंपा गया था। देखिये निप्पोन टाइम्स 25 अक्टूबर, 26 अक्टूबर, 3 नवम्बर तथा चार नवम्बर, 1945। मैनिची शिबुन, 22 दिसम्बर 1945 को कोन्यो की मृत्यु के एक सप्ताह बाद) कोन्यो प्रारुप प्रकाशित किया गया, जिसका उद्देश्य यह दिखाना था कि कोन्यो का सम्बन्ध मात्र मूल रुपरेखा से था। तथापि यह धारणा बनी रही कि संविधान कोन्यो के द्वारा लिखा गया था जिसे बाद में संयुक्त कमान ने संशोधित किया था। देखिये नोयल बुश फालन एन. ए. रिपोर्ट आन जापान, न्यूयार्क।

34. दि निप्पोन टाइम्स, 16 अक्टूबर, 1945 ने डा० मिनोबे तात्सुकिची के साथ साक्षात्कार को प्रकाशित किया जिसे पर्याप्त स्पष्ट विचारों का प्रतिनिधि माना जा सकता हैं। यह कहने के बाद कि उसके विचार से मेयजी संविधान की उचित व्याख्या करने पर उसके किसी प्रकार के संशोधन की आवश्यकता नहीं थी। सम्राट के बारे में निम्नलिखित वार्ता हुई—

प्रश्न— आपकी संविधान के अनुच्छेद तीन जिसके अनुसार सम्राट पवित्र तथा अनुल्लंघनीय है के बारे में क्या राय है ?

उत्तर— मेरे विचार से उन पदों का प्रयोग करने में कोई परेशानी नही होनी चाहिये क्योंकि स्वयं विदेशी संविधानों में भी वे विद्यमान हैं व्यक्तिगत रूप से मेरे विचार से इसका

महत्वपूर्ण मामलों पर सहमति भी विद्यमान थी। मात्र जापानी साम्यवादी सम्राट पद को समाप्त करने के पक्ष में थे किंतु वे स्वयं इस समय प्रजातंत्रीय गणराज्य की स्थापना के लिये अत्यधिक मुखर नहीं थे। डा0 तकानों के नेतृत्व में एक अल्पमत समूह ने एक

निर्वाचित राष्ट्रपति प्रणाली की गणराज्य सरकार का प्रस्ताव किया, किंतु इसे समाजवादी प्रजातंत्रीय दल से वह समर्थन नहीं मिला जिसकी इसे अपेक्षा थी तथा इसके बाद यह चर्चा सुनाई नहीं पड़ी। अन्य सभी जापानी समूहों ने किसी न किसी रूप में सम्राट पद को बनाये रखने का समर्थन किया था तथा संवैधानिक संसदीय ढांचे में महत्वपूर्ण संशोधन का प्रस्ताव किया था। दो मुख्य दलों ने एक कार्यकारी उच्च सदन की मांग की थी और अन्य समूहों ने स्वतंत्र न्यायालय की मांग की थी। कुछ ने विशिष्ट नागरिक तथा आर्थिक अधिकारों के विस्तृत ब्यौरे की मांग की। साम्राज्यिक वकीलों के संगठन ने एक प्रारूप तैयार किया जिसने सम्राट तथा लोगों की संयुक्त सरकार पर जोर दिया। किसी भी निजी समूह ने अभिग्रहण तथा खोजबीन के विरुद्ध प्रतिभूतियों की मांग नहीं की थी, किसी ने स्त्री मताधिकार पर जोर नहीं दिया तथा किसी ने भी जापानी प्रजातंत्र तथा स्थानीय स्तर पर स्थानीय स्वायत्तता के तर्क संगत संबंध पर बल नहीं दिया था।

फिर भी ये स्वतंत्र योजनाएं तथा कथित मातसुमातो प्रारूप से कहीं अधिक प्रगतिवादी थी। यद्यपि सरकारी समिति की कार्यवाही को कभी भी प्रकाशित नहीं किया गया था तथापि यह स्पष्ट है कि स्वयं डा० मातसुमोतो ने समिति की कार्यवाही का दिशा निर्देश किया था। वह एक अनुदारवादी था जो सम्राट की संस्था में श्रद्धा रखता था तथा जापान के विशिष्ट राष्ट्रीय संविधानो (को कुताई) को बनाये रखना चाहता था। वस्तुतः मातसुमातो जापानी राज्य में परिवर्तन नहीं करना चाहता था अतः उसने इस विषय को संविधान के पुर्ननिर्माण से उलझा कर शब्द जाल की रचना में सपूर्ण विषय को आक्रत कर दिया। मातसुमातो ने संयुक्त सर्वोच्च कमान के सम्मुख। फरवरी, 1946 को एक स्मरण पत्र प्रस्तुत किया तथा जब तक उसे सयुक्त सर्वोच्च कप्तान के अधिकारियों से बात करने का अवसर प्रदान किया गया तब तक 13 फरवरी 1916 को जनरल मेकार्थर ने सरकार को मातसुमोतो के प्रारुप को अस्वीकार करने का आदेश देकर स्वयं सरकार द्वारा संविधान बनाने का निर्देश दे दिया था।[65]

सम्राट अनुल्लेखनीय है किन्तु सम्राट द्वारा प्रेषित अध्यादेशों व आदेशों की आलोचना की जा सकती है।

प्रश्न— क्या आप समझते हैं कि सम्राट की स्थिति ऐसी ही बनी रहनी चाहिए ?

उत्तर— हां इस सन्दर्भ में भी यदि संविधान को ठीक ढंग से क्रियान्वित किया जाये तो मेरा विश्वास है कि ब्रिटेन के सम्राट के समान सम्राट के अन्तर्गत राजनीति का प्रजातन्त्रीयकरण सम्भव है।

35. नवम्बर. 1945 के प्रारम्भ में मातसुमोतो को उद्धृत करते हुए यामाही शिम्बुन ने लिखा कि उसकी नीति फिलहाल तैनो व्यवस्था का उन्मूलन करने की नहीं थी। मातसुमोतो-प्रारूप को सरकारी तौर पर कभी भी प्रेषित नहीं किया गया। यद्यपि 1 फरवरी 1946 के मैनिची शिम्बुन में समिति की एक योजना प्रकाशित की गई (तथापि मन्त्रीमण्डल के मुख्य सचिव ने शीघ्र ही इस योजना को अस्वीकारा) कार्यकारी योजना का मूल रुप तथा मातसुमोतो-प्रारूप की मूल भावना तथा स्पष्टीकरण जो संयुक्त सर्वोच्च

मार्च 1946 के प्रारम्भ में जापानी जनता को सम्मुख मंत्रीमंडलीय प्रारुप प्रस्तुत किया गया। इसके साथ सर्वोच्च सेनापति का प्रलेख साम्राज्यिक उद्घोषणा तथा प्रधानमंत्री की घोषणा भी प्रेषित कीगई। जापानी मूल रचना को अंग्रेजी में तथा अंग्रेजी को जापानी में अनूदित करने तथा फिर दोनों भाषाओं के प्रारुपों की तुलना करने में समय लगा। जापानी समाचार पत्रों के अनुसार जापानी जनता को आश्चर्य हुआ था किंतु वे रुष्ट नहीं थे तथा उनकी प्रतिक्रिया पर्याप्त प्रोत्साहित करने वाली थी। 8 मार्च 1946 के समाचार पत्र गिनी शिम्बो ने सतर्कता पूर्वक टिप्पणी करते हुए लिखा की यह संयुक्त सर्वोच्च कमान के अधिकारीयों के साथ गंभीर परामर्श का परिणाम था। आसाही शिम्बून ने स्पष्टतया यह टिप्पणी की कि स्वयं शिदेहरा मंत्रीमंडल इतना अच्छा प्रारुप प्रस्तुत नहीं कर सकता था

मंत्रीमंडलीय प्रारुप की पांच मूल विशेषताएँ थीं जिनमें से किसी को भी बाद के परिवर्तनों में संशोधित नहीं किया गया। जापान की सरकार में मूलभूत परिवर्तन निम्नलिखित थे: प्रथम, सम्राट की शक्तियों की पुनर्परिभाषा, द्वितीय मूल राजनीतिक शक्तियों का डाइट तथा मंत्रीमंडल को हस्तातंरण तथा हाउस आफ पियर्स के स्थान पर हाउस आँफ काउसिलर्स की स्थापना, तृतीयतः मूल अधिकारों की घोषणा, चौथा प्राचीन काल से चली आ रही न्याय व्यवस्था में परिवर्तन तथा अंततः युद्ध का पूर्ण निषेध।
इस संविधान द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रशासनिक परिवर्तन की चर्चा अगले अध्याय में की गई हैं। संविधानकी मूल विषयवस्तु को अपेंडिक्स 17 में दिये गये आंग्ल भाषा के प्रारुप से समझा जा सकता हैं।[38]

इस संविधान की अन्य उल्लेखनीय विशेषता यह थी कि इसे मूल आंग्लभाषा के प्रारुप से जापानी सरकार विभाग द्वारा लिखा गया था तथा यह मेयजी संविधान के संदर्भ में कुछ सीमा तक हट कर था।

तकनीकि दृष्टि से नवीन संविधान क्रांतकारी प्रलेख था, क्योंकि मेयजी संविधान सम्राट द्वारा अपनी दैवीय सत्ता के माध्यम से प्रेषित किया गया था, जबकि नवीन संविधान पूर्ण गैर जापानी शैली में जापानी जनता के नाम से प्रेषित किया गया था, "निहोन कोकुमीन वा" (हम, जापानी लोग) दूसरे शब्दों में पूर्व संविधान एक स्वीकृत राजा द्वारा प्रेषित किया गया था जबकि नवीन संविधान विदेशी आधिपत्य के अन्तर्गत

38. सरकार के प्रकाशित सर्वोच्च संयुक्त कमान के प्रलेख सरकारी प्रभाग के प्रारुप सम्मिलित नहीं करते हैं तथापि इसमें चार सरकारी मसौदे हैं, पूर्वोक्त अंक दो, सी. नो अ, सीः नो बी, सीः नो सी, सीः नो डी, पृष्ठ 625–649। इस पुस्तक के 17वे परिशिष्ठ में अंग्रेजी प्रारुप विदेश विभाग के प्रकाशन दि कॉंस्टीट्यूशन आफ जापान (प्रकाशन 2836, सुदूरपूर्व प्रकाशन 22) वाशिंगटन 1947 से लिया गया है। इस भाग के लेखक को इसके जापानी भाग की फोटो कापी दिखलाई गई, आरिवन नालिया विभाग, कांग्रेस का पुस्तकालय इस में अधिकांश विश्लेपण तथा जापानी शब्दावली यानागिजावा योमिशी, निहोन कोकू कैंपो चिकुओ कोगी (जापानी संविधान का एक विश्लेपण) टोक्यो, 1947 से लिया गया है।

अनिच्छुक प्रजातंत्रीय लोगों के द्वारा प्रेषित किया गया। भविष्य में जापान के लोग किस प्रकार इसका प्रयोग करेंगे यह अभी भी निर्धारित होना हैं।[39]

संविधान में मौलिक अधिकारों का अध्याय (कोकुमिन नो केनरी ओमोवी जिमू) अर्थात् "जनता के अधिकार एवं कर्तव्य" में 31 अनुच्छेद थे तथा यह संविधान का विशालतम यह अध्याय था। संविधान के किसी भी अंश की तुलना में यह अध्याय अमेरिका द्वारा जापान के प्रजातन्त्रीकरण का सर्वाधिक प्रतीक है तथा यह अमेरिका के आदर्शों को सर्वाधिक मात्रा में स्पष्ट रूप से परिलक्षित करता है। वस्तुत: जापानी लोगों के अनिवार्य अधिकार अमेरिका के संविधान के प्रथम दस संशोधनों से कहीं अधिक व्यापक हैं। मेयजी संविधान के पूर्णत: विपरीत जिसमें भी मौलिक अधिकारों का वर्णन किया गया था विधि द्वारा किसी प्रकार की योग्यताओं अथवा सुरक्षाओं का निर्धारण नहीं किया गया है। प्रदत्त अधिकार जीवन, स्वतन्त्रता तथा आनन्द प्राप्ति के हैं। कानूनी समानता प्रदान की गई है। सामंती प्रथा को समाप्त किया गया। इसका आधार शायद यह मान्यता थी कि दीर्घ काल से चली आ रही कुछ विशिष्ट समाजिक सद्भावों की समाप्ति जार्ज आरवेल के प्रसिद्ध कथन के अर्थों में कुछ लोगों को अन्य से अधिक समान बना देती है।

सरकारी विभाग ने कुछ अतिरिक्त अधिकारों पर भी विचार किया। विचार की आंतरिक सभा आयोजित करने, भाषण देने अध्यापन कार्य करने, निवासस्थान का चयन, व्यवसाय का चयन, संगठन द्वारा सामूहिक प्रयास तथा संपत्ति का स्वामित्व में स्वतन्त्रताएं प्रदान की गई। काम करने का अधिकार प्रदान किया गया है, यद्यपि संविधान उसके लिए एक आर्थिक व्यवस्था अथवा संवैधानिक आधार तथा जापानी उत्पादन के लिए कोई अंतर्राष्ट्रीय बाजार की व्यवस्था नहीं करता है तथा इसके अभाव में यह अधिकार कल्पना मात्र रह जाता है। पति पत्नी को समान अधिकार दिये गए हैं, हालांकि संविधान जैविकी कारणों की वजह से जापानी पिताओं को मातृत्व अधिकार देने में असमर्थ रहा। बिना किसी कारण बंदी बना कर रखने के बाद मुक्त होने पर जापानी नागरिक अपनी ही सरकार पर मुकदमा चला सकते थे।

1946 के नवीन विश्व में ये अधिकार फिर भी कुछ अर्थ रखते थे। किंतु दस वर्ष में वे अगर दयनीय नहीं तो अविश्वसनीय अवश्य हो गये थे। अमेरिका व रूस के मध्य रण क्षेत्र न बनने का अधिकार, फिर कभी बम विस्फोटक का शिकार न बनने का अधिकार, एक गौरवपूर्ण व सम्माननीय राज्य के नागरिक बनने का अधिकार तथा एक विशिष्ट आर्थिक व्यवस्था को प्रभावपूर्ण ढंग से क्रियाशील करने का अधिकार इन सबका उल्लेख नहीं किया गया था। दूसरे शब्दों में अमेरीकियों ने अपनी इच्छा

39 असाही शिम्बून 24 अप्रैल, 1946 की शिकायत थी कि प्रस्तावना जापानी राजनीति की मूल भावना को स्पष्ट नहीं करती थी। एक जापानी प्रोफेसर ने इसकी उत्पत्ति राजनीतिक सिद्धान्त में बताई कियोमिया एस, "निहोन कोकू केपो तो रोवकू नी सेयजी शिशों .दि जापानीज कांस्ट्रीट्यूशन एण्ड दि पालिटिकल थॉट ऑफ लॉक) कोवका गाक्की जासी, पूर्वोक्त 52 वां अंक, संख्या (सितम्बर-1948) पृष्ठ 1–15

अनिच्छुक प्रजातंत्रीय लोगों के द्वारा प्रेषित किया गया। भविष्य में जापान के लोग किस प्रकार इसका प्रयोग करेगें यह अभी भी निर्धारित होना है।[39]

संविधान में मौलिक अधिकारों का अध्याय (कोकुमिन नो केनरी ओमोवी जिमू) अर्थात् "जनता के अधिकार एवं कर्तव्य" में 31 अनुच्छेद थे तथा यह संविधान का विशालतम यह अध्याय था। संविधान के किसी भी अंश की तुलना में यह अध्याय अमेरिका द्वारा जापान के प्रजातन्त्रीकरण का सर्वाधिक प्रतीक है तथा यह अमेरिका के आदर्शो को सर्वाधिक मात्रा में स्पष्ट रूप से परिलक्षित करता है। वस्तुत: जापानी लोगों के अनिवार्य अधिकार अमेरिका के संविधान के प्रथम दस संशोधनों से कहीं अधिक व्यापक हैं। मेयजी संविधान के पूर्णतः विपरीत जिसमें भी मौलिक अधिकारों का वर्णन किया गया था विधि द्वारा किसी प्रकार की योग्यताओं अथवा सुरक्षाओं का निर्धारण नहीं किया गया है। प्रदत्त अधिकार जीवन, स्वतन्त्रता तथा आनन्द प्राप्ति के हैं। कानूनी समानता प्रदान की गई है। सांमती प्रथा को समाप्त किया गया। इसका आधार शायद यह मान्यता थी कि दीर्घ काल से चली आ रही कुछ विशिष्ट समाजिक सद्भावों की समाप्ति जार्ज आरवेल के प्रसिद्ध कथन के अर्थो में कुछ लोगों को अन्य से अधिक समान बना देती है।

सरकारी विभाग ने कुछ अतिरिक्त अधिकारों पर भी विचार किया। विचार की आंतरिक सभा आयोजित करने, भाषण देने अध्यापन कार्य करने, निवासस्थान का चयन, व्यवसाय का चयन, संगठन द्वारा सामूहिक प्रयास तथा संपत्ति का स्वामित्व में स्वतन्त्रताएं प्रदान की गई। काम करने का अधिकार प्रदान किया गया है, यद्यपि संविधान उसके लिए एक आर्थिक व्यवस्था अथवा संवैधानिक आधार तथा जापानी उत्पादन के लिए कोई अंतर्राष्ट्रीय बाजार की व्यवस्था नहीं करता है तथा इसके अभाव में यह अधिकार कल्पना मात्र रह जाता है। पति पत्नी को समान अधिकार दिये गए हैं, हालांकि संविधान जैविकी कारणों की वजह से जापानी पिताओं को मातृत्व अधिकार देने में असमर्थ रहा। विना किसी कारण बंदी बना कर रखने के बाद मुक्त होने पर जापानी नागरिक अपनी ही सरकार पर मुकदमा चला सकते थे।

1946 के नवीन विश्व में ये अधिकार फिर भी कुछ अर्थ रखते थे। किंतु दस वर्ष में वे अगर दयनीय नहीं तो अविश्वसनीय अवश्य हो गये थे। अमेरिका व रूस के मध्य रण क्षेत्र न बनने का अधिकार, फिर कभी बम विस्फोटक का शिकार न बनने का अधिकार, एक गौरवपूर्ण व सम्माननीय राज्य के नागरिक बनने का अधिकार तथा एक विशिष्ट आर्थिक व्यवस्था को प्रभावपूर्ण ढंग से क्रियाशील करने का अधिकार इन सबका उल्लेख नहीं किया गया था। दूसरे शब्दों में अमेरीकियों ने अपनी इच्छा

39 असाही शिम्बून 24 अप्रेल, 1946 की शिकायत थी कि प्रस्तावना जापानी राजनीति की मूल भावना को स्पष्ट नहीं करती थी। एक जापानी प्रोफेसर ने इसकी उत्पति राजनीतिक सिद्धान्त में बताई कियोमिया एस, "निहोन कोकू केपो तो रोकक नी सेयजी शिशो ,दि जापानीज कास्टीटयूशन एण्ड दि पालिटिकल थॉट ऑफ लॉक) कोक्का गाक्की जासी, पूर्वोक्त 52 वां अंक, संख्या (सितम्बर-1948) पृष्ठ 1–15

के अनुसार अधिकारों की एक सूची जापानियों को थमा दी तथा अपने सामाजिक सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि के कारण वे उन समस्याओं के प्रति सचेत नहीं हो सकते थे, जिनका सामना जापान को आगामी वर्षों में करना पड़ा। हैरोल्ड लासवैल जैसा अमरिकी, शायद स्वतन्त्रता के सामाजिक मनोवैज्ञानिक तथा मनोविकार संबंधी पहलु को एक पराजित अशक्त तथा अपमानित राज्य के देशभक्त नागरिकों के संदर्भ में उनके अपने ही अधिकारियों के विरुद्ध दिये गये अधिकारों से अधिक महत्त्वपूर्ण मानता किन्तु जिन अमेरीकियों ने जापान का संविधान बनाया था तथा जिन्होंने जापानी विचार का पथ निर्देशन किया था, वे राजनीति-वैज्ञानिक तथा समाजशास्त्री न होकर कानूनी विशेषज्ञ थे।

जापानी अधिकारों की सूची को पर्याप्त विस्तृत बनाने के कुछ लाभ भी थे। जापानियों को कम से कम सरकार का एक विशिष्ट मॉडल दिया गया। उस सरकार ने चाहे कार्य किया हो या न किया हो, तथापि यह संविधान संवैधानिक माध्यम से राजनीतिक अधिकार प्रदान करने वाला तथा परम्परागत प्रजातन्त्र के विरुद्ध प्रस्तुत 1970 की बोल्वेविक क्रांति, 1922 की फासिस्ट क्रांति तथा 1933 की राष्ट्रवादी जनवादी क्रांति द्वारा प्रस्तुत चुनौतियों की उपेक्षा करने वाले विश्व के प्रमुख मॉडल के रूप में बना रहेगा। फ्रांस के अनातोले के समान यह कहा जा सकता है कि इस संविधान ने गरीब अमीर दोनों को पुलिया के नीचे सोने का समान अधिकार दिया। किंतु कोई भी जापानियों की इस बात के लिए निंदा नहीं कर सकता कि जापानियों ने अमरीकीयों द्वारा प्रस्तुत सर्वोत्तम व्यवस्थाओं को स्वीकारने से इंकार कर दिया।

नवीन संविधान जापनी सरकार में सर्वोच्च न्यायालय को एक नवीन शक्ति, संवैधानिकता का पुनरावलोकन के नाम से देता है। इस अप्रचलित कथन को संविधान निर्माताओं को जटिल शब्दावली में रखना पड़ा। न्यायालय को यह (अनुच्छेद 81) पता लगाने का अधिकार है कि कोई विधि आदेश निर्देश अथवा सरकारी कार्य संविधान के अनुकूल हैं या नहीं।[40]

केईसेई अध्याय नौ पृष्ठ का संशोधन जापानियों के दृष्टिकोण से संविधान की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता सिद्ध हो सकती है। यहाँ पर यद्यपि अमेरिकी संविधान को परिवर्तित करने से कम कठिनाई निहित थी। जापान के संविधान में परिवर्तन दोनों सदनों की कुल सदस्यता के दो तिहाई वोट के पश्चात् जापानी जनता द्वारा विशिष्ट जनमत संग्रह के स्पष्ट बहुमत से अथवा इस प्रश्न पर डाइट द्वारा करवाये गये चुनाव द्वारा हो सकता था।

युद्ध का निषेध—(सेंस नो हाकी) युद्ध का निषेध द्वितीय अध्याय का विषय था। यह संविधान का सर्वाधिक आदर्शपूर्ण तथा व्यापक तौर पर चर्चित भाग है। इसके अनुसार—

40 केम्पो नी तेक नो मुरु का शिनाई का। इस शक्ति का प्रयोग दो वर्ष तक करने के पश्चात् न्यायालय ने संविधानिकता के अधार पर अपना निर्णय दिया। पावोअर कान्स्टीटुएट एण्ड पॉवर कांस्टीट्यूट की तुलनात्मक संशोधन प्रक्रियाओं के लिये देखिये गवेकू लो "सेविन नो केंपो नी ओवेल केइसेई वेल्तु जेकी नो मिनशाका (नये संविधानो में संशोधन प्रक्रिया प्रजातन्त्रीय करण), कोका, गाक्काई जोशी पूर्वोक्त अंक पचास संख्या 6 (जून 1946) पृष्ठ 1-23

अनुच्छेद नौ–न्याय तथा व्यवस्था पर आधारित अंतर्राष्ट्रीय शांति की अपेक्षा करते हुए जापानी लोग सदासर्वदा के लिए युद्ध को इस राष्ट्र द्वारा अपनी संयुक्त शक्ति के प्रयोग के रूप में अथवा अंतर्राष्ट्रीय विवाद को सुलझाने के संदर्भ में, परित्याग करते हैं।[41]

इस शपथ की सुरक्षा स्वरूप जापान ने जलथल व नभ सेना न रखने का प्रण किया इस शपथ को और अधिक निश्चित बनाने के लिए अनुच्छेद 66 (अध्याय पंच–मन्त्रिमण्डल) में यह व्यवस्था की गई कि राज्य के प्रधानमंत्री तथा अन्य मंत्री गैर सैनिक ही हो सकते हैं। वूमिन (अर्थात् नागरिक मामलों के व्यक्ति) व्यवस्था के बारे चुयो विश्वविद्यालय के प्रोफेसर यानामीजावा ने बड़े सतर्क ढंग से लिखा है—

यद्यपि यह व्यवस्था न तो मूल प्रारूप में थी तथा न ही इसे बाद में प्रतिनिधि सदन द्वारा स्वीकार किया गया था, किंतु बाद में इस उच्च सदन में सम्मिलित किया गया। यह विश्वास किया जाता है कि वूमिन पद का प्रयोग हमारे संवैधानिक कानून में कभी भी कानूनी पदावली के रूप में नहीं रहा। परिणामतः इसे परम्परागत प्रयोग की दृष्टि से समझने का तथा उसके आधार पर निर्णय करने का प्रयास न केवल कठिन होगा, अपितु भयानक भी होगा। वर्तमान सदर्भ में नागरिक का विलोम सैनिक है तथा इस गद्यांश में इसका अर्थ आंग्ल भाषा के सिविलियन से लेना चाहिए जिसका अर्थ उन लोगों को अलग करना होगा जो जीवन-काल में कभी भी सेना में रहे है।[42]

आधिपत्य के प्रारंभिक वर्षों में, हिरोशिमा कांड के तुरंत बाद सैनिक मामलों की निंदा अर्थपूर्ण लगती है। युद्ध की निन्दा करके जापानी नैतिक दृष्टि से श्रेष्ठ व विशिष्ट प्रमाणित हुए। किंतु जैसे-जैसे शांति संधि पर हस्ताक्षर का समय निकट आता गया तो सत्ता राजनीति की हवा सघन होने लगी। तब अमरिकी राजनीति में लिपटी जापानी सुरक्षा उतनी अर्थपूर्ण नहीं रही जितनी पहले लगती थी। अतः अध्याय दो अनुच्छेद नौ का पुनरावलोकन चर्चा का मुख्य विषय बन गया।

मार्च 1964 में जनरल मैकार्थर सरकारी प्रारूप में दिखाई गई कुशलता को पर्याप्त सफलता मानता था। वह उसे माननीय स्वभाव की सम्पूर्ण दुर्बलताओं से प्रभावित होने के बावजूद एक उदार चार्टर मानता था। उसका दावा था कि यह प्रारूप इस बात का प्रतिक था कि यह युद्ध समाप्त होने के बाद हम कितने आगे आ गये थे। वस्तुतः "हम" से संबंधित प्रगति मूलतः उस सरकार में निहित थी, जो जापानियो ने प्रजातन्त्रीय करण के इस पहलु में निहित था।

41 निहोन कोकुमिन वा सेइगी टू चितसूजो वो [किचो तो सुरू कोकुसाई हेवा को सोंजत्सु नी किल्या शी, कोक्केन नो हेतसुदोतान सेंसो तो वरयोकू नी योर्स इकाकु माता वा बुरयोकु नो कोशी वा, कोकुसाई फुओ काईकेत्सु सुरू शुदान टू सीने वा एवयु नी कौर वो होकी सुरा।

42 यानागिजावा वाई, निहोन कोकू कैंपो चिकुओ कोशी, पूर्वोक्त पृष्ठ 146, 147 संयुक्त कमान के प्रलेख स्पष्टतया बताता है कि यह आवश्यकता सुदूरपूर्व आयोग का परिणाम थी। विशेष रूपसे कामन वैल्थ के दबावों का, पॉलिटिकल रिआरियन ट्रेशन अंक प्रथम पृष्ट 111 अंक दो परिशिष्ट सी14, स्त्री 16, पृष्ठ 66। अध्याय दो पर प्रारम्भिक टिप्पणी के लिए देखिये मोकोतो वाइ सेंसो नो होनी (युद्ध का परित्याग) कोका गाक्की नाशी अंक पचास, सख्या 10 (अक्टूबर 1946) पृष्ठ 44-62

संविधान-सुधार सम्बन्धि उभय पक्षी स्थिति को ध्यान में रखते हुए वस्तुतः हमें यह जानकर दुःख नहीं होना चाहिए न कि कुछ जापानी अधिकारियों ने संविधान के मार्ग में बाधाएं उत्पन्न की। प्रधानमंत्री योशीदा, जिसका प्रथम मन्त्रिमण्डल 23 मई 1946 को बना था, वे मेयजी संविधान की प्रशंसा सभी युगों के लिए सर्वोत्तम संविधान के रूप में की थी। स्पष्ट था कि मित्र राज्यों संविधान की गलत व्याख्या की थी। योशिदा मन्त्री-मण्डल में निर्विभाग मन्त्री कानामोरी तोकुजिरो ने नवीन संविधान को पूर्ण लचीला संविधान कहा जो भविष्य में नई समस्याओं का सामना सहजता से कर सकता था। इस प्रश्न के उत्तर में कि नवीन संविधान में संप्रभुता का निवास कहां था ? उसका जवाब था कि संप्रभुता सम्पूर्ण जनता जिसमें सम्राट भी था, में निहित थी।[43]

प्रारूप पर राजनीतिक दलों तथा समाचारपत्रों द्वारा की गई चर्चा पर्याप्त मनोरंजक थी। बहस का प्रारम्भ निप्पोन टाइम्स व मार्च 1946 की इस टिप्पणियों से प्रारम्भ किया गया कि प्रारूप किसी ने भी क्यों न बनाया हो उस पर डाइट द्वारा चर्चा अनिवार्य थी जिसका अर्थ यह है कि संविधान-निर्माण-प्रक्रिया में आज व्यक्ति तथा उसके निर्वाचित प्रतिनिधि की भूमिका पूर्णतः समाप्त नहीं हो गई हैं। साम्यवादी दल को छोड़ कर सभी राजनीतिक दलों ने प्रारूप का स्वागत आनन्द मिश्रित आश्चर्य के साथ किया। सामान्यतया उन्होंने इसे तैनो को बनाये रखने तथा लोकप्रिय संप्रभुता के मध्य राष्ट्रीय परम्परा तथा प्रजातन्त्रीय सिद्धान्तों के मध्य व्यवहारिक समझौते के रूप में स्वीकार किया। समाचारपत्रों ने भी अधिकांशतया प्रारूप का समर्थन किया।

प्रारूप के विरुद्ध कुछ आरोपी भी थे। प्रारूप पर टिप्पणि करते हुए टोक्यो शिम्बुन ने (22 अप्रेल 1946 को लिखा अच्छी प्रतिष्ठा के बावजूद इस प्रारूप में कुछ त्रुटियां हैं, कुल 100 अनुच्छेदों में से अर्थव्यवस्था के बारे में मात्र तीन अनुच्छेद रखे गये हैं। काहोको शिपो ने (सेदाई 19 अप्रेल, 1946) कई कानूनी पदों के अनिश्चित प्रयोग के लिए आलोचना की। सम्राट की सता स्पष्ट व्याख्या न होने के कारण पर्याप्त व्यापक हो सकती थी। मैनिची शिम्बुन (21 अप्रेल 1946) ने जापानी प्रारूप में निजी संपति के अधिकार की अनुलंघनीयता से संबंधित व्यवस्था की तुलना अनेक ऐसे आधुनिक संविधानों से की जिनमें संपत्ति के स्वामित्व पर सार्वजनिक कल्याण के विरुद्ध प्रयोग करने पर नियन्त्रण लगाया जाता है। टोक्यो विश्वविद्यालय के कुछ प्राध्यापकों द्वारा अत्यधिक सरल व कम शब्दों वाला पूर्णतः एक नया प्रारूप बनाया गया। उनके प्रारूप में एक मनोरंजक सुझाव बुद्धि जीवी वर्ग के द्वारा निर्मित उच्च सदन के बारे में था जो निम्न सदन की उग्रता को कम करता है। 2 मई 1946 को एक नागरिकों की सभा में टोक्यो साम्राज्यिक विश्वविद्यालय के एक भूतपूर्व प्राध्यापक ने जापान की जनता की आलोचना करते हुए कहा कि वे संविधान के पुनरवलोकन की समस्या की उपेक्षा कर रहे हैं। उसने यह कहा कि "यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि संविधान में लोकप्रिय भावना को संगठित करने के बारे में केवल एक गोष्ठी ही अयोजित की गई है।"

मन्त्रीमण्डलीय प्रारूप के बारे में सर्वाधिक आलोचना इसकी शब्दावली के बारे में थी। इस प्रलेख में अत्यधिक नीतिशास्त्रीय गद्यांश थे, विशेष रूप से प्रस्तावना में यह

43 मैनिची शिम्बुन, 28 जून, 1946।

अत्यधिक उपदेशात्मक था। इसमें समकालीन समस्या जो युद्ध का एक पक्षिय निषेध थी, पर अत्यधिक जोर दिया गया था। इस आलेख की अधिकांश भाषा आम जापानी नागरिक की समझ से बाहर थी। यह बताना उचित होगा कि मन्त्रीमण्डल के व्यवस्थापिका ब्यूरो ने संविधान को सरकार को पुनः प्रस्तुत करने से पहले उसका पर्याप्त सीमा तक पुर्ननिर्माण किया।[44]

संविधान की सर्वाधिक तकनीकी तथा महत्वपूर्ण आलोचना संवैधानिक विधि-विशेषज्ञ डा० मिनोबे के द्वारा की गई। संपूर्ण दृष्टि से उसने संविधान का समर्थन इस आधार पर किया कि वह जापान के लिए प्रजातन्त्रीय राज्य की स्थापना का आधार प्रस्तुत करता था। किंतु उसका विचार था कि सम्राट की शक्तियों को आवश्यकता से अधिक कम कर दिया गया था तथा व्यवस्थापिका के अवांछनीय कार्यों पर रोक लगाने के लिए अमेरिकी स्तर पर नियंत्रण व संतुलन की व्यवस्था करने में संविधान असफल रहा था।[45]

अंततः जापानियों ने नवीन संवैधानिक कानून को स्वीकार कर लिया। 34 अगस्त को आशिदा हितोशी ने सरकार की ओर से विश्व को संबोधित करते हुए निम्न सदन के सम्मुख पुर्ननिर्मित प्रारूप रखा। मुख्य दलों के नेताओं ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया। कातयामा तेत्सु, जो बाद मे समाजवादी दल की ओर से जापान का प्रधानमंत्री बना ने इस आधार पर संविधान का समर्थन करने का निर्णय किया कि इसमें संप्रभुता जनता में निहित थी और इसमें इस सिद्धान्त को स्वीकारा गया था। अंतिम प्रारूप 8 के विरुद्ध 421 मतों से पारित कर दिया गया। उच्च सदन को विचार में एक माह से ज्यादा समय लगा तथा उसने इसे 2 के विरुद्ध 198 मतों से पारित कर दिया। इस संविधान को अन्तिम रूप से निम्न सदन द्वारा 7 अक्टूबर को 5 के विरुद्ध 432 मतों से पारित कर दिया गया। प्रीवी परिषद् में इस पर पर्याप्त विचारविमर्श के पश्चात् सम्राट की उपस्थिति में एक विशिष्ट सत्र में 29 अक्टूबर को पारित कर दिया गया। 3 नवम्बर को मेयजो सम्राट को की वर्ष गाँठ के अवसर पर सम्राट हिरोहितो ने डाइट में नवीन संविधान को क्रियान्वित करने की घोषणा की। महिला-प्रतिनिधियों को इस तथ्य से निराशा हुई कि साम्राज्ञी ने इस उत्सव में भाग नहीं लिया। किंतु बाद में प्रकट होकर उन्होंने अपनी अनुपस्थिति की शिकायत को दूर किया। महल तथा संयुक्त सर्वोच्च कमान के मुख्यालय

44 देखिये निप्पोन टाइम्स 21 मार्च, 1946 (सम्पादकीय तथा असाही शिबुन 18 अप्रैल 1946। पहले वाले समाचार पत्र ने 30 मार्च के अतिरिक्त अंक में इसकी आलोचना के साथ एक पाठशाला अध्यापक की टिप्पणी भी दी। छठी कक्षा में से मात्र दो छात्र इस प्रारूप को समझ सके। तथापि यह प्रश्न किया गया था कि अमेरिका के छठी कक्षा के छात्र अपना संविधान कितना समझ पाते हैं। शायद प्रजातन्त्र के लिए सपूर्ण जापानी भाषा को बदलना पड़े।

45 संशोधन के प्रश्न पर मिनोबे के विचार होरितसु शिंपो (कानूनी समाचार) टोक्यो, अप्रैल तथा मई, 1946 में प्रकाशित किये गए। अधिकरण के दौरान उनके द्वारा व्यक्त किये गए विचार अत्यधिक साहसिक किंतु अन्तिम थे। अपने स्वर्गीय अध्यक्ष के सम्मान में (18-73-1948) कोका गाकी जाशी, पूर्वोक्त अंक खण्ड संख्या 6 (जुलाई 1948) प्रशंसात्मक अंक में लिखने वाले सहयोगियों में प्रोफेसर मियावावा (विधि-शास्त्र को मिनोबे का योगदान) यासे (नवीन संविधान पर मिनोबे के विचार) तथा इकाई (मिनोबे तथा समकालीन विधि का अध्ययन) मे थे।

दाई इची भवन के मध्य के स्थान पर लाखों की संख्या में जापानियों ने एक होकर सम्राट और साम्राज्ञी एक संक्षिप्त सार्वजनिक उत्सव में भाग लेने का स्वागत किया।

उसके 6 महीने वाद जिस दिन संविधान प्रभावकारी वनाया गया, वर्षा के कारण संविधान-दिवस के उत्सव फीके पड़ गये। 3 मई, 1957 को उसी दिन जनरल मैकार्थर ने जापानी सरकार को अपने उदय हो रहे सूर्य वाले राष्ट्रीय ध्वज को राष्ट्र के सार्वजनिक भवनों पर फहराने की छूट दी।

नये संविधान ने जापान की विधि संहिता सम्पूर्ण पुनर्गठन को आवश्यक वना दिया। इसमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण परिवर्तन तो इसी तथ्य से हो गया कि अब संविधान देश की सर्वोच्च विधि था। सैकोहोकी (अध्याय दस। इसके अतिरिक्त भी जापान की विधि-व्यवस्या में सुधार की व्यापक संभावनाएँ थी। जापानियों को पूर्णत: स्वतन्त्र वनाने के लिए कानूनी व्यवस्या का पूर्ण नवीनीकरण अनिवार्य था। किंतु जैसा कि सर्वोच्च संयुक्त कमान के अधिकारियों ने वाद में वताया चूंकि समय वहुत कम था, अत: जानबूझ कर तथा अज्ञान में दोषों का रह जाना स्वभाविक था। विधिपुनरवलोकन की प्रक्रिया के समय जापानी विधि-विशेषज्ञों ने नई विधि सीखने के लिए सतर्कता दिखाई। कभी-कभी तो वे इतने उत्सुक प्रतित होते थे कि उन्हें आँग्ल सैक्सन विधि का अनुकरण करने से रोकना पड़ता था, क्योंकि वे जापानी स्थिति के प्रतिकूल थी। दूसरी ओर इस वात का श्रेय संयुक्त सर्वोच्च कमान को जाता है कि उसने जापानी विधि के पुनरवलोकन के लिए एक भी निर्देश प्रेषित नहीं किया।[46]

विधि पुनरवलोकन में प्रथम वरीयता अधिकरण को इन उद्देश्य को प्राप्त करने में दी गई, जैसे मौलिक अधिकारों की सुरक्षा, सार्वजनिक कल्याण के अतिरिक्त अन्य मामलों में राज्य के हस्तक्षेप से सुरक्षा, प्रशासनिक स्तर पर समानता प्राप्त करना था, तथा न्यायालय को सरकार की एक स्वतन्त्र शाखा के रूप में परिवर्तित करना था।

इस प्रकार राजनीतिक उद्देश्य तथा पुनरवलोकन की वरीयताओं में अवांछनीय विधायनी तकनीक, आर्थिक जटिलताओं तथा विचित्र अर्थिक सिद्धान्तों में परिवर्तन को निहित नहीं किया गया था। परिणामत: नागरिक संहिता के पृथक् तीन भाग पूर्णत: अपरिवर्तित रही वाणिज्य-संहिता में परिवर्तन नहीं किया गया तथा यहां जापानी व्यवहार पूर्वकालीन वना रहा। इसके विपरित कुछ अतिप्राचिन प्रथाओं में परिवर्तन किया गया। इस प्रकार भवन-व्यवस्या जो शताब्दियों से कन्फ्यूशियस वादी परम्परा पर आधारित थी।

46 इस कथन से इस तथ्य की उपेक्षा नहीं की जा सकती है कि संयुक्त सर्वोच्च कमान के निर्देश जापान के घरेलू कानून थे। मेयजी सरकार के अन्तर्गत संविधान कानून तथा विधि संहिता पर चर्चा के लिये इस पुस्तक का सोलहवां अध्याय देखिये। युद्धोपरांत पुनरवलोकन के कार्य का अनुमान इस से लगाया जा सकता है कि दस वर्ष पूर्व की संहिता को देखना पड़ा। युद्धकालीन अधिकांश संहिताओं तथा वाद में डाइट की सहमति से उन्हें समाप्त कर दिया गया था। देखिये निप्पोन टाइम्स, 23 सितम्बर, 1945। नवीन संविधान को स्वीकार करने के पहले अपने 92 वे अधिवेशन में डाइट ने ग्यारह मूल विधियों का निर्माण किया, जिसमें अस्थाई व्यवस्था भी निहित थी, जो नये कानून बनने तक प्रभावशाली रहे। कानूनी मामलो में संशोधन में संयुक्त सर्वोच्च कमान ने न्यायालय तथा विधि-विभाग के मध्य सम्मेलनों की (सरकारी प्रमाण) व्यवस्था की गई जिसमें सरकारी अधिकारी व कर्मचारी सम्मिलित हुए। निम्न सारांश पूर्णत: सरकारी प्रमाण की विस्तृत विवेचना पर आधारित है, पालिटिकल रिआरिमनटेशन, अंक प्रथम अनुभाग 6 "दि ज्यूडीशियल एण्ड लीगल सिस्टम तथा, अंक दो, संवन्धित अनुसूचियां।

अब औपचारिक तौर पर नवीन तथा विचित्र लिखित समझौतावादी व्यक्तिगत अधिकारों पर आधारित हो गई। इसी प्रकार परिवारों के पंजीयन की पुरानी व्यवस्था को सेकी जिसका दुरुपयोग बड़ी आसानी से सरकारी उद्देश्यों के लिए किया जा सकता था, का स्थान नवीन अवैयक्तिक सांख्यिकी पर आधारित जनगणना व्यवस्था ने ले लिया।

सर्वाधिक कठोर परिश्रम की आवश्यकता फौजदारी विधि-व्यवस्था को (चार सौ-अनुच्छेद परिवर्तित करने में किया गया। यहां पुलिस-राज्य की मनोवृत्ति सर्वाधिक विद्यमान थी। अतः सर्वोच्च संयुक्त कमान के विधि-विशेषज्ञों द्वारा अत्यधिक परिश्रम से ही इस संहिता में इस प्रकार परिवर्तन किया जा सकता था कि वह नवीन नागरिक सुविधाओं के अनुकूल बन सके। सर्वाधिक विवादास्पद तथा विचलित करने वाला परिवर्तन सम्राट् के विरुद्ध अपराधी को मिलने वाले सर्वोच्च दंड की व्यवस्था करने वाले संपूर्ण अध्याय का उन्मूलन था। सम्राट् के जीवन तथा सम्मान के अपराधी को यद्यपि अधिक तत्परता से दंड दिया जा सकता था, किंतु अब ऐसा मानव-हत्या अथवा अन्य किसी अपराध से सम्बन्धित सामान्य कानूनी प्रावधानों के अन्तर्गत किया जा सकता था।[17]

अन्य कानूनी सुधारों की क्षमता इस तथ्य पर निर्भर करती थी कि नवीन पीढ़ी के जापानी न्यायाधिश किस प्रकार नवीन सविधान की भावना से कानूनी व्याख्या करते हैं। उन्हें निस्सन्देह सहायता भी दी जाती थी। वर्षों के शक्तिशाली सामाजिक दवाव नवीन सुधारों को मात्र कागजी कार्यवाही के रूप में असफल बनाने के लिए सक्रिय हो सकते थे। यह विशेष रूप से 1 जुलाई 1946 को प्रेषित किये गये हैवियस कॉरपस एक्ट के लिए सत्य था। जैसा कि अमेरिकी अच्छी तरह जानते हैं, यह विधि क्रियान्वित करने वाले अधिकारियों के उचित निहित स्वार्थों की पूर्ति के लिए प्रयुक्त की जा सकती है वकिलों तथा विधि-विशेषज्ञ-सगठनों ने जापान के संवैधानिक सुधार में सक्रिय भूमिका अदा की। तथापि विधि प्रवक्ता इसका तीव्रता से विकास करने में असमर्थ रहते अथवा वे प्रशासन चक्र में फंस जाते तो तो उन पर नियन्त्रण करने के लिए नवम्बर 1947 में अमरिकी यूनीयन के महासचिव रोगर एवं बाल्डविन की यात्रा के बाद जापानी नागरिक स्वतन्त्रता-संगठन की स्थापना की गई।

अधिकरण का स्वरूप—जापान पर अधिकार 2 सितम्बर 1945 से प्रारम्भ हुआ तथा 28 अप्रेल 1952 को समाप्त हुआ, जब जापान की राजदूत वाशिंगटन में राजनयिक विदेश विभाग के कार्यालय में गया। यह इस बात का प्रतिक था कि एक बार फिर जापानी कूटनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त कर चुके थे तथा अब अवशिष्ट विश्व से सम्पर्क स्थापित करने के लिए उन्हें सर्वोच्च संयुक्त कमान के माध्यम की आवश्यकता नही थी।

47 प्रधानमन्त्री योशिदा ने जरल मैकार्थर को 7 दिसम्बर, 1946 को एक पत्र लिखा, जिसमें उसने सम्राट् से सम्बन्धित प्राविधानों को बनाये रखने का आग्रह किया। ब्रिटेन में भी सम्राट् के व्यक्तित्व की सुरक्षा की व्यवस्था की गई है। 25 फरवरी 1947 को अपने जवाब में मैकार्थर ने जवाब देते हुए लिखा एडवर्ड तृतीय के लिए जर्मन सामंत वाद का अवशेष गाव है" तथा इसका प्रयोग आधुनिक काल मे कभी भी नहीं किया गया। जनता के लिये राज्य के प्रतिक के रूप में सम्राट को वही सुरक्षा प्रदान की जाए जो आम नागरिक को प्राप्त है। सर्वोच्च कमांडर का यही निर्णय था। सर्वोच्च संयुक्त कमान पूर्वोक्त अंक दो परिशिष्ट सी 23 पृष्ठ 679 680।

यह सात वर्ष की जापानी आधिपत्य मात्र इसीलिए महत्वपूर्ण नहीं है कि इस दौरान जापान के अंदर क्या हुआ, बल्कि जापान से बाहर की घटनाएं भी इसके लिए महत्वपूर्ण थीं।

मूलतः जापान पर आधिपत्य का प्रारम्भ जापान को संयुक्त राष्ट्रसंघ के रहने योग्य बना सकने के प्रयासों के साथ हुआ। किंतु प्रस्तावित योजना क्रियान्वित नहीं हो सकी। शक्ति-राजनीति का संघर्ष जो प्रजातंत्रीय देशों, धुरी राज्यों तथा साम्यवादी देशों के मध्य त्रिकोणिय था तथा जिसके परिणाम स्वरूप अंततः द्वितीय महायुद्ध हुआ था। युद्ध के बाद पूर्णतः द्विपक्षिय संघर्ष में परिवर्तित हो गया जिसमें साम्यवादी दोनों प्रजातन्त्रीय देशों पर आक्रमण करके पर्याप्त सफलता प्राप्त की परिणामतः मित्र राज्यों को साम्यवाद विरोधी राजनीतिक तथा सुरक्षा-व्यवस्था की रचना करने के लिए वाध्य होना पड़ा। दूसरे शब्दों में 1945 में जापान की रचना करने के लिए की गई थी, जिसमें प्रजातन्त्र तथा साम्यवाद दोनों साथ-साथ रहते। 1949 में चीन का पतन हो गया। 1950 में कोरिया में युद्ध भड़क उठा तथा सैनफ्रांसिस्को-सम्मेलन का एक विश्व, पोलिट ब्यूरो तथा ट्रूमैन सिद्धान्त के दो विश्वों में विभाजित हो गया।

अमेरिकियों व जापानीयों में अनेकों समानताओं में से एक समानता यह भी है कि दोनों कानूनी व्यवस्था के लिए अत्यधिक सम्मान रखते हैं तथा कानून की शक्ति चाहे उसका समर्थन राजनीतिक व्यवहार, सामाजिक कार्यकलाप तथा सामान्य रीति रिवाज नहीं करते हो तब भी उनका उसमें अत्यधिक विश्वास रहता है। एक बार जब अमेरिकी तथा जापानवासियों ने जापान को प्रजातन्त्र के लिए प्रशिक्षित करने का उत्तरदायित्व ले लिया तो न तो जापानी और न हीं अमेरिकी, आदर्श विधि-व्यवस्था को छोड़ कर मात्र इस औपचारिक विधि व्यवस्था को अपनाने के लिए तैयार थे, जो जापान को साम्यवादी विरोधी देशों का नमनीय, सुदृढ़ तथा संघर्ष रत सहयोगी बना लेता। ऐसा करने का अर्थ वाशिंगटन तथा मास्को के मध्य प्रत्यक्ष संघर्ष था। टोक्यों निश्चय ही अनावश्यक संघर्षो में नहीं फंसना चाहता था तथा न तो स्वयं जनरल मैकार्थर तथा न हीं अन्य अमेरिकी; जापान के राजनीतिक परिवर्तन को आकस्मिक ढंग से अपमान पूर्ण या प्रतिक्रियावादी तरीके से बदलना चाहते थे।

इस प्रकार समग्र दृष्टि से अपने राजनीतिक इतिहास के संदर्भ में आधिपत्य आश्चर्यजनक सफलता सिद्ध हुआ था। अवशिष्ट विश्व में सभी जगह महत्वाकांक्षाओं का पतन, महान् आशाओं की समाप्ति तथा अपेक्षित स्वतन्त्रताओं पर नियन्त्रण लगा था। जापान में विशाल अमेरिकी सहायता से बिना किसी विवाद के आर्थिक पुनर्निर्माण तीव्र गति से प्रारम्भ हुआ। अपने मूल चिन्तन में अमेरिकी तथा जापानी उतने ही भिन्न थे जितने जेसुएट्स तथा योगी होते हैं, तो भी सद्भाव तथा सुदृढ़ निष्ठा से दोनों ने आश्चर्यजनक सहयोग स्थापित किया। आधिपत्य के दौरान अमेरिकी तथा जापानियों ने वित्तीय तथा सैनिक प्रावधानों की व्यवस्था अत्यधिक शांतिपूर्ण ढंग से परस्पर संतोषप्रद रूप में की।

इस सम्पूर्ण प्रक्रिया के लिए कुछ श्रेय सेना के मुख्य सेनापति मैकार्थर के उल्लेखनिय व्यक्तित्व को जाता है। आधिपत्य के सैनिक पहलू की दृष्टि से यह कहा जा

सकता है कि इतिहास में अमेरिका को जब केवल एक बार योग्य वायसराय को नियति करने का अवसर मिला तो वह स्वभाव तथा अनुभव के आधार पर एक महान् वायसराय नियुक्त करने में सफल हुआ। इसका अधिकांश श्रेय जापानियों को जाता है, जिन्होंने अभूतपूर्व पराजय के सम्मुख भी अपनी परम्परागत सहनशीलता तथा नमनीयता को बनाये रखा। जहां तक आधिपत्य के दूरगामी आर्थिक तथा राजनीतिक परिणामों का प्रश्न है, जिन लोगों ने इस पुस्तक के पिछले अध्यायों को पढ़ा है, वह उस तरीके की पूर्व घोषणा करने का साहस नहीं करेंगे जिससे जापानी तथा कथित प्रजातन्त्रीकरण के प्रभावों को अपना कर उसे पुर्ननिर्मित करने का प्रयास करते रहे। शांति संधि के तुरन्त बाद जो कुछ प्रवृतियां प्रकट हुई हैं, उनकी चर्चा संक्षेप में हम यहां करेंगे। यहां इतना कहना पर्याप्त होगा कि सौभाग्यवश अथवा दुर्भाग्यवश मेयजी रूपान्तरण के समान ही विदेशी आधिपत्य ने भी जापानी समाज की जड़ों को बहुत कम प्रभावित किया। इस प्रकार संयुक्त सर्वोच्च कमान की अधिकारियों की सबसे बड़ी त्रुटि जिसे शायद क्षमा किया जा सकता है, यह थी कि उन्होंने अपने द्वारा प्रेरित क्रांति के अत्यधिक तीव्रगामी परिणामों का दावा किया। शायद कोई भी सैनिक अधिग्रहण इन अर्थों में सफल नही हुआ है। अतः जापान अपनी शताब्दियों के अनुभव के कारण ऐसा देश था जिस पर आधिपत्य तो आसानी से किया जा सकता था, किंतु उसमें सुधार अत्यधिक कठिन था।

आधिपत्य का अंतर्राष्ट्रिय पहलू धीरे-धीरे समाप्त हो गया। शीत युद्ध की बढ़ती हुई कटुता तथा सुरक्षा-संबंधि गंभीर समस्याओं ने अवशिष्ट उत्तर पूर्वी एशिया की सुरक्षा के प्रयासों के लिए मित्रराज्यों की आलोचना को कम कर दिया। रूसी यद्यपि अमेरिका के विरुद्ध अपशब्दों का प्रयोग करते रहे थे किंतु जापान में अमेरिकी नीति की आलोचना के समर्थन में उनके पास आर्थिक अथवा सैनिक तर्क नही थे।

पर्याप्त सीमा तक यह कहा जा सकता है कि अमेरिका को सरल मानवीय तथा सहज समस्याओं को समझने की आश्चर्यजनक क्षमता का प्रदर्शन किया। जापानी दृष्टि से इस आधिपत्य ने यह स्पष्ट कर दिया कि उच्चस्तरीय जापानी विशेषज्ञ कम शिक्षित व अनुभवी तथा अपने से कम ज्ञान वाले अमेरिकीयों के साथ बिना उनके सम्मान को ठेस पहुँचाए तथा बिना सनकी अथवा कटु बने व्यवहार कर सकते हैं। आधिपत्य के प्राथमिक वर्षों के पश्चात् अधिकांश विलक्षण बुद्धि वाले वे अमेरिकी वापिस लौट आये जिन्हें स्वदेश जाकर उच्च प्रशासनिक सेवाओं को ग्रहण करना था। किंतु जो अमेरिकी जापान बचे रहे थे, वे भी प्रथम श्रेणी के वे अमेरिकी थे जो अपनी राष्ट्रसेवा की भावना के कारण अधिक अच्छी सेवाओं का आकर्षण त्याग कर अपने सेना के कर्तव्य अथवा जापानियों के प्रति अपने कर्त्तव्य के कारण जापान में बने थे। पर्याप्त मात्रा में ऐसे अमेरिकी भी थे। जो योग्य तो थे, किंतु उल्लेखनीय नहीं थे तथा इन लोगों ने यह अनुभव किया कि साधारण अनुभव तथा योग्यता के पश्चात् वे जापान में एक महान् भूमिका अदा कर सकते थे जबकि वापिस अमेरिका लौटने का अर्थ गम्भीर पदावनति होती। यह पर्याप्त विचित्र तथ्य है कि काफी कम अनुभवी अमेरिकीयों ने भी जापान में पर्याप्त अच्छा कार्य किया तथा आधिपत्य की सम्पूर्ण प्रक्रिया जापानी व अमेरिकी लोगों

के मध्य विना एक भी रक्तपूर्ण संघर्ष के तथा किसी पक्ष की ओर से वर्बरता पूर्ण दमन अथवा छल कपट के समाप्त हो गयी। इस प्रकार एक अपरिचित संदर्भ में किसी दुर्भाग्यपूर्ण घटना के अभाव के लिए इस आधिपत्य को उतना ही उल्लेखनीय माना जा सकता है, जितना इसके द्वारा प्राप्त व्यावहारिक सफलताओं के लिए विशाल सेना तथा जलसेना वाला कोई भी देश दूसरे देश पर आधिपत्य करने की स्थिति में हो सकता है, किंतु वहुत कम देश आधिपत्य की स्थिति के पश्चात् उतने सद्भाव के साथ वापस लौटते हैं जितने सद्भाव से 1945-52 के वाद अमेरिका जापान से लौटा।

□ □ □

अध्याय 21 जापानी रूप में पश्चिमी प्रजातन्त्र

(आधिपत्यकालीन सरकार एवं राजनीति, द्वितीय)

आधिपत्य के दौरान जापान ने अनुकूलन, आयात तथा सुदृढीकरण की उसी महान् परम्परा को बनाये रखा, जिसका अनुसरण उन्होंने अपने इतिहास के अन्य कालों में भी किया था। जापान में पश्चिमी प्रजातन्त्र की स्थापना की गई थी, ऐसा प्रजातन्त्र जो कई प्रकार से उस ससदीय साम्राज्य से सम्बधित था जिसका आयात मेयजी काल में किया गया था तथा जो अब अमेरिका से और अधिक साम्य रखता था। जिस अमेरिका ने जापान को माडल प्रदान किया, वह यथार्थवादी अमेरिका नहीं था जिसमें अमेरिकी रह रहे थे, वल्कि अमेरिका का एक कल्पनाप्रधान स्वप्निल चित्र था, वास्तविक वना होता, यदि संयुक्त राष्ट्र-संघ की व्यवस्था मूलरूप में सफल हुई होती।

जापानियों के सम्मुख जिस पश्चिमी प्रजातन्त्र को प्रस्तुत किया गया, वह वस्तुतः अनेक अमेरिकी विरोधाभासों से पूर्ण था, तथा वह उस रचना से कहीं ज्यादा कौशलपूर्ण तथा रहस्यमय था जिसे जापानी मस्तिष्क ने प्रस्तुत किया। संवैधानिक व्यवस्थाओं के आधार पर घोषित इस सामाजिक प्रजातन्त्र के आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक स्वरूप को प्रस्तावित नवीन जापानी समाज में क्रियान्वित करने के लिए कोई व्यवस्था नहीं की गई थी। एक अर्थ में यह कहा जा सकता है कि मेकार्थर का जापान विश्व-राजनीति में नई नीति (न्यू डील) का सर्वोच्च स्तर था, तथा जापान में प्रजातन्त्रीकरण का अर्थ वड़े उद्योगों पर प्रहार, पूंजीवाद के विरुद्ध सदेह, मजदूर-यूनियन-संगठनों को प्रोत्साहन तथा सामाजिक विपमताओं पर कानूनी प्रहार था तथा ये नई नीति की वे सीमाएं थीं, जहां तक न तो राष्ट्रपति रूजवेल्ट तथा न ही ट्रूमेन अपनी प्रतिरूपात्मक नई नीति को ले जा सकते थे। इन अमेरिकी प्रकारों को एक ओर न तो मात्र विजेता राज्य की संस्थाओं की अर्थहीन अनुकृति कहा जा सकता है तथा न ही दूसरी ओर उन्हें एक स्थायी सरकार की दीर्घकालीन राजनीतिक विशेपता के नाम पर स्वीकारा जा सकता है।

जापान ने अपने पूर्व इतिहास के समान एक बार फिर कार्य करने के अपने तरीकों को वनाए रखा तथा अपनी ही संस्थाओं को नवीन प्रवाहों में डालते के वाद भी मूल जापानी क्षमता को वनाए रखा। परिणामस्वरूप इन संस्थाओं ने नवीन व्यवस्था की वहुत सी अच्छाइयों को स्वीकारने के वाद भी अपने स्वाभाविक जापानी स्वरूप को सुरक्षित रखा। यद्यपि यह पर्याप्त कपटपूर्ण था। कि विश्व के सर्वाधिक प्राचीन कुलीन वर्ग को समाप्त किया गया, जवकि सम्राट्, जिसकी राजतन्त्रीय शासन की सत्ता का आधार कुलीन वर्ग की कुलीन वंशीय प्रतिष्ठा से कुछ ही अंशों में अच्छा था, की संस्था को चालू रखा गया। जापानियों ने अमेरिकियों के इस विरोधाभास को भी स्वीकार लिया तथा "असहनीय को
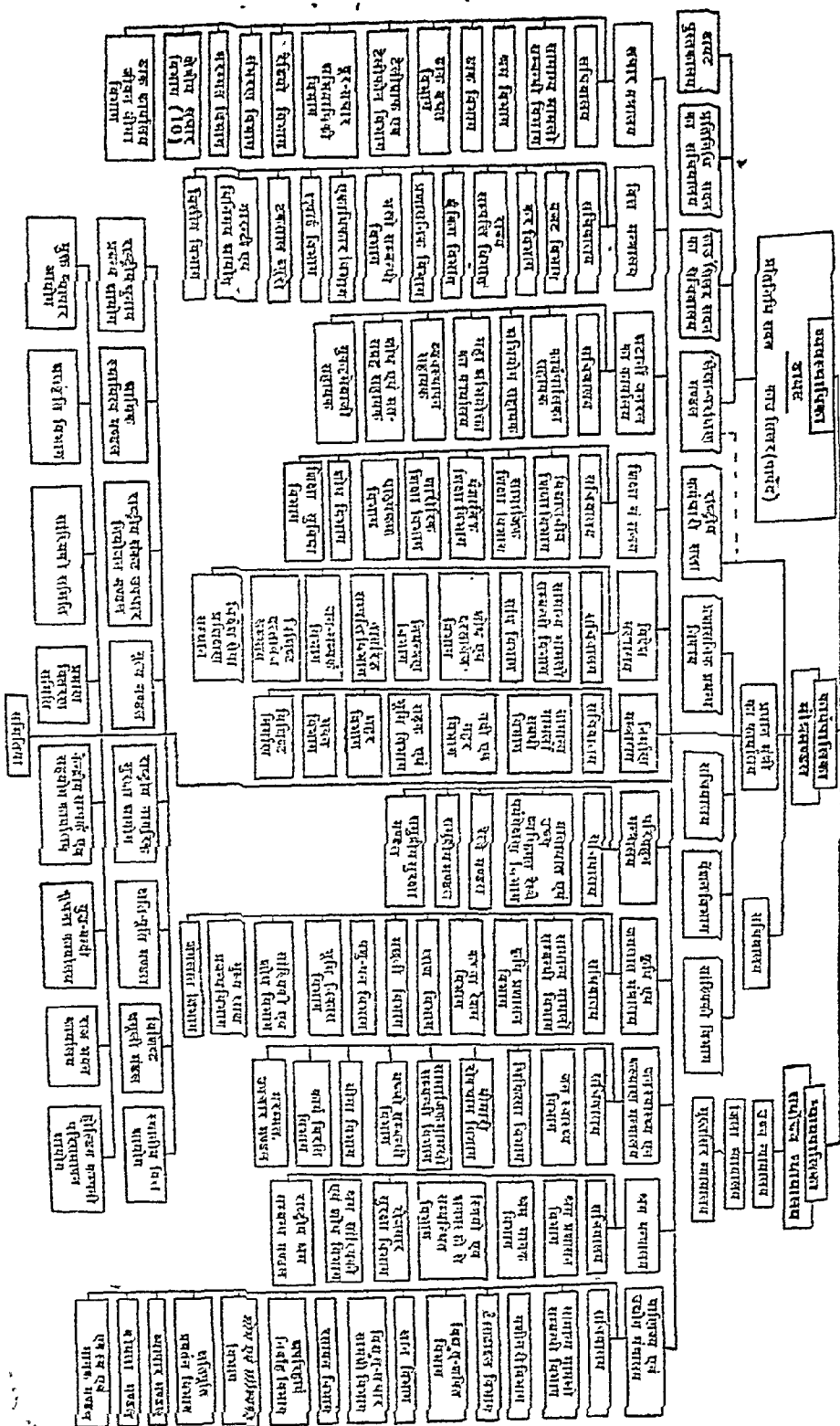
सहने योग्य" कह कर उन्हें जो करना था, वह बिना अर्थ पर अधिक विचार किए, उन्होंने किया। जापानी तथा पश्चिमी संस्थाओं के सम्मिश्रण के परिणाम प्रस्तुत हुए है। उनकी क्षमता किसी भी तर्कसंगत विश्लेषण से बहुत परे है। हाल ही की शताब्दियों में चीन के लिए यह कहा जाता है कि राजनीतिक इकाई के रूप में चीन पूर्णतः अनश्वर है, क्योंकि चीनियों में विदेशी विजेता को विलय करने के पश्चात अपने अस्तित्व बनाये रखने की क्षमता है। शायद यह बड़ी सहजता से कहा जा सकता है कि भूतकाल में जापानियों ने बाह्य राजनीतिक चुनौतियों का सामना करना सीख लिया है। परिणामस्वरूप जापानी अपनी राजनीतिक परम्परा की निरंतरता को बनाये रख कर अपने राजनीतिक रूपों को बार-बार बदल सकते हैं। इस तथ्य को दूसरे ढंग से इस प्रकार कहा जा सकता है कि जापानी राजनीति के प्रतिमान बदल जाते है, किन्तु जापानी संस्कृति के मूल रूप अक्षुण्ण रहते है।

जो जापान चालीस वर्ष पूर्व आंग्ल माडल का राजतन्त्र तथा दस वर्ष पूर्व अर्द्ध हिटलरस्पेण अधिनायक तन्त्र (प्रच्छन्न रूप में) था, वह आज उल्लेखनीय रूप में पश्चिमी प्रजातन्त्र जिस रूप में बना है वह बेल्जियम अथवा डेनमार्क द्वारा अपनाये गये अमेरिकी, प्रतिमान से अधिक भिन्न नहीं है। फिर भी यह स्वयं जापानी है[1]।

गैर सरकारी स्तर पर दैवीय सम्राट्—

संवैधानिक स्तर पर सम्राट् को सभी सरकारी शक्तियों से वंचित कर दिया गया है। वस्तुतः 1 जनवरी 1946 की प्रसिद्ध शाही घोषणा में सम्राट हिरोहितो ने प्रजातन्त्रीकरण की प्रस्तावना स्वयं लिखी थी। इन आश्चर्यजनक संदेशों में सम्राट् ने अपने देवत्व को अस्वीकार किया था। किन्तु इस अस्वीकृति से जापानियों के मस्तिष्क में सामान्य आलोचना तथा शाब्दिक व तार्किक प्रहारों से परे सम्राट् की स्थिति में कोई परिवर्तन हुआ या नहीं, यह तो भविष्य ही बताएगा। सम्राट् ने इस सिद्धांत को भी मिथ्या घोषित किया कि जापानी अन्य लोगों से श्रेष्ठ थे तथा अन्य विश्व पर शासन करना उनकी नियति थी।

संविधान ने इस प्रक्रिया को आगे बढ़ाय। 1889 के मेयजी संविधान ने सम्राट् को पवित्र तथा अनुल्लंघनीय बताया था। किन्तु नवीन संविधान सम्राट् की व्याख्या 'राज्य तथा जनता की एकता" के रूप में करता है जो अपनी स्थिति उस जनता से प्राप्त करता है जिसमें सर्वोच्च संप्रभुता निहित है। मेयजी संविधान द्वारा सम्राट् को जो विशाल शक्तियां प्रदान की गई थीं, उन्हें वापिस ले लिया गया तथा बेल्जियम तथा अन्य यूरोपियन देशों के राजाओं के समान जापानी सम्राट् सभी कार्य मात्र मंत्रीमण्डल के परामर्श तथा स्वीकृति पर करने लगा था।

कर्त्तव्य बदल गए, पदवी वही बनी रही। नये संविधान ने भी सम्राट् के लिए उसी पद का प्रयोग किया था, तेनो अर्थात् दैवीय स्वामी जिसका प्रयोग मेयजी संविधान ने किया था।

1—488 पृष्ठ पर प्रस्तुत चार्ट नवीन सरकार का मनोरंजक रूप प्रस्तुत करता है। इसे राष्ट्रीय अधिकारियों द्वारा (जिनजी इन) जनवरी 1949 को सूचना-विभाग से प्रस्तुत किया गया। इस चार्ट की दो विशेषतायें है। प्रथमतः सम्राट् की पूर्णतः उपेक्षा की गई थी तथा द्वितीयतः विभिन्न शाखाओं को इस प्रकार व्यवस्थित किया गया था कि वह शक्ति- पृथक्करण के अमेरिकी सिद्धान्त को परावर्तित करता था जो किसी भी संसदीय व्यवस्था में अनुपस्थित रहता है।

सम्राट् के विशेषाधिकारों की पुनर्व्यवस्था से पहले ही अंदरूनी स्तर पर उन परामर्शदाता संस्थाओं को समाप्त कर दिया गया, जो पर्ल हार्बर से पहले सम्राट के महल से बाहर से सुदृढ तथा अनुल्लेखनीय साम्राज्यिक स्त्रोतों के माध्यम से रहस्यपूर्ण ढंग से सरकार की दैनिक कार्यवाही को प्रभावित करती थी। सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्थाएं जिन्हे समाप्त किया गया, उनमें प्रीवी परिषद, जुशीन लार्ड प्रिवी सील, साम्राज्यिक गृह-मंत्रालय, युद्ध-मंत्रालय, जल-सेना-मंत्रालय तथा अर्द्ध स्वतन्त्र सैनिक सरकारी विशाल पदसोपान आदि थीं। साम्राज्यिक गृहमन्त्रालय प्रधानमन्त्री के कार्यालय का एक अंश मात्र बन गया। एक नवीन साम्राज्यिक परिवार परिषद में साम्राज्यिक परिवार के मात्र दो व्यक्ति, डाइट के प्रत्येक सदन के सभापति व उप-समापति, प्रधानमन्त्री, नवीन साम्राज्यिक गृह कार्यालय का अध्यक्ष, एक प्रमुख न्यायाधीश तथा एक सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश सदस्य होते थे।

बोओदाई के प्रभावशून्य शासन की भूमिका अथवा दुर्भाग्यशाली सम्राट "श्रीमान हेनरी यू भी" की मंचूको वाली भूमिका से शोवा सम्राट् तक एक लम्बी कथा है। जापानी सम्राट् द्वारा सामंजस्य स्थापित का सर्वाधिक उल्लेखनीय उदाहरण इस तथ्य से प्रस्तुत है कि श्रीमती एलिजाबेथ विनिंग नामक चतुर स्त्री, जो पूर्णतः प्रजातंत्रीय दृष्टिकोण रखती थी तथा इस कारण वह अमेरिकी विदेशी विभाग को उचित व्यक्ति लगीं, ने युवराज अकिहतो का प्रशिक्षण एक पश्चिमी प्रजातन्त्रीय किशोर के जापानी माडल के रूप में किया। अब पिता, पुत्र तथा मां तीनों इस प्रकार आचरण नहीं करते है, जैसे ये प्टोमेलिन सम्राट् के समकालीन वंशज हैं अथवा उस सम्राट् के वंशज हैं, जिन्होंने कुबली खान से युद्ध किया था, अपितु ऐसे आचरण करते हैं मानो वे कटपुतलियां हों।

इसी प्रकार जापानी सम्राट् को औपचारिक रूप में धर्म का समर्थन समाप्त हो जाता है, किन्तु यह तथ्य कि वह विस्तृत तथा ऐतिहासिक दृष्टि से सुदृढ परम्परा पर आधारित है, इस बात का प्रमाण है कि एक बार इस राष्ट्र तथा इस अविच्छिन्न राजतन्त्र को यदि अवसर प्राप्त हो गया तो जापानी सम्राट् इस काल से भी उसी प्रकार सुरक्षित निकल सकता है, जैसे मानव-इतिहास के अन्य चरणों में से वह निकला है। यदि रूथ बेंडिक्ट द्वारा संस्कृति के बारे में पैटर्न्स ऑफ कल्चर तथा दि क्रिसन्थयम एण्ड दि स्वोर्ड में प्रस्तुत विलक्षण दृष्टिकोण को स्वीकार किया जाये, तो मानना होगा कि जापान में सम्राट् को पूर्णतः अर्थहीन तथा अनावश्यक बनाने के लिए दैनिक जीवन में सत्ता के प्रति जापानी दृष्किोण में मनोविकारात्मक गहराइयों तक परिवर्तन करना होगा। सम्राट्, समाज, राजनीति और जापानी जीवन की विशेपता साम्राज्यिक शक्ति को प्रति दीर्घकालीन चुनौती हैं। इसका कारण स्त्री को प्राप्त कानूनी स्वतन्त्रता है, एक सम्पूर्ण वर्ग की परिस्थिति में अरिवर्तन हुआ, जिसकी तुलना सम्भवतः विश्व इतिहास के सन्दर्भ में 1863 के स्वतंत्रता-उद्घोषणा से की जा सकती है जिस प्रकार अमेरिका में दासों की स्वतन्त्रता ने न केवल सभी श्वेत लोगों को प्रभावित किया क्योंकि उनके दर्शन की सभी अनिश्चितताएं समाप्त हो गई थी, अपितु सभी निग्रो दासों को भी प्रभावित किया जो कि अब सुरक्षित दासों के स्थान पर असुरक्षित नागरिकों का स्थान प्राप्त कर चुके थे। इसी प्रकार जापानी नारी की स्वतंत्रता मात्र जापानी नारी को ही प्रभावित न करके पुरुषों को भी प्रभावित करने वाली है। नारी

की राजनीतिक स्वतंत्रता, सम्पत्ति-अधिग्रहण करने का उनका कानूनी अधिकार तथा उनकी परिस्थिति में औपचारिक रूप से कानूनी परिवर्तन, इसका अर्थ है कि जापान में आने वाली पीढ़ियां एक भिन्न पारिवारिक सत्ता तथा सम्मान के नये प्रकारों के बीच पलेंगी। एक लघुतम परिवार में स्थित असाधारण स्तरीकरण मूल रूप में टूट सकता था। शांति, किन्तु दृढ़तापूर्ण ढंग से जापानी स्त्रियां इस स्वतन्त्रता में मताधिकार की ओर उन्मुख हो रही हैं। जापानी स्त्री की स्वतन्त्रता में मताधिकार की भूमिका निम्नतम है। सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य स्त्री के प्रति पुरुष के दृष्टिकोण में शनैः शनैः होने वाला परिवर्तन, स्त्री पर पुरुष की सत्ता के उत्तरदायित्व में कमी, परिवार के नियंत्रणों में उदारता तथा जापानी व्यवहार में सामान्य शिथिलता का आना है।

जापान का सम्राट् निश्चय ही एक विशाल मानवीय पिरामिड का सर्वोच्च पत्थर रहा है। सम्राट् के पद के कार्य-निरपेक्षीकरण ने मात्र सर्वोच्च पत्थर की चमक मात्र में परिवर्तन किया, किन्तु स्त्रियों की कानूनी स्वतन्त्रता सम्पूर्ण पिरामिड के मूल आधार को ही विचलित करती है।

जापानी समाज तथा राजनीति के मध्य परस्पर सम्बन्धों को समझने के लिए सहस्त्रों उदाहरणों में यहां मात्र दो उदाहरणों को देख लेना पर्याप्त होगा। प्रथमतः स्कूलों में पढाया जाने वाला नीति-शास्त्र तथा शिक्षा-योजना में सम्राट् के चित्र का प्रयोग।

पर्ल हार्बर से पहले जापान में पढ़ाये जाने वाला नीति-शास्त्र में सत्ता तथा निष्ठा थी। आधुनिक युग में यह नीति-शास्त्र उग्र राष्ट्रवादी तथा सैन्यवादी बना। तोकूगावा-शासन के अंतर्गत यह सामंतवादी तथा निष्ठा प्रधान रहा। तोकूगावा-शासन से पहले लोग वफादार सामंतवादी होते हुए भी निष्ठान रहे। इस प्रकार प्रारम्भ से जापान में नीति शास्त्रीय शिक्षा परिवर्तित होती रही। आत्म-समर्पण के पश्चात् स्कूलों में नीतिशास्त्र नहीं पढाया जाता था। जापानी अध्यापक अपनी अंतश्चेतना से अमेरिकी स्कूलों का नीतिशास्त्र नहीं पढा सकते थे। उनको यह भी भय था कि यदि उन्होंने परम्परागत कुशिदो को पढाया तो उन्हें अपदस्थ कर दिया जाएगा। अधिग्रहण काल के दौरान तथा उसके बाद भी जापान ने विदेशों से अपने कूटनीतिक सम्बन्धो को बनाये रखा। किन्तु पाठ्यक्रम से नीतिशास्त्रीय शिक्षा समाप्त हो गई तथा माता-पिता अपनी इच्छा से बच्चों को नीतिशास्त्रीय शिक्षा प्रदान करते थे। निष्ठा के प्रतीक के रूप में एक दैवीय सम्राट् की प्रशंसा के लिए एक उल्लेखनीय भूतकाल तथा भविष्य के लिए एक अनुशासित किन्तु राष्ट्रभक्ति पूर्ण प्रशिक्षण, इनके अभाव में किस प्रकार जापान के छोटे-छोटे बच्चों को जापान की विशिष्ट नीतिशास्त्र की शिक्षा दी जा सकती थी।

आत्मसमर्पण के समय तक भी जापान में प्रत्येक विद्यालय भवन का केन्द्रबिंदु सम्राट् का चित्र हुआ करता था। आग लग जाने पर अध्यापक का प्रथम कर्त्तव्य सम्राट के चित्र को हटाना था, तत्पश्चात बच्चों की जीवन-सुरक्षा का प्रश्न उठता था। इस प्रकार के दुविधापूर्ण विवाद से बचने के लिए अवसर सम्राट् के चित्र को स्कूल के मैदान में बनाये गए विशिष्ट उपासना गृह में रखा जाता था। चित्र चाहे कितना ही सस्ता क्यों न हो, उसे स्कूल की बहुमूल्य सम्पत्ति माना जाता था। अधिकरण के समय जापानी स्कूलों में सम्राट् के औपचारिक चित्रों पर प्रतिबन्ध था, यद्यपि सम्राट् के सामान्य चित्रों के समान माना

जाता था। परिष्कृत महानगरों से दूर रहने वाले अमरीकियों को जापानी जनता को इन चित्रों के आचरण का सूक्ष्म विवेचन कर यह देखना चाहिये कि क्या दैनिक जीवन में जापानी अध्यापक तथा बच्चे अब भी इन चित्रों में देवत्व की भावना आरोपित करने के आदी हैं।

इन सांस्कृतिक प्रेरकों के साथ अनेक उदाहरणों को देखने पर ही जापानी सम्राट् के भविष्य के बारे में कुछ कहा जा सकता है। यह संभव नहीं है कि स्वयं तैनो अपने राजवंश के भविष्य के बारे में निश्चित हो। जापानी सम्राट् के बारे में एक तथ्य निश्चित है कि आत्मसमर्पण के लिए राजतन्त्र को माध्यम बनाया गया, आत्मसमर्पण सम्राट् के सद्प्रयासों से हुआ तथा राजतन्त्र स्वयं को धार्मिक बन्धनों से स्वतन्त्र करने में तथा स्वच्छ पृष्ठभूमि से कार्य प्रारम्भ करने में सफल हुआ।

जापानी सम्राट् का गैर सरकारी देवत्व उन राजनीतिक निर्णयों से प्रभावित नहीं होगा जो स्वयं उसकी उपेक्षा करते हैं। जापान में सम्राट् का भविष्य घनिष्टतः जापानी रूप में पश्चिमी प्रजातन्त्र के विकास अथवा पतन से सम्बन्धित है तथा उन समझौतों पर निर्भर करेगा, जो जापानी अपने भावचित्र प्रधान साहित्य तथा उस सांस्कृतिक परम्परा एवं धार्मिक, राजनीतिक तथा दार्शनिक मांगों से करेंगे जो निकट भविष्य में उनमें "अवशिष्ट मानव समाज से सहयोग" की भावना से उत्पन्न होगी। यदि जापान में पश्चिमी प्रजातन्त्र ही मूल राजनीतिक व्यवस्था बना रहता है, किन्तु संपूर्ण संप्रभुता के अधिकार के साथ सशस्त्र राष्ट्रीय आत्मसुरक्षा तथा राष्ट्रभक्तिपूर्ण आत्मसम्मान की भावना का भी उदय होता है तथा अपने राष्ट्र के उद्देश्य में विश्वास दृढ बनाता है, तो यह पूर्णतः सम्भव है कि राजपद और महत्त्वपूर्ण बन जाए। किन्तु यदि दूसरी ओर जापान में बौद्धिकता के अतिरिक्त नैतिकता का सम्पूर्ण पतन वाइमार संविधान के अतिरिक्त जर्मनी के समान हुआ तो यह सम्भव है कि सम्पूर्ण जापान के साथ सम्राट् के पद का भी सक्रिय पतन प्रारंभ हो जायेगा तथा जापान में वही स्थिति आ जाएगी, जिसका वर्णन सेबस्टेन डी ग्रेशिया ने प्राचीन पुनर्जागरण कालीन 'पद-मूल्यहीनता की स्थिति' पद का प्रयोग लोगों में शासकहीनता की दशा में वर्णन करने में किया है।

आधिपत्य-काल में भी सम्राट् की भूमिका के लक्षण स्पष्ट हो गए थे। मिंचु क्योइकू (प्रजातन्त्रीय शिक्षा) ने अप्रेल 1946 में जापान की भावनाओं को इस वाक्य में स्पष्ट किया था "सम्राट् में श्रद्धा तर्क को श्रेष्ठतर बना देती है। यह परम्परा है।"

साम्राज्यिक संस्था—

चूंकि सम्राट् के शासन की परम्परा सम्पूर्ण राज्य तथा शासन का केन्द्रबिन्दु है, अतः युद्धोत्तर कालीन सम्राट् को भिन्न दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है। मूल्यांकन की दृष्टि भी इतनी जटिल साम्राज्यिक, धार्मिक तथा राजनीतिक संस्था को विभाजित करना तथा सैद्धान्तिक प्रघटना को, जो संवेगात्मक दृष्टि से भी यदि अधिक नहीं तो उतनी ही महत्त्वपूर्ण जितनी बौद्धिक दृष्टि से, उपविभाजित करना असंभव है। किन्तु पश्चिमी विजेताओं ने जापान में निश्चित रूप से ऐसा ही किया तथा हिरोहितो, जो इस सन्दर्भ में अधिकांश जापानियों का प्रतिनिधित्व करता था, ने अधिकार स्थापित करने वाली शक्तियों के आदेशों का पालन किया।

साम्राज्यिक परिवार की आर्थिक तथा वित्तीय जायदाद की व्यवस्था करना सर्वाधिक सरल था पारिवारिक परिषद् का जेवात्सु के समान पुनंगठन किया गया। किन्तु इस विघटन की प्रक्रिया में भी साम्राज्यिक संपदा को जनकल्याण के लिए व्यवहार में कय तथा सैद्धान्तिक रूप से अधिक समर्पित किया गया था। पारिवारिक वस्तुएं, जिनका मूल्य संयुक्त सर्वोच्च कमान के अधिकारियों द्वारा एक से डेढ़ विलियन येन मापा गया गया था, राज्य की सम्पत्ति बन गई। सम्राट् के कीमती जवाहरातों को आयात के लिए आवश्यक कोष के रूप में बदल दिया गया। 3 जून 1943 को शाही-युगल ने अपने पहले संयुक्त सवाददाता सम्मेलन में हर्षपूर्वक यह घोषणा की कि वे भी वही भोजन कर रहे हैं जो तत्कालीन राशन की स्थिति में आम जापानी के लिए सम्भव था।

तथापि तैंनो के सामजिक (अथवा पश्चिमी अर्थ में धार्मिक) की व्यवस्था करना कठिन था। कुछ अविकृत लेखकों ने, जिनमें जापानी लेखक भी सम्मिलित थे, कभी भी यह स्वीकार नहीं किया था कि सम्राट् रूपी ईश्वर को जापानी लोगों ने कभी भी स्वीकार किया था। सर जार्ज सेंसम ने लिखा है कि उनकी भेंट किसी भी ऐसे जापानी से नहीं हुई जो सम्राट् को दैवीय वंश का मानता हो। प्राचीन चीनियों के समान जापानी यह मानते हैं कि तैंनो आत्माओं के विश्व। अथवा आधुनिक शब्दों में अपरिचित विश्व, से उनके विश्व तक एक मध्यस्थ के रूप में सदा सर्वदा विद्यमान रहा है। आत्मसमर्पण के दौरान सम्राट् की भूमिका ने उस पर जापानियों के औपचारिक आश्रय को तो कम कर दिया, किन्तु मनोवैज्ञानिक आधार को बढा दिया। अपने निकृष्टतम रूप में जापान के सम्राट् की परंपरा व्यापक स्तर पर एक सामाजिक मनोवैज्ञानिक प्रघटना है। किन्तु यह गुणों की दृष्टि से अमेरिकी समाज के प्रायः सभी वर्गों में पाये जाने वाले सौभाग्य व दुर्भाग्य सूचक अंधविश्वसों की जटिल व्यवस्था से भिन्न नहीं है।

आत्मसमर्पण के पश्चात भी सम्राट् का असीम देवत्व इस बात का प्रमाण है कि संयुक्त सर्वोच्च कमान के उन निर्देशों, जिन्होंने राज्य-धर्म शितो को (कोवा शितो) समाप्त किया था, से समाट् के पद को गम्भीर क्षति नहीं पहुंची। शिक्षा के सभी स्तरों से नैतिक शिक्षा को हटा दिया गया। हिरोहितो के नवीन चित्रों में न तो उसे यूनिफार्म में दिखाया गया तथा न ही उपासना-गृहों के मध्य में रखा गया। अंतिम जापानी प्रधानमन्त्री, जिसने महान् उपासना-गृह की तीर्थयात्रा (शांति सन्धि पर हस्ताक्षर करने से पहले), बैरन शिदेहरा था जो 24 अक्टूबर, 1945 को सूर्य देवी के संमुख उपस्थित हुआ था। संयुक्त सर्वोच्च कमान के अक्सर उन जापानियों के साथ विवाद होते रहते थे, जो शितो उपासना-गृहों तथा उप्सवों का समर्थन करते थे तथा जिन्होने अन्य गैर प्रजातन्त्रीय तरीकों से अपनी प्राचीन संस्कृति को बनाए रखने की कोशिश की थी[2]।

युद्धोत्तरकालीन ब्रिटेन में जार्ज षष्ठम तथा एलिजाबेथ द्वितीय पदारोहित हुए हैं। अपनी शाही परंपरा के माध्यम से उन्होंने जहां तक हो सका है अपने राष्ट्रीय चरित्र को

2—संयुक्त सर्वोच्च कमान का मूल निदेश जापानी में एम. के. एच. के अंक प्रथम संख्या 6 में (1 सितम्बर 1946) में दिया गया है, पृष्ठ 29–34) जो शुशिन में स्थगित करने वाले आदेशों के रूप में दिया गया है। संयुक्त सर्वोच्च कमान द्वारा शितो की मान्यता 6 नवम्बर 1946 के निर्देश में दी गई है पूर्वोक्त 16 संख्या (20 जनवरी, 1968) पृष्ठ 9–11।

ऊंचा उठाये रखने का प्रयास किया। रूसी उस जारशाही को समाप्त करने के लिए अनीश्वरवादी बने, जो धार्मिक मामलों में जितना अधिकारपूर्ण था उतना ही राजनीतिक क्षेत्रों में भी शक्तिशाली था। किन्तु बाद में उनके यहाँ उस स्टालिन का उदय हुआ जोकिसी भी जार से बढ़ कर था, जिसकी औपचारिकता की अपेक्षाएं चर्च पर आधारित प्रतिक्रियावादी पोविदोजोंस्तेव की अपेक्षाओं से कहीं अधिक थी। जापानियों को सम्राट् के प्रतीक में ही शांति मिलती है। जब तक यह प्रतीक जापानियों की एक जातीय समूह के रूप में में संवेगात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति करता रहता है, तब तक जापान किसी प्रकार के अधिनायकवाद के महत्वाकांक्षियों के सघन मनोवैज्ञानिक आकर्षणों से सुरक्षित रह सकता है।

साम्राज्यिक संस्था के राजनीतिक पक्ष में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं।

प्रारम्भिक अध्यायों से यह स्पष्ट हो गया है कि प्राय: जापानी सम्राटों ने ऐसे आवरण का कार्य किया जिसकी आड़ में शासक श्रेणी-तन्त्र ने अपने उद्देश्यों की पूर्ति की। अत: जापानी तेनो की मूल विशेषता यह नहीं है कि उसने वस्तुत: जापानी सरकार पर नियन्त्रण रखा है, अपितु यह है कि जापानी लोगों ने हमेशा यह सोचा कि सब कुछ सम्राट् के नाम पर हो रहा है। अधिकरण ने इस अवधारणा को बहुत अधिक अव्यवस्थित नहीं किया। पश्चिमी क्षेत्रों में सम्राट को बनाये रखने से नाम पर मौन धारण कर लिया गया तथा एसा ही जापानी विचारकों ने भी किया।

अधिकरण के समय सम्राट को इसलिए बनाए रखा गया क्योंकि उसने आत्मसमर्पण की प्रक्रिया की गति को त्वरिता प्रदान की थी। बाद में उसको बनाए रखने के कारण मूल स्थिति से भिन्न थे। उसको बनाए रखने का मूल उद्देश्य उन उग्र परिवर्तनों को रोकना था जो साम्यवाद के प्रसार में सहायक होते। जब अमेरिकियों ने सम्राट का प्रयोग अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किया, तो उन्होंने ऐसा कोई कार्य नहीं किया जो इससे पहले जापानी राजनीतिज्ञ नहीं कर चुके थे।

आधिपत्य के दौरान सम्राट् की भूमिका को मात्र मित्र राज्यों की इच्छा की प्रतिच्छाया नहीं कहा जा सकता है, जिसे जापानी जनता की भावनाओं के अनुकूल कहा जा सके। यद्यपि अधिकांशत: जापानी लोग सम्राट् को बनाये रखने के पक्ष में थे, किन्तु उसकी भूमिका के बारे में उनमें इतनी एकता नहीं थी कि उसके आधार पर मित्र राज्यों के कार्यों के कार्यों को मात्र उसकी स्वीकृति मान लिया जाये। मित्र राज्यों की नीति को निश्चेष्टता नीति के रूप वर्णित किया जा सकता है। यह निश्चेष्टता साम्यवाद के बढ़ते हुये खतरों के साथ बढ़ती गई[3]।

3—फरवरी 1946 को आसाही शिम्बुन ने उस बौद्धिक वर्ग का मत लिया जो सम्भवत: सर्वाधिक तेनो विरोधी समूह था तथा पाया कि अस्सी प्रतिशत लोग संशोधन के पश्चात सम्राट का पद बनाये रखने के समर्थक थे। परम्परा का ठेक परिष्कृत आधुनिक दृष्टिकोण प्रथम अध्याय में 26--2f6 में दिया गया है, युद्धोत्तरकालीन जापान का दृष्टिकोण गेंजी ओकुबो की रचना "दि प्राबलम्स ऑफ दि एम्परर इन पोस्टवार जापान" पूर्वोक्त में दिया गया है। सम्राट् के पद के उन्मूलन की आवश्यकता पर गेर पश्चिमी दृष्टिकोण के लिए देखिये सुन को (सुन यात सेन का पुत्र) "दि मिकाडो मस्ट गो" फारेन अफेयर्स अक्टूबर 1944 पृष्ठ 23।

स्वयं जापानी कई बार तैनो-व्यवस्था का पुर्नगठन व पुर्नमूल्यांकन के लिये तत्पर थे। मई, 1946 में समाचार-पत्रों ने हिरोहितो द्वारा आकाशवाणी से प्रसारण की कटु आलोचना की थी। अगस्त 1940 को सम्राट की संवैधानिक स्थिति के बारे में विवाद खड़ा किया गया तथा योमिवरी शिम्बुम इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि देर-सदेर तैनो-व्यवस्था को समाप्त किया जाना पड़ेगा (योमिउरी-शिम्बुग के उन कार्यकर्त्ता-वर्ग को दो वर्ष के रक्त विहीन क्रांति में अपदस्थ कर दिया गया तथा सम्राट अपने पद पर बना रहा) 6 सितम्बर, 19-6 को जापान के इतिहास में पहली बार सार्वजनिक रूप से जापानी सम्राट की आलोचना की गई। डाइट ने जापान के बाहर उसके द्वारा राष्ट्र का प्रतीक बनने के प्रयास की भर्त्सना की, क्योंकि उसने नव निर्वाचित राष्ट्रपति ट्रूमैन को निजी तौर पर बधाई-सन्देश भेज दिया था।

जापानी सम्राट ने जापान के नवीन पश्चिमी प्रजातन्त्र में ब्रिटिश सम्राट की भूमिका के स्वेच्छा से ग्रहण कर लिया है। जापानी सम्राट को ब्रिटिश सम्राट के समान कुलीन वर्ग की सामाजिक प्रतिष्ठा के माध्यम से कोई समर्थन भी प्राप्त नही है[4]। साम्राज्यिक प्रतिष्ठा बनी हुई है तथा यह पूर्णतया शंकास्पद है कि किस प्रकार प्रशासनिक तथा राजनीतिक वर्ग उस राजनीतिक सत्ता का प्रयोग करेंगे, जिसे आज आज तक जापान के इतिहास में साम्राज्यिक प्रतिष्ठा के आवरण में ही प्रयुक्त किया गया है।

युद्धोत्तर कालीन सरकार की नैतिकता तथा स्तर—

आधिपत्य काल में जापान में सम्राट् के पद के बने रहने के बावजूद उसके आकार में परिवर्तन नहीं हुआ। पश्चिमी प्रजातन्त्र को जिस प्रकार जापानियों ने अपनी राजनीति में सलंग्न करने का प्रयास किया, वह प्रक्रिया अनेक कारकों से प्रभावित हुई। वे सार्वजनिक कानून उन तीव्र भिन्नताओ से अधिक सघन थे जो सरकार को अपने लोगो के प्रति, अन्य सरकारों के प्रति तथा राष्ट्रों के सम्प्रदाय के प्रति कर्त्तव्यो को स्पष्ट करते थे।

इन सब कारकों में से एक विचित्र काल जापान में शक्ति-राजनीति की स्थिति थी। यदि जापानियों का वश चलता तो वह सहस्रों नावों को लगाकर अपने सम्पूर्ण साम्राज्य को प्रशांत महासागर के पार ले जाते, ताकि आराम से चिली के तट पर सुरक्षित रह सकें। तब वे निश्चय ही स्वयं को एक संकटपूर्ण स्थिति से हटा कर स्विट्जरलैंड के समान भूमिका अदा करने की कोशिश करते। किन्तु इन द्वीपों को हटाया नहीं जा सकता था। जापानी चाहे पसंद करें या न करें, उनकी स्थिति विश्व में विनाश के विशालतम मार्ग पर बडी असुरक्षित है। जापान अपनी भौगोलिक स्थिति में अक्षांश व देशांतर रेखाओ के कारण अपने महाद्वीप के संदर्भ में, विश्व की सामूहिक शक्तियों की व्यवस्था के संदर्भ में तथा रूस की स्थल-सेनाओं की समवर्ती स्थिति के संदर्भ में, या तो प्रशांत महासागर में रूसी शक्ति का मुख्य द्वार बन सकता है अथवा वैकल्पिक रूप में वह आज के जापान की तरह पश्चिमी

4—अततः जापानी काजोकु की समाप्ति श्वेत रूसी काउन्ट के समान हो जाएगी। आसाही शिम्बुन द्वारा 1 फरवरी, 1946 को प्रकाशित तथा "सन्स ऑफ दि समसुपा मसेशन" इस उच्च वशीय परिवार के वार काउन्ट ने एक अचारो तथा सूखी मछलियो की दुकान खोल दी थी सफेद ऐप्रन पहने तथा सोरोबान हाथ मे लिए वह बडा स्टाक रखने वाले व्यापारी से लेकर अपने खरीददारो को, व दुकान पर काम करने वाली लड़कियो को प्रसन्न रखता है तथा दुकान मात्र 10 सुबो की है।

प्रशान्त महासागर में अमेरिका का स्थायी समुद्र तट बन सकता है। जापान की कोई भी आंतरिक समस्या इतनी विनष्टकारी सिद्ध नहीं हो सकती है, जितनी उसकी सुरक्षा-समस्या। जापान की इस स्थिति में कोई संशोधन तभी हो सकता है, जबकि जापानी आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों के इतिहास में सर्वाधिक गम्भीर संकट मोल लेने को तत्पर हों। बिना रूसी सैद्धान्तिक नियन्त्रण को स्वीकार किये रूसी समर्थक होना संभव नहीं था। जिसका अर्थ उस आवरण के घेरे में बंध जाना था जिसे रूस अपनी सुरक्षित बाह्य भौगोलिक परिधि की अनिवार्यता मानता है।

वर्तमान तथा दूरगामी भविष्य, दोनों ही, दृष्टियों से जापानी उन्मुक्त विश्व-व्यवस्था के लाभ, गैर साम्यवादी देशों से सम्बन्ध स्थापित करने की कीमत पर ही उठा सकते हैं, अथवा जापान दोनों प्रतिद्वन्द्वात्मक शक्ति-राजनीति की व्यवस्थाओं को छोड़कर एक स्वतन्त्र एवं एकाकी राज्य बने रहने के कठोर मार्ग को भी अपना सकता है। इस दृष्टि से जापान की स्थिति इन्डोनेशिया से पूर्णतः भिन्न है। इण्डोनेशिया का मन्त्रीमण्डल रूस व अमेरिकी गुटों के मध्य संभावित किसी भी युद्ध के रणक्षेत्र से स्वयं को पर्याप्त पृथक रखने की कल्पना कर सकता है। इण्डोनेशिया के पास अपने कच्चे माल की खपत का बाजार मौजूद है, यद्यपि वहां से उन्हें सर्वदा अपेक्षित कीमत नहीं मिल पाती है। वे अकाल की किसी गंभीर सम्भावना को छोड़कर आर्थिक आत्मनिर्भरता को प्राप्त कर सकते हैं। अतः इण्डोनेशिया का विदेशमन्त्री एक तटस्थ देश के समान बातचीत करने के विशेषाधिकार का प्रयोग कर सकता है, किन्तु जापान के विदेशमन्त्री के लिए यह संभव नहीं है।

अतः जापान की युद्धोत्तर कालीन सरकार का स्तर अनिवार्यतः जापान के कूट-नीतिक दृष्टिकोणों, भविष्य के सम्भावित अधूरे युद्धों अथवा सम्पूर्ण मानव-समाज के संमुख महायुद्ध की सम्भावना इन सबसे आपूरित लगता है। जापान के लिए किसी ऐसी राज-नीतिक व्यवस्था का विकास करना उचित नहीं होगा, जो विश्व की शक्ति-राजनीति की यथार्थताओं से पूर्णतया अछूती हो। जब तक संयुक्त राज्यों की व्यवस्था बनी रहती है, जापानियों को अपने देशवासियों के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए अनेक आर्थिक व्यव-स्थाओं में से एक को स्वीकारना था तथा प्राप्त आर्थिक व्यवस्थाओं में से मात्र समुद्र व्यापार ही ऐसी आर्थिक व्यवस्था थी, जो जो जापानियों द्वारा एक अपेक्षित आर्थिक स्तर बनाए रखने की इच्छा की पूर्ति कर सकती थी, और यह व्यवस्था अमेरिका की शक्ति तथा संपदा पर ही आधारित थी।

परिणामस्वरूप जापान की गृहनीति की सीमाएं अमेरिकी की जनमत को विरोधी बनाने के प्रयास से बद्ध थी। निष्कृष्टतम स्थिति में जापान में अति दक्षिणपंथी दृष्टिकोण का विकास रूस व अमेरिका को एक साथ जापान के उग्र सैनिक वर्ग को समाप्त करने में रुचि उत्पन्न करता, क्योंकि वाशिंगटन तथा मास्को दोनों ही उनसे रुष्ट थे। इसके विपरीत जापान पर वाम पंथ का नियंत्रण इस तथ्य पर निर्भर करता था कि अमेरिका जापान में आर्थिक बहिष्कार, विरोध अथवा प्रतिशोध नीति का सामना किस सीमा तक कर सकता था। यह अकल्पनीय था कि जापानी, जो फिलहाल मंचूरिया अथवा विश्व के ऐसे ही अन्य भाग पर सैनिक अथवा आर्थिक नियंत्रण स्थापित करने के योग्य नहीं थे (तथा इस प्रकार

का कोई क्षेत्र उन्हें प्राप्त भी नहीं था), आर्थिक दृष्टि से इतने आत्मनिर्भर बन जाते कि स्वयं अपना मार्ग निर्धारित कर लेते[5]।

जापानी मामलों में उग्र दक्षिण तथा वामपंथी दृष्टि के कारणों के मध्य एक ऐसा रुख भी था, जिस पर जापान की आन्तरिक तथा विदेशी नीति सम्बंधी मामलों का निर्णय लिया जा सकता था। जापान का कोई भी मन्त्रीमण्डल अथवा प्रधानमन्त्री इस दाव से परे अपने देश की स्थाई सुरक्षा, स्वयं मन्त्रीमंडल के पतन तथा अपने राजनीतिक जीवन की समाप्ति का संकट मोल लिए बगैर नहीं जा सकता था। अतः एक फासिस्ट जापान की कल्पना नहीं की जा सकती थी। इसी प्रकार एक उग्र वामपंथी जापान, जो सोवियत रूस की व्यवस्था में विलीन हो जाए, की कल्पना असंभव थी। इसी प्रकार एक तटस्थ जापान की संभावना भी कठिन थी, क्योंकि जापान के अस्तित्व की रक्षा के लिए, किसी न किसी रूप में अमेरिका की सहायता अनिवार्य थी।

यह स्वीकार किया जाना चाहिए कि राष्ट्र मात्र अपने अनुभवों से ही बुद्धिमान नहीं बनते है, अपितु कभी-कभी पड़ोसियों के अनुभव भी उन्हें ज्ञान प्रदान करते हैं। ज़ापानियों ने 1941–45 के उग्र युद्ध में अपनी क्षमता से अधिक व्यय साध्य युद्ध का अनुभव प्राप्त किया। एशिया में एक साक्षी देश के रूप में उन्होंने यह महसूस किया होगा कि आर्थिक प्रजातन्त्र प्राप्त करने की शीघ्रता का अर्थ समग्र प्रजातन्त्र के रूप में साम्यवादी तानाशाही स्वीकारना था। 1945 अथवा 46 में सम्भवतः जापान मार्शल-मिशन के दौरान चीन में स्थापित साम्यवादी तथा गैर साम्यवादी तत्त्वों की संविद सरकार की ओर आकर्षित हुआ होगा। किन्तु 1950 में जापान के सम्मुख यह स्पष्ट हो गया कि साम्यवादियों के साथ संयुक्त सरकार बनाने का अर्थ वर्तमान सम्पूर्ण राजनीतिक नेतृत्व और उन बौद्धिक तथा सामाजिक वर्गों का अन्त था जो पूर्णतः साम्यवाद में विश्वास नहीं करते थे।

शौर्य तथा कल्पना की बाह्य चमक के नीचे जापान की राष्ट्रीय नीतियां सदा वास्तविक, व्यावहारिक तथा यथार्थवादी रहीं है। जापानी एक प्रशंस्य, वैचारिक भूमिका राष्ट्रों

5—सर्वाधिक विस्तृत अध्ययन जेरोम बी कोहेन का जापान्स इकोनोमी इन वार एण्ड रिकंसट्रक्शन है विशेषतया सातवां अध्याय अधिग्रहण के अन्तर्गत अर्थव्यवस्था का है। अपने व्यापक अनुभव में डा. कोहेन ने अमेरिका द्वारा जापान को भेजे गए ट्रेक्स-मिशन में अप्रैल अगस्त 1949 में कार्य किया। हाल में प्रिंसिटन विश्वविद्यालय के अंतर्राष्ट्रीय अध्ययन संस्थान डॉ. कोहन ने जापान की अर्थव्यवस्था के बारे अधिक आशाप्रद दृष्टिकोण इकॉनामिक प्रावलम्स ऑफ फ्री जापान प्रिंसीटन 1952 में अपनाया है। उदाहरण के लिए यदि जापान चावल की उपज को इस सदी की तीसरी दशाब्दी में स्पेन, इटली तथा आस्ट्रेलिया के बराबर भी कर लें तो वर्तमान में जापान को खाद्य के सन्दर्भ में आयात पर बीस प्रतिशत निर्भरता अधिकांशतया समाप्त हो जाए" (पृष्ठ 51) (पृष्ठ 80-84) पर बाद में डा. कोहन ने अपने इस पूर्व विचार को त्याग दिया कि जापान को चीन के साथ व्यापार करना चाहिए।

संयुक्त सर्वोच्च कमान द्वारा प्रेषित अनेक विशिष्ट अध्ययनों में जापान के उद्योगों तथा स्त्रोतों पर प्राकृतिक साधनों के अंतर्गत सामग्री सर्वोत्कृष्ट है। अधिग्रहण की अर्थव्यवस्था के लिए देखिये पैसिफिक अफेयर्स, की अंक, उदाहरण के लिए मिरियाम फार्ले "लेबर पॉलिसी इन आक्यूपाइड जापान" (जन 1947) एडयू जी ग्रेड लैंड रिफार्म इन जापान" (जून 1948), शिगेतो त्सुरु टूवार्ड इकॉनामिक स्टेबिलिटी इन जापान" (दिसम्बर, 1940) मिसफार्ले तथा श्रीमान ग्रेड ने अधिग्रहण के दौरान जापान में कार्य किया था। श्रीमान त्सुरो ने हावर्ड विश्वविद्यालय मे शिक्षा प्राप्त की तथा वह 1947 के समाजवादी श्वेत पत्र का प्रतिष्ठित अर्थशास्त्री था तथा वह वाणिज्य के टोक्यो विश्वविद्यालय मे अर्थशास्त्र का प्रोफेसर हैं।

के नाटक में उचित स्थान, उत्पादन, आयात निर्यात तथा नकद जमा पूंजी के साथ एक उचित जीवन-निर्वाह की व्यवस्था परक कारकों से फलित आनन्द को प्राप्त करना चाहेंगे। जापानी स्कॉट तथा अंग्रेजों से अधिक बेवकूफ नहीं हैं। वे अपनी अपनी शान-शौकत पसंद करते हैं,किन्तु उतना ही उन्हें अपना दैनिक जीवन भी पसंद है। जापानी अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में ऊंचा स्थान प्राप्त करने के लिए उन सुविधाओं का परित्याग नहीं करेंगे, जो उनके दैनिक जीवन के लिए आवश्यक हैं। जापान प्रभावशाली कार्यों का दायित्व भारत, इंडोनेशिया, ईरान तथा अन्य एशियाई देशों के लिए छोड़ देना तथा स्वयं अपना सारा ध्यान आर्थिक सम्पन्नता की ओर केन्द्रित करेगा।

जापान विश्व के अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में अधिक क्षमता के साथ पुनर्प्रवेश अमेरिका के साथ अपने संबंधों को बनाए रख कर ही कर सकता है। जापान को इस बात की आकांक्षा हो सकती है कि वह श्रेष्ठ ढंग से स्वतन्त्र राष्ट्र-व्यवस्था का सदस्य बन सकेगा, एक बार फिर वह स्वयं में शक्तिशाली राष्ट्र बन जायेगा, तथा स्वतंत्र विश्व के आर्थिक कल्याण तथा भौगोलिक सुरक्षा के लिए सकारात्मक योगदान कर सकेगा। दूसरी तरफ, जापान अमेरिका की अदूरदर्शी टैरिफ नीतियों अथवा बुद्धिहीन आर्थिक सहायता कार्यक्रमों के कारण असह्य आर्थिक संकट में पड़ सकता था। ऐसी स्थिति में जापान के नेता विभिन्न राष्ट्रों के मध्य शक्ति-राजनीति का खेल खेलने का प्रयास करते, क्योंकि इसके अतिरिक्त कोई अन्य राजनीतिक विकल्प उनके सम्मुख अवशिष्ट नहीं रहता। इनमें से कोई भी विकल्प तात्कालिक रूप से जापान के सम्मुख उपस्थित नहीं था।

संयम का शासन—

डाइट तथा मन्त्रीमंडल का शासन जिन नीतियों पर आधारित था, वे जापानियों की कल्पना से कहीं अधिक संकुचित थीं। वाम तथा दक्षिण पंथ के छोटे समूह समय-समय पर ऐसा प्रकट करते थे कि वे अपने घरेलू अथवा सुरक्षा-व्यवस्था में उग्र परिवर्तन करने के लिए तत्पर थे। किन्तु ऐसा किया नहीं गया था। इसके विपरीत जापान के मुख्य दलों ने जापानी लोगों के गम्भीर हितों को संयत रूप में अभिव्यक्त किया जैसा कि बाद में प्रशासकों व्यापारियों, श्रम-अधिकारियों, बुद्धिजीवी वर्ग तथा कुछ पुनरुदित सुरक्षा-अधिकारियों के परस्पर संयोग से स्पष्ट होता है[6]।

अधिकरण के अंतिम वर्ष तथा संधि के बाद का काल अत्यधिक संयम के कारण उल्लेखनीय काल था। योशिदा-मन्त्रीमण्डल न केवल योशिदा के व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करता था, अपितु वह पूरे जापान की राष्ट्रीय प्रवृत्ति का प्रतीक भी था। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में जापानियों ने अत्यधिक प्रशंसनीय कार्यों का ही समर्थन किया। उन्होंने बहुत कम नीति-संबंधी घोषणाएं कीं। उन्होंने किसी एक प्रतिवादीपक्ष का समर्थन नहीं किया तथा विश्व को यथारूप स्वीकार किया। यद्यपि डाइट के साथ हुए सुरक्षा-समझौते की पर्याप्त

6—18 वां परिशिष्ट प्रधानमन्त्रियों की क्रमवार सूची प्रस्तुत करता जिसमें अधिग्रहण तथा उनके मन्त्रीमण्डलों की तारीख तथा युद्धोत्तरकाल में मन्त्रीमण्डल का सम्पूर्ण विवरण है। इस प्रमाण का लेखक अधिग्रहण के प्रथम दो वर्षों से सम्बन्धित सामग्री के प्रति आभार प्रकट करता है जो उसने रोबर्ट ब्रेडन तथा आरडव बर्क्स द्वारा संपादित रचना से ली जिसके सहयोगी जॉन एलन डोनाल्ड डोजेन, गोर्डन बिष, तथा ईटी स्वेन थे। रचना का नाम जापान टू इअर्स आफ्टर, वाशिंगटन : स्कूल ऑफ एडवान्स इंटरनेशनल स्टडीज 1947 (टंकित प्रतिलिपि), प्रोफेसर एन. ए. लिन्दबर्ग के निर्देशन में एक सेमीनार प्रोजेक्ट।

कट आलोचना हुई, तथापि इस बारे में प्रायः सभी जापानी एकमत थे कि जापानी किसी इस प्रकार के विवादों को मोल लेने की स्थिति में नहीं थे, जिनमें उनके शक्तिशाली मित्र सम्मिलित थे तथा जिनसे वे खतरनाक शत्रु बन सकते थे अथवा जिससे जापान की जमा-पूंजी को खतरा उत्पन्न हो सकता था। उदाहरण के लिए समाजवादियों ने संधि के अंतिम रूप में कई धाराओं पर विरोध किया था, किन्तु उन्होंने अपने विरोध को डाइट में प्रचार का साधन नहीं बनाया तथा न ही उसे देश के लिए गम्भीर राजनीतिक संकट के रूप में प्रस्तुत किया।

डाइट तथा परिषद्—

शिन केम्पो के अन्तर्गत (देखिये पृष्ठ 417–480) डाइट के सभी सदस्य निर्वाचित होने वाले थे। यह राज्य की सर्वोच्च शक्ति-संस्था के रूप में कार्य करने वाली थी तथा राष्ट्र की एकमात्र विधि-निर्मात्री संस्था थी तथा इस प्रकार यह सम्राट् से छीनी गई शक्तियों की कानूनी उत्तराधिकारिणी थी। (नवीन संविधान का चौथा अध्याय, विशेषतया 41 अनुच्छेद) प्रतिनिधि सदन के सदस्यों का कार्यकाल चार वर्ष है बशर्ते सदन को पहले भंग न किया जाए। उच्च सदन (सांगी-इन) के सदस्य 6 वर्ष कार्य करते हैं तथा हर तीसरे वर्ष आधे सदस्यों का निर्वाचन होता है। दोनों सदन मिल कर डाइट कहलाते हैं (कोक्कई) तथा उनका वर्ष में एक बार अधिवेशन बुलाना अनिवार्य था। आवश्यकता पड़ने पर असाधारण अधिवेशन भी बुलाए जाते हैं। प्रतिनिधि सदन के भंग किये जाने पर चालीस दिन के भीतर चुनाव होने चाहिए तथा चुनाव के एक माह के अन्दर नई डाइट को आमन्त्रित करना चाहिये[7]।

नवीन संसदीय व्यवस्था में उच्च सदन पूर्णतः निम्न सदन के पराधीन है। कोई भी विधेयक दोनों सदनों द्वारा पारित होने पर कानून बनता है। यदि प्रस्तावित विधेयक निम्न सदन द्वारा पारित कर दिया जाए, किन्तु उच्च सदन द्वारा अस्वीकार कर दिया जाए तथा यदि वह निम्न सदन द्वारा दुबारा दो तिहाई बहुमत से पारित कर दिया जाये तो वहकानून बन जाता है[8]।

7—1947 के चुनाव तो जापान की युद्धोत्तर राजनीति की अत्यधिक महत्वपूर्ण घटना थी तथा जिसके कुछ समय पश्चात अधिग्रहण समाप्त हो गया का अध्ययन, सुदूर पूर्व क्षेत्र के अध्ययन के लिए स्थापित विभाग द्वारा (डी. आर. एफ) विस्तार से किया गया, आफिस ऑफ इन्टेलिजेंस रिसर्च, विदेश विभाग, एन एनालिसिस ऑफ दि 1947 जापानीज हाउस ऑफ रिप्रेजेनटेटिव इलैक्शन (ओ आ र रिपोर्ट संख्या 4310) वाशिंगटन, 1 सितम्बर, 1947 तथा दि 1947 जापानीज हाउस ऑफ काउन्सिलर्स इलेक्शन (ओ आइ आर रिपोर्ट संख्या 4334) वाशिंगटन 15 जनवरी, 1948 (दोनों नियंत्रित, 14 मार्च में अवर्गीकृत) ओ, आर. आर. ने निम्नलिखित प्रवृत्तियां दर्शायी (1) पहले जिसे उत्साहपूर्ण ढंग से मतदान प्रक्रिया में भाग लेने के स्थान पर मतदाताओं की अनुपस्थिति में उल्लेखनीय बढोत्तरी हुई, (2) नवीन तथापि नहीं जांचा गया नेतृत्व (·) साम्यवादी प्रभाव का पतन तथा (4) जापान के इतिहास में प्रथम समाजवादी नेतृत्व का उदय।

8—इस पुस्तक के तीन लेखकों में से दो में इस प्रश्न पर मतभेद है जबकि डा० दर्जांग तटस्थ हैं। प्रोफेसर बर्क्स का विचार है कि जापान की संसदीय व्यवस्था पूर्ण न होते हुए भी हमारे युग में जापान के प्रजातन्त्र का ढांचा प्रस्तुत करती है। प्रोफेसर लिनबर्गर का विचार है कि उच्च सदन अभी भी अस्पष्ट है क्योंकि सामाजिक मनोवैज्ञानिक तथा संवैधानिक दृष्टि से जापान अभी भी साम्राज्यिक राज्य है। प्रोफेसर लिनबर्गर का यह विचार है कि यदि उच्च सदन इतना शक्तिहीन है कि उसके द्वारा निषिद्ध विधेयक प्रतिनिधि

नवीन संविधान का पांचवा अध्याय (विशेषतया अनुच्छेद 66) कार्यपालिका की शक्ति को व्यवस्थापिका के अधीन करता है। इस अध्याय में मन्त्रिमण्डल की व्यवस्था की गई है। (नाईकाकू)। नाईकाकू में प्रधानमन्त्री सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति : व्यावहारिक अनुभव ने प्रधानमन्त्री को अमेरिकी तथा जापानी संविधान-निर्माताओं की आकांक्षाओं से कहीं अधिक शक्तिशाली बना दिया है।

आत्मसमर्पण से पूर्व जो अर्द्ध कार्यपालिका संस्थाएं राजपद को घेरे रहती थीं, उनके उन्मूलन ने मन्त्रीमंडल तथा प्रधानमंत्री को पूर्णतः स्पष्ट कर दिया है। यद्यपि अब प्रधानमंत्री अपने युद्धकालीन पूर्ववर्ती डाइट के विरुद्ध अपनी शक्तियों के संदर्भ में कम शक्तिशाली है, तथापि वह किसी भी अन्य कार्यपालिका-अधिकारी से स्वतन्त्र होने के कारण पर्याप्त शक्तिशाली बन जाता है। कानूनी दृष्टि से सम्राट् की सम्पूर्ण शक्तियां समाप्त कर दी गई हैं, तथापि सम्राट् की शक्तियां स्पष्टतया क्या होंगी, यह जापानियों के व्यवहार पर निर्भर करता है कि संवैधानिक तथा कानूनी प्रावधानों के अभाव में उनका प्रयोग कैसे किया जा सकता है।

एक निरंतर बने रहने वाली सुदृढ कार्यपालिका के अभाव की स्थिति फ्रांस के तृतीय गणराज्य से ली गई थी तथा यह प्राचीन जापानी व्यवस्था के पूर्णतः विपरीत है। अधिग्रहण-संविधान के अन्तर्गत प्रधानमन्त्री तथा मन्त्रीमण्डल दोनों डाइट के प्रति उत्तरदायी थे। प्रधानमन्त्री की नियुक्ति डाइट की स्वीकृति से होती थी तथा डाइट की स्वीकृति से वह अन्य मन्त्रियों की नियुक्ति करता था। योशिदा के काल में जो परंपराएं विकसित की गईं, उनके आधार पर योशिदा ने मन्त्रीमण्डल में अपनी स्पष्ट स्थिति स्थापित कर ली। उसने उसे संकट काल में, जब अमेरिका के साथ शांति-संधि पर बातचीत हो रही थी, विदेश-विभाग को सर्वदा अपने पास रखा।

प्रधानमन्त्री के बारे में संवैधानिक व्यवस्था है कि यदि प्रतिनिधि सभा अविश्वास का प्रस्ताव पारित कर दे तो या तो संपूर्ण मन्त्रिमण्डल त्यागपत्र दे दे या प्रतिनिधि सभा को भंग कर दिया जाए। एक बार भंग किए जाने पर, जैसा कि पहले बताया जा चुका है, नयी प्रतिनिधि सभा का निर्वाचन होता है तथा उसके बाद नवीन मन्त्रीमण्डल नियुक्त किया जाता है।

युद्ध-पूर्व के मन्त्रीमण्डल सर्वदा साम्राज्यिक इच्छा की व्याख्या करने वाले होते थे। वे प्रायः सैनिक सेवाओं के प्रति उत्तरदायी होते थे तथा कभी-कभी के प्रति उत्तरदायी थे[9]

सदन द्वारा दो तिहाई बहुमत से पारित किये जाने पर उच्च सदन को हमेशा के लिए दबा देता है तो इससे तो मेयजी संविधान के अंतर्गत प्रस्तावित पियर्स सदन को बनाए रखना अधिक उचित होता जिसमें, व्यवस्था कार्य, बौद्धिक तथा सांस्कृतिक संगठन का प्रतिनिधित्व रखा जाता। ये नवीन समूह पुराने किन्तु बुद्धिक्षय कुलीन तन्त्रीय उच्च सदन में जोड़े जा सकते तथा इस प्रकार राजतन्त्रीय व्यवस्था के रूप में जापान पर्याप्त सुरक्षित रहता। इससे प्रोफेसर बर्क का मतभेद है। लेखक अब इस विषय को भविष्य तथा पाठकों के ऊपर छोड़ते हैं।

9—पॉल एम० ए० लिनबर्गर गवर्नमेंट इन जापान, पृष्ठ 584, फ्रिज मोर्स्टिन मार्क्स, द्वारा सम्पादित फोरेन गवर्नमेंट्स दि डाइनेमिक्स ऑफ पालिटिक्स एब्रोड, न्यूयोर्क 1949। पुरानी तथा नवीन जापानी सरकारों को परस्पर माप दिखाने वाला चार्ट पृष्ठ 578 पर मोर्सटीन मार्क्स अंक से दिया गया है।

किन्तु उन प्रतियोगी संस्थाओं को, जो डाइट तथा मन्त्रीमण्डल के परस्पर संवन्धों को प्रभावित करती थी, समाप्त कर दिया गया। अर्द्ध स्वतन्त्र युद्ध तथा जलसेना-विभाग को समाप्त कर दिया गया। पुराना गृह-मन्त्रालय, (नाईमुशो) जो सम्पूर्ण स्थानीय सरकारों पर केन्द्रीय सरकार की ओर से नियंत्रण करता था, उसको भी समाप्त कर दिया गया तथा अव अवशिष्ट अनुदारवादी तथा सैनिक उग्रवादी तत्व दृष्टिगोचर नहीं होते हैं।

1947 से जव नवीन संविधान लागू हुआ तव से 1952 में अधिकरण की समाप्ति तक, जो नवीन प्रवृत्तियां पनपीं, वे जापानी कार्यपालिक के दो उल्लेखनीय प्रतिमान प्रस्तुत करती थी। मन्त्रीमण्डल ने गैर प्रशापनिक व्यूरो, कार्यालयों तथा वोर्डों व प्रशासनिक विभागों का विकास किया। जापानियों ने. जो अनुकरण करने में प्रवीण हैं, पश्चिमी प्रजातन्त्र के नमूने पर संस्थाओं का विकास किया तथा साथ ही उनके समानान्तर स्वतंन्त्र संस्थाएं स्थापित करने में तत्परता दिखलाई (उदाहरण के लिए देखिये चार्ट 27 जो सार्वजनिक निर्माण के नवीन मन्त्रालय द्वारा वनाया गया)। इस विकेन्द्रीकरण के साथ-साथ प्रवानमन्त्री की ओर शक्ति के विकेन्द्रीकरण की प्रवृत्ति भी विकसित हुई[10]।

जापान में अधिकरण के पश्चात तक अमेरिका के सैनिक अड्डों की उपस्थिति तथा यह तथ्य कि जापान को अविकांश वित्तीय तथा आर्थिक निर्णयों के लिए अमेरिकन सुरक्षा-व्यवस्था के निकट सहयोग की आवश्यकता थी, इनका अर्थ यह था कि अमेरिकियों की ओर से जापानियों दवाव ऐसे उत्तरदायी समूह के लिए था जिनसे वे सम्पर्क स्थापित कर सकें। एक वहुमुखी तथा अनुत्तरदायी मन्त्रीमण्डल अमेरिका मे सौदेवाजी करने में सफल नहीं हो पाता। इस वात की संभावनाएं पर्याप्त हैं कि अमेरिका आर्थिक तथा सुरथा सहायता अत्यधिक जटिल, कम कार्यकुशल तथा द्विपक्षी अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक विचार-विमर्श करने वाली संस्था के विपरीत तत्परता से स्वीकार करने वालीसंस्थाओं तथा दुर्वल सैनिक स्थिति वाले शासन को देना पसंद करेगा। अतः निकट भविष्य मे अमेरिकी सेना तथा विदेश-विभाग तत्कालीन रूप से जापानी नीति का निर्धारण करने वाले मुख्य तत्व रहेंगे। इस प्रकार के संवन्ध में एक पक्ष पर उत्तरदायित्व का सकेंद्रण होने तथा भार वढ़ने की संभावनाएं काफी वढ जाती हैं।

वित्त (जैसेई) एक सम्पूर्ण उपभाग (अध्याय 7) का विसय है। इस प्रकार प्रारूप निर्माता ने स्पष्टतया उन लोगों की सरकार में महत्ता को अनुभव कर लिया था जिनका वित्त पर नियन्त्रण था। यद्यपि मन्त्रीमण्डल वजट तैयार करता है तथा उसको प्रस्तुत कर क्रियान्वित करता है तथापि वह राष्ट्रीय वित्त, सार्वजनिक व्यय, राजस्व तथा ऋण के मामलों पर डाइट तथा जन सामान्य को रिपोर्ट प्रस्तुत करता है। यहां निम्न सदन की स्थिति (अध्याय 5 अनुच्छेद 66) उच्च सदन से अच्छी है। वजट निम्न सदन में प्रस्तुत

10—न्याय-मन्त्रालय का पुराना ढांचा वदलकर न्यायालय के प्रशासनिक ढाचे को अमेरिकी तरीके के अटार्नी जनरल का कार्यालय वना लिया गया (हो मुचो, (वाद में इस शीर्षक को त्याग दिया था) बनाए गए। दो नवीन विभाग युद्धोत्तर काल में आर्थिक पुनर्निर्माण के लिए निर्मित किये गये जैसे पूर्ण श्रम-मंत्रालय (रादोमो), 1 सितम्बर 1947 में स्थापित किए गए, तथा एक पुनर्निर्माण मत्रालय (के से तशुको), 10 जुलाई, 1948। देखिए पृष्ठ 502 पुनर्निर्माण मन्त्रालय का संगठन।

किया जाता है तथा यदि दोनों सदनों की संयुक्त समिति में बजट पर समझौता नहीं हो सकता है तो निम्न सदन का निर्णय ही डाइट का का निर्णय माना जाता है।

न्यायपालिका—

किसी भी सरकार में कानूनी लाभ तथा वृहत्तर प्रजातन्त्र के निर्माण के लिए न्यायपालिका अन्तिम चरण होती है। नवीन संविधान में (अध्याय 6 विशेषतया अनुच्छेद 76) न्यायपालिका पर से प्रशासनिक नियन्त्रण को समाप्त कर दिया गया। न्यायिक शक्ति सर्वोच्च न्यायालय में (सैको से बांशो) तथा उसके अधीन न्यायालयों में निहित की गई है। सम्राट् मन्त्रीमण्डल के परामर्श पर मुख्य न्यायाधीश को नियुक्त करता है, बाकी न्यायाधीशों की नियुक्ति प्रत्यक्षतः मन्त्रीमण्डल के द्वारा होती है। अमेरिकी संघीय व्यवस्था के विपरीत जापानी संविधान ने इस प्रकार की सभी नियुक्तियां प्रथम निर्वाचन के दौरान की, तत्पश्चात् प्रत्येक दस वर्ष बाद समीक्षा करने का अधिकार दिया[11]।

प्रशासनिक सेवाएं तथा स्थानीय सरकार—

प्रशासनिक सेवाएं अथवा विधि के अन्तर्गत काम करने वाले सार्वजनिक सेवकों की व्यवस्था, जिन्हें कानूनी अधिकार प्राप्त हों, का विचार युद्ध पूर्व जापान के लिए विदेशी था। युद्धोत्तर कालीन संविधान, जो व्यापक स्तर पर लोगों का चार्टर था, प्रशासनिक सेवाओं की वैधानिक सीमाओं की व्याख्या नहीं करता था। यह सत्य है कि संवैधानिक भाषा में सरकारी अधिकारी सम्पूर्ण समाज के सेवक बन गए (तृतीय अध्याय अनुच्छेद15) किसी भी सार्वजनिक अधिकारी द्वारा पीड़ित किये जाने जापानी नागरिकों को अपील करने का अधिकार दे दिया गया है (अनुच्छेद 17) तथा मन्त्रीमण्डल द्वारा प्रशासनिक सेवाओं का संचालन विधि द्वारा स्थापित कानूनी ढंग से होता है (अध्याय 5 अनुच्छेद 73)[12] इन प्रावधानों के अतिरिक्त प्रशासनिक सेवाओं में सुधार का प्रथम चरण, अमेरिका के अधिकारी-सुधार-आयोग द्वारा उच्च स्तरीय जांच, राष्ट्रीय सार्वजनिक सेवा-कानून के निर्माण तथा अमेरिकी नमूने पर आधारित अर्द्ध स्वतन्त्र राष्ट्रीय अधिकारी-आयोग की स्थापना के बाद प्रारम्भ हुआ। कैनर्यो व्यवस्था, जो अत्यधिक शक्तिसम्पन्न सरकार में प्रभावशाली ढंग से कार्य करती थी, ने स्वयं नवीन संविधान का अनुसरण नहीं किया। इस बारे में गम्भीर संदेह व्यक्त किये जाते हैं कि राज्य के महत्वपूर्ण अंगों पर से कैनर्यो का नियन्त्रण समाप्त हो गया हैं। अतः उस नियन्त्रण को तोड़ने के प्रयासों का मनोरंजक उदाहरण नीचे दिया जा रहा है।

11—मैं प्रोफेसर रोबर्ट ई वार्ट का आभारी हूं कि उन्होंने यह बताया कि जनमत-संग्रह पूर्णतः अमेरिकी उत्पत्ति का है। लोक प्रकाशन के विशेषज्ञ इसे "मिसोरी व्यवस्था" के नाम से पुकारते हैं।

12—इन प्रावधानों में एक अवधारणा को एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुदित करने की कठिनाइयां दर्शायी गई हैं। यद्यपि अमेरिकियों ने नागरिक सेना पद का प्रयोग (अनुच्छेद 73) नवीन संविधान के अंग्रेजी प्रारूप में प्रयुक्त किया है। किन्तु जापानी तुलनात्मक रूप से कम अमूर्त तथा उल्लेखनीय रूप में वैयक्तिक हैं क्योंकि उनके द्वारा प्रयुक्त कानरी नी कानमुरु जिपू का शाब्दिक अर्थ सरकारी अधिकारियों के कार्य है अन्य प्रावधानों में कोमिन शब्द के स्थान पर "सार्वजनिक अधिकारी" पद का प्रयोग किया (...

चार्ट 27—निर्माण मन्त्रालय (केन्सेतसुशो) 1944

अमेरिकी राज्यों में प्रचलित स्वायत्त शासन के आदर्श पर स्थानीय स्तर पर स्वशासी संस्थाओं की स्थापना, युद्ध पूर्व जापान में किए गये परिवर्तनों में से सर्वाधिक महत्वपूर्ण था। केन्द्रीय सत्ता ने प्रीफेक्टों के पृथक्कीकरण का प्रतीक प्राचीन गृह मन्त्रालय (नाईमुशो) का 31 दिसम्बर 1947 को समाप्त कर दिया गया। तथा इस प्रकार अत्याधिक केन्द्रीकृत पुलिस-राज्य की व्यवस्था को स्वशासी विकेन्द्रित समूहों में परिवर्तित कर दिया गया, तथापि अत्यधिक उत्साही संविधान-सुधारक भी जापान जैसे छोटे तथा सुगठित राज्य के लिए संघीयात्मक व्यस्था का प्रतिपादन नहीं कर सके[13]। इस प्रकार जापान आज भी 1947 के संविधान के अन्तर्गत ब्रिटेन के एकात्मक संविधान से साम्यता रखता है, न कि अमेरिका के संघीय संविधान से। 1947 के संविधान तथा (अध्याय 8) पूरक स्थानीय स्वायत्त शासी कानून (चिहो जिन्दी हो 17 अप्रेल 1947) राष्ट्रीय डाइट ने यह व्यवस्था की है कि (1) स्थानीय सार्वजनिक संस्थाओं की अपनी विचार-विमर्श करने वाली सभाएं होंगी, (2) मुख्य स्थानीय कार्यपालिका-सभा-सदस्यों तथा अधिकारियों के चुनाव होंगे तथा (3) स्थानीय मामलों की सम्पत्ति तथा प्रशासन की व्यवस्था के लिए सामान्य नियम होंगे।

नई बोतलों में पुरानी शराब—

संवैधानिक स्तर पर जापान का सम्राट्, युद्धोपरांत ब्रिटिश सम्राट् के समान हो गया। कुलीन वर्ग को समाप्त कर दिया गया। सम्राट् के इर्दगिर्द अन्य प्रभावशाली वर्गों को कानूनी दृष्टि से समाप्त कर दिया गया। किन्तु यह महान फिर भी प्रश्न बना रहा कि पहले सम्राट् के नाम पर जो लोग कार्य करते थे, वे अब ऐसा किन संस्थाओं के माध्यम से करेंगे।

इस बात का संकट पर्याप्त गम्भीर था कि प्रशासनिकतन्त्र (बर्यांत्सु) इस शून्य को भरने का प्रयास करेगा। जापान में प्रशासनिकतन्त्र को नियन्त्रित करने का विचार आंशिक रूप से इसलिए भी उत्पन्न हुआ, क्योंकि जापानी प्रारम्भ से ही प्रशासन में कानून से अधिक व्यक्ति पर निर्भर रहे थे। दुर्भाग्यवश यह विवाद अंशत: स्वयं अधिकरण के स्वरूप के कारण उत्पन्न हुआ। सरकार प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष निर्देशों के माध्यम से आत्मनिर्भर प्रशासनिक अधिकारी अथवा साहसी विधायकों को प्रशिक्षित करने का अपर्याप्त माध्यम है। अन्ततः विवाद का आंशिक कारण सरकार के बढ़ते हुए नियन्त्रण के साथ वैयक्तिक स्वतन्त्रता से संबन्धित विश्वव्यापी विवाद है। जापान के एक प्रमुख व्यावसायिक समाचार-पत्र ने अपने संपादकीय में 'प्रशासन तथा सरकारी तन्त्र' के शीर्षक से इस विषय पर चर्चा की थी। दोनों पर्याप्त भिन्न हैं। यदि एक को समाप्त कर अथवा उसमें सुधार कर दूसरे की स्थापना करते हैं तो प्रजातन्त्र की स्थापना होती है। समाजवादी नीति, जो वर्तमान संकट में अपरि-

13—इनमें से कुछ सुझाव पर्याप्त व्यापक स्तर पर थे। जिजी शिंपो 18 जनवरी 1946 में यह रिपोर्ट किया कि मातसुमोतो जिचिरो 'समानता स्थापित" करने वाले आन्दोलन का नेता था जो जापानी ... जाति बहिष्कृत लोगों को प्रतिपादित जापानी गणराज्यों में समानता प्रदान करवाना चाहता था। उसके ... चार गणराज्य क्युशु, कनसाई, कांतो, तोहोकू, पूर्वी एशियाई राष्ट्रों के गणराज्य में इकाई बन ...तः वे राष्ट्रों के विश्व संघ के सदस्य बनते।

हार्य है, के लिए अनेक सरकारी एजेंसियों की स्थापना तथा उनके अधिकारों में विस्तार की आवश्यता होगी[14]।

अतः यह मात्र संयोग नहीं था कि जब जापानियों ने प्रशासनिक सेवाओं के परंपरागत विशेषाधिकारों को नियंत्रित करने का प्रयास किया तो समाजवादी कातायामा-सरकार संकट की स्थिति में पहुंच गई तथा समाजवादी प्रशासनिक सेवाओं को आधुनिक तथा परंपरागत बनाने दोनों अर्थों में नियन्त्रित करने में असमर्थ रहे। कातायामा के साथ उसके सहयोगियों को, जिसमें मित्रराज्यों के अधिकारी भी सम्मिलित थे, पर्याप्त निराशा हुइ।

1945 के प्रारम्भ में ही संयुक्त मित्र राज्यों की कमान ने प्रशासनिक सेवाओं व सुधार की समस्या पर विचार करने प्रारम्भ कर लिया था, किन्तु अन्य अधिक आवश्यक कार्यों के कारण संपूर्ण जापानी नौकरशाही का पुनरावलोकन कुछ समय के लिए स्थगित करना पड़ा। फरवरी 1946 में शक्तिशाली जापानी केबीनेट ब्यूरो ने संयुक्त सर्वोच्च कमान के सम्मुख प्रशासनिक सेवाओं के सुधार का प्रस्ताव रखा। ब्यूरो ने स्पष्टतया यह स्वीकार किया कि इस योजना में कोई मूलभूत परिवर्तन नहीं किए गये थे, किन्तु मूलभूत परिवर्तनों की प्रस्तावना अवश्य थी। वस्तुतः इस योजना में मात्र अत्यधिक जटिल वेतन-मानों को तथा पदों को सरलीकृत कर दिया गया था। 1946 की अप्रेल में संयुक्त सर्वोच्च कमान के अधीर अधिकारी एक बार फिर प्रशासनिक सेवाओं के सुधार के लिए निर्देश जारी करने की संभावना पर विचार कर रहे थे। इस हालत में जापानी सरकार ने इस प्रस्ताव को अत्यधिक समर्थन प्रदान किया।

14 मई, 1946 को जापानी मन्त्रीमण्डल में एक विशिष्ट संकट उत्पन्न हुआ। यह विवाद वित्त-मन्त्री और सर्वोच्च संयुक्त कमान के अधिकारियों के मध्य चला। वित्त-मन्त्री का अनौपचारिक आग्रह था कि वे जापानी वेतन तथा भत्ता-व्यवस्था के पुनरावलोकन के लिए अमेरिकी विशेषज्ञों का आयोग स्थापित करें। यद्यपि बाद में वित्तमन्त्री ने विधेयक ब्यूरो के अध्यक्ष से अपने आग्रह को स्पष्ट करने की असमार्थता के बारे में क्षमा याचना की। तदन्तर इस विषय में सहमति प्राप्त की गई कि मन्त्री-मण्डल औपचारिक रूप से अमरिकी विशेषज्ञों की सहायता के लिए आग्रह करे। संयुक्त सर्वोच्च कमान ने इस आग्रह के प्रति तत्परता दिखलाई तथा अमेरिका के अधिकारियों का परामर्शदाता-मिशन नवम्बर 1946 को जापान भेजा गया[15]। इस मिशन ने संयुक्त सर्वोच्च कमान के अधिकारियों के किनट सहयोग से एक राष्ट्रीय सार्वजनिक सेवा-विधेयक बनाया तथा इसे अंतरिम रिपोर्ट के रूप में सर्वोच्च कमान के माध्यम से जुलाई, 1947 में जापानी सरकार को प्रस्तुत किया। सारांश में इस आयोग ने एक केन्द्रीय अधिकारी

14—निपोन के जाई शिम्बुन, (दि जापान इकोनोमिस्ट) 5 जून, 1946।

15—संयुक्त राज्य अमेरिका तथा कनाडा की नागरिक सेवा सभा के अध्यक्ष श्रीमान बलने हूवर, नियोजन, वर्गीकरण तथा प्रशासनिक अधिकारियों के विशेषज्ञों के समूह का अध्यक्ष बनाया गया। सयुक्त सर्वोच्च कमान तथा मिशन की तैयारियों का विवरण पालिटिकल रि आरियन्टेशन पूर्वोक्त अंक प्रथम, खण्ड हात, पृष्ठ 246–259 में दिया गया है। और देखिए खण्ड दो, परिशिष्ट बी 8 बी कोरसपोडेंस फ्रॉम जापानी गवर्नमेंट रिगार्डिंग रिक्वेस्ट फारसिविल सर्विस मिशन पृष्ठ 579–580।

ऐजेंसी की स्थापना तथा योग्यता के आधार पर अधिक प्रजातन्त्रीय स्वरूप वाली सेवाओं को संगठित करने का परामर्श दिया।

नवीन संविधान के अन्तर्गत डाइट के प्रथम अधिवेशन के उद्घाटन भाषण में समाजवादी प्रधानमन्त्री कात्यायामा ने यह प्रतिज्ञा की कि

मेरे विचार में सरकार को प्रशासनिक ढाँचे के पुनर्गठन तथा प्रशासनिक सेवा में सुधार के प्रयास करने चाहिये। इस पुनर्गठन का अनिवार्य उद्देश्य नौकरशाही-अवधारणा की समाप्ति होनी चाहिये।

प्रजातन्त्रीय विरोध का प्रतिनिधित्व करने वाले कितामुरा ने भी यही विचार व्यक्त किया। उसने कहा कि अनुपात की दृष्टि से जापान में विश्व के किसी भी देश से ज्यादा सरकारी अधिकारी पाये जाते हैं। उसने बताया कि जापान में सरकारी अधिकारी की संख्या 25 लाख थी तथा वे अपने परिवार के लोगों के समेत 1,25 करोड़ थे। इस प्रकार 5 में से एक जापानी सरकारी अधिकारी था किमुरा कोहुई ने उदारवादियों की ओर से बोलते हुए कहा प्रशासनिक तन्त्र नियन्त्रित अर्थव्यवस्था का परिणाम होता है तथा तथा उन्मुक्त अर्थ-व्यवस्था में विशाल प्रशाशनिक वर्ग की कोई आवश्यकता नहीं होती है [16]।

अल्प तथा बहुमत वाले दलों में प्रकट सहमति के बावजूद यद्यपि राष्ट्रीय सार्वजनिक सेवा-अधिनियम (कोका को मुइन हो) को अक्टूबर को पारित किया गया और 1 जुलाई, 1948 से क्रियान्वित किया गया, तो भी इसमें पर्याप्त कमियाँ रह गईं थीं। इसके स्वरूप में जो पर्याप्त परिश्रम के पश्चात् परामर्शदाताओं के द्वारा तैयार किया गया में पर्याप्त परिवर्तन कर दिये गये थे। इस पुनर्व्यवस्था को प्रत्यक्षत सुप्रिम कमांडर द्वारा 22 जुलाई 1948 में लिखे गए एक पत्र में प्रोत्साहित किया गया था। इस प्रकार नवनिर्मित प्रशासनिक सेवा विभाग के सरकार द्वारा स्वीकृत तथा संयुक्त कमान के द्वारा प्रेषित निर्देशों के पश्चात् भी इस दिशा में वास्तविक सुधार जापान के राष्ट्रीय अधिकारी संगठन के सुदृढ़ होने पर ही संभव था। इसके अतिरिक्त प्रशासन में सुधार एक सर्वोच्च शक्तिशाली डाइट, जो संवैधानिक तौर पर 'राज्य शक्ति था" के विकास पर भी निर्भर करता थो।

वस्तुतः जापान में संपूर्ण प्रजातन्त्रीयकरण के प्रयोग की सफलता प्रमुखतः नवीन राष्ट्रीय डाइट (को क्वाई) पर निर्भर करता है जो पूर्व साम्राज्यिक डाइट की उत्तराधिकारिणी है। नवीन संविधान के अन्तर्गत इसको उत्तरदायित्व इस आधार पर सौंप दिये गए कि इसे प्रीवी परिषद्, मन्त्रीमण्डल, साम्राज्यि गृह मन्त्रालय, वरिष्ठ राजनेताओं, सेना-अधिकारियों तथा साम्राज्यिक सम्मेलनों द्वारा प्रयुक्त किये जाने वाले अधिकार दिये गये थे। युद्धोतर काल में इसकी सदस्यता संभवत उतनी खराब नहीं थी, जितनी एक संपादकीय द्वारा बतायी गई :–

16—दि ऑफिशियल गजट, अतिरिक्त संख्या 8 (बुधवार दो जुलाई 1947 पृष्ठ 5, अतिरिक्त संख्या नो (बृहस्पतिवार 3 जुलाई, 1947) पृष्ठ 13 अतिरिक्त संख्या 27 (शुक्रवार 27 अगस्त, 1947) पृष्ठ 13।

.........नवीन डाइट पुरानी डाइट से अधिक भिन्न रहीं है तथा हम यह कह सकते हैं कि यदि सामने दरवाजे पर खड़े उग्र सैनिकवादी पुरानी डाइट रूपी में भेड़िया अब हमारे पीछे के दरवाजे पर हमारी प्रतिक्षा कर रहा है" ।[17]

निश्चय ही 1947 में डाइट के प्रथम अधिवेशन का उद्‌घाटन अपनी पूर्व संस्था से कहीं अधिक आशाओं के साथ हुआ था। जनता को बिना किसी सरकारी आदेश के प्रवेश दिया था। (मात्र 250 स्थानों की व्यवस्था थी) डाइट के भवन की सारी सफाई करवाई गयी थी। लिफ्ट पर लगी लड़कियां गार्ड तथा द्वार रक्षक सब नियुक्त किये गये थे। किटाणु रहित करने लिये डी०डी०टी० का प्रयोग किया गया था। निम्न सदन में स्थानों की व्यवस्था दलीय आधार पर की गई थी। जापान के उदारवादी नेता ओनाकी युकिओ जिसे कम सुनाई पड़ता था, के लिए विशिष्ट स्थान की व्यवस्था सामने की गई पुरुष सदस्यों ने राष्ट्रीय डाइट की यूनीफार्म (को कूमिन फूकू) पहनीं तथा स्त्री सदस्यों ने मोमोई अथवा ढीले तथा एड़ी तक फिट होने वाले पजामें पहने जो युद्ध के दौरान अत्यधिक लोकप्रिय हो चुके थे। 23 जून, 1947 को सोमवार प्रात: 10–55 बजे दोनों सदनों के अधिकारी सदस्य, प्रधानमन्त्री तथा मन्त्रीगण, सर्वोच्च न्यायालय तथा आडिट सम्बन्ध राजकुमारों द्वारा स्थान ग्रहण करने के पश्चात् प्रतिनिधि-सदन का अध्यक्ष महा-महिम सम्राट को 11–01 बजे प्रात: गद्दी की ओर लाया और घोषणा की :–

"आज महामहिम सम्राट की उपस्थिति में डाइट के प्रथम अधिवेशन का उद्‌घाटन हो रहा है ....संविधान के अन्तर्गत डाइट, के राज्य का सर्वोच्च अंग तथा राष्ट्र की एकमात्र विधिनिमार्ण करने वाली संस्था है...........

जवाब में सम्राट ने अपनी शाही घोषणा में बताया ' भविष्य में जापान के विकास की नींव डाइट की उचित व्यवस्था पर निर्भर करेगी" ।[18]

जब नई डाइट ने कार्य करना प्रारम्भ किया तो उसे भी पुराने राजनीतिक गुटों को समाप्त करने तथा सामान्य जापानी संसदीय व्यवस्था को नवीन प्रकार से जमाने की आवश्यकता महसूस हुई। *नवीन संविधान के समानान्तर डाइट सम्बन्धी विधेयक मार्च* 1947 में बनाकर पुराने प्रतिनिधि सदन के द्वारा प्रस्तुत किया गया।

17. टोक्यो शिम्बुन, 20 जून, 1946, डाइट विधि, इतो की सदनों की विधि की उत्तराधिकारी थी को 28 अप्रेल, 1947 को 3 मई, 1947 के नवीन संविधान के साथ क्रियान्वित किया गया। इसका अंग्रेजी प्रारूप जापान इयर बुक 1946–48 परिशिष्ट, पृष्ठ 38–49 में प्राप्य है। यहां पर प्रमुख जापानी पदावलो आइको याकोता की रचना शिन कोक्काइ कोईमेतु (नवीन डाइट का स्पष्ठीकरण), टोक्यो 1947 से ली गई (तब आइके डाईट का मूल्य कलर्क था) अंग्रेजी में जस्टिम विलियम्स की रचना देखिये, "दि जापानीज डाइट दि न्यू कास्टीट्यूशन तथा पार्टी पालिटिक्स इन दि न्यू जापानिज डाईट" ये दो लेख हैं। सेन्ड एस क्यूगिले द्वारा संगठित सिपोजियम, अमेरिकन पॉलिटिकल साइस रिव्यू अंक बावन संख्या पाच (अक्टूबर 1948) संख्या 6 (दिसम्बर 1948) पृष्ठ 927–939 तथा 1163–1180 देखिये।

18. दूसरे अधिवेशन की उद्‌घाटन-घोषणा में 21 जनवरी 1948 को सम्राट् ने भुतपूर्व दरबारी भाषा के "चिन" शब्द का परित्याग किया तथा स्वयं को "हम, जापानी लोग" के सदस्य के रूप में संबोधित किया। प्रथम अधिवेशन के लिये देखिये ऑफीशियल गजट अतिरिक्त संख्या 6 (जुलाई 24,-(पृष्ठ1।

दोनों सदनों से सम्बन्धी (इतो के) विधेयकों को समाप्त कर 132 अनुच्छेद वाले डाइट विधेयक ने सदन की संरचना में मूल परिवर्तन कर दिये। सामान्य अधिवेशनों की अवधि तीन से पांच कर दी गई तथा सदनों की अवधि में वृद्धि अब सम्राट के आदेश के स्थान पर स्वयं सदनों की इच्छा पर निर्भर करती थी। डाइट के वित्तीय मामले वित्त-मन्त्रालय के नियंत्रक के नियन्त्रण में रखे गये। सदस्यों का वेतन उपमन्त्रियों के वेतन से कम नहीं हो सकता था। सदनों के बारे में शाही विधि संपूर्ण सदन की समिति, सदनों के स्थगन, सरकार को अग्रगामी रिपोर्ट तथा सरकार को प्रतिवेदन आदि के बारे में कोई व्यवस्था नहीं थी। वसके अतिरिक्त नवीन डाइट को आधुनिक विधानसभाओं को प्राप्त होने वाली सभी सुविधाएँ जैसे अलाउंस लिपिकों की सहायता, पुस्तकालय, विधेयकों के के प्रारूप-निर्माण में सहायता तथा शोध-सहायता-प्राप्त थीं।

नवीन डाइट विधि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रावधान (अध्याय पांच विशेषतया अनुच्छेद 42 के अन्तर्गत सदन समितियों की स्थापना की जो अमेरिका में 1946 के विधान-सभा-पुनर्गठन-अधिनियम के आधार पर को गई थी। डाइट वस्तुतः सरकारी शक्ति का वाहन बने, यह इस पर निर्भर होगा कि ये स्थाई समितियां प्रशासन के विभिन्न क्षेत्रों में किस प्रकार कार्य करती हैं।[19] विधि-निर्माण में जनता के योगदान के लिए

19. प्रत्येक सदन की 21 समितियां निम्न थी, साथ में निम्न सदन की समितियों की सदस्य संख्या भी दी गई है।

1, विदेश विभाग (गेमु लिकाई (20)
2. सार्वजनिक प्रशासन तथा स्थानीय सरकार चिपान ओयोजी चिहो सेइदो लिकाई (30)
3. राष्ट्रीय भूमि नियोजन (कोकुदो केईकाकू लिकाई) (30)
4. न्यायायिक (सिहो लिकाई 25
5. शिक्षा (बुन्क्यो लिकाई) (25)
6. सांस्कृतिक कार्यक्रम (बुंक लिकाई) 30
7. कल्याण (कोसेई लिकाई) (30)
8. श्रम (रोजे लिकाई) (30)
9. कृषि तथा जंगलात (नोरिन लिकाई) (30)
10. मत्स्य पालन (सुइसान) लिकाई (25)
11. वाणिज्य (शोग्यो लिकाई) 25
12. खनिज एवं उद्योग (कोकोग्यो लिकाई) (25)
13. विमुक्त उद्योग (देंकी लिकाई) (25)
14. यातायात (एन्यु आंयोवो कोसु
15. संचार (सुशिन लिकाई) (25)
16. वित्त तथा बैंक (जेसेई ओयोबी क्यिू लिकाई) (30)
17. बजट (योसान लिकाई) (25)
18, आडिट (केसान लिकाई) (25)
19. सदन प्रबन्धक अथवा गैर नर समिति (जिन उनई लिकाई) (25)
20. पुस्तकालय प्रबन्धक (तोशोकान उनेई लिकाई) (10)
21. अनुशासन (चोवात्सु लिकाई) (25)

समितियों की एक नवीन व्यवस्था जोड़ी जो पश्चिमी देशों में पर्याप्त प्रचिलित थी अर्थात् समितियों द्वारा सार्वजनिक सुनवाइयों को आमन्त्रित करना।

नवीन जापानी डाइट के सामान्य अधिवेशन किसी भी अन्य व्यवस्थापिका के अधिवेशनों के समान होते हैं जैसे समितियों द्वारा दिये गये निर्णयों को स्वीकृति देना, सरकार को परेशान करना तथा बातचीत करना। डाइट की विधि के अनुसार प्रत्येक दो सप्ताह में एक बार उन्मुक्त बातचीत की व्यवस्था पूर्णतः निराशाजनक रही है तथा सदन में इसकी पर्याप्त आलोचना की गई।[20]

जापान की डाइट के सम्मुख आने वाली मुख्य कठिनाइयां इस प्रकार थीं:— अभूतपूर्व राष्ट्रीय आर्थिक संकट, डाइट-विधि में लिखी गई पश्चिमी धारणाओं के प्रति जापान में अज्ञान तथा स्व जापानी नौकरशाही की जटिलता पूर्ण रहस्यात्यकता स्वयं सदन के सम्मेलन में अभद्र व्यवहार, जिसमें जापानी डाइट को सर्वोत्कृष्टता प्राप्त हो गई है तथा लॉबीइंग के प्रति इसकी अत्यधिक सहिष्णुता है, जो स्वयं व्यवस्थापिका को जनता की दृष्टि से गिरा सकती है। ने इन त्रुटियों को और भी बढ़ा दिया है। जापान में लॉबी की प्रक्रिया से विशिष्ट हितों तथा सदस्यों से निरन्तर सम्पर्क रखा जाता है। ये कार्य बचौलियों द्वारा के (इंगोदान) किया जाता है, जो अधिक औपचारिक किंतु शक्तिशाल लोगों के इशारों पर कार्य करते हैं, अथवा स्वयं विशिष्ट हितों के प्रतिनिधि सदस्यों से प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित करते हैं। इस लॉबी व्यवस्था काउग्रतम रूप 1947 में कोयले राष्ट्रीयकरण के प्रश्न पर स्पष्ट हुआ जापान में लॉबी व्यवस्था (मताग्रह) अन्य थानों के समान दनीय सत्ताधारियों पर निर्भर करती है जिसकी चर्चा बाद में की जाएगी।

युद्धोत्तरकालीन डाइट का महत्वपूर्ण पक्ष यह तथ्य है कि मन्त्रीमण्डल उसके प्रति उत्तरदायी है तथा यह संभावना है कि नवीन स्थाई समितियों नौकरशाही के विरुद्ध राजनीतिज्ञों के हाथ में प्रभाव शाली अस्त्र प्रमाणित होंगी। डाइट ने अपनी समितियों के माध्यम से बहुत पहले ही कातयामा मन्त्रीमण्डल के अपने उपमन्त्रीयों अथवा मन्त्रालयों में परामर्शदाता नियुक्त करने के अधिकार को चुनौती दी थी। मन्त्रीमण्डल के अधिवेशन को बढ़ाने के लिए संचालक समिति का परामर्श लेना पड़ा था, जो पहले कभी नहीं हुआ था। डाइट ने वितमन्त्री के विशेषाधिकार बजट पर भी पर्याप्त हस्तक्षेप किया। अच्छे सांसदों के समान डाइट के सदस्यों ने सरकारी निवास तथा वाहनों के लिए प्रशासनिक अधिकारियों से प्रतिद्वंद्विता करना प्रारम्भ कर दिया।

अंततः नवीन डाइट के विकास में निहित संकट इस तथ्य में हैं कि नीति-निर्धारण की शून्यता तथा व्यापक शक्तियों की प्राप्ति के संदर्भ में डाइट ने स्वयं अपने प्रशासनिक

20. प्रतिनिधि सदन मे प्रथम अन्मुक्त परिचर्चा, उन्मुक्त परिचर्चा की विधि पर 11 जुलाई, शुक्रवार 1947 को की। प्रजातन्त्रीय दल के वक्ता तनाका काकुवेई ने प्रेस की आलोचना की। मूलतः वक्ताओ को संचालक समिति में से लिया जाता था अन्ततः अध्यक्ष उन्हें स्वीकार लेता था जिसका अर्थ दलीय प्रवक्ताओं को अन्तर्दलीय समझौते द्वारा, अध्यक्ष द्वारा स्वीकारा जाता था। आफीशियल गजट अतिरिक्त संख्या 15 (शुक्रवार 11 जुलाई, 1947) पृष्ठ 1-5।

वर्ग का निर्माण कर लिया है। एक अर्थ में यह सभी विधान सभाओं में होने वाला सामान्य विकास है। राजनीतिक दल डाइट पर नियंत्रण करते हैं तथा डाइट में प्रत्येक प्रस्ताव दलीय मत के आधार पर निश्चित होता है।[21] किंतु सम्भवतया जापान में अधिक तत्परता से एक नवीन सामंती दल के विकास ने डाइट का स्तर युद्धोत्तरकालीन राजनीतिक दलों पर निर्भर करता है। राजनीतिक दलों में यद्यपि परिवर्तन हुआ है। किंतु फिर भी वे युद्धोत्तरकालीन दुर्बल संविद सरकारों में स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं। स्पष्ट है कि जापानी सुदृढ़ नेतृत्व प्राप्त करने में असमर्थ रहे हैं। अत्यधिक विस्तार में पड़ने की आवश्यकता यहां नहीं है तो भी युद्धोत्तरकालीन दलों का संक्षिप्त- विवरण उनकी मुख्य विशेषताओं पर प्रकाश डाल देगा।[22]

दो अनुदार दल जो पहले अलग थे फिर विलीन हो गए तथा बाद में फिर पृथक हो गए के नाम उदार दल (जो युद्धोत्तरकालीन प्रजातन्त्रीय उदार दल तथा प्रारम्भिक उदार दल का उत्तराधिकारी है) तथा जनता का प्रजातन्त्रीय दल था (जो युद्धोत्तरकालीन प्रगतिवादि दल (शिपोतो) तथा प्रजातन्त्रीयदल (मिनशुतो) का उत्तराधिकारी है।)हैं। दोनों की युद्ध पूर्व सेयुकाई तथा मिनसेइटो के उत्तराधिकारी हैं, तथापि 1946 के के युद्धीकरण ने प्रत्यक्ष वंशानुगत सम्बन्धों की सम्भावना को प्रभावशाली रूप से समाप्त कर दिया।

इन अनुदारवादी दलों में से आत्मसमर्पण के पश्चात् प्रवेश द्वार को छोड़ने वाला प्रथम दल अब फिर उदारवादी दल कहलाता है, (जियूतो)। यह अनुभवी हातोयामा इचिरो की महत्वाकांक्षाओं का परिणाम था, जो सैन्यविरोधी, अनुदारवादी शक्तियों को दलीय निष्ठाओं से परे एक संयुक्त संगठन में बांधना चाहता था। युद्ध पूर्व सेयुकाई की

21. डाइट विधि तथा सदन विधियों द्वारा गियो (अध्यक्ष) को प्राप्त महानतम अधिकारों पर भी परम्परागत तथा शक्ति विभाजनी अन्तर्दलीय विचार-विमर्श सम्मेलन से नियंत्रित है जिसमें प्रत्येक दल के 25 अथवा अधिक डाइट के सदस्य होते हैं। नवीन (अन्य सरकार) सर्वाधिक तौर पर प्रधानमन्त्री के चयन करने की नवीन किन्तु जटिल प्रक्रिया में स्पष्ट होती है। नवीन संविधान के अन्तर्गत प्रथम-प्रधानमन्त्री कात्ayama का चयन डाइट द्वारा दीर्घ अन्तर्दलीय समझौतों के बाद सम्भव हुआ तथा उनके द्वारा मन्त्रीमण्डल का चयन करने में विलम्ब की सार्वजनिक तौर पर सदन में आलोचना की गई। आफीशियल गजट, अतिरिक्त संख्या 10 (शुक्रवार 4 जुलाई, 1947) पृष्ठ 5-6।

22. अब भी जापान में युद्धोत्तर काल में राजनीतिक दलों के कुछ ही उपयुक्त उदाहरण हैं। सर्वोत्तम संदर्भ आसाही जिम्बुन शेइजी विभाग। आसाही समाचार पत्र, राजनीतिक स्टाफ सेइटो नेनकान (दलीय इयर बुक) टोक्यो, 1948 (2949 संस्करण पूर्वोक्त संक्षिप्त किन्तु उपयोगी है। अंग्रेजी में यूटाका एन० सम्पादक 'पालिटिकल हैंड बुक', पूर्वोक्त संक्षिप्त किन्तु उपयोगी है, पर्याप्त उपयोगी लेख भूतपूर्व संयुक्त सर्वोच्च कमान अधिकारी द्वारा प्रोफेसर कुलिने के सम्पादन में लिखे गए कैनथ इ कोल्मन 'प्रीवार पालिटिकल कन्सर्न्स इन पोस्ट वार कंजरवेटिव पार्टीज, वॉन मेकून 'जापान्स पोस्ट वार सोशलिस्ट पार्टी' 'अमेरिकन पोलिटिकल साइंस रिव्यू, पूर्वोक्त, पृष्ठ 940-969 तक अत्यधिक उपयोगी संदर्भ लेख, विदेश विभाग में गुप्तचर शोध कार्यालय का, 'मेजर पॉलिटिकल पार्टीज ऑफ जापान (ओ.आर.एल. सूचना पत्र संख्या 202), वाशिंगटन, 27 फरवरी 1951 है। इस पुस्तक का 19वां परिशिष्ट युद्धोत्तर कालीन डाइट में संविधान में अन्तर्गत दलीय संगठन प्रस्तुत करता है।

प्राचीन शाखा के नेता के रूप में उदारवादियों हीतोमाम मेयजी संविधान के दृढ़ समर्थक 19 वीं शताब्दी के उदारवाद तथा जापानी राजनीति के पुष्ट पक्ष का प्रतिनिधित्व करते थे। न केवल स्थान अपितु सदस्यता तथा प्रावधियों की दृष्टि से से भी इस दल ने सेयुकाई की विशेषताओं को प्राप्त किया।[23]

4 जनवरी, 1946 को शुद्धीकरण के प्रथम आदेश ने मुख्यतया डाइट की उदार दलीय सदस्यता को प्रभावित किया (46 से 18 कर दिया) तथापि हातोमामा समेत अधिकांश नेतृत्व वाला अपेक्षाकृत विशाल भाग वैसे ही बना रहा। किन्तु नेतृत्व स्तर में अवश्य परिवर्तन हुआ तथा वास्तविक सांसदों का स्थान चतुर राजनीतिज्ञों ने ले लिया। यह प्रवृत्ति और अधिक बढ़ी जब हातोयामा को हटा दिया गया तथा राजनीतिक व्यवस्था में अप्रशिक्षित योशिदा योशिदा का अध्यक्ष के रूप में चयन किया गया। 1947 की दुबारा जांच के पश्चात् फिर से दलीय लोगों का स्थान सांसदों ने लेना प्रारम्भ किया। इसके साथ ही 1946-47 के चुनावों में उदारवादियों ने व्यक्ति की दृष्टि से पूर्ण विशृंखलित होने के बावजूद सेयुकाई के जिलों को संभालना जारी रखा। इन संगठन संबन्धी तत्वों की प्रधानता ने पुराने सेयुकाई के अधिनायकवादी अनुशासन को विशेषता प्रदान की।

युद्धोत्तरकालीन जापान में निम्न सदन में बहुमत प्राप्त करने वाला उदार दल प्रथम था। 1949 के चुनाव में (योशिदा प्रजातन्त्रीय उदारवादी संयुक्त संयुक्त मन्त्री-मण्डल के रूप) इसे 466 में से 268 स्थान प्राप्त हुए। इसमें संविद प्रजातन्त्र के सम्मिलित होने के पश्चात् इसकी संख्या 286 हो गई। परिणामस्वरूप उदारवादियों के विरुद्ध निम्न सदन में कोई प्रभावशाली विरोधी दल नहीं रहा। तथा इस विरोध पक्ष में और भी कमी हो जाती यदि जनता का प्रजातन्त्रीय दल भी इसमें सम्मिलित हो जाता उच्च सदन में उदारदल को नाम मात्र के बहुमत के कारण पर्याप्त कठिनाई का सामना करना पड़ा। दल के अन्दर योशिदा शेउरो ने अपने नेतृत्व को सुदृढ बनाने के पर्याप्त प्रयास किये यद्यपि उसके बारे में यह धारणा प्रचलित कर दी गई थी कि वह शांति-संधि के पश्चात् अवकाश ग्रहण कर लेगा। तत्पश्चात् हातोमामा इचिरो, जो दल का संस्थापक था, को वापिस ले लिया जाता तथा अंततः वह अध्यक्ष पद ग्रहण कर लेता।

उदार दल शीर्षक होने के बावजूद यह दल अनुदार वादी समूहों में भी पर्याप्त दक्षिणपंथी दल है। सामान्यतया इसे नवीन औद्योगिक तथा व्यावसायिक समूहों का

23, सेमुकाई अन्तन; 1949 में विभाजित हो गया। कुहाग पुमानो कुल्ये, जो एक सम्पन्न खान व्यापारी था ने, हातोयामा के संवैधानिक संसद समर्थकों का समर्थन प्रारम्भ कर दिया। वायुयाव निमाता ताकाई जिया चिकुहेई विशालतम सैनिक समर्थक गुट का नेता था। युद्धोत्तर कालीन जिनुनो का उद्घाटन अन्तत. 9 नवम्बर, 1945 को हुआ। इसके द्वारा संक्षेप में—(1) शब्द तथा भावना में पोटामडम में विश्वास व्यक्त किया गया। (2) राष्ट्रीय राजनीति की प्रजातन्त्र के साथ सुरक्षा। (3) राष्ट्रीय वित्त तथा अर्थव्यवस्था की सुरक्षा। (4) राष्ट्रीय जीवन को उज्वल बनाने के लिये राजनीतिक, सामाजिक, नीति-शास्त्र का विकास। (5) मानव अधिकार के प्रति सम्मान, नारी की स्थिति में प्रगति तथा सामाजिक नीतियों के लिये सक्रियता, इनका प्रतिपादन किया गया। निप्पोन टाइम्स 11 नवम्बर, 1945।

का समर्थन प्राप्त है तथा साथ ही अनुदार तथा ग्रामीण जापान के मत भी इसे प्राप्त होते हैं।

जनवरी 1951 में प्रभावहीन होते हुए भी जनवादी प्रजातन्त्रीय दल ने (कोकुमिन-मिनशुतो कभी कभी राष्ट्रीय प्रजातन्त्र अथवा सामान्य प्रजातन्त्रीय दल) प्रमुख विरोधी पक्ष को प्रस्तुत किया। प्रजातन्त्रवादियों का युद्धोतर काल में बड़ा अस्पष्ट उद्भव हुआ, कुछ समय के लिये वे सरकार में रहे जो उनके लिये विनाशकारी सिद्ध हुआ तथा अब एक स्वतन्त्र दल के रूप में भी उनका भविष्य शंकास्पद है। हातोयामा के उदारवादियों की तुलना में इस अपरिपक्व दल का जन्म 1945 में प्रसिद्ध निप्पन सेयजी काई (जापान-राजनीतिक दल, युद्धपूर्व नाकाजिमा सेयुकाई तथा पुराने मिनसेइटो से हुआ था।[24]

प्रारंभ में प्रजातन्त्रवादियो में तथा कथित प्रगतिवादी प्रायः वे ही लोग थे जिन्होंने युद्धकालीन प्रशासन तथा उग्र सैन्यवाद की सेवा की थी। अतः यह आश्चर्यजनक नहीं था कि 1946 के प्रथम शुद्धीकरण में कई सदस्यों को अपदस्थ कर दिया गया। इस धक्के ने दल में से बुरे तत्वों को निष्कासित कर कुछ समय के लिये नवीन जीवन प्रदान किया। पत्पश्चात् इस दल पर मिनसेइतो की छाप स्पष्ट हो गई। 1947 के व्यापक शुद्धीकरण से इस प्रवृत्ति को और बढ़ावा मिला। तथा बाद में जब उदार दल का संस्थापक आशिदा हितोषी भाग निकला रूप है तो 1947 में इस दल ने एक नवीन नेता तथा नवीन प्रजातन्त्रीय रूप ग्रहण किया। निरन्तरता के टूट जाने तथा व्यक्तियों में परिवर्तन हो जाने के बावजूद प्रजातन्त्रीय दल ने पुराने मिनसेइतो दल के क्षेत्रों को संभालना जारी रखा। अंशतः नगरीय क्षेत्रों में मिनसेइतो की पृष्ठभूमि के कारण प्रजातन्त्रीय दल ने समाजवादी तथा उसके सहयोगी दलों के साथ कात्यामा सरकार में भाग लिया तथा बाद में अपने ही अध्यक्ष आशिदा हितोषी के नेतृत्व में मन्त्रीमण्डल में भाग लिया। अनुदार वादियों में से प्रज न्तत्र वादी, समाजवाद के उत्थान से सर्वाधिक प्रभावित हुए थे।

दूसरी ओर ग्रामीण क्षेत्रों में मिन सेइतो दल के प्रभाव की पुनस्थापना की अकांक्षा लेकर प्रजातन्त्रवादियों ने मई 1946 में स्थापित सहयोगी प्रजातन्त्रीयदल का (क्योदों मिनसुतो) समर्थन करना प्रारम्भ किया जिसका बाद में जनता सहकारित दल (कोकुमिन क्योदोने) के नाम से पुनंगठन किया गया। अंततः 1950 के बंसत से संविद विरोधि प्रजातन्त्रवादियों ने (जो अब भी अधिकांशतया वैयक्तिक आधार पर उदार-के विरोधि थे) जनता सहकारी दल की सदस्यता ग्रहण की तथ निम्न सदन में 67 तथा उच्च सदन में 27 स्थान प्राप्त किये।

प्रजातन्त्री दल अपने प्रतिद्वन्द्वी दल उदारवादियों से कुछ कम उनुदारवादियों से कुछ कम अनुदारवादी था तथा अपने सभी सिद्धान्तों के बावजूद वह उदार दल से बहुत मामूली

24, सेयुकाई के विभाजन के निए देखिये पादटिप्पणी 32। दिनिप्पोन सेयजी काई को 14 सितम्बर 1945 को विघटित कर दिया गया। यह युद्ध की सहायक संस्थाओं में से अन्तिम था। डेमोक्रेट्स 16 नवम्बर, 1945 को औपचारिक रूप से प्रगतिवादी पार्टी में संगठित हुए। इसका कोई अध्यक्ष नहीं था। यद्यपि अवकाश प्राप्त जनरल उगाकी कानुशिगे का नाम अक्सर लिया जाता था। इसका कोई अपना पृथक् पंथ नहीं था इसके सदस्यों ने व्यंगात्मक ढंग से लिखा था कि इस दल के नाम से प्रतीत होता था कि यह प्रगति करना चाहता था, मगर यह नहीं जानता था कि यह प्रगति किस ओर होनी थी। निप्पोन टाइम्स 16 सितम्बर, 18 तथा 19 नवम्बर, 1945।

प्रश्नों पर मतभेद रखता था। फिर भी इसने डाइट में अधिकांश घरेलू मामलों पर विरोधी दृष्टिकोण अपनाया तथा मात्र जापानी शांति के प्रश्न पर इसने उदारदलीय सरकार का समर्थन किया। इस बात की अफवाहें बार-बार सुनाई पड़ती थीं कि अविशिष्ट सदस्यों को उदारदल में सम्मिलित कर लिया जायेगा। किन्तु भूतपूर्व प्रजातन्त्रीय सदस्यों को अपदस्थ किये जाने के पश्चात् इस बात की सम्भावनाएं कम हो गईं।

अन्य प्रमुख तथा अधिक प्रभावशाली विरोधी दल समाज वादी दल का था। (निहोन शिकाइतो) था, जो नवम्बर 1945 में औपचारिक रूप से संगठित किया गया था। प्रारम्भिक संगठन काल में विभिन्न तत्व जैसे प्रसिद्ध इसाई नेता कागावा तोनोहिक, अबे इसू 1900 से पुरातन पंथी समाजवादी नेता तथा ताकोनो इवासाबुरो पूर्व साम्राज्यवादी दल का परामर्श दाता ये सब एक साथ ही दल के अन्तर्गत संगठित हुए।[25] वस्तुतः अस्पष्ट किन्तु उग्र वामपंथियों का संगठन था। कई समाजवादियों ने साम्यवादियों से संगठन स्थापित करने के अनेक प्रयास किये। युद्धोत्तरकालीन समाज वादियों की उल्लेखनीय विशेषता अंतर्दलीय गुटबन्दी थी।

यद्यपि प्रथम शुद्धिकरण में समाजवादी प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके फिर भी अप्रेल 1946 तक उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि वे अब एक प्रमुख राजनीतिक शक्ति बन गया था, क्योंकि उनके दल को उस वर्ष के आम चुनाव में निम्न सदन में 18 प्रतिशत मत तथा 92 स्थान प्राप्त हुए। योशिदा के विरुद्ध साम्यवादियों द्वारा संयुक्त विरोधी पक्ष का बनने के आग्रह को अस्वीकार करने के बावजूद यह दल 1946 में प्रमुख विरोधी दल बना। इन्होंने दिसम्बर में योशिदा सरकार का पतन हो का नारा लगाया व रैली आयोजित की। अप्रेल 1947 में वह निम्न सदन में 143 स्थानों के साथ मुख्य दल बन गया।

जापान के इतिहास में प्रथम समाजवादी सरकार ने अनिश्चित शक्ति, नेतृत्व के संदर्भ में पर्याप्त निर्बलता तथा युद्धोतरकालीन जापान में आर्थिक दृष्टि से पर्याप्त कमजोरी की अवस्था में सत्ता प्राप्त की। कातायामा हेतसु जो 1956 से केन्द्रीय कार्यकारी समिति का अध्यक्ष था, न तो एक गतिशील व्यक्ति था तथा न ही एक दक्ष राजनीतिज्ञ था। मैनिची शिम्बून (7 मई, 1946) ने उसकी तुलना एटली से की थी, जिसका व्यक्तित्व उल्लेखनीय नहीं था किन्तु जो अत्यधिक विनम्र तथा सहिष्णु था। किन्तु दुर्भाग्यवश दल की व्यवस्था का उत्तरदायित्व निशिओ सुए हिरो के हाथ में आया जो समाजवादियो

25. कोनो कॉजू, शोकापो के नेता जान मैथ्रन (जिसके लेख का पहले उल्लेख किया गया है। इस शीर्षक का शाब्दिक अर्थ समाजवादी है। इसका समाजवादी प्रजातन्त्रीय अनुवाद विदेशों में प्रायः इसी प्रकार के दलों से समानता स्थापित करने के लिए किया जाता है, किन्तु इसे कभी भी जापानी शाकाई मिनशुतो से नहीं जोड़ा जाता है जो इस नये दल को पुराने बुद्धिजीवी समूह से जोड़ता है। निहोन शाकाइतो की स्थापना औपचारिक रूप से 2 नवम्बर, 1945 को की गई। इसकी विचारधारा एक आरम्भिक समिति द्वारा निम्न थी— (1) राजनीतिक स्वतन्त्रता तथा सरकार के प्रजातन्त्रीय ढाँचे की स्थापना। (2) लोगों के जीवन निर्वाह के साधनों का विस्तार करने के लिए समाजवाद। (3) सैन्यवाद का विरोध। निप्पोन टाइम्स 17 तथा 20 अक्टूबर, 1945।

में सर्वाधिक तेज तथा दक्षिण पंथी राजनीतिज्ञ था। समाजवादी दल की प्रतिष्ठा एक वास्तविक कोयला उत्पादन नियन्त्रण विधेयक पारित करने की असफलता के कारण गिरती गई। इसके अतिरिक्त खाद्यान्न-अभाव, मंदी तथा तीन दल के आंतरिक संघर्षों के कारण समाजवादी सरकार थोड़ी सी अवधि में ही 1946 में समाप्त हो गई। जापान में समाजवादी दल की असफलता का कारण जापानी जनता का समाजवाद में विश्वास नहीं अपितु अनुदार वादी नेतृत्व से प्राप्त निराशा थी।

समाजवादी नेतृत्व में अभी भी अधिकांशतया उदार वामपक्षी नेता हैं। यद्यपि वामपंक्षी गुट ने युद्धोत्तरकालीन मजदूर यूनियनों से नवीन नेतृत्व प्राप्त किया है।[26] फिर भी कार्य विधि के बारे में तथा बाद में अंतर्राष्ट्रीय मामलों पर दल में अभी आंतरिक मतभेद हैं।

ग्रीन ब्रिज सोसायटी (रयो कुफुकाई जैसे मनोरंजक नाम वाला यह संगठन वस्तुतः कोई राजनीतिक दल नहीं है। यह स्वतन्त्र परामर्शदाताओं का एक शिथिल संगठन है, जिसमें अनेक गैर व्यवसायी राजनीतिज्ञ इसमें सम्मिलित है जिनका कोई स्पष्ट वैचारिक आधार नहीं है तथा इसमें दलीय अनुशासन का भी प्रायः अभाव है। यद्यपि सामान्यतया इसे अनुदार दलीय नीति का समर्थक पाया जाता है, तथापि उदार वादियों को बहुमत के लिये इस के समर्थन की अवाश्यकता अक्सर पड़ती है।

उग्र वामपंथी दल जापानी साम्यवादी दल (निसोन क्यो सांटो) है। अन्य देशों के साम्यवादियों के समान जापान के साम्यवादियों को भी सोवियत रूस की निकटता तथा भय से तथा टोकियो स्थिति रूसी मिशन से प्रत्यक्ष प्रोत्साहन प्राप्त हुआ था। यद्यपि सर्वोच्च कमान के प्रारम्भ में अन्य राजनीतिक बंदियों के साथ साम्यवादियों को भी स्वतन्त्र कर दिया था. किन्तु संयुक्त सर्वोच्च कमान के निरंतर विरोधी दृष्टिकोण से इसकी प्रगति में पर्याप्त बाधाएं उपस्थित हुईं दूसरी ओर अनुदार वादी दल द्वारा किये गये विरोध से भी इसे सहायता प्राप्त हुई। इसने सम्राट का विरोध करके स्वयं अपनी प्रगति को नियन्त्रित किया। युगोस्लाविया तथा इटली के समान इसके सम्मुख भी एक ऐसी सीधी दलीय नीति का निर्धारण करने में कठिनाई हुई, जो कामिनफार्म तथा जापानी विचारधारा में सामंजस्य स्थापित कर सके। हाल ही में यह निष्कासन तथा दलीय विभाजन से प्रभावित रही है।[27]

26. जनवरी 1951 में निर्वाचित केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति में 30 सदस्य (काप्पामा, केन्द्रीयवादी, सर्वोच्च परामर्शदाता था) थे जिनमें 5 मध्यवर्गी, 15 वामपंथी [शेनो कांजू, नोमियो माल्सल तथा वादा हिरा] तथा 10 दक्षिण पंथी [मुजुकी, योगिओ, ओवोना कोनया तथा निकूनानी चो सावुरो थे]।

27, देखिये थावा तोकासावुरो, नाकोमाना मादा किची तथा नाल्हासी कातारू सेनरयो चिका नो निहोन क्योसांतु (अधिग्रहण के अन्तर्गत जापानी साम्यवादी दल), कैशो (पुर्ननिर्माण अंक, 31, संख्या 61 (जून 1950) पृष्ठ 58–73 ये तोकुदा क्युइची गिगा योसिदा तथा अन्य जापानी साम्यवादियों को जेल से 10 अक्टूबर, 1945 को छोड़ा गया। नोसाको संजो साम्यवादी राजनीति में अनुभवी था, जापान से सोलह वर्ष के लिये अनुपस्थित रहा तथा 15 जनवरी 1946, को वापिस लौटा तथा दूसरे ही दिन उसने अपने साथियों के साथियों के साथ "सहमति" की घोषणा की उसके कुछ ही समय बाद निप्पोन टाइम्स ने साम्यवादी दल में निहित दुर्बलताओं की तथा अनुदार वादियों द्वारा लाल खतरे के बढ़ा चढ़ा कर वर्णन करके उन्हें अनावश्यक ढंग से प्रोत्साहित करते हैं। निप्पोन टाइम्स, 8 मार्च, 1945।

तथा कथित पुरातन पंथी गुट नोजाका सँजों तथा तोकूदा क्यूची के नेतृत्व में साम्यवादी दल की कार्य विधि को निर्देशित कर रहा था। यह पांचवे दलीय सम्मेलन के उस घोषणा मात्र से स्पष्ट हो गया जो 1946 के प्रारम्भ से प्रेषित किया गया। --

"जापानी साम्यवादी दल कुछ समय के लिये उस बुर्जुआ प्रजातन्त्रीय क्रांति को निरन्तर बनाये रखना चाहता हैं, जो फिल हाल हमारे देश मे प्रगति पर है तथा उसे शाति पूर्ण तथा प्रजातन्त्रीय तरीकों से बढ़ाना चाहता है।"

नोजाका अपने दल को निष्ठावान देशभक्तों का समूह कहता था। 1947 में डाइट के प्रथम अधिवेशन में तोकूदा ने आर्थिक मंदी को रोकने, काले बाजार पर नियंन्त्रण तथा समाजवादी प्रजातन्त्र के साथ सयुक्त मोर्चे के लिये कई तर्क दिये। उदारवादी तरीकों की सफलता का प्रमाण साम्यवादियों द्वारा समाजवादी सरकार के पतन के पश्चात् 1949 में चुनावों में प्राप्त हुए फायदों से स्पष्ट हुआ।[28] तथापि 1950 में इस दल के जापान की परम्परा पर बहुत ज्यादा आश्रित होने पर उपहास किया गया। तत्पश्चात् इस दल में अंतर्राष्ट्रीयवादियों का प्रभाव शिगा योशियो तथा मियामतो केंजी के नेतृत्व में में बढ़ गया इसके पश्चात जापानी सरकार द्वारा निरन्तर किये गए प्रहारों के कारण दल की पंजीकृत सदस्यता 1950 में 108,000 से घट कर दिसम्बर में 69000 रह गई।

संयुक्त सर्वोच्च कमान ने जून 1950 में उस पर सीघा प्रहार किया। जापान के लिए मित्र राज्यों की परिषद की स्थानीय मीटिंग में निरतर रूस की आलोचना करने के पश्चात् अन्ततः सर्वोच्च कमान ने दल की केन्द्रीय समिति के सभी 24 सदस्यों को निष्कासित कर दिया। परिणामतः एक पांच सदस्यों वाली अस्थाई समिति (रिंर्जी चुओ शिदोबू) बची, जिसमें कोई भी व्यक्ति दल के अभिजात वर्ग में से नहीं था। यह कहा जाता था कि नोजाका तथा तोद्रूका, जो अब उग्रवादी गतिविधियों में विश्वास करने लगे थे, भूमिगत हो गए। तथा अब भी वे दल पर नियन्त्रण रखते थे[29]।

28. देखिये अकाहाता (लाल झंडा) 26 मई 1996 सपादकीय (1950 में संयुक्त सर्वोच्च कमान के आदेश से उसे गैर कानूनी घोषित कर दिया गया था। आफोशियल गजट, अतिरिक्त संख्या 11 शनीवार 5 जुलाई, 1947 पृष्ठ 18-19) नो जाका माओत्सेतुंग के सिद्धान्तों का अनुसरण कर रहा था यह सुझाव रोगर स्विरिंगन द्वारा "नो साका एण्ड दि कामिन फार्म" फार ईस्टर्न सर्वे मई 17, 1750 मे दिया गया है। तथापि 1950 में कामिन फार्म द्वारा नोजटका की निंदा माओत्सेतुंग के लिये क्या अर्थ रखती थी इसका अनुमान संभव नहीं है।

29---जापान में अति उग्रवाद का पुनरोदय धीरे धीरे हुआ है। डा० नोबुताया इके नो अब हूवर युद्ध पुस्तकालय, स्टेनफोर्ज केलीफोनियों में है का विश्वास है कि एक संगठन निरीक्षण के योग्य हैं। निहोन काकुमेई किकुहाता दोशीकाई (जापान क्रांतिकारी क्रिसेंथियम संगठन जिसका मुख्यालय परम्परागत उग्रवादी क्यूशू में है। एक राजनीतिक दर्शन तथा कार्यक्रम का दावा करता है। किकुशाही परिवार है. जिसका प्रतीक क्रिसेंथियम पुष्प है हाता गैर कानूनी आखता है। यह सगठन साम्यवाद विरोधी है किकुहाता वाद राष्ट्रीय, प्रजातन्त्रीय तथा हआजवादी है। बाकी जापान के समान अधिग्रसण का प्रभाव इस समूह पर भी पड़ा तथा इसने शक्ति का विरोध कर जन-प्रजातन्त्र का समर्थन किया प्रजात त्र की ग्लानि, डाइट की अस्थिरता तथा राजनीतिक दलों की अनेकता के साथ, नव जापानी अधिनायकवाद नाजी जर्मनी अथवा फासिष्ट इटली के कदनों पर चल सकता है, नोफुनाका आके "नेशनल सोशलिज्म इन जापान" पैसिफिक अफेयर्स 23वाँ अंक, संख्या 3। सितम्बर, 1950) पृष्ठ 311-314।

युद्धोत्तरकालीन जापान के लिए तात्कालीन संकट भूमिगत साम्यवादियों से नहीं वस्तुतः यह सभी सम्माननीय दलों के मूलतः गैर प्रजातन्त्रीय स्वरूप में, उनके द्वारा उत्तरोत्तर डाइट की अवमानना में तथा अन्ततः जापानी सरकार की अदृश्य सरकार के साधनों के कारण था। मुख्य दलों को वस्तुतः जनता की संस्थाओं का समर्थन प्राप्त नहीं था। उन्हें अपने सिद्धान्तों को निर्माण करने में अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता था। क्योंकि किसी मतदाता को दल की नीतियों तथा संगठन के संचालन के बारे में कुछ भी कहने का अधिकार नहीं था। सभी निर्णय टोक्यो के मुख्यालय में किये जाते थे। डाइट का कोई भी सदस्य दलीय अनुशासन को दलीय विशेषाधिकार के छिन जाने के भय से भंग नहीं करता था। तथापि यह मात्र जापान की उल्लेखनीय विशेपता नहीं थी। अमेरिका की कीकावर समिति को कानागावा प्रीफेक्य के स्वानीय संगठन की राजनीति में, न्यूजर्सी की वर्जन काँउटी की राजनीति से साम्यता दृष्टिगोचर हुई होगी।

जापानी संसद तथा युद्धोत्तरकालीन राजनीतिक दलों ने महान शक्ति तथा गम्भीर दायित्व उत्तराधिकार में प्राप्त किये हैं। यही मुख्य संकट का विषय है। तथा जापान की नवीन 'अदृष्य सरकार' में जापान की ये विशिष्ट विशेपताएं विद्यमान है। परम्परा का दवाव इतनी गारन्टी अवश्य प्रदान करता है।

तथाकथित ओमवन नामक दवाव समूह एक उल्लेखनीय विशेपता जो पूर्णतः बुरी नहीं है, प्रदर्शित करता करता है। ओमावन अथवा नियन्त्रण स्थापित करने की विद्या सामन्ती पद-सोपान-क्रम तथा नियंत्रण के लिए आधुनिक व्यवस्था है। इस व्यवस्था के व्यापक अवशेप विद्यमान हैं। नगरों में ओभावन का निर्माण-कार्यो, श्रमिकों, बहुमूल्यपदार्थो पर, जुए के अड्डों, चाल वालों के गिरोहों पर तथा नवीन सम्पन्न लोगों के माध्यम से दलीय संगठनों पर नियन्त्रण प्राप्त है। ग्रामीण क्षेत्रों में यह व्यवस्था पूर्णतः सामन्ती भू-स्वामी व किरायेदार की व्यवस्था को प्रस्तुत करती है। ओमावन संगठनों का जाल इतना शक्तिशाली तथा जटिल है कि संयुक्त सर्वोच्च कमान में सरकारी प्रभाग के चार्ल्स केडेस ने अमेरिकी सेनेट की समिति के शब्दों का प्रयोग करते हुए इसे व्यापक भूमिगत सरकार की संज्ञा दी है जो एक छोटे से गांव से स्वयं राजधानी तक फैली हुई है[30]। तथापि जापानी ओमावन तथा अमेरिका के अपराव-संगठनों में यह अन्तर है कि वे राजनीतिक प्रभाव के संदर्भ में भी अनैतिक नहीं हैं। वे हर स्तर पर राज्य के प्रति निष्ठा वनाए रखने का प्रयास करते हैं, आचार-शास्त्र तथा अनुशासन पर जोर देते हैं तथा वे स्वयं को जापान के महाकाव्य में वर्णित लहरों के आदमी अथवा रोनिन के समकक्ष मानते हैं।

संयुक्त सर्वोच्च कमान के अधिकारी, जो जापानियों की मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों से कपरिचित थे, ने उनके द्वारा कार्य करने के स्वाभाविक तरीकों को दुरा पाया। उदाहरण के लिए 31 मार्च 1947 को उन्होंने तुरानी संस्था तोनारी गुमी अथवा पड़ोस का संगठन

30—जैसा कि भुतपूर्व सर्वोच्च कमान अधिकारी हैरी एमर्सन वाल्टम ने क्यूरिने की परिचर्चा में में युद्धोत्तर कालीन जापान की भूमिगत राजनीति में स्वीकारा, पूर्वोक्त, अमेरिकन पॉलिटिक्स साइंस रिव्यू बावनवां अंक 6 संख्या 1 दिसम्बर 1948) पृष्ठ 1159-62।

इस शंका के आधार पर कानूनी रूप समाप्त कर दिया कि यह संस्था गैंग-राजनीति का आधार थी। निश्चय ही तोनारी गुमी का जिस प्रकार प्रयोग युद्ध के दौरान किया गया था यदि वह भविष्य में 'अदृश्य सरकार' का प्रभावशाली माध्यम बन जाता तो निसंदेह वह खतरनाक था। किन्तु ये ही पड़ोस के संगठन उन्मुक्त तथा प्रगतिवादी नेतृत्व के अन्तर्गत भ्रष्टाचार के विरुद्ध प्रभावशाली शस्त्र हो सकते थे। यह न्यूयार्क नगर में अन्य युवक संगटनों का दमन करने के लिए गठित युवक संगठन के समान नहीं था तथा अन्ततः सर्वोच्च कलान भी जापान में संगठन की इस प्रणाली को समाप्त नही कर सकी।

क्षेत्रीय अध्यायों ने यह स्पष्ट किया हैं कि तोमारी गुमी के विरुद्ध तथा स्थानीय सरकार के विरुद्ध आदेशों के बावजूद ग्रामीण जापानी राजनीति पुराने माध्यमों से ही कार्य रत रही। समाज का मूल आधार व्यक्ति नहीं परिवार बना रहा। सोनारकू अथवा बुराकू (जो नगरीय तोनार-गुमी का ग्रामीण समकक्षी है जो रक्त सम्बन्ध के आधार पर आश्रित था) पूर्णत गैर कानूनी ढ़ंग से बना रहा। स्थानीय नेतृत्व वरिष्ठ बुराकू नेताओं के हाथ में होता था जो अनुभव के आधार पर इस पद को प्राप्त करते थे। राष्ट्रीय अनुभूति तथा व्यारक सिद्धांतों के अभाव में समूह केन्द्रीय सरकार के प्रति संक्षिप्त थे। प्रायः वे अपुदार दल के प्रभाव में रहते थे जो ग्रामीण वरिष्ठ नेताओं को अपने उद्देश्य के ि.ए प्रयुक्त करते थे31।

युद्धोत्तरकालीन जापानी राजनीतिक दलों की दूसरी विशेपता युद्धपूर्व जापान में व्याप्त राजनीतिक भ्रष्टाचार की व्याप्ति थी। शोवा देवो का मामला, जिसके परिणाम स्वरूप 1948 में अशिदा तथा उसकी प्रजातन्त्रीय मन्त्रीमण्डल का पतन हुआ, इस विशेपता को विशाल स्तर पर स्पष्ट कर देता है। संक्षेप में इस कांण्ड में गृहमन्त्री कुरुसो टेकाओ, आर्थिक स्थायीकरण बोर्ड के निदेशक निशिओ सुएहिरो, भूतपूर्व उपमन्त्री तथा अनेक गण-मान्य राजनीतिज्ञ तथ। व्यापारी सम्मिलित थे। कुरुपो (जो वित्तमन्त्री भी था) ने जापानी पुर्ननिर्माण- वित्तीय बैंक को नीति के माध्यम से प्रभावित करने की कोशिश की। प्रजातन्त्रीय दल को दिये गए आर्थिक दान के बदले में कुरुसु के सरकार में प्रवेश के बाद शौवा विद्युत कम्पनी को एक करोड़ येन का विशाल ऋण देकर उसका प्रतिदान दिया गया। यद्यपि एक प्रजातन्त्रीय उदारवादी सदस्य ने जांच प्रारम्भ की थी, किन्तु अन्तत उसका दल तथा समाजवादी लोग उसमें सम्मिलित पाए गए। आशिदा स्वयं कभी शोवा काण्ड से प्रत्यक्षतः संबन्धित नहीं था, किन्तु 8 दिसम्बर, 1948 कों उस पर यह आरोप लगाया कि

31—संयुक्त सर्वोच्च दमान या निदेश जिसने तोनारी गुमी की सर्वप्रथम जाच की 4 नवम्बर को प्रेपित हुआ था देखिए एम. के, एच. के. अंक प्रथम सख्या पॉच (15 अगस्त, 1946) पृष्ठ 7–10। अधिकृत जापान के प्रक्षम स्वतन्त्र क्षेत्रीय अध्ययन जापानी अध्ययनों के लिए नवीन संस्थान, मिचीगन विश्व-विद्यालय के द्वारा किया गया जिसका एक कार्यालय ओकायामा प्रीफेक्चर में भी है। इसमें तत्सम्बन्धि निष्कर्ष फारईस्टर्न क्वर्टिली बारह अंक संख्या 2 (फरवरी, 1953) में डा० राबर्ट इ वार्ड के लेख "सम आब्ज-र्वेशन ऑन लोकल आटो तॉमी एट दी व्लिज लेवल इन प्रजेंट जापान" पर आधारित थे। डा० वार्ड की उपलब्धि कम से कम सीमेंट के भवनों अथवा समाचार पत्रों के दफ्तरो से अधिकरण के प्रभावों के बारे में सामान्यीकरण प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति के खतरो से सावधान करती है।

वह ठेकेदारों को रिश्वत देने के लिए पहले रिश्वत लिया करता था। इस संपूर्ण काण्ड का एकमात्र अच्छा पहलू यह था कि निम्न सदन ने इस सम्पूर्ण काण्ड का रहस्योदघाटन करने में सफलता प्राप्त की[32]।

युद्धोत्तरकालीन जापानी राजनीतिक दलों की तीसरी विशेषता नेतृत्व करने की योग्यता तथा दलीय कोष के लिए नवीन स्त्रोत प्राप्त करने की योग्यता थी। जापानी पटल पर दो मुख्य परिवर्तनों ने इस आवश्यकता को राजनीतिक सत्ताधारियों के लिए वास्तविक चुनौती बना दिया। जापानी सरकार में से सेना मन्त्रालयों तथा पुराने गृह मन्त्रलय के उन्मूलन के पश्चात् संरक्षण व प्रभाव के मूल स्त्रोत समाप्त हो गए। दलीय नेता पहले विदेश मन्त्रालय की ओर उन्मुख हुए, क्योंकि उसे सर्वोच्च शक्तिशाली सर्वोच्च कमांडर द्वारा संपूर्ण शक्ति प्रेषित कर दी जाती थी। बाद में प्रत्येक एजेन्सी ने अपना पृथक संपर्क ब्यूरो स्थापित किया। आमदनी के धन सम्पन्न साधनों में ओयाबन भी सम्मिलित थे, जो जापान की विशाल पुनर्निर्माण-योजनाओं का संरक्षण करते थे। वे अप्राप्य वस्तुओं के विनियोग-कर्ता तथा सही अर्थों में काला बाजारी करने वाले तथा व्यापक पैमाने पर जापान में सैनिक माल के अवैध संग्रहकर्ता थे। बाद में जैसे-जैसे जापान स्वावलंबी बनने लगा युद्धोत्तरकालीन नवीन ऐजेंसियों के माध्यम से औद्योगिक ऋणों सरकारी नियन्त्रण दलों के राजस्व के स्त्रोत तथा प्रभाव के संदर्भ में संघर्ष-स्थल बन गया। ये अन्तिम दो विशेषताएं भ्रष्टार तथा दलीय वित्त-व्यवस्था युद्धोत्तार कालीन जापान में सक्रिय आर्थिक दबावों की प्रस्तावना प्रस्तुत करती है।

राजनीति के आर्थिक आधार—

जापान के अन्दर अधिग्रहण की अर्थ व्यवस्था ने जापानी सरकार पर अमिट छाप छोड़ी। इसके प्रभाव सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों ही हुए। सरकार के अन्दर ये प्रभाव स्पष्ट रूप से नवीन अर्द्ध स्वतन्त्र एजेंसियों की रचना—जैसे आर्थिक स्थायीकरण-बोर्ड (केजेई एटेई होम्बू) को प्रधान मन्त्री के कार्यपालिका के साथ संलग्न कर दिया गया था। इसी प्रकार व्यापार बोर्ड वाणिज्य तथा उद्योग मन्त्रालय की संस्था बन गया। मन्त्री-मण्डल आर्थिक संकट का सामना करने के लिए आर्थिक नियोजन पर निर्भर था। आर्थिक स्थिति पर रिपोर्ट (श्वेत पत्र), जो कात्यामा मन्त्रीमण्डल के कार्यकाल में बनायी गई, इसका उल्लेखनीय उदाहरण है[33]। 1947 में श्रम मन्त्रालय के संगठन ने जापानी सरकार के

32—चार वर्ष बाद न्यायालय ने शोवदेंको प्रतिवादियों को दण्ड दिया। केइपा समूह के 6 पाँच सदस्यों को जिनमें स्वयं कुरुमा भी सम्मिलित था को घूस लेने का अपराधी पाया गया। आशिया को टोक्यो के जिला न्यायालय द्वारा सभी अपराधों से बरी पाया गया। निशिओ को भी रिश्वत लेने का अपराधी पाया गया मैनिची, 21 अक्टूबर 1952 निप्पोन टाइम्स, 23 अक्टूबर, 28 अक्टूबर 1952।

33—संयुक्त सर्वोच्च कमान द्वारा प्रस्तुत स्मरण पत्र में बोइकी सो तथा केई बाई एतेई होम्बू, एस० के० एच० के में प्राप्य है, पूर्वोक्त 1 अंक संख्या 70 (फरवरी, 1947) पृष्ठ 23–28 तथा प्रथम अंक संख्या 11 (20 अप्रैल. 1947) पृष्ठ 25–36। इस श्वेत-पत्र पर डाइट द्वारा विचार विमर्श आफिशियल गजट अतिरिक्त संख्या 15, (मंगलवार, 8 जुलाई, 1947) में दिया गया है पृष्ठ 1–19।

बाहर संभावित शक्तिशाली, नवीन राजनीतिक तथा आर्थिक दबाव को प्रस्तुत किया। इसने यूनियन संगठनों, श्रमिक तथा प्रबन्धकों के परस्पर सम्बन्धों, श्रम के स्तर, श्रम बीमा तथा क्षतिपूर्ति के बारे में नई विधियां बनायी। 1945 के अक्टूबर में जापान में मात्र पांच मजदूर संगठन थे जिनकी कुल सदस्यता 5,3000 थी। मार्च 1939 तक 70 लाख मजदूर 36,500 संगठनों के माध्यम से संगठित हो चुके थे तथा वे सम्पूर्ण गैर कृषि-श्रमिकों का 38 प्रतिशत था। विशालतम संगठन जापानी फेडरेशन आफ लेबर (जे एक एन निहोनो सो दोमयी) तथा नेशनल कांग्रेस आफ इण्डस्ट्रियल यूनियन (एन.सी इ. यू.) जापानी में संक्षेप में सां बात्सु थे। सरकार तथा संयुक्त सर्वोच्च कमान के अधिकारियों के सम्मुख वास्तविक समस्या यह थी कि संपूर्ण जापानी श्रम के 40 प्रतिशत केन्द्रीय तथा स्थानीय कर्मचारियों के साथ कैसा व्यवहार किया जाए। जैसा कि अधिकरण के दौरान स्पष्ट हो गया; जापानी श्रमिक यहां की राजनीति में एक महत्वपूर्ण दबाव समूह बन गए है। समाजवादियों तथा वामपंथी साम्यवादियो के साथ यत्र-तत्र संघर्ष के बावजूद अभी तक किसी भी राजनीतिक दल की इस दबाव-समूह को नियन्त्रित करने की हिम्मत भी नहीं हुई है34।

राजनीतिक आर्थिक गतिविधियों के दो पक्षों में अधिकरण का प्रभाव नकारात्मक था। उग्र प्रभाव को समाप्त करने के लिए संयुक्त सर्वोच्च कमान ने मुख्य आर्थिक तथा वित्तीय संस्थाओं के संगठनों को समाप्त कर दिया। निश्चय ही मितसुई, मितसुबिशि; सुमितोयो तथा अन्य विशाल वित्तीय ट्रस्ट के रिकार्ड ऐसे थे जिनका समर्थन किया जा सकता था। साथ ही उन्होंने जापानी जनता के कल्याण का भी विरोध किया था।। किन्तु यहां भी पड़ोसी संगठनों के मामले के समान एक विशद बुराई तथा उसके निराकरण के उद्देश्य को, जापानी आर्थिक जीवन को व्यवस्थित करने के प्रश्न से उलझा दिया गया था। वास्तविकता यह है कि जेबात्सु भी जापानी लोगो के कार्य करने का स्वाभाविक तरीका है, जिसमें पारिवारिक व्यवस्था के आधार पर व्यापार की व्यवस्था की जाती है। इस व्यवस्था का उचित निर्देशन करके तथा मैनेजर वर्ग के माध्यम से उसे उचित ढ़ंग से नियन्त्रित करने पर—जो बात्सु गुट तो नहीं किन्तु जे बासु व्यवस्था एक विशिष्ट जापानी प्रजातन्त्रीय समाजवाद के अन्तर्गत नियंत्रित सामाजिक गतिविधि के विपरीत वैयक्तिक सुरक्षा को बनाये रखने के अपेक्षित सूत्र को प्रस्तुत करने में सफल होती।

जापान की नियन्त्रित क्रान्ति में सदा की तरह पर्याप्त उपेक्षित पक्ष उसका कृषि-आधार रहा है। यह उल्लेखनीय है कि अधिकरण के दौरान पर्याप्त कागजी प्रेरक भूमि-सुधारो के पश्चात् भी अभी भी जापानी कृषक का राजनीतिक दलों में दलों में उचित प्रतिनिधित्व नहीं है। उसके नवीन उदारवादी उग्र रोष का ध्यान सभी सरकारों तथा राजनीतिक दलों को रखना चाहिए। जापानी कृषक-समस्याओं का उल्लेखनीय तथा निश्चित स्वरूप वैसा ही है जैसा सभी देशो के पिछड़े हुए प्रदेशों में तथा विशेषतया पूर्वी देशों में पाया जाता है। किसी प्रकार के समाधान की आवश्यकता, जापान जैसे देशों के

34—रोदोशो की स्थापना पर विचार विमर्श तथा श्रम विधि की नियान्वित भी सरकारी गजट के अतिरिक्त संख्या 22 (शुक्रवार 8 अगस्त, 1947) पृष्ठ 1–17 में प्राप्त है।

अतिरिक्त तथा वाह्य दृष्टि से समस्या को आर्थिक तथा राजनीतिक प्रबुद्ध वर्ग द्वारा सुलझाने की प्रवृत्ति का विरोधाभास प्रस्तुत करती है35। भूमि-सुधार, जो व्यक्तियों का राजनीतिक निहित स्वार्थ बन गया था, वह अधिकरण दौरान एक सकारात्मक उपलब्धि था। इसे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक बढ़ावा दिया जाना चाहिये। आगे भूमि-सुधार की चर्चा 22 वें अध्याय में की गई है।
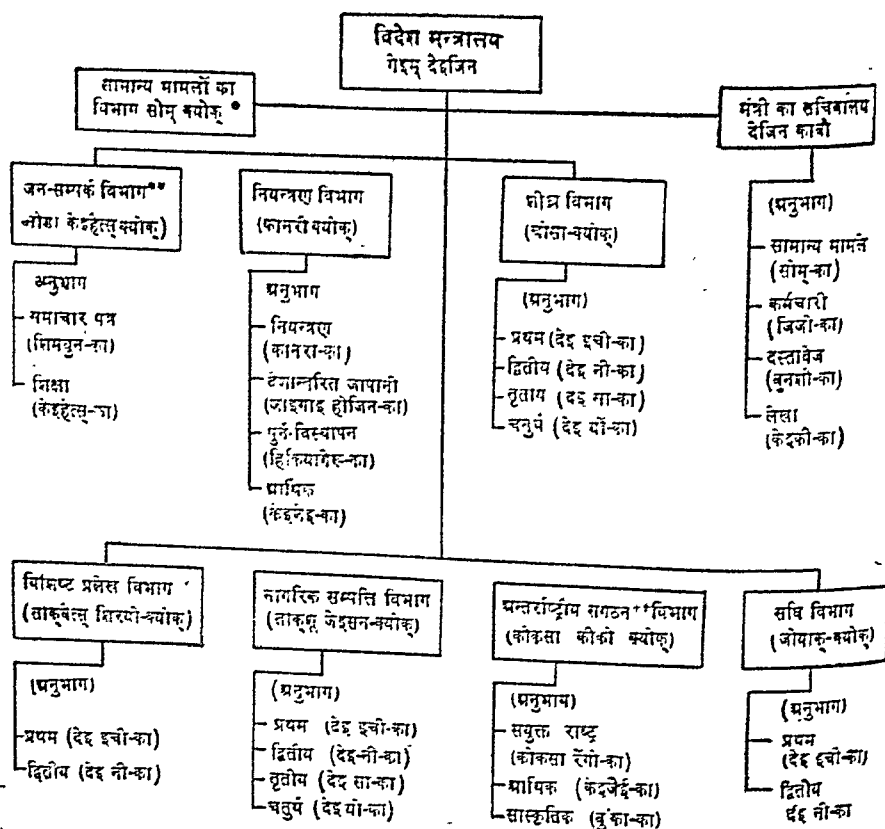
चार्ट 28 विदेश मन्त्रालय (गेइमुशो) नवीन प्रशासनिक ढांचा (जून 30, 1948)

35 [illegible] में सम्मिलित स्मरण पत्र तथा विवसन आयोग की स्थापना एन० के० एच० के प्रथम खण्ड संख्या 5 (15 अगस्त 1946 में पृष्ठ 9–14 के प्राप्य हैं। ग्रामीण भूमि सुधार के बारे में देखिए पूर्वोक्त खण्ड प्रथम, संख्या 6 (1 सितम्बर, 1946) पृष्ठ 11–14।

में एक के सिवाय सबने इस सम्मेलन के प्रस्ताव को स्वीकार किया, आठ राज्यों ने अमेरिकी मतदान-प्रणाली को भी स्वीकारा। सोवियत रूस ने इस प्रस्ताव का विरोध करते हुए इस बात पर जोर दिया कि प्रारम्भिक प्रारूप विदेशमन्त्रियों की प्रशांत महासागरीय परिषद के सम्मुख प्रस्तुत किया जाना चाहिए, जिसमें मात्र रूस अमेरिका ब्रिटेन चीन सम्मिलित हैं।

शांति-संधि की दिशा में वास्तविक प्रगति 1950 में हुई। यद्यपि मार्ग में सोवियत रूस में विरोध के अलावा अन्य कई बाधाएं थीं तथा उनमें एक नवीन कारक साम्यवादी चीन का उदय हुआ तो भी वाशिंगटन में अमेरिका के सुरक्षा-विभाग, जो कोरिया समस्या के कारण पर्याप्त चिन्तित था, ने मैकार्थर तथा विदेश-विभाग द्वारा प्रतिपादित जापान द्वारा शीघ्र शान्ति-संधि का विरोध जारी रहा। तथापि बादमें दोनों विभागों ने इस प्रकट सहमति के पश्चात कि अमेरिका जापान में अपने सैनिक अड्डों को बनाये रखेगा, शांति-संधि का मार्ग साफ हुआ। 18 मई को राष्ट्रपति ट्रूमैन ने संधि की समस्या अपने विशिष्ट परामर्शदाता (रिपब्लिकन तथा बाद में विदेश मन्त्री, जान फास्टर डुलेस) को सौंप दी। तथा सितम्बर को उसने विदेश विभाग को यह आदेश दिया कि वह इच्छुक सुदूर पूर्वी देशों से वार्ता प्रारम्भ कर दे।

स्वयं जापान में शांति संधि विचित्र रूप में 4 जून को उच्च सदन में वास्तविक राजनीतिक प्रश्न बन गई। प्रारम्भ में उदारवादी सरकार ने किसी भी राज्य से, जो जापान को स्वतन्त्र राज्य मानने को तैयार हो, शान्ति-संधि करने की घोषणा की थी। 1 मई को प्रशासन ने विरोधी पक्ष द्वारा उस प्रस्ताव की निन्दा का संकल्प 143 के मुकाबले 253 मतों से पराजित कर दिया। इस निन्दा-प्रस्ताव का समर्थन प्रजातन्त्रवादियों, समाजवादियों तथा सहयोगी समूहों ने किया था, जो चाहते थे कि रूस व चीन तथा अन्य मित्र राज्य भी यह संधि करें। इस प्रश्न पर विरोधी दल बुरी तरह से विभाजित थे तथा उदारवादी संगठित थे। 4 जून के चुनावों ने उदारवादियों को उच्च सदन में अधिक मत प्रदान किये। 1951 के मध्य तक कोरिया से साथ विराम-संधि के दौरान जापानियों को भी उनकी स्वतन्त्रता के बारे में सूचना दे दी गई। इस संधि पर हस्ताक्षर संयुक्त राष्ट्र संघ के जन्म स्थान सैनफ्रैंसिस्को में किये जाने थे[37]।

शायद इस शांति-संधि तथा जापान की नव प्राप्त स्वतन्त्रता के कई दिनों पश्चात कोई वरिष्ठ प्राध्यापक अधिग्रहण पर विचार कर उसकी अच्छाइयों को माने। वह पूर्णतः जापानी तरीके से विचारों को प्रकट करने में अधिक अपना कौशल दिखाने तथा बुद्धिमानी से अधिक विलक्षणता दिखाते हुए यह कहे,[38] "हम जापानी एक आदर्श पराजित जनता के रूप में असमर्थ रहे, क्योंकि अपने दो हजार वर्ष के राष्ट्रीय जीवन में हम कभी पराधीन

37—कान्फ्रेंस फार दी कन्क्लूजन एण्ड सिग्नेचर आफ दी ट्रीटी ऑफ पीस विद जापान, रिकार्ड ऑफ प्रोसीडिंग्स वाशिंगटन, 1951 [4392 प्रकाशन, अन्तर्राष्ट्रीय संगठन तथा सम्मेलन क्रम दो सुदूरपूर्व, 3]।

38—जापानी शिक्षा मन्त्री तकाहाशी सेइचिरो से क्षमा याचना करते हुए हम 1947 के ग्रीष्म डी० सी० स्मिथ से उनके साक्षात्कार के आधार पर प्रस्तुत करते हैं।

शांति-संधि का मामला—

पूर्णतया स्वाभाविक रूप में अधिकरण की राजनीति के दौरान सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रश्न यह था कि यह स्थिति कब समाप्त होगी। इस बात का श्रेय सर्वदा सर्वोच्च कमांडर जनरल डुगाल्स मैकार्थर को जाता है कि उसने सबसे पहले इस बात की पूर्व घोषणा की कि सैनिक अधिग्रहण में हमेशा नुकसान रहेगा। अपने प्रथम संवाददाता सम्मेलन में मार्च 17, 1047 को जनरल मैकार्थर ने अधिकरण का प्रथम चरण, जिसका सैनिक उद्देश्य था, समाप्त हो चुका था। तथा उसका मत था कि इसका राजनीतिक चरण, जो प्रजातन्त्रीकरण था, अभी अपूर्ण था तथा उसकी पूर्ति स्वयं जापानी ही कर सकते थे। तथापि अन्तिम परीक्षण तभी हो सकता था जब सैनिक नियन्त्रण को समाप्त किया जाए। प्रजातन्त्रीकरण की प्रक्रिया निरन्तर रहने वाली है। जिसमें वर्षों लगेंगे।" तथा तृतीय आर्थिक पक्ष अभी कठिनाई से प्रारम्भ भी नहीं हुआ था। उसने शीघ्र ही शांति-संधि करने की सिफारिश की जिसके पश्चात् जापान अपनी स्वतन्त्र अर्थव्यवस्था समाप्त कर सकता था।

सरकारी तौर पर जापानी दीर्घकाल से राष्ट्रों के संगठन में सम्मिलित होने के लिए लिए तैयार थे। यह तथ्य जापानी विशेषता के लिए उल्लेखनीय है कि जापान अधिकरण के दौरान जितना तटस्थ रहा उतना तटस्थ वह अन्तर्राष्ट्रीय संबन्धों में तोकूगावा काल से ही था। जापान संपूर्ण विदेशी संपर्क सर्वोच्च कमान के माध्यम से थे। वही सभी विदेसी दूतों, जिनमें स्वयं अमेरिकी दूत भी सम्मिलित थे, का स्वागत करता था। तथापि इस तटस्थता के आवरण के पीछे भी जापान कूटनीतिक प्रविधियों तथा तौर तरीकों को बनाये रखे। उसके प्रशिक्षित तथा अनुभवी कूटनीतिक अधिकारियों की अपेक्षाकृत गौण संस्था को केन्द्रीय सम्पर्क कार्यालय में स्थानान्तरित कर दिया गया[36]। (जी. ए. ओ शसेन रेनर्याकू चुओ जियू क्योकू) बाद में संयुक्त कमान के अधिकाधिक सबन्धित मंत्रालय की तकनीकी सहायता पर निर्भर होने के कारण सी एल. ओ. को 1 फरवरी 9948 को समाप्त कर दिया गया। तत्पश्चात् जैसे-जैसे शान्ति-संधि पर हस्ताक्षर का समय निकट आया गैमुशो अपनी पूर्वस्थिति में आ गया।

अतः शांति संधि के मार्ग में बाधा संयुक्त सर्वोच्च कमान अथवा जापानी सरकार उत्पन्न नहीं कर रहे थे तथा इस संधि में विलंब के लिए अन्य वृहत्तर कारक, जैसे शीत-युद्ध, उत्तरदायी थे। 11 जुलाई 1947 को अमेरिका ने सर्वोच्च कमाण्डर के सुझाव को स्वीकार सुदूरपूर्व आयोग के प्रारम्भिक सम्मेलन का प्रस्ताव किया जो इस आयोग से परे एक संधि का प्रारूप तैयार करे। इस प्रारूप को फिर इस आयोग के सदस्य राज्यों के विदेश-मन्त्रियों के सम्मेलन में प्रस्तुत किया जाएगा तथा अन्ततः जापान के साथ युद्धरत सभी राज्यों के सम्मेलन में प्रस्तुत किया जाएगा। जितने राज्यों से आग्रह किया गया उनमें

36—समुद्र पभी सम्पर्कों का विच्छेद संयुक्त सर्वोच्च कमान के पॉलिटिकल रिअरियनटेशन पूर्वोक्त खण्ड प्रथम, अनुसन्धान प्रथम "जापान के विदेशी मामालों पर नियन्त्रण" पृष्ठ 1–17 में है। सेन्ट्रल लायसन को ऑफिस को स्थापित करने वाले अध्यादेश को नित्पोन टाइम्स, 2 अक्टूबर, 1945 मे दिया गया है। टोक्यो शिम्बुन [सम्पादकीय]. 11 सितम्बर, 1945 मे सी० एच० ओ० में नौकरशाही के प्रमुख की कटु आलोचना की गई।

से एक के शिवाय सबने इस सम्मेलन के प्रस्ताव को स्वीकार किया, आठ राज्यों ने अमेरिकी मतदान-प्रणाली को भी स्वीकारा। सोवियत रूस ने इस प्रस्ताव का विरोध करते हुए इस बात पर जोर दिया कि प्रारम्भिक प्रारूप विदेशमन्त्रियों की प्रशांत महासागरीय परिषद के सम्मुख प्रस्तुत किया जाना चाहिए, जिसमें मात्र रूस अमेरिका ब्रिटेन चीन सम्मिलित हैं।

शांति-संधि की दिशा में वास्तविक प्रगति 1950 में हुई। यद्यपि मार्ग में सोवियत रूस में विरोध के अलावा अन्य कई बाधाएं थी तथा उनमें एक नवीन कारक साम्यवादी चीन का उदय हुआ तो भी वाशिंगटन में अमेरिका के सुरक्षा-विभाग, जो कोरिया समस्या के कारण पर्याप्त चिन्तित था, ने मैकार्थर तथा विदेश-विभाग द्वारा प्रतिपादित जापान द्वारा शीघ्र शान्ति-संधि का विरोध जारी रहा। तथापि बादमें दोनों विभागों ने इस प्रकट सहमति के पश्चात कि अमेरिका जापान में अपने सैनिक अड्डों को बनाये रखेगा, शांति-संधि का मार्ग खोले हुआ। 18 मई को राष्ट्रपति ट्रूमेन ने संधि की समस्या अपने विशिष्ट परामर्शदाता (रिपब्लिकन तथा बाद में विदेश मन्त्री, जान फास्टर डुलेम) को सौंप दी। तथा सितम्बर को उसने विदेश विभाग को यह आदेश दिया कि पद इच्छुक सुदूर पूर्वी देशों से वार्ता प्रारम्भ कर दे।

स्वयं जापान में शांति संधि विचित्र रूप में 4 जून को उच्च सदन में वास्तविक राजनीतिक प्रश्न बन गई। प्रारम्भ में उदारवादी सरकार ने किसी भी राज्य से, जो जापान को स्वतन्त्र राज्य मानने को तैयार हो, शान्ति-संधि करने की घोषणा की थी। 1 मई को प्रशासन ने विरोधी पक्ष द्वारा उस प्रस्ताव की निन्दा का संकल्प 143 के मुकाबले 253 मतों से पराजित कर दिया। इस निन्दा-प्रस्ताव का समर्थन प्रजातन्त्रवादियों, समाजवादियों तथा सहयोगी समूहों ने किया था, जो चाहते थे कि रूस व चीन तथा अन्य मित्र राज्य भी यह संधि करें। इस प्रश्न पर विरोधी दल बुरी तरह से विभाजित थे तथा उदारवादी संगठित थे। 4 जून के चुनावों ने उदारवादियों को उच्च सदन में अधिक मत प्रदान किये। 1951 के मध्य तक कोरिया से साथ विराम-संधि के दौरान जापानियों को भी उनकी स्वतन्त्रता के बारे में सूचना दे दी गई। इस संधि पर हस्ताक्षर संयुक्त राष्ट्र संघ के जन्म स्थान सैनफ्रैंसिस्को में किये जाने थे[37]।

शायद इस शांति-संधि तथा जापान की नव प्राप्त स्वतन्त्रता के कई दिनों पश्चात कोई वरिष्ठ प्राध्यापक अधिग्रहण पर विचार कर उसकी अच्छाइयों को माने। वह पूर्णतः जापानी तरीके से विचारों को प्रकट करने से अधिक अपना कौशल दिखाने तथा बुद्धिमानी से अधिक विलक्षणता दिखाते हुए यह कहे,38 "हम जापानी एक आदर्श पराजित जनता के रूप में असमर्थ रहे, क्योंकि अपने दो हजार वर्ष के राष्ट्रीय जीवन में हम कभी पराधीन

37—कान्फ्रेंशन फार दी कम्पयूजन चण्ड सिग्नेचर आफ दी ट्रीटी ऑफ पीस विद जापान, रिकार्ड ऑफ प्रोसीडिंग्स वाशिंगटन, 1951 [4392 प्रकाशन, अन्तर्राष्ट्रीय संगठन तथा कान्फ्रेन्स क्रम दो सुदूरपूर्व, 3]।

38—जापानी शिक्षा मन्त्री ताकाहासी सेईचिरो से क्षमा याचना करते हुए हन 1947 के ग्रीष्म टी० बी० स्मिथ से उनके साक्षात्कार के आधार पर प्रस्तुत करते हैं।

तक किये गए सुधारों का पुनरावलोकन अनिवार्य था।[2] इनके अनुसार जापान के लिये राजनीतिक परिष्कृति के एक स्तर को स्वीकार लिया गया था जो युद्ध पूर्व दिनों में जापान प्राप्त नहीं कर सका था। सन्धि के पश्चात् के दिनों में जापानी नेताओं के द्वारा अधिकरण के दौरान किये गए सुधारों को निरस्त किया गया।[3] निर्णायक गण अधिकांश अनुपात में अनुदार दृष्टिकोण को वोट दे रहे थे। 1956 के मध्य तक संवैधानिक पुनरवलोकन, नव प्राप्त संप्रभुता के चिह्नों को समन्वित करने के लिये, अत्यधिक आवश्यक था, तथापि यह कार्य क्रमशः शक्तिशाली बनते जा रहे समाजवादियों के संवैधानिक कानूनी पुनर्शस्त्रीकरण के प्रयास, शिक्षा पर केन्द्रीय नियन्त्रण, अनुदारवादियों द्वारा जापानी परिवर्तनों से क्रमशः संघर्ष के कारण कम निश्चित था।

विपर्ययी परिवर्तन

संयत पुनरावृत्ति अपने सर्वोच्च स्तर पर उस विधेयक के रूप में प्रस्तुत हुई जिसे 1956 में डाइट के दोनों सदनों में प्रस्तुत किया गया। इस विधेयक द्वारा मंत्रिमंडल के अन्तर्गत संविधान शोध-परिषद् की स्थापना की व्यवस्था की गई जिसका उद्देश्य राष्ट्रीय दृष्टि से संविधान का सम्पूर्ण परीक्षण करना था।[4] सरकारी कथन में यह कहा गया कि यह संविधान संयुक्त सर्वोच्च कमान की प्रार्थना पर बहुत छोटे अर्से में बनाया गया था। "अतः इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि ऐसी परिस्थितियों में जो संविधान लागू किया गया वह राष्ट्र द्वारा अभिव्यक्त स्वतन्त्रता का प्रतीक नहीं था। समाजवादियों ने इस सम्पूर्ण प्रक्रिया का विरोध किया और इसे उदारवादी प्रजातन्त्रवादियों द्वारा निर्मित संविधान को लागू करने की तैयारी बताया। 17 फरवरी 1956 में अशाई शिम्बुन ने यह चेतावनी दी" हम संविधान के शीघ्रतापूर्ण पुनरावलोकन का विरोध करते हैं।

2. इस प्रश्न पर अधिक विशद परिचर्चा, जिसमें संविधान के सम्भावित पुनरवलोकन के संभावित परिणामों की चर्चा भी की गई है। देखिये क०गुओ कावाई सोवेरन्टी एण्ड डिमोक्रेसी इन जापानीज कांस्टीट्यूशन" अमेरिकन पालिटिकल साइंस रिव्यू खंड 59, संख्या 3 (सितम्बर 1955) पृष्ठ 663-673।

3. ह्यून बोर्टन "पास्ट लिमिटेशन्स एंड दि फ्यूचर ऑफ डिमोक्रेसी इन जापान" पालिटिकल साइंस क्वार्टर्ली, 70, अंक संख्या 3 (सितम्बर 1955) पृष्ठ 410–420। लेखक को प्रोफेसर बोर्टन तथा अन्य से संपर्क स्थापित करने का अवसर 1956 के न्यूयोर्क में जापान के विदेश सम्बन्धों पर सेमीनार में मिला था। डा० फिलिप इ० मोसले, जो परिषद् के निदेशक हैं, तथा भूतपूर्व राजदूत अर्नेस्ट ए ग्रेस के सभापतित्व में अध्ययन की रिपोर्ट 1956 के पड्यन्त्र में "जापान बिटवीन ईस्ट एण्ड वेस्ट" शीर्षक के अन्तर्गत प्रकाशित होने वाला है। देखिये डा० बोर्टन का आगामी अध्याय 'डेमोक्रेसी इन पोस्टवार जापान'।

4. प्रथम 1955 के जून में इसे विशिष्ट अधिवेशन में प्रस्तुत किया गया तथा यह 129 के मुकाबले में 238 मत से निम्न सदन द्वारा पारित हो गया, किन्तु उच्च परिषद् मे समाप्त हो गया। दुबारा निम्न सदन में प्रस्तुत किये जाने पर यह 39 के विरुद्ध 239 मतों से पारित हो गया तथा फिर उच्च सदन के ग्रीष्म कालीन अधिवेशन में पर्याप्त संघर्ष के पश्चात् पारित हो गया। यद्यपि इस परिषद् की स्थापना मंत्रीमंडल के अन्तर्गत होने वाली थी, तथापि यह बिना सरकार के हस्तक्षेप के कार्य करने वाली थी। इसकी सदस्यता 50 रखी गई थी। जिसमें 30 डाइट के सदस्यों तथा 20 गैर राजनीतिक विशेषज्ञ को देखिये जापान का सुनेट जनरल, जापान रिपोर्ट संक्षिप्त ग्रथ) दूसरा खंड, संख्या 7 (17 अप्रेल, 1956)।

तथापि उसी दिन मैनिची शिम्बून ने संविधान के पुनरवलोकन का समर्थन किया, किन्तु संविधान-शोध-परिषद् को डाइट के स्थान पर मन्त्रीमंडल के अधीन रखने के प्रति शंका व्यक्त की गई।

जब शोध-परिषद् ने कार्य प्रारम्भ किया तो जिन संशोधनों का अक्सर उल्लेख किया गया था वे इस प्रकार थे—सम्राट को राज्य के प्रतीक के स्थान पर राज्य को सर्वोच्च अध्यक्ष बनाया जाए, अनु० नौ का प्रारूप पुनः तैयार किया जाए ताकि अध्याय तीन (जनता के अधिकार एवं कर्त्तव्य) को स्पष्ट किया जा सके, अनु० नौ को स्पष्ट किया जाए जिसमें मंत्रीमंडल को प्रतिनिधि सदन को भंग करने का अधिकार दिया गया है तथा उच्च सदन के कार्यों का भी पुनरवलोकन किया जाए।

संप्रभुता-का आर्थिक पक्ष-

अधिकरणकालीन सुधारों की पुनर्व्याख्या से ज्यादा कार्य आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त करना था। यहाँ जीवन के तथ्य और अधिक कठोर थे। तथाकथित उदार शान्ति सन्धि के पश्चात् भी जापान भूमि व स्रोतों की दृष्टि से गरीब तथा अधिक जनसंख्या वाला देश रहा।

1950 के मध्य तक आर्थिक अस्तित्व का प्रश्न विदेशी व्यापार की पहेली बन गया था। यह सत्य है कि डालर व्यापार के बीच की खाई में 514 मिलियन से 1955 में 103 मिलियन डालर तक कमी कर दी गई। फिर भी संयुक्त अमेरिका जापान के विदेश व्यापार में एक महत्त्वपूर्ण तथ्य बना रहा जो 1955 में जापान के कुल आयात का 1/3 तथा निर्यात का 1/4 भाग ले रहा था। निराशाजनक रूप से जापान अमेरिकी विदेशी व्यापार में अपेक्षाकृत रूप से कम महत्त्वपूर्ण कारक रहा, जो हमारे निर्यात का मात्र पांच प्रतिशत तथा कुल आयात का चार प्रतिशत प्राप्त कर रहा था।[5]

इसके अतिरिक्त आर्थिक रूप से जोड़ने वाली यह नलिका, जिसने जापानी अर्थ-व्यवस्था में जीवन फूंका था, कभी भी समाप्त कर दिये जाने के सकट में थी। अमेरिका जापान के साथ पर्याप्त नुकसानदायी व्यापार विशाल पैमाने पर इसीलिये कर रहा था कि वह उसका भूतपूर्व शत्रु था। कोरिया संघर्षों के दौरान बड़े पैमाने पर सामान दिया गया तथा हाल में अमेरिकी अतिरिक्त खाद्यान्न जापान को दिया गया, ताकि वह अपने येन के कोष को उद्योगीकरण तथा आधुनिकीकरण के लिये प्रयुक्त कर सके। इस अन्तिम कदम की आर्थिक उपयोगिता, जो हमारी ओर से निस्वार्थ प्रयास था, की आलोचना विरोधी पक्ष ने जापान की निरन्तर निर्भरता के सन्दर्भ में की।

सन्धि के पश्चात् जापान में कृषि योग्य भूमि के अनुपात जनसंख्या का घनत्व अधिकतम था। अधिकृत रूप से पर्याप्त निराशाजनक रूप में जन-कल्याण-मत्रालय-

5. लेखक इन आंकड़ों के लिये डा० जेरिम कोहम के आभारी हैं जिन्होंने भी पूर्वोक्त वैदिशिक मामलों की सेमीनार में भाग लिया था। 1956 में प्रोफेसर कोहन अपनी रचना 'जापान्स में इकॉनोमिक एवं पूर्वोक्त का संशोधन संस्करण तैय्यार कर रहे थे। देखिये केमीकल फार्म एक्सचेंज बुक इंटर नेशनल इकॉनोमिक सर्वे जापान संख्या 106 (फरवरी 1956 नवीनतम जनसंख्या के आंकड़े जापानी इति दूतावास से जापान वाशिंगटन (संक्षिप्त अंक) खण्ड प्रथम, संख्या 9 (14 दिसम्बर 1955) पृष्ठ 9 में प्राप्त किये जा सकते हैं।

कुछ जापानी तथा पश्चिमी प्रेक्षकों का विचार था कि एशिया महाद्वीप के निकट तथा एशियाई देशों की जनता के घनत्व के विचार से जापान को एशिया से व्यापार करना चाहिये। 1949 की योजना इसी विचार पर आधारित थी, किन्तु 1950 के मध्य तक जापान की इस नीति के परिणाम पर्याप्त उत्साहवर्द्धक नहीं दिखे। जापानियों ने तथा विदेशियों ने यह महसूस करना प्रारम्भ किया कि प्रतिटन के मूल्य की दृष्टि से जापान से, अन्दरूनी चीन से अधिक, मंगोलिया से ब्राजील निकट पड़ते थे। इसके अतिरिक्त साम्यवादी आधिपत्य वाले देशों से व्यापार करने में यह भी समस्या थी कि जापान को वह उन्मुक्त बाजार प्राप्त नहीं होता था जो उसे चीन के साथ की गई विषम सन्धियों के कारण प्राप्त था। जापान के आर्थिक भविष्य में एशिया महत्त्वपूर्ण स्थान अवश्य था किन्तु वाशिंगटन तथा मास्को के मध्य शक्ति तथा सुरक्षा के सन्दर्भ में उत्पन्न प्रतियोगिता का सामंजस्य भविष्य की तर्कसंगत तथा उचित आवश्यकताओं के साथ कैसे हो सकता है, यह कोई नहीं बता सकता था।

क्षति चिह्नों का समाप्त होना—

आत्मसमर्पण तथा स्वयं अधिकरण की नीतियों का जापानी जीवन पर ऐसा प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं पड़ा, जिसकी अपेक्षा इसकी योजना बनाने वालों ने की होगी। जापान ने द्वितीय महायुद्ध में अमेरिका की विजेता के रूप में पर्याप्त प्रशंसा की। किन्तु 1950 तक द्वितीय महायुद्ध में जापान के उत्तरदायित्व से कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण विषय तृतीय महायुद्ध में जापान की अपेक्षित भूमिका हो गया था। यदा-कदा एक स्पष्ट पुनरावृत्तिवादी समाचार-लेखक तोकुतोनी (सोहो) इचिरो जापानियों की मृदुता के आवरण को हटा कर जापानी देशभक्ति वाद की भाषा बोला करता था। जापानी 1945 की घटनाओं को भुला कर उनसे मुक्ति पा चुके।[7]

प्रायः जापानी भविष्य की ओर उन्मुख होते थे। शायद यह कहना अधिक सुरक्षित है कि मैकार्थर युग के अधिकरण-काल में जापान में प्रेरित क्रान्ति की तुलना में काफी कम परिवर्तन हुआ। तथापि फिर अधिकरण के दौरान जापानी जीवन अपने अनुभवों से परे पर्याप्त परिवर्तित हुआ, तथा जापान की सैनिक सरकार ने अपने आलोचकों की अपेक्षा कहीं कम संघर्ष के साथ शासन का संचालन किया।

7. कभी-कभी मुकदमा चलाने वाली तथा प्रतिक्रियावादी पक्ष की भूमिकाएं विचित्र ढंग से उलट जाती थीं। भूतपूर्व राजदूत ज्रेश्यू सी ग्रिमू द्वारा रचित ग्रन्थ ने जापानी प्रेस में पर्याप्त चर्चा प्रारम्भ की। उसने किसी भी अन्य अमेरिकी से आगे बढ़ कर यह आरोप लगाया तथा संयुक्त राज्य अमेरिका तथा उसमें भी राष्ट्रपति रूजवेल्ट तथा विदेश सचिव हल को जापान से अमेरिका के युद्ध को टालने की असफलता का उत्तरदायी बताया। पर्ल हार्बर की ग्यारहवीं वर्ष गांठ पर टोक्यो में साक्षात्कार देते हुए वाशिंगटन में जापान के युद्धकालीन राजदूत नोमुरा किचो साबुरो ने रूजवेल्ट तथा हल को दोषमुक्त कर दिया। जापान में चूंकि जनमत को संगठित करने वाले तथा उग्र सैन्यवादी तत्वों को नियन्त्रित करने वालों के अभाव में वाशिंगटन से समझौता-वार्ता में कठिनाई उत्पन्न हुई। राजकुमार को नोये, जिस पर ग्रिमू विश्वास करते थे, नेतृत्व करने में असफल रहा, यह नोमूरा का निष्कर्ष था। तोकुतोनी इचिरो शोरिका नो हिसा८५(विजेता के दुःख) टोक्यो, 1953। जोसेफ सी ग्रीयू का हरबुलेट एस, न्यूयोर्क 1952 ने निप्पोन ट इम्स (22, 23, 24 नवम्बर, 1952 ने प्रकाशित किया जिसमें (9 दिसम्बर 1952) में पर्ल हार्बर और नोमुरा की कहानी भी दी गई।

तथापि ऊपरी चिह्न अभी विद्यमान हैं। टोक्यो की सड़कों के, 774 अभी भी अमेरिकी सैनिक नाम ए बी सी डी अथवा प्रथम द्वितीय तृतीय आदि इसलिये विद्यमान हैं क्योंकि जापानियों को ये नाम पुराने वर्ष के नामों से सुविधाजनक लगते हैं। रेलवे व्यवस्था, जिसको मूल जर्मन मॉडल पर बनाया गया था, अभी भी अमेरिकी साफाई व्यवस्था के फार्म तथा स्टेशनों के नाम रोमन शब्दों में विद्यमान हैं। प्रायः सभी प्रीफेक्चरों में जो गाई गाकारी अथवा रेनाशकु शित्सु (सम्पर्क अधिकारी) का अस्तित्व विदेशी यात्रियों तथा विद्वानों के लिये उपयोगी सिद्ध हुआ।

इन ऊपरी परिवर्तनों के नीचे गहराई में अधिकरण के बारे में महत्त्वपूर्ण निर्णय जापानियों के मस्तिष्क में उसी प्रकार अंकित हुआ जैसे जापानी इतिहास में पहले किये गए आयातों को मानसिक दृष्टि से ग्रहण कर लिया गया। एक प्रीफेक्चर में प्रीफेक्चर के सभासदों से अधिकरण के अच्छे तथा बुरे पक्ष पर विचार अभिव्यक्त करने के लिये कहा गया। इन स्त्री तथा पुरुषों ने उन्मुक्त रूप से उन विशेषताओं पर प्रकाश डाला जो उन्हें पसन्द या नापसन्द थी। परिणाम यह निकला कि पसन्द की गई विशेषताओं की तुलना में नापसन्द की गई विशेषताएँ अधिक थी। शिक्षा में सुधार, नवीन कर-व्यवस्था तथा सरकार में कमीशनों की व्यवस्था की आलोचना की गई, जबकि स्वास्थ्य-व्यवस्था, कल्याण-योजनाएँ तथा भूमि-सुधारों की प्रशंसा की गई। उसी प्रीफेक्चर से बहुसंख्यक मतदाताओं में से 45 प्रतिशत को अधिकरण में कोई अच्छाई नजर नहीं आई तथा 44 प्रतिशत कोई बुराई नहीं बता सके। जो यह मानते थे कि जापान पर अधिकरण का समग्र प्रभाव अच्छा था वे अस्पष्ट थे तथा प्रजातन्त्रीकरण की सामान्य भाषा में बोलते थे। लगभग चालीस प्रतिशत का विचार था कि कुछ सुदृढ़ नेता सन्धि के पश्चात् जापान में समस्याओं को सुलझाने में तथा मात्र विषयों की परिभाषा करने में राजनीतिक विचार-विमर्श तथा दलों की अपेक्षा कहीं अधिक सफल होंगे।[8]

शुद्धिकरण समाप्त हो गया। स्वयं अधिकरण ने कई ऐसे लोगों को पुनः ले लिया था जिन्हें पहले मित्र राज्यों के सैनिक अधिकारियों ने सार्वजनिक जीवन से हटा दिया था। जापान में जन सामान्य इस पक्ष में था कि युद्ध-अपराधियों को अत्यधिक दण्ड दिया जाये। युद्ध अपराधी जननायक अवश्य बने किन्तु अर्द्ध विस्मृत जननायक। अशुद्धीकृत लोगों का कोई संगठित समूह नहीं बना। 1952 के आम चुनावों में वे सम्पूर्ण दलों में विभाजित थे तथा वे गैर राष्ट्रवादी समूह के नहीं माने गए।

आघात-पूर्ति की यह प्रक्रिया इतनी शान्त थी कि नवीन संविधान में संशोधन की की समस्त वार्ता जापान में सम्पूर्ण संवैधानिक स्वरूप के स्थान पर जापान के पुनः

8. इस खंड का लेखक इन अनुभवों के लिये शोध-संस्थान में उसके सहयोगी तथा सहयोगी भाषा अधिकारी डगलस एच मेंडल के प्रति आभारी है। 1952-53 के अन्तर्गत श्रीमान मेंडल ने जापानी अध्ययन के मिचीगन-संस्थान में जनता तथा नेतृत्व का अध्ययन जापानी राजनीतिक, जनमत तथा आचरण का ज्ञान प्राप्त करने के लिये किया। न्यादर्श केन्द्रीय योमाकाकू सेतवाओकायामा केन से लिये गए, तथा तुलना के लिये ग्रामीण शीमेन केन से आंकड़े लिये गए। इस विश्लेषण की पड़ताल जापानी राजनीतिक वैज्ञानिक ने डा० रोयामा मासामिचो की जानकारी के आधार पर की। अपने परिष्कृत रूप में शायद यही तथ्य वेंटले की मिचीगन विश्वविद्यालय के प्रस्तुत अध्ययन में मिलेगा। ऐसे अध्ययन अन्य समाचारपत्रीय वर्णनों तथा सरकारी विवरणों से कहीं अधिक अधिकरण पर निर्णय प्रस्तुत करते है।

शस्त्रीकरण पर केन्द्रित हो गई। प्रशासन के द्वारा उठाये गये संवैधानिक परिवर्तन के प्रश्न के प्रति 1953-54 में अधिकांशतया नकारात्मक जनप्रतिक्रिया हुई। राष्ट्रीय डाइट पुस्तकालय के डा० काना मोरी तो कू जिरो तथा भूतपूर्व प्रधानमन्त्री आशिदा हितोषी, जिन्होंने नवीन संवैधानिक कानून का निर्माण किया, का दावा था कि पुनर्शस्त्रीकरण के लिये, विद्यमान संविधान में, संशोधन करने की आवश्यकता नहीं थी। तथापि जिन राजनीतिक दलों के उम्मीदवारों ने संवैधानिक अथवा असंवैधानिक तरीके से जापान के पुनर्शस्त्रीकरण का प्रस्ताव किया, उन्होंने 1953 के चुनावों में यह पाया कि उस सन्दर्भ में प्रकट किये गए विचार राजनीतिक दृष्टि से विस्फोटक थे।

साम्राज्य तथा शितो—

जापानी साम्राज्यिक परिवार ने अपनी प्राचीन प्रतिष्ठा के साथ आधुनिक लोकप्रियता को जोड़ने में पर्याप्त चतुरता तथा परिष्कृत रुचि दिखलाई। 10 नम्बर 1952 को युवराज अकिहितो अपने अस्थाई निवास-स्थान शिबुया से शाही महल को घोड़ा गाड़ी में बैठ कर गया जो इस बात का प्रतीक था कि वह अब वयस्क हो चुका था तथा राजगद्दी का उत्तराधिकारी था। सम्राट् राजनीति से परे रहा, तथापि वह जापानी समाचार-पत्रों तथा जनमत के माध्यम से नवीन जापान का ऐसा प्रवक्ता रहा जिसने अपने लोगों के साथ पराजय का अनुभव तथा भविष्य में पुनर्निर्माण की आशा को बांटा था।

शाही परिवार ने पर्याप्त संकटपूर्ण कदम उठाया जब वह लन्दन में महारानी एलिजाबेथ के सिंहासनरोहण समारोह में भाग लेने गया। युद्ध कालीन विदेशी तथा स्वदेशी आक्रोश फिर भड़क सकता था। किन्तु विश्व-प्रतिक्रिया संयत तथा मैत्रीपूर्ण रही तथा स्वयं अकिहतो ने इस सन्दर्भ में सहायता की।

शितो, जिसे राष्ट्रीय धर्म के रूप में अपदस्थ कर दिया गया था, राष्ट्रीय पंथ के रूप में बना रहा। इसे कामहा उपासना-गृह जिसे परम्परागत दृष्टि से ईसा के जन्म के पांच वर्ष पूर्व सूर्य देवी अयातेरासू ओमीकामी को समर्पित कर दिया गया था, के पुजारियों के संगठन का निगम मात्र बन गया। इसे के तीर्थ यात्रियों की संख्या 1940 के आठ मिलियन से 1947 में 7,80,000 रह गई किंतु 1950 में 2 मिलियन से तथा 1952 में साढ़े तीन मिलियन बढ़ गई। सैकड़ों स्कूलों के बच्चे अपने शिक्षकों के नेतृत्व में जापानी होने के नाते अपने कर्त्तव्यों को पूरा करने के लिए उपासना गृह के सम्मुख एकत्र हुआ करते थे। बहुत कम लोगों ने संविधान के अन्तर्गत प्राप्त नवीन धर्म की स्वतन्त्रता का प्रयोग करते हुए अपने देश की मातृदेवी के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करने से इन्कार किया, हालांकि उन्हें इस बारे में चयन की स्वतन्त्रता दी गई थी।[9]

9. शितो संस्कृति के समाज के शितो के रहस्य को विदेशियों को स्पष्ट करने के लिये बुलेटिन टोक्यो क्वार्टर्ली के सम्पादक नाटिकाम्बूदा ने लिखा। खंड प्रथम संख्या 1 (मार्च 1953) में एक शितो सन्देश प्रकाशित किया गया, जिसमें उपासनागृहों की परिस्थिति शितो तथा राष्ट्रवाद, बड़े उपासनागृह में विश्वास तथा पर्वों कुष्ट चित्र प्रकाशित किये गये। मेइजी उपासनागृह के मुख्य ताकाताकुकाना नोबुराके नेनम्बि के पश्चात् शितो की पृष्ठभूमि तैयार की "यह अत्यधिक लज्जा का विषय है कि जापानी शितो की युद्ध से पहले तथा युद्ध के बाद विश्व में कटु आलोचना की गई थी तथा इसको अत्यधिक गलत ढंग से समझा गया तथा अधिकरण के दौरान इसका इतना दमन किया गया जिसकी अपेक्षा जापानियों ने कभी नहीं की थी—अब हमें यही प्रयास करना चाहिये कि विश्व के अन्य देशों के साथ एक नवीन साकारात्मक संस्कृति का विकास किया जाए।

सार्वजनिक प्रशासन का विकास—

साम्राज्य के साथ-साथ प्रशासनिक तन्त्र भी प्राचीन तथा जापानी दोनों हैं। युद्ध, पराजय, अधिकरण, तथा सन्धि के पश्चात् सुधारों के बावजूद जापान का युद्धपूर्व का प्रशासनतन्त्र जटिल, बिखरा हुआ तथा दिशाहीन बना रहा। प्रशासनिक विकास का तृतीय दबाव संयुक्त राज्य अमेरिका तथा जापान के मध्य विद्यमान सन्धि की संरचना थी।[10]

1949-50 में जापान द्वारा किये गए सुधारों के प्रयास व्यवहार में सफलता प्राप्त नहीं कर सके। तब मंत्रिमंडल ने अमेरिकी विधा का आयात करते हुए गणमान्य नागरिकों का जापानी "हूवर आयोग" नियुक्त किया, जिसने 15 अगस्त को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया और जिसे दो माह पश्चात् मंत्रिमंडल ने प्रेषित किया तथा 1952 में उसे अधिकांश रूप में क्रियान्वित कर दिया गया। संक्षेप में इस रिपोर्ट के सुझाव थे—अधिकरण कालीन प्रशासन की समाप्ति, (सेनरयो ग्योसेई) अधिकारियों के सरलीकरण के द्वारा प्रजातन्त्रीकरण, वित्त की आडिट तथा लेखा की व्यवस्थाएँ प्रशासन के नियन्त्रण से सम्बन्धित मंत्रालय में कार्यालयों तथा एजेन्सियों का पुर्नसंगठन किया जाए तथा प्रशासन में कटौती एवं सुदृढ़ीकरण किया जाए।';[11]

1952 में किये गये सुधार बने रहे। कमीशनों, एजेंसियों, का विलीनीकरण तथा पुर्नविभाजन उल्लेखनीय था। सभी विभागों के आन्तरिक गठन को सुव्यवस्थित बनाने के साथ संख्या में पर्याप्त कटौती की गई थी। पहले के समान ही सरकार में प्रमुख विभाग मंत्रालय ही थे जिनका एक कार्यालय (प्रधानमन्त्री कार्यालय) तथा एक सत्ता (राष्ट्रीय अधिकारी संस्था) थी। प्रत्येक मंत्रालय सचिवालय ब्यूरो विभागों, कमीशन, कार्यकारिणी तथा उपविभागों में विभाजित था। प्रत्येक विभाग के प्रमुख (राज्यमन्त्री) की सहायता के लिये एक उपमन्त्री होता था तथा उसे एक संसदीय उपमन्त्री नियुक्त करने की शक्ति प्रदान की गई थी।[12]

10. ये अनुमान ओकेजनल पेपर्स सेन्टर फार जापानीज स्टडीज संख्या तीन (1952) पृष्ठ 47–56 में ए नोट ऑन दि एमरजिंग स्ट्रक्चर ऑफ दि पोस्ट ट्रीटी जापानीज नेशनल गवर्नमेंट ने प्रकाशित किये गये। यहाँ लेखक नाकागावा होज की प्रशंसा करता है। जो प्रधानमन्त्री के आधीन ग्योसेई कानरियो प्रशासनिक प्रबन्धक एजेंसी का उपाध्यक्ष था। नाकागावा उन सार्वजनिक पदाधिकारियों का प्रतिनिधि है, जिनका हित प्रशासनिक ढांचे के सुधार में है। (नाकागावा ने बाद में फिलिपाइन्स गणराज्य के मन्त्री का पद ग्रहण किया)। कानूनी तौर पर ए० एम० ए० ने यह अध्ययन प्रशासन (2) नियोजन संरचना तथा कार्य (ब) संगठनों की रचना उन्मूलन तथा (द) गतिविधियों का निरीक्षण का अधिकार दिया। ग्योसेई कानरियो सेची हो (लॉ एस्टी बिलुशिंग दि एडमिनिस्ट्रेटिव मैनजमेंट एजंसी (टोक्यो, 31 जुलाई, 1957 तक संशोधित (संक्षिप्त ग्रंथ)।

11. नाइकाकू काम्बो (मंत्रीमंडल सचिवालय) ग्योसेई सेइदो नो काइकाकू नी कानसुरु रोशिन (प्रशासनिक व्यवस्था के सुधार पर रिपोर्ट) टोक्यो, 14 अगस्त, 1951) पृष्ठ 22।

12. सम्मिलित की गई सांख्यिकी के लिये देखिये परिशिष्ट दो, तथा प्रशासनिक पदों की चयनित पदावली के लिये, अंग्रेजी समानार्थ शब्दों के साथ परिशिष्ट प्रथम "स्ट्रैक्चर ऑफ जापानीज गवर्नमेंट" पूर्वोक्त।

स्वतन्त्र एजेंसियों को समाप्त करने अथवा उन्हें प्रधानमन्त्री के कार्यालय में विलीन करने का साहसिक प्रयास किया गया जिसके परिणामस्वरूप प्रधानमन्त्री का पद अमेरिकी सरकार के राष्ट्रपति के समान शक्तिशाली हो जाता। राष्ट्रीय अधिकारी संस्था (जिनजी-इन) जिसे प्राय: चौथी शक्ति कहा जाता था, (मन्त्रीमण्डल), डाइट तथा न्यायालय के अतिरिक्त) ही इसका एक मात्र अपवाद थी। अन्तत: प्रधानमन्त्री के अन्तर्गत आयोग बनने से पहले इसने लोगों में यह शंका उत्पन्न कर दी कि यह परम्परागत नौकरशाही को छिपाने का आवरण था।

यद्यपि प्रधानमन्त्री की शक्तियों में कटौती कर दी गई थी तो भी उसे सुदृढ़ बनाया गया। मुख्य कार्यालय में एक सचिवालय, पेन्शन ब्यूरो तथा सांख्यिकी-ब्यूरो होता था। अधिकरणकालीन आर्थिक स्थिरीकरण-बोर्ड को समाप्त कर दिया गया तथा उसके स्थान पर प्रधानमन्त्री-कार्यालय के बाह्य अंग के रूप में आर्थिक जांच-आयोग की स्थापना की गई। संग्रहण एजेंसी, जो जापान में अमेरिकी खरीददारी का माध्यम थी, ने एक नवीन शैली के आर्थिक राजनीतिक संरक्षण को जन्म दिया। अन्य एजेन्सी तथा कमीशन, जिन्हें समाप्त किया गया, व्यापार, भूमि स्थानीय स्वायतता, होक्कूईदा विकास तथा प्रशासनिक प्रबन्ध से सम्बन्धित थे।

प्रधानमन्त्री के कार्यालय के अधीन एक नवीन राष्ट्रीय सुरक्षा एजेन्सी (होंचो) की स्थापना पुनर्शस्त्रीकरण की विस्फोटक समस्या को सुलझाने के प्रयास का संक्रमणकाल था। विद्यमान कानून के द्वारा सुरक्षामन्त्री के स्थान पर गैर सैनिक नागरिक हो हो सकता था। प्रधानमन्त्री योशिदो ने बड़ी समझदारी से इस विभाग को अपने पास रखा तथा बाद में होंचों के निदेशक किमुरा श्री कूतारो नामक राज्यमन्त्री को सौंप दिया। अक्टूबर, 1952 के पश्चात् राष्ट्रीय पुलिस सुरक्षा-दस्ता, सुरक्षा-सेना (होआनताई) बन गई। प्रधानमन्त्री के अधीन एक राष्ट्रीय सार्वजनिक सुरक्षा-आयोग भी था। इसका मुख्य कार्यालय राष्ट्रीय ग्रामीण पुलिस था। यह पुलिस वस्तुत: प्रीफेक्चरों में बंटी हुई थी और एक राष्ट्रीय अग्नि सुरक्षा कार्यालय भी था।

निस्सन्देह पुनर्गठित विदेशी मामलों का कार्यालय (गैमुशो) सन्धि के पश्चात् मन्त्रिमण्डल में किया गया सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन था। 1951 की सुधार-योजना में सभी एजेन्सियों में से मात्र गैमुशो के विस्तार की सिफारिश की गई थी। सन्धि के पश्चात् भी विदेशमन्त्री को अन्य मन्त्रियों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने में कठिनाई का अनुभव हुआ। उसे तथा उसके अधिकारियों को अन्य एजेन्सियों पर अधिकार स्थापित करने के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ तथा उसकी सुरक्षा-सेनाओं से आग्रह करना पड़ा। अड्डों से परे संयुक्त राष्ट्र संघ की सेनाओं के लिए उन्होंने न्याय-मन्त्रालय के माध्यम से प्रचार किया तथा कोरिया जलक्षेत्र में मत्स्य-पालन की सीमाओं को लेकर कृषि तथा जंगलात-मन्त्रालय से विवाद करना पड़ा।

संख्या की दृष्टि से गैमुशो सीमित रहा (1952 में विज्ञान-भवन के ऊपरी मंजिल के तीन खण्डों में किराये पर इसका कार्यालय था, जिसमें 1581 कर्मचारी कार्य करते थे।) अधिकरण के पश्चात् भी जिन अनुभवी कूटनीतिज्ञ अधिकारियों को अपदस्थ किया

किया गया था उन्हें वापिस वरिष्ठ स्थिति प्राप्त नहीं हो सकी, तथापि एक बार फिर युवा-अधिकारियों के प्रबुद्ध वर्ग को आकर्षित करते हुए गैमुशो के 18 राजदूतावास, 14 प्रतिनिधि-मण्डल तथा 16 वाणिज्य-दूतावास तथा एक मिशन तीव्र गति से प्रतिष्ठावान होते जा रहे थे। निश्चय ही यह मन्त्रालय स्पष्ट संगठन का एक मॉडल था तथा उन लोगों की ईर्ष्या का विषय बन सकता, जो प्रायः (संगठन चार्ट 29 में दिया गया है) अमेरिका के विदेश-विभाग की जटिलताओं के कारण परेशान होते थे।

अन्य मन्त्रालयों में आन्तरिक पुनर्गठन कम किया गया। न्याय-मंत्रालय (होमुशो) अपने नये नाम में अमेरिका के न्याय-संगठन एटार्नी जनरल की व्यवस्था के प्रभाव का प्रतीक था।

शक्तिशाली वित्तमंत्रालय (ओकुराशो) को और सुदृढ़ बनाया गया। बजट तथा प्रशासनिक प्रबन्ध इसके बजट ब्यूरो के हाथ में बना रहा। सुधारवादी सार्वजनिक प्रशासक स्पष्ट रूप से यह अपेक्षा करते थे कि ब्यूरो को प्रधानमन्त्री को स्थानान्तरित कर दिया जाएगा, जहाँ से यह प्रशासनिक प्रबन्ध एजेन्सी के निकट सहयोग में कार्य कर सकेगी। पृथक् अधिकारी एजेन्सी, वित्तीय तथा प्रशासनिक नियंत्रण के कारण कंवात्सु के विरुद्ध शक्तियाँ भी बुरी तरह विभाजित थी।

जनकल्याण, कृषि तथा जंगलात, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार तथा उद्योग, यातायात, शिक्षा, डाक सेवाओं, श्रम तथा पुनर्निर्माण के मन्त्रालयों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। जापानी टेलीफोन तथा टेलीफोन कम्पनी ने दूर संचार-मन्त्रालय के कर्त्तव्यों को ग्रहण कर लिया।

इस सम्पूर्ण पुनर्गठन तथा सघनीकरण के परिणामस्वरूप कुल अधिकारियों की संख्या में कमी हुई, तथापि सुधारों के प्रथम चरण के बावजूद राष्ट्रीय सरकार के 30 लाख अधिकारियों का चयन किया गया। फरवरी 1953 तक सरकार द्वारा प्रशासन में दस प्रतिशत और कटौती करने की योजना विरोधी दलों द्वारा आगामी चुनावों को ध्यान में रख कर किये जाने वाले प्रचार के कारण खटाई में पड़ गई।

अगर किसी का यह विचार था कि नवीन संविधान के अन्तर्गत कैंवात्सु विलीन हो जाएगा तो यह उनका भ्रम था। जापान के प्रसिद्ध राजनैतिक वैज्ञानिक डा० रोमाया मैसिदिची ने लिखा था कि सन्धि के पश्चात् जापान में प्रजातन्त्र भयंकर शत्रु प्रशासक वर्ग था। शक्तिशाली विरोधी पक्ष के अभाव, दुर्बल दलीय मंत्रीमंडल तथा विधायकों की अज्ञानता से सभी प्रयासों के बावजूद प्रशासक वर्ग और सुदृढ़ बन गया।[13]

तथापि यह पर्याप्त उत्साहजनक है कि जनता द्वारा प्राप्त नवीन स्वतन्त्रता का प्रशासकों द्वारा उपयोग करने में जो दो प्रयास किये गए उनसे भयंकर विरोध प्रकट करते हुए मंत्रिमंडल के सूचना ब्यूरो के अध्यक्ष तथा आशाई भूतपूर्व सम्पादक ने 1952 के उत्तरार्द्ध में यह घोषणा की कि सरकार एक सूचना-एजेन्सी की स्थापना का विचार कर

13. डा० मासमिनि रोमाया "ब्यूरोक्रेट्स एनीमी ऑफ डेमोक्रेसी" में एक लेख का सारांश निप्पोन टाइम्स, 20 सितम्बर, 1953 में देखिये।

- मन्त्री (गेइमु दैइजिन)
  - संसदीय उप मन्त्री (सैइमु जिकान)
  - मन्त्रालयीय सलाहकार (गैइमुशो कोमोन)
  - मन्त्रालयीय पार्षद (गैइमुशोसैयो)
  - स्थायी उप मन्त्री (जिमु जिकान)
    - मन्त्री का सचिवालय (दैइजिन कोम्बो)
      - सामान्य मामलों का अनुभाग (सोमुका) [प्रशासन, नियोजन, डायट सम्पर्क]
      - पूर्व पत्र अनुभाग (जिंजिका) [पूर्व पत्र डिपार्टमेंट]
      - प्रोटोकोल अनुभाग (जितेनका)
      - पुरालेख अनुभाग (बुनशोका)
      - तार एवं अनुवाद विदेशी दस्तावेजों का तैयार अनुभाग (देनशिन्का)
      - [संचार]
      - लेखा अनुभाग (केइक्का) [लेखाकन]
      - कल्याण अनुभाग (कोसाइका) [भण्डार]
      - अनुसंधानकर्ता कार्यालय (शिंगीशित्सु) [विशिष्ट निर्दिष्ट कार्य]
    - एशिया विभाग (एजिया क्योकु)
      - प्रथम अनुभाग (देइ इचका) पुनर्विस्थापन सम्बन्ध
      - द्वितीय अनुभाग देइनिका [कोरिया व चीन]
      - तृतीय अनुभाग (देइ सांका) [हिन्द चीन, मलाया, फिलीपीन्स, इण्डोनेशिया गणतन्त्र]
      - चतुर्थ अनुभाग (देइ योंका) [मध्य एवं निकट पूर्व के अलावा अन्य एशियाई देश]
      - पंचम अनुभाग (देइ गोका) [दक्षिणी समुद्र की मुआवजा समस्यायें, मंचूरिया, फारमोसा, सखालिन एवं कोरिया]
      - प्रमुख विस्थापन परीक्षा कक्ष (के दोरेमिन चिंसोशित्सु) (प्रमुख विस्थापन)
    - यूरोप-अमेरिका विभाग (ओबेइ क्योकु)
      - प्रथम अनुभाग (देइ इचका) (यू० एस०, कनाडा)
      - द्वितीय अनुभाग (देइ निका) (केन्द्रीय एवं दक्षिण अमेरिका समस्यायें)
      - तृतीय अनुभाग (देइ सांका) (यूनाइटेड किंगडम, आयरलैण्ड)
      - चतुर्थ अनुभाग (देइ योंका) (पश्चिमी यूरोप, मध्य एवं निकट पूर्व, अफ्रीका)
      - पंचम अनुभाग (देइ गोका) (पूर्वी यूरोप)
      - पास पोर्ट अनुभाग (रायोकेंका) (पासपोर्ट)
    - आर्थिक विभाग (केइजाई क्योकु)
      - प्रथम अनुभाग (देइ इचका) (वाणिज्य नीति, व्यापार संधियां, विनिमय नियन्त्रण एवं विदेश प्रचार)
      - द्वितीय अनुभाग (देइ निका) (परिवहन एवं जहाज, सीमा शुल्क, वित्त एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्रशासन)
      - तृतीय अनुभाग (देइ सांका)(अमेरिका)
      - चतुर्थ अनुभाग (देइ योंका) (स्टर्लिंग खण्ड)
      - पंचम अनुभाग (देइगोका) एशिया
      - षष्ठ अनुभाग (देइ रोक्का) (यूरोप, निकट एवं मध्य पूर्व, अफ्रीका)
    - संधि विभाग (जायाकु क्योकु)
      - प्रथम अनुभाग (देइ इचका) (संधियां)
      - द्वितीय अनुभाग (देइ निका) (अन्तर्राष्ट्रीय प्रशासन से सम्बन्धित संधियां)
      - तृतीय अनुभाग (देइ सांका) (राष्ट्रीयता एवं दोहरी राष्ट्रीयता)
      - चतुर्थ अनुभाग (देइ योंका) (विदेश व्यापार से सम्बन्धित कानून की जांच)
    - अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग विभाग (कोकसेइ क्योरोकु क्योकु)
      - प्रथम अनुभाग (देइ इचका) (संयुक्त राष्ट्रसंघ)
      - द्वितीय अनुभाग (देइ निका) (अन्तर्राष्ट्रीय श्रम, कॉन्फ्रेंसें एवं श्रम संगठन)
      - तृतीय अनुभाग (देइ सांका) (प्रशासनिक समझौते)
      - चतुर्थ अनुभाग (देइ योंका) (सम्पर्क, संयुक्त राष्ट्रसंघ की सेना)
    - जन सूचना एवं सांस्कृतिक विभाग (जोहो बुंका क्योकु)
      - प्रथम अनुभाग (देइ इचका) (आतंरिक एवं बाह्य अनुसूचना एवं प्रकाशन)
      - द्वितीय अनुभाग (देइ निका) (विदेशी प्रचार एवं समाचारों की जांच)
      - तृतीय अनुभाग (देइ सांका) (सांस्कृतिक समझौते एवं सांस्कृतिक सम्बन्ध)
      - चतुर्थ अनुभाग (देइ योंका) (यूनेस्को पार्टनर एवं गैर सरकारी सांस्कृतिक कॉन्फ्रेंसें)
    - सम्बद्ध अंग
      - विदेश सेवा सम्बन्धी परिषद (गैइमु जिंजी शिनगीकेइ)
      - विदेश सेवा प्रशिक्षण संस्थान (गैइमुशो केनशुशो)
      - ऋणों के समायोजन के लिए पूछताछ, परामर्श मंडलों की तैयारी के लिए परिषद (जेइगेइ कोकेन द् कारीस्केन सेइरी जुम्बी शिसाकेइ)

स्रोत : गैइमुशो जोहो बुंका क्योकु, टोक्यो अगस्त 1952

रही थी, उसका राजनीतिक जीवन जनता, विरोधी पक्ष तथा स्वयं सरकारी क्षेत्रों से किये गए प्रहारों के कारण समाप्त हो गया। जापानी समाचार-पत्र, जो अमेरिकी सूचना विभाग का प्रयोग बहुत कम करते थे, ने अब ऐसी घोषणाओं को स्वीकारने से इंकार कर दिया जिन्हें दस वर्ष पहले उन पर थोपा जाता था। जनवरी में इस विवादास्पद संस्था की रूपरेखा का निर्माण, नीति-निमाण के लिये आवश्यक सूचना का संग्रह करने के लिये, विश्लेषणात्मक परामर्श तथा ऐसी सूचना प्रेषित करने के लिये, किया गया जिसका प्रयोग सार्वजनिक स्रोत रिपोर्ट देने में कर सकें।

अन्य प्रस्तावित परिवर्तनों में पुलिस, विधि तथा फौजदारी, न्याय-संहिता तथा राज्य मन्त्री के हाथ में पुलिस-नियन्त्रण का केन्द्रीकरण था। यद्यपि प्रारूप–निर्माण के दोषों के कारण डाइट की सुनवाई में बजट सम्बन्धी कठिनाइयाँ थीं, फिर भी पुलिस-व्यवस्था तथा सूचना-योजना ने विरोधी पक्ष को विरोधी प्रचार करने का अवसर प्रदान किया, जिसके परिणामस्वरूप योशिदा–प्रशासन के विरुद्ध इतना प्रचार हुआ कि उसके विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित हो गया तथा अप्रेल 1953 में सामान्य चुनावों की घोषणा की गई।[11]

संसद की समीक्षा

कई अमेरिकी और कुछ जापानियों को यह आशा थी कि युद्धोत्तर कालीन राष्ट्रीय डाइट राजनीतिक नेतृत्व ग्रहण कर लेगी। तथापि शान्ति सन्धि पर हस्ताक्षर के बाद के काल में ऐसा नहीं हुआ। डाइट पिछड़ गई। राज्य शक्ति के उच्चतम अंग के स्थान पर यह वाद-विवाद का स्थान तथा मन्त्री मण्डल का समर्थन करने वाली संस्था बन गई।

दलों तथा दलों के टुकड़ों में निरन्तर संघर्ष होने लगा। ये दल न तो इतना प्रभावी थे कि आन्तरिक स्तर पर हुए देशशक्ति वाद को उद्घोषित करते और न इतने यथार्थ थे कि एक वैकल्पिक सम्भावना के रूप में जापानी राष्ट्र को निर्णायकता प्रदान कर सकते। सन्धि के पश्चात् राजनीतिक दलों के संकुचित झगड़ों की किसी भी ससद-विरोधी वाम पक्ष अथवा संसद-विरोधी दक्षिण पंथ ने गम्भीरतापूर्वक प्रताड़ना नही की। मात्र उदार वादियों की आंशिक प्रमुखता तथा योशिदा के स्वयं बने रहने की क्षमता के कारण ही जापान में संसदीय प्रजातन्त्र नष्ट होने से बच गया।

उच्च परिषद् भी नवीन संविधान द्वारा प्रदत्त अपनी भूमिका से विचलित होकर

14, नागातो मासाजी मैनिची के सम्पादक ने चतुरता पूर्वक यह इगित किया कि ब्रिटेन में प्रधानमन्त्री सूचना का मूल स्रोत था जो मित्रतापूर्वक महान् अंग्रेजी प्रेम के साथ कार्य करता था, अमेरिका का राष्ट्रपति साप्ताहिक प्रेम सम्मेलनों का प्रयोग स्वतन्त्र सम्वाददाताओ के साथ करता था। मैनिची, 4 दिसम्बर 1952)। निहोने कैजाई तथा संग्यो कैं जाई ने (28 फरवरी, 1953) चेतावनी दी कि फौजदारी कानून का पुनरवलोकन पुलिस-राज्य का आधार बन कर प्रधानमन्त्री को तानाशाही शक्तियाँ प्रदान कर सकता था। टोक्यो शिम्बुन को यह भय था कि (1 मार्च, 1951) सरकार न्याय तथा पुलिस [illegible] को अपने हाथों में लेकर तोकूकावा कालीन बाकूफू के समान इनका दुरुपयोग करेगी।

गम्भीर रूप से दलीय गठबन्धन से ग्रसित हो गयी। राष्ट्रीय-निर्वाचन-क्षेत्र ने भली प्रकार कार्य नहीं किया।[15]

सन्धि के पश्चात् जापान में, अनेक प्रयासों तथा विलीनीकरण के बावजूद स्वतन्त्र असहयोगी गुटों के कारण निरन्तर अस्थिरता की स्थिति बनी रही। ये प्रवृत्तियाँ द्वि दलीय व्यवस्था, जो ध्रुवीकरण की प्रक्रिया सी लग रही थी, के कारण बढ़ गई, पर स्पष्ट नहीं हुई। सम्पन्न वर्ग निरन्तर अनुदारवादियों के पक्ष में था, किंतु समय उदीयमान समाजवादियों के पक्ष में था।

अनुदारवादियों द्वारा संविद सरकार के लिए प्रतिस्पर्धा

शान्ति के पश्चात् दो वर्ष तक योशिदा ने जापान को राष्ट्रीय नेतृत्व प्रदान किया। उसे निरंकुश राजनीतिज्ञ तथा अमेरिकन समर्थक "पिट्ठू" कहकर उसकी आलोचना की गई। उसने सर्वप्रथम अधिकरण के दौरान किये गए, सुधारों को विपरीत दिशा में परिवर्तित करना प्रारम्भ कर दिया। उसके नेतृत्व-काल में दैनिक जीवन से सम्बन्धित नये सुधारों का आत्मसातीकरण किया गया। तथापि वह पूर्णत: ऐसा असहयोगी अनुदारवादी रहा जो वाम पंथी व दक्षिण पंथी दोनों से पृथक् था। जापान का पाँच बार प्रधान मन्त्री बन कर उसने राजकुमार इतो का पचास वर्ष पुराना रिकार्ड तोड़ दिया जो 1885 से 1889 तक चार बार प्रधानमन्त्री बना था।

वस्तुतः सर्वप्रथम उदारवादियों ने (जियुतो) अप्रेल, 1954 में अनुदारवादी संविद की प्रस्तावना की थी। योशिदा द्वारा शिक्षा पर नियन्त्रण, पुलिस के केन्द्रीकरण (जिसका प्रस्ताव डाइट में उपद्रवों के बाद पारित हुआ) तथा एक सुरक्षा परिषद् की स्थापना ने वाम पंथी तथा दक्षिण पंथी के ध्रुवीकरण का प्रतिमा निर्धारित कर दिया। योशिदा के बहुमत वाले उदारवादी तब स्वयं में दल गये जब प्रधानमन्त्री ने दो नेताओं इशीबाशी हानजान तथा कोनो इचिरो को दल से निष्कासित कर दिया, क्योंकि उन्होंने उसका नेतृत्व मानने से इन्कार कर दिया था।

हातोयामा इचिरो, जो प्रसिद्ध अशुद्धीकृत नेताओं में से था, के नेतृत्व में यह अल्प संख्यक गुट योशिदा समूह से कहीं अधिक अनुदार वादी बन गया। हातोयामा ने स्वयं संविधान, आत्म सुरक्षा-सेना तथा दल के कूटनीति का समर्थन किया।

प्रगतिवादी (कैशितो) अपने नाम के अतिरिक्त उदारवादियों से अत्यधिक भिन्नता नहीं रखते थे। प्रत्येक दल संयत, संविधानवादी तथा पूंजीवादी था। गण्यमान्य प्रगतिवादियों में से दो भूतपूर्व प्रधानमन्त्री आशिदा हितोषी तथा भविष्य में भूतपूर्व विदेश मन्त्री

15. 24 अप्रेल 1953 में खड़े होने वाले कुल 128 उम्मीदवारों में से 53 राष्ट्रवादी थे, 75 क्षेत्रीय थे। योग्य मतदाताओं के मात्र 63·2 प्रतिशत ने मतदान किया जो निम्न सदन के निर्वाचकों के अनुपात में कम था। उच्च सदन के भूतपूर्व मुख्य सचिव जनरल कोंडा हिदेमकी (जिससे लेखक ने उनके डाइट के कार्यालय में मई 1953 में भेंट की) ने राष्ट्रीय निर्वाचक क्षेत्रों की आलोचना निम्न प्रकार से की—(1) स्वतन्त्र उम्मीदवारों के लिये चुनाव-प्रचार कठिन बना देती थी (2) मतदान करने वाली जनता के लिये राष्ट्रीय उम्मीदवार को पहचानना सम्भव नहीं था। प्रेक्षक गण भविष्य में उच्च सदन का स्वरूप जानने के लिये आतुरता से चुनाव परिणामों की प्रतीक्षा कर रहे थे।

शीगेमित्सु मामोरा, दोनों कूटनीतिज्ञ, साहित्यक प्रतिभा वाले थे तथा कोई भी भविष्य के गौरव से अत्यधिक अभिभूत नहीं था।[16]

प्रजातन्त्रवादी अन्ततः हातोयामा के उदारवादियों के असन्तुष्ट समूह को अंगीकार करने में सफल हो गए तथा प्रगतिवादी दल के उत्तराधिकारी बने जिसका विघटन नवम्बर, 1954 में हुआ। पराजय निश्चित जानकर योशिदा ने 7 दिसम्बर को त्यागपत्र दे दिया। हातोयामो को यद्यपि डाइट का बहुमत प्राप्त नहीं था, तो भी उसे योशिदा के उत्तराधिकारी ओगाता ताकेतारो के स्थान पर 9 दिसम्बर को प्रधानमन्त्री चुन लिया गया। दुर्भाग्यवश हातोयामा ने वामपंथी समाजवादियों का समर्थन बसन्त में चुनाव करवाने के आश्वासन पर प्राप्त किया। नवीन दल का महासचिव किसी नोकुसुके अब अनुदारवादी संविद सरकार का मूलाधार बन गया। यद्यपि 1955 की फरवरी के आम चुनावों में निम्न सदन में प्रजातन्त्रवादियों को बहुमत मिल गया तथा हातोयामा पुनः प्रधानमन्त्री चुना गया तथापि व्यापक रूप से यह माना जाता था कि वह अस्थायी तौर पर शासन करेगा तथा अन्ततः ओगाता को अवसर प्रदान कर देगा।

15 नवम्बर, 1955 को उदारवादी प्रजातन्त्रीय (जिमु–मिशनुतो) संविद तब बना जब अनुदारवादियों ने समाजवादियों से सामंजस्य बिठाया, जो 13 अक्टूबर को उनमें विलीन हुए। इस विलीनीकरण से उदार प्रजातन्त्रवादियों ने 33 प्रतिशत स्थानों की तुलना में 64 प्रतिशत स्थान प्राप्त किये तथा इस प्रकार हातोयामा तीसरी बार प्रधानमन्त्री बना। नवीन दल ने संविधान के पुनरवलोकन, प्रशासनिक ढांचे में सुधार, शक्ति की निरंकुशता (केनरयोकू) तथा वर्ग-वाद (कैम्यूशुगी) का विरोध किया।

विलीनीकरण के बारे में समाजवादियों की गलत धारणा—

समाजवादी अनुदारवादियों की तुलना में कहीं अधिक अव्यावहारिक रूप से विभाजित थे।[17] दक्षिणपंथी (यू-हा) वामपंथियों से पृथक् हो गए, क्योंकि वे शान्ति-सन्धि तथा सीमित पुनर्शस्त्रीकरण का समर्थन करते थे जबकि वामपंथी दोनों का विरोध करते थे। दक्षिणपंथी भूतपूर्व प्रधानमन्त्री कात्यामा तथा असानुमा इनेजिरो के नेतृत्व में

16. इस पुस्तक के सम्पादक ने 1951 में आशिदा से साक्षात्कार किया। आशिदा ने सम्पादक को अन्तर्युद्धकालीन विश्व की इतनी याद नहीं दिलाई जितनी उस विश्व की, जो 1914 की अगस्त में समाप्त हो गया था, जिसमें बौद्धिक भावुकता, तौरतरीके की परिष्कृतता तथा विश्व में राजनीतिक सफलता की कामना विद्यमान थी। संयोगवश आशिदा के दल का युद्धोत्तर कालीन ,वंशक्रम इस ,प्रकार था शिम्पोतो मिनशुतो कोकुमिन विनशुतो, काइशिनो, तथा बाद में मिनशुतो तथा जिमु मिनशुतो। दलों तथा उनकी राजनीति के आधुनिक अध्ययनों के लिये देखिये हैरोल्ड एस क्वूगिले तथा जॉनटर्नर का दि न्यू जापान गवर्नमेंट एण्ड पालिटिक्स मिनेपोलिस, 1955।

17. सैद्धान्तिक विवाद की पृष्ठभूमि, जिसने सर्वदा समाजवादियों की संगठित शक्ति की आलोचना की है, की कथा इवलिन एस कोलवर्ट की रचना "दि लेफ्ट विंग इन जापानीज पॉलीटिक्स न्यूयॉर्क 1952 में देखिये। वाम दक्षिणपंथ के संगठन के उमेहारा, रोयामा तथा ओगाता की रचना कंपरेटिव प्लेटफार्मस ऑफ जापान्स मेजर पॉलिटिकल पार्टीज मेडफोर्ड मास (संक्षिप्तिकृत) 1955 में प्राप्त है। प्रोफेसर एवाम वी कोल तथा डा० जार्ज टोटन का सामाजिक प्रजातन्त्र का अध्ययन का एक अंश ही यह सामग्री प्रदान करता है।

जापान ट्रेड यूनियन कांग्रेस की (जेनरो 670,000 सदस्य) सहायता से सीमित विरोधी पक्ष के रूप में बने रहे, जबकि वामपंथियों ने सुजेकी मोसावुरो के नेतृत्व में तथा उग्रवादी ट्रेड यूनियन (सोह्यो 30 लाख सदस्य) की सामान्य परिषद् की सहायता से सैद्धान्तिक मार्क्सवादियों तथा युवा लोगों को आकर्षित किया।

एक कार्यकारी समझौते के पश्चात् जो 1955 की फरवरी के प्रारम्भ में लागू हुआ, एक जटिल संगठन की योजना अक्टूबर के मध्य में बन गई जिसके पश्चात् सुजेकी सभापति तथा असानुमा महासचिव बने। इस मिश्रित मंच में वामपंथियों ने विशेषतया प्रत्यक्ष कार्यवाही की ओर दक्षिण पंथियों से अधिक विषयों पर समझौता किया। नवीन संगठित समाजवादी दल के उद्देश्य स्वतन्त्र कूटनीति, पुनर्शस्त्रीकरण का विरोध, लोगों के जीवन-निर्वाह का स्थायीकरण तथा प्रजातन्त्र की स्थापना थे। समाजवादियों की आशाएँ जापान के तटस्थतावाद, नवीन निर्वाचक गण तथा विरोधी पक्ष के संयुक्त स्वरूप की अस्थिरता पर निर्भर थीं।

जापान का साम्यवादी दल–(निहोन क्योसांतो)–

साम्यवादियों का उद्भव अधिकरण के प्रारम्भिक दिनों में हुआ था। कोरिया युद्ध के प्रारम्भ होने से पूर्व (1949 में निम्न सदन में 35 स्थान) इनकी सदस्य-संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई तथा तत्पश्चात् सब लोग भूमिगत हो गए। वे जब पुनः प्रकट हुए तो अनुभव हुआ कि जापानी "नवीन चीन" की कल्पना के प्रति जितने आकर्षित थे उतने जापानी साम्यवादियों के प्रति नहीं थे। यह दल गुटबन्दी से परेशान थे और रूस तथा चीनी साम्यवादियों की नीति में परिवर्तनों से विचलित थे। इस दल के सदस्य जापानी पुलिस के द्वारा भी तंग किये गए थे। उनका नेता नोसाका सांज्यो एक चतुर, संयत, दृढ़ प्रतिभा वाला रूखा साम्यवादी था।[18] वह मेलन्कोव के शक्ति में आने से पूर्व भी मेलन्कोव के युग से सम्बन्धित था।

जापान के दक्षिण पंथी—

यद्यपि जापान के अनुभवी लोगों के अत्यधिक सरल संगठनों में भी अनेक दक्षिण पंथी पाये जा सकते हैं, तो भी अधिकरण के पश्चात् भी उग्र राष्ट्रवादी बहुत कम राष्ट्रीय संसद में चुने गए। इस प्रकार के दक्षिणपंथी किमुरा हाकाओं तथा भूतपूर्व कर्नल सूजी मसानोबू थे। सूजी दो रोमांचकारी रचनाएँ ब्रिटेन द्वारा विजित स्याम से अपने भागने के बारे लिख चुका था तथा मलाया के सिंह नाम से प्रसिद्ध जनरल मयाशिता, जिसे बाद में फाँसी दे दी गई, के साथ अधिकारी रह चुका था। त्सुजी ने अमेरिका का विरोध

18. इस पुस्तक का एक लेखक नोशाका से यूनान की चीनी साम्राज्यवादी राजधानी में मिला। वह नोजाका द्वारा चीन के कृषक वातावरण में स्वयं को अनुकूलित करने की क्षमता तथा उनकी विलक्षण राजनीतिक नेतृत्व से प्रभावित हुआ जिसने चीनी साम्यवादी सैनिक नेताओं को सर्वदा, उत्तरी चीन में सामान्य जापानी सैनिक के राजनीतिक सीमाओं से परिचित रखा। यूनान से आने के बाद नोजाका का यह अनुमान था कि जापानी साम्यवादी आंदोलन में उनके समर्थक यदि पेकिंग "टीटोवादी" बन गया, जैसी कि अमेरिका की अपेक्षा थी तथा इच्छा थी, उनकी सहायता करेंगे। जापानी साम्यवादी दल का नवीनतम विश्लेषण रोजर स्विरिंगन तथा पाल लैंगर की रेड फ्लैग इन जापान, इन्टरनेशनल कम्युनिज्म इन एक्शन 1919–1951 कैंब्रिज मास 1950 है।

किया, सशस्त्र तटस्थवाद के अव्यावहारिक स्वरूप का समर्थन किया तथा यह भविष्यवाणी की कि तृतीय महायुद्ध में सोवियत रूस को लाभदायक स्थिति प्राप्त होगी।[19]

चुनाव की विधियाँ—

जापान के लगभग अस्सी वर्षों के क्रमाधिक उन्मुक्त निर्वाचनों का अनुभव जापानियों के परिपक्व तथा उत्साहपूर्ण निर्वाचन-व्यवहार का प्रतीक था। अधिकरण के दौरान जापानियों को यह नहीं बताना पड़ा कि निर्वाचन कैसे कराये जाएँ, उन्हें सब याद था। सम्भवतया यह सत्य है कि आज जापान में एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं है जिसे किसी न किसी प्रकार के निर्वाचनों की याद नहीं हो। यह किसी भी अन्य एशियाई देश के अनुभव से भिन्न प्रकार का अनुभव है तथा जापान की राजनीतिक परिपक्वता का अनुमान लगाते समय इस कारक को दृष्टि में रखना चाहिये।

जापान में राजनीतिक प्रचार अमेरिका से पर्याप्त भिन्न होता है। यह प्रचार अमेरिका से कम अवधि का होता है तथा इस दौरान फण्ड जमा करने, पोस्टर लगाने तथा रेडियो पर प्रसारण व समाचार-पत्रों द्वारा विज्ञापन देने पर नियन्त्रण है। सामान्य तरीका यह है कि विभिन्न दल एक ट्रक अथवा आटो रिक्शा किराये पर लेकर उसमें कार्यकर्ताओं को भरकर ले जाते हैं। सबसे ऊपर माइक लगा दिया जाता है जो जापान द्वारा उत्पादित सर्वाधिक क्षमता वाला होता है। अन्ततः किसान इस प्रकार की आवाजों के अभ्यस्त हो जाते है। दलीय रैलियाँ अधिक प्रचिलित नही है। रेडियो स्टेशन तथा एक अथवा दो स्थान पर तीन से चार तक प्रसारण तथा समाचार-पत्र अधिकाधिक प्रतिस्पर्धियों को प्रस्तुत करते हैं। फिर भी हलचल से हाथों को हिलाने, कागज के फूलों व सजावट, नाम को बार-बार दोहराना (जिसे सरलतापूर्वक दोहराया जा सकता है), कई बड़े पोस्टर मामलों के लिए संघर्ष आदि जापानी राजनीतिज्ञ को विश्व के राजनीतिज्ञों की श्रेणी में ले आती हैं।

1952 के अन्त में होने वाले चुनाव का प्रचार बड़ा तीव्र किंतु हिंसाविहीन रहा। कुल 1200 उम्मीदवारों ने 466 स्थानों के लिये चुनाव लड़ा तथा 45,300,000 मतदाताओं ने भाग लिया, जबकि 1953 बसन्त में लड़ा गया चुनाव काफी धीमा था। भाषणों में भीड़ बहुत कम होती थी। मतदान प्रतिशत यद्यपि 1952 की तुलना में कम था फिर भी परिस्थितियों को देखते हुए यह आश्चर्यजनक रूप से ऊँचा था।[20] 1955 के

19. एक लेखक ने कर्नल त्सुजी को कोकाइदो ओकामाया नगर मे 16 फरवरी 1953 मे बोलते हुए सुना। उसका अनियन्त्रित निजी अनुभववादी तरीका प्रश्नपूर्ण तथा भ्रमालक था। अमेरिकी वरोधी व्यंग अप्रत्यक्ष रहते थे। उसको श्रोतागण हमेशा घेरे रहते थे। त्सुजी के अस्पष्ट किन्तु भ्रमात्क विचार कोनो निप्पोन वो (इस जापान के लिये) टोक्यो 1953 में है।

20 इनके बाद निम्न सदन के लिये, 1955 के चुनावो के बाद भीड़ लग गई देखिये परिशिष्ट 19, पृष्ठ 617। 1953 के चुनाव ने ससदीय प्रणाली को निराशाजनक परिणाम दिये। ओजकोई युकियो जो संसदीय प्रणाली के प्रारभ होने के पश्चात् से लगातार निर्वाचित हुआ था पहली बार पराजित हुआ 1954 में मर गया। अंशतः वार्तालाप पर आधारित इस राजनीतिक नेता के चरित्र चित्रण के लिये देखिये डूगान्स एच मेडेल जूनियर, "ओजाकी यूकियो पॉलिटिकल कासस्ाइस जापान" फॉर ईस्टर्न क्वार्टिली, खंड पन्द्रह संख्या 3 मई 1956।

समाचार पत्र तथा दबाव :—जापानी समाचार पत्र अधिग्रहण का सामना करने में सफल हुआ। संपादन तथा समाचार पत्रों के लिये उनर अधिकरण काल में स्वतन्त्रता के निहित स्वार्थ बन गई उन्होंने सरकार द्वारा समाचारों पर नियन्त्रण करने के किसी प्रयास अथवा विदेशी प्रचार को अस्वीकार दिया। अधिक दृढ़ तथा यथार्थवादी लोगों ने समाचार पत्रों के मामले में अपनी तुलना में सरकारी अधिकारियों का विश्वास करना उचित नहीं समझा।

जापान का समाचार-पत्रों का जगत् युद्ध पूर्व के प्रतिस्पर्द्धा-काल में पुन लौट आया। असाही मैनिची तथा योमिउरी नामक समाचार-पत्र अपने युद्धपूर्वकालीन प्रमुखता की स्थिति में पहुंच गए। अधिकरण कालीन स्थापित सहयोगी समाचार-सेवा क्योनो ने महान् समाचार-पत्रों की सदस्यता खोदी।

यद्यपि जापानी समाचार-पत्रों पर से सरकारी दबाव पूर्णतः समाप्त हो गया था, तो भी इस बात के कोई प्रमाण नहीं थे कि कुछ विशेष समूहों जैसे विशिष्ट पूंजीवादी अथवा मजदूर संगठनों, का समाचारों की रिपोर्ट देने तथा प्रकाशन पर अवांछनीय प्रभाव पड़ता था। अधिकांश रूप में जापानी समाचार-पत्र संपूर्ण जनता से वामपक्ष में चल रहे थे तथा एक प्रकार से त्यागपूर्ण कार्य कर रहे थे। जबकि साम्यवादी अपने समाचार-पत्रों संपूर्ण पत्रों को प्रतिक्रियावादी तथा पूंजीवादियों द्वारा नियन्त्रण मानते थे। इसके विपरीत प्रतिक्रिया का अर्थ साम्यवादी विश्वास उल्लंघन होता। अमेरिकी दृष्टिकोण से जापान के समाचार-पत्र विश्व के सर्वाधिक उन्मुक्त समाचार-पत्र थे।

यह विचित्र संयोग था कि स्वयं युद्ध ने भी जापानी राजनीति के एक निहित स्वार्थों वाले गुट का निर्माण नहीं किया। यद्यपि जापान के समुद्र पार साम्राज्य से लौटे जापानियों की संख्या जर्मनी में साम्यवादियों के द्वारा अपने घरों से बेदखल किये गए लोगों से ज्यादा थी, फिर भी जापान में (पश्चिमी जर्मनी के विपरित) प्रत्यावर्तन से सम्बन्धित किसी राजनीतिक दल का संगठन नहीं किया गया। भूतपूर्व सैनिकों ने सरकार सम्मुख कुछ मांगें अवश्य रखीं, किंतु इन मांगों को ले कर सुगठित समूह द्वारा दबाव नहीं डाला गया।

जापान के व्यापारियों ने भी एक नवीन प्रकार का राजनीतिक दबाव डालना प्रारम्भ किया। न तो वे युद्धपूर्व जैबात्सु के समान थे तथा न अमेरिकी पूंजीपतियों के समान अधिकरण कालीन व्यवस्था के दौरान उच्च वेतन प्राप्त करने वाले प्रशासनिक अधिकारियों का ऐसा समूह बन गया जो भागीदार होने के बजाय प्रबन्धक था। इस विकास के कारण जापान में जेम्स बर्नहेम की तथा कथित मैनेजर क्षेत्र में क्रांति" अधिक परिपक्व अवस्था में पहुंच गई। युद्धोत्तर कालीन युग में कम्पनियों प्रायः बोर्ड तथा यूनीयन की संयुक्त संस्था से प्रबन्ध का संचालन करती थीं तथा भागीदार लोग बाहर से निरर्थक दर्शक बने रहते थे। जापान में मैनेजरों तथा कार्यपालिका-अधिकारियों ने अपना एक संगठन फेडरेशन ऑफ एम्प्लोयर्स एशोसियशन (निकैरन) बना लिया तथा इसे उदार दल से सम्बन्धित कर दिया।

जापान में श्रमिकों यूनियनवाद, अधिकरण के अन्तिम काल में तथा संधि के तत्काल बाद के काल में, यद्यपि आधारविहीन हो गया था, तब भी यह काफी सुदृढ़ था।

5,000,000 यूनीयन सदस्य लगभग 30,000 संगठनों में संगठित थे। अमेरिकी स्तर की को तुलना में कुछ ही यूनीयन बड़े थे। जापानी साम्यवादियों ने यूनीयन आंदोलन में सुदृढ़ स्थान प्राप्त किया तथापि इसका बहुत कुछ अंश तब प्रभावित हुआ जब कोरिया संघर्ष प्रारम्भ होने के पश्चात् सुरक्षा की दृष्टि से सरकार ने उन पर नियन्त्रण लगा दिया।

श्रम की स्थिति में परिवर्तन से भी अधिक महत्वपूर्ण कारक भूमि के संदर्भ में नवीन निहीत स्वार्थों का उदय था। वास्तविक तथ्य यह था कि भूमि, जो संपति का सर्वाधिक प्रत्यक्ष प्रकार था, को विभाजित कर दिया गया था। भू-स्वामियों द्वारा अ।नी भूमि को वापस प्राप्त करने के अवसर उतने ही कम थे जितने आज के मेक्सिको में प्रोफिग्रो डिग्रान साइटिफिको-काल की भू-संपति को पुनः प्राप्त करने के अवसर थे।[22]

ग्रामीण जापान के तथ्यों की सम्पूर्ण सांख्यिकी भी प्रस्तुत नहीं है। छोटी छोटी झोपड़ियां अब भी वैसी ही दिखाई देती है। जीवन उसी रूप से फसलों के चारों ओर चक्र लगाता है। अब भी नेतृत्व के आधार आयु तथा सम्मान हैं। तथापि परम्परा की एक शृंखला दूर हो गई है। कई अन्य घरों में ऐसे प्रलेखों का संग्रहण, जो समुराई अथवा मैजिस्ट्रेट लोगों से वंशानुगत संबन्ध को ग्रामिण मुखिया के पद से आधुनिक निर्वाचित पद से सम्बन्धित करता है अब भी एक उल्लेखनीय तथ्य है। घर के विशालतम कमरे में अब भी मेयजी काल के एक किसी प्रमुख अधिकारी के आंलकारिक आकार के हस्ताक्षर टके हैं। जापान की भूमि पर उनके राजनीतिक दांव ने प्रभाव को भूमि-स्वामित्व से पृथक् कर दिया। किंतु फिर भी ये प्रलेख तथा कभी-कभी राजनीतिक पत्र विक्रय के लिए होते थे। भूमि के साथ का भव्य भवन अब दूसरों का हो गया था।

दूसरी ओर ग्रामीण जापान में स्त्री की परिस्थिति के बारे में कानूनी तथ्य के बीच अन्तर उल्लेखनीय है। अर्थशास्त्र तथा तकनीकी दृष्टि से सैन्यवादियों ने प्रशांत महासागर युद्ध के दौरान मानवशक्तियों के अभाव को पूरा करने के लिये स्त्रियों को खेतों में कार्य करने हेतु बाहर खींच लिया। अधिकरण ने स्त्रियों की दशा में इस परिवर्तन को कानूनी मान्यता प्रदान कर स्त्री की स्वतन्त्रता का मार्ग तैयार किया।

फिर भी जापानी स्त्री को श्रमिकों के समान बहुत कम संघर्ष के पश्चात् विशेषाधिकारी प्रदान कर दिये गए। बड़े नगरों में स्त्रियां अपनी सीमित अर्थव्यवस्था तथा सौंदर्य के अस्पष्ट प्रतिमानों के अनुसार रुचिकर रूप से सजती हैं। मध्यम वर्गीय नग ों में स्त्रियाँ राष्ट्रीय महिला-सप्ताह मनाने के लिये परम्परागत किमोय पहन कर आती हैं। किंतु अधिकांश जापानी स्त्रियों का जन्म, शिक्षा, विवाह तथा उनके द्वारा बच्चों का पालन

22 यमागाता प्रीफेक्चर में निम्न भूमि सुधार स्वयं को स्पष्ट करते हैं (1) सुधार से पूर्व भूस्वामी किसान का प्रतिशत 46–71 आसामी कृषक की भूमि 53–3–1 (2) सुधार के पश्चात् भूस्वामी कृषक की भूमि 95–1 तथा आसामी कृषक की भूमि 50 प्रतिशत लायसन्स प्रमाण यमागाता प्रीफेक्चर, यमागाता, यमागाता नगर 1951 पृष्ठ 11।

- गवर्नर
  - उप- गवर्नर
  - मुख्य शासक
  - नियोजक सूचना केन्द्र
    - नियोजन व जाँच अनुभाग
    - सार्वजनिक सूचना प्रभाग
  - सामान्य मामलों का विभाग
    - पदाधिकारी प्रभाग
    - सचिवालय प्रभाग
    - प्रलेख प्रभाग
    - सामान्य मामलों का विभाग
    - कर प्रभाग
    - स्थानीय मामलों का प्रभाग
    - सांख्यिकी प्रभाग
  - नागरिक व श्रम मामले का प्रभाग
    - सार्वजनिक कल्याण प्रभाग
    - स्त्री तथा बच्चों का प्रभाग
    - बीमा प्रभाग
    - सदस्यता प्रभाग
    - श्रम नीति प्रभाग
    - बेकारी सुरक्षा प्रभाग
    - बेकारी बीमा प्रभाग
  - स्वास्थ्य विभाग
    - चिकित्सा प्रभाग
    - सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रभाग
    - भोषध प्रभाग
  - वाणिज्य व उद्योग विभाग
    - वाणिज्य व उद्योग प्रभाग
    - अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार व पूरहद्दि प्रभाग
    - वस्तु प्रभाग
  - कृषि तथा आर्थिक विभाग
    - कृषिनीति प्रभाग
    - कृषि सहकारी प्रभाग
    - कृषि सुधार प्रभाग
    - कृषि पुर्नप्राप्ति प्रभाग
    - पैदावार प्रभाग
    - रेशम प्रभाग
    - पशु प्रभाग
    - जलचर प्रभाग
  - जंगलात विभाग
    - जंगलात प्रशासन प्रभाग
    - वन रोपण प्रभाग
    - वन उत्पादन प्रभाग
  - नागरिक इन्जीनियरी विभाग
    - लेखा प्रभाग
    - सड़क प्रभाग
    - नदियों का प्रभाग
    - बन्दरगाहों का प्रभाग
    - रेत व्यवस्था प्रभाग
    - नगर नियोजन प्रभाग
    - निर्माण प्रभाग
  - आय तथा व्यय ब्यूरो
    - लेखा प्रभाग
    - व्यय प्रभाग

चार्ट–30

चुनावों से मूल प्रवृत्तियां सामने आईं—रुचि का पुनः आरम्भ तथा बड़े पैमाने पर मतदान (50 मिलियन मतदाओं के 75–84 प्रतिशत मतदान) (2) उदारवादियों का पतन (3) प्रजातन्त्रवादियों की प्रगति (4) समाजवादियों को विशेषकर वामपंथियों की ठोस उपलब्धियों (5) साम्यवादियों की स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन के आसार नहीं। चतुर ढंग से प्रचार करके प्रजातन्त्रवादियों तथा समाजवादियों ने निम्न सदन ने अपने पक्ष में पड़े कुछ मतों के अनुपात से अधिक स्थानों का प्रतिशत प्राप्त किया।

स्थानीय सरकार का पुनर्केन्द्रीकरण—

अधिकरण स्थापित करने वाली शक्तियों द्वारा सन्तुलन स्थापित करने की दिशा में एक सफल प्रयास जापान के केन में निर्वाचित गवर्नरों का प्रारम्भ करके किया गया। आत्म समर्पण से पहले जापान की स्थानीय सरकार कठोर अर्थों में केन्द्रीय सरकार का विस्तार मात्र थी।

स्थानीय स्वायत्तत कानून तथा नवीन संविधान 3 मई, 1947 को लागू हुआ। संयुक्त सर्वोच्च कमान के सरकारी पक्ष का यह दृढ़ विश्वास था कि स्थानीय प्रजातन्त्र राष्ट्रीय प्रजातन्त्र का मूल आधार था। जापानी समाचार पत्रों की प्रतिक्रिया अधिकांशतया पक्ष में थी। तथा पांच वर्षों में जापानियों के राजनीतिक व्यवहार ने शीघ्र ही केन की स्वायत्तता में निहित स्वार्थों को जन्म दे दिया। संधि के पश्चात् काल में ही जापानी नेताओं तथा जनता ने यह अनुभव किया कि जापान जैसा देश जो निरन्तर गम्भीर दवावों के अन्तर्गत कार्य कर रहा था के लिये विकेन्द्रीयकरण समस्याओ के समाधान के लिए सर्वोत्तम तरीका नहीं था। प्रीफेक्चरों की अस्थिर वित्तीय व्यवस्था के कारण तात्कालिक संकट उत्पन्न हुआ।[21]

संधि के पश्चात् वाले युग में पुर्न केन्द्रीय करण को चरणों में प्रारम्भ हुआ। सर्वोच्च स्तर पर राष्ट्रीय सरकार के विकेन्द्रीय करण तथा पुर्नकेन्द्रीय करण पर विचार करने के लिये मन्त्रिमण्डल के अन्तर्गत एक स्थानीय सरकार व्यवस्था अनुसंधान परिषद (चिहो सेइदो चोसा काई) की स्थापना की गई। व्यापक रूप से बिखरे स्थानीय रूप से गांवों तथा कस्बों ने स्थानीय सरकार के विलीनी करण को स्वीकार कर लिया जिसका तात्कालिक उद्देश्य स्थानीय सरकार के ऋण को बढ़ाना था।

21 चार्ट 30 एक विशिष्ट प्रीफेक्चर के संगठन का चार्ट प्रस्तुत करता है। 1949 में अमेरिकी सरकार ने डा० कार्ल शूप के नेतृत्व में एक अध्ययन समूह भेजा था, जो शूप टैक्स के नाम से लोकप्रिय हुआ। इस मिशन ने जापान के स्थानीय वित्त का अध्ययन किया तथा विधि के समाजीकरण का प्रयास किया ताकि सभी केन को राष्ट्रीय स्तर पर समानीकृत किया जा सके। 1953 तक यह व्यवस्था असमान ढंग से कार्य कर रही थी। तो शी मोंडाई केन्क्यू नामक मासिक पत्र (रिसर्च ऑन म्यूनिसिपल प्राबलम्स) में ओमाका ने 1949–50 के प्रत्येक अंक के शूप मिशन के सुझावों की चर्चा की। 1953 के आरम्भ में लेखक ने प्रीफेक्चरों की वित्तीय समस्याओं की चर्चा तराकी आइत्सु से की जो आकोयामा प्रीफेक्चर का अध्यक्ष था। समस्याओं का आकर्षक सारांश जो जो त्सुशिन की "फुकेन जेईसेई सेइदो नो पोनाई तेन तो काईकाकू नो होवो वो राजु (प्राबलम्स ऑफ फाइनेंस एंड टैक्स सिस्टम आफ प्रीफेक्चर एंड देयर रिफार्म' 18 नवम्बर, (1952 पृष्ठ 6143–6145, 19 नवम्बर, 1952 पृष्ठ 6152–6154, पर यह कहना होगा विशाल व सम्पन्न प्रीफेक्चर शीघ्र सुधार की मांग करते थे, जबकि विभिन्न प्रीफेक्चरों (भयानान) केन) के अधिकारी समाजीकरण अनुदान की मांग तत्परता से करते थे।

समाचार पत्र तथा दबाव :—जापानी समाचार पत्र अधिग्रहण का सामना करने में सफल हुआ। संपादन तथा समाचार पत्रों के लिये उत्तर अधिकरण काल में स्वतन्त्रता के निहित स्वार्थ बन गई उन्होने सरकार द्वारा समाचारों पर नियन्त्रण करने के किसी प्रयास अथवा विदेशी प्रचार को अस्वीकार दिया। अधिक रूढ़ तथा यथर्थवादी लोगों ने समाचार पत्रों के मामलें में अपनी तुलना में सरकारी अधिकारियों का विश्वास करना उचित नहीं समझा।

जापान का समाचार-पत्रों का जगत् युद्ध पूर्व के प्रतिस्पर्द्धा-काल में पुन लौट आया। असाही मैनिची तथा योमिउरी नामक समाचार-पत्र अपने युद्धपूर्वकालीन प्रमुखता की स्थिति में पहुंच गए। अधिकरण कालीन स्थापित सहयोगी समाचार-सेवा क्योनो ने महान् समाचार-पत्रों की सदस्यता खोदी।

यद्यपि जापानी समाचार-पत्रों पर से सरकारी दबाव पूर्णतः समाप्त हो गया था, तो भी इस बात के कोई प्रमाण नहीं थे कि कुछ विशेष समूहों जैसे विशिष्ट पूंजीवादी अथवा मजदूर संगठनों, का समाचारों की रिपोर्ट देने तथा प्रकाशन पर अवांछनीय प्रभाव पड़ता था। अधिकांश रूप में जापानी समाचार-पत्र संपूर्ण जनता से वामपक्ष में चल रहे थे तथा एक प्रकार से त्यागपूर्ण कार्य कर रहे थे। जबकि साम्यवादी अपने समाचार-पत्रों संपूर्ण पत्रों को प्रतिक्रियावादी तथा पूंजीवादियों द्वारा नियन्त्रण मानते थे। इसके विपरीत प्रतिक्रिया का अर्थ साम्यवादी विश्वास उल्लंघन होता। अमेरिकी दृष्टिकोण से जापान के समाचार-पत्र विश्व के सर्वाधिक उन्मुक्त समाचार-पत्र थे।

यह विचित्र संयोग था कि स्वयं युद्ध ने भी जापानी राजनीति के एक निहित स्वार्थों वाले गुट का निर्माण नहीं किया। यद्यपि जापान के समुद्र पार साम्राज्य से लौटे जापानियों की संख्या जर्मनी में साम्यवादियों के द्वारा अपने घरों से बेदखल किये गए लोगों से आधी थी, फिर भी जापान में (पश्चिमी जर्मनी के विपरित) प्रत्यावर्तन से सबन्धित किसी राजनीतिक दल का संगठन नहीं किया गया। भूतपूर्व सैनिकों ने सरकार सम्मुख कुछ मांगे अवश्य रखी, किंतु इन मांगों को ले कर सुगठित समूह द्वारा दबाव नहीं डाला गया।

जापान के व्यापारियों ने भी एक नवीन प्रकार का राजनीतिक दबाव डालना प्रारम्भ किया। न तो वे युद्धपूर्व जैबात्सु के समान थे तथा न अमेरिकी पूंजीपतियों के समान अधिकरण कालीन व्यवस्था के दौरान उच्च वेतन प्राप्त करने वाले प्रशासनिक अधिकारियों का ऐसा समूह बन गया जो भागीदार होने के बजाय प्रबन्धक था। इस विकास के कारण जापान में जेम्स बर्नहेम की तथा कथित मैनेजर क्षेत्र में क्रांति" अधिक परिपक्व अवस्था में पहुंच गई। युद्धोत्तर कालीन युग में कम्पनियों प्रायः बोर्ड तथा यूनीयन की संयुक्त संस्था से प्रबन्ध का संचालन करती थीं तथा भागीदार लोग बाहर से निरर्थक दर्शक बने रहते थे। जापान में मैनेजरों तथा कार्यपालिका-अधिकारियों ने अपना एक संगठन फेडरेशन ऑफ एम्प्लोयर्स एशोसियशन (निकैरन) बना लिया तथा इसे उदार दल से सम्बन्धित कर दिया।

जापान में श्रमिकों यूनियनवाद, अधिकरण के अन्तिम काल में तथा संधि के तत्काल बाद के काल में, यद्यपि आधारविहीन हो गया था, तब भी यह काफी सुदृढ़ था।

5,000,000 यूनीयन सदस्य लगभग 30,000 संगठनों में संगठित थे। अमेरिकी स्तर की की तुलना में कुछ ही यूनीयन बड़े थे। जापानी साम्यवादियों ने यूनीयन आंदोलन में सुदृढ़ स्थान प्राप्त किया तथापि इसका बहुत कुछ अंश तब प्रभावित हुआ जब कोरिया संघर्ष प्रारम्भ होने के पश्चात् सुरक्षा की दृष्टि से सरकार ने उन पर नियन्त्रण लगा दिया।

श्रम की स्थिति में परिवर्तन से भी अधिक महत्वपूर्ण कारक भूमि के संदर्भ में नवीन निहीत स्वार्थों का उदय था। वास्तविक तथ्य यह था कि भूमि, जो संपति का सर्वाधिक प्रत्यक्ष प्रकार था, को विभाजित कर दिया गया था। भू-स्वामियों द्वारा अपनी भूमि को वापस प्राप्त करने के अवसर उतने ही कम थे जितने आज के मेक्सिको में प्रोफिरो डिग्रान साइटिफिको-काल की भू-संपति को पुनः प्राप्त करने के अवसर थे।[22]

ग्रामीण जापान के तथ्यों की सम्पूर्ण सांख्यिकी भी प्रस्तुत नहीं है। छोटी छोटी झोपड़ियां अब भी वैसी ही दिखाई देती है। जीवन उसी रूप से फसलों के चारों ओर चक्र लगाता है। अब भी नेतृत्व के आधार आयु तथा सम्मान हैं। तथापि परम्परा की एक शृंखला दूर हो गई है। कई अन्य घरों में ऐसे प्रलेखों का संग्रहण, जो समुराई अथवा मैजिस्ट्रेट लोगों से वंशानुगत संबन्ध को ग्रामिण मुखिया के पद से आधुनिक निर्वाचित पद से सम्बन्धित करता है अब भी एक उल्लेखनीय तथ्य है। घर के विशालतम कमरे में अब भी मेयजी काल के एक किसी प्रमुख अधिकारी के आलंकारिक आकार के हस्ताक्षर टंके हैं। जापान की भूमि पर उनके राजनीतिक दांव ने प्रभाव को भूमि-स्वामित्व से पृथक् कर दिया। किंतु फिर भी ये प्रलेख तथा कभी-कभी राजनीतिक पत्र विक्रय के लिए होते थे। भूमि के साथ का भव्य भवन अब दूसरों का हो गया था।

दूसरी ओर ग्रामीण जापान में स्त्री की परिस्थिति के बारे में कानूनी तथ्य के बीच अन्तर उल्लेखनीय है। अर्थशास्त्र तथा तकनीकी दृष्टि से सैन्यवादियों ने प्रशांत महासागर युद्ध के दौरान मानवशक्तियों के अभाव को पूरा करने के लिये स्त्रियों को खेतों में कार्य करने हेतु बाहर खींच लिया। अधिकरण ने स्त्रियों की दशा में इस परिवर्तन को कानूनी मान्यता प्रदान कर स्त्री की स्वतन्त्रता का मार्ग तैयार किया।

फिर भी जापानी स्त्री को श्रमिकों के समान बहुत कम संघर्ष के पश्चात् विशेषाधिकारी प्रदान कर दिये गए। बड़े नगरों में स्त्रियां अपनी सीमित अर्थव्यवस्था तथा सौंदर्य के अस्पष्ट प्रतिमानों के अनुसार रुचिकर रूप से सजती हैं। मध्यम वर्गीय नगरों में स्त्रियाँ राष्ट्रीय महिला-सप्ताह मनाने के लिये परम्परागत किमोय पहन कर आती हैं। किंतु अधिकांश जापानी स्त्रियों का जन्म, शिक्षा, विवाह तथा उनके द्वारा बच्चों का पालन

22 यमागाता प्रीफेक्चर में निम्न भूमि सुधार स्वयं को स्पष्ट करते हैं (1) सुधार से पूर्व भूस्वामी किसान का प्रतिशत 46–71 आसामी कृषक की भूमि 53–3–1 (2) सुधार के पश्चात् भूस्वामी कृषक की भूमि 95–1 तथा आसामी कृषक की भूमि 50 प्रतिशत लायसन प्रमाण यमागाता प्रीफेक्चर, यमागाता, यमागाता नगर 1951 पृष्ठ 11।

पोषण ग्रामीण जापान में ही होता है। तथा खेतों पर जापानी औरत को काम के अलावा बहुत कम समय मिलता है।[23]

चावल की नींव:—ग्रामीण जापान ही राष्ट्रीय राजनीतिक सिद्धान्त चाहे वे नवीन ढांचे ही प्रजातन्त्रीयकरण अथवा विपरीत दिशा में प्रयास से सम्बन्ध हो जनता को ज्ञात राजनीतिक तत्वों के मध्य व्याप्त खाई को स्पष्ट करता है। जापान में भी जिसे अपेक्षाकृत विकसित एशियाई देश माना जाता है, 62 प्रतिशत लोग अपने स्वरूप में ग्रामीण तथा कृषिप्रधान थे। कानूनी मान्यता प्राप्त होने के बाद भी ग्रामीण लोग (बराकू) जापानी जनता तथा राजनीतिक गांव (बुरा) केन्जो (राष्ट्रीय प्रशासन) का निम्नतम क्रम है का मध्यस्थ रहा है।[24]

यह सत्य है कि विस्तृत परिवार व सामप्रदायिक भावना वाले गांव का स्थान अनिच्छापूर्वक आधुनिकीकरण, उद्योगीकरण तथा प्रजातन्त्रीयकरण ले रहे थे। रेल मार्ग साईकिल, टेलीफोन, राजनीतिक दलों के सगठन आवासन के प्रभाव संपत्ति का समान उत्तराधिकारी तथा विस्तृत शिक्षा सुविधाएं आत्मनिर्भरता को प्रभावित करने लगी थीं। जापान के उन्मुक्त समाज बनने सौ वर्ष बाद अब भी नेतृत्व का चुनाव परम्परागत योग्यताओं के आधार पर होता है। आयु, वंशानुगत परिस्थिति तथा पारिवारिक सम्बन्ध आज भी निर्वाचन में मतदान को प्रभावित करते हैं मतों के विभाजन जिसे अपरिष्कृत सामाजिक प्रक्रिया माना जाता था, के स्थान पर लोकप्रिय सहमति को अब अच्छा माना जाता था। झगड़ों का निपटारा औपचारिक न्यायपालिका के द्वारा बहुत कम होता था। करों का रिकार्ड ईमानदारी से जिले के याकुबा में रखा जाता था। कई ग्रामों में सामुदायिक रूप से कर लिया जाता था। निश्चय ही परस्पर सहमति के द्वारा शासन का संचालन यद्यपि पश्चिमी प्रजातन्त्र में नहीं था, तो भी यह निरंकुशवाद का विरोध करता था। कोनोयो, होजो, मैकाईवर, योशिदा अथवा हातोयामा में से कोई भी गांव वालों द्वारा विलंब, अपेक्षा, गलत व्याख्या अथवा पुनर्व्याख्या करने की प्रक्रिया को अव्यवस्थित नहीं कर सकता था। जापानी इतिहास में यह व्यवस्था कभी अत्यधिक सौभाग्यपूर्ण तथा कभी दुर्भाग्यपूर्ण सिद्ध हुई थी।

23 हाल ही में श्रम मन्त्रालय ने जापान के विभिन्न भागों में प्रीफेक्चर से पांच गावों का अध्ययन प्रस्तुत किया इन गावों को 92 प्रतिशत महिलाएं, 77 प्रतिशत आदमियों की तुलना में कृषि कार्य में लगी थीं। कोई भी गर्भवती मां घरेलू कार्यों की उपेक्षा नहीं करती थी, 86–1 प्रतिशत मांएं बच्चे के जन्म तक कार्य में लगी रहती थी। रोदाशो, फुजिको, नेनशो कू नोसोन फुजिन नो सेइकात्सु। लेबर मिनिस्ट्री वूमन एंड चिल्ड्रन्स ब्यूरो, दि लाइफ आंफ फाम वूमन (टोकियो 1952।

24 पश्चिमी राजनीतिज्ञ वैज्ञानिक, संधि के पश्चात्, जापान के अध्ययनों में अधिकाधिक इस बात का अनुभव कर रहे थे। तुलनात्मक ग्रामीण राजनीति के आकर्षक अध्ययन के लिये देखिये राबर्ट ई वार्ड्स की भूमिका "विलेज गवर्नमेंट इन ईस्टर्न एंड साउदर्न एशिया, ए सिम्पोजियम" फार ईस्टर्न क्वार्टर्ली 15 खंड संख्या 2 (फरवरी 1956) इसी अंक में कुर्ट स्टेनर "दि जापानीज विलेज एंड इट्स गवर्नमेंट।' अन्य पहलुओं के लिये देखिये पॉल एस डल "दि पॉलिटिकल स्ट्रक्चर ऑफ ए जापानीज विलेज" फार ईस्टर्न क्वार्टर्ली, खंड तेरह संख्या 2 (फरवरी 1952) तथा द् जापानीज विलेजेज आकेजनल पेपर्स सेंटर फॉर जापानीज स्टडीज संख्या पांच (1956)।

पुरानी शांति तथा शीत युद्ध :—अत्यधिक यथार्थवादी जापानी यह जानते थे कि 1950 के मध्य में जापान की स्थिति अयथार्थवादी थी। तथा वे यह भी जानते थे कि यह स्थिति अयथार्थवादी ही हो सकती थी। जापान के लोगों के उद्देश्य से ज्यादा महत्वपूर्ण तथ्य अमेरिका, चीन की मुख्य भूमि तथा शीत युद्ध में 1945 की अनिश्चित शांति के पश्चात् राजनीतिक दृष्टि से अमेरिकी पक्ष का प्रबल होना आदि थे।[25]

जापान चाहने पर भी संयुक्त राष्ट्रसंघ में एशियाई गुट में शामिल नहीं हो सकता था। 1957 में भी जापान की संयुक्त राष्ट्रसंघ का सदस्य बनने की आशाएं दोहरें वीटों से (राष्ट्रवादी चीन के वीटो प्रयोग तथा रूस का साम्यवाद चीन की सदस्यता अपने मित्र राज्य को लेकर वीटो तथा सोवियत रूस द्वारा गैर कानूनी दबाव इस कीमत के रूप में रूस —जापान सम्बन्ध चाहता था) के कारण ध्वस्त हो गई।

जापान को अमेरिका के साथ बंधना पड़ा। शांति-संधि ने विशेपतया जापानी सरकार को आत्म सुरक्षा का अधिकार, संयुक्त राष्ट्रसंघ के चार्टर में दी गई आत्म सुरक्षा की सीमाओं के अन्दर, दिया तथा अनुच्छेद 6 ने जापान को आत्म सुरक्षा के लिये अपनी भूमि पर विदेशी सेनाओं की उपस्थिति का भी अधिकार दिया। परिणाम स्वरूप जापान ने अमेरिका के साथ दो व्यवस्थाएं की 9 सितम्बर 1951 को शांति-संधि के साथ एक सुरक्षा संधि तथा 23 फरवरी 1954 को एक प्रशासनिक समझौता किया।[26] बाद वाले के पूरक के रूप में मार्च 1954 में एक परस्पर सुरक्षा सहायता समझौता भी किया गया। जापानी पर्याप्त यर्थाथवादी रूप में समझते थे कि उनकी सुरक्षा अमेरिका से संबन्धित होने में ही हो सकती थी। यद्यपि वे इस स्थिति को अत्यधिक पसन्द नहीं करते थे।

25 एक लेखक ने तथाकथित शीत युद्ध का मूल्यांकन सुदूरपूर्व के विस्तृत संदर्भ के साथ किया। पॉल एम० ए० लिनबर्गर साइकोलॉजिकल वारफेयर वाशिंगटन 1954। युद्धोत्तर कालीन सुदूरपूर्व अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के लिये देखिये हार्ले एक मेकनायर तथा डोनाल्ड एक लेच. मॉडल फार इस्टर्न इंटर नेशनल रिलेशन्स, न्यूयार्क (द्वितीय संस्करण) 1955) हैराल्ड एक विनाके, फार ईस्टर्न पॉलिटिक्स इन दि पोस्टवार पीरियड, न्यूयार्क. 1956 क्रेज एव माइकेल तथा जार्ज ई. टेलर, दि फारईस्ट इन दि माडर्न वर्ल्ड, न्यूयार्क 1956।

26 अनुच्छेद 5 (सी) नवीन संविधान के अनुच्छेद नौ के अनुकूल जो आक्रामक युद्ध का खंडन करता है। संविधान का अनुच्छेद 6 (अ) संयुक्त राष्ट्रसंघ चार्टर के अनुच्छेद 51 के अनुकूल है। संधि के मूल प्रारूप के लिये देखिये कान्फ्रेंस प्रोसिडिंग्स पूर्वोक्त। चीनी गणराज्य तथा जापान के मध्य शांति संधि के प्रारूप में (28 अप्रेल 1952) डाक्यूमेंट्री मेटेरियल ऑन कान्टेम्परेरी जापान, 21 खंड, .संख्या 1 से 3 (1952) पृष्ठ 160–163। इस संधि का जापानी प्रारूप आसानी से आसादो नेनेकान (आसाही वार्षिक पुस्तक) में प्राप्त किया जा सकता है। प्रशासकीय समझौते का प्रारूप "कंटेम्परेरी जापान" में पूर्वोक्त पृष्ठ 152–158 प्राप्त किया जा सकता है। गैनुशो ने जनता के सम्मुख इस व्यवस्था की आवश्यकता को स्पष्ट करने का प्रयास किया। शांति तथा सुरक्षा संधियों की महत्ता प्रशासकीय समझौते तथा साम्यवाद के साथ मनोवैज्ञानिक संघर्ष की चर्चा दो पैम्फलेटों में बड़ी स्पष्टता से की गई है—जापान हर सिक्योरिटी एंड मिशन तथा जापान इन दि वर्ल्ड टूडे, दोनों टोक्यो से, विदेश विभाग, सार्वजनिक सूचना तथा सांस्कृतिक मामलों के ब्यूरो से प्रकाशित 128 अप्रैल, 1952।

अधिकांश जापानी जानते थे कि पुर्नशस्त्रीकरण भी जापानियों को सुरक्षा की दृष्टि से स्वायत्त नहीं बना पाएगा तथा वास्तविक स्वतन्त्रता का अर्थ आर्थिक विनाश था। 1955 के अंत तक जापानी आत्म सुरक्षा सेना 6 जिला शाखाओं में 200,000 व्यक्ति (तथा दो मिश्रित बटालियन) प्रशिक्षक वायुयान (जेट्स अभी प्राप्त नहीं हुए थे) तथा तथा हल्के जहाज थे। इस सीमित सेना के साथ उदारवादी प्रजातन्त्रवादियों तथा अमेरिकीयों साथ उदार वादी प्रजातन्त्रवादियों तथा अमेरिकीयों के सम्मुख वास्तविक उभय पक्षीय स्थिति थी। जापान पर अमेरिकी नीति के अनुकरण करने का दबाव बढ़ता था। समाजवादियों की शक्ति उतनी ही बढ़ती जाती थी। तथा समाजवादी अधिकरण कालीन सुधारों के संदर्भ में अपनी इच्छाओं को अमेरिका द्वारा प्रेरित संविधान, विशेषकर उसके अनुच्छेद नौ के प्रति अपने तथा पुराने मैकार्थर मॉडल पर निर्मित जापान को सुदूरपूर्व का स्विट्जरलैण्ड बनाने के स्वप्न अथवा दुःस्वप्न के बारे में बड़े स्पष्ट वक्ता थे।[27]

फिर भी यदि जापान में शासन का इतिहास हमें कोई भी शिक्षा देता है तो वह यह है कि जापानी, विश्व के अन्य लोगों के समान असंभव को सहने तथा चतुर व यथार्थ से सामंजस्य स्थापित कर लेना जानते हैं। इस अर्थ में हातोयामा की विदेश नीति ने भूतकाल के प्रतिकों को अपनाने के बहाने से जापान की स्वतन्त्रता की पुर्नर्स्थापना का प्रयास किया। विरोधियों से उसने मृदुतापूर्वक पुनर्शस्त्रीकरण की बात की, अमेरिकीयों से अपेक्षाकृत कठोर ढंग से बिना सम्मान खोये बातचीत करता रहा। इसी बीच में जापान जितनी शक्ति व प्रभाव प्राप्त कर लेगा, रूस अथवा अमेरिका के संदर्भ में उसकी स्वतन्त्र रूप से कार्य करने की क्षमता उतनी ही बढ़ जाएगी।

यथार्थवाद का एक नया युग अधिक रूचि का तथा निश्चय ही जापान के विपरित नहीं होगा। संभवतः जापानियों का सर्वोत्तम ढंग से प्रसन्नतापूर्वक अमेरिकीकरण हुआ है अथवा संभवतया अमेरिकी प्रजातन्त्र का दोनों में से किसी भी देश के अनुभव से प' पूर्णतः शांति से जापानीकरण हो गया है। ❑❑❑

27 प्रशांत महासागर के प्रकार का तटस्थतावाद संधि के पश्चात् पर्याप्त लोकप्रिय हो गया, बुद्धिजीवी वर्ग के लिये प्रकाशित तीन मैगजीन देखिये चुओ कोरोन, कैजो तथा सेकाई (तीनों का प्रचलन तीन सौ चार सौ हजार तक था। चुओ कोरोन ने जनवरी में एक पेनल ने विचार-विमर्श में यह दृष्टिकोण प्रस्तुत किया कि अमेरिकी विरोध का मूल कारण संधि के पश्चात् उत्पन्न हीनता की भावना थी तथा इसे कूटनीतिक विचार-विमर्श से ही समाप्त किया जा सकता था। देखिये "कोनिची नो कुआन (वर्तमान अशांति) चुओ कोरोन खंड अठ्ठावन संख्या 1 (जनवरी 1953) पृष्ठ 192–200 सभी जापानी बुद्धिजीवीवर्ग ने नवीन तटस्थतावादी सिद्धान्त नहीं स्वीकारा था। जिन बुद्धजीवियों से लेखक मिला था उनमें से डा० कोइजुमी शिजों जो अर्थशास्त्री तथा कैइओ विश्वविद्यालय का डीन, जापान की अकादमी का सदस्य तथा राजकुमार अकिहितो का गुरु था, ने शांति संधि का समर्थन किया देखिये उनका रेडियो संदेश, एन एच० के टोक्यो ईवनिंग न्यूज 2 सितम्बर, 1952)। डा० ओची हयो, जो एक प्रसिद्ध अर्थ समस्याओं पर विचार ऐतिहासिक कामाकुरा में 1952 के ग्रीष्म में किया। वह मुख्यतया जापान की आर्थिक स्वतन्त्रता के प्रति चिन्तित था, तथा उसे उस दिन की प्रतीक्षा थी जब जापान एशिया की तृतीय शक्ति का सदस्य बनेगा। उसके विचारों का संयोजित रूप में पेसिफिक कान्फ्रेंस द्वारा जापान अमेरिकी सम्बन्धों पर सम्मेलन में प्रस्तुत एक लेख के रूप में देखिये होनालुलू। 1153 जनवरी देखिये निप्पोन टाइम्स 1 अप्रेल, 1953।)

परिशिष्ट

जापान का संविधान : एक व्यावहारिक मूल्यांकन

इस अनूदित पुस्तक में जापान की राजनीतिक व्यवस्था के दीर्घकालीन विकास की चर्चा पर्याप्त विस्तार से की गई है। यद्यपि वर्तमान संविधान का प्रारंभ द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति के पश्चात से माना जाता है किन्तु संवैधानिक ढांचे व रूपरेखा में परिवर्तन के पश्चात भी प्रत्येक राज्य की कुछ ऐसी सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक व राजनीतिक विरासतें होती हैं, जो उसे अपने काल से पूर्णत: संवम्व-विच्छेद नहीं करने देती हैं। जैसे कि देखा जा चुका है, चीन की राजनीतिक व्यवस्था के उग्र क्रांतिकारी प्रयासों के पश्चात भी ये विशेषताएं किसी न किसी रूप में चीन की राजनीतिक व्यवस्था को प्रभावित करती हैं ' यही बात जापान के संविधान के बारे में भी सही है। इस पुस्तक में अमेरिकी प्रजातन्त्र के जापानीकर' नामक अन्तिम अध्याय में इस तथ्य का विश्लेषण किया गया है। अतः पिछले दो दशकों (1951 के पश्चात) जापान में जिस ढंग से राजनीतिक व्यवस्था का रूप उभरा है, वह ऊपरी तौर पर प्रजातन्त्र के पाश्चात्य माडल का भ्रम अवश्व पैदा करता है, तथापि वह है पूर्ण जापानी मॉडल, जिसमें जापानियों के विश्वासों, मूल्यों व व्हार के तरीकों की अमिट छाप है[1]। यह जापान की वह सांस्कृतिक धरोहर है जो कई वर्षों से चली आ रही है। जापान की आधुनिक राजनीतिक व्यवस्था पर इनका स्पष्ट प्रभाव है, जैसे जापान में शक्ति का केन्द्रीकरण कभी नहीं हुआ, जापानी स्वतन्त्रता से अधिक अनुशासन को महत्व देते है, वे व्यक्तिवाद के स्थान पर समाज व समुदाय के संदर्भ में सोचते हैं। जापानी अपने राष्ट्र को विशिष्ट सम्मान व गौरव प्रदान करते हैं। जापानी समाज समानता के स्थान पर संस्तरण व्यवस्था में विश्वास करता है। जापानी, राष्ट्र के प्रति अपने कर्त्तव्यों को उसी प्रकार स्वीकारते हैं जैसे परिवार के प्रति अपने कर्त्तव्यों को। नर्णय की प्रक्रिया में जापानी बहुमत के आधिपत्य को स्वीकारने के स्थान पर सामान्य सहमति को महत्व देते हैं चाहे इस प्रकार की सामान्य सहमति प्राप्त करने में कितना ही समय क्यों न लगे। जापान में संस्थाओं तथा संविधान से ज्यादा व्यक्तियों को महत्व दिया जाता है। जापानी समाज के बारे में ये तथ्य उन कारणों को स्पष्ट कर देते हैं जिनकी वजह से जापान का संविधान मूलभूत रूह से पश्चिमी होने के बावजूद व्यवहार में पर्याप्त भिन्न दृष्टिगोचर होता है। संक्षेप में अन्य राज्य-व्यवस्थाओं के समान जापान में भी सिद्धांत तथा व्यवहार का अन्तर पर्याप्त मात्रा में विद्यमान हैं।

द्वितीय विश्व-युद्ध की समाप्ति के पश्चात विजयी मित्र राज्यों के आधिपत्य के दौरान जो संविधान जापान के लिए बनाया गया जापानियों में उससे संबन्धित पर्याप्त दु:खद व कटु स्मृतियां हैं। जापानी यह नहीं भूल पाए हैं कि वह संविधान पराजय के परिणामस्वरूप एक विदेशी सत्ता द्वारा उस पर थोपा गया था। 1952 में अर्पोटिक अधि-

1— विस्तार के लिए देखिए—हरमन कान "दि एमरजिंग जापानीज सुपर स्टेट" आदे टायन 1771 पृष्ठ 1–74।

वारेन एम सुनेशी "आपानीज पालीटिकल स्टाइल" हारपर एण्ड रो 1966 पृष्ठ 2।

आइय डब्ल्यू वर्ड्स- दि गवर्नमेंट आफ जापान, मैथ्यू एण्ड क॰ 1966 पृष्ठ 10–12।

ग्रहण की समाप्ति के पश्चात विभिन्न राजनीतिक दलों तथा नेताओं ने समय-समय पर संविधान में परिवर्तन करने की आवश्यकता पर बल दिया है। किन्तु इस सन्दर्भ में राष्ट्रीय सहमति प्राप्त नहीं हो सकी है कि संविधान में क्या परिवर्तन किया जाए तथा परिवर्तित संविधान का स्वरूप कैसा हो। जापान के संविधान में वांछित परिवर्तनों के बारे में 1964 में स्थापित किये गए आयोग के आयोग के 39 सदस्यों में से 31 का यह मत था कि जापान में संविधान को बदलकर जापानियों की स्वतन्त्र इच्छा के आधार पर निर्मित नवीन संविधान बनाया जाना चाहिये[2], तथापि बाद में जिस प्रकार जापान ने आर्थिक व औद्योगिक क्षेत्र में प्रगति की, उससे उसका राष्ट्रीय आत्मसम्मान पर्याप्त मात्रा में बढ़ा है तथा अब संविधान के प्रति उनके हृदय में अधिक कुंठाएं विद्यमान नहीं है।

जापान का संविधान तुलनात्मक रूप से संक्षिप्त प्रलेख है इसमें कुल ग्यारह अध्याय तथा 703 अनुच्छेद हैं।

जापान के संविधान की प्रस्तावना में जापानियों द्वारा शांति की कामना पर अत्यधिक जोर दिया है तथा यह आश्वासन दिया गया है कि जापान भविष्य में किसी भी प्रकार के विवाद का समाधान शान्तिपूर्ण वैधानिक तरीकों से ही करेगा। इस आश्वासन को और अधिक क्रियात्मक स्वरूप प्रदान करने के लिए संविधान के नौवें अनुच्छेद में युद्ध का स्पष्टतः बहिष्कार किया गया है। जापान किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय समस्या का समाधान हिंसात्मक तरीके से नहीं करेगा तथा इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए जापान में जल, थल तथा वायु सेना का विघटन कर दिया गया।

यह अनुच्छेद जापान को एक पराजित राज्य के संविधान का स्वरूप प्रदान करता है। संविधान के संशोधन की मांग करने वालों में सर्वाधिक असंतोष इसी अनुच्छेद के संदर्भ में पाया जाता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि जापान अन्तर्राष्ट्रीय शांति का विरोधी है अथवा युद्ध का समर्थन करता है। तथापि यह अनुभव किया जाता है कि अन्तर्राष्ट्रीय तनाव व अविश्वास के वातावरण में जापान द्वारा सेनाएं न रखने की व्यवस्था अवास्तविक व असमान है। यही मत 1964 में नियुक्त संविधान संशोधन आयोग द्वारा स्वीकृत किया गया था। यद्यपि जापान द्वारा उक्त सुरक्षा के लिए स्थापित सेनाएं बहुत कुछ सीमा तक जापान का पुनः शस्त्रीकरण ही थीं किन्तु उन्हें संविधान में सिद्धांततः स्वीकार नहीं किया गया। 1964 में नियुक्त आयोग ने यद्यपि अपनी सिफारिशें प्रचंड बहुमत से प्रस्तुत की थीं, तो भी तत्कालीन प्रधानमन्त्री सातो ने इन सुझावों को क्रियान्वित करने में कोई तत्परता नहीं दर्शायी तथा अब भी यह अलोकप्रिय अनुच्छेद संविधान में विद्यमान है[3]।

जापान का सम्राट्—

जापान की राजनीतिक व्यवस्था में प्रारम्भ से ही सम्राट् का सम्मान व प्रतिष्ठा का स्थान रहा है, यद्यपि उसने अपनी शक्ति का वास्तविक प्रयोग बहुत कम किया है। जापान के संविधान में जिस प्रकार सम्राट् की शक्तियों को पूर्णतः समाप्त कर दिया गया उससे जापानियों को पर्याप्त ठेस पहुंची। संविधान के एक से सातवें अनुच्छेद में

2—लेस्ले वुल्फ फिलिप्स सम्पादित "कांस्टीट्यूशन्स आफ मॉडर्न स्टेट्स" पाल माल प्रेस लन्दन 1968 पृष्ठ 103।

3—वारेन एवं मुनेशी पूर्वोद्धृत पृष्ठ 180–81।

सम्राट् की शक्तियों का वर्णन किया गया है। प्रथम अनुच्छेद सम्राट् को राष्ट्र तथा जनता की एकता का प्रतीक मात्र घोषित करता है तथा उसकी इस स्थिति का कारण जनता की इच्छा को माना गया है जिसमें सर्वोच्च सत्ता निवास करती है। सम्राट् का पद वंशानुगत है तथा सारी विधि के अनुसार उत्तराधिकार का निर्धारण होगा। सम्राट् को संवैधानिक तौर पर अपने सभी कार्यों के लिए मन्त्री परिषद की स्वीकृति पर निर्भर कर दिया गया है। सम्राट् के शासन के सभी अधिकार छीन लिए गए हैं तथा वह वे ही कार्य कर सकेगा जो विधि द्वारा उसे प्रदान किए जायेंगे। ब्रिटेन के सम्राट् के समान उसे शंका का लाभ प्राप्त नहीं है, वह प्रधानमन्त्री को मनोनीत करता है, जबकि जापान के प्रधानमन्त्री को निर्वाचित करने का अधिकार डाइट को दिया गया गया है। संविधान के अनुच्छेद सात के अनुसार सम्राट् मन्त्रीमंडल की स्वीकृति से निम्नलिखित कार्य करेगा—संविधान व विधियों में किए संशोधनों की स्वीकृति, प्रतिनिधि सदन को भंग करना, डाइट के आम चुनावों की घोषणा करना, मन्त्रियों की तथा उच्च अधिकारियों की नियुक्ति की व पुष्टि करना, विशेष क्षमादान, दंड की पुष्टि करना, सम्मान प्रदान करना व अन्य कूटनीतिक घोषणाओं को प्रसारित करना, विदेशी राजदूतों का स्वागत करना तथा औपचारिक उत्सवों की अध्यक्षता करना।

इस प्रकार ये सभी कार्य सम्राट् मन्त्रीमंडल की स्वीकृति से ही कर सकता है। जापान के अनुदारवादी इस प्रकार लिखित रूप से सम्राट् की शक्तियों की पूर्ण समाप्ति के आलोचक रहे हैं तथा समय-समय पर सम्राट् की गरिमा-प्रतिष्ठा की प्रतिस्थापना के लिये तर्क दिये गये हैं। संविधान-संशोधन-आयोग इस प्रश्न पर विभाजित था। जबकि कुछ सदस्य सम्राट् को राष्ट्रीय एकता के प्रतीक के स्थान पर उसे राष्ट्र का अध्यक्ष बनाकर उसे पद के अनुसार कार्य सौंपना चाहते थे, वहीं प्रगतिवादी सम्राट् की संवैधानिक स्थिति से सन्तुष्ट थे। 1950 के पश्चात् की दशाब्दी में सम्राट् की स्थिति में परिवर्तन के लिए पर्याप्त आग्रह था तथा संविधान में संशोधन के लिए यह एक प्रमुख तर्क था, किन्तु धीरे-धीरे जापानी नवीन व्यवस्था के आदि हो गये। अब यह प्रश्न निर्जीव हो गया है। न तो संसदीय शासन की व्यावहारिकता तथा न ही राजनीतिक दबाव ऐसा वातावरण प्रदान करते हैं जो सम्राट् की शक्तियों में वृद्धि करने के अनुकूल हो[4]।

सम्राट् यद्यपि जापानी जनता में लोकप्रिय रहा है तथापि इस लोकप्रियता का आधार अब राजनीतिक सत्ता नहीं है। जापान के लोग सम्राट् को दैवीय शक्ति या आध्यात्मिक संस्था के रूप में न मानकर उसे मानवीय गुणों की दृष्टि से देखते हैं। अब सम्राट् वर्जित विषय नहीं है उसके निजी जीवन की चर्चा समाचार पत्रों में होती है तथा जापान के युवराज ने एक शाही घराने के स्थान पर एक सामान्य कुल की युवती से विवाह किया है। इस प्रकार जापान के लोगों ने अपने पवित्र सम्राट् के प्रजातन्त्रीकरण को व्यावहारिक तौर स्वीकार लिया है[5]।

जापान का सम्राट् कब किन कार्यों को करता है, वे उसके पद की शान शौकत को बढ़ाने वाले कार्य है : जैसे राजमहल में नवीन वर्ष के उपलक्ष में उत्सव का आयोजन करना। सम्राट् महत्वपूर्ण विदेशी महमानों का स्वागत करता है, उनके सम्मान में उत्सवो

4—त्सुनेशी पूर्वोद्धृत पृष्ठ 181।

5—वाल एवं क्लाइड तथा वर्टन बीर्गम पूर्वोद्धृत पृष्ठ 464।

का आयोजन करता है तथा राज्य का अध्यक्ष होने के नाते उनसे बातचीत करता है। अप्रैल 1964 में सम्राट् के जन्मदिन से पूर्व महत्वपूर्ण लोगों को पदवियाँ तथा अलंकरण देने की पुरानी प्रथा को पुनः प्रारम्भ किया गया। सम्राट् ने 1964 में मन्त्रीमंडल द्वारा चयन किये गये 187 राजनेताओं तथा विद्वानों को इस प्रकार के सम्मान से विभूषित किया। सम्राट् का जन्मदिन उनकी राष्ट्रीय अवकाश के रूप में मनाया जाता है। 1964 में जापान में आयोजित ओलम्पिक के खेलों के समारोह में सम्राट् स्वयं उपस्थित रहता था। उसकी उपस्थिति का जापानी जनता ने हार्दिक स्वागत किया।

1965 में जब 48 वीं डाइट का उद्घाटन समारोह हुआ तो सम्राट् ने अपने भाषण में संसद सदस्यों को राष्ट्र व जनता की सेवा के लिए प्रेरित किया। तत्पश्चात् वह डाइट भवन में अपने निश्चित स्थान पर बैठ गया तथा तब स्पीकर ने सम्राट् के भाषण को स्वीकार करने की परम्परा पूरी की। इन सब उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है सम्राट् की स्थिति अत्यन्त औपचारिक है, वह मात्र अलंकरण हैं। उसे परामर्श देने, उत्साहित करने तथा चेतावनी देने का परम्परागत अधिकार भी नहीं है।

जापान का सम्राट् जापान का सम्पन्नतम व्यक्ति था, किन्तु 1950 में अधिकरण के दौरान उसकी अधिकांश सम्पत्ति छीन ली गई तथा तब जापान में उससे अधिक सम्पन्न कई व्यक्ति हो गये। सम्राट की सम्पूर्ण सम्पदा का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया तथा अब उसका जीवन-निर्वाह डाइट द्वारा स्वीकृत राशि पर निर्भर है। शाही परिवार में मामलो का विभाग, जो पहले स्वतन्त्र रूप से कार्य करता था, को प्रधानमन्त्री के मन्त्रीमंडल को सौंप दिया गया गया है। इस प्रकार सम्राट अपने निजि कार्यों के लिए पूर्णतः मन्त्रीमंडल पर निर्भर करता है।

सम्राट की लोकप्रियता के बारे में किये गये अध्ययनों से पता लगता है कि सम्राट् अब भी प्रौढ़ वर्ग के सम्मान का पात्र हैं। किन्तु नवीन युवा पीढ़ी सम्राट् के प्रति उदासीन हैं, वहाँ न वह सम्मान का विषय है तथा न ही आलोचना का। सम्राट् का पद वहाँ विवाद का विषय नहीं बना है, तो जापान को एक गणराज्य बनाने का आग्रह भी नहीं किया गया है।

अन्य आधुनिक संविधानों के समान जापान का संविधान भी अपने नागरिकों को मौलिक अधिकार प्रदान करता है। संविधान के प्रलेख को देखते हुये स्वयं स्पष्ट है कि मौलिक अधिकारों पर पर्याप्त ध्यान दिया गया है। सम्राट् के पश्चात् संविधान का तीसरा अध्याय मौलिक अधिकारों की विवेचना करता करता है अनुच्छेद 11 से लेकर 40 तक मौलिक अधिकारों का वर्णन किया गया है। इस प्रकार संविधान के कुल 103 अनुच्छेद में से 31 के मौलिक अधिकारों का वर्णन किया गया हैं। यह संविधान निर्माताओं के नागरिकों के अधिकारों के प्रति उनकी सजगता व सतर्कता का प्रतीक है। इन अधिकारो में मुख्यतया जीवन का अधिकार, कार्य प्राप्त करने का अधिकार, शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार, समानता तथा शोषण के विरुद्ध संरक्षण, याचिका तथा क्षतिपूर्ति का अधिकार व स्वतन्त्रता का अधिकार है। (जिसमें धार्मिक तथा सम्पत्ति संचित करने की स्वतन्त्रता भी सम्मिलित है) अन्त में राजनीतिक अधिकार भी दिये गये हैं।

जीवन व स्वाधीनता का अधिकार—

किसी भी राज्य द्वारा प्रदान किया जाने वाला यह सर्वाधिक मूलभूत अधिकार होता

है। संविधान के 31 से 39 तक के अनुच्छेद इस अधिकार का वर्णन करते हैं। अनुच्छेद 37 के अनुसार किसी भी कार्य को कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अतिरिक्त जीवन अथवा स्वाधीनता से वंचित नहीं किया जा सकेगा तथा न ही उसे किसी प्रकार का दंड दिया जा सकेगा। कानून के द्वारा स्थापित प्रक्रिया की विवेचना आगे के अनुच्छेदों में की गई है जैसे अनुच्छेद 32 के अनुसार इस अधिकार के लिये प्रत्येक व्यक्ति को न्यायालय में अपील करने के अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता है। इसी प्रकार किसी भी व्यक्ति को किसी अधिकृत न्यायिक अधिकारी द्वारा प्रेषित वारंट के अतिरिक्त बन्दी नहीं बनाया जा सकता तथापि किसी व्यक्ति को रंगे हाथों अपराध करते हुए बन्दी बनाया जाना इसका अपवाद है। अनुच्छेद 34 के अनुसार किसी भी व्यक्ति को बन्दी बनाते ही उसे उन आरोपों के बारे में सूचित किया जायेगा जो उस पर लगाये गये हैं, उसे शीघ्र ही वकील व परामर्श प्राप्त करने की सुविधा प्रदान की जाएगी।

किसी भी व्यक्ति को बिना पर्याप्त कारणों के बन्दी नहीं बनाया जा सकेगा तथा इन कारणों को खुले न्यायालय में अपराधी तथा उसके वकील की उपस्थिति में प्रमाणित करना होगा। सभी नागरिकों को अपने घरों की सुरक्षा प्रदान की गई है। पर्याप्त कारणों के आधार पर जारी किए गए वारंट से ही व्यक्तियों के घरों में कागज पत्रों की तलाशी ली जा सकती है। कानून की उचित प्रक्रिया के बिना यह सम्भव नहीं है तथा इस प्रकार का आदेश अनुच्छेद 33 के अन्तर्गत किसी सक्षम न्यायिक अधिकारी के द्वारा ही प्रेषित किया जा सकता है। कोई भी सार्वजनिक पदाधिकारी किसी व्यक्ति को यातनापूर्ण दंड नहीं दे सकता है। यद्यपि पुलिस द्वारा किये जाने वाले अत्याचार को पूर्णतः प्रतिबन्धित करना सम्भव नहीं है अनुच्छेद 37 के अनुसार सभी अपराधों के मामलों में जांच तथा सुनवाई शीघ्रता तथा पक्षपातरहित से की जाएगी। अभियुक्त को अपने सभी साक्षियों को प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान किया जाएगा तथा उसे सरकारी खर्च पर अपने लिए साक्षी प्रस्तुत करने का अधिकार होगा। प्रत्येक परिस्थिति में अभियुक्त को योग्य वकीलों की सहायता प्राप्त करने का अधिकार होगा तथा यदि कोई अभियुक्त इस प्रकार की व्यवस्था करने में असमर्थ रहता है तो राज्य को उसके लिए इस प्रकार की व्यवस्था करनी होगी। यह अनुमान है कि लगभग चालीस प्रतिशत फौजदारी मामलों में सरकार को अभियुक्तों को इस प्रकार की सुविधा प्रदान पड़ती है। इस प्रकार यह व्यवस्था की गई है कि अपेक्षाकृत वंचित वर्ग के लोग भी आर्थिक सुविधा के अभाव में न्याय प्राप्त करने से वंचित न रहें। किसी भी व्यक्ति को अपने ही विरुद्ध साक्षी देने के लिए बाध्य नहीं किया जाएगा। यदि कोई व्यक्ति दीर्घ यातना, दबाव अथवा गिरफ्तारी के पश्चात् अपने अपराध को स्वीकारता है तो यह स्वीकृति प्रमाणित नहीं मानी जाएगी। इस प्रकार ऐसे किसी भी मामले में अभियुक्त को दोष नहीं दिया जा सकेगा जिसमें अपराध का एकमात्र प्रमाण अभियुक्त की निजी स्वीकृति होगी किसी ऐसे कार्य के लिए दंड नहीं दिया जा सकता है जो कि उसे करने के समय वैध था अथवा जिसके लिए एक बार उसे न्यायालय द्वारा निर्दोष मान लिया गया हो अथवा एक ही अपराध के लिये अभियुक्त को दो बार दंड नहीं दिया जा सकता है। इस प्रकार जापान का संविधान व्यापक स्तर पर व्यक्तिगत जीवन तथा स्वाधीनता का अधिकार प्रदान करता है।

कार्य प्राप्त करने का अधिकार—

व्यक्ति व नागरिकों के हित को देखते हुए यह अधिकार अत्यधिक महत्वपूर्ण है। सर्वप्रथम यद्यपि समाजवादी देशों ने इस अधिकार के महत्व को स्वीकारा यद्यपि अन्य अन्य देश भी उत्तरोत्तर इस अधिकार की महत्ता स्वीकारने लगे हैं, विशेष रूप से विभिन्न देशों द्वारा बेरोजगारी की समस्या का सामना करने के सन्दर्भ में यह अधिकार और भी महत्व-पूर्ण हो जाता है। कार्य करने के अधिकार का तात्पर्य यहां जीविकोपार्जन सम्बन्धी कार्य से है। जापान के संविधान का 27 वां अनुच्छेद जापान के प्रत्येक व्यक्ति को कार्य करने का अधिकार प्रदान करता है तथा कार्य करना अनिवार्य घोषित करता है। साथ ही संविधान यह आश्वासन भी देता है कि वेतन के स्तर, कार्य के घण्टों, विश्राम तथा कार्य करने की परिस्थितियों आदि का निर्धारण उचित विधि द्वारा किया जाएगा। इस अधिकार का सम्बन्ध अनुच्छेद 25 से भी है जिसके अनुसार प्रत्येक जापानी को स्वस्थ तथा संस्कृत जीवन के निम्नतम स्तर को बनाये रखने का अधिकार है। इसके लिए सरकार जीवन के सभी क्षेत्रों में सामाजिक कल्याण सुरक्षा तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य की उन्नति के लिए कार्य करेगी। श्रमिकों द्वारा अपने जीवन तथा सुविधाओं को सुधारने के लिए संगठन बनाने का तथा सामूहिक रूप से प्रयास करने का अधिकार भी संविधान द्वारा प्रदान किया गया है। अर्थात् ट्रेड यूनियन द्वारा हड़तालों का आयोजन संविधान के अन्तर्गत किया जा सकता है तथापि सामान्य मान्यता यह है कि मजदूर यह कार्य समाज के वृहत्तर हित को ध्यान में रख कर ही कर सकते हैं। व्यवहार में सभी नागरिकों को कार्य प्राप्त होने की स्थिति विद्यमान नहीं है तथा अन्य देशों के समान जापान के युवक भी बेकारी के शिकार बनते हैं।

3. शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार

नागरिकों के स्वस्थ मानसिक विकास के लिए शिक्षा व्यवस्था होना आवश्यक है। जापान के संविधान का अनुच्छेद 23 जापानी नागरिकों को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार प्रदान करता है। 26 वें अनुच्छेद के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपनी योग्यता के अनुसार शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार होगा। सभी लोगों का यह कर्तव्य है कि वे अपने संरक्षण में लड़के-लड़कियों को न्यूनतम शिक्षा अवश्य दिलवायें। यह निम्नतम शिक्षा निःशुल्क होगी। स्वयं राज्य ने अपनी ओर से शिक्षा का विस्तार करने के लिए बड़े पैमाने पर शिक्षा सुविधाओं की व्यवस्था की है, तथापि शिक्षा की समानता पर्याप्त सीमा तक सैद्धान्तिक अधिक है। व्यावहारिक रूप से सम्पन्न वर्ग व अल्प आय वर्ग के मध्य योग्यता के आधार पर शिक्षा व्यापक खाई निर्मित कर देती है तथा अधिक सम्पन्न वर्ग इस सन्दर्भ में अधिक आगे बढ़ पाता है।

4. समानता तथा शोषण के विरुद्ध संरक्षण—

समानता किसी भी स्वस्थ प्रजातन्त्रीय व्यवस्था का आधार स्तम्भ होती है। संवि-धान के 14, 24 तथा 27 अनुच्छेद इसकी विवेचना करते हैं। सर्वप्रथम अनुच्छेद 14 जापानी नागरिकों को विधि की समानता प्रदान करता है। अर्थात् विधि के अन्तर्गत सभी लोग समान हैं तथा जाति-पांति, सामाजिक स्थिति, वंश व उद्भव के कारण किसी के साथ राजनैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक स्तर पर भेदभाव नहीं किया जाएगा। परम्परागत

सम्बन्धी उपाधियों को समाप्त कर दिया गया है। साथ ही यह भी प्रतिपादित किया गया है कि सम्मानित उपाधि के साथ किसी प्रकार का विशेषाधिकार प्रदान नहीं किया जाएगा तथा किसी भी व्यक्ति को इस प्रकार की उपाधि उसके जीवन पर्यन्त ही प्राप्त होगी।

सामाजिक स्तर पर स्त्री-पुरुषों के मध्य समानता स्थापित की गई है। अनुच्छेद 24 के अनुसार स्त्री-पुरुषों की परस्पर सहमति के आधार पर ही विवाह हो सकेगा तथा पति पत्नि के समान अधिकार व सहयोग विवाह की आधार शिला होगी। स्त्री-पुरुषों की समानता तथा व्यक्तिगत प्रतिष्ठा को बनाये रखने की दृष्टि से राज्य सरकार पति-पत्नि के चयन संपत्ति के अधिकार, उत्तराधिकार, निवास स्थान का चयन, तलाक तथा विवाह तथा परिवार के संदर्भ में नवीन विधियों का निर्माण करेगी। पैतृक संपत्ति पर स्त्री व पुरुषों को समान अधिकार दिया गया है अर्थात् कानूनी तौर पर पुत्रियां पैतृक संपत्ति की भागीदार बन सकती हैं, जबकि व्यावहारिक तौर पर बहुत कम मामलों में इस स्थिति का प्रयोग करती हैं। भारत की भांति जापान में भी स्त्रियों में अपने कानूनी अधिकारों के प्रति अज्ञानता व्याप्त है।

सबको समान स्तर प्रदान करने की दृष्टि से शोषण की समाप्ति की घोषणा की गई है। किसी भी व्यक्ति से बलपूर्वक कार्य नहीं करवाया जा सकता है यद्यपि कैदियों द्वारा करवाया जाने वाला कार्य इसका अपवाद मात्र है। किसी व्यक्ति को किसी प्रकार की गुलामी में नहीं रखा जा सकता है तथा न ही उससे बेगार करवाई जा सकती है। इसी प्रकार 28 वें अनुच्छेद के अनुसार बच्चों के शोषण को अवैधानिक घोषित किया गया है।

5. स्वतन्त्रता का अधिकार—

अन्य प्रजातन्त्रीय देशों के समान जापान का संविधान अपने नागरिकों को अपने व्यक्तित्व के विकास के लिए अनुच्छेद 21 व 22 में 'मूलभूत स्वतन्त्रताएं' प्रदान करता है। संविधान नागरिकों को भाषण की, प्रकाशन की तथा अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता प्रदान करता है। सरकार किसी प्रकार की सेंसर शक्तियों का प्रयोग नहीं करेगी। किसी प्रकार के पत्र-व्यवहार तथा अन्य प्रकार के संचार साधनों की सुरक्षा की गारन्टी दी गई है। नागरिकों द्वारा सम्मेलन आयोजित करना, किसी प्रकार के संघ का निर्माण करना, निवास स्थान के चयन करने आदि की स्वतन्त्रता प्रदान की गई है। व्यवसाय के चयन की स्वतन्त्रता उस सीमा तक प्राप्त है जहां तक वह लोक कल्याण के लिए हानिकारक नहीं हो। इसी प्रकार विदेशों में बिना किसी प्रतिबन्ध के जाने तथा अपने देश की नागरिकता का त्याग करने की स्वतन्त्रता अनुच्छेद 22 में प्रदान की गई है। तथापि व्यवहार में सरकार ऐसे लोगों को पार पत्र देने से मना कर सकती है जिनकी गतिविधि राष्ट्रीय हित के विरुद्ध है, इस प्रकार स्वतन्त्रता के अधिकार के साथ लोक कल्याण तथा राष्ट्रीय हित की व्यवहार में पर्याप्त व्यापक सिद्ध होती है। संविधान के स्वतन्त्र रूप से अनुच्छेद 20 में व्यक्तियों की धार्मिक स्वतन्त्रता का भी वर्णन किया गया हैं। अनुच्छेद 19 के अनुसार प्रत्येक नागरिक को विचार तथा अंतकरण की स्वतन्त्रता प्राप्त है। उसी के साथ धर्म की स्वतन्त्रता भी महत्त्वपूर्ण है। इस प्रकार राज्य सरकार किसी विशेष धर्म या धार्मिक संगठन को आर्थिक सहायता प्रदान नहीं करेगी। किसी व्यक्ति को किसी धार्मिक कृत्य, उत्सव, संस्कार अथवा प्रथा में भाग लेने के लिए बाध्य नहीं किया जाएगा। राज्य की ओर से अथवा राज्य के

किसी घटक द्वारा किसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा नहीं दी जाएगी । धर्म के आधार पर किसी व्यक्ति के साथ सामाजिक आर्थिक तथा राजनीतिक स्तर पर भेदभाव नहीं किया जा सकेगा । व्यक्ति किसी भी धर्म में विश्वास कर सकेंगे । तथा उसके लिए प्रचार भी कर सकेंगे । पर धर्म के नाम पर कोई ऐसा कार्य नहीं किया जा सकेगा जो लोककल्याण के विपरीत हो । इस प्रकार जापान का संविधान भी धर्म निरपेक्ष राज्य का प्रतिपादन करता है । यद्यपि संविधान के मूल प्रलेख में इसका उल्लेख नहीं किया गया है ।

6. संपत्ति का अधिकार—

यद्यपि सम्पत्ति रखने का अधिकार निरपेक्ष रूप से आज के सन्दर्भ में कोई भी राज्य प्रदान नहीं कर सकता है, तो भी लोककल्याण की शर्त के साथ यह अधिकार जापान के नागरिकों को प्राप्त है । अर्थात् अनुच्छेद 29 के अनुसार व्यक्ति को सम्पत्ति को अर्जित करने तथा उस पर स्वामित्व बनाये रखने का अधिकार है । तथापि सम्पत्ति के अधिकार की व्याख्या सार्वजनिक कल्याण के सन्दर्भ में विधि के द्वारा की जाएगी । तथा इस प्रकार राज्य किसी निजी सम्पत्ति को सार्वजनिक कल्याण की दृष्टि से उचित मुआवजा देकर हस्तगत कर सकता है । इस प्रकार नागरिकों को निरपेक्ष रूप में सम्पत्ति का अधिकार नहीं दिया गया है ।

7. राजनीति का अधिकार—

किसी भी प्रजातन्त्रीय व्यवस्था में राजनीतिक अधिकार उसका मूल आधार होते हैं । संविधान के अनुच्छेद 15 में नागरिकों के राजनीतिक अधिकारों का वर्णन किया गया है । जिसके अनुसार जापानियों को अपने सभी सार्वजनिक पदाधिकारियों का निर्वाचन करने तथा उन्हें अपदस्थ करने का अधिकार दिया गया है । यह भी घोषणा की गई है कि ये सभी पदाधिकारी सम्पूर्ण जनता के सेवक हैं तथा मात्र किसी समूह के प्रति उत्तरदायी नहीं है । इसी अनुच्छेद में वयस्क मताधिकार की घोषणा की गई है यह आश्वासन दिया गया है कि निर्वाचन के मत की गोपनीयता को सुरक्षित रखा जायगा । तथा मतदाता द्वारा किए गए चयन के लिए उसे सार्वजनिक या व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी नहीं बनाया जा सकता है । राजनीतिक अधिकारियों के निर्वाचन के साथ नागरिकों को अनुच्छेद 16 के अनुसार अपने द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों व अधिकारियों के विरुद्ध याचिका प्रस्तुत करने का भी अधिकार दिया गया है । प्रत्येक व्यक्ति को अपनी परेशानियों के उपचार, लोक अधिकारियों की पदच्युति विधियों, अध्यादेशों तथा अधिनियम के परिवर्द्धन अथवा संशोधन व अन्य विषयों के लिए शांतिपूर्ण ढंग से याचिका देने का अधिकार दिया गया है तथा इस प्रकार की याचिका प्रस्तुत करने के कारण उस व्यक्ति के साथ किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाएगा । इस प्रकार संविधान नागरिकों को मात्र अपने प्रतिनिधि निर्वाचित करने का ही अधिकार नहीं देता है अपितु उन्हें अपदस्थ करने का अवसर भी प्रदान करता है ।

8. क्षतिपूर्ति का अधिकार—

संविधान के 17 तथा चालीसवें अनुच्छेद नागरिकों को क्षतिपूर्ति का अधिकार प्रदान करते हैं अर्थात् कोई भी नागरिक किसी सार्वजनिक कर्मचारी के किसी कार्य से हानि उठाने

पर, विधि के अनुसार। राज्य या लोक सत्ता के विरुद्ध क्षतिपूर्ति का दावा कर सकता है। इसी प्रकार चालीसवें अनुच्छेद के अनुसार यदि कोई व्यक्ति गिरफ्तारी व नजरबन्दी के पश्चात् निर्दोष साबित हो जाता है तो वह राज्य के विरुद्ध क्षति पूर्ति का दावा कर सकता है।

मूल कर्त्तव्य—

जापान के संविधान में इन अधिकारों के साथ कर्त्तव्यों का भी वर्णन किया गया है। यद्यपि ये कर्त्तव्य पृथक रूप से नहीं दिए गए हैं तथा अधिकारों के साथ ही उन्हें मिला दिया गया है। जैसे अनुच्छेद 12 में यह स्पष्ट कहा गया है कि संविधान द्वारा दिए गए मौलिक अधिकार निरन्तर नागरिकों के प्रयत्न से हीं सुरक्षित रह सकते हैं। अतः नागरिकों का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वे संविधान द्वारा प्रदत्त स्वतन्त्रता तथा अधिकारों का दुरुपयोग नहीं करेंगे तथा सर्वदा इन अधिकार तथा स्वतन्त्रताओं का प्रयोग सार्वजनिक कल्याण की दृष्टि से करेंगे। अनुच्छेद के 27 वें कार्य करने के अधिकार को कर्त्तव्य भी माना गया है अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति को काम करना होगा। अनुच्छेद 26 के अनुसार प्रत्येक माता-पिता का कर्त्तव्य है कि वे अपने बच्चों को न्यूनतम शिक्षा प्रदान करवायें। अनुच्छेद 27 के अनुसार नागरिकों का कर्त्तव्य है कि वे बच्चों का शोषण नहीं करें। इसी प्रकार अनुच्छेद 50 में कहा गया है कि नागरिकों को विधि द्वारा लगाया गया कर देना अनिवार्य होगा। इस प्रकार जापान का संविधान अधिकार के साथ-साथ कर्त्तव्यों का प्रतिपादन भी करता है किन्तु ये कर्त्तव्य पृथक एवं स्वतन्त्र रूप से नहीं दिये जाकर अधिकारों के साथ मिश्रित रूप से ही दिये गये हैं।

जापान के संविधान में मौलिक अधिकार-पत्र पर्याप्त व्यापक है किन्तु अन्य देशों के समान यहां भी सिद्धांत तथा व्यवहार में उल्लेखनीय अन्तर है। सामाजिक तथा आर्थिक ढंग से जापान में अभी उतना परिवर्तन नहीं आया है, जितना संविधान में परिलक्षित होता है। जापानी समाज में अभी भी सामन्ती रूढियां व प्रथा पर्याप्त सीमा तक व्याप्त है। स्त्रियों की वास्तविक स्थिति संवैधानिक व्यवस्था के बावजूद दुर्बल है तथा वे पिता अथवा पति के संरक्षण में जीवन व्यतीत करती हैं।

इसी प्रकार प्रकाशन व अभिवृद्धि की स्वतन्त्रता पर भी सरकार का नियन्त्रण बढा है। लोककल्याण तथा जनहित के आधार पर उन पर प्रतिबन्ध लगाये जाते जाते हैं। सरकार विरोधी सूचनायें छापने का साहस प्रकाशक नहीं कर पाते हैं इसी प्रकार शिक्षा के क्षेत्र में भी सरकारी हस्तक्षेप बढा है। व्यक्ति की स्वतन्त्रता वस्तुतः नियन्त्रित है क्योंकि पुलिस तथा जनता के परम्परागत सम्बन्धों में संविधान के अनुरूप परिवर्ततन नहीं हुआ है। लोककल्याण के आधार पर सरकार निजी सम्पत्ति का अधिग्रहण उचित मुआवजा देकर कर सकती है। इस प्रकार विभिन्न अधिकारों में लोककल्याण के आधार पर नियन्त्रण लगाये गये हैं तथा यह स्थिति अन्य देशों में भी दृष्टिगोचर होती है। वस्तुतः जापान के संविधान में सभी महत्वपूर्ण अधिकारों के साथ साथ जीवन की स्वाधीनता, सम्पत्ति स्वतन्त्रता, जनहित तथा लोककल्याण की पूर्ति इतनी व्यापक है कि इसके आधार पर कोई भी सरकार प्रदत्त अधिकारों को पर्याप्त सीमा तक नियन्त्रित कर सकती है।

मन्त्रीमण्डल : अर्थात् वास्तविक कार्यपालिका—

जैसा कि सम्राट् की स्थिति के सन्दर्भ में देखा गया, सम्राट् मन्त्रीमण्डल के परामर्श के बिना कोई भी कार्य नहीं कर सकता है। इस प्रकार सम्पूर्ण कार्यपालिका शक्तियां प्रधानमन्त्री के नेतृत्व में संगठित मन्त्रीमण्डल में निहित करती है। अनुच्छेद 66 के अनुसार प्रधानमन्त्री मन्त्रीमण्डल का प्रमुख होगा। सभी मन्त्रियों का असैनि होना आवश्यक है। मन्त्रीमण्डल अपने सभी कार्यों के लिए डाइट के प्रति सर्वाधिक रूप से उत्तरदायी होगा। मन्त्रीमण्डल में मन्त्रियों का चयन प्रधानमन्त्री करेगा। मन्त्रीमण्डल की सदस्य संख्या निर्धारित नहीं की गई है तथापि प्रायः 16 से 20 सदस्य मन्त्रीमण्डल में नियुक्त किये जाते जाते हैं। मन्त्रीमण्डलीय विभागों के अतिरिक्त दो महत्वपूर्ण अन्तः मन्त्रीमण्डलीय समितियों हैं—प्रथम मन्त्रीमण्डलीय परिषद्, जिसमें प्रधानमन्त्री, वित्त मन्त्री, कृषि तथा वन मन्त्री, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार तथा उद्योग, यातायात मन्त्री तथा आर्थिक नियोजन विभाग के निदेशक होते हैं। इस प्रकार संस्था का कार्य विदेशी प्रबन्ध-व्यापार के बजट का पुनरावलोकन करना है।

दूसरी समिति सुरक्षा समिति है, जिसके सदस्य प्रधानमन्त्री, विदेश तथा वित्तमन्त्री तथा सुरक्षा व आर्थिक नियोजन विभाग के निदेशक होते हैं। इस समिति का मूल उद्देश्य सुरक्षा-नीति का निर्धारण करना है।

मन्त्रीमण्डल के संगठन से सम्बन्धित अतिसंवैधानिक परम्पराएं—

युद्ध के पश्चात् के अधिकांश मन्त्रीमण्डलों में भूतपूर्व प्रशासनिक वर्ग का प्रभाव अधिक रहा है। वहां प्रधानमन्त्री सहित अधिकांश मन्त्री वे लोग होते हैं जो अपना कैरियर केन्द्रीय लोक सेवा से प्रारम्भ करते हैं। इस प्रकार वे एक विशिष्ट वर्ग से सम्बन्धित होते हैं। अधिकांश मन्त्रीमण्डल के सदस्य 45 से 60 वर्ष के बीच के होते हैं। इस प्रकार आयु का परम्परागत सम्मान जापान के मन्त्रीमण्डल के सदस्यों को प्राप्त होता है। मन्त्रीमण्डल के संगठन में प्रधानमन्त्री विभिन्न गुटों तथा भौगोलिक क्षेत्रों के प्रतिनिधित्व को महत्व देता है।[6]

जापान में मन्त्रीमण्डल में चूंकि प्रायः परिवर्तन होता रहता है अतः मन्त्रीमण्डल की सदस्यता प्राप्त करने में कई कारक सहायक होते हैं। जैसे कोई सदस्य कितनी बार डाइट का सदस्य चुना जा चुका है, उसका भूतकालीन अनुभव क्या है उदाहरण के लिए प्रशासनिक अनुभव जिसमें वह उच्चतम लोक प्रशासक के रूप में वे बड़ा हो, उसकी प्रशासनिक योग्यता क्या है तथा किसी गुट के नेता का समर्थन करने में वह कितना निष्ठावान् रहा है आदि हैं। वर्तमान में यह नियम सा बन गया है कि मन्त्रीमण्डल का सदस्य बनने से पहले उस व्यक्ति ने कम से कम पांच बार डाइट की सदस्यता पूरी कर ली है[7]। इस प्रकार मन्त्रीमण्डल की सदस्यता प्रायः वरिष्ठ नेताओं को ही प्राप्त होती है तथापि कभी कभी अपवाद स्वरूप प्रधानमन्त्री की कृपा से किसी उद्योगपति की नियुक्ति बिना किसी

6—ए. डब्ल्यू. वर्क्स "दि गवर्नमेंट आफ जापान" मैथ्यून एण्ड कं० 1966 पृष्ठ 109, स्नूनेशी पूर्वोद्धृत पृष्ठ 5।

7—द्रष्टव्य पृष्ठ 49।

अनुभव के भी हो सकती है। किन्तु ऐसे व्यक्ति को पत्पश्चात शीघ्र ही डाइट के किसी भी सदन के लिए चुनाव लड़ना पड़ता है फिर भी अधिकांश मन्त्रीगण डाइट के सदस्य होते हैं। संविधान के अनुसार मन्त्री किसी भी सदन के सदस्य हो सकते हैं किन्तु व्यवहार में अधिकाँश सदस्य निम्न सदन में से लिए जाते हैं क्योंकि मन्त्रीमण्डल को उसके अविश्वास प्रस्ताव पारित करने पर त्याग पत्र देना पड़ता है।

मन्त्रीमण्डल की अवधि—

संवैधानिक तौर पर मन्त्रीमण्डल का कार्यकाल चार वर्ष होता है वशर्तें इस बीच में डाइट उसके विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित न कर दे। किंतु यह तथ्य कि 1946-64 के 18 वर्षों में 17 सरकारों का गठन किया गया इस वात का साक्षी है कि जापान की सरकारों में वहुत जल्दी परिवर्तन किये जाते हैं। ये परिवर्तन अविश्वास प्रस्ताव के कारण हों यह आवश्यक नहीं। मन्त्रीमण्डल में परिवर्तन करने का मुख्य कार्य स्वयं प्रधान मन्त्री के द्वारा किया जाता है। उदाहरण के लिए जुलाई 1960 से नवम्बर 1964 तक प्रधानमन्त्री इवकेदा ने चार वार सरकारी तौर पर तथा तीन वार अनौपचारिक तौर पर अर्थात् कुल सात वार अपने मन्त्रीमण्डल में परिवर्तन किया, यद्यपि मन्त्रीमण्डल को डाइट से कोई खतरा नहीं था8। मन्त्रीमण्डल में परिवर्तन के अनेक कारण हो सकते हैं, संवैधानिक तौर पर निम्न सदन के अविश्वास प्रस्ताव पर से मन्त्रीमण्डल को त्याग पत्र देना होता है किंतु युद्ध के पश्चात् प्रतिनिधि सदन ने मात्र दो वार मन्त्रीमण्डल के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित किया। 1949 में प्रधानमन्त्री योशीदा की सरकार के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित किया गया, क्योंकि उसकी सरकार अल्पमत में थी। दूसरी वार 1953 में फिर से योशीदा की सरकार के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित किया गया जिसके पश्चात् शीघ्र ही प्रतिनिधि सदन को भंग कर दिया। अविश्वास के प्रस्ताव का कारण योशीदा मन्त्रीमण्डल के कुछ सदस्यों का अनियमित व्यवहार था।

1955 के पश्चात् जव से राजनीतिक दलों का ध्रुवीकरण हुआ है, विरोधी दल, उदारवादी प्रजातन्त्रीय दल (लिवरल डेमोक्रेटिक पार्टी) के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव के लिए आवश्यक मतों को प्राप्त करने में असमर्थ रहा है।

प्रधानमन्त्री की मृत्यु अथवा वीमारी से पद खाली होने पर भी मन्त्रीमण्डल में तत्काल परिवर्तन आवश्यक हो जाता है। वीमारी की वजह से तीन प्रधानमन्त्रियों को त्यागा पत्र देना पड़ा। 1955 में होतोगामा, 1955 में ही उसका उत्तराधिकारी इशी वाशी तथ 1964 में इकेदा ने त्याग पत्र दिया।

डाइट के भंग होने पर भी मन्त्रीमण्डल का भंग होना अनिवार्य हो जाता है। जापान में संविधान के अन्तर्गत कोई भी डाइट पूरे चार साल तक कार्य नहीं कर सकी है। हाल हाल के वर्षों में डाइट के भंग होने का कारण विरोधी दलों का दवाव होना नहीं है अपितु प्रायः इसका कारण लिवरल डेमोक्रेटिक पार्टी का आन्तरिक संघर्ष व वैमनस्य है। कभी कभी प्रधानमन्त्री अपने समर्थकों की संख्या डाइट में बढाने के लिए भी सदन को भंग कर देता है जैसे इकेदा ने प्रधानमन्त्री वनने पर डाइट को भंग करवाया।

8—स्तुनेत्री पूर्वोद्धृत पृष्ठ 52–53।

कभी-कभी प्रधानमन्त्री शासक दल में अपनी स्थिति मजबूत बनाने के लिए तथा विरोधी गुटों को कमजोर बनाने के लिए भी मन्त्रीमण्डल में परिवर्तन करता है। 1961–64 के मध्य प्रधानमन्त्री इकेदा द्वारा दिए गए मन्त्रमंडलीय परिवर्तन तथा पुनर्गठन इसी श्रेणी में आते हैं। इस प्रकार अनुदारवादी प्रधानमन्त्री अपने कार्यकाल में अपने मन्त्रीमंडल में परिवर्तन करते हैं। इस प्रकार सरकार को यद्यपि विरोधी दलों द्वारा अपदस्थ किये जाने का भय नहीं होता है तथापि आन्तरिक गुटों के संघर्ष की वजह से इस प्रकार के परिवर्तन होते रहते हैं। इस प्रकार कुछ लोगों के निरन्तर पद पर बने रहने से उत्पन्न होने वाले दोषों का कुछ सीमा तक निराकरण हो पाता है। इसी प्रकार एक हीं दल के शक्ति में बने रहने के बावजूद भी प्रधानमन्त्री तथा मन्त्रीमंडल में परिवर्तन होते रहते हैं।

मन्त्रीमण्डल की शक्तियां व कार्य—

मन्त्रीमंडल वास्तविक कार्यपालिका तो है ही साथ ही संसदीय शासन प्रणाली होने के नाते यह बड़े पैमाने पर विधायी कार्य भी करता है। मन्त्रीमंडल के कार्यों को साधारण तौर से तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

1. कार्यपालिका संबन्धी कार्य—अनुच्छेद 27 के अनुसार मन्त्रीमंडल आन्तरिक तथा वाह्य अर्थात् राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय मामलों का संचालन करता है। अनुच्छेद 73 के अनुसार विधियों को लागू करना, राष्ट्रीय नीतियों का निर्धारण करना, प्रशासन कीव्यवस्था करना व प्रशासन सम्बन्धी आदेश प्रेषित करना आदि इसके कार्य हैं।

राष्ट्रीय नीति के समान में अन्तर्राष्ट्रीय नीति का संचालन करना भी मन्त्रीमंडल का दायित्व है, जिसमें विदेशों के साथ कूटनीतिक सन्धियाँ करना भी सम्मिलित है जिसके पहले या बाद में स्वयें डाइट की स्वीकृति लेनी जरूरी होती हैं। व्यवहार में केबिनेट इस शक्ति का पर्याप्त सीमा तक प्रयोग करती है। वस्तुतः 1960 में अमेरिका के साथ सुरंगा-सन्धि का पुनरावलोकन करने के दौरान प्रधानमन्त्री योशीदा ने डाइट की पूर्ण उपेक्षा की थी, यद्यपि इस सन्धि पर विचार-विमर्श डाइट में किया गया था, तथापि मन्त्रीमंडल ने इसे डाइट में सरकारी तौर पर वाशगंटन में हस्ताक्षर हो जाने के पश्चात ही प्रस्तुत किया। यह तथ्य वैदेशिक मामलों में मन्त्रीमंडल की सर्वोच्चता का द्योतक है। इसी प्रकार प्रशासन के क्षेत्र में भी मन्त्रीमंडल की शक्तियाँ व्यापक हैं। मुख्य कार्यपालिका होने के नाते प्रशासन के क्षेत्र में भी उसकी सर्वोपरि है। उसे नियमित तथा वर्गीकृत लोक प्रशासकों की नियुक्ति करने का अधिकार प्राप्त है। विशिष्ट सेवाओं में जैसे राजदूत, विभिन्न आयोगों तथा क्रेडिट बोर्ड के सदस्यों की नियुक्ति का अधिकार भी उसे प्राप्त है। इसी प्रकार राष्ट्रीय लोक-प्रशासन के नियमों के अनुसार यह अफसरों को अपदस्थ भी कर सकती है।

2. विधायी एवं वित्तीय कार्य—संसदीय व्यवस्था होने के कारण मन्त्रीमंडल को विधायी तथा वित्तीय क्षेत्र में व्यापक शक्तियाँ प्राप्त हैं। 27 अनुच्छेद के अनुसार कार्यपालिका विधेयकों को प्रस्तुत करती है। इस प्रकार विधेयकों के तथा डाइट के निर्माण में वास्तविक शक्ति का प्रयोग मंत्रीमंडल के द्वारा ही किया जाता है। किसी भी अधिवेशन में अधिकांश विधेयक मन्त्रीमंडल के द्वारा ही प्रेषित किये जाते हैं तथा क्योंकि मन्त्रीमंडल को डाइट में सर्वोच्च शक्ति प्राप्त होती है, अतः इन विधेयकों को पारित करने में उन्हें किसी

प्रकार की कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता है। वस्तुतः जापानी अधिकारी विधेयक प्रारूप बनाने में इतने परिपक्व हो चुके हैं तथा उनकी तकनीकी जानकारी की श्रेष्ठता की धाक विधायकों पर इतनी जबर्दस्त है कि अब डाइट का मूल कार्य सरकार द्वारा प्रेषित विधेयकों पर विचार करना, प्रश्न पूछना, उसका परिवर्द्धन करना तथा उन्हें पारित करना मात्र हो गया है[9]। इसके अतिरिक्त मन्त्रीमण्डल किसी विधेयक के साथ इस तरह के पूरक आदेश प्रेषित करता है कि साधारण विधायक के लिए उन्हें समझना कठिन होता है।

इसके अतिरिक्त मन्त्रीमण्डल अन्य वित्तीय कार्य भी करता है। अनुच्छेद 73 तथा 86 के अनुसार मन्त्रीमण्डल बजट विधेयक तथा आय-व्यय का सम्पूर्ण ब्यौरा डाइट को प्रस्तुत करता है तथा उसे राज्य की वित्तीय स्थिति से परिचित कराता है।

अन्य विधायी कार्यों के अतिरिक्त सम्राट् डाइट के नियमित अधिवेशन आहूत करने प्रतिनिधि सदन को भंग करने; आम चुनावों की घोषणा करने तथा डाइट के असाधारण तथा उच्च सदन के संकटकालीन अधिवेशनों को आमन्त्रित करने के लिए परामर्श देता है।

सभी मन्त्रीमण्डलीय आदेशों तथा विधियों पर सम्राट् से हस्ताक्षर करवाता है तथा संविधान, विधियों, मन्त्रीमण्डलीय आदेशों तथा सन्धियों पर हस्ताक्षर करने का परामर्श सम्राट को देता है। इस प्रकार विधायी क्षेत्र में मन्त्रीमण्डल की शक्तियाँ व्यापक हैं।

3. न्यायिक शक्तियाँ—मुख्य कार्यपालिका होने के नाते न्यायपालिका के सन्दर्भ में भी मन्त्रीमण्डल को महत्वपूर्ण शक्तियाँ प्राप्त हैं। सर्वोच्च न्यायालय के सर्वोच्च न्यायाधीश का मनोनयन करना तथा न्यायाधीशों की नियुक्ति करना तथा अनुच्छेद 73 के अनुसार क्षमादान, दण्ड में कमी करना तथा अधिकारों को पुनर्स्थापित करना आदि कार्य मन्त्रीमंडल करता है।

इन सभी कार्यों के लिए मन्त्रीमंडल सामूहिक रूप से डाइट के प्रति उत्तरदायी होता है तथा डाइट चाहे तो मन्त्रीमंडल के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित कर सकती है। किन्तु मन्त्रीमंडल द्वारा बहुमत का समर्थन प्राप्त होने के कारण डाइट प्रायः इस प्रकार का निर्णय लेने में असमर्थ रहती है। ईस प्रकार किसी भी अन्य संसदीय प्रणाली वाले देश के समान सैद्धान्तिक रूप से यद्यपि डाइट सर्वोच्च है, तथापि व्यवहार में मन्त्रीमंडल की शक्तियाँ अत्यधिक बढ़ गई हैं। डाइट का सांसद एक बार मन्त्रीमंडल में चुने जाने के पश्चात फिर डाइट की परवाह नहीं करता है। जापान के मन्त्रीगण डाइट में प्रायः भाषण देने के लिए अथवा प्रश्नों का जवाब देने के लिये उपस्थित होते हैं। सरकार तथा विपक्ष के बीच में व्यापक विचार-विमर्श की परम्परा का विकास जापान में अधिक नहीं हो पाया है, यद्यपि 1960 के पश्चात डाइट के प्रति मन्त्रीमंडल के दृष्टिकोण मे किंचित परिवर्तन आया है। 1960 में संयुक्त राज्य अमेरिका तथा जापान के मध्य सधि के संशोधन को लेकर किसी की सरकार पतन हो गया, किशी युद्धोत्तरकालीन जापान के प्रशासनिक स्तर के राजनेतृत्व का प्रतीक था, जिसका डाइट के प्रति दृष्टिकोण नौकरशाही वृत्ति का था। उसके उत्तराधिकारी इकेदा ने डाइट के प्रति सहानुभूति का दृष्टिकोण अपनाना प्रारम्भ किया तथा विरोधी पक्ष को सम्मान देना शुरू किया। उसने बहुमत की निरपेक्षता के स्थान पर विरोधी

9—न्यूजर्मी पूर्वोद्धृत पृष्ठ 44।

पक्ष के साथ समझौतावादी दृष्टिकोण अपनाने की कोशिश की। यदि यह प्रवृत्ति निरन्तर रही तो जापान के मन्त्रीमंडल तथा डाइट के मध्य सम्बन्ध और अधिक संतुलित हो सकेगी। इस प्रवृत्ति को 1964 में नियुक्त नये प्रधानमन्त्री साटो ने भी बनाये रखा।

प्रधानमन्त्री का पद तथा स्थिति—

जापान के संविधान के पांचवें अध्याय में मन्त्रीमंडल के अन्तर्गत प्रधानमन्त्री की स्थिति एवं कार्यों का वर्णन किया गया गया है। अनुच्छेद 67 से लेकर 72 तक में प्रधान मन्त्री की शक्तियों का वर्णन है। डाइट के चुनाव के बाद प्रधानमन्त्री की नियुक्ति सम्राट् द्वारा की जाती है। डाइट में बहुमत दल के नेता को सम्राट् इस पद पर नियुक्त करता है। प्रधानमन्त्री की शक्तियों को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है—

मन्त्रीमंडल के अध्यक्ष के रूप— प्रधानमन्त्री मन्त्रीमंडल का अध्यक्ष होता है, वह मन्त्रियों की नियुक्ति करता है तथा उन्हें अपदस्थ भी कर सकता है। वह मन्त्रीमंडल की बैठकों की अध्यक्षता करता है, मन्त्रीमंडल के नेता के रूप में उसके निर्णयों की घोषणा करता है तथा डाइट के सम्मुख बजट, सामान्य विधेयक तथा प्रस्तावों को प्रस्तुत करता है। उसका सम्पूर्ण विभागों पर पूर्ण नियन्त्रण होता है। वह मन्त्रीमण्डल का पुनर्गठन तथा भंग करने का पूर्ण अधिकारी है। मन्त्रीमण्डल की अवधि के दौरान हम देख चुके हैं जापान के प्रधानमन्त्री इस अधिकार का व्यापक प्रयोग करते है।

द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् कार्यपालिका का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक हुआ है। इस विस्तार के कारण प्रधानमन्त्री शक्ति का केन्द्र-बिन्दु व स्रोत बन गया है। आज प्रधान-मन्त्री के कार्य इतने व्यापक हैं कि उन्हें पूरा करने के लिए प्रधानमन्त्री कार्यालय को कई एजेंसी तथा ब्यूरों की सहायता लेनी पड़ती है।

प्रधानमन्त्री बहुमत दल का नेता होने के नाते डाइट का भी नेता होता है। इस प्रकार डाइट पर उसका प्रभाव व्यापक होता है। डाइट द्वारा उसके प्रस्तावों का समर्थन न किए जाने पर वह डाइट को भंग करवा सकता है। यह उल्लेखनीय तथ्य है कि जापान के प्रधानमन्त्रियों ने डाइट को भंग करवाने के अधिकार का प्रयोग इतनी बार किया है कि युद्ध के पश्चात् कोई भी डाइट अपना चार वर्ष का कार्यकाल पूरा नहीं कर सकी[10]।

प्रधानमन्त्री के कार्यालय को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है : मुख्य कार्यालय तथा बाह्य संगठन। मुख्य कार्यालय में आन्तरिक प्रशासन, सचिवालय, पेंशन, सांख्यिकी विभाग तथा उसकी परामर्शदात्री परिषदें हैं। प्रधानमन्त्री के कार्यालय में महत्व-पूर्ण स्वायत्तशासी एजेन्सी भी हैं, जैसे राष्ट्रीय सुरक्षा एजेंसी तथा आर्थिक नियोजन एजेंसी।

कार्यालय के बाह्य संगठन में चार विभिन्न आयोग तथा 6 प्रशासनिक एजेंसी हैं। इनमें प्रमुख वाणिज्य उद्योग, भूमि आयोग तथा राष्ट्रीय सार्वजनिक सुरक्षा आयोग रहे हैं। प्रधानमन्त्री के कार्यालय में आयोग के समान कुछ एजेंसी महत्वपूर्ण रही हैं। राष्ट्रीय-सुरक्षा एजेंसी जल, थल व नभ सेना का संगठन करती है। संविधान में निःशस्त्रीकरण की व्यवस्था के कारण इस एजेंसी को पूर्ण विभाग के रूप में पुनर्गठन करने का विरोध किया

10—मुनेशी पूर्वोद्धृत पृष्ठ 54।

जाता है। इन सीमाओं के साथ इस एजेंसी द्वारा आन्तरिक व्यवस्था तथा बाह्य सुरक्षा की व्यवस्था करना बड़ा कठिन कार्य है। आन्तरिक स्तर आर्थिक नियोजन एजेंसी जापान के लिए लघु तथा दीर्घकालीन योजनाओं का निर्माण करती है। मूलतः यह सरकार का एक नीति-निर्माणकारी संगठन है जो राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था के लिए सामान्य तथा विशिष्ट लक्ष्यों का निर्धारण करता है। इसी प्रकार प्रशासन तथा प्रबन्ध एजेंसी तथा विज्ञान व तकनीकी एजेंसी भी उल्लेखनीय हैं।

यद्यपि जापान में प्रत्येक मन्त्रालय का संगठन तकनीकी तथा व्यापक है, तथापि उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि प्रधानमन्त्री कार्यालय अत्यधिक व्यापक तथा जटिल है।

यदि जापान के अधिकांश प्रधानमन्त्री इस व्यापक संगठन पर नियन्त्रण करने में सफल रहे हैं तो उसका मूल कारण यही है कि वे सब प्रायः दक्ष प्रशासक रहे हैं। मन्त्रीमण्डल के अन्य प्रमुख विभाग वित्त, न्याय, विदेश नीति, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा सार्वजनिक कल्याण कार्य, वन विभाग, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार, उद्योग, यातायात तथा परिवहन एवं सँचार, श्रम, सार्वजनिक निर्माण विभाग तथा गृह विभाग हैं जिनमें हजारों की संख्या में लोक प्रशासक कार्यरत हैं।

लोक सेवा तथा नौकरशाही—

जापान में मन्त्रीमण्डल तथा प्रशासन की चर्चा लोक सेवा के सन्दर्भ के बिना अधूरी रह जाएगी। जापान की लोकसेवा अत्यधिक व्यापक, विस्तृत; संगठित तथा योग्य है। अन्य पश्चिमी देशों के समान जापान में नौकरशाही के विस्तार को शंका तथा घृणा की दृष्टि से नहीं देखा जाता है। जापान में इन सेवकों की संख्या पर्याप्त है। जापान की वार्षिक सांख्यिकी रिपोर्ट (1963) के अनुसार जापान की राष्ट्रीय सरकार में कुल कर्मचारियों की संख्या 1,851,777 थी तथा स्थानीय सरकार की संख्या 1,217 429 थी। इस प्रकार कुल 3,069,206 व्यक्ति सार्वजनिक सेवा में संलग्न थे जो जापान के संदर्भ में उल्लेखनीय हैं। राष्ट्रीय सरकारी कर्मचारियों में न्यूनतम श्रेणी से प्रधानमन्त्री तक सभी सम्मिलित हैं। तकनीकी अर्थों में स्वयं सम्राट् भी एक कर्मचारी है। इस प्रकार जापान के सम्पूर्ण प्रशासक वर्ग को नियमित तथा विशिष्ट दो भागों में बांटा जा सकता है। नियमित वर्ग के अन्तर्गत उक्त प्रतियोगिताओं के द्वारा नियुक्त किये गये कर्मचारी आते हैं जबकि विशिष्ट वर्ग में सभी निर्वाचित तथा राजनीतिक पदाधिकारी, जैसे प्रधानमन्त्री, विभिन्न आयोगों के सदस्य, न्यायाधीश व राजदूत आदि आते हैं।

जापानी प्रशासन की विशेषताएं—

जापानी प्रशासनिक वर्ग की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसे जापान में अन्य किसी भी देश से ज्यादा सम्मान व प्रतिष्ठा प्राप्त है। अन्य देशों के समान जापान में प्रशासनिक वर्ग को शंका की दृष्टि से नहीं देखा जाता है, न ही उनकी व्यापक शक्तियों की उतनी कटु आलोचना की जाती है। यद्यपि प्रजातन्त्र के नाम पर नौकरशाही पर नियन्त्रण करने की भावना ने जापान में भी जोर पकड़ा है, तो भी जापान में प्रशासनिक वर्ग को जो महत्व प्राप्त है, ब्रिटेन तथा अमेरिका में उसकी कल्पना करना भी सम्भव नहीं है।

जापानी लोग अपने प्रशासक वर्ग की विद्वत्ता तथा कुशलता में असीम विश्वास रखते हैं। पहले प्रशासक अधिकारी सम्राट् द्वारा नियुक्त किये जाते थे तथा वे उस पवित्र व्यक्ति के सेवक होते थे, जनता के नहीं। यद्यपि अब सम्राट की स्थिति में परिवर्तन के कारण इस व्यवस्था में भी परिवर्तन हुआ है तो भी महायुद्ध के पश्चात् जितना क्रांतिकारी परिवर्तन राजव्यवस्था के अन्य पक्षों में आया है उतना प्रशासनिक वर्ग में नहीं। वस्तुतः युद्धोत्तर विकास से प्रशासनिक गुट एक प्रकार से अछूता ही रहा है।

जापान में प्रशासनिक वर्ग के महत्वपूर्ण बन जाने का एक कारण यह भी है कि जापान में मन्त्रीमण्डलीय परिवर्तन अति शीघ्र होते हैं मन्त्रीगण अपने पदों पर एक वर्ष से अधिक नहीं ठहर पाते हैं। परिणामतः ये विभागों पर अपना नियन्त्रण स्थापित करने में असमर्थ हो जाते हैं।

प्रशासनिक वर्ग अपने विभाग के कार्यों में दक्ष होता है। नौसिखिये, मन्त्री चूंकि उन कार्यों में प्रारम्भिक ज्ञान भी नहीं रखते हैं, इसलिए उनका अपने प्रशासनिक अधिकारियों से प्रभावित होना स्वाभाविक है। बजट-निर्माण तथा विधि निर्माण में इन लोगों की विशेषता ही काम आती है।

राज्य व्यवस्था में अन्य कारकों की तुलना में प्रशासनिक वर्ग रूप से अधिक सुरक्षित रहता है, क्योंकि डाइट के सदस्यों तथा मन्त्रियों को तो प्रायः चुनाव लड़ना पड़ता है तथा उनका राजनीतिक भविष्य अस्थिर रहता है। इसी प्रकार व्यावसायिक वर्ग को व्यापार में तीव्र संघर्ष का सामना करना पड़ता है अतः प्रशासक वर्ग ही शासन का एक ऐसा अंग है जिसे किसी संकट अथवा प्रतिस्पर्धा का नहीं करना पड़ता है तथा ये किसी प्रकार के नियन्त्रण व अंकुश से परे होना हैं।

जापान की राजनीति में भी प्रशासनिक वर्ग का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। अन्य देशों के विपरीत जापान में प्रशासनिक सेवाएं राजनीतिक उच्चस्थिति प्राप्त करने का सर्वोत्तम माध्यम है। जैसा कि पहले देखा जा चुका है मंत्री पद पर नियुक्त होने के लिये अथवा प्रधानमंत्री बनने के लिये संसद की स्थिति इतनी महत्वपूर्ण नहीं है जितना प्रशासनिक अनुभव महत्वपूर्ण है। उच्च प्रशासनिक अधिकारियों में से मन्त्रियों की नियुक्ति होना यद्यपि युद्धपूर्व व्यवहार का परिणाम है जिसमें सम्राट् कुशल प्रशासको को मन्त्रियों के रूप में नियुक्त देता था।

युद्ध के पश्चात् नवीन संविधान में मन्त्रियों के लिए डाइट का सदस्य होना अनिवार्य है, इसलिये इस प्रवृत्ति में कमी आई है। तो भी जापान की डाइट तथा मन्त्री-मण्डल में भूतपूर्व प्रशासनिक अधिकारियों का भरपूर प्रतिनिधित्व होता है। 1960 तक के सभी प्रधानमंत्री भूतपूर्व प्रशासक थे तथा उनके मन्त्रिमण्डल के अधिकांश मन्त्रीगण भी भूतपूर्व प्रशासक थे।[11] 1960 के पश्चात् यद्यपि इस प्रवृति में कुछ परिवर्तन आया है तथापि प्रशासनिक गुट जापानी संसद तथा मन्त्रीमण्डल में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है तथा जापानी लोग इस के प्रति अधिक शंकालु नहीं है।

डाइट (जापानी संसद)

जैसा कि मूल अनूदित पुस्तक में जापानी राज-व्यवस्था के विकास के संदर्भ में यह

11 त्सुनेशी पूर्वोद्धृत पृ. 87

देखा जा चुका है कि जापान में संसद की परम्परा लगभग एक शताब्दी पुरानी है। संविधान के चतुर्थ अध्याय व अनुच्छेद 41 के अनुसार जापान में डाइट सर्वोच्च विधायिनी संस्था है। संसदीय व्यवस्था होने के कारण शक्तिशाली मन्त्रीमण्डल भी संवैधानिक तौर पर डाइट के प्रति उत्तरदायी है।

जापान की संसद द्विसदनात्मक है। जिसका उच्च सदन परिषद सभा तथा निम्न सदन प्रतिनिधि सभा है। संसदीय पार्षद सभा एक अर्द्ध स्थाई सदन है। संविधान के अनु 46 के अनुसार इसके कुल 250 सदस्यों में आधे प्रति तीसरे वर्ष छः वर्ष के लिये चुने जाएंगे। 250 सदस्यों में से 100 सदस्यों को राष्ट्रीय स्तर पर निर्वाचित किया जाएगा। इससे यह अपेक्षा की गई है कि इस सदन में राष्ट्रीय स्तर पर ख्यातिप्राप्त योग्य व्यक्तियों का निर्वाचन हो सकेगा जो जापान की राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ बनायेंगे। यह अपेक्षा की गई थी कि पार्षद सभा प्रतिनिधि सभा के अधिक प्रगतिवादी सदस्यों के विरुद्ध सुरक्षा तथा स्थायित्व प्रदान करने का कार्य करेगी। किन्तु इतने वर्षो के अनुभव ने इस अपेक्षा को मिथ्या प्रमाणित कर दिया है। आज अनुदारवादी दल पार्षद सभा के सदस्यों की प्रत्यक्ष नियुक्ति की परम्परागत विधि का समर्थन करता है।

प्रतिनिधि सभा की संख्या 467 है तथा इसका कार्यकाल चार वर्ष है तथापि इससे पूर्व भी सदन भंग किया जा सकता है। जापानी संसद प्रायः अवधि से पूर्व भंग की गई है। प्रतिनिधि सभा के निर्वाचन के लिये संपूर्ण जापान 118 निर्वाचन क्षेत्रों में विभक्त है तथा प्रत्येक क्षेत्र से पाँच तक उम्मीदवारों का निर्वाचन होता है।

जापान में मतदान के संदर्भ में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि नगरिय मतदाता की तुलना में ग्रामिण मतदाता अधिक क्रिय शील है। यदि नगरीय क्षेत्र में प्रत्येक तीन मतदाताओं में से एक मतदान नहीं करता तो ग्रामीण क्षेत्र में हर चौथा या छः मतदाताओं में से एक मतदान नहीं करता है। दूसरी विशेष बात नगरीय व ग्रामीण क्षेत्रों में प्रतिनिधित्व के संदर्भ में है। जापान में नगरीय क्षेत्रों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व अधिक है तथा इसके कई कारण दृष्टिगोचर होते हैं। ग्रामीण तथा नगरीय क्षेत्रों में जनसंख्या वृद्धि समान स्तर पर नहीं हुई है। संविधान के प्रारम्भ होने के पश्चात् नगरों पर जनसंख्या का दवाव बढ़ा है जबकि तदनुसार निर्वाचन क्षेत्रों में हेरफेर नहीं किया गया है, क्योंकि इसके लिये डाइट द्वारा विधि निर्माण आवश्यक था तथा इस प्रकार की कोई व्यवस्था संविधान में नहीं है। इस प्रकार का असन्तुलन जानबूझ कर बनाया रखा गया है, नगरीय क्षेत्रों में परम्परागत अनुदार वादो दल अधिक लोकप्रिय है। इस प्रकार यह असंतुलित प्रतिनिधित्व समाजवादी दलों के विपरीत हैं।[12]

दोनों सदनों के परस्पर सम्बन्ध :—

अन्य देशों के समान जापान में निम्न सदन को उच्च सदन की तुलना में अधिक शक्तियां प्रदान की गई है, उदाहरण के लिये यदि प्रधानमन्त्री के चयन के प्रश्न पर दोनों दोनों सदनों में मतभेद हो जाए तो संविधान के अनुच्छेद 67 के अनुसार प्रतिनिधि सभा

12 बक्सी पूर्वोद्धत पृ. 116

सम्मति अन्तिम मानी जाएगी। व्यवहार में यह अन्तर और भी अधिक स्पष्ट हो गया है। अधिकांश महत्वपूर्ण मन्त्रियों का चयन निम्न सदन में से किया जाता है जबकि उच्च सदन से अपेक्षाकृत कम महत्व के सीमित मन्त्रियों का चयन किया जाता है।

संक्षेप में शक्ति का पूर्ण स्रोत प्रतिनिधि-सभा है, पार्षद सभा नहीं, तथा सत्ता प्राप्ति का संघर्ष प्रतिनिधि सभा में प्रारम्भ होकर वहीं समाप्त हो जाता है। मन्त्रीमण्डल के प्रति अविश्वास पारित करने का अधिकार प्रतिनिधि सभा को दिया गया है तथा यह अन्तिम अस्त्र मन्त्रीमण्डल पर प्रतिनिधि सभा का अंकुश स्थापित कर देता है।

अन्य कार्यों में भी प्रतिनिधि सभा उच्च सदन की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली है। यदि उच्च सदन किसी विधेयक का विरोध करता है किन्तु निम्न सदन उसे दुबारा दो तिहाई बहुमत से पारित कर देता है तो वह कानून बन जाता है। इसी प्रकार बजट निम्न सदन में ही प्रस्तुत किया जा सकता है तथा यदि उच्च सदन प्रस्तावित बजट पर मतभेद रखता है तो निम्न सदन द्वारा बजट पारित करने के तीस दिन पश्चात् उच्च सदन की असहमति के बाद भी बजट स्वतः पारित हो जाता है तथा यही प्रक्रिया सन्धियों के पारित करने के संदर्भ में अपनाई जाती है। इस प्रकार कुल मिलाकर निम्न सदन उच्च सदन की तुलना में पर्याप्त शक्तिशाली है।

डाइट के कार्य: -

डाइट जापान की न केवल सर्वोच्च व्यवस्थापिका है, अपितु सैद्धान्तिक रूप में वह सर्वोच्च प्रशासनिक तथा वित्तीय शक्तियाँ रखती है।

डाइट सर्वोच्च विधि निर्माण-संस्था है। सैद्धान्तिक रूप से सभी विधेयक डाइट द्वारा पारित होने पर ही कानून बनते हैं।

डाइट देश की संविधान-सभा भी है। नौवे अध्याय 96 अनुच्छेद के अनुसार संविधान में कोई भी संशोधन मात्र डाइट में ही प्रारम्भ किया जा सकता है जिसके लिये दोनों सदनों के दो तिहाई सदस्यों का समर्थन प्राप्त होना आवश्यक है उसके बाद प्रस्तावित संशोधन पृष्ठीकरण के लिए जनमत संग्रह के लिए प्रेषित किया जायेगा।

डाइट को प्रधानमन्त्री तथा मन्त्रीमण्डल पर नियन्त्रण का अधिकार भी है, क्योंकि डाइट ही प्रधानमन्त्री का नामांकन करती है तथा मन्त्री मण्डल में विश्वास अथवा अविश्वास पारित करती है। यह सरकारी गतिविधियों की जाँच कर सकती है तथा प्रधानमंत्री की नियुक्ति तथा अविश्वास प्रस्ताव यदि दलीय राजनीति से संबन्ध रखते हों तो उन पर विचार कर सकती है।

डाइट को विदेशी मामलों पर नियन्त्रण का अधिकार भी है। यद्यपि विदेशी सम्बन्धों का संचालन मन्त्रीमण्डल करता है किन्तु उनके बारे में संसद की स्वीकृति आवश्यक होती है। किन्तु कभी-कभी बहुमत के कारण मन्त्रीमण्डल डाइट की उपेक्षा भी करता है जैसे 1960 में जापान-अमेरिकी सुरक्षा संधि के संदर्भ में किया गया।

डाइट राष्ट्रीय वित्त पर सम्पूर्ण नियन्त्रण रखती है। संविधान के सातवें अध्याय के अनुच्छेद 83–96 में डाइट की वित्तीय शक्तियों का वर्णन किया गया है। बिना डाइट की स्वीकृति के सरकार न तो कोई नवीन कर लगा सकती है तथा न ही वर्तमान करों

में किसी प्रकार का परिवर्तन कर सकती हैं बिना डाइट की स्वीकृति के सरकार सार्वजनिक संपत्ति को व्यय नहीं कर सकती है प्रत्येक वित्तीय वर्ष के प्रारम्भ में सरकार डाइट के निम्न सदन में बजट प्रस्तुत करेगी।

डाइट सरकारी प्रशासन की जांच भी कर सकती है। संविधान का 62 वां अनुच्छेद इस उद्देश्य के लिए साक्षियों को आमन्त्रित करने का तथा सरकार प्रलेखों को देखने का अधिकार देता है। इस प्रावधान का मूल उद्देश्य सरकारी गतिविधियों पर डाइट के नियन्त्रण को मजबूत करना है तथापि डाइट को उल्लेखनीय सफलता नहीं मिल पाती है, क्योंकि डाइट में सरकार को बहुमत का समर्थन प्राप्त होता है।

अन्ततः इन संवैधानिक व्याख्याओं के अलावा व्यवहार में डाइट सार्वजनिक विचार-विमर्श करने का स्थान है। यह एक ऐसा स्थान है जहां सरकार, राजनीतिक दल तथा दबाव-समूह प्रस्तुत विधेयकों तथा नीति-सम्बन्धी प्रस्तावों पर उपयुक्त रूप से विचार करते हैं। यद्यपि बहुमत दल का दबाव इन सब कार्यों में बना रहता है फिर भी डाइट में अल्पमत को अपने विचार व्यक्त करने का अवसर मिलता है।

इस प्रकार सैद्धान्तिक रूप से व्यापक शक्तियां प्राप्त होने के बावजूद व्यवहार में डाइट मन्त्रीमण्डल की तुलना में गौण हो गई है। डाइट की इस दुर्बलता के अनेक कारण हैं।

विधि-निर्माण इतना जटिल हो गया है कि विधायक उसमें कोई महत्वपूर्ण भूमिका नहीं निभा पाता है। वह तकनीकी विशेषज्ञता, लोकप्रशासन की इस क्षेत्र में श्रेष्ठता, निर्विवाद रूप से स्वीकार कर लेता है। परिणामतः विधि-निर्माण के क्षेत्र में डाइट का कार्य मात्र प्रस्तुत विधायक के बारे में प्रश्न पूछना, उनके बारे में संशोधन प्रस्तुत करना तथा सरकार द्वारा प्रस्तुत विधेयकों को पारित करना मात्र रह जाता है। इस सम्बन्ध में डाइट का जो कुछ कार्य होता है वह भी सम्बन्धित समिति द्वारा किया जाता है।

कुछ इसी प्रकार की स्थिति वित्तीय शक्तियों के संदर्भ में भी है। वित्तीय क्षेत्र में नियोजन एक महत्वपूर्ण कार्य है तथा सम्पूर्ण नियोजन सरकार द्वारा नियन्त्रित आर्थिक नियोजन आयोग द्वारा किया जाता है। इस प्रकार सरकार द्वारा प्रस्तुत योजना का डाइट के कुछ सदस्यों द्वारा विरोध करना अथवा वैकल्पिक योजना प्रस्तुत करना सम्भव नहीं होता है। इसी प्रकार मूल बजट इतना व्यापक तथा जटिल होता है. कि उसके बारे में बहस करने के लिये योग्यता का होना अनिवार्य है जो प्रायः डाइट के सदस्यों में नहीं होती है। परिणामतः डाइट प्रशासनिक विशेषज्ञों के अधीन कार्य करने को बाध्य हो जाती है।

इसके अतिरिक्त चूंकि मन्त्रीमण्डल तथा प्रधानमन्त्री को बहुमत का समर्थन प्राप्त होता है अतः सरकार डाइट के सगठन में सभी समितियों के मुख्य स्थानों पर अपने प्रमुख नेताओं को नियुक्त करती है जो प्रत्येक स्तर पर सरकारी नीतियों का समर्थन करते हैं, जापान में प्रशासन के प्रति तथा सम्मान रहा है अतः प्रशासनिक विशेषज्ञों की सलाह पर सरकार द्वारा प्रस्तुत प्रस्तावों का डाइट में विरोध नगण्य होता है।[13]

13 लुनेगी पूर्वोक्त पृ. 44

इस प्रकार सैद्धान्तिक दृष्टि से व्यापक शक्तियों के बावजूद व्यवहार में डाइट पर मन्त्रीमण्डल का नियन्त्रण अधिक है। बर्क्स के अनुसार डाइट के तुलनात्मक रूप से दुर्बल होने के और भी कारण है, जैसे संसदीय परम्परा के विपरित समितियों का प्रभावशाली हो जाना दुराग्रहपूर्ण नेताओं द्वारा डाइट के कार्यों में प्रत्यक्ष हस्तक्षेप करना तथा डाइट में अत्यधिक अनुशासनहीन गतिविधियों का होना।[14] 1952 में पुनर्स्थापना के बाद से ही डाइट में अनुशासन हीनता बढ़ती गई तथा इसके 19 वें सत्र में पुलिस की शक्तियों से सम्बन्धित विधि के संशोधन को लेकर डाइट में भयंकर उत्पात मचा तभी से अनुशासन-हीनता निरन्तर बढ़ती गई है।

1954, 1960 तथा 1961 में विवादास्पद विधेयकों पर समाजवादी दलों द्वारा भड़काये गये उत्पात को नियन्त्रित करने के लिये अध्यक्ष को पुलिस बुलानी पड़ी। इस से सामान्य जनता में डाइट की प्रतिष्ठा व सम्मान को धक्का पहुंचा है।

डाइट के अधिवेशन व पदाधिकारी:—

संविधान के अनुच्छेद 52 के अनुसार वर्ष में एकबार डाइट का तेरहवां सत्र असाधारण रुप से लम्बा था। क्योंकि वह 235 दिनों तक चला था। डाइट के अधिवेशनों को तीन प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है। साधारण अधिवेशन प्राय: दिसम्बर के उत्तरार्द्ध में प्रारम्भ होता है तथा नये वर्ष के उत्सव के लिये अवकाश मनाने के पश्चात् पुनः समवेत होता है तथा प्राय 150 या उससे अधिक दिनों तक चलता है। जापान के संविधान के अनुसार मन्त्रीमंडल डाइट का असाधारण अधिवेशन बुला सकता है तथा यदि डाइट के एक चौथाई सदस्य इस प्रकार की माँग करे तो भी डाइट का का असाधारण अधिवेशन आमन्त्रित किया जा सकता हैं। जब प्रतिनिधि सभा को विघटित किया जाता है। तथा आम निर्वाचन करवाये जाते हैं तो फिर आम चुनावों के पश्चात् तीस दिन के भीतर अथवा सदन को विघटित किये जाने के 90 दिन के अन्दर डाइट का अधिवेशन आमन्त्रित किया जाना आवश्यक होता है। ये अधिवेशन विशिष्ट सत्र कहलाते हैं। तथा इनका उद्देश्य नये प्रधानमन्त्री का चयन करना तथा नवीन सरकार का निर्माण करना होता है, इसके अतिरिक्त जब वन सदन विघटित हो उस समय यदि कोई संकट उत्पन्न हो जाए तो मन्त्री मण्डल पार्षद सभा का संकटकालीन सत्र आमन्त्रित कर सकती है तथापि ऐसे सत्र द्वारा पारित प्रस्तावों का बाद में प्रतिनिधि-सभा के द्वारा अनुमोदन आवश्यक होता है। 1959 तक पार्षद सभा के इस प्रकार के दो संकटकालीन अधिवेशन आमन्त्रित किये गये थे।

डाइट के पदाधिकारी:—

डाइट के बारे में पारित विधि के अनुसार प्रत्येक सभा अपने लिये एक सभापति जिसे अन्य देशों के समान निम्न सदन के संदर्भ में अध्यक्ष कहा जाता है, उप-सभापति, तथा समितियों का निर्वाचन करेगी। इस प्रकार प्रतिनिधि-सभा अपनी प्रथम मीटिंग में ही अपने अध्यक्ष व उपाध्यक्ष का निर्वाचन करती है। जापान में निम्न सदन के अध्यक्ष के कार्य पर्याप्त महत्वपूर्ण हैं। वह सरकार द्वारा प्रस्तावित विधेयकों को [विभिन्न

14 बर्क्स पूर्वोद्धत 131.

समितियों को वितरित करता है, प्रधानमन्त्री के सहयोग से सदन के कार्य क्रम का निर्धारण करता है तथा सदन में अनुशासन बनाये रखता है, जिसके लिए आवश्यकता पड़ने पर वह पुलिस का संसद रक्षकों को बुला सकता है। सदन का अध्यक्ष शासक दल का ही होता है, तथापि 1960 से उपाध्यक्षों का पद विरोधी दलों को दिये जाने की परम्परा का विकास किया गया है।

जापान में निम्न सदन के अध्यक्ष का पद विवादास्पद बन गया है। उसे सर्वाधिक कठिनाई का सामना सदन में अनुशासन बनाये रखने के संदर्भ में करना पड़ा है। उदाहरण के लिए 1959 में प्रतिनिधि सदन में हुए भीषण उत्पात के पश्चात् अध्यक्ष को त्यागपत्र देना पड़ा तथा नये अध्यक्ष के निर्वाचन के पश्चात् ही सदन की कार्यवाही बढ़ सकी।

डाइट की सत्रीय समितियां:—

डाइट की सर्वाधिक चर्चित तथा विवादास्पद विशेषता इसकी समितियां हैं, क्योंकि संसदीय व्यवस्था में अध्यक्षात्मक व्यवस्था के नमूने पर समितियों का संगठन किया गया है। नवीन संविधान के अन्तर्गत डाइट ने अपनी व्यवस्था-विधि में प्रत्येक सदन के लिये 21 समितियों की व्यवस्था की थी, तथापि 1955 में उस विधि में परिवर्तन के द्वारा समितियों की संख्या घटाकर 15 कर दी गई। ये समितियां अमेरिका के समान विशेषता प्रधान समितियां हैं तथा प्रायः सभी महत्वपूर्ण विभागों पर आधारित है, जैसे विदेश विभाग, कृषि, वाणिज्य, उद्योग, यातायात संचार आदि डाइट की विधि के अनुसार प्रत्येक सदस्य कम से कम एक तथा अधिक से अधिक तीन समितियों का सदस्य हो सकता है। प्रतिनिधि सदन की समितियों में कम से कम 20 (जैसे अनुशासन समिति) तथ अधिक से अधिक पचास सदस्य (बजट समिति) होते हैं। समितियों में दलीय स्थिति सदन की दलीय स्थिति के समान होती है तथा प्रायः सदस्यता का निर्णय दलीय नेताओं के द्वारा किया जाता है। वस्तुतः विभिन्न समितियों के सदस्यों, अध्यक्षों तथा कार्यों का विभाजन डाइट में दलीय स्थिति के अनुसार ही होता है।

विशेषताः प्रधान समितियां अध्यक्षात्मक सरकार की विशेषता होती है तथा संसदीय व्यवस्था में शक्तिशाली मन्त्रीमण्डल के साथ इनका समायोजन विचित्र स्थिति उत्पन्न कर देता है। कार्य में अत्यधिक विलंब तथा पुनरावृत्ति के अवसर बढ़ जाते हैं। उदाहरण के लिये विदेशी विभाग से सम्बन्धित विषय पर विदेश विभाग स्वयं, दोनों सदनों की तत्सम्बन्धित समितियों तथा सरकार की कूटनीतिक समितियों तथा सरकार की कूटनीतिक समितियों की उपस्थिति में चारों संस्थायें परस्पर विचार करती है। इससे कार्य में परस्पर संघर्ष की संभावना भी अधिक रहती है। इसके अतिरिक्त अधिकाधिक कार्य समितियों के द्वारा किया जाता है, जहां विरोधी दल कार्य में बाधा डालने का प्रत्येक संभव प्रयत्न करता है। इसके अतिरिक्त समितियों के महत्व के कारण सम्पूर्ण डाइट एक संस्था के रूप में कार्य करने के स्थान पर प्रायः दलों व समितियों में विभक्त दृष्टि गोचर होती है। समितियों में निहित स्वार्थ भी पर्याप्त सक्रिय रहते हैं। इस प्रकार जापान में समिति-व्यवस्था के संदर्भ में अनेक शंकाएं तथा विवाद हैं, तथापि इसे समाप्त कर संसदीय व्यवस्था में अविशेषज्ञ समितियां स्थापित करने का प्रयास नहीं किया गया। कुल मिला

कर डाइट उतनी प्रभावशाली संस्था नहीं है। जितना सैद्धान्तिक रूप से संविधान उसे प्रस्तुत करता है।

जापान की दलीय राजनीति:—

किसी भी प्रजातन्त्रीय व्यवस्था की सफलता उस देश की दलीय राजनीति पर निर्भर करती है। जापान में दलीय राजनीति का विकास मूल पुस्तक में विस्तृत रूप में दिया गया है। यहाँ हमारा उद्देश्य 1955 के पश्चात् से जापान की दलीय व्यवस्था को प्रोफेसर स्केलपिग्रानो में "एक और आधे दल की व्यवस्था कहा है। जापान में द्वितीय महायुद्ध के बाद से लगातार उदारवादी प्रजातन्त्रीय दल का वर्चस्व रहा है, जबकि समाजवादी दल सर्वदा विरोध में रहे हैं। तथापि सत्ता के लिये वास्तविक संघर्ष विभिन्न दलों में परस्पर न होकर शासक दल के मध्य विभिन्न गुटों के बीच होता है।

शासक दल उदार प्रजातन्त्रीय दल:—

उदार प्रजातन्त्रीय दल का जन्म 1955 में विभिन्न दक्षिणपंथी दलों के विलय के पश्चात् हुआ था। ये दल अभी विभिन्न मुद्दे पर परस्पर संघर्ष व विभाजन से प्रभावित रहता है। आंतरिक संघर्ष के बावजूद यह डाइट में बहुमत प्राप्त करने में सफल रहा है। 1960 में एक सशक्त व प्रभावशाली मध्यम वर्ग के उदय के कारण अब इस दल की लोकप्रियता पर्याप्त स्थिरता प्राप्त कर चुकी है। इस दल का राष्ट्रीय स्तर पर एक अध्यक्ष व एक महासचिव होता है। दल अपनी विभिन्न समितियों, जैसे दलीय मामलों की, स्थानीय मामलों की तथा अनुशासन समिति आदि के चुनाव करता है।

यह दल परम्परागत संस्थाओं को बनाये रखने का समर्थक है। इसकी लोकप्रियता का प्रमाण यह तथ्य है कि यह निरन्तर शक्ति में है। शासक दल होने के नाते दल के शक्तिशाली तथा प्रभावशाली लोगों को सरकार तथा समितियो में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त होते हैं। तथा सगठन में अपेक्षाकृत कम प्रभावशाली लोग रह पाते हों। इस दल पर प्रशासक वर्ग का प्रभाव भी पर्याप्त व्यापक है।

समाजवादी दल:—

समाजवादी दल का संगठन इसके नियमों के अनुसार प्रजातन्त्रीय केन्द्रीयवाद के आधार पर होता है। दल का सर्वोच्च अंग सैद्धान्तिक रूप से वार्षिक सभा होती है तथा यह संस्था दल की कार्यकारिणी समिति के अध्यक्ष, महासचिव तथा नियन्त्रण-समिति के अध्यक्ष का निर्वाचन करती है इस दल को प्रायः निम्न तथा श्रमिक वर्ग का समर्थन प्राप्त है। 1950 से 1960 से तक समाजवादी दल निरन्तर लोकप्रिय होता गया था। तथा यह अपेक्षा की थी कि वह 1960 की दशाब्दी के उत्तरार्द्ध में शासक दल का स्थान ग्रहण कर लेगा। किन्तु 1960 में समाजवादी दल का विभाजन हो गया। तत्पश्चात् जनता का भी वामपंथी झुकाव सीमा तक कम होता गया। इस प्रकार यह अपेक्षा मिथ्या साबित हुई कि भविष्य में समाजवादी दल शासक दल का स्थान ग्रहण करेगा।

इतने वर्षों का राजनीतिक व्यवहार जापान के राजनीतिक दलों की कुछ मूल विशेषताओं का दिग्दर्शन कराता है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, जापान के दल तीव्र गुटबन्दी से ग्रसित हैं। तथा शासक दल में सत्ता के विभिन्न गुटों में परस्पर संघर्ष रहता